6

सत्यमेव जयते

छठी रिपोर्ट

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग

स्थानीय अधिशासन

भविष्य की ओर प्रेरणादायी यात्रा

अक्तूबर, 2007

भारत सरकार

दूसरा प्रशासनिक सुधार आयोग

छठी रिपोर्ट

स्थानीय अधिशासन

भविष्य की ओर प्रेरणादायी यात्रा

अक्तूबर, 2007

प्राक्कथन

"असंख्य गांवों से निर्मित इस संरचना में, सदैव बढ़ता हुआ और कभी नहीं घटता हुआ दायरा रहेगा। निचले तल द्वारा सतत बनाए रखे गए शीर्ष से जीवन पिरामिड नहीं होगा। परंतु यह एक महासागरीय वृत्त होगा, जिसका केंद्र व्यक्ति होगा, जो गांव के लिए नष्ट हो जाने के लिए तैयार है और परवर्ती गांवों के लिए नष्ट होने के लिए तैयार होगा जब तक अंत में संपूर्ण व्यक्तियों से निर्मित जीवन चक्र नहीं हो जाता, जो महासागरीय वृत्त के प्रभुत्व की भागीदारी करते हुए, जिसकी वे एकीकृत इकाइयां हैं, अपने दर्प में कभी आक्रामक नहीं होगा परंतु सदैव नम्र रहेगा। इसलिए सबसे बाहरी परिधि भीतरी वृत्त को कुचलने के लिए शक्ति का प्रयोग नहीं करेगी, परंतु भीतर सभी को मजबूती प्रदान करेगी और उनसे स्वयं अपनी शक्ति प्राप्त करेगी।"

महात्मा गांधी

स्थानीय अधिशासन पर इस रिपोर्ट में प्रशासनिक सुधार आयोग ने हमारे गणतंत्र के संस्थापकों द्वारा यथा संकल्पित और जैसा अभी विशेष रूप से हमारे संविधान द्वारा अधिदेशित है, वास्तविक जमीनी स्तर के लोकतंत्र का शुभारंभ करने के लिए देश में वास्तविक लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की आवश्यकता पर विशेष ध्यानकेंद्रण सहित भारत में ग्रामीण और शहरी स्थानीय अधिशासन से संबंधित मुद्दों की विस्तारपूर्वक जांच की है। यह रिपोर्ट इन मुद्दों की तीन भागों में जांच करती है – पहला भाग स्थानीय अधिशासन के उन साझा मुद्दों से संबंधित है, जो ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों और साथ ही ग्रामीण – शहरी सांतत्वक के लिए संगत हैं, दूसरा ग्रामीण अधिशासन के मुद्दों और तीसरा शहरी अधिशासन से संबंधित है।

अच्छे अधिशासन की विशिष्टताएं क्या हैं? एक संस्थात्मक ढांचा जो अच्छा अधिशासन सुनिश्चित करता है, में प्रायःनिम्नलिखित विशेषताएं होती हैं :

1. भागीदारी

सभी पुरुषों और महिलाओं को या तो प्रत्यक्षतः अथवा एक कानूनी मध्यस्थ संस्था, जो उनके हितों का प्रतिनिधित्व करती है, के माध्यम से निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिए। ऐसी स्थूल भागीदारी बोलने की स्वतंत्रता तथा साथ ही सकारात्मक रूप से भागीदारी करने की क्षमता पर निर्मित होती है।

2. कानून के नियम

कानूनी ढांचा उचित होना चाहिए और विशेषकर मानवाधिकारों पर कानून को निष्पक्षता से लागू किया जाना चाहिए।

3. पारदर्शिता

पारदर्शिता सूचना के मुक्त प्रवाह पर निर्मित होती है। प्रक्रियाएं, संस्थाएं और सूचना उनसे संबंधित को प्रत्यक्षतः पहुंच योग्य होती हैं और उन्हें समझने तथा उनके अनुवीक्षण के लिए पर्याप्त सूचना प्रदान की जाती है।

4. प्रत्युत्तरदायिता

संस्थाएं और प्रक्रियाएं सभी हितधारकों की सेवा करने का प्रयास करती हैं।

5. सर्वसम्मति उन्मुखीकरण

अच्छा अधिशासन समूह के सर्वोत्तम हित में जो होता है और जहां संभव हो नीतियों और कार्यविधियों पर व्यापक सर्वसम्मति तक पहुंचने में भिन्न-भिन्न हितों के बीच मध्यस्थता करता है।

6. समानता

सभी पुरुषों और महिलाओं को अपने कल्याण को सुधारने अथवा बनाए रखने के अवसर होते हैं।

7. प्रभावोत्पादकता और क्षमता

प्रक्रियाएं और संस्थाएं परिणाम देती हैं जो संसाधनों का सर्वोत्तम प्रयोग करते हैं।

8. जिम्मेवारी

सरकार, निजी क्षेत्र और नागरिक समाज के संगठनों में निर्णयकर्ता जनता तथा साथ ही संस्थात्मक हितधारकों में प्रति जिम्मेवार होते है। यह जिम्मेवारी संगठन और कि क्या निर्णय किसी संगठन के लिए आंतरिक अथवा बाहय है, पर निर्भर करते हुए भिन्न-भिन्न होती है।

9. कार्यनीतिक कल्पनादृष्टि

नेताओं और जनता का अच्छे अधिशासन और मानव विकास पर ऐसे विकास के लिए क्या आवश्यक है इसकी भावना के साथ विस्तृत और दीर्धावधिक परिदृश्य होता है। इस संबंध में ऐतिहासिक सांस्कृतिक और सामाजिक जटिलताओं, जिनमें वह परिदृश्य आधारित होता है, की भी समझ होती है।

हमारा संविधान न केवल राज्य नीति के प्रत्यक्ष सिद्धांतों, जो राज्य को पंचायती राज संस्थाओं के संवर्धन के लिए प्रेरित करता है, के माध्यम से परंतु बहुत विशिष्ट रूप से अब संविधान के 73वें और 74वें संशोधन, जो देश के शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में सही रूप से स्व-नियंत्रित स्थानीय निकायों के माध्यम से जमीनी स्तर के लोकतंत्र को बढ़ावा देने के लिए संस्थात्मक ढांचे का सृजन करता है, लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के लिए स्पष्ट अधिदेश प्रदान करता है। तथापि, संवैधानिक अधिदेश के बावजूद देश में अधिशासन के तीसरे स्तर के रूप में स्व-नियंत्रित स्थानीय निकायों का विकास असमान, अवरुद्ध और धीमा रहा है।

मुझे हाल ही में एक भ्रमणकारी यूरोपीय के अवलोकन के बारे में बताया गया, जिसने आश्चर्य व्यक्त किया कि भारत अपने नाम के उपयुक्त किसी स्थानीय शासन के बिना कार्य करने में कैसे समर्थ है। उनकी घबड़ाहाट समझने योग्य है। हमने स्थानीय निकायों को क्षीण होने की अनुमति दी है और उस सीमा तक उन्हें निधियों की कमी प्रदान की है कि जहां स्थानीय शासन का राजस्व वर्ष 2001 में सं.रा.अ. में सरकार के कुल राजस्व का 15% था वही भारत में यह समतुल्य आंकड़ा मात्र 3% था। यहां तक कि 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन के पारित होने के बाद भी केरल जैसे उल्लेखनीय अपवाद सहित अधिकांश राज्यों में निधियों, कार्यो और पदाधिकारियों का हस्तांतरण नाममात्र ही रहा है। संपूर्ण सत्तर और अस्सी के दशक में यहां तक कि जलापूर्ति और सफाई जैसे बुनियादी नगरपालिका कार्यो के जल बोर्डो और प्राधिकरणों जैसे परास्तरीय के हाथों में केंद्रीकरण की प्रक्रिया से स्थानीय निकायों की भूमिका और स्थिति में भारी गिरावट आई, जिसे अब बदलने की मांग की गई है। ऐसे बदलाव को राज्य सरकारों में जिला स्तरों पर स्थापित संस्थात्मक संरचनाओं से अपिरहार्य बाधाओं का सामना करना है।

स्थानीय लोकतंत्र को कभी-कभी "विकेंद्रीकरण" का समानार्थक माना जाता है, परंतु वास्तव में ये दोनों काफी भिन्न है। विशेषकर विकेंद्रीकरण आवश्यक रूप से स्थानीय लोकतंत्र का प्रेरक नहीं है। वास्तव में, तीव्र स्थानीय असमानताओं की स्थितियों में, विकेंद्रीकरण कभी-कभी शक्ति के संकेद्रण को बढ़ा देता है और सुविधाविहीनों की भागीदारी को पल्लवित-पुष्पित करने की बजाय हतोत्साहित करता है। उदाहरणार्थ, कुछ जनजातीय क्षेत्रों, जहां ऊंची जाति के जमींदारों और व्यापारियों का गांव के मामले पर प्रभुत्व रहता है, में पंचायती राज संशोधन से संबद्ध शक्तियों की सुपुर्दगी ने उनके अधिकारों और प्रभुत्व को समेकित किया है और स्थानीय शक्ति संरचना में मौजूदा पक्षपातों को पुनर्बलित किया है।

अब यह सुविदित है कि संघ और राज्यों के बीच विषयों का संवैधानिक विभाजन अतिरंजित रहा है और अब विषय नहीं परंतु प्रत्येक विषय के अधीन कार्य मायने रखते हैं। इन्हें आदर्श रूप से उन सिद्धांतों के अनुसार निष्पादित किया जाना चाहिए कि केंद्रीय प्राधिकारियों का केवल वैसे कार्य, जो अधिक तत्काल अथवा स्थानीय स्तर पर प्रभावी रूप से निष्पादित नहीं किए जा सकते; निष्पादित करते हुए सहायक कार्य होना चाहिए। वह 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन में संकल्पित विकेंद्रीकरण है, जिसे अब पूर्णतः कार्यान्वित करने की आवश्यकता है।

आज विश्व अपने ग्रामीण पृष्ठभूमि के भूतकाल को बहुत पीछे छोड़ने की और अग्रसर है। नगरों के वैश्वीकरण के मुख्य लाभार्थी होने से नौंकरी पाने वाले कई लाख लोग नगरों बड़े और छोटे दोनों में विस्थापित हो रहे हैं। इतिहास में पहली बार, 3.3 बिलियन की विश्व की आधी से अधिक जनसंख्या इन शहरी काम्पलेक्स में निवास कर रही है। अगले दो दशकों में, पांच बिलियन लोग अर्थात विश्व की जनसंख्या का 80 प्रतिशत नगरों में निवास करेगा। इसके विपरीत, विश्व की ग्रामीण जनसंख्या में इसी अवधि के दौरान 28 मिलियन की कमी होने की आशा है।

चूंकि यह अधिकांश जनसांख्यिकीय वृद्धि एशिया और अफ्रीका में होगी इसलिए महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि राष्ट्र इस जनसांख्यिकीय पारगमन का मुकाबला कैसे करेंगे विशेषकर चूंकि इस अधिकांश शहरी वृद्धि को निर्धनों द्वारा बढ़ावा दिया जाने वाला है। क्या हमारे नीति निर्माता और नागरिक समाज अपने खराब सज्जित प्रबंधकीय क्षमता से इस बढती हुई जनसंख्या से निपटने के लिए तैयार हैं? उपग्रह के चित्र दर्शाते हैं कि एक साथ मिलाकर शहरी स्थल अब पृथ्वी के भूमि भाग का 2.8 प्रतिशत से अधिक शामिल करते हैं, जो जापान से थोड़ा छोटा क्षेत्र है। परंतु चूंकि हमारे नगर लोगों की संकेंद्रित मात्रा से स्पन्दित हो रहे हैं इसलिए हमारी उनके वास्तविक रूप से अधिक बड़े होने के रूप में देखने की प्रवृत्ति होती है। विश्व की जनसंख्या स्थिति पर हाल की "यूएनएफपीए" की रिपोर्ट ने वर्णन किया है कि भारत अपनी शहरी जनसंख्या के भीतर परिधीय शहरी क्षेत्रों को भी नहीं मानता और उन लोगों, जिनके शहरी क्षेत्र के लिए योजनाओं में निधिपोषण की आवश्यकता है, की प्रतिशतता का कम वर्णन करता है। परिधीय-शहरीकरण किसी नगर की परिधि पर विनिर्माण सुविधाओं की सीमा में भूमि के बड़े क्षेत्र पर तीव्र अयोजनाबद्ध बसावट का हवाला देता है। ऐसे क्षेत्रों में स्पष्ट प्रशासन की कमी होती है, ये सफाई और जल की समस्या से प्रभावित होते है और ये नगरों और गांवों के बीच पारगमन क्षेत्र होते हैं।

इस क्रम में मुख्य प्रश्न यह है कि हमारा शहरी समूह कितने सतत रहने योग्य हैं। इस जटिल प्रश्न का उत्तर हमारे नगर निवासियों द्वारा अपनाई जाने वाली खपत की पद्धति की किस्म में विहित है।

अगर हम मूर्खतापूर्ण ढंग से अपने प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट करना जारी रखते हैं - कुछ उल्लेखनीय उदाहरण , ब्राजीली आमेजन वनों की संयुक्त राज्य और यूरोप को लकड़ी निर्यात करने के लिए कटाई की जा रही है, हमारे महानगरों को विद्युत और जल प्रदान करने के लिए बांध निर्माण हेतु लाखों किसानों और ग्रामीणों को विस्थापित किया जा रहा है, - हमें बहुत भारी मूल्य चुकाना होगा।

शहरी और ग्रामीण वृद्धि और सतत बने रहने की योग्यता के बीच परस्पर क्रिया विशेषकर हमारे भविष्य के लिए महत्वपूर्ण है। पर्यावरणीय अवक्रमण को रोकना और निर्धनों की सुभेद्यता कम करना मुख्य हस्तक्षेप हैं, जो हमारे नगरों में जीवन स्तर का निर्धारण करेंगे। भारत में, असतत गंदी बस्तियों के सुधार के रूप में हमारा सबसे खराब शहरी विकास है। हमारे यहां खराब डिजाइनयुक्त विशेष आर्थिक क्षेत्र के रूप में सबसे खराब ग्रामीण विकास भी हुआ है। हमने दोनों में गड़बड़ी कर दी है क्योंकि हमने यह नहीं पूछा कि लोग क्या चाहते हैं, केवल यह पूछा कि हम स्वयं अपने लिए क्या चाहते हैं।

"ग्रामीण" और "शहरी" निर्धनता को कुछ हद तक पृथक समझना समस्या का अपेक्षाकृत अदूरदर्शी दृष्टिकोण अपनाना है। ग्रामीण विकास शहरी विकास का समर्थन करता है और इसी प्रकार विलोमतः क्रिया होती है। एक अन्य अनदेखा दृष्टिकोण शहरी निर्धन को शहरी अर्थव्यवस्था पर बोझ मानना है। विशेषज्ञ यह बल देते हैं कि शहरी निर्धन अर्थव्यवस्था और हमारे नगरों के कल्याण के लिए अनिवार्य है। अधिकांश अनौपचारिक क्षेत्र में कार्यरत हो सकते हैं परंतु यह क्षेत्र सीमांतिक कार्यकलापों का अस्तव्यवस्त मिश्रण नहीं है जैसा इसे देखे जाने की प्रवृत्ति होती है। इसकी बजाय यह एक प्रतिस्पर्धी और अत्यधिक गतिशील क्षेत्र है, जो शहरी और यहां तक कि वैश्विक अर्थव्यवस्था में सुएकीकृत है।

अधिकांश विकासशील राष्ट्रों में आधी शहरी जनसंख्या को गंदी बस्तियों में रहने के लिए बाध्य किया जा रहा है, जिसमें चीन और भारत में एक साथ मिलाकर विश्व की गंदी बस्तियों का 37 प्रतिशत है। वर्ष 2001 की जनगणना ने भारत में गंदी बस्तियों के निवासियों की संख्या 40.3 मिलियन अनुमानित की है, जो जनसंख्या का लगभग 14.2 प्रतिशत है। फिर भी, भारत में गंदी बस्तियां होने की आवश्यकता नहीं है। यह इंगलैड, जापान, हालैंड और कई अन्य देशों की अपेक्षा कम घनी जनसंख्या वाला है। अगर इन देशों ने गंदी-बस्तियों से बचाव किया है तो हमें भी यह करने में समर्थ होना चाहिए।

इन गंदी बस्तियों में रहने वाले अधिकांश 18 वर्ष की आयु से कम के लोग हैं। इन युवा लोगों में परस्पर वैयक्तिक द्वेष और असुरक्षा की भावना बढ़ रही है, जिन्हें हिंसा का सबसे बड़ा कर्ता पाया गया है। (वे इसके मुख्य शिकार भी हैं)। चूंकि शहरी भूमि की उच्च कीमतें निर्धन और निम्न मध्यम वर्ग (जिनकी जनसंख्या कुल के 50 प्रतिशत से अधिक है) को सबसे अधिक प्रभावित करती हैं इसलिए शहरी भूमि की कीमतों में अनिश्चित वृद्धि रोकना सरकार के लिए आवश्यक हो जाता है। इसके लिए संघ/राज्य और स्थानीय स्व-शासनों को कानूनी और प्रशासनिक सुधार करना आवश्यक है।

विश्व आने वाले दशकों में चीन के बाद संभावित रूप से भारत का विकास देख रहा है। सिंगापुर, कुआलालमपुर जैसे कुछ नगर और चीन में कुछ नगर अब सबसे बड़े शहरी क्षेत्र बनने के लिए मात्रात्मक कदम बढ़ा रहे हैं। भारतीय नगरों को भी उनके साथ बड़े पैमाने पर प्रतिस्पर्धा करना आवश्यक हैं। अगर भारत को वैश्विक निवेशकों की बढ़ती हुई प्रत्याशाएं पूरी करनी हैं तो एक मुख्य परीक्षा यह होगी कि भारत कैसे अपने तीव्र शहरीकरण का प्रबंधन करता है। हर बाते इसी से प्रवाहित होगी कि यह कितनी भलीभांति किया जाता है। हमें विश्व-स्तरीय बड़े और छोटे नगर सृजित करने की आवश्यकता है, जो आर्थिक, सामांजिक और सांस्कृतिक कार्यकलाप में भाग लेने के लिए भीतर और बाहर से लोगों को आकर्षित करते हों। वास्तव में, कई इसे मुम्बई को विश्व के वित्तीय केंद्र में परिवर्तित करने की सर्वाधिक महत्वपूर्ण शर्त मानते हैं, जो संपूर्ण विश्व से जटिल वित्तीय लेन-देनों के वर्धक और निष्पादक के रूप में कार्य करेगी।

इस रिपोर्ट में, आयोग ने शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में स्थानीय अधिशासन के सुधार के लिए एक कार्यसूची तैयार करने का प्रयास किया है। प्रारंभ में वे मुख्य सिद्धांतों, जो इस कार्यसूची को सहारा देते हैं, की रूपरेखा तैयार की गई है। इन सिद्धांतों में अन्य बातों के साथ-साथ देश में अधिशासन सुधार के केंद्रीय तत्व के रूप में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण, आनुषांगिकता के सिद्धांत, जिसका अर्थ यह होता है कि शासन के निम्नतम स्तर पर जो कुछ सर्वोत्तम किया जा सकता है उसे उच्चतर स्तरों पर केंद्रीकृत नहीं किया जाना चाहिए, स्थानीय निकायों को सौंपे गए कार्यों की स्पष्ट रूपरेखा, वित्तीय रुपों में प्रभावी सुपुर्दगी और नागरिकों के लिए सेवाओं का अभिसरण तथा साथ ही नागरिक केंद्रित अधिशासन संरचना शामिल है।

इन सिद्धांतों के आधार पर, यह रिपोर्ट पहले स्थानीय निकायों से संबद्ध वर्तमान संवैधानिक स्कीम और क्या प्राप्त किया जा चुका है तथा साथ ही क्या किया जाना शेष रहता है, पर गौर करती है। इस विश्लेषण के आधार पर यह प्रस्तावित है कि कार्यों तथा साथ ही निधियों तथा पदाधिकारियों

की सुपुर्दगी राज्य की सहमति से अनिवार्य हो न कि वैकल्पिक स्थानीय निकायों के लिए राष्ट्रीय स्तर पर ढांचागत कानून निर्धारित किया जाए। यह खण्ड स्व-शासन के लिए क्षमता निर्माण, स्थानीय और क्षेत्रीय स्तरों पर विकेंद्रीकृत आयोजना का कार्य एक एजेंसी को सौंपने की आवश्यकता, पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए अपेक्षित कार्यतंत्र जैसे सुपरिभाषित लेखापरीक्षा कार्यतंत्र तथा साथ ही स्थानीय निकायों के विरुद्ध शिकायतों पर गौर करने के लिए माध्यस्थम के गठन की आवश्यकता संबंधी मुद्दों से भी संबंधित है। जिला समाहर्ता के कार्यालय द्वारा प्रतिनिधित्व करने वाली ऐतिहासिक संस्थात्मक सुदृढ़ता को समाप्त किए बिना जिला स्तर पर प्रातिनिधिक शासन के तीसरे स्तर के सृजन के प्रश्न की भी व्यापक रूप से जांच की गई है और इस मुद्दे पर हमारी सिफारिश तीक्ष्ण अर्थ, जो प्रायः इस मुद्दे पर लिया जाता है, के मध्य सुनहरे अर्थों का प्रतिनिधित्व करती है।

इसके बाद ग्रामीण अधिशासन के खण्ड में वार्ड सभाओं की भूमिका; कार्मिक प्रबंधन और स्थानीय संसाधनों के प्रबंधन में पंचायती राज संस्थाओं को अधिक स्वायत्तता देने से संबद्ध मुद्दों की विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है। पंचायती राज-संस्थाओं को कार्यों का स्पष्ट हस्तांतरण सुनिश्चित करने के लिए "कार्यकलाप निरुपण" के प्रश्न और साथ ही राजकोषीय विकेंद्रीकरण के महत्वपूर्ण मुद्दे का भी इस खण्ड में विस्तारपूर्वक विश्लेषण किया गया है। अंततः केंद्र-प्रायोजित योजनाओं के कार्यान्वयन में पंचायती राज संस्थाओं को केंद्रीय भूमिका देने और उसके साथ ही उन्हें सांविधिक कार्य करने के लिए उपलब्ध कराई जाने वाली अनाबद्ध निधियों का समानुपात बढाने की आवश्यकता का भी विशेष उल्लेख किया गया है।

शहरी अधिशासन के क्षेत्र में, भारत में शहरीकरण में प्रवृत्तियों, शहरी स्थानीय शासनों के कार्यात्मक अधिकार क्षेत्र का स्पष्ट सीमांकन करने की आवश्यकता और मेयर को शहरी स्थानीय निकायों का प्रत्यक्षतः निर्वाचित मुख्य कार्यकारी अधिकारी बनाने की आवश्यकता की जांच अंतर्राष्ट्रीय सर्वोत्तम पद्धतियों के उदाहरण के साथ की गई है। नगरपालिका वित्त को कैसे पुनरुज्जीवित किया जा सकता है इसे भी इस खण्ड में विस्तारपूर्वक शामिल किया गया है। अवसंरचना और सेवा प्रावधान के क्षेत्र में संबंधित शहरी स्थानीय निकायों के प्रति सभी अवसंरचना सेवा प्रदायकों को स्पष्टतया जवाबदेह बनाने की आवश्यकता भी निर्धारित की गई है। देश में उभरते हुए विशाल नगरों के महत्व और उनकी विशिष्ट समस्याओं से निपटने के लिए विशेष संस्थात्मक कार्यतंत्र की आवश्यकता पर

भी बल दिया गया है। जेएनएनयूआरएम योजना का प्रयोग करते हुए भारत में 25 से 30 विश्व-स्तरीय नगर सृजित करने के अवसर का भी विशेष उल्लेख किया गया है। अंततः शहरी स्थानीय निकायों और राज्य सरकारों के बीच सहजीवी संबंध सृजित करने की आवश्यकता और इसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है, की जांच की गई तथा सिफारिशें की गई हैं।

अंत में, मैं श्री मणि शंकर अय्यर, पंचायती राज मंत्री, भारत सरकार, श्री वी.एन. कॉल, भारत के नियंत्रक और महा लेखापरीक्षक और श्री एन. गोपालस्वामी, भारत के मुख्य निर्वाचन आयुक्त, का उनके द्वारा दी गई बहुमूल्य जानकारियों और सुझावों, जो प्रशासनिक सुधार आयोग के लिए भारत में स्थानीय अधिशासन से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर अपनी सिफारिशें तैयार करने में अत्यधिक सहायक रहे थे, के लिए अपना आभार प्रकट करना चाहूंगा।

नई दिल्ली

दिनांक 22 अक्तूबर, 2007

(एम. वीरप्पा मोइली)

अध्यक्ष

भारत सरकार
कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय
प्रशासनिक सुधार और लोक शिकायत विभाग

संकल्प

नई दिल्ली, दिनांक 31 अगस्त, 2005

सं.के-11022/9/2004-आरसी-राष्ट्रपति लोक प्रशासन प्रणाली के पुनरुद्धार के लिए एक विस्तृत ब्लूप्रिंट तैयार करने हेतु दूसरा प्रशासनिक सुधार आयोग नामक एक जांच आयोग गठित करते हैं

2. आयोग में निम्नलिखित शामिल होंगेः

(i) श्री वीरप्पा मोइली - अध्यक्ष

(ii) श्री वी. रामचंद्रन - सदस्य

(iii) डॉ. ए.पी. मुखर्जी - सदस्य

(iv) डॉ. ए.एच. कालरो - सदस्य

(v) डॉ. जय प्रकाश नारायण - सदस्य

(vi) श्रीमती विनीता राय - सदस्य-सचिव

3. आयोग सरकार को सभी स्तरों पर एक सहक्रियात्मक, प्रत्युत्तरदायी, जिम्मेदार, सतत और सक्षम प्रशासन प्राप्त करने के लिए उपायों का सुझाव देगा। आयोग अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित पर विचार करेगाः

(i) भारत सरकार का संगठनात्मक ढांचा

(ii) अधिशासन में नीतिशास्त्र

(iii) कार्मिक प्रशासन का पुनःमार्जन

(iv) वित्तीय प्रबंधन प्रणालियों का सुदृढ़ीकरण

(v) राज्य स्तर पर प्रभावी प्रशासन सुनिश्चित करने के लिए उपाय

(vi) प्रभावी जिला प्रशासन सुनिश्चित करने के लिए उपाय

(vii) स्थानीय स्व-शासन/पंचायती राज संस्थाएं

(viii) सामाजिक पूंजी, न्यास और भागीदार जन सेवा सुपुर्दगी

(ix) नागरिक-केंद्रित प्रशासन

(x) ई-गवर्नेंस का संवर्धन

(xi) संघीय राज्यतंत्र के मुद्दे

(xii) संकट प्रबंधन

(xiii) लोक व्यवस्था

प्रत्येक शीर्ष के अधीन जांच किए जाने वाले कुछ मुद्दे इस संकल्प की अनुसूची के रुप में संलग्न विचारार्थ विषयों में दिए गए हैं।

4. आयोग अपने सीमाक्षेत्र से रक्षा, रेलवे, विदेश कार्य, सुरक्षा और आसूचना को प्रशासन तथा साथ ही केन्द्र-राज्य संबंधों, न्यायिक सुधार आदि जैसे विषयों की विस्तृत जांच को हटा सकता है, जिनकी अन्य निकायों द्वारा पहले से जांच की जा रही है। तथापि, आयोग सरकार अथवा इसकी किसी सेवा एजेंसियों के तंत्र के पुनर्गठन की सिफारिश करने में इन क्षेत्रों की समस्याओं का ध्यान रखने के लिए स्वतंत्र होगा।

5. आयोग राज्य सरकारों के साथ परामर्श की आवश्यकता पर विधिवत विचार करेगा।

6. आयोग स्वयं अपनी कार्यविधियां (आयोग द्वारा जैसा उपयुक्त समझा जाए राज्य सरकारों के साथ परामर्श सहित) तैयार करेगा और अपनी सहायता के लिए समितियां, परामर्शदाता/सलाहकार नियुक्त कर सकता है। आयोग इस विषय पर उपलब्ध मौजूदा सामग्री और रिपोर्टों पर गौर कर सकता है तथा प्रारंभ से सभी मुद्दों पर ध्यान देने का प्रयास करने की बजाय उसी पर आगे विचार कर सकता है।

7. भारत सरकार के मंत्रालय और विभाग आयोग द्वारा यथा अपेक्षित सूचना और दस्तावेज तथा अन्य सहायता प्रदान करेंगे। भारत सरकार विश्वास करती है कि राज्य सरकारें और अन्य सभी संबंधित आयोग को अपना पूर्ण सहयोग और सहायता देंगे।

8. आयोग अपने गठन के एक वर्ष के भीतर कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय, भारत सरकार को अपनी रिपोर्ट (रिपोर्टें) प्रस्तुत करेगा।

ह./-
(पी.आई.सुव्रथन)
अपर सचिव, भारत सरकार

भारत सरकार
कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय
प्रशासनिक सुधार और लोक शिकायत विभाग

....

संकल्प

नई दिल्ली, दिनांक 24 जुलाई, 2006

सं.के-11022/9/2004-आरसी (खण्ड-II) - राष्ट्रपति सरकार को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग का कार्यकाल दिनांक 31.8.2007 तक एक वर्ष के लिए बढ़ाते हैं।

ह0/-
(राहुल सरीन)
अपर सचिव, भारत सरकार

भारत सरकार
कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय
प्रशासनिक सुधार और लोक शिकायत विभाग

....

संकल्प

नई दिल्ली, दिनांक 17 जुलाई, 2007

सं.के-11022/26/2007-एआर - राष्ट्रपति सरकार को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग का कार्यकाल दिनांक 31.3.2008 तक एक वर्ष के लिए बढ़ाते हैं।

ह0/-
(शशी कांत शर्मा)
अपर सचिव, भारत सरकार

विषय सूची

		पृष्ठ संख्या
अध्याय 1	**प्रस्तावना : स्थानीय स्व-शासन-क्रमिक विकास और वृद्धि**	**01**
अध्याय 2	**मुख्य सिद्धांत**	**17**
	2.1 प्रस्तावना	17
	2.2 आनुषांगिकता	18
	2.3 लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण	19
	2.4 कार्यो की रुपरेखा	21
	2.5 वास्तविक रूप में सुपुर्दगी	23
	2.6 अभिसरण	24
	2.7 नागरिक केन्द्रीयता	26
अध्याय 3	**साझा मुद्दे**	**28**
	3.1 संवैधानिक स्कीम	28
	3.2 निर्वाचन	42
	3.3 स्थानीय शासनों के कार्य	55
	3.4 स्थानीय निकायों के लिए संरचनात्मक कानून	61
	3.5 निधियों की सुपुर्दगी	74
	3.6 स्व-अधिशासन के लिए क्षमता निर्माण	86
	3.7 विकेन्द्रित आयोजना	93
	3.8 जिम्मेवारी और पारदर्शिता	119
	3.9 लेखाकरण और लेखापरीक्षा	134
	3.10 प्रौद्योगिकी तथा स्थानीय अधिशासन	150

		पृष्ठ संख्या
अध्याय 4 ग्रामीण अधिशासन		**155**
4.1	संस्थात्मक सुधार	155
4.2	कार्यात्मक सुपुर्दगी	170
4.3	पंचायत वित्त व्यवस्था	186
4.4	ग्रामीण विकास	203
4.5	सेवाओं की सुपुर्दगी में पंचायतों की भूमिका	224
4.6	पांचवीं और छठी अनुसूची वाले क्षेत्रों में स्थानीय शासन	235
अध्याय 5 शहरी अधिशासन		**243**
5.1	शहरीकरण और वृद्धि	243
5.2	शहरी अधिशासन की संरचना	250
5.3	शहरी वित्त व्यवस्था	271
5.4	अवसंरचना और सेवा का प्रावधान	295
5.5	विशाल नगर-महानगर निगम	239
5.6	शहरी निर्धनता	349
5.7	शहरी आयोजना	363
5.8	शहरी स्थानीय निकाय और राज्य सरकार	379
	निष्कर्ष	**382**
	सिफारिशों का सारांश	**384**
अनुबंधों की सूची		
अनुबंध-I (1)	आईएसएस, नई दिल्ली में आयोजित ग्रामीण अधिशासन में विकेन्द्रीकरण पर राष्ट्रीय सभा में अध्यक्ष, प्रशासनिक सुधार आयोग के अध्यक्ष का भाषण	424
अनुबंध-I (2)	ग्रामीण अधिशासन में विकेन्द्रीकरण पर राष्ट्रीय सभा में प्रतिभागियों की सूची	439

		पृष्ठ संख्या
अनुबंध-I (3)	ग्रामीण अधिशासन में विकेन्द्रीकरण पर राष्ट्रीय सभा में सिफारिशें	442
अनुबंध-I (4)	ग्रामीण अधिशासन में विकेन्द्रीकरण पर प्रश्नावली	456
अनुबंध-I (5)	आईआईएम, बंगलौर में आयोजित शहरी अधिशासन पर राष्ट्रीय सभा में अध्यक्ष, प्रशासनिक सुधार आयोग का भाषण	483
अनुबंध-I (6)	शहरी अधिशासन पर राष्ट्रीय सभा में प्रतिभागियों की सूची	495
अनुबंध-I (7)	शहरी अधिशासन पर राष्ट्रीय सभा में सिफारिशें	498
अनुबंध-I (8)	शहरी अधिशासन पर प्रश्नावली	516
अनुबंध-IV (1)	कुछ पंचायत राज अधिनियमों के अंतर्गत राज्य सरकार की शक्तियां	535
अनुबंध-IV (2)	केंद्र-प्रायोजित योजनाओं पर जमीनी स्तर पर आयोजना के संबंध में विशेषज्ञ समूह की सिफारिशें	544
अनुबंध-V (1)	शहरी शासनों के कार्यकारी प्रमुखों की नियुक्ति-अंतर्राष्ट्रीय प्रथा	547
अनुबंध-V (2)	कुछ नगरपालिका अधिनियम के अधीन राज्य सरकार की शक्तियां	549

बॉक्सों की सूची

1.1	यथास्थिति सेवा में गिरावट	14
3.1	परिसीमन अधिनियम, 2002	53
3.2	ग्यारहवीं अनुसूची (अनुच्छेद 243छ)	58
3.3	बारहवीं अनुसूची (अनुच्छेद 243ब)	59
3.4	भारत में राज्य वित्त आयोगों के अनुभव	79
3.5	योजना आयोग द्वारा जारी दिशानिर्देश	103
3.6	जिला आयोजना समितियों का समर्थक ढांचा - विशेषज्ञ दल की सिफारिशें	104
3.7	नागरिक-केंद्रिक जिम्मेवारी : हुबली धारवाड़ नगरनिगम का मामला	128

पृष्ठ संख्या

3.8	महाराष्ट्र में नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा पंचायती राज संस्थाओं की लेखापरीक्षा का सिंहावलोकन	137
3.9	विवेकसम्मत लेखाकरण और रिपोर्टिंग मानदंड का मामला	139
3.10	आयोजना में सुधार लाने के लिए राष्ट्रव्यापी जीआईएस	152
4.1	तमिलनाडु में ग्राम पंचायतों का आय-वार वर्गीकरण	190
4.2	महत्वपूर्ण खनन कार्यकलापों के साथ राज्यों में खनिजों पर प्रोद्भूत रॉयल्टी	192
4.3	महाराष्ट्र में जिला परिषदों के कराधान संबंधी अधिकार	194
4.4	भारत निर्माण : कार्य	205
4.5	राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन - एक कल्पनादृष्टि	211
4.6	एनआरएचएम में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका	213
4.7	ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा ग्रामीण रेडियो का प्रसारण	221
4.8	झारखंड में समुदाय रेडियो	223
4.9	ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में स्वास्थ्य और शिक्षा की उपलब्धता को बढ़ावा देने में योजना आयोग का दृष्टिकोण	225
4.10	पेय जल कवरेज के प्रतिमान	226
4.11	दसवीं योजना में ग्रामीण इलाकों में जलापूर्ति पर बल	228
5.1	शहरी विकास का वृद्धि पथ	247
5.2	शहरी बस्तियां	249
5.3	मुख्य कार्यकारी अधिकारी के रूप में नेताजी	265
5.4	शहरी स्थानीय निकायों की राजकोषीय भूमिका की अंतर्राष्ट्रीय तुलना	272
5.5	शहरी स्थानीय निकायों की वित्तीय स्थिति	273
5.6	स्थापना पर व्यय	273
5.7	नगरपालिकाओं का कर अधिकार-क्षेत्र	277

		पृष्ठ संख्या
5.8	कर संग्रहण क्षमता	280
5.9	प्रभाव शुल्क	286
5.10	उधार हेतु विनियामक ढांचा	288
5.11	हरियाणा में प्रवर्तित नए राजकोषीय साधन	292
5.12	संसाधन के रूप में एफएसआई	293
5.13	यमुना में प्रदूषण	304
5.14	दिल्ली मेट्रो के लाभ	322
5.15	बस आधारित सार्वजनिक परिवहन प्रणाली	324
5.16	जन पारगमन विकल्प	326
5.17	महानगर का योजनाबद्ध विकास	341
5.18	ग्रामीण विकास एवं स्व-रोजगार प्रशिक्षण संस्थान	352
5.19	स्वास्थ्य एवं स्वच्छता	356
5.20	गंदी बस्तियों के निवासियों का स्वस्थाने पुनर्वास-तेहखंड परियोजना	358
5.21	मुंबई बाढ़-कारण	369
5.22	बंगलुरु में भूमि अतिक्रमण	370
5.23	एक छोटी जगह में समाविष्ट वृद्धि	372

सारणियों की सूची

3.1	राज्य निर्वाचन आयोगों की शक्तियों की तुलना	43
3.2	राज्य निर्वाचन आयोगों का गठन	49
3.3	स्थानीय निकायों (ग्रामीण और शहरी) का राजस्व और व्यय	75
3.4	जिला आयोजना समितियों की संरचना-कुछ राज्यों में विभिन्नता	98
3.5	राज्यों में जिला आयोजना समिति के गठन की प्रास्थिति	105
3.6	महानगर आयोजना समिति के गठन की प्रास्थिति	114

पृष्ठ संख्या

3.7	अग्रणी स्कीमों के लिए निधियों का आवंटन	135
4.1	राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों में पंचायतों का जनसांख्यिकीय ब्यौरा	156
4.2	ग्राम पंचायत का आकार	157
4.3	मध्यस्थ पंचायत का आकार	157
4.4	नवम्बर, 2006 की स्थिति के अनुसार कार्यो की सुपुर्दगी की स्थिति	172
4.5	केंद्र, राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों के लिए वर्ष 2006-07 की वार्षिक योजना का बजट अनुमान	204
4.6	एसएसए के प्रमुख निविष्टि लक्ष्यों की तुलना में प्रगति	230
5.1	विकास समूह द्वारा विश्व की कुल शहरी और ग्रामीण जनसंख्या का वितरण : 1950-2030	244
5.2	भारत : शहरी बस्तियों और नगरों की संख्या और जनसंख्या (मिलियन में) (1901-2001)	245
5.3	सबसे बड़े महानगर	246
5.4	भारत में 1901 से 2001 के बीच एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले शहरों/बस्तियों में शहरी जनसंख्या की वृद्धि	247
5.5	वर्ग/श्रेणी द्वारा शहरी बस्तियां/नगर : भारत की जनगणना, 2001	252
5.6	शहरी स्थानीय शासनों का अनुशंसित वर्गीकरण	253
5.7	राजनीतिक प्रतिनिधित्व अनुपात, 2000	254
5.8	नगर निगम अध्यक्ष के निर्वाचन का तरीका और उनका कार्यकाल	262
5.9	नगरपालिका संसाधन की प्रवृत्ति	275
5.10	स्थानीय शहरी निकायों (सभी स्तरों पर) का अखिल भारतीय राजस्व एवं व्यय	275
5.11	गंदी बस्तियों में रहने वाले शहरी लोगों के लिए जल तथा स्वच्छता सुविधाओं की उपलब्धता (प्रतिशत) (2002)	307

पृष्ठ संख्या

5.12	स्वास्थ्य क्षेत्र : अन्य देशों की तुलना में भारत	316
5.13	प्रति 100,000 की जनसंख्या पर शहरी अस्पतालों, बिस्तरों एवं औषधालयों की संख्या	317
5.14	शहरी परिवहन तरीकों की तकनीकी विशेषता और क्षमता	328
5.15	जेएनएनयूआरएम में वित्तपोषण का समग्र प्रतिमान	332
5.16	जेएनएनयूआरएम में क्षेत्र-वार मांग	334
5.17	जेएनएनयूआरएम में प्रति व्यक्ति निवेश मांग	335

चित्रों की सूची

1.1	दैनिक जल की औसत उपलब्धता (घन्टे/दिन)	12
1.2	सहरत्राब्दि विकास लक्ष्य	14
4.1	राज्यों में सुपुर्दगी की तुलनात्मक स्थिति	170
4.2	पंचायती राज संस्थाओं का अखिल भारतीय राजस्व 1998-1999	187
4.3	पंचायती राज संस्थाओं का अखिल भारतीय राजस्व 2002-2003	188
4.4	चुनिन्दा राज्यों में ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर	222
5.1	प्रस्तावित प्रणाली का चित्रात्मक प्रदर्शन	259
5.2	बंगलुरु शहर के राजस्व के स्रोत (2007-08)	274
5.3	म्युनिसियल सिटी कारपोरेशन (बंगलुरु - 2007-08) के वार्षिक व्यय का वर्गीकरण	274
5.4	वर्ष 2004-05 के दौरान प्रबंधन के अनुसार प्राथमिक और माध्यमिक/उच्च माध्यमिक स्कूल	314

संकेताक्षारों की सूची

संकेताक्षार	पूर्ण रुप
एसीए	अतिरिक्त केंद्रीय सहायता
एआर	आवास का आरक्षण
एआरसी	प्रशासनिक सुधार आयोग
एआरवी	वार्षिक किराया मूल्य
एआरडब्ल्यूएसपी	त्वरित ग्रामीण जलापूर्ति कार्यक्रम
एएसएचए	मान्यताप्राप्त सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता
एयूडब्ल्यूएसपी	त्वरित शहरी जलापूर्ति कार्यक्रम
आयुष	आयुर्वेद, योग और प्राकृतिक चिकित्सा यूनानी, सिद्धा और होम्योपैथी
बीडीओ	प्रखंड विकास अधिकारी
बीईओ	प्रखंड शिक्षा अधिकारी
बीईएसटी	वृहत मुम्बई विद्युत आपूर्ति एवं परिवहन
बीआरजीएफ	पिछड़ा क्षेत्र अनुदान निधि
बीआईएस	भारतीय मानक ब्यूरो
बीएसयूपी	शहरी निर्धनों को बुनियादी सेवाएं
बीडब्ल्यूएच	हैंड पम्प के साथ बोर वेल
सीएए	संवैधानिक संशोधन अधिनियम
सीएजी	नियंत्रक और महा लेखापरीक्षक
सीबीओ	समुदाय आधारित संगठन
सीडी/एनईएस	सामुदायिक विकास/राष्ट्रीय विस्तार सेवा
सीडीपी	व्यापक विकास योजना
सीएचसी	सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र
सीपीएचईईओ	केंद्रीय लोक स्वास्थ्य और पर्यावरणीय अभियांत्रिकी संगठन
सीएसएस	केंद्र-प्रायोजित स्कीम
डीए	विकास प्राधिकरण
डीडीए	दिल्ली विकास प्राधिकरण

संकेताक्षार	पूर्ण रुप
डीएचएम	जिला स्वास्थ्य मिशन
डीएचएस	जिला स्वास्थ्य सोसायटी
डीएलएफए	स्थानीय निधि लेखापरीक्षा निदेशक
डीएम	जिलाधीश
डीएमएस	आपदा प्रबंधन सहायता
डीपीएपी	सूखा-प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम
डीपीसी	जिला आयोजना समितियां
डीपीईपी	जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम
डीपीआर	विस्तृत परियोजना रिपोर्ट
डीआरडीए	जिला ग्रामीण विकास एजेंसी
डीडब्ल्यूसीयूए	शहरी क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों का विकास
डीडब्ल्यूएससी	जिला जल और सफाई समिति
ईएफसी	ग्यारहवां वित्त आयोग
ईओ	पृथ्वी प्रेक्षण
ईडब्ल्यूएस	आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग
एफएफडीए	मत्स्यपालक विकास एजेंसी
एफएसआई	फर्शी स्थान सूचकांक
जीआईएस	भौगोलिक सूचना प्रणाली
जीपी	ग्राम पंचायत
एचसीबीएस	आवास सहकारी निर्माण सोसायटी
हुडको	आवास और शहरी विकास निगम
आईएवाई	इंदिरा आवास योजना
आईसीएआई	इंस्टीटयूट ऑफ चार्टर्ड एकाउन्टेंटस ऑफ इंडिया
आईसीडीएस	एकीकृत बाल विकास स्कीम
आईडीएसएमटी	छोटे और मध्यम शहरों का एकीकृत विकास
आईईसी	सूचना शिक्षा और संप्रेषण

संकेताक्षार	**पूर्ण रुप**
आईएचएसडीपी	एकीकृत आवास और गंदी-बस्ती विकास कार्यक्रम
आईएलसीएसएस	एकीकृत निम्न लागत सफाई स्कीम
आईएमआर/एमएमआर	शिशु मृत्यु दर/मातृत्व मृत्यु दर
इंडो-यूएसएआईडी एफआईआरई-डी	भारत-यूएसएआईडी वित्तीय संस्था सुधार और विस्तार-ऋण
आईपीएचएस	भारतीय सार्वजनिक स्वास्थ्य मानक
इसरो	भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन
जेडीसीपी	झबुआ विकास संचार परियोजना
जेएनएनयूआरएम	जवाहरलाल नेहरु राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन
जेयूएससीओ	जमशेदपुर उपयोगिता एवं सेवा कंपनी
केएमडीए	कोलकाता महानगर विकास प्राधिकरण
केवीआईसी	खादी और ग्रामोद्योग आयोग
एलआरटी	लाइट रेल ट्रांजिट
एमएलए	विधानसभा सदस्य
एमएलएएलएडीएस	विधायक स्थानीय क्षेत्र विकास स्कीम
एमपीसी	महानगर आयोजना समिति
एमडब्ल्यूएस	लघु जलापूर्ति स्कीम
एनबीसी	राष्ट्रीय भवन संहिता
एनसीएईआर	राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक अनुसंधान परिषद
एनसीईआरटी	राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद
एनसीआरडब्ल्यूसी	संविधान के कार्यकरण की समीक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग
एनसीयू	राष्ट्रीय शहरीकरण आयोग
एनडीडब्ल्यूएम	राष्ट्रीय पेय जल मिशन
एनजीओ	गैर-सरकारी संगठन
एनआईपीएफपी	राष्ट्रीय लोक वित्त और नीति संस्थान
एनआईयूए	राष्ट्रीय शहरी कार्य संस्थान

संकेताक्षार	पूर्ण रुप
एनएलसीपीआर	संसाधनों का अव्यपगत केंद्रीय पूल
एनएमएएम	राष्ट्रीय नगरपालिका लेखा नियमपुस्तिका
एनएमएमपी	राष्ट्रीय मिशन मोड परियोजना
एनएनआरएमएस	राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधन प्रबंध प्रणाली
एनआरईजीए	राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम
एनआरएचएम	राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन
एनएसडीपी	राष्ट्रीय गंदी बस्ती विकास कार्यक्रम
एनएसएलआरएस	राष्ट्रीय मुक्ति और पुनर्वास स्कीम
एनएसएसओ	राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन
ओएण्डएम	प्रचालन और अनुरक्षण
ओबीसी	अन्य पिछड़ा वर्ग
पीएसी	लोक लेखा समिति
पीडीएस	सार्वजनिक वितरण प्रणाली
पीईएएफ	पंचायत सशक्तिकरण और जिम्मेवारी निधि
पीईएसए	पंचायत राज (अनुसूचित क्षेत्रों मे विस्तार) अधिनियम
पीएचसी	प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र
पीएचईडी	लोक स्वास्थ्य और अभियांत्रिकी विभाग
पीपीपी	सरकारी-निजी भागीदारी
पीआरआई	पंचायती राज संस्था
पीएस	पंचायत समिति
पीयूआरए	ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाओं का प्रावधान
आरईजीएस	ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम
आरजीएनडीडब्ल्यूएम	राजीव गांधी राष्ट्रीय पेय जल मिशन
आरओडब्ल्यू	मार्गाधिकार
आरटीआई अधिनियम	सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005

संकेताक्षार	पूर्ण रुप
आरयूडीएसईटीआई	ग्रामीण विकास और स्व-रोजगार प्रशिक्षण संस्थान
एससी	अनुसूचित जाति
एसडीएमसी	स्कूल विकास और प्रबंध समिति
एसईबीआई	भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड
एसईसी	राज्य निर्वाचन आयोग
एसईजेड	विशेष आर्थिक क्षेत्र
एसएफसी	राज्य वित्त आयोग
एसएफडीए	लघु कृषक विकास एजेंसी
एसजीआरवाई	संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना
एसएचएएसयू	आवास और आश्रय स्थल उन्नयन स्कीम
एसएचजी	स्व-सहायता समूह
एसजेएसआरवाई	स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना
एसजेएसवाई	स्वर्ण जयंती स्व-रोजगार योजना
एसपीवी	विशेष प्रयोजन साधन
एसएसए	सर्व शिक्षा अभियान
एसटी	अनुसूचित जनजाति
एसयूएमई	शहरी सूक्ष्म उद्यम स्कीम
एसयूडब्ल्यूई	शहरी मजदूरी रोजगार स्कीम
एसयूडब्ल्यूएसएम	राज्य जल और सफाई मिशन
टीसीपीओ	नगर और कस्बा आयोजना संगठन
टीडीसीसी	प्रशिक्षण और विकास संप्रेषण चैनल
टीडीआर	विकास अधिकारों का हस्तांतरण
टीएफसी	बारहवां वित्त आयोग
टीजीएस	तकनीकी दिशानिर्देशन और पर्यवेक्षण
टिस्को	टाटा आयरन एण्ड स्टील कंपनी

संकेताक्षार	पूर्ण रुप
टीएससी	पूर्ण स्वच्छता अभियान
टीएसपी	जनजातीय उप-योजना
यूआईडीएसएसएमटी	लघु मध्यम शहरों के लिए शहरी अवसंरचना विकास स्कीम
यूआईजी	शहरी अवसंरचना और अधिशासन
यूएलबी	शहरी स्थानीय निकाय
यूएलजी	शहरी स्थानीय शासन
यूएमटीए	एकीकृत महानगर परिवहन प्राधिकरण
यूएनईपी	संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम
यूएनएफपीए	संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कार्यकलाप निधि
यूआरआईएफ	शहरी सुधार पहल निधि
यूआरपी	समरुप बुलावा अवधि
यूटीए	एकीकृत परिवहन प्राधिकरण
यूटी	संघ राज्य क्षेत्र
वीएएमबीएवाई	बाल्मिकी अम्बेडकर आवास योजना
वीएटी	मूल्य वर्धन कर
वीईसी	विद्यालय शिक्षा समिति
वीपीएन	वास्तविक निजी नेटवर्क
वीआरसी	ग्राम संसाधन केन्द्र
वीडब्ल्यूएससी	ग्राम जल और सफाई समिति
जेडपी	जिला परिषद

1

प्रस्तावना

स्थानीय स्व-शासन-क्रमिक विकास और वृद्धि

1.1 स्थानीय शासन में आर्थिक सुधारों के साथ संस्थात्मक सुधारों को शामिल करना गाँधी जी के 'पूर्ण स्वराज' की दूरदर्शी कल्पनादृष्टि थी। स्थानीय शासन का सशक्तिकरण और आर्थिक सुधार दो अहम् पहल थी, जिनका श्रीगणेश 1990 के दशक में किया गया था। बाद के वर्षों में आर्थिक सुधारों ने जोर पकड़ा जिनका प्रतिफल बढ़ी हुई विकास दर, विदेशी मुद्रा का प्रचुर भण्डार और विविध सेवाओं तथा वस्तुओं की उपलब्धता जैसे महत्त्वपूर्ण लाभांशों के रूप में सामने आया। सुधारों के कारण होने वाले स्वतंत्रता और चयन ने समूचे राजनीतिक फलक में एक राष्ट्रीय आम सहमति तैयार की है जिसे आगे भी सुनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है। स्थानीय शासन के सशक्तिकरण को भी व्यापक रूप से एक प्रमुख सिद्धान्त के रूप में माना जा रहा है और सभी पार्टियाँ इसके लिए समान रूप से प्रतिबद्ध हैं। लेकिन व्यवहार में देखें तो जैसी कि संकल्पना की गई थी, वास्तविक सशक्तिकरण साकार नहीं हो पाया है।

1.2. इस परिप्रेक्ष्य में देखे जाने पर, प्रशासनिक सुधार आयोग (एआरसी), के विचारार्थ विषयों, चूंकि ये स्थानीय शासन में सुधारों के मुख्य क्षेत्रों को शामिल कर रहें हैं, में स्थानीय स्व-शासन के विषय पर विशेष महत्त्व दिया गया है। ये विचारार्थ विषय निम्नानुसार हैं:

(i) सार्वजनिक संगठनों और नागरिक सेवाओं के सुपुर्दगी कार्यतंत्र में सुधार लाना और ऐसी प्रक्रियाओं में नागरिकों तथा हितधारकों की बड़े पैमाने पर भागीदारी बढ़ाना।

- उपयोगी सेवाएं जैसे जल, विद्युत, स्वास्थ्य और सफाई तथा शिक्षा आदि।

(ii) सहभागी अधिशासन तथा नेटवर्किंग को बढ़ावा देने के लिए स्थानीय स्व-शासन संस्थाओं का सशक्तिकरण।

(iii) स्थानीय निकायों के बेहतर निष्पादन के लिए उनके प्रशिक्षण हस्तक्षेप और क्षमता निर्माण को प्रोत्साहित करना।

1.3. आयोग ने शहरी और ग्रामीण स्थानीय अधिशासन के मुद्दों की तीन भागों में जांच की है जो निम्नानुसार हैंः

(क) *साझा मुद्देः* इस भाग में उन मुद्दों को लिया गया है जो ग्रामीण तथा शहरी अधिशासन दोनों पर समान रूप से लागू हैं।

(ख) *ग्रामीण अधिशासनः* यह भाग ग्रामीण अधिशासन से संबद्ध मुद्दों से संबंधित है।

(ग) शहरी अधिशासनः यह भाग शहरी अधिशासन से संबंधित मुद्दों से संबंध रखता है।

1.4. हमारे देश में स्थानीय स्व-शासन की अवधारणा कोई नई बात नहीं है और वैदिक ग्रंथों में सामुदायिक सभाओं के कई उल्लेख मिलते हैं। लगभग 600 वर्ष ई. पूर्व गंगा के उत्तरी भाग अर्थात आज के बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश प्रांत में छोटे-छोटे कई गणतंत्रों का शासन होता था जिन्हें 'जनपद' कहा जाता था, इनमें से लिच्छवी गणतंत्र सर्वाधिक शक्तिशाली था। इन जनपदों में सरकारी काम-काज स्थानीय मुखियाओं को मिलाकर बनी सभा द्वारा किया जाता था। मौर्य काल के बाद के समय में भी मालवा और शूद्रक के विद्यमान गणतंत्रों में भी सभी शासन सम्बन्धी निर्णय सभा द्वारा किए जाते थे। यूनानी राजदूत मेगास्थनीज जो कि 303 वर्ष ई. पूर्व चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में आया था, ने 30 सदस्यों की 6 समितियों वाली एक 'नगरसभा' का उल्लेख किया है जो कि पाटलिपुत्र का संचालन करती थी। इसी तरह की सहभागी संरचनाएँ दक्षिण भारत में भी मौजूद थीं। चोल साम्राज्य में भी वार्डो तथा उप-समितियों के साथ परिषदें होती थीं जो प्रशासन, विवादित मामलों के विवाचन और सामाजिक कार्यो के प्रबंधन में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती थी। वे राजस्व संग्रहण, लोगों के व्यक्तिगत अंशदान तथा राज्य के प्रतिनिधि के साथ सामूहिक आकलन सम्बन्धी बातचीत के लिए भी जिम्मेवार होती थी। उन्हें गाँव की परती भूमि का स्वामित्व और उसे बेचने का अधिकार भी होता था तथा वे सिंचाई, सड़क निर्माण व इससे जुड़े अन्य काम-काज भी करती थी। उनकी गतिविधियाँ (लेन-देन) गाँवों के मंदिर की दीवारों पर दर्ज की जाती थीं जोकि तत्कालीन सामुदायिक जीवन की ज्वलंत झांकी प्रस्तुत करती हैं और प्राचीन भारतीय राजनीतिक फलक में अपनाई गई उत्कृष्ट परम्पराओं की अमिट यादगार है। स्थानीय स्व-शासन संस्थाओं का मौजूदा ढांचा ब्रिटिश द्वारा 1688 में मद्रास में नगरनिगम की स्थापना के साथ खड़ा किया गया। बाद में 1726 में बम्बई और कलकत्ता में इसी किस्म के निकायों की स्थापना के साथ ही इस प्रयोग को दोहराया गया। एक मेयर और अधिकांश अंग्रेज नागरिक पार्षदों को मिलाकर बने ये निगम

बुनियादी रूप से अच्छी खासी न्यायिक शक्तियाँ और प्राधिकार प्राप्त प्रशासनिक इकाईयाँ थीं। बाद के 150 वर्षों में कई छोटे-छोटे मुफ्फसिल[1] कस्बों में नगर निगम के निकाय बनाए गए हालांकि उनके कार्यकलाप आमतौर पर स्वच्छता, सड़क मरम्मत, प्रकाश व्यवस्था तथा अन्य विविध मदों तक सीमित रहे।

1.5. वर्ष 1872 में लार्ड मेयो ने इन निगमों के लिए निर्वाचित प्रतिनिधियों का प्रावधान किया जिसे उनके उत्तराधिकारी लार्ड रिपन ने 1882 में और विकसित किया। 1880 के दशक तक कलकत्ता और बम्बई सहित कई शहरों और कस्बों के नगरपालिका निकायों में निर्वाचित प्रतिनिधियों का पूर्व-प्रभुत्व था। बंगाल स्थानीय स्व-शासन अधिनियम, 1885 के अधिनियमन से ग्रामीण क्षेत्रों के लिए एक समतुल्य प्रभावी ढांचा तैयार किया गया जिसके तहत तत्कालीन बंगाल के समूचे प्रान्त में स्थानीय जिला बोर्डों की स्थापना की गई। इन बोर्डों में जिला अधिकारी की अध्यक्षता में नामित तथा साथ ही निर्वाचित सदस्य होते थे जो ग्रामीण सड़कों, विश्राम गृहों, सड़क के किनारे की भूमि व सम्पत्तियों, पब्लिक स्कूलों की देख-रेख व उनके पर्यवेक्षण, धमार्थ औषधालयों तथा पशु-चिकित्सालयों के संचालन के जवाबदेह होते थे। पाँच वर्षों की अवधि के दौरान देश के अन्य भागों में भी बड़े पैमाने पर जिला बोर्ड गठित हुए जिनमें बिहार, उड़ीसा, असम और उत्तर पश्चिम प्रान्त प्रमुख थे। जब स्थानीय स्व-शासन पर स्थान्तरित विषय हो गया तब 1909 के मिंटो-मार्ले सुधारों और 1919 के मांटेग चेम्सफोर्ड सुधारों ने शासन प्रक्रिया में जनता की भागीदारी को और भी व्यापक बना दिया और 1924-25 तक आते-आते जिला बोर्डों में निर्वाचित प्रतिनिधियों और गैर-सरकारी अध्यक्ष की बहुतायतता हो गई। यह व्यवस्था वर्ष 1947 में देश की स्वतंत्रता और उसके बाद 1950 के दशक के उत्तरार्ध तक बनी रही।

1.6 संविधान सभा की बहसों से इस बात का साफ संकेत मिलता है कि उस समय के कर्णधार तत्कालीन प्रशासनिक प्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन करने में हिचकिचा रहे थे, और मध्य वर्ग के तौर पर उनकी एक सहमति यह थी कि शासन के नीति-निर्देश सिद्धान्तों में पंचायती राज संस्थाओं की एक खास जगह होगी। (भाग-IV, अनुच्छेद 40) जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रावधान भी किया गया है कि राज्य ग्राम पंचायतों के गठन की व्यवस्था करेगा और स्व-शासन की एक इकाई के रूप में उन्हें सक्षम बनाने की दृष्टि से उन्हें यथा-आवश्यक रूप से शक्तियाँ और प्राधिकार प्रदान करेगा। किन्तु यहाँ एक सामान्य विचार यह है कि चूंकि स्थानीय शासन की संस्थाएँ राज्य विधानमंडलों की ही सृजक हैं इसलिए राज्य सरकार की शक्तियों को धीरे-धीरे कम नहीं करना है।

1. मुफ्फसिल का अर्थ छोटे कस्बे हैं।

1.7 स्व-शासन की एक इकाई के तौर पर ग्राम पंचायतों की स्थापना सम्बन्धी राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धान्तों के अनुपालन में वर्ष 1952 में ग्रामीण क्षेत्र की महत्त्वाकांक्षी पहल के तौर पर सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। इस कार्यक्रम में तकनीकी सेवाएँ आपूर्ति और ऋण सरकार ने मुहैया कराई थी और जनता द्वारा संचालित लोकतांत्रिक और सहकारी संगठनों के माध्यम से ग्रामीण जीवन के सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन पर विशेष जोर दिया गया था। इस कार्यक्रम के तहत 100 से 150 गाँवों को मिलाकर एक सामुदायिक विकास प्रखंड गठित किया गया था और समूचे समुदाय की सक्रिय भागीदारी इस अनूठे प्रयोग की कुंजी थी जिसने जमीनी स्तर पर लोकतंत्र को सुदृढ़ता प्रदान की। वर्ष 1953 में राष्ट्रीय विस्तार सेवा आरम्भ की गई जो कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम का आवर्धित रूप था और जिसका लक्ष्य ग्रामीण दस्तकारी क्षेत्रों, पशुपालन तथा कृषि आदि क्षेत्रों में अद्यतन वैज्ञानिक और तकनीकी जानकारी को हस्तांतरित करना शामिल था। इसमें अन्तर्निहित भावना अभिनव पायलेट परियोजना का विस्तार था और यद्यपि कार्यक्रम में निर्वाचित लोकतांत्रिक संस्थाओं की कोई सहभागिता नहीं थी क्योंकि उनका संचालन सरकारी पदाधिकारियों ने विकास मंडल और प्रखण्ड समिति जैसे अर्ध-लोकप्रिय और तदर्थ निकायों के माध्यम से किया था फिर भी इसकी उपयोगिता यही रही कि इस कार्यक्रम ने आजादी के तत्काल बाद बड़े पैमाने पर ग्रामीण आबादी का ध्यान अपनी और खींचा था।

1.8. वर्ष 1956 में जब दूसरी पंचवर्षीय योजना शुरू हुई तो इसकी सिफारिश थी कि सांगठनिक तौर पर ग्राम पंचायतों को उच्च-स्तरीय लोकप्रिय संगठनों से जोड़ा जाना चाहिए और स्पष्ट तौर पर कानून-व्यवस्था, न्याय-प्रशासन और राजस्व प्रशासन सम्बन्धी अन्य चुनिंदा कार्यो को छोड़कर जिले अथवा उप-प्रभाग के समस्त सामान्य प्रशासन और विकास के सभी कार्य चरणों में लोकतांत्रिक निकायों द्वारा ही अधिग्रहित किए जाने चाहिए। इस पहल को प्रचालनात्मक बनाने के लिए सरकार ने वर्ष 1957 में श्री बलवंत राय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति की नियुक्ति की। श्री बलवंत मेहता ने दो दिशाओं पहली विकास कार्यक्रमों के प्रभावी तरीके से लागू करने के लिए प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण होना चाहिए और विकेन्द्रित प्रशासनिक प्रणाली को स्थानीय निकायों के नियंत्रण में रखा जाए तथा दूसरी क्षेत्र में विकास गतिविधियों के आलम्ब के तौर पर कार्य करने के लिए इस स्तर पर निर्वाचित पंचायत समिति के साथ-साथ सीडी/एनईएस को समूचे देश भर में प्रशासनिक लोकतांत्रिक इकाइयों के रूप में तैयार किया जाना चाहिए। समिति को कई मामलों में तकनीकी कार्मिकों के निर्देशन की आवश्यकता भी होगी लिहाजा इसके नियंत्रण में उपयुक्त सक्षमता के विभागीय अधिकारी भी होने चाहिए। पंचायत समिति के पास आय के स्रोत भी होने चाहिए। लोक हित में पंचायत समिति का प्रतिस्थापन, शान्ति भंग होने के आधार पर

समाहर्ता द्वारा पंचायत समिति के संकल्प का निरस्तीकरण देश के कानून के विरूद्ध होने या संविधान सम्मत नहीं होने जैसी नियंत्रण की कुछेक शक्तियाँ सरकार द्वारा अपने पास रखी गई हैं। सिफारिशों में अनु. जा./अनु.ज.जा. और महिलाओं के लिए सह-विकल्प के जरिए आरक्षण का सुझाव भी दिया गया था। समन्वय सुनिश्चित करने की दृष्टि से, समिति की सिफारिश थी कि पंचायत समितियों के सभी अध्यक्षों, विधानसभा सदस्यों, संसद सदस्य और जन स्वास्थ्य, कृषि, पशु चिकित्सा तथा शिक्षा विभागों के जिला-स्तरीय अधिकारियों को सदस्य के तौर पर मिलाते हुए समाहर्ता की अध्यक्षता में जिला स्तर पर एक जिला परिषद का गठन किया जाए। लेकिन समिति ने यह भी साफ कर दिया था कि जिले का यह स्तर महज एक परामर्शदात्री निकाय होगा, अर्थात पंचायत समितियों के लिए एक सहायक ढांचा भर होगा।

1.9. समिति की सिफारिशों का आम तौर पर स्वागत किया गया और इन्हें लागू करने के लिए कई राज्यों द्वारा पंचायती राज विधान अधिनियमित किए गए। 1960 के दशक तक इसने देश की 90 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या को ग्राम पंचायतों द्वारा शामिल किया। कुल मौजूदा 4974 प्रखडों में से 4033 प्रखंडों में प्रखण्ड[2] समितियाँ गठित की जा चुकी थी। उस समय के मौजूदा 399 जिलों में से विविध वास्तविक शक्तियों वाली 262 जिला परिषदें भी गठित की जा चुकी थीं। हालांकि विभिन्न राज्यों में सभी तीन स्तरों पर पंचायती ढांचा स्थापित किया जा चुका था तथापि उनकी शक्तियाँ और उनके संसाधन सीमित थे, और यह अपरिहार्य विचार कि सभी विकास गतिविधियाँ सिर्फ ब्लाक पंचायत समिति के माध्यम से ही निष्पादित की जानी चाहिए, धीरे-धीरे समाप्त हो गया। इसके अलावा महाराष्ट्र और गुजरात, जहाँ वित्तीय विकेन्द्रीकरण का काम असरकारक तरीके से किया गया था, जैसे राज्यों में भी एसएफडीए, डीपीएपी और आईटीडीपी जैसी महत्त्वपूर्ण स्कीमों को निर्वाचित जिला परिषदों के दायरे में नहीं लाया जा सकता था। दुर्भाग्यवश सामुदायिक विकास कार्यक्रम के सघन दौर के बाद केन्द्रीकरण की दिशा में एक स्पष्ट प्रवृत्ति देखी गई। पंचायती राज चुनावों को अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दिया गया और प्रखंड विकास के लिए नियत निधियों को चतुराई से हटा दिया गया। कुल मिलाकर नतीजा यह रहा कि 1970 के दशक तक ये निकाय पर्याप्त कार्य और प्राधिकार के बिना ही रह गए थे। बाद में भारी पैमाने पर परा-स्थानिकों के निर्माण से भी इन संस्थाओं की स्थिति और बदतर होती गई क्योंकि इन परा-स्थानिकों को जलापूर्ति और स्लम विकास बोर्ड जैसे जो काम सौंपे गए थे अभी तक वे पंचायती राज संस्थाओं के अधिकार क्षेत्र में ही आ रहे थे। दोहराव से ये कार्य जटिल हो गए और जिन संसाधनों पर ये निर्भर थे उन्हें स्थानीय सरकारों द्वारा निपटाया जाना पड़ा।

2. प्रखण्ड का अर्थ विकास "प्रखण्ड" है।

1.10. राजस्थान और आन्ध्र प्रदेश में शुरूआत के साथ वर्ष 1959 में भारतीय संघ के सभी राज्यों में पंचायती राज प्रणाली कार्यरत थी। हालांकि केरल और जम्मू तथा कश्मीर में उच्चतर स्तर स्थापित नहीं किए गए थे। 1980 के दशक के अंत तक मेघालय, नगालैण्ड, मिजोरम और संघ शासित क्षेत्र लक्षद्वीप के अलावा अन्य सभी राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों ने पंचायती राज संस्थाओं के सृजन के लिए विधान अधिनियमित किए थे। 14 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में त्रि-स्तरीय प्रणाली थी। 4 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्र में द्वि-स्तरीय ढांचा था और 9 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में केवल एकल स्तरीय ढांचा कार्यरत था।

1.11. वर्ष 1969 में राज्य प्रशासन पर अपनी रिपोर्ट में प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग ने सिफारिश की थी कि पंचायती राज प्रणाली का मुख्य कार्यकारी अंग जिला स्तर पर 'जिला परिषद' के रूप में ही गठित किया जाना चाहिए न कि प्रखंड स्तर पर पंचायत समिति के रूप में। उनका मानना था कि जिला परिषदें ऐसी स्थिति में है जहाँ से वे संपूर्ण जिले की संसाधनगत स्थिति और उसकी आवश्यकताओं पर बेहतर तरीके से नजर रख सकती हैं और इस तरह इलाके के लिए बेहतर योजना बनाने में वह ज्यादा समर्थ और सक्षम होगी। आयोग का यह भी विचार था कि संसाधनों की कमी के चलते प्रखंड स्तर पर बेहतर सज्जित प्रशासनिक और विकास सम्बन्धी मशीनरी को बनाए रखना कठिन था।

1.12. वर्ष 1977 में पंचायती राज संस्थाओं के कार्य की समीक्षा करने और ग्रामीण क्षेत्रों के विकास तथा विकेन्द्रीकृत योजना के प्रभावशाली साधन के तौर पर पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़ करने की दृष्टि से सरकार ने श्री अशोक मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया था। सरकार द्वारा ग्रामीण विकास जिसमें कृषि उत्पादन बढ़ाना, रोजगार सृजन और गरीबी उन्मूलन भी शामिल था, को दी गई उच्च प्राथमिकता के दृष्टिगत यह जरूरी समझा गया था। अशोक मेहता समिति का यह मानना था कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया को राज्य स्तर पर ही समाप्त नहीं होना चाहिए। संसद, राज्य विधानमंडलों के चुनावों के सिलसिले शुरू हुए जिन्होंने लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रक्रिया के सुर में सुर मिलाते हुए देश की जनता में राजनीतिक संप्रभुसत्ता के रूप में अपनी शक्तियों और प्राधिकारों के प्रति सचेत और जागरूक बनाया। राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर लोकतंत्र की तरह पंचायती राज की अवधारणा भी साध्य और साधन दोनों है। यह लोकतंत्र का वह अपरिहार्य और आवश्यक विस्तार हैं जो आगे चलकर देश में लोकतांत्रिक पिरामिड का व्यापक आधार तैयार करता है। अंत में कहें तो पंचायती राज को विकासात्मक, नगरनिगम सम्बन्धी और कुल मिलाकर विनियामक कार्यों सम्बन्धी काम-काज करने वाली स्थानीय

लोकतांत्रिक प्रणाली के रूप में उभर कर सामने आना चाहिए। महाराष्ट्र-गुजरात मॉडल, जिसकी प्रशंसा प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग और अन्य कई समितियों द्वारा की गई थी, के आधार पर समिति का मानना था कि राज्य स्तर से नीचे विकेन्द्रीकरण के पहले बिन्दु के तौर पर जिले को ही होना चाहिए।

1.13. इस समिति द्वारा अनुशंसित स्व-शासन संस्थाओं का अगला स्तर मंडल पंचायत था, जिसे लगभग 10,000 से 15,000 तक की आबादी को शामिल करना था। सोचा यह गया था कि मंडल पंचायतों के अधिकार क्षेत्र में आने वाले गांवों के समूह आगे चलकर विकास के केन्द्र के तौर पर सामने आएंगे। एक तदर्थ व्यवस्था के रूप में समिति की सिफारिश थी कि पंचायत समिति को प्रखंड स्तर पर ही बने रहने दिया जाए, स्व-शासन की एक इकाई के तौर पर नहीं बल्कि जिला परिषद के मुख्य कार्यकारी घटक के रूप में मनोनीत मध्य स्तरीय सहकारी-सहयोग निकाय के रूप में सक्रिय रखा जाए। इसी प्रकार गाँव के स्तर पर एक नामित ग्रामीण स्तरीय समिति की संकल्पना की गई जिसमें (क) मंडल पंचायत के निर्वाचित सदस्य, (ख) जिला परिषद के निर्वाचित सदस्य और (ग) लघु तथा सीमान्त किसानों का एक प्रतिनिधि शामिल हो।

1.14. ढांचे को संपूर्ण दृष्टि से देखने पर, जिला परिषद की सिफारिश समग्र रूप से जिले की आयोजना, कार्यक्रमों के समन्वय और निचले पंचायती राज संस्थाओं को दिशानिर्देश देने के लिए की गई थी। जिला स्तरीय आयोजना कार्य के लिए एक मशीनरी के निर्माण की सिफारिश की गई थी और इसके लिए समिति की सिफारिश थी कि जिला मुख्यालय में व्यावसायिक रूप से कुशल और दक्ष विशेषज्ञों का एक दल होना चाहिए। इस प्रकार तैयार वार्षिक कार्यक्रम उनके विचार/टिप्पणियों के लिए जिला परिषद को प्रस्तुत किया जाना चाहिए। समिति की अन्य सिफारिश यह थी कि विकास सम्बन्धी सभी कार्य और संबद्ध सरकारी कर्मचारी जिला परिषद के नियंत्रण में ही रहने चाहिए। जिला परिषद की सहायता के लिए समिति की सिफारिश थी कि मुख्य कार्यकारी अधिकारी नाम से एक वरिष्ठ पद होना चाहिए जो कि नीतियों की रूप-रेखा तैयार करने और उनके कार्यान्वयन में निकाय की सहायता करेगा। जिले में पदस्थापित अधिकारियों के बीच प्रभावी समन्वय सुनिश्चित करने के लिए उक्त अधिकारी का जिला समाहर्ता पद से वरिष्ठ होना आवश्यक है।

1.15. 1980 के दशक में परवर्ती समितियों द्वारा थोड़े बहुत फेर-बदल के साथ साधारणतया अशोक मेहता समिति का स्वागत किया गया और इससे कई राज्यों को अपने-अपने पंचायती राज अधिनियमों

को संशोधित करने की प्रेरणा मिली। कर्नाटक, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल और गुजरात ने नई व्यवस्था को अपना लिया परंतु उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, पंजाब और हरियाणा ने अपने कदम वापस खींच लिये। इनमें से कुछ राज्यों ने तो निकायों की मौजदूगी के बावजूद अपने यहाँ चुनाव तक नहीं कराये।

1.16. समिति, जिसने अपनी रिपोर्ट वर्ष 1978 में प्रस्तुत की, का यह भी मानना था कि शब्दाडम्बर के बावजूद पंचायत का सशक्तिकरण कोई महत्त्व नहीं रखता जब तक इसकी संवैधानिक हैसियत न हो। अतः इस विषय पर भी संवैधानिक संशोधन करने की आवश्यकता है। कमोवेश कुछ परिवर्तनों के साथ इन्हीं सिफारिशों के आधार पर पंचायती राज संस्थाओं का प्रारूप आज देश में मौजूद है।

1.17. हालांकि स्थानीय स्व-शासन संस्थाओं को सुदृढ़ बनाने सम्बन्धी विविध पहलुओं पर गौर करने के लिए वर्ष 1978 और 1986 के बीच श्री सी. एच. हनुमंत राव, श्री जी. बी. के. राव और श्री एल.एम. सिंघवी के अधीन समितियां गठित की गई थीं, जिन्होंने अशोक मेहता समिति द्वारा यथा प्रस्तावित विचारों/संरचना में परिवर्तन के लिए थोड़े बहुत सुझाव भी पेश किए। बाद में विकेंद्रीकृत अधिशासन में अगला महत्त्वपूर्ण बदलाव श्री राजीव गाँधी की सरकार द्वारा जुलाई 1989 में प्रस्तुत 64वें तथा 65वें संवैधानिक संशोधन विधेयक के माध्यम से आया। इस विधेयक के बुनियादी प्रावधान इस प्रकार थेः (क) पंचायती राज संस्थाओं/शहरी स्थानीय निकायों का गठन सभी राज्यों के लिए अनिवार्य हो, (ख) चुनाव निर्वाचन आयोग द्वारा ही कराए जाएं, (ग) पंचायतों/शहरी स्थानीय निकायों की अवधि पाँच वर्ष हो और यदि वे अपनी नियत अवधि से पहले भंग हो तो आगामी छः महीनों के भीतर नए चुनाव कराएं जाए। (घ) अन्य संस्थाओं के प्रतिनिधियों के लिए आरक्षित सीटों के अतिरिक्त सभी सीटें सीधे चुनावों के माध्यम से ही भरी जाए। (ङ) अनु. जा./अनु. ज. जा./महिलाओं के लिए सीटों का आरक्षण किया जाए, (च) स्थानीय निकायों को और अधिक कार्य अर्थात लघु सिंचाई, मृदा-संरक्षण, बायो-गैस, स्वास्थ्य, अनु. जा./अनु. ज. जा. को देय लाभ आदि जैसे कार्य भी सौंपे जाएं। (छ) आयोजना और बजट निर्माण प्रणाली को पंचायत के स्तर पर ही शुरू किया जाए, (ज) पंचायतों/शहरी स्थानीय निकायों को करों/चुंगी और शुल्क लगाने का अधिकार देने के लिए राज्य विधानमंडल द्वारा कानून बनाया जाए। (झ) पंचायती राज संस्थाओं/शहरी स्थानीय निकायों के खाते नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा लेखापरीक्षित हो। तथापि यह विधेयक राज्य सभा में पारित नहीं हो सका।

1.18. वर्ष 1990 में पंचायती राज संस्थाओं/शहरी स्थानीय निकायों दोनों को शामिल करते हुए संसद में एक संयुक्त संविधान संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया गया। यह एक संरचनात्मक विधेयक था, जिसमें शेष ब्यौरे राज्य सरकार द्वारा राज्य अधिनियम के जरिए लागू किए जाने थे यहाँ तक कि चुनाव से सम्बन्धित मामले भी पूरी तरह से राज्य सरकार के विवेक पर छोड़ दिए गए थे। सरकार के भंग होने के साथ ही यह विधेयक भी व्यपगत हो गया।

1.19. अंततः वर्ष 1992 में इस विषय पर पहले की समूची प्रक्रिया की महत्त्वपूर्ण विशेषताओं का संश्लेषण करने के बाद सरकार ने संसद में 73वां तथा 74वां संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया, जिन्हें वर्ष 1993 में पारित किया गया। इससे भारतीय संविधान के अनुच्छेद 243 से 243यछ में भाग IX और IXक भी जुड़ गए।

1.20. 73वें और 74वें संशोधन ने देश में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण प्रक्रिया के नए अध्याय खोल दिए। इन संशोधनों के अनुसार जमीनी स्तर पर कार्यकलापों, जो जन-जीवन को प्रत्यक्षतः प्रभावित करते हों, से संबंधित निर्णय लेने की जवाबदेही जनता द्वारा निर्वाचित लोगों की ही होगी। पंचायती राज संस्थाओं/नगरनिगम निकायों के लिए चुनाव अनिवार्य बना देने के प्रावधान से इन संस्थाओं को स्थानीय क्षेत्र के सामाजिक न्याय और आर्थिक विकास के लिए विशिष्ट भूमिका निभाने वाले स्व-शासन की एक अहम इकाई के रूप में स्थाई महत्व मिला। कुल मिलाकर देखें तो इन तमाम संशोधनों का इरादा इन्हें देश के लोकतांत्रिक ढांचे में निर्णय तथा निर्देश देने की हैसियत तक पहुंचाना था। लेकिन प्रतीत होता है कि यह संवैधानिक स्कीम में एक कमजोर पक्ष था। अनुसुची VII के अधीन स्थानीय शासन राज्यगत मामला है, अतः इन प्रावधानों को अमली जामा पहनाने की व्यापक जवाबदेही एक हद तक राज्य के पंचायती राज अधिनियम के कार्यान्वयन की प्रवृत्ति और मजबूती पर निर्भर है। चुनौती यह है कि राज्य कानून का एक विशद खाका तैयार किया जाए जो समग्रता में संविधान के 73वें तथा 74वें संशोधन की भावना के अनुरूप हो।

1.21. संविधान का अनुच्छेद 243ख संकल्पना करता है कि सभी राज्य/संघ शासित क्षेत्र (20 लाख से अनधिक जनसंख्या वालों को छोड़कर) त्रि-स्तरीय पंचायत प्रणाली अर्थात ग्राम, मध्यस्थ और जिला स्तर, को अपनाएगें। जबकि जिले को राज्य में एक साधारण जिले के रूप में ही परिभाषित किया गया है, गाँव और मध्यस्थ स्तर के क्षेत्राधिकार को संविधान में परिभाषित नहीं किया गया है। संविधान के प्रावधानों

के अनुसार गाँव वह है जो कि राज्यपाल द्वारा इस प्रयोजन के लिए जारी सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा अधिसूचित किया गया हो तथा जिसमें इस प्रकार यथा अधिसूचित गाँवों का समूह भी शामिल हो। इसका आशय यह हुआ कि सार्वजनिक अधिसूचना जारी करके राज्य के राज्यपाल द्वारा ग्राम पंचायत के शासित अधिकार क्षेत्र को निर्दिष्ट किया जा सकता है और इसमें एक से अधिक गाँव भी शामिल हो सकते हैं। इसी प्रकार, मध्यस्थ स्तर, जो तालुका, प्रखंड या मण्डल हो सकता है और इस सम्बन्ध में जारी सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा उसे भी राज्यपाल द्वारा निर्दिष्ट किया जा सकता है। इससे निचले तथा मध्यम स्तर पर पंचायतों के संघटन में राज्य को एक सीमा तक नमनीयता मिल जाती है।

1.22. बाद के वर्षों में पंचायती राज संस्थाओं ने भारत में कुछ विशेष तथा महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ विकसित की हैं, फिर भी उनकी कुछ प्रणालीगत खामियाँ और बाधाएँ रही है। 73वें संवैधानिक संशोधन के बाद पंचायतें, तीन स्तरों-जिला, प्रखंड और ग्राम समूह (ग्राम पंचायत), पर गठित हुई है। दिनांक 1 दिसम्बर, 2006 की यथास्थिति देश में ग्राम पंचायतों की कुल संख्या 2,32,913 थी; मध्यस्थ पंचायतों की संख्या 6094 थी जबकि जिला पंचायतों की कुल संख्या 537 थीं। इन निकायों में निर्वाचित प्रतिनिधियों की कुल संख्या 28,28,779 थीं जिनमें से 36.7 प्रतिशत अर्थात 10,38,989 संख्या महिलाओं की थी।

1.23. 73वें संवैधानिक संशोधन तथा साथ ही उच्चतम न्यायालय के आदेश, जिसमें प्रभावशाली तरीके से कहा गया था कि स्थानीय प्राधिकरण को भी सरकार अथवा राज्य के रूप में ही माना जाएगा, के फलस्वरूप पंचायती राज संस्थाओं को काफी हद तक तर्कसंगति प्राप्त हुई, पंचायतें सरकार और शासन के एक कारगर माध्यम के रूप में संगठित होकर उभरी और उन्होंने जमीनी स्तर पर ग्रामीण जनता के लिए लोकतंत्र में आधारभूत सहभागिता का ढांचा खड़ा किया है। राज्य निर्वाचन आयोग और राज्य वित्त आयोग जैसे संवैधानिक निकायों के सृजन ने इन संस्थाओं को स्थायित्व और ठोस आधार प्रदान किया है। तथापि ज्यादातर पंचायतों को आज भी राज्य को निर्दिष्ट स्कीमों के कार्यान्वयन की एजेंसी के तौर पर ही देखा जा रहा है, यहाँ तक कि आवश्यक सेवाओं यथा-पेय जलापूर्ति ग्रामीण स्वच्छता, निवारक स्वास्थ्य तथा प्राथमिक शिक्षा के प्रावधानों को भी उनकी प्रमुख वैध सेवाओं के रूप में ही माना जाता है। इसके अलावा पंचायती राज संस्थाओं के पास विविध संभावित करों की सूची भी है जैसे-व्यवसाय, मनोरंजन, चुंगी, उपभोक्ता प्रभार आदि, लेकिन नमनीय राजस्व संसाधनों के अभाव में ये इंतजाम अपर्याप्त रहते हैं। वर्ष 1990-91 से 1997-98 के दौरान 23 राज्यों में सभी स्तर की पंचायतों का

आंतरिक राजस्व संग्रहण उनके कुल राजस्व का केवल 4.17 प्रतिशत था। बिहार, राजस्थान, मणिपुर और सिक्किम जैसे कुछ राज्यों में तो इस अवधि के दौरान यह प्रतिशत शून्य था। यद्यपि 11वें और 12वें वित्त आयोगों ने इन संस्थाओं के लिए अनाबद्ध अनुदान जारी किए है लेकिन उनकी वित्तीय क्षमता संदेहास्पद ही बनी हुई है। इसके परिणामस्वरुप पंचायती राज संस्थाएँ अधिसंरचनाग्रस्त संस्थाएं किन्तु अधिकारविहीन संगठन, संवैधानिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण लेकिन राज्य सरकारों से शक्तियों तथा कार्यात्मक प्राधिकार की प्रभावी सुपुर्दगी की कमी से ग्रसित निकाय बनकर रह गई हैं।

1.24. इसके साथ ही समाहर्ता/जिलाधिकारी के नियंत्रणाधीन जिला प्रशासन के ढांचे की खूबी कमान संरचना होती है लेकिन उसमें जमीनी स्तर पर समन्वय का नितान्त अभाव होता है, जो कि हमारी आधुनिक लोकतांत्रिक ढांचे में थोड़ा-थोड़ा अराजकतावादी होता है। स्थानीय प्रशासन को नागरिकों के प्रति अधिक प्रत्युत्तरदायी, पारदर्शी और जिम्मेदार बनाने की दृष्टि से जरूरी है कि न केवल संघ और राज्य स्तर पर बल्कि जिला और गाँव के स्तर पर भी प्रतिनिधित्वपूर्ण सरकार काम करे तथा उनमें पारस्परिक कार्य-व्यवहार का सुस्पष्ट विभाजन हो। तथापि स्थानीय निकायों के प्रतिनिधियों और विधायिका के बीच तालमेल के अभाव और इसी तरह अपनी वित्तीय अक्षमता तथा प्रशिक्षित कर्मचारियों में बढ़ी हुई जिम्मेदारियाँ उठा पाने में पंचायती राज संस्थाओं की असमर्थता के चलते सुधार का कोई भी एजेन्डा पूर्ण तरह से फलीभूत न हो सकेगा। यह तथ्य कि 1970 और 1980 के दशक के दौरान अधिकांश राज्यों ने यहां तक कि स्थानीय स्तर के कार्यो जैसे जलापूर्ति के लिए राज्य-व्यापी स्वायत्तशासी संगठनों को खड़ा किया है, का आशय यही है कि ऐसे संगठनों और स्थानीय प्राधिकरणों के कार्यकलापों के विभाजन का मामला भी भारी विकेन्द्रीकरण के रास्ते की अड़चन की तौर पर सामने आता है।

1.25. जहाँ तक शहरी स्थानीय स्व-शासन का सम्बन्ध हैं, हालांकि ब्रिटिश शासन के दौरान स्थानीय स्व-शासन में नगरनिगमों ने मुख्य भूमिका अदा की थी लेकिन अपर्याप्त वित्त व्यवस्था के कारण नागरिक कार्यों के प्रबन्धन का वास्तविक कार्य शहरी स्थानीय निकायों द्वारा स्वयं ही बाधित रहा। स्वतंत्रता के बाद सरकार का ध्यान ग्रामीण भारत और ग्राम स्वराज की संकल्पना पर ही केन्द्रित रहा और शहरी स्थानीय निकायों पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया। इस प्रकार संविधान के निर्देशक सिद्धान्तों ने ग्राम पंचायतों का संदर्भ दिया और शहरी स्थानीय निकायों को हमेशा संविधान की "राज्य सूची" में ही प्रदर्शित किया गया है।

1.26. तीव्र शहरीकरण और समस्याओं की जटिलताओं में वृद्धि के बावजूद 74वें संवैधानिक संशोधन तक शहरी स्थानीय निकायों की संरचना और उनके कार्यों में कोई बड़े परिवर्तन नहीं आए थे। इन निकायों की शक्तियाँ और इनके कार्य राज्य-दर-राज्य अलग थे क्योंकि यह विषय 'स्थानीय सरकार अर्थात नगरनिगमों के गठन और उनकी शक्तियाँ' राज्य सूची के अंतर्गत शमिल थी, जो कि इन्हें मूर्त रूप देने के लिए शहरी स्थानीय निकायों की भूमिका को परिभाषित करने के लिए राज्य को शक्तियां प्रदान करती है। अनियमित और बाधित चुनाव, कठोर सरकारी नियंत्रण अपर्याप्त स्वायत्तता और सक्षमता का अभाव वह चंद समस्याएँ थीं, जिनका सामना शहरी स्थानीय निकाय कर रहे थे। 74वां संवैधानिक संशोधन शहरी स्थानीय निकायों में कुछ बुनियादी बदलाव लाया। 74वें संवैधानिक संशोधन की कुछ मुख्य व महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ समय पर चुनाव कराने की बाध्यता, बारहवीं अनुसूची जारी करना, महिलाओं के लिए आरक्षण और शहरी स्थानीय निकायों के कार्यकलाप में राज्य सरकार के हस्तक्षेप पर रोक आदि थीं। यद्यपि शहरी स्थानीय निकायों के सम्बन्ध में राज्यों ने अपने कानूनों को संशोधित किया लेकिन कार्यकलापों और उनके वित्तपोषण की सुपुर्दगी का कार्य धीमा और दुविधापूर्ण था।

चित्र 1.1. दैनिक जल की औसत उपलब्धता (घन्टे/दिन)

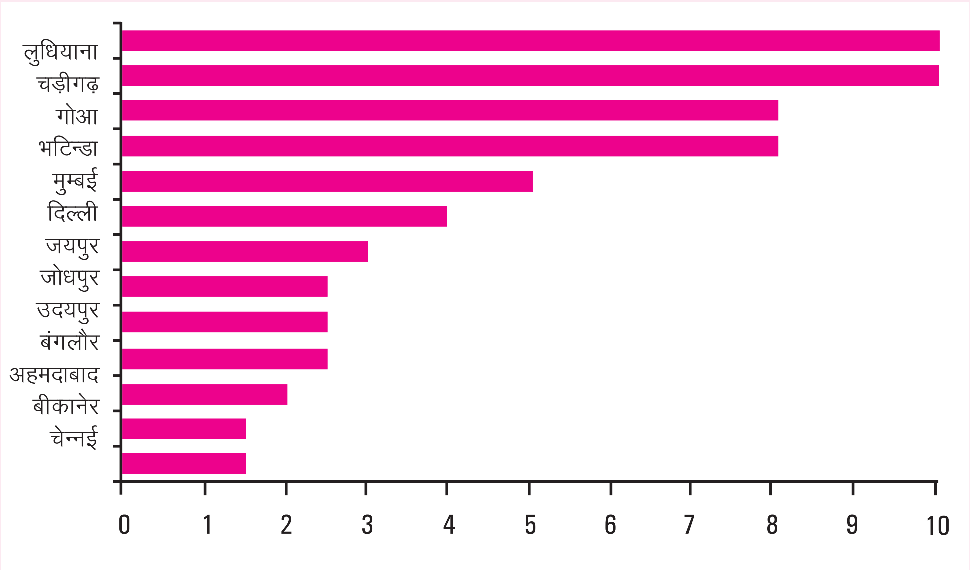

स्रोतः दक्षिण एशिया में शहरी जल क्षेत्र बेंचमार्किंग निष्पादन, जल एवं स्वच्छता कार्यक्रम, मई, 2006 http//www.wsp. org/filez/pubs/urbanwater.pdf

1.27. राज्य सरकारों ने विकास प्राधिकरणों, आवास बोर्डों स्लम विकास एजेंसी और जल एवं सफाई बोर्डों जैसे कई कार्यात्मक निकाय बनाए हैं। इन विशेषज्ञ एजेंसियों की वृद्धि ने नगरपालिका निकायों के प्राधिकार को कमजोर किया और उसे क्षीण करने में योगदान दिया है। इनके चलते एक खंडित दृष्टिकोण भी विकसित होता है, जिसके साथ कई निकाय अलग-थलग रहकर कार्य करते हैं। परिणामस्वरूप तकनीकी मानवशक्ति और संगठनात्मक योग्यता के संदर्भ में देखें तो शहरी स्थानीय निकाय पर्याप्त रूप से साधनों से लैस नहीं रहते और ग्रामीण क्षेत्रों में शहरीकरण के तीव्र प्रसार से निपटने में नितांत असमर्थ है। इसके अलावा हमारे मेगा शहरों की विशेषता तेजी से बढ़ते आधारभूत दबावों, भारी पैमाने पर उत्प्रवास की विशिष्ट समस्याएँ हैं जो कि अव्यावसायिक, अनुत्तरदायी और पारदर्शिता के अभाव से ग्रस्त रहती है।

1.28. नागरिक सुविधाएँ उपलब्ध करते हुए अपने नागरिकों के जीवन-स्तर में सुधार लाना प्रारम्भ से ही स्थानीय सरकारों का मूल कार्य था और आज भी यही उसका मूल कार्य बना हुआ है। स्थानीय सरकारें जलापूर्ति, ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन और स्वच्छता आदि जैसी सेवाएँ मुहैया कराने के लिए आदर्शतः उपयुक्त होती है क्योंकि ये लोगों के करीब होती है और उनके सरोकारों का आंकलन करने की बेहतर स्थिति में होती हैं और आर्थिक सिद्धान्तों का तकाजा भी यही है कि ऐसी सेवाएँ जनता से घनिष्ठ रूप से जुड़ी सरकार द्वारा ही बेहतर तरीके से उपलब्ध कराई जा सकती हैं। तथापि, इस मोर्चे पर असन्तोषजनक निष्पादन वाले स्थानीय निकायों की संख्या काफी अधिक है।

1.29. प्रथम पंचवर्षीय योजना काल से ही हमारे विकासात्मक प्रयासों में महत्त्वपूर्ण तत्व साफ पेय जल उपलब्ध कराना और सफाई रहा है। यद्यपि इस मोर्चे पर शहरी और ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों में कुछ सुधार हुआ है, लेकिन स्थिति कुल मिलाकर अभी संतोषप्रद नहीं कही जा सकती। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार देश की कुल आबादी में 36.4 प्रतिशत घर ही ऐसे थे जिसके भीतर या जिनमें शौचालय का प्रावधान था। जबकि ग्रामीण क्षेत्र में 21.9 प्रतिशत आबादी को ही शौचालय उपलब्ध था और इनमें से केवल 7.1 प्रतिशत घर ही ऐसे थे जहाँ शौचालय के साथ नल की सुविधा भी उपलब्ध थी। यद्यपि शहरी क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति प्रति लीटर के रूप में मापी गई दैनिक जल उपलब्धता सभी भारतीय नगरों में थोड़ी ज्यादा थी लेकिन घन्टों में के रूप में मापी गई जलापूर्ति शहरों में अपेक्षाकृत खराब थी। (चित्र 1.1)[3]

1.30. सहरत्राब्दि विकास लक्ष्यों में साफ पेय जल की आपूर्ति और सफाई के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है। "भारत निर्माण कार्यक्रम" के छः बल देने वाले क्षेत्रों में पेय जल भी एक है। "संपूर्ण सफाई

3. स्रोत : दक्षिण एशिया में शहरी जल क्षेत्रः बेंचमार्किंग निष्पादन? जल तथा स्वच्छता कार्यक्रम, मई, 2006, http./www.wsp.org.filez pubs/urbanwater, pdf.

अभियान" में 2012 तक "सभी के लिए सफाई" का लक्ष्य दोहराया गया है। तथापि इन सभी पहलों में स्थानीय निकायों की भूमिका और भी अहम और निर्णायक हो जाती है। इस मामले में वित्तीय, तकनीकी और संस्थात्मक कई ऐसे मुद्दे हैं, जिनपर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

संस्थागत मामले पर प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने कहा था:[4]

"पेय जल क्षेत्र के प्रबंधन में हमारी एक समस्या है कि यह ग्रामीण विकास कार्यक्रम के दायरे में आने वाली एक गतिविधि है जिसकी व्यवस्था अभी भी जिला स्तर पर न होकर राज्य स्तर पर राज्य की राजधानियों में हो रही है। अन्य कार्यक्रम, जिनके साथ इनका एकीकरण होना है, उनका जिला स्तर पर प्रबंधन प्रारंभ हो गया है। मेरा पुख्ता विश्वास है कि अन्य आपूर्ति स्कीमों के संबंध में ऐसा ही कुछ करने का समय आ गया है।

इसलिए राज्य सरकारों से मेरी गुजारिश है कि जलापूर्ति

बॉक्स 1.1. यथास्थिति सेवा में गिरावट

	हैदराबाद		**बंगलौर**	
	वर्तमान	**पूर्वानुमानित (2021)**	**वर्तमान**	**पूर्वानुमानित (2021)**
जनसंख्या (मिलियन)	5.5	10.5	5.7	10.3
क्षेत्र (वर्ग कि.मी.)	778.0	833.0	530.0	784.0
जनसंख्या घनत्व (.000 प्रति वर्ग कि.मी.)	7068.0	12637.0	10.755.0	13071.0
सड़क घनत्व (सड़कों द्वारा शामिल प्रतिशत क्षेत्र)	6.0	6.0	12.0	12.0
वाहनों की संख्या (मिलियन)	1.4	3.5	2.0	3.7
वाहन प्रति सड़क लम्बाई	723.0	1718.0	695.0	1902.0
जलापूर्ति	110.0	55.03	90.0	49.04
मल-जल अवसंरचना कनेक्शन (प्रतिशत)	41.0	310	21.0	18.0

स्रोत : भारत अवसंरचना रिपोर्ट, 2006

चित्र 1.2 सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्य

साफ पेय जल और बुनियादी सफाई तक सतत पहुंच के बिना
2015 तक लोगों के समानुपात का आधा
(स्रोतः http://unstats.un.org/unsd/mdg/Data.aspx?cr=356)

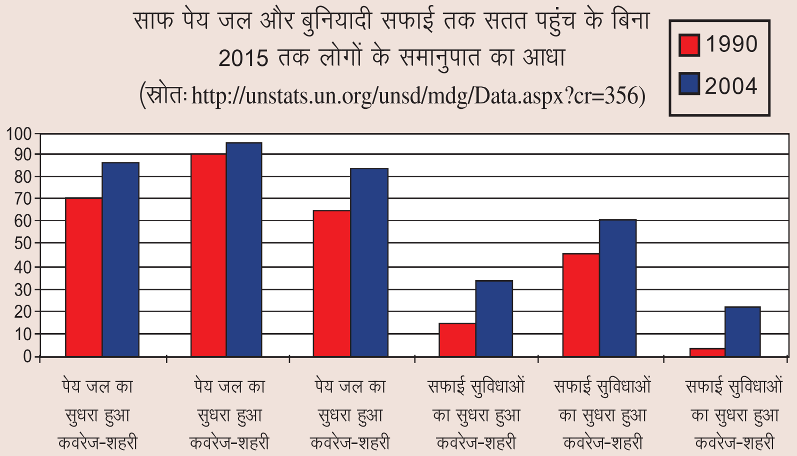

4. पेय जल और सफाई के प्रभारी मंत्रियों के वार्षिक सम्मेलन में प्रधान मंत्री का भाषण, 4 जुलाई, 2007, मई दिल्ली।

के मुद्दे से निपटने के लिए जिला-स्तरीय संरचनाओं को ज्यादा शक्ति सम्पन्न बनाएं। यह एक संवैधानिक दायित्व भी है क्योंकि जलापूर्ति हमारे संविधान की 11वीं अनुसूची के अनुसार ग्रामीण और शहरी स्थानीय निकायों द्वारा किया जाने वाला बुनियादी कार्य है।"

1.31. आयोग महसूस करता है कि स्थानीय स्व-शासन निकाय अपने स्तर पर एक सरकार हैं और इस नाते वे देश की मौजूदा शासन प्रणाली के ही अभिन्न अंग है इसलिए निर्दिष्ट कार्यों के निष्पादन के लिए इन निकायों को देश के मौजूदा प्रशासनिक ढांचे को प्रतिस्थापित करते हुए सामने आना चाहिए इस आधार पर जब स्थानीय स्व-शासन संस्थाओं के लिए कोई स्वायत्त जगह निर्मित नहीं की जाती तब तक स्थानीय स्व-शासन के क्षेत्र में कोई खास सुधार कर पाना संभव नहीं होगा। जबकि स्थानीय स्तर पर जिला प्रशासन के साथ-साथ राज्य सरकार की कुछ संस्थापनाओं के प्रतिधारण के औचित्य पर कुछ सवाल उठ सकते हैं, उनके कार्यो और उत्तरदायित्व उन क्षेत्रों में आ सकते हैं जो कि स्थानीय निकायों के अधिकार क्षेत्र से बाहर हों। जहाँ तक इन्हें सौंपे गए कार्यों का प्रश्न है, स्थानीय शासन संस्थाओं को स्वायत्तता होनी चाहिए और इन्हें राज्य सरकार की नौकरशाही के नियंत्रण से पूरी तरह से मुक्त होना चाहिए।

1.32. विभिन्न हितधारकों के विचारों से अवगत होने के लिए आयोग ने ग्रामीण और शहरी शासन के लिए अलग-अलग दो राष्ट्रीय सभाएं आयोजित की। ग्रामीण अधिशासन पर एक राष्ट्रीय सभा सामाजिक अध्ययन संस्थान (आईएसएस) नई दिल्ली में आयोजित हुई जबकि शहरी अधिशासन पर एक राष्ट्रीय सभा शहरी अधिशासन से जुड़े बंगलुरु के एक सुविख्यात गैर-सरकारी संगठन "जनाग्रह" के सहयोग से आयोजित की गई। इन दोनों कार्यशालाओं का पूरा ब्यौरा **अनुबंध-I** में दिया गया है। आयोग पंचायती राज मंत्रालय, शहरी विकास मंत्रालय और आवास एवं शहरी निर्धनता उन्मूलन मंत्रालय द्वारा अपने-अपने क्षेत्रों के बारे में उपलब्ध जानकारी से भी काफी लाभान्वित रहा। परामर्श की प्रक्रिया के दौरान आयोग ने भारत के निर्वाचन आयोग, भारत के नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक, लघु राज्यों के चुनाव आयोगों और राज्य वित्त आयोगों से भी विचार-विमर्श किया, जिनके सुझावों और विचारों ने अपनी सिफारिशें तैयार करने में आयोग को अमूल्य सहायता प्रदान की। आयोग श्रीमती मीनाक्षी दत्ता घोष, सचिव, पंचायती राज मंत्रालय, भारत सरकार, श्री एम. रामचंद्रन, सचिव शहरी विकास मंत्रालय, भारत सरकार, श्री भूरे लाल, सदस्य, संघ लोक सेवा आयोग, श्री एन.पी. सिंह पूर्व सचिव, भारत सरकार, श्री नवेद मसूद, श्री टी. आर. रघुनन्दन, संयुक्त सचिव, पंचायती राज मंत्रालय, श्री एम राजामणि संयुक्त सचिव,

शहरी विकास मंत्रालय, भारत सरकार, डा. पी. के. मोहन्ती, संयुक्त सचिव, आवास एवं शहरी निर्धनता उन्मूलन मंत्रालय, भारत सरकार, श्री विवेक कुलकर्णी, अतिथि प्रोफेसर, प्रबन्ध अध्ययन विभाग, भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलुरु, श्री आर. सुन्दरम, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, सुन्दरम आर्किटेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड, और डॉ. बी. एस हेडगे और उनका दल, इसरो द्वारा दिए गए अमूल्य सहयोग के लिए उनका आभार व्यक्त करता है। आयोग प्रख्यात विद्वानों, कार्यकर्ताओं, नागरिक समूहों के प्रतिनिधियों, भारत सरकार और राज्य सरकार के अधिकारियों का आयोग के राज्यों के भ्रमण के दौरान कार्यशाला और बैठकों में उनकी सक्रिय भागीदारी के लिए आभार व्यक्त करना चाहता है। आयोग ने शहरी अधिशासन के मुद्दों पर सिंगापुर और थाईलैंड के प्राधिकारियों से भी विचार-विमर्श किया। आयोग जनाग्रह, बंगलुरु और सामाजिक विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा प्रस्तुत रिपोर्टो की भी सराहना करता है, जिनकी सूचनाओं का आयोग की रिपोर्ट तैयार करने में उपयोग किया गया। इस सम्बन्ध में आयोग श्री रमेश रामनाधन, जनाग्रह तथा श्री जॉर्ज मैथ्यू, सामाजिक विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली के योगदान के लिए उनका भी आभार व्यक्त करता है।

मुख्य सिद्धान्त

2

2.1. प्रस्तावना

2.1.1. भारत कई राज्यों से मिलकर बना एक संघ है। संसद के कानून से नया राज्य बनाया जा सकता है, या राज्यों को आमेलित किया जा सकता है, इसके लिए संघ में विशिष्ट शक्तियां निहित है। (सूची-I की प्रविष्टि-97), 73वें और 74वें सरंवैधानिक संशोधन होने तक स्थानीय शासन राज्य के कानूनों द्वारा सृजित किए गए थे और इस समय संवैधानिक सुपुर्दगी ही कोई बाहरी या ऊपरी प्रत्यायोजन न होकर एक मानदंड है।

2.1.2. वर्षों के दौरान संविधान के समूचे विकास-क्रम की प्रवृत्ति राज्यों के सशक्तिकरण के पक्ष में रही है। क्षेत्रीय पार्टियाँ का उदय और संघ तथा राज्य स्तर पर मिली-जुली सरकारें, राज्य के नियंत्रण और वाणिज्यिक उपक्रमों में राज्य के निवेश के महत्त्व को कमतर करता जा रहा अत्यधिक आर्थिक उदारीकरण, निवेश के लिए स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को जन्म देने वाले आर्थिक विकास के विविध कार्यतंत्र और बाध्यताओं के माध्यम से पक्षपात रहित सही राजकोषीय सुपुर्दगी की अत्यंत स्वस्थ परम्परा, संघ और राज्य के संबंधों में एक सुसंगत संतुलन के उत्तरदायी कारक राज्यों के सशक्तिकरण ने संघ को कमजोर नहीं किया है; अपितु वास्तविकता तो यही है कि प्राधिकार के साथ नेतृत्व सहयोग और समन्वय को सुमेलित करने से हाल के दशकों में संघ की भूमिका बेहतर तरीके से परिभाषित और सम्मानित हुई है। अधिक शक्तियों और प्राधिकार के रूप में संघ की इस विधिसम्मत और असरकारी भूमिका की नए सिरे से की गई इस खोज ने राज्य को हमारे संविधान के विकास क्रम की एक खुशगवार विशिष्टता में बदल डाला है। हालांकि यह स्थिति राज्य-दर-राज्य अलग है। कुल मिलाकर यह विकास अभी भी राज्य और स्थानीय शासन के बीच शैशवास्था में हिचकोले ले रहा है। स्थानीय शासन को शक्ति सम्पन्न बनाकर आगामी वर्षों में इसे और मजबूत बनाना है, जबकि राज्य सरकार की भूमिका पूर्ववत उनके स्तर के यथा उपयुक्त महत्त्वपूर्ण और अहम बनी रहेगी। इसे प्राप्त करने के लिए आयोग ने स्थानीय प्रशासन के सुधार के क्षेत्र में लागू किए जा सकने वाले सिद्धान्तों पर सावधानीपूर्वक विचार किया और निश्चित किया कि इस सम्बन्ध में अपनाए जाने वाले सिद्धान्त इस प्रकार होंगे- विकेन्द्रीकरण के संदर्भ में आनुषांगिकता के सिद्धान्त का अनुप्रयोग, स्थानीय शासन तथा इसी तर्ज पर राज्य सरकारों और स्थानीय शासन के विविध

स्तरों के लिए कार्यो का स्पष्ट निरूपण तथा विभाजन, क्षमता-निर्माण और जवाबदेही रेखांकित करते हुए इन कार्यों और संसाधनों की प्रभावकारी सुपुर्दगी कार्यक्रमों और एजेंसी के अभिसरण के माध्यम से स्थानीय सेवाओं और विकास का समेकित दृष्टिकोण तैयार करना और इन सबसे बढ़कर इन्हें नागरिकोन्मुखी अर्थात जनकेन्द्रित बनाना।

2.2. आनुषांगिकता

2.2.1. आनुषांगिकता का केन्द्रीय विचार यह है संप्रभु और हितधारक होने के नाते लोकतंत्र में नागरिक ही अंतिम निर्णयकर्त्ता हैं। राज्य द्वारा प्रदान कराई जाने वाली सभी सुविधाओं का उपभोक्ता भी यह नागरिक ही है। नागरिक-संप्रभु-उपभोक्ता को जहाँ तक व्यावहारिक हो ज्यादा से ज्यादा प्राधिकार का उपयोग करना चाहिए और शेष कार्य, जिनमें मानवों की किफायत, तकनीकी और प्रबन्धकीय दक्षता या सामूहिक सुविधाएँ अपेक्षित हो, को ऊपर की ओर प्रत्यायोजित करना चाहिए।

2.2.2. ऑक्सफोर्ड शब्दकोष ने आनुषांगिकता को इस प्रकार परिभाषित किया है।*"यह सिद्धान्त कि किसी केन्द्रीय प्राधिकरण, जो केवल उन्हीं कार्यों को करता हो जो कि इससे अधिक स्थानीय स्तर पर नहीं किए जा सकते हैं, का कोई आनुषंगी कार्य होना चाहिए।"*

2.2.3. आनुषांगिकता का सिद्धान्त निर्दिष्ट करता है कि कार्य नागरिकों की निकटस्थ अधिशासन की संभव लघुतम इकाई पर ही कार्यान्वित किए जाएंगे और स्थानीय इकाई द्वारा निष्पादित नहीं कर पाने की शर्त पर ही ऊपर के लिए प्रत्यायोजित किए जाएंगे। नागरिक उन्हीं कार्यों को प्रत्यायोजित करते हैं जिन्हें सामुदायिक रूप से स्वयं के स्तर पर नहीं कर सकते, जो कार्य समुदाय अपने स्तर पर नहीं कर सकता वहीं कार्य लघुत्तम स्तर पर स्थानीय शासन के सुपुर्द किए जाते हैं, अर्थात स्थानीय शासन से राज्य और राज्य सरकार से केन्द्र सरकार, इस स्कीम के अन्तर्गत नागरिक और समुदाय शासन के केन्द्र हैं। पारम्परिक पदानुक्रम के स्थान में शासन का सर्वदा-वृहदतर एक संकेन्द्रिक वृत्त हमेशा विद्यमान रहता है और ऊपर की ओर किया जाने वाला कोई भी प्रत्यायोजन आवश्यकता पर निर्भर होता है।

2.2.4. आनुषांगिक सिद्धांतों को व्यावहारिक धरातल पर साकार करने में तीन अत्यधिक लाभ हैं- पहला, स्थानीय स्तर पर निर्णय लेने से दक्षता बढ़ती है, स्थानीय स्तर पर आत्मनिर्भरता में वृद्धि होती है, प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहन मिलता है और नवोन्मेषी रूझान बढ़ता है। सफल हो चुकी सर्वोत्तम पद्धति के

प्रदर्शन सम्बन्धी प्रभाव नवोन्मेषी प्रवृत्ति के द्रुत प्रसार को सुनिश्चित करेंगे और स्थानीय समुदायों द्वारा कार्यक्रमों का बड़े पैमाने पर स्वामित्व और प्रचलन होगा। दूसरा, लोकतंत्र तीन मूलभूत मान्यताओं पर निर्भर है- अपने स्थान और जन्म निरपेक्ष सभी नागरिक समान है। नागरिक ही अंतिम संप्रभु है और नागरिक में ही यह निर्णय करने की क्षमता है कि उसके हित में बेहतर क्या है। इन तीन आधारभूत सिद्धान्तों को जब अमल में लाया जाएगा तब कहीं जाकर लोकतांत्रिक प्रणाली अपनी सम्पूर्ण विधिसम्मतता हासिल कर सकेगी। आनुषांगिकता लोकतांत्रिक समाज की इन तीन मूलभूत धारणाओं की ही ठोस अभिव्यक्ति है। तीसरा, एक बार निर्णय लेने की प्रक्रिया और उसके परिणाम समेकित रूप से स्थानीय स्तर पर जुड़ जाएं तो लोग ज्यादा बेहतर तरीके से अंदाजा लगा सकते हैं कि कठोर कदम उठाने की जरूरत है। इस प्रकार की जागरूकता से बड़े पैमाने पर जिम्मेदारी, प्रबुद्ध नागरिकता, और लोकतांत्रिक परिपक्वता की भावना का संवर्धन होता है।

2.2.5. आयोग का एक सुविचारित मत यह है कि स्थानीय शासन के सुधार का उक्त पैकेज आनुषांगिकता के सिद्धान्त के माध्यम से ही संसूचित किया जाए। तभी नागरिक संप्रभुता यथार्थ और सार्थक हो सकती है और तभी संरचनाओं तथा संस्थाओं के दायरे से बाहर निकल कर लोकतंत्र सही अर्थों में फलीभूत हो सकता है।

2.3. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण

2.3.1 जबकि आनुषांगिकता को अधिशासन के पुनर्गठन में प्रभावी सिद्धान्त के रूप में सक्रिय होना चाहिए वहीं व्यावहारिक संवैधानिक रूप में इसे केवल प्रभावी विकेन्द्रीकरण के जरिए ही लागू किया जा सकता है। इसके मान्यतास्वरुप ही 73वाँ और 74वाँ संवैधानिक संशोधन 1992 में अधिनियमित किया गया था। स्थानीय शासन से सम्बन्धित ज्यादातर संवैधानिक प्रावधान इस महत्त्वपूर्ण अपवाद कि संविधान की सातवीं अनुसूची में कोई बदलाव नहीं किया गया है, के बावजूद राज्यों (राज्य वित्त आयोग, राज्य निर्वाचन आयोग) से जुड़े प्रावधानों जैसे ही है। इसके परिणामस्वरुप स्थानीय शासन संरचना और परिचारी संस्थाएं संवैधानिक आदेशों की बाध्यता से बनाए गए है इसलिए स्थानीय शासनों पर यथार्थपरक कार्यों की स्थायी सुपुर्दगी का उत्तरदायित्व राज्य सरकारों पर है। इसलिए राज्यों द्वारा स्थानीय शासन को किया जाने वाला प्रभावकारी लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण ही सुधार कार्यक्रमों का प्रस्थान बिन्दु होना चाहिए। इस प्रकार का विकेन्द्रीकरण निम्नलिखित चार बिन्दुओं से निर्देशित होना चाहिए।

2.3.2. प्रथम, नागरिक के मन में वोट और उसके द्वारा संवर्धित जनता की भलाई के रूप में उसके नतीजों के बीच एक सुस्पष्ट सम्बन्ध होना चाहिए। नियमित चुनावों संवैधानिक स्वतंत्रता और सत्ता के शान्तिपूर्वक हस्तान्तरण के साथ हमारा लोकतंत्र अत्यन्त सशक्त है।

2.3.3. विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्ति राजकोषीय उत्तरदायित्व बढ़ाने की होती है, बशर्ते कि बेहतर सेवाओं के रूप में संसाधन सृजन और उसके परिणामों के बीच एक बेहतर स्पष्ट सम्बन्ध हो। लोगों को केवल तभी अधिक संसाधन जुटाने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा जब लगाए गए करों और प्रयोक्ता प्रभारों तथा सुपुर्द की जाने वाली सेवाओं के बीच अधिक संपर्क हो। यह केवल तभी संभव है जब सेवा सुपुर्दगी का व्यवहार्य सीमा तक स्थानीय रूप से प्रबंध किया जाए और नागरिक तथा हितधारकों को संसाधन जुटाने और कार्यों का प्रबंध करने के लिए प्रत्यक्षतः सशक्त किया जाए। तथापि यह संपर्क प्रभावी रूप से स्थापित करने के लिए स्थानीय शासन को प्रदान कराई जा रही सेवाओं के लिए पूरी तरह से जवाबदेह और जिम्मेवार होना चाहिए ताकि कार्यनिष्पादन न करने की स्थिति में उनके पास आनाकानी का कोई बहाना न हो। सिर्फ इसी स्थिति में राजकोषीय निष्पादन, संसाधन संग्रहण और खर्च किए जा रहे सार्वजनिक राशि की पूरी-पूरी कीमत की वसूली को लोकतांत्रिक अधिशासन में समेकित किया जा सकता है।

2.3.4. तीसरा, हमारे समाज में अधिकारों में अच्छी-खासी विषमता व्याप्त है। हमारे कार्य बल का केवल 8 प्रतिशत हिस्सा ही संगठित क्षेत्र में कार्यरत है और माहवार एक सुनिश्चित वेतन तथा अन्य लाभ हासिल कर रहा है। इन श्रमिकों में 70 प्रतिशत से अधिक हिस्सा ही विभिन्न पदों पर सरकारी कार्यालयो तथा सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों में नियुक्त है। अधिकारों की यह विषमता हमारी पदानुक्रमित रीति-रिवाजों और औपनिवेशिक परम्पराओं से मिलकर और भी बढ़ती जाती है। हमारी शासन व्यवस्था को जनता की सेवा के लिए एक कारगर साधन के रूप में इस्तेमाल करने तथा राष्ट्रीय लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में एक साधन के रूप में इस्तेमाल की किसी भी गंभीर और सार्थक कोशिश को हमारी व्यवस्था को पंगु बना देने वाले इन दो अहम कार्यों पर ध्यान देना ही होगा अर्थात अधिकारों की विषमता और इनके उपयोग में व्याप्त असंतुलन।

2.3.5. चौथा, केन्द्रीकृत संरचना में राष्ट्रीय नागरिक की संप्रभुता के बावजूद नागरिक की भागीदारी और उसका स्वामित्व भ्रामक होता है। शासन व्यवस्था नागरिकों के जितनी समीप होगी भागीदारी, हिस्सा और

मामले की उनकी समझ उतनी अधिक होगी। इसलिए लोकतंत्र को अगर वास्तविक और सार्थक होना है तो उसे अपनी सभी शक्ति और क्षमताओं को सीधी सहभागिता, सतत सतर्कता और समयबद्ध हस्तक्षेप सुविधाजनक बनाते हुए नागरिकों से यथा संभव निकटता पर केन्द्रित करना होगा।

2.3.6. अन्तिम विश्लेषण के रूप में कहा जाए तो अधिशासन की सभी प्रक्रियाएं नागरिकों की आकांक्षाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति करने के बारे में हैं। अधिशासन का ढांचा चाहे कोई भी हो आने वाले दशकों में हमें मुख्यतः दो ही चुनौतियों का सामना करना होगा। पहला, मानव सामर्थ्य का अनुपालन, परिहार्य कष्टों तथा यातनाओं की रोकथाम, मानवीय गरिमा को बनाए रखना और भारत के सभी नागरिकों को शीघ्र और त्वरित न्याय मुहैया कराना ताकि यहाँ का प्रत्येक नागरिक सन्तुष्ट और उत्पादक मानव प्राणी बन सके। दूसरा, राष्ट्रीय क्षमता को मानते हुए और वर्तमान तथा भावी पीढ़ियों के महत्वपूर्ण हिंतों के संरक्षण के लिए वैश्विक क्षेत्र में अपनी सही भूमिका निभाने के लिए भारत को अनुमति देते हुए तीव्र आर्थिक वृद्धि और वैश्विक शांति, स्थिरता और समृद्धि के संवर्धन में एक महत्वपूर्ण कर्ता बनना। इन राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति में हमारे प्रयासों के लिए प्रभावी साधन के रूप में हमें राज्य की भूमिका और अधिशासन पर तीक्ष्णतापूर्वक ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है। शक्तियों के केंद्रण और शक्तियों के प्रयोग में असंतुलन के मामले में अभूतपूर्व विषमता का सामना करने के लिए विकेंद्रीकरण एक सक्षम साधन है।

2.3.7. सिर्फ एक प्रभावी और शक्तिसम्पन्न स्थानीय शासन में ही लोकहित को सुदृढ़ करने और प्राधिकार के दुरूपयोग सम्बन्धी नकारात्मक आघातों को निर्मूल करने की सकारात्मक शक्ति होती है। ठीक इसी प्रकार सामान्य नागरिक नौकरशाही इस प्रयुक्त शक्ति की विषमता के लिए सरकारी अधिकारियों को जवाबदेह ठहरा सकते है। सिर्फ उनके कार्यों से सीधे-सीधे प्रभावित नागरिक ही कार्यगत चूक या असावधानी को सुधारने की शक्ति रख सकते हैं।

2.4. कार्यों की रूपरेखा

2.4.1. संघीय लोकतंत्र में सरकार के विभिन्न स्तरों की भूमिका और उत्तरदायित्व स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाना होगा। सभी संघीय ढांचों में यह कार्य किसी संवैधानिक तौर पर अधिदेशित स्कीम के माध्यम से किया जाता है। यह कोई दुर्घटना नहीं कि हर किसी संघीय लोकतंत्र का अपना एक लिखित संविधान भी होता है, जिसमें सरकार के प्रत्येक स्तर और उसके क्षेत्राधिकार में आने वाले विषयों की स्पष्ट सूची तथा इस सम्बन्ध में उन्हें निर्दिष्ट भूमिका भी सुस्पष्ट रूप से अंकित होती है।

भारत का संविधान भी सातवीं अनुसूची की सूची-III के अंतर्गत राज्य के नियंत्रण में आने वाले विषयों का वर्णन करता है और उसमें संघ तथा राज्यों के प्राधिकार के विस्तार को परिभाषित करने वाले सिद्धान्तों को भी सम्मिलित किया गया है। तथापि जहाँ तक स्थानीय शासन का मामला है इसमें दो जटिलताएँ हैं।

2.4.2. प्रथम, चूंकि सभी सरकारी विषय पारिभाषिक रूप से राज्यगत विषय है अतः प्रत्येक विषयों/कार्यों के सम्बन्ध में राज्य व स्थानीय शासन की भूमिकाओं की रूपरेखाएं स्पष्टतः उल्लिखित होनी चाहिए, अन्यथा कालान्तर में अनावश्यक विभ्रम होगा और राज्यगत हस्तक्षेप की संभावनाएँ बढ़ेगी। यह भी मानना चाहिए कि इन कई कार्यों में अदा करने के लिए राज्यों के पास एक महत्वपूर्ण और विधिसम्मत भूमिका नियत है। उदाहरणार्थ जबकि स्कूली शिक्षा सुपुर्दगी का मामला है, किन्तु शिक्षा के लिए पाठ्यक्रम तैयार करना, शिक्षा के मानकों का निर्धारण और आम परीक्षाओं का आवोजन व संचालन आदि कई कार्य है जो कि राज्य सरकारों के क्षेत्राधिकार में पड़ने चाहिए। इसी प्रकार स्वास्थ्य परिचर्या, नयाचार का विकास, चिकित्सालयों की मान्यता तथा व्यावसायिक मानदण्डों को लागू करना जैसे विषय अनिवार्य रूप से राज्य के क्षेत्राधिकार में और स्थानीय शासन की व्याप्ति से बाहर पड़ने चाहिए। स्थानीय शासन को कार्यों की सुपुर्दगी के बारे में अत्यधिक भ्रम राज्य और स्थानीय निकायों के बीच भूमिका की स्पष्टता के अभाव में उत्पन्न हुए हैं।

2.4.3. दूसरा, स्थानीय शासनों में विभिन्न स्तरों के बीच एक सुस्पष्ट कार्य विभाजन होना चाहिए। उदाहरणार्थ स्कूल प्रबन्धन का काम ग्राम पंचायत/अभिभावक समिति को सौंपा जा सकता है किन्तु कर्मचारियों की नियुक्ति और शैशणिक मामले स्थानीय शासन के उच्चतर स्तर के सीमाक्षेत्र में आएंगे। इसी प्रकार, कोई स्वास्थ्य उप-केन्द्र की देखभाल ग्राम पंचायत द्वारा, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र (पीएचसी) का प्रबन्धन मध्यस्थ पंचायत द्वारा तथा सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र और अस्पतालों की देखभाल जिला पंचायतों द्वारा की जानी चाहिए। इस दिशा में नगर/शहरी और किसी वार्ड समिति के लघु स्तरों के बीच कार्यों का एक सुस्पष्ट विभाजन और उल्लेख होना चाहिए। सड़कों पर प्रकाश व्यवस्था, स्थानीय सफाई, स्थानीय विद्यालयों का रख-रखाव, स्थानीय स्वास्थ्य केन्द्रों आदि का रख-रखाव जैसे उप-स्थानीय कार्य वार्ड समिति को सौंपे जा सकते हैं। आयोग के विचार में यह बात भी संसूचित है कि स्थानीय शासनों की शक्तियों के सुपुर्दगी का कोई बहु प्रयोज्य अभिगम नहीं है और यह कि आनुषांगिकता के मूल सिद्धान्तों के साथ-साथ विकेन्द्रीकरण के शेष ब्यौरों और स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विस्तृत आवश्यकताओं का विकास किया जाना चाहिए।

2.5. वास्तविक रूप में सुपुर्दगी

2.5.1. विस्तृत संरचनाओं के सृजन और उनके आवधिक चुनावों से ही आनुषांगिकता और लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्तों को प्रचालनात्मक नहीं किया जा सकता। सुपुर्दगी वास्तविक और अर्थपूर्ण हो इसके लिए अपेक्षित है कि विनियम बनाने, निर्णय लेने और अपने कार्यो की वैध परिधि में उन्हें लागू कराने के लिए स्थानीय शासन को प्रभावी तरीके से सशक्त और सुदृढ़ बनाया जाए। उक्त सशक्तिकरण संविधान और राज्य विधायिका के जरिए सुस्पष्ट और असंदिग्ध होना चाहिए। यहाँ तक देखा गया है कि विधिकृत सशक्तिकरण भी तब तक बेअसर बना रहता है जब तक स्थानीय शासन के अंतर्गत आने वाले कार्यों व दायित्वों के निष्पादन के लिए रखे गए सरकारी कर्मचारी, बशर्ते कि उनकी सेवा-शर्तों को विधिवत रूप से संरक्षित किया गया हो, भी पूरी तरह व स्थायी रूप से स्थानीय शासन के नियंत्रणाधीन नहीं हो। सिर्फ तभी कहीं जाकर स्थानीय शासन का प्राधिकार उत्तरदायित्व के संगत हो सकता है। अंततः स्थानीय शासनों को की जाने वाली राजकोषीय सुपुर्दगी को निम्न दो मानकों की कसौटी पर खरा उतरना चाहिए; स्थानीय शासनों को अपने दायित्वों को प्रभावी रूप से पूरा कर पाने में सक्षम होना चाहिए। प्राथमिकताएँ तय करने, नई स्कीमें तैयार करने तथा निधियों के आबंटन के लिए अनाबद्ध संसाधनों के माध्यम से स्थानीय शासन के पास नमनीयता की पर्याप्त गुंजाइश भी होनी चाहिए। समान रूप से महत्त्वपूर्ण यह भी है कि वित्तीय स्वामित्व और जिम्मेवारी के अधीन स्थानीय करों, उपकरों और प्रयोक्ता शुल्क के माध्यम से स्थानीय संसाधन जुटाने के पर्याप्त अवसर और प्राधिकार सुलभ होने चाहिए। स्थानीय शासनों को निधियाँ सुपुर्द करते समय, अंतर्राज्यीय तथा अन्तर-राज्यीय दोनों की क्षेत्रीय साम्यता पूरे देश में नागरिकों को प्राप्त प्राधिकारों, संविधान के अंतर्गत नागरिकों को गारन्टी के साथ प्रदत्त प्राधिकारों और बेहतर किस्म के विधिसम्मत अपवादों तथा पूरे देश में सभी बच्चों को सुलभ गतिशीलता के साथ तर्कसंगत अवसरों जैसे मामलों को सुनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है। इसलिए स्थानीय शासनों के लिए तैयार किसी भी सुपुर्दगी पैकेज को प्रति व्यक्ति मानदंडों पर निर्भर होना चाहिए तथा उसे जीवन स्तर तथा सेवाओं की गुणवत्ता से सम्बन्धित कतिपय बेंचमार्क को भी ध्यान में रखना चाहिए।

2.5.2. तथापि राज्य द्वारा प्रदत्त शक्तियों और संसाधनों के संदर्भ में वास्तविक सशक्तिकरण को उससे अधिक होना चाहिए। सतत आधार पर राज्यों के साथ बातचीत हेतु सक्षम व समर्थ बनाने में स्थानीय शासनों को प्रभावकारी भूमिका निभाने देने की अनुमति देना भी समान रूप से महत्वपूर्ण है। उदाहरणार्थ कई संघीय देशों में उच्च सदन को संघटक राज्यों की आवाज के रूप में सृजित किया गया है और उन्हें

परक्राम्य प्राधिकार व शक्तियाँ भी प्रदान की गई हैं। स्थानीय निकायों को समुचित रूप से आवाज उठाने के प्राधिकार की अनुमति देने के क्रम में राज्य में विधायी परिषद से सम्बन्धित अनुवर्ती प्रावधानों को भी उपयुक्त रूप से सुदृढ़ बनाने की आवश्यकता है।

2.5.3. समान रूप से महत्त्वपूर्ण यह भी है कि अपने कार्यों के प्रभावी रूप से निवर्हन के लिए स्थानीय शासनों की क्षमता का निर्माण किया जाए। संगठनात्मक और प्रबन्धनात्मक क्षमता को सुदृढ़ बनाना, सतत प्रशिक्षण और मानव संसाधन विकास सम्बन्धी कार्यकलाप, मांग होने पर दिशानिर्देश और पर्याप्त समर्थन मुहैया कराते हुए राज्य एजेंसियों को दक्ष और कुशल जनशक्ति समूहों में परिवर्तित करना, सशक्त संघों, संसाधनों को सरणीकृत करना, प्रतिभा तथा प्रबन्धन सम्बन्धी उत्कृष्ट कार्यविधियां तथा लोक प्रबंधन के क्षेत्र में उच्च-स्तरीय मानव संसाधनों की अपेक्षित मांगों को पूरा करने के लिए सरकार से बाहर के विद्यमान दक्ष-विशेषज्ञों को आकृष्ट करने की सामर्थ्य जैसी कुछ चुनौतियाँ हैं जो स्थानीय शासनों की दक्षता बढ़ाने में विद्यमान है।

2.5.4. अंततः कहे तो वास्तविक सशक्तिकरण में सिर्फ सुपुर्दगी और क्षमता निर्माण ही जरूरी नहीं है बल्कि स्व-शासन की एक संस्था के रूप में काम करने में स्थानीय शासन को सक्षम व समर्थ बनाने के किसी भी गंभीर प्रयास की संभावना के प्रारम्भ में ही वास्तविक राजनीतिगत बाध्यताओं के रूप में चिन्हित राज्य कार्यपालिका व शासन के प्रतिरोध को नियंत्रित करने के लिए भी कार्यनीति तैयार करने की आवश्यकता है।

2.5.5. 'शासन में नीति शास्त्र' विषय पर अपनी रिपोर्ट में आयोग ने अवलोकन किया था कि, *'यदि विधायिका कार्यपालकों की आभारी है तो विधायिका बहुत ज्यादा समय तक स्वतंत्र नहीं रह सकती और मंत्रि परिषद तथा सरकारी अधिकारियों व कर्मचारियों की लम्बी-चौड़ी फौज को नियंत्रित करने की योग्यता खो देती है।'* अतः लोकहित के लिए सकारात्मक शक्तियों के उपयोग के अवसर प्रदान करने के लिए विधायी समितियों को सक्षम व समर्थ बनाने जैसे प्रभावशाली कार्यतंत्र को विकसित करने की आवश्यकता है। लोकतांत्रिक मूल्यों और जनहित के विकास को ध्यान में रखते हुए विधायिका की भूमिका में वृद्धि के लिए समुचित कार्यतंत्र की आवश्यकता भी होगी।

2.6. अभिसरण

2.6.1 बड़ी मिश्रित अधिशासन संरचनाओं में विभाजन अवश्यम्भावी है। किन्तु अधिशासन को जैसे ही नागरिकों के निकट लाया जाता है, यह मान्यता कि नागरिकों की आवश्यकताएँ तथा उनके सरोकार

अविभाज्य है, के आधार पर विखण्डन के स्थान पर अभिसरण को प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। यहाँ तक कि अन्यथा दक्ष और ईमानदार प्रशासन पृथक सरकारी एजेंसी के पृथक्कृत कार्य नागरिकों के जीवन को अत्यधिक जटिल बना देते हैं। इसलिए स्थानीय शासनों के संगठन की प्रक्रिया में अभिसरण को एक मुख्य सिद्धांत होना चाहिए। इस प्रकार निम्नलिखित चार क्षेत्र हैं जहाँ अभिसरण पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

2.6.2. पहला, स्थानीय शासनों के मध्यस्थ तथा जिला स्तरों में ग्रामीण शहरी का बंटवारा एक औपनिवेशिक विरासत है। प्राथमिक स्तर पर ग्रामीण आबादी की आवश्यकताओं तथा उनपर ध्यान देने के लिए अपनाया जाने वाला दृष्टिकोण शहरी आबादी की तुलना में अलग होता है। इसके अलावा रहने वाली आबादी की व्यावसायिक रुपरेखा भी कुछ हद तक ग्रामीण-शहरी श्रेणीकरण के लिए अभिप्रेरक होती है। तथापि विशेष रूप से ग्रामीण शासन की व्यापक संघबद्धित स्तर में इस असंगति के फलस्वरूप जिला योजना समिति जैसे कई नए कार्यतंत्र बनाने पड़ते हैं जो जन-जीवन में कभी भी गहरी जड़ें नहीं जमा पाते। तीव्र शहरीकरण और अर्ध-शहरी क्षेत्रों की बढ़ती जरूरतों को नगर नियोजन और विकास प्रक्रिया के दौरान ध्यान में रखा जाना चाहिए और शहरी तथा ग्रामीण स्थानीय शासनों के बीच बड़े स्तर पर संस्थात्मक अभिसरण होना चाहिए।

2.6.3. दूसरा, जैसा कि पहले (पैरा 1.27 में) बताया जा चुका है, परा-स्थानिक निकायों के कार्य स्थानीय शासनों से पूर्णतः अलग होते हैं और वे सीधे राज्य सरकार के प्रति जवाबदेह होते है। इस तरह स्थानीय शासन प्रायः अपने महत्त्वपूर्ण कार्यों को ही पूरा करती है। परा-स्थानिकों का उक्त प्रचुरोद्भवन आनुषांगिकता के सिद्धांत के विरूद्ध काम करता है और इन सेवाओं के प्रबन्धन में नागरिकों की प्रभावी सहभागिता को प्रतिबंधित करता है। लोग प्राथमिक सुविधाओं और सेवाओं के लिए भी प्राधिकरणों की बहुलता से जूझने पर बाध्य हो जाते है। इसलिए इन सभी प्राधिकारियों के स्थानीय कार्यों को स्थानीय शासनों को सुपुर्द करना आवश्यक है, जहां तक कि विशेषज्ञ मार्गनिर्देशन से लाभ लेने के लिए संस्थात्मक कार्यतंत्र भी तैयार करना आवश्यक है।

2.6.4. तीसरा, जहाँ तक व्यवहार्य हो नागरिकों को एकल स्थल के जरिए सभी सेवा-प्रदायकों से सीधे परस्पर क्रिया करने में समर्थ बनाया जाना चाहिए। वर्धित रूप से पूरे विश्व भर में शासन की विभिन्न एजेंसियों द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली अलग-अलग सेवाएँ सभी नागरिकों को एक ही स्थान में उपलब्ध है। उदाहरणार्थ, डाकघर कुछ देशों में मतदाता पंजीकरण और अन्य कई सेवाओं के लिए नोडल

एजेंसी है। जर्मनी में, स्थानीय शासन का कार्यालय पासपोर्ट प्राप्त करने में संपर्क स्थल है यद्यपि वास्तविक सेवा संघीय सरकार द्वारा प्रदान की जाती है। इसी प्रकार विभिन्न सेवा-प्रदायकों द्वारा प्रशुल्क, शुल्क और करों का संग्रहण साझा कक्ष से हो सकता है और सभी शिकायतें और सुझाव साझा कॉल सेंटर में प्राप्त किए जा सकते हैं।

2.6.5. अंततः पैरा 2.2 (आनुषांगिकता) में जैसा बताया गया है स्थानीय शासनों और हितधारकों के सशक्तिकरण को एक सांतत्यक के रूप में ही देखा जाना चाहिए। किसी स्कूल के बच्चों के माता-पिता जैसे मामलों में जहां कहीं हितधारकों के समूह को स्पष्ट रूप से पहचाना जा सकता है वहाँ उन्हें संभव सीमा तक प्रत्यक्षतः सशक्त किया जाना चाहिए ताकि हितधारण और शक्ति प्राप्ति दोनों ही आपस में अभिन्न रूप से संयोजित हो सके। तथापि हितधारकों के सशक्तिकरण को स्थानीय शासन के सशक्तिकरण के बरखिलाफ नहीं देखा जाना चाहिए। दोनों ही आनुषांगिकता पर आधारित स्थानीय शासन के लिए एक आनुषांगिकता के ही दो हिस्से हैं। इसी प्रकार प्रतिनिधित्वयुक्त स्थानीय शासन और हितधारकों का सशक्त समूह अलग-थलग रहकर कार्य नहीं कर सकता। स्थानीय शासन के स्तर के रूप में हमें गहन तालमेल और समन्वय से काम करना चाहिए। स्थानीय और हितधारकों के समूहों को एक सूत्र में बंध कर ही कार्य करना चाहिए। समर्थन, समन्वय और नीति-निर्धारण के बड़े कार्य स्थानीय शासन के पास होंगे और दिन-प्रतिदिन का वास्तविक प्रबन्धन तथा सेवा-सुपुर्दगी हितधारकों की ही जिम्मेदारी होगी। सशक्त हितधारकों के समूह और स्थानीय शासन के बीच का अभिसरण ही विकेन्द्रीकरण की मुख्य विशेषता होनी चाहिए।

2.7 नागरिक केन्द्रीयता

2.7.1. नागरिक लोकतांत्रिक प्रणाली का मर्मस्थल है। इसलिए सभी अधिशासन संस्थाओं, विशेषकर स्थानीय शासनों के कार्यो का निर्णय नागरिकों की संतुष्टि और जनता के प्रत्यक्ष सशक्तिकरण के संदर्भ में ही किया जाना चाहिए।

2.7.2. चूंकि प्राधिकारों के दुरूपयोग की आशंका सभी प्राधिकरणों पर लागू होती है और स्थानीय शासन कोई अपवाद नहीं है, अपने वांछित उद्देश्यों को पूरा करने में स्थानीय शासनों के प्रभावी होने के लिए

नागरिकों को अधिकार देते हुए कार्यतंत्रों की श्रृंखला गठित किए जाने की आवश्यकता है। सार्वजनिक सेवा के उपभोक्ता के रूप में नागरिकों की पूर्ण संतुष्टि का पैमाना ही इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण कार्यतंत्र हैं। रिपोर्ट कार्डों, सुपुर्दगी तथा सेवा केन्द्रों पर प्राप्त नागरिको के फीडबैक, कॉल सेन्टरों तथा नागरिकों की प्रतिक्रिया मिलने के सभी अवसरों का उपयोग होना चाहिए तथा फीडबैक को सुना जाना चाहिए, विकेन्द्रित अधिशासन में इन सभी अनुक्रियाओं का सांस्थानीकरण किए जाने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त समुदाय-आधारित विश्वसनीय संगठनों, नागरिक समाज समूहों और प्रख्यात नागरिकों आदि के माध्यम से की जाने वाली लेखापरीक्षा नागरिक केंद्रीयता सुनिश्चित करेगी।

2.7.3. प्रतिनिधिक लोकतंत्र सरकार में संगठनों का एक आवश्यक अंग है। जहाँ नागरिक संप्रभुता को माना जाता है वहीं विशाल संरचना में निर्णय लेने की प्रक्रिया में नागरिकों की सहभागिता व्यावहारिक नहीं है। तथापि, स्थानीय समुदाय के स्तर पर एक हितधारक के रूप में नागरिक अपेक्षाकृत सरलतापूर्वक प्रत्यक्षतः निर्णय लेने में भाग ले सकता है। गाँव के सभी वयस्कों को मिलाकर बनी ग्राम सभा ही गाँव में लोकहितों की बेहतर संरक्षक हो सकती है। इसी प्रकार, शहरी अधिशासन में जनता की सहभागिता से निर्णय लेने की विकेन्द्रित प्रक्रिया के लिए छोटी-छोटी संरचनाएँ सृजित करने की आवश्यकता है।

2.7.4. नागरिकों की सहभागिता का सबसे महत्त्वपूर्ण रूप किसी विशिष्ट सार्वजनिक सेवा की सुपुर्दगी में स्पष्टतया पहचाने जाने वाले हितधारकों का समुदाय है। उदाहरणार्थ अपने बच्चों को पब्लिक स्कूल में भेजने वाले माता-पिता, साझा जल स्रोत से सिंचाई प्राप्त करने वाले किसान, बाजार में अपने उत्पाद की बिक्री करने वाले उत्पादक और किसी सहकारी संगठन के सदस्य स्पष्ट रूप से अभिज्ञात हितधारकों का समूह है और आनुषांगिकता के सिद्धान्त के अनुरूप जिन्हें सशक्तिकरण की आवश्यकता है।

2.7.5. आयोग ने स्थानीय शासन बनाम नागरिक समूहों पर हुई बहसों पर ध्यान दिया है। इस सिलसिले में आयोग का सुविचारित मत यह है कि हितधारकों का सशक्तिकरण और स्थानीय शासनों को एक अनवरत तथा प्रवाहमान सतत प्रक्रिया के रूप में देखा जाना चाहिए और हितधारकों के समूह व स्थानीय शासन के प्रतिनिधियों के बीच झड़प या दूरी की कोई वजह नहीं होनी चाहिए। इसलिए उपयुक्त कार्यतंत्र और स्थानीय शासन के साथ कारगर तालमेल के जरिए हितधारकों का प्रभावी सशक्तिकरण ही वह मुख्य सिद्धान्त है, जिसका अनुपालन किया जाना चाहिए।

3 साझा मुद्दे

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को नियंत्रित करने वाले सिद्धान्त ग्रामीण और शहरी दोनों ही क्षेत्रों के लिए एक समान हैं। बड़ी संख्या में मुद्दे शहरी और ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों के लिए साझा हैं और ऐसे ही मुद्दों की जांच इस अध्याय में व्यापक रूप से की जाएगी। इसके अतिरिक्त ग्रामीण अथवा शहरी अधिशासन के लिए विशिष्ट मुद्दों का ब्यौरा दो पृथक अध्यायों यथा-ग्रामीण अधिशासन और शहरी अधिशासन में दिया गया है।

3.1. संवैधानिक स्कीम

3.1.1. आनुषांगिकता का सिद्धान्त

3.1.1.1. संविधान का 73वां और 74वां संशोधन, जिसका लक्ष्य अधिशासन की प्रकृति में मूलभूत बदलाव लाना था, वर्ष 1972 में पारित किया गया था और अत्यधिक आशा और पूर्वानुमान के साथ वर्ष 1993 में लागू हुआ। तथापि, पिछले एक दशक में प्राप्त अनुभव बताते है कि निर्वाचित स्थानीय सरकारों की सृजित संरचनाएँ और उसके लिए नियमित चुनावों को सुनिश्चित करना ही अकेले प्रभावी रूप से स्थानीय सशक्तिकरण की गारन्टी नहीं हैं जबकि पंचायतें, नगरपालिकाएँ और नगरनिगम बरकरार रहें और चुनाव रूके रहे तो इसे हमेशा ही शक्ति के वास्तविक विकेन्द्रीकरण के रूप में नहीं देखा जा सकता है। संविधान में सशक्तिकरण और सुपुर्दगी की मात्रा का मुद्दा राज्य विधायिका पर ही छोड़ दिया गया है। नागरिक स्वतंत्रता या अच्छे अधिशासन का गारंटीदाता संविधान नहीं हैं, यह वस्तुतः प्रतिनिधित्वपूर्ण लोकतंत्र है, जो कि नागरिक को विमुख कर देती है, पदानुक्रम को कायम रखती है और कालान्तर में यही विशिष्टताएँ कई बार भ्रष्टाचार और अकुशलता की कारण भी बनती है। आबादी के संदर्भ में देखें तो भारत में बड़े आकार का एक जिला करीब 80 राष्ट्र के राज्यों से भी बड़ा है, हमारे अधिकांश विशाल राज्य विश्व के विशाल देशों की कतार में आते हैं। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल और बिहार इनमें से प्रत्येक राज्य यूरोप के एक विशाल राष्ट्र के बराबर है। उत्तर प्रदेश ही विश्व के छठे विशालतम देश से अधिक बड़ा है। इतनी बड़ी संख्या और अत्यधिक विविधता को देखते हुए केंद्रीकरण सार्वजनिक सेवाओं के खराब कार्यकरण और नागरिकों को हाशिए पर रखने का कारण बन सकता है। इसी पृष्ठभूमि

में 73वाँ तथा 74वाँ संविधान संशोधन लाया गया जिसका अभिप्राय निर्जीव धरातल पर हवा का एक ताजा झोंका लाना, स्थानीय स्व-शासन के माध्यम से नागरिकों को शक्ति सम्पन्न बनाना, राज्य को नए सिरे से परिभाषित करना, हमारे लोकतंत्र में जीवन्तता लाना तथा हमारी सार्वजनिक सेवाओं में दक्षता और जबाबदेही लाना था। जैसा कि पहले बताया जा चुका है लोकतांत्रिक संस्थाओं को धैर्य, पोषण और दीर्घकालीन विकास क्रम की जरूरत होती है और इनसे तत्काल ही परिणाम प्राप्त करने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती। तथापि लोकतंत्र के कार्य करते रहने के लिए जवाबदेही के साथ-साथ सततता, पूर्वानुमानिकता और संस्थाओं का प्रभावी सशक्तिकरण भी होना चाहिए। विभिन्न राज्यों में स्थानीय शासनों के सशक्तिकरण और कार्यकरण के विश्लेषण के निम्नलिखित मुख्य निष्कर्ष रहे हैः

- अनिवार्य संवैधानिक एकादेश के बावजूद स्थानीय शासन के गठन और चुनाव में बरसों और कुछ मामलों में दशक लग गए।
- यहाँ तक कि जब स्थानीय शासनों का गठन और चुनाव हो जाता है इसके बाद भी राज्य प्रायः किसी बहाने से अनुवर्ती चुनावों को निरस्त कर देते हैं या अन्यथा आगे खिसका देते हैं। संविधान के अनिवार्य प्रावधान के बावजूद कई राज्यों के लिए इनका पालन सुनिशिच्त करना दुष्कर कार्य होता है।
- लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के लिए कोई रेखीय या क्रमिक विकास नहीं है।
- राज्य सरकारें, विधायक तथा सिविल कर्मचारी आमतौर पर स्थानीय शासन को प्रभावी रूप से सशक्त बनाने के अनिच्छुक होते हैं। कई राज्यों में तो संविधान का न्यूनतम शाब्दिक कार्यान्वयन ही किया जाता है। इस तरह से संविधान में अंतर्निहित लोकतांत्रिक भावना और सिद्धान्तों की प्रायः अनदेखी की जाती है।
- कई राज्यों में जिला आयोजना समितियों और महानगर आयोजना समितियों के गठन जैसे अनिवार्य प्रावधानों की भी अनदेखी की गई है।
- जहाँ पंचायतें गठित की गई और चुनाव नियमित तौर पर हुए वहीं उन्हें राज्य विधानमंडलों और राज्य कार्यपालिका के रहमों-करम पर छोड़ दिया गया है। यद्यपि स्थानीय शासनों की स्वायत्तता की एक बहुत लम्बी परम्परा रही हैं लेकिन यह तथ्य कि संघ और राज्य सरकारों की लगभग चार दशकों पुरानी केन्द्रीकरण की अपनी परम्परा रही है, इसका अर्थ यही है कि सत्ता की सुपुर्दगी को अस्वीकृत करते हुए कालान्तर में सशक्त निहित स्वार्थ विकसित हो गए हैं।

- कुछ विधायकों की प्रवृत्ति कभी-कभी स्थानांतरण और पदस्थापन में हस्तक्षेप करते हुए स्थानीय निकायों की संविदाओं और निविदाओं की स्वीकृति देते हुए, अपराध जांच और अभियोजन, जिसमें से अधिकांशतः स्थानीय विधायक के रहमों-करम पर होते हैं, के बहाने अनावश्यक हस्तक्षेप करने की होती है। उत्तरजीविता की बाध्यता को देखते हुए राज्य सरकारें, जो विधायक की सदिच्छा और समर्थन पर निर्भर रहती हैं आमतौर पर जब तक संविधान इनकी विशेष रूप से अनुमति न दें, इस तरह का कोई भी हस्तक्षेप नहीं करतीं।

3.1.1.2. स्थानीय शासन से संबंधित मूल संवैधानिक स्कीम के पुनरावलोकन का एक सशक्त मामला है। इन्हें निम्नलिखित पैराग्राफ में रेखांकित किया जा रहा है।

3.1.1.3. स्थानीय शासनों की शक्तियों, प्राधिकारों और उत्तरदायित्वों से संबद्ध संविधान के अनुच्छेद 243छ और 243ब की व्याख्या ज्यादातर राज्यों द्वारा संविधान के विषय और कारण (73वाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 इंगित करता है किः

"यद्यपि पंचायती राज संस्थाएँ लम्बे अर्से से बनी हुई है किन्तु देखा गया है कि कई कारणों जिनमें नियमित रूप से चुनाव न होना, दीर्घकालीन दमन, समाज के कमजोर वर्गों यथा-अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं का उपयुक्त प्रतिनिधित्व न होना, शक्तियों की अपर्याप्त सुपुर्दगी और वित्तीय संसाधनों का अभाव भी शामिल है, के चलते ये संस्थाएं व्यवहार्य और जनता की अनुक्रियाशील संस्थाओं का स्तर और सम्मान प्राप्त करने में समर्थ नहीं हुई हैं।"

2. संविधान का अनुच्छेद 40, जो राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों में से एक शामिल करता है, में यह निर्धारित है कि राज्य ग्राम पंचायतों के गठन और उन्हें स्व-शासन की एक इकाई के रूप में कार्य करने में सक्षम बनाने के लिए आवश्यक कदम उठाएगा। पिछले चालीस वर्षों में प्राप्त अनुभवों और देखी गई कमियों के दृष्टिगत यह माना जाता है कि पंचायती राज संस्थाओं में सुनिश्चितता, निरन्तरता और सुदृढ़ता का समावेश करने के लिए इन संस्थाओं के बारे में संविधान में कतिपय बुनियादी और अनिवार्य विशेषताएं सन्निहित करना अनिवार्य है।"

3.1.1.4. संविधान के आधारभूत और लक्ष्य (चौहत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम कहता हैः

"कई राज्यों में नियमित चुनाव कराने में नाकामी, दीर्घकालीन दमन तथा शक्तियों और कार्यकलापों की अपर्याप्त सुपुर्दगी जैसे कई कारणों के चलते स्थानीय निकाय कमजोर और बेअसर हुई है, जिसके परिणामस्वरूप शहरी स्थानीय निकाय स्व-शासन की ऊर्जस्वी लोकतांत्रिक इकाइयों के रूप में प्रभावी तौर पर कार्य कर पाने में समर्थ नही हो सकते हैं।"

आम इच्छा स्थानीय निकायों, जो कि तीसरा स्तर है, द्वारा स्व-शासन सुनिश्चित करना है।

3.1.1.5. तथापि जब स्थानीय शासनों की संरचना से सम्बन्धित संवैधानिक प्रावधान अत्यन्त सशक्त और बाध्यकारी है, अनुच्छेद 243छ और 243ब अपेक्षाकृत कम वैचारिक हैं। लक्ष्य और आधारभूत तथा उसी प्रकार अनुच्छेद 243घ और 243त के माध्यम से स्थानीय शासनों की दी गई परिभाषा से संविधान का अभिप्राय स्पष्ट है जिसमें स्थानीय शासन, चाहे वह पंचायतें हो या नगरपालिकाएँ स्व-शासन के साधन के रूप में परिभाषित किए गए है। इसी तरह अनुच्छेद 243छ और 243ब स्थानीय शासनों को अधिकार सम्पन्न बनाने पर सुस्पष्ट है, *"स्व-शासन के संस्थान के रूप में कार्य-कलाप करने में समर्थ बनाने की दृष्टि से जो भी शक्तियाँ और प्राधिकार आवश्यक हो उनके साथ।"*

3.1.1.6. स्थानीय शासन को प्रभावी रूप से सशक्त बनाने पर राज्य सरकारों को निवेश करने के लिए एक सुदृढ़ संवैधानिक निर्देश जारी किया जाए अथवा नहीं, इस मुद्दे पर पिछले दशक में आम बहस होती रही है। स्पष्टतः कहें तो स्थानीय शासन को अधिकार सम्पन्न बनाने की आवश्यकता है। इस मुद्दे पर राजनीतिक पार्टियों के बीच पूरे देश में एक प्रभावी राजनीतिक सहमति बनी हुई है। तथापि जब इस पर कार्रवाई होगी तो अनुमान है कि कई राज्य यह महसूस करें कि शेष सुविधाएँ न्यूनतम स्थानीय सशक्तिकरण के पक्ष में ही निहित है। इस आधार पर देखें तो स्थानीय शासनों के प्रभावी रूप से सशक्तिकरण के लिए बाध्यकारी संवैधानिक प्रावधानों का होना आवश्यक और वांछनीय दोनों ही है। तथापि इस दृष्टिकोण में कुछ कठिनाइयाँ है। पहला, प्रमुख संवैधानिक संशोधनों को लाते हुए सर्वप्रथम राज्यों की स्वायत्तता का सम्मान करना चाहिए। द्वितीय, यह स्थिति राज्य-दर-राज्य अलग हो सकती है और कोई एक समरूप दृष्टिकोण (भले ही एक साथ सभी के लिए उपयुक्त दिखता हो) स्थानीय शासन के उद्देश्यों के लिए हानिकारक हो सकता हैं। तीसरा, ग्यारहवीं और बारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध मामले अपनी बेहतरीन स्थितियों में भी स्थानीय शासनों द्वारा पूरी तरह से निपटाए नहीं जा सकते। जैसा कि पैरा 2.4 में बताया गया है ऐसे कई कार्यकलाप है जो कि प्रत्येक मामले/विषय के अंतर्गत अभिज्ञात किए जा सकते हैं और आगे चलकर जो स्थानीय शासन के उपयुक्त स्तर अथवा आनुषांगिकता सिद्धान्त के व्यापक आधार पर राज्य सरकार में निहित हो सकते हैं। ऐसा विस्तृत नुस्खा संविधान में संभव नहीं है और स्थानीय शासनों को विशिष्ट कार्यकलाप अंतरित करने में राज्यों को प्रक्रियात्मक स्वतंत्रता होनी ही चाहिए।

3.1.1.7. संविधान की ग्यारहवीं और बारहवीं अनुसूची की सघन जांच यह दर्शाती है कि ये अनुसूचियाँ महज निदर्शी है न कि सुविस्तृत। इसके अलावा यहाँ बारहवीं अनुसूची में कुछ विशिष्ट असंगतियाँ भी दिखती हैं और कई मामले ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध हैं जिन्हें भी शामिल किया जाना था तथा वे असावधानीवश छूट गए हैं।

3.1.1.8. कृषि, ग्रामीण, आवास, जल संभर विकास, वन, लघु वनोत्पाद, ग्रामीण विद्युतीकरण सभी ऐसे कार्य है जो कि प्रकृति से ही ग्रामीण स्थानीय निकायों से 'सम्बन्ध' रखते हैं। किन्तु अपारम्परिक ऊर्जा, निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम, प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा सहित शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, तकनीकी प्रशिक्षण और व्यावसायिक प्रशिक्षण, महिला एवं बाल कल्याण, परिवार कल्याण, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, यहां तक कि पशु प्रबन्धन तथा कल्याण (पारम्परिक अर्थों में पशुपालन से थोड़ा अलग), पुस्तकालय, सांस्कृतिक गतिविधियाँ (जो कि ग्यारहवीं अनुसूची में शामिल है किन्तु बारहवीं में नहीं) आदि कार्य ऐसे हैं जो कि निश्चित रूप से नगरपालिकाओं के लिए नियत कार्यकलाप भी हो सकते है। बारहवीं अनुसूची विषयों की विशाल श्रृंखला को शामिल करती है जिसमें शहरी आयोजना, भूमि तथा भवन विनियमन, अग्नि शमन सेवा, सड़कें तथा पुल, शहरी निर्धनता उन्मूलन, गंदी बस्ती सुधार और स्तरोन्नयन, सुविधाओं का प्रावधान, जल आपूर्ति, सफाई, लोक स्वास्थ्य और पर्यावरण आदि शामिल है। तथापि कुछ हद तक अप्रत्याशित रूप से शहरी नागरिकों का आर्थिक और सामाजिक विकास' उनके लिए आयोजना तक ही सीमित है तथा शिक्षा सिर्फ 'शैक्षिक ....पहलुओं के विकास के रूप में ही शामिल है।" दूसरी तरफ जैसा कि ऊपर निर्दिष्ट है, शिक्षा के कई पहलू ऐसे है जो कि ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध तीन कार्यकलापों में मुख्य रूप से आती है और जिन्हें ग्रामीण स्थानीय निकायों को अंतरित किए जाने की प्रवृत्ति भी होती है।

3.1.1.9. आयोग ने दोनों अनुसूचियों की समीक्षा सम्बन्धी वांछनीयता की जांच की तथापि ये सूचियाँ महज निदर्शी हैं और किसी भी स्थिति में ज्यादातर मामलों के सम्बन्ध में राज्य सरकार और स्थानीय शासन के बीच एक और कार्यात्मक वर्गीकरण या विभाजन की आवश्यकता बनी हुई है। इसलिए आयोग का सुविचारित दृष्टिकोण है कि इन दोनों अनुसूचियों को संशोधित किया जाना आवश्यक नहीं है किन्तु इस तथ्य को तो मान ही लेना चाहिए कि ये सम्पूर्ण न होकर केवल निदर्शनात्मक है।

3.1.1.10 राष्ट्रीय संविधान कार्यकरण समीक्षा आयोग (एनसीआरडब्ल्यूसी), जिसने इस प्रश्न पर भी विचार किया था, ने स्थानीय निकायों को कार्यों की खराब सुपुर्दगी पर चिन्ता व्यक्त करते हुए निम्नलिखित सिफारिश की थी कि:

ग्यारहवीं अनुसूची के साथ अनुच्छेद 243छ पंचायतों द्वारा निष्पादित किए जाने वाले कार्यों को दर्शाता है। यह पंचायतों को विशिष्ट कार्यो का एक सेट सौंपने की गारन्टी नहीं देता। अतः अधिशासन में जिस तरह की भूमिका निभाने की उनसे प्रत्याक्षा की जाएगी वह राज्य की सरकार को नियंत्रित करने वाली प्रणाली पर निर्भर करती है।

अतः आयोग सिफारिश करता है कि पंचायतों को श्रेणीगत रूप से ही "स्व-शासन की संस्थाओं" के रूप में घोषित किया जाना चाहिए, उन्हें विशिष्ट कार्य सौंपे जाने चाहिए। इस प्रयोजन के लिए अनुच्छेद 243छ को नीचे लिखे अनुसार संशोधित किया जाना चाहिएः

अनुच्छेद 243छ का प्रतिस्थापन-अनुच्छेद 243छ के लिए निम्नलिखित अनुच्छेद प्रतिस्थापित किया जाएगा नामतः

'पंचायतों की शक्तियाँ, प्राधिकार और उत्तरदायित्व इस संविधान के प्रावधान के अधीन, राज्य विधानमंडल नियमों द्वारा पंचायतों को ऐसी शक्तियाँ और प्राधिकार सौंपेगा जो स्व-शासन की संस्था के रूप में कार्य करने के लिए उन्हें समर्थ बनाने के लिए आवश्यक समझे जाएं और ऐसे कानूनों में उपयुक्त स्तर पर पंचायतों को शक्तियों और उत्तरदायित्वों की सुपुर्दगी के प्रावधान विहित होंगे बशर्ते कि उसमें निम्नलिखित के सम्बन्ध में संकल्पित शर्ते पूरी होती होः

(क) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजना तैयार करना।

(ख) ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध मामलों सहित उन्हें सौंपे गए विषयों पर आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय सम्बन्धी स्कीमों को कार्यान्वित करना।

इसी प्रकार नगरपालिकाओं की शक्तियों, प्राधिकारों और उत्तरदायित्वों आदि के सम्बन्ध में अनुच्छेद 243ब में संशोधन किया जाना चाहिए।

एनसीआरडब्ल्यूसी की सिफारिश थी कि मौजूदा वाक्य 'विधि द्वारा सम्पन्न किया जाए' के स्थान पर अनुच्छेद 243छ और 243ब में 'विधि द्वारा निहित किया जाएगा' वाक्यांश का उपयोग किया जाए। कदाचित राज्य ने इस 'जाए' शब्द को विवेकसम्मत मौजूदा प्रावधान के रूप में लिया है अनिवार्य के रूप में नहीं। प्रत्याशा यह है कि एक अनिवार्य अभिव्यक्ति देने वाले शब्द में डालकर सुपुर्दगी की प्रक्रिया को केन्द्रक स्वरूप प्रदान किया जाए।

3.1.1.11. आयोग ने अत्यन्त सावधानी से इन रिपोर्टों, तर्क-वितर्कों, प्रस्तुतिकरणों की जांच की है। आयोग का सुविचारित मत यह है कि जबकि अनुच्छेद 243छ और 243ब को सुदृढ़ किए जाने की आवश्यकता है, यह भी वांछनीय होगा कि राज्यों की कार्यगत स्वतंत्रता में कोई अनावश्यक प्रतिबंध लगाए बिना स्थानीय शासन के सशक्तिकरण की दिशा में कुछ सामान्य सिद्धान्तों को निर्धारित किया जाए। संविधान में इन दो सिद्धान्तों को विशेष रूप से शामिल किए जाने की आवश्यकता है ताकि इन नियंत्रणकारी सिद्धान्तों के आधार पर राज्य विधानमंडल कानून बना सकें। पहला, सुपुर्दगी आनुषांगिकता के व्यापक सिद्धान्त पर आधारित हो और सौंपे गए कार्यों के स्थानीय स्तर पर प्रभावकारी निष्पादन के लिए स्थानीय शासन उपयुक्त स्तर पर पर्याप्त शक्तियों व प्राधिकारों से लैस हो। दूसरा, चूंकि ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध मामलों का अभिप्राय सभी कार्यों को सम्पूर्णतः स्थानीय शासन को सौंपने का नहीं है, स्थानीय शासन का सशक्तिकरण विशिष्ट कार्यों तक ही सीमित होना चाहिए जिन्हें स्थानीय स्तर पर किया जा सकता हो। इसलिए आयोग निम्नलिखित आधार पर अनुच्छेद 243छ (और 243ब) में संशोधन की सिफारिश करता हैः

3.1.1.12. सिफारिशें

(क) **अनुच्छेद 243छ को निम्नानुसार संशोधित किया जाए:**

"इस संविधान के प्रावधानों के अधीन, राज्य विधानमंडल, विधि द्वारा उपयुक्त स्तर पर पंचायतों को ऐसी शक्तियों और अधिकारों से लैस करेगी जो कि ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के साथ-साथ स्थानीय स्तर पर निष्पादित किए जाने वाले सभी कार्यों के सम्बन्ध में स्व-शासन के संस्थानों के रूप में कार्य करने में सक्षम और समर्थ बनाने की दृष्टि से स्थानीय शासन के लिए आवश्यक समझें जाएं।"

(ख) **इसी प्रकार शहरी स्थानीय निकायों के सशक्तिकरण के लिए अनुच्छेद 243ब को संशोधित किया जाना चाहिए।**

3.1.2. स्थानीय निकायों के अधिकार का सुदृढ़ीकरण

3.1.2.1. अनुच्छेद 171(2) निर्दिष्ट करता है

कि जब तक संसद द्वारा अन्यथा व्यवस्था नहीं की जाए तब तक विधान परिषद की संरचना खण्ड (3) में यथा विहित व्यवस्था के अनुसार होगी।

"राज्य के विधान परिषद के सदस्यों की कुल संख्या का (3)-

(क) जहाँ तक संभव हो, एक-तिहाई नगरपालिकाओं, जिला परिषदों और संसद द्वारा राज्य में विधि द्वारा स्थापित अन्य स्थानीय प्राधिकारियों के सदस्यों को शामिल करते हुए मतदाताओं द्वारा निर्वाचित किए जाएंगे।

(ख) जहाँ तक संभव हो एक-बारहवां व्यक्ति राज्य में रह रहे व्यक्तियों, जो कि भारत के किसी भी क्षेत्र के विश्वविद्यालय से कम से कम तीन वर्षों से स्नातक रहे हों या संसद के किसी कानून द्वारा या किसी कानून के अन्तर्गत विनिर्दिष्ट ऐसे किसी विश्वविद्यालय के स्नातक परीक्षा के समकक्ष अर्हता प्राप्त किए उसे तीन वर्ष हो गए हों, को शामिल करते हुए मतदाताओं द्वारा निर्वाचित किया जाएगा।

(ग) जहाँ तक संभव हो, एक-बारहवां व्यक्ति राज्य में स्थित किसी शिक्षण संस्थान, जो कि माध्यमिक स्तर या संसद द्वारा निर्मित किसी कानून द्वारा यथा विनिर्दिष्ट स्तर से नीचे का विद्यालय न हो, में कम से कम तीन वर्षों से अध्यापन कार्य में संलग्न हो, को शामिल करते हुए मतदाताओं द्वारा निर्वाचित किया जाएगा।

(घ) एक-तिहाई सदस्य विधानसभा के सदस्यों द्वारा इन व्यक्तियों के बीच में से निर्वाचित किए जाएगे जो कि सभा के सदस्य नहीं हो, और

(ड.) खण्ड (5) के उपबन्धों के अनुसार शेष व्यक्ति राज्यपाल द्वारा नामित किए जाएंगे।

3.1.2.2. वर्तमान में ज्यादातर राज्यों में विधान परिषदें नहीं हैं। 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन के बाद शासन का एक तीसरा स्तर स्थानीय निकायों के रूप में सृजित किया गया है। आयोग, महसूस करता है कि शासन के इस तीसरे स्तर को राज्य विधानमंडल में कानून बनाने की प्रक्रिया में भागीदार भी होना चाहिए। विधान परिषदें गठित करने (जहाँ उनका गठन नहीं हुआ है) के अतिरिक्त मौजूदा विधान परिषदों को भी स्थानीय शासनों के लिए एक परिषद के रूप में ढाला जा सकता है।

3.1.2.3. अनुच्छेद 171 में व्यवस्था है कि विधान परिषद के एक-तिहाई सदस्य स्थानीय निकायों द्वारा निर्वाचित किए जाएंगे। तथापि, लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का महत्त्व देखते हुए उनके प्रतिनिधित्व का

उक्त अनुपात पर्याप्त नहीं हैं। संवैधानिक प्रावधानों की अपनी एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है क्योंकि संविधान के निर्माण के दिनों विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में, शिक्षित व्यक्तियों की संख्या अधिक नहीं थी। यह स्थिति कई वर्षों में बदल गई है। शिक्षा में प्रसार के साथ ही देश में शिक्षित मतदाताओं की संख्या कई गुना बढ़ी है और आज 'स्नातक' होना कोई अपवाद जैसी बात नहीं है। इसलिए स्नातक निर्वाचन क्षेत्र जैसे प्रावधान बनाए रखने का अब कोई कारण नहीं है। इसके अलावा अर्थव्यवस्था के आधुनिकीकरण के चलते बड़ी संख्या में कई व्यवसाय उभर कर सामने आए है इसलिए ऐसे परिदृश्य में सिर्फ एक व्यवसाय "अध्यापन" को ही प्रतिनिधित्व देना उचित नहीं है। अनुच्छेद 171 विधान परिषदों को स्थानीय शासनों की परिषद के रूप में पुनर्गठित करने का एक अवसर प्रदान करता है। इस प्रकार, विधान परिषद में सदस्य सिर्फ स्थानीय निकायों के निर्वाचित प्रतिनिधियों में से ही चुने जाने चाहिए। इसके लिए संविधान में किसी संशोधन की आवश्यकता नहीं होगी। संसद द्वारा पारित एक कानून ही पर्याप्त होगा।

3.1.2.4. सिफारिश

(क) **संसद प्रत्येक राज्य में कानून द्वारा एक विधान परिषद के गठन का प्रावधान कर सकती है, जिसके सदस्य स्थानीय शासनों द्वारा निर्वाचित किए जाएंगे।**

3.1.3. संरचना

3.1.3.1 संविधान की वर्तमान स्कीम में निर्वाचन के तरीके सहित स्थानीय शासनों के गठन और संघटन के सम्बन्ध में कई विस्तृत और कठोर अनिवार्य प्रावधान मौजूद है। अपनी आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त पंचायती संरचनाएँ तैयार करने के लिए राज्यों को पूरी स्वतंत्रता देने की दृष्टि से ज्यादा नमनीय स्कीम की मांग में पूरे देश में जोरदार आवाजें उठी हैं। विशेषकर सावधानीपूर्वक जांच किए जाने वाले तीन मुद्दे हैंः

1. स्तरों की संख्या
2. स्थानीय निकायों का संघटन और चुनाव का तरीका
3. जिला स्तर पर शहरी-ग्रामीण विभाजन

स्तरों की संख्या

3.1.3.2. अनुच्छेद 243ख 20 लाख से अधिक जनसंख्या वाले प्रत्येक राज्य के लिए ग्राम, मध्यस्थ और जिला स्तर पर पंचायतों के तीन स्तर रखना अनिवार्य बनाता है। पारम्परिक विविधता वाले विशाल और जटिल देश में स्थानीय शासन का कोई एक ही विशिष्ट पैटर्न पूरे राष्ट्र में निर्दिष्ट करना व्यवहार्य नहीं है। इसके साथ ही राज्य को समय-समय पर प्रयोग और बनावट में सुधार करने की स्वतंत्रता भी होनी चाहिए। केरल में 14 जिलों में केवल लगभग 999 पंचायतें हैं। अतः स्पष्ट है कि मध्यस्थ स्तर की पंचायत केरल में अनावश्यक है। यहाँ तक कि कम बसावट वाले कई विशाल राज्य पश्चिमी देशों की तर्ज पर अधिकांशतः गांवों के समूह को स्थानीय शासन की एक निर्वाचन इकाई के रूप में मानते हैं। ऐसे मामलों में भी मध्यस्थ पंचायतों का प्रावधान अनावश्यक साबित होगा। इसके साथ ही अगर राज्य तीन स्तर रखने की इच्छा करते हैं तो उन्हें इसे अपनाने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। आयोग का सुविचारित मत है कि जबकि राज्य को पंचायतें गठित करनी चाहिए वहीं स्थानीय शासन के स्तरों के बारे में निर्णय राज्य विधानमंडल पर ही छोड़ देना चाहिए। अतः अनुच्छेद 243ख में इस आशय का सुधार किया जाना चाहिए कि प्रत्येक राज्य में सम्बन्धित स्तर पर पंचायतों का गठन जरूरी हो किन्तु ग्राम, मध्यस्थ और जिला पंचायतों के सृजन का विनिर्देशन अनिवार्य न हो।

स्थानीय निकायों का संघटन तथा चुनाव के तरीके

3.1.3.3. वर्ष 1993 तक राज्यों में पंचायतों के अपने मॉडल होते थे। विशिष्ट रूप से अधिकांश राज्यों में ग्राम पंचायत का प्रमुख ही मध्यस्थ पंचायतों का पदेन प्रधान भी होता था तथा मध्यस्थ पंचायतों का प्रमुख ही जिला पंचायत का सदस्य होता था। कई राज्यों का मानना था कि ऐसी व्यवस्था ने तीनों स्तरों के बीच एक संगठनात्मक संपर्क तथा उनके समरूपीय कार्यों को सुविधाजनक बनाना सुनिश्चित किया। संविधान का अनुच्छेद 243ग सभी राज्यों के लिए अनिवार्य बनाता है कि पंचायत (सभी स्तर की) में सभी सीटें पंचायत क्षेत्र में क्षेत्रीय चुनाव क्षेत्रों से हुए निर्वाचन द्वारा चयनित व्यक्ति से ही भरी जाएं। दूसरे शब्दों में, पंचायत के हर स्तर-ग्राम, मध्यस्थ और जिला के सदस्य जनता द्वारा सीधे चुने जाएं और तीनों स्तरों के बीच किसी नमनीय संगठनात्मक तालमेल का राज्यों को कोई प्राधिकार न हो। तथापि जनता द्वारा सीधे निर्वाचन के नाते प्रत्येक पंचायत के पक्ष में एक मजबूत तर्क है कि, अप्रत्यक्ष निर्वाचन की श्रृंखला के स्थान पर एक बार ग्राम पंचायतों के सदस्य चुन लिए जाते हैं। अप्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व की उक्त प्रणाली वृद्धिकारी रूप से जनता से दूर हो रही है ओर इस प्रकार यह स्थानीय शासन में अंतर्निहित प्रयोजन को ही हानि पहुंचा सकती हैं। कुछ राज्यों में पंचायतों के अध्यक्ष के प्रत्यक्ष निर्वाचन के द्वारा 1993 के पूर्व समय में यह समस्या देखने में आई थी। उदाहरणार्थ वर्ष 1987 के कानून के अंतर्गत आंध्र प्रदेश में ग्राम,

मध्यस्थ और जिला पंचायतों के अध्यक्ष सार्वभौमिक वयस्क मताधिकारों से सीधे लोकप्रिय निर्वाचनों द्वारा चुने गए थे। मौजूदा संवैधानिक प्रावधानों (अनुच्छेद 243ग (5)) के अंतर्गत राज्य विधानमंडल को मध्यस्थ पंचायत तथा जिला पंचायत के अध्यक्ष के चुनाव के तौर-तरीकों में फेरबदल का कोई अधिकार हासिल नहीं है। कुछ राज्य लोकप्रिय जनादेश से प्राप्त वैधता तथा उच्चतर दायित्व भावना और स्थानीय शासनों की अत्यधिक स्थिरता को सुनिश्चित करते हुए अध्यक्ष के सीधे चुनाव को प्राथमिकता दे सकते हैं। अध्यक्ष का अप्रत्यक्ष चुनाव आरक्षणों की पेंचिदा प्रणाली के चलते इस अवसर पर कुछ खास उलझनों की वजह बन सकता है। ऐसे कई उदाहरण है; जिनमें बहुमत के समर्थन वाली पार्टी का उस श्रेणी की पंचायत में कोई निर्वाचक सदस्य नहीं था जिसके लिए अध्यक्ष का पद आरक्षित था।

3.1.3.4. अनुच्छेद 243ग(3)(ग) और (घ) निर्दिष्ट करता है कि राज्य विधायिका ग्राम स्तर के अतिरिक्त संसद सदस्यों के तथा राज्य स्तर पर राज्य विधायिका के लिए प्रतिनिधित्व करने हेतु विधि द्वारा प्रावधान कर सकती है। आयोग का विचार है कि पंचायतों में संसद सदस्यों और राज्य विधायिका को मौजूद बनाए रखने से स्थानीय नेतृत्व का उभर पाना मुश्किल होगा, जोकि सक्रिय स्थानीय शासन के विकास की अनिवार्य शर्त है। इसलिए आयोग का विचार है कि संसद सदस्य और राज्य विधायिका के सदस्य स्थानीय निकायों के सदस्य नहीं होने चाहिए। ऐसा करने से स्थानीय निकायों में निर्णय लेने की क्षमता व सामर्थ्य विकसित होगा।

3.1.3.5. संतुलनकारी स्थिति के रूप में आयोग अनुभव करता है कि पंचायतों के संघटन और अपनी स्थानीय स्थितियों के अनुसार बेहतरीन चुनाव के तरीकों का निर्धारण करने में राज्यों को पूर्णतः स्वतंत्र होना चाहिए। तथापि आयोग का अवलोकन है कि जो राज्य, मध्यस्थ तथा जिला पंचायत के लिए अप्रत्यक्ष सदस्यता का विकल्प चुनते हैं, जिससे निचले मध्यस्थ का अध्यक्ष ऊपरी स्तर का सदस्य होता है और जहाँ सीधे निर्वाचित कोई सदस्य नहीं हो, उनके लिए वांछनीय होगा कि उनका अध्यक्ष सीधे निर्वाचित व्यक्ति हो। दूसरे शब्दों में कहें तो- प्रत्येक स्तर में या तो सदस्य या उसका अध्यक्ष कोई न कोई एक जनता द्वारा निर्वाचित व्यक्ति होना चाहिए ताकि जनता को समुचित प्रतिनिधित्व मिल सके।

3.1.3.6 स्थानीय शासन की संवैधानिक स्कीम की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, महिलाओं का सशक्तिकरण है और जहाँ आरक्षण प्रणाली के माध्यम से राज्य को अन्य पिछड़ा वर्गों को चुनना होता हैं, साक्ष्य दर्शाते हैं कि पंचायतों और नगरपालिकाओं में चुनी गई महिलाओं और कमजोर वर्ग के सदस्यों ने अत्यन्त सराहनीय कार्य किया है। परिणामतः इस वर्गों का सशक्तिकरण स्थानीय शासन की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विशिष्टताओं में से एक बन गया है।

जिला परिषद

3.1.3.7. शहरी निर्वाचित स्थानीय शासन की शुरूआत सर्वप्रथम औपनिवेशिक दौर में विशुद्धतः अकस्मात हुई थी, जिसने पंचायतों और नगरपालिकाओं के समानान्तर व असंयुक्त विकास को जन्म दिया। इसके फलस्वरुप सांविधिक ढांचा भी अलग हुआ और उनके अभिसरण की दिशा में कोई भी प्रयास नहीं किए गए। शहरी स्थानीय शासनों से ग्रामीण स्थानीय शासनों के अलग-थलग पड़ने से कई दुखद परिणाम निकले। पहला, यहाँ तक कि समान जरूरतों व प्रत्याशाओं से सम्बन्धित मामलों में भी शहरी और ग्रामीण आबादी के बीच एक कृत्रिम विभाजन बना रहा। उदाहरणार्थ शिक्षा और स्वास्थ्य मूलभूत सार्वजनिक सेवाएँ हैं जो कि किसी भी जगह रह रहे किसी श्रेणी के व्यक्ति को समान रूप से सुलभ होनी चाहिए। इन सेवाओं का विभाजन न तो वांछनीय है और न ही व्यवहार्य है क्योंकि यहाँ संस्थाओं का पदानुक्रम विद्यमान है, हर कोई किसी न किसी दूसरे पर निर्भर है और भौगोलिक अवस्थिति अर्थात जिला अस्पताल के कार्य का यह अर्थ नहीं है कि वहाँ सिर्फ जिला कस्बे में रहने वाले शहरी आबादी का ही इलाज होगा।

3.1.3.8. दूसरा, तेजी से शहरीकृत होते समाज में शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों की सीमाएं तेजी से बदल रही है। एक समय ग्रामीण स्थानीय शासन द्वारा सेवा प्रदत्त आबादी अच्छी-खासी सिकुड़ जाएगी। वस्तुतः तेजी से विकसित हो रहे शहरों के आस-पास विद्यमान अर्थ-शहरी क्षेत्र में गांवों और शहरों दोनों की विशिष्टताओं का मिश्रण है और उनकी आवश्यकताओं पर एक समेकित तरीके से ही ध्यान दिया जा सकता है। इसके अलावा 1993 के पूर्व युग में शहरी तथा ग्रामीण स्थानीय शासन के बीच समन्वय के कारण ही जिला योजना परिषद और जिला विकास समीक्षा समिति जैसे कृत्रिम संस्थाओं को उदय का अवसर मिला। यह तब अनुच्छेद 243यघ के अन्तर्गत जिला आयोजना समिति के सृजन के जरिए संविधान द्वारा स्वीकार्य किया जा चुका है। अंततः जनता की दृष्टि से देखें तो कोई भी एक अविभाजित स्थानीय शासन नहीं है जो जिला स्तर पर सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व कर सके। ये जिले दो शताब्दियों पुराने हैं और उनकी अपनी राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और प्रशासनिक हस्तियाँ हैं, जिनमें से प्रत्येक की विशिष्ट खासियतें हैं। इसके अतिरिक्त, कृत्रिम रूप से शहरी तथा ग्रामीण विभेदीकरण का अर्थ यह भी होगा कि लोग जिला परिषद् या नगरपालिका को एक भिन्न निकाय के रूप में ही देखेगें और राजनीतिक संदर्भ में जिला एक ही बन पाएगा। यही वजह है कि आश्चर्यजनक रूप से ज्यादातर राज्यों में जिले में प्राधिकार का वास्तविक प्रतीक अभी भी जिला समाहर्ता ही बना हुआ है।

3.1.3.9. संविधान के 73वें संशोधन का ढांचा बलवंतराय मेहता मॉडल और अशोक मेहता समिति की सिफारिशों पर निर्मित किया गया था, जिसके फलस्वरूप इसमें जिला स्तर पर सभी स्थानीय शासनों का प्रभावी एकीकरण नहीं है। अनुच्छेद 243यघ में निर्दिष्ट जिला आयोजना समितियां भी कई राज्यों में बेहद कमजोर और अप्रवर्त्तक रही है। इसलिए काफी सोच-विचार के बाद आयोग का यह स्पष्ट मत है कि सभी शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों से प्रतिनिधित्व देते हुए एक ही निर्वाचित जिला परिषद होनी चाहिए जो संपूर्ण जिले के लिए वास्तविक स्थानीय शासन के रूप में कार्य करेगी। ऐसी स्कीम में, जिला परिषद उनके लिए ग्यारहवीं और बारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध कार्यो सहित सभी स्थानीय कार्यों के लिए उत्तरदायी होगी। आयोग द्वारा यथा संकल्पित एक बार जिला परिषद अस्तित्व में आ जाती है तो अपने वर्तमान रूप में जिला आयोजना समिति की आवश्यकता नहीं होगी। ग्रामीण और शहरी दोनों ही क्षेत्रों के लिए योजना कार्यों का निष्पादन जिला परिषद की जिम्मेवारियों का एक अहम अंग होगा। जिला परिषद और जिला सरकार के संदर्भ में जिला समाहर्ता और जिलाधीश की भूमिका की भी समीक्षा किए जाने की आवश्यकता है। इस मामले में काफी सोच-समझ के बाद व्यापक रूप से दो बातें उभर कर सामने आई हैं। स्थानीय शासन की पैरवी करने वालों का तर्क है कि एक लोकतांत्रिक वातावरण में जिला समाहर्ता की संस्था एक सशक्त और प्रभावी स्थानीय शासन में बेकार है, इसलिए इसे निरस्त किया जाना चाहिए। जबकि प्रशासनिक (राजकीय) पक्ष का मानना है कि समाहर्ता का कार्यालय पिछली दो शताब्दियों से देश में कार्यरत रहा है और एक वैविध्यपूर्ण और विक्षुब्ध समाज में स्थिरता तथा शांति व्यवस्था का महत्त्वपूर्ण स्तम्भ रहा हे। इसलिए कुछ और समय तक जिला समाहर्ता कार्यालय को अपने मौजूदा प्रारूप में ही बने रहने देना चाहिए। संभावना तो यह है कि जिला परिषद के अपने मुख्य अधिकारी होने चाहिए। इसी बीच एक अंतरिम कार्यतंत्र के रूप में स्थानीय शासन को सुदृढ़ बनाने में समाहर्ता कार्यालय की शक्तियों का इस्तेमाल करना सराहनीय है। आयोग का सुविचारित मत है कि इन दो स्थितियों के बीच एक सुसंगत संपर्क सेतु बनाना वांछनीय है और जिला समाहर्ता कार्यालय संस्थागत शक्तियों व प्राधिकारों को उपयोग में लाते हुए जिला शासन को और भी मजबूत व सुदृढ़ बनाया जाना चाहिए।

3.1.3.10. आयोग का विश्वास है जिला समाहर्ता की नियुक्ति जिला परिषदों के मुख्य अधिकारी के रूप में कर दी जाए तो इन दोनों ही लक्ष्यों को बखूबी हासिल किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में, समाहर्ता की नियुक्ति जिला परिषद के परामर्श से ही की जानी चाहिए। मुख्य अधिकारी सह-जिला समाहर्ता की दोहरी जिम्मेदारी होगी और वह सभी स्थानीय मामलों में निर्वाचित जिला शासन के और राज्य सरकार में उन सभी नियामक मामलों जो कि जिला शासन को प्रत्यायोजित नहीं किए गए हैं, के प्रति जिम्मेदार होगा। इस मामले पर जिला प्रशासन (टी.ओ.आर. 6) पर प्रस्तुत रिपोर्ट में आगे और चर्चा की जाएगी।

3.1.3.11 सिफारिशें

(क.) अनुच्छेद 243ख(1) को निम्नानुसार पढ़ने के लिए संशोधित किया जाना चाहिए: "राज्य विधानमंडल द्वारा कानून द्वारा किए गए उपबन्धों के अनुसार इस भाग में किए जा रहे प्रावधानों के अनुसार प्रत्येक राज्य में उपयुक्त स्तर पर पंचायतों का गठन किया जाएगा।"

(ख.) सीटों के आरक्षण (अनुच्छेद 243घ) से सम्बन्धित संवैधानिक प्रावधान अपने मौजूदा स्वरूप में ही बने रहे जिससे कि महिलाओं और सुविधाहीन वर्गों के लिए पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया जा सके।

(ग.) संसद और राज्य विधानमंडल के सदस्य स्थानीय निकायों के सदस्य नहीं बने।

(घ.) अनुच्छेद 243ग (1) प्रतिधारित किया जाना चाहिए।

(ङ) अनुच्छेद 243ग (2 और 3) निरस्त किया और अनुच्छेद 243ग (2) द्वारा निम्नानुसार प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए:

243ग(2) इस भाग के उपबन्धों के अधीन राज्य का विधानमंडल कानून द्वारा किसी भी स्तर में पंचायतों के संघटन तथा उनके चुनावों के तौर-तरीकों के सम्बन्ध में प्रावधान कर सकता है बशर्ते कि अध्यक्षों या सदस्यों के किसी पद के लिए सीधा चुनाव कराया गया हो।

बशर्ते कि किसी भी क्रम में सदस्यों के प्रत्यक्ष चुनाव की स्थिति में किसी भी स्तर की पंचायत की क्षेत्रगत सीमा की परिधि में रह रही जनसंख्या का अनुपात और चुनावों द्वारा भरी जाने वाली इस पंचायत में कुल सीटों की संख्या, जहाँ तक व्यवहार्य हो, पूरे राज्य में एक ही होगी। इसके साथ ही प्रत्येक पंचायत क्षेत्र इस प्रकार से क्षेत्रीय चुनाव क्षेत्रों में बांटा जाएगा कि प्रत्येक चुनाव क्षेत्र में व्याप्त आबादी और इसके लिए आवंटित सीटों का अनुपात जहाँ तक व्यवहार्य हो पूरे पंचायत क्षेत्र में एक समान हो।

(च.) प्रत्येक जिलों में एक जिला परिषद होनी चाहिए जिसमें शहरी तथा ग्रामीण दोनों का ही प्रतिनिधित्व हो।

(छ.) 243ख(2) को निम्नानुसार प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए।

'प्रत्येक जिले में एक जिला परिषद गठित की जाएगी जिसमें सभी शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रीय जनता का प्रतिनिधित्व होगा और संविधान के अनुच्छेद 243छ और 243ब में निहित प्रावधानों के अनुरूप शक्तियों का उपयोग करते हुए अपने कार्यों का निष्पादन करेगी।"

3.2. निर्वाचन

3.2.1. निर्वाचन प्रक्रिया

3.2.1.1. प्रारम्भिक लड़खड़ाहट के बाद अब सभी राज्यों में स्थानीय निकायों के चुनाव निष्पक्ष और नियमित तौर पर हो रहे है तथा संवैधानिक प्राधिकरण के रूप में स्वतंत्र निर्वाचन आयोग गठित किए जा चुके हैं। वर्तमान में झारखण्ड ही वह अकेला राज्य है, जहां पंचायत चुनाव नहीं हुए हैं। नगरपालिकाओं के संबंध में वहां चुनावों का आयोजन आंशिक रूप से ज्यादा अनियमित है क्योंकि इसका कारण शहरीकरण के साथ-साथ स्थानीय शासनों की सीमाओं में हुआ आवधिक परिवर्तन था। तथापि, ऐसे कई मुद्दे हैं जिनपर स्थानीय शासनों के चुनावों के दौरान ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

3.2.1.2. यद्यपि संविधान ने चुनावों के संचालन की जिम्मेदारी राज्य निर्वाचन आयोग पर डाली है, किन्तु आयोग प्रायः असहाय और निरूपाय हो जाता है जब निर्धारित प्रक्रिया का पालन समय पर नहीं होता। संविधान का अनुच्छेद 243ग व्यवस्था करता है कि, *"किसी भी स्तर पर पंचायत के प्रादेशिक क्षेत्र में रहने वाली जनसंख्या और उस पंचायत में कुल विद्यमान सीटों की संख्या का अनुपात चुनावों से भरा जाएगा और जहां तक संभव हो वह पूरे राज्य में एक समान होगा।"* जबकि नगरपालिकाओं के सम्बन्ध में ऐसा कोई सुस्पष्ट प्रावधान नहीं किया गया है। समानता और लोकतांत्रिक सहभागिता के मौलिक सिद्धान्तों की मांग है कि शहरी स्थानीय शासनों में भी इसी तरह की पद्धति अपनाई जानी चाहिए। अनुच्छेद 243ट के खण्ड (4) में स्पष्ट व्यवस्था दी गई है कि "राज्य विधानमंडल पंचायतों के चुनावों के सम्बन्ध में या उससे जुड़े सभी मामलों के सम्बन्ध में विधि द्वारा स्थापित प्रावधान करेगा।"

3.2.1.3. जैसा कि सारणी 3.1 में देखा जा सकता है कई राज्यों में स्थानीय शासन की शक्तियों के सीमा-निर्धारण से सम्बन्धी कार्य सरकारों द्वारा रोका रखा गया है। इसके परिणामस्वरुप कई मामलों, विशेषकर शहरी क्षेत्रों में राज्य चुनाव आयोगों को राज्य सरकारों की कार्रवाई की प्रतीक्षा में रूके रहना पड़ता है। यद्यपि लोकसभा/राज्य विधानसभाओं के चुनावों से सम्बन्धित प्रक्रिया एक समान ही है, तथापि गणतंत्र के प्रारम्भ से ही संसद ने भारतीय निर्वाचन आयोग की सहभागिता के साथ-साथ स्वतंत्र परिसीमन आयोगों का सृजन किया है। निर्वाचन आयुक्त का कार्यालय वस्तुतः सीमानिर्धारक प्रक्रिया के लिए सचिवालय के तौर पर कार्य करता है। इस हितकारी सांस्थानिक कार्यतंत्र ने सुनिश्चित किया है कि स्वतंत्र भारत में चुनावों में कभी भी अपूर्ण सीमानिर्धारण के कारण विलम्ब नहीं हुआ। आयोग का यह विचार है कि स्थानीय शासन के लिए अलग से एक परिसीमन आयोग का गठन अनावश्यक है। स्वतंत्र राज्य निर्वाचन आयोग, विशेषकर जब उन्हें संवैधानिक प्राधिकरण के तौर पर नियुक्त किया गया हो,

आसानी से उक्त कार्य कर सकते हैं और सरकार कानून या विनियमों के माध्यम से इन आयोगों को सीमा-निर्धारण सम्बन्धी दिशानिर्देश दे सकती है। राज्य निर्वाचन आयोगों द्वारा एक बार कार्य कर लिया गया तो अपूर्ण प्रक्रिया की दलील पर चुनावों का आयोजन रोकने या विलम्बित करने की राज्य सरकारों की प्रवृत्ति पर अंकुश लगेगा।

सारणी 3.1. राज्य निर्वाचन आयोगों की शक्तियों की तुलना

	उत्तरदायित्व किस पर है	
निर्वाचन संबद्ध कार्यकलाप	**राज्य सरकार**	**राज्य निर्वाचन आयोग**
आरक्षण तथा आरक्षित चुनाव क्षेत्रों का चक्रण	मध्यप्रदेश	महाराष्ट्र
	राजस्थान	गुजरात
	आन्ध्र प्रदेश	
	उत्तर प्रदेश	केरल
	तमिलनाडु	
	हरियाणा	पश्चिम बंगाल
	पंजाब	
	कर्नाटक (जिला पंचायतों और मध्यस्थ पंचायतों के लिए)	कर्नाटक (ग्राम पंचायतों के लिए)
सीमानिर्धारण और मतपत्रों को तैयार करना	आन्ध्र प्रदेश	पश्चिम बंगाल
	हरियाणा	
	हिमाचल प्रदेश	
	कर्नाटक प्रदेश	
	पंजाब	महाराष्ट्र
	राजस्थान	
	तमिलनाडु	
	उत्तर प्रदेश	

स्रोतः लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और पंचायती राज संस्थाओं पर कार्य समूह, योजना आयोग/पंचायती राज मंत्रालय, नवम्बर 2006

3.2.1.4. संविधान में सुविधाहीन वर्गों के राजनीतिक सशक्तिकरण के लिए व्यवस्था की गई है और इसलिए उनके लिए स्थानीय शासन के चुनावी पदों पर आरक्षण की व्यवस्था की गई है। तथापि, पुनः

यह कहना पड़ता है कि अधिकांश राज्यों में आरक्षण की शक्तियाँ राज्य सरकारों द्वारा प्रतिधारित है। अतः स्थानीय शासन में आरक्षण की जटिलता और आरक्षित सीटों का उच्च अनुपात (70 प्रतिशत तथा कई राज्यों में इससे भी अधिक) के कारण राज्य में आरक्षित सीटों का आवधिक चक्रण जरूरी हो जाता है। ऐन वक्त पर कई राज्यों ने अन्य पिछड़ा वर्गों की परिगणना (जिनके लिए जनगणना के आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं) का कार्य प्रारंभ किया है, जिसके चलते आरक्षण में और इस प्रकार अंततः चुनावों के आयोजन में विलम्ब हुआ है। आयोग का मानना है कि चुनाव क्षेत्रों के आरक्षण की जिम्मेदारी भी राज्य निर्वाचन आयोगों को ही सौंप दी जाए। लोक सभा और राज्य विधानसभाओं के सम्बन्ध में सीमा-निर्धारण और आरक्षण सम्बन्धी दोनों कार्य निर्वाचन आयोग द्वारा ही किए जाते हैं।

3.2.1.5 अनुच्छेद 243ट स्थानीय चुनाव के लिए मतदाता सूची तैयार करने का उत्तरदायित्व राज्य निर्वाचन आयोगों पर सौपता है। लोकसभा, राज्य विधानसभाओं और स्थानीय शासनों के मताधिकार सम्बन्धी अर्हता मापदण्ड एक समान है इसलिए अधिशासन के तीसरे स्तर के गठन और राष्ट्रीय, राज्य तथा स्थानीय शासन को एक सीमारहित व अभिन्न प्रक्रिया के रूप में ही देखा जाना चाहिए। ऐसी स्थिति में स्थानीय शासन के लिए अलग से मतदाता सूची तैयार कराने की कवायद न केवल अनुपयोगी और व्यर्थ है बल्कि इससे स्थिति और भी विभ्रमकारी हो सकती है। कई राज्यों ने इस समस्या को समझा और कई राज्यों ने भारतीय निर्वाचन आयोग द्वारा विधानसभा चुनावों के लिए तैयार की गई मतदाता सूचियों को ही स्थानीय शासनों के चुनाव में भी इस्तेमाल किया। तथापि, कानून राज्य-दर-राज्य अलग हो सकते हैं और प्रायः विधानसभा चुनावों की मतदाता सूचियों को प्रस्थान बिन्दु के रूप में लिया जाता है और स्थानीय चुनावों के लिए राज्य निर्वाचन आयोगों द्वारा नए सिरे से पंजीकरण किया जाता है। जहाँ नई सूचियों की तैयारी की गई है ऐसी स्थिति में वहाँ दोनों सूचियों (एक स्थानीय निकायों के लिए और दूसरी विधानसभाओं के लिए) में अन्तर हो सकता है। संभावना है कि इससे मतदाताओं में गलतफहमी और भी बढ़ जाए और इससे कानूनी जटिलता भी बढ़ जाए। ऐसी किसी भी बठिनाई को नजरअंदाज करने के लिए बेहतर होगा कि विधानसभाओं के लिए तैयार की गई मतदाता सूचियों का स्थानीय निकायों के चुनाव के लिए आधार-सामग्री के रूप में प्रयोग किया जाए। तथापि यहाँ पर यह जोर दिया जाना भी जरूरी है कि विधानसभाओं के लिए तैयार की गई चुनाव सूचियों को स्थानीय निकाय चुनावों के लिए सीधे-सीधे इस्तेमाल नहीं किया जा सकता क्योंकि इसके दो कारण हैं-(1) स्थानीय निकाय का क्षेत्र बिल्कुल वही नहीं हो सकता जो कि विधानसभा के चुनाव क्षेत्र के लिए तैयार की गई सूची में शामिल

होता हो। (2) स्थानीय निकायों की स्थिति में मतदाता सूची वार्ड-वार आधार पर तैयार की जाती है जबकि विधानसभा चुनावों की दृष्टि से मतदाता सूची को भाग-वार आधार पर बनाया जाता है और इकाई के रूप में 'वार्ड' 'भाग' से पूरी तरह भिन्न है।

3.2.1.6. इस समय मतदाता सूची में 'भाग' को विधानसभा चुनावों की दृष्टि से निम्नानुसार परिभाषित किया गया है[5]:

> *"5 भागों में सूचियाँ तैयार करना-(1) सूची सुविधाजनक रूप से दो भागों में विभाजित की जाएगी, जो क्रमिक रुप से संख्यांकित होगी।*
>
> *(4) सूची के किसी भाग में शामिल नामों की संख्या साधारणतया दो हजार से अधिक नहीं होगी।"*

3.2.1.7. यह अनुभव किया गया है कि ऐसे 'भाग' हमेशा ही एक सम्पूर्ण भौगोलिक इकाइयाँ नहीं होती, जिसके कारण नगरपालिकाओं और ग्राम वार्डो के सीमानिर्धारण के प्रयोजन से एक प्राथमिक इकाई के रूप में इनका उपयोग करना कठिन होता है। इसलिए आयोग का विचार है कि 'भाग' को किसी भौगोलिक इकाई के रूप में ही परिभाषित किया जाना चाहिए। तब जाकर 'ब्लाक निर्माण' दृष्टिकोण का उपयोग किया जा सकेगा ताकि एक या अधिक समेकित भाग को मिलाकर एक वार्ड बनाया जा सके। (छोटे कस्बे और गाँवों में वार्ड भाग से छोटे हो सकते हैं और ऐसे मामलों में वार्डों को इस प्रकार से गठित किया जाए ताकि एक या एक से अधिक वार्डो को मिलाकर एक भाग बनाया जा सके। अभिसरण की दिशा में अगला कदम जो जरूरी है वह यह है कि विधानसभाओं की मतदाता सूची के 'भागों' के रूप में एक जनगणना के दौरान सह-आवधिक आधार पर 'परिगणन प्रखंड' को भी परिभाषित किया जाए।

3.2.1.8. आयोग का विचार है कि राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा विधानसभा चुनावों के लिए तैयार की गई मतदाता सूची को बिना किसी काट-छांट के राज्य में स्थानीय चुनावों के लिए उपयोग करने का अधिकार स्थानीय शासन के कानूनों को होना चाहिए। इसके लिए किसी एक विधि-विहित प्रक्रिया का होना जरूरी है और यह भी जरूरी है कि भारतीय निर्वाचन आयोग द्वारा तैयार मतदाता सूची और मतदाता पंजीकरण भौगोलिक सामीप्य के आधार पर सुनिश्चित हो। इसी प्रकार स्थानीय निकायों के सम्बन्ध में मतदाता विभाजन को भी 'ब्लाक निर्माण' दृष्टिकोण का अनुपालन करना चाहिए।

3.2.1.9. जैसा कि पहले वर्णन किया गया है जटिलता और आरक्षित सीटों की उच्च प्रतिशतता द्वारा प्रदत्त आरक्षणों का चक्रण आवश्यक हो गया है। तथापि बारम्बार चक्रण अनुभव प्राप्त करने और महत्व

5. मतदाता नियमावली, 1960 का पंजीकरण
http//lawmin.nic.in/legislative/election/volume%/202/registration%20 of % 20 electors%20rules%201960pdf

में वृद्धि और विकास के अवसरों को नकारता है। यह मतदाताओं के सुविधाहीन वर्गो के लिए विशेष रूप से हानिकारक है, जो कि पहले से ही नेतृत्व के अवसरों से उपेक्षित और वंचित रहे हैं। परिणामतः आरक्षण संख्यात्मक प्रतिनिधित्व को बढ़ाता है, तथापि नगण्य या कभी-कभार ही दृष्टिगत होने, घेराबन्दी के द्वारा कमर कस चुके स्थानीय आभिजात्य जनों द्वारा बारी के लिए आरक्षित सीटों पर अपनी प्रत्याशा के अनुरूप ही किसी छद्म उम्मीदवार को नामित करा देने की बहुदृष्ट प्रकृति के कारण यह सशक्तिकरण प्रायः एक विभ्रम बनकर ही रह जाता है। इन सभी तथ्यों पर विचार करते हुए इस आयोग का मानना है कि इन सीटों पर आरक्षण इस तरीके से हो जो वास्तविक रूप से सशक्तिकरण का संवाहक हो; सिर्फ संख्यात्मक या अप्रयोगमूलक प्रतिनिधित्व बहुत कारगर नहीं है। यह कार्य निम्नलिखित तीन व्यापक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए किया जा सकता हैः

पहला, यह चक्रण कम से कम पांच वर्ष की दो अवधियों के बाद हो सकता है ताकि नेतृत्व के दीर्घावधि तक बने रहने तथा चुनाव क्षेत्र के पोषण व देखभाल की संभावनाएं बनी रहें। तमिलनाडु में यही दृष्टिकोण अपनाया गया है। तथापि, एक या अधिक पीढ़ी के लिए आरक्षण के अवसर का यह बहु आरक्षण जनता के बड़े वर्ग को नकार सकता है।

दूसरा, एकल-सदस्यीय चुनाव क्षेत्रों के स्थान पर बहु-सदस्यीय चुनाव क्षेत्रों के लिए निर्वाचन कराए जा सकते हैं।, एक प्रादेशिक चुनाव क्षेत्र में कई सीटें इस तरह से संयुक्त की जा सकती है कि सुविधाहीन वर्गों के लिए आरक्षित सीटों की संख्या प्रत्येक चुनाव क्षेत्र में एक समान हो। चुनावों को तब सूची प्रणाली के जरिए कराया जा सकता है ताकि प्रत्येक पार्टी स्वयं को प्राप्त मतों के अनुपात से ही प्रतिनिधित्व प्राप्त कर सके। इसके अतिरिक्त एक विकल्प यह भी है कि सदस्यों का चुनाव व्यक्तिगत तौर पर हासिल मतों के आधार पर किया जाए। दोनों मामले में प्रत्येक आरक्षित श्रेणी में से चुने जाने वाले सदस्यों की अपेक्षित संख्या कानून द्वारा निर्दिष्ट की जानी चाहिए। वर्ष 1952-57 के लोकसभा/विधानसभा के चुनाव 2 अथवा 3 सदस्यीय चुनाव क्षेत्रों में किए गए थे, पंचायतों में चुनाव के लिए महाराष्ट्र में बहु-सदस्यीय चुनाव क्षेत्रों को अपनाया गया है।

तीसरा, यदि अध्यक्ष/मुख्य कार्यपालक का पद लोकप्रिय चुनाव द्वारा सीधे निर्वाचित होता है तो सुविधाहीन वर्गों में अद्वितीय प्रतिभाओं का जमावड़ा मौजूद है तथा इस तरह से इन वर्गों में से नेतृत्वशीलता को पोषित और विकसित किया जा सकता है। **पैरा 3.1.3.11** के अन्तर्गत आयोग की

सिफारिश है कि पंचायतों की संरचना में लचीलापन लाया जाए और इस समस्या पर ध्यान देने के लिए चुनाव के तरीके द्वारा ध्यान दिया जाए।

3.2.1.10. अधिकांश राज्यों में जिला आयोजना समितियों/महानगर आयोजना समितियों का गठन नहीं हुआ है। संविधान के अनुच्छेद 243यघ के अनुसार जिला आयोजना समिति के कम से कम 80 प्रतिशत सदस्यों का चुनाव शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में निवास कर रही जनसंख्या के समानुपात में जिला स्तर की पंचायतों और जिलों में नगरपालिकाओं के निर्वाचित सदस्यों के बीच में से किया जाएगा। महानगर आयोजना समितियों के मामले में प्रावधान है कि इसके कम से कम दो-तिहाई सदस्यों का चुनाव नगरपालिकाओं के निर्वाचित सदस्यों तथा महानगर क्षेत्र में पंचायतों के अध्यक्षों के बीच में से इन नगरपालिकाओं और पंचायतों के क्षेत्र में रह रही जनसंख्या के समानुपातिक आधार पर किया जाएगा। अनुच्छेद 243यङ इस प्रक्रिया में जनसंख्या और समयबद्ध चुनावों को समानुपातिक महत्त्व भी शामिल करता है। अतः आयोग महसूस करता है कि इन निकायों के निर्वाचित सदस्यों के चुनावों का आयोजन सम्बन्धी कार्य भी राज्य निर्वाचन आयोंगों को ही सौंपा जाना चाहिए।

3.2.1.11. भारत सरकार ने मॉडल पंचायत चुनाव विधेयक, 2007 भी परिचालित किया है। इस विधेयक के प्रावधानों के अनुसार सीमाओं के निर्धारण, किसी चुनाव की अधिसूचना, सीटों के आरक्षण तथा अध्यक्ष पद के आरक्षण की समस्त शक्तियाँ राज्य निर्वाचन आयोग को देने का प्रस्ताव किया गया है।

3.2.1.12. सिफारिशें

(क.) **चुनाव क्षेत्रों के सीमानिर्धारण और आरक्षण का कार्य राज्य निर्वाचन आयोगों को सौपा जाना चाहिए।**

(ख.) **सभी राज्यों में स्थानीय शासन कानूनों को राज्य निर्वाचन आयोगों द्वारा नामों के संशोधन के बिना स्थानीय शासनों के लिए विधानसभा मतदाता सूची को अपनाने की व्यवस्था करनी चाहिए। यह प्रक्रिया प्रभावकारी हो इसके लिए यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि भारतीय निर्वाचन आयोग द्वारा मतदाताओं का पंजीकरण और मतपत्रों की तैयारी का काम भौगोलिक संलग्नता पर आधारित हो। इसी प्रकार स्थानीय निकायों के लिए निर्वाचकीय विभाजन भी 'ब्लाक निर्माण' के दृष्टिकोण पर निर्भर होना चाहिए।**

(ग.) **मतदाता नियमों का पंजीकरण नियम 1960 'भाग' को एक सम्पूर्ण भौगोलिक इकाई के रूप में परिभाषित करते हुए संशोधित किया जाना चाहिए।**

(घ.) **जनगणना आंकड़ों और मतदाता सूची के बीच प्रभावी अभिसरण सुनिश्चित करने के लिए 'भाग' और ब्लॉक परिकलन" की सीमाएँ समानुरूपी होनी चाहिए।**

(ङ.) **सीटों के आरक्षण को नीचे लिखे दो में से किसी एक सिद्धान्त का अनुपालन करना चाहिए।**

(i) **एकल-सदस्यीय चुनाव क्षेत्रों की स्थिति में चक्रण कम से कम 5 वर्ष की दो अवधियों के लिए हो, जिससे कि चुनाव क्षेत्र की देखभाल और दीर्घकालिक नेतृत्वशीलता की संभावना बढ़ सके।**

(ii) **एकल-सदस्यीय चुनाव क्षेत्रों के स्थान पर सीटों का आरक्षण सुनिश्चित करते हुए सूची प्रणाली के माध्यम से बहु-सदस्यीय चुनाव क्षेत्रों के लिए चुनाव कराए जा सकते हैं। इससे आरक्षित श्रेणियों के लिए सीटों के आवंटन की गारन्टी होने से चक्रण की आवश्यकता नहीं रहेगी।**

(च.) **जिला तथा महानगर आयोजना समितियों के निर्वाचित सदस्यों के लिए चुनावों का आयोजन/ संचालन का काम राज्य निर्वाचन आयोग को सौप दिया जाना चाहिए।**

3.2.2. राज्य निर्वाचन आयोग का गठन

3.2.2.1. स्थानीय निकायों के चुनावों के सम्बन्ध में राज्य निर्वाचन आयोगों को प्रदान साझा कार्यो को देखते हुए यह जांच करना आवश्यक है कि पद्धति किस प्रकार से अपना काम करेगी और इस पद्धति या प्रणाली में क्या कोई सुधार अपेक्षित है। राज्य निर्वाचन आयोग के कार्य भारतीय निर्वाचन आयोग के कार्यकलापों के समान ही है। पिछले वर्षों में निर्वाचित प्रतिनिधियों की संख्या में अभूतपूर्ण वृद्धि हुई है और स्थानीय निकायों के चुनावों का कार्य निःसंदेह एक भारी-भरकम कार्य है। यद्यपि यह संस्था दो दशक से ज्यादा पुरानी नहीं है लेकिन देश में लोकतांत्रिक शासन के उच्च-स्तरीय प्रतिनिधित्व प्रणाली को आधारभूत भूमिका का निर्वाह करना है। इसलिए आवश्यक है कि स्थानीय चुनावों के संचालन के लिए नियत कार्यतंत्र को पर्याप्त रूप से सहायता व समर्थन दिया जाए।

3.2.2.2. राज्य निर्वाचन आयोगों की अवधि, शर्ते, अर्हताएँ तथा उनकी सेवा शर्तें सारणी 3.2 में यथा प्रदर्शित सभी राज्यों में अत्यधिक भिन्न-भिन्न हैं।

सारणी 3.2. राज्य निर्वाचन आयोगों का गठन

राज्य	अवधि	आयु सीमा	अर्हताएँ	हैसियत
असम	4 वर्ष	62 वर्ष	राज्य अथवा केन्द्रीय सरकार में प्रशासनिक, न्यायिक अथवा विधिक सेवा में न्यूनतम 25 वर्ष आहरित अंतिम वेतन	**हैसियतः** लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के समान **वेतनमान** पेंशन घटाते हुए, सरकार में
बिहार	3 वर्ष	62 वर्ष	भारत सरकार में अपर सचिव अथवा समतुल्य पद	**वेतनः** पेंशन घटाते हुए सरकारी सेवा में वेतन के समान
हरियाणा	5 वर्ष	55 से 65 वर्ष के बीच	उच्च न्यायालय का न्यायाधीश या	**वेतनः** पेंशन घटाते हुए सरकारी सेवा में प्राप्त 5 वर्षों से सरकार में वेतन के समान
हिमाचल प्रदेश	5 वर्ष	65 वर्ष	अपर मुख्य सचिव के रैंक तक अथवा समतुल्य पद	**वेतनः** पेंशन घटाते उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के वेतन के समान
कर्नाटक	5 वर्ष	62 वर्ष	कोई अर्हता निर्धारित नहीं	**वेतनः** राज्य निर्वाचन आयुक्त के रुप में नियुक्ति के समय सरकार में प्राप्त वेतन अथवा पेंशन घटाते हुए 6500 रुपए प्रति माह इसमें से जो भी अधिक हो
केरल	4 वर्ष	62 वर्ष	कोई अर्हता निर्धारित नहीं	**हैसियतः** राज्य के मुख्य सचिव के समान **वेतनः** पेंशन घटाकर 8000/- रुपए प्रति माह (पुराना वेतनमान)
मध्य प्रदेश	6 वर्ष	62 वर्ष	भारत सरकार में अपर सचिव अथवा राज्य सरकार में समतुल्य पद	**वेतन :** पेंशन घटाते हुए 8000 रुपए प्रतिमाह (पुराना वेतनमान)

सारणी 3.2 (जारी)

राज्य	अवधि	आयु सीमा	अर्हताएँ	हैसियत
महाराष्ट्र	5 वर्ष		राज्य सरकार के प्रधान सचिव के रैंक से कम नहीं	**वेतनः** 7600 रुपए प्रति माह (पुराना वेतनमान) वेतन संरक्षण का प्रावधान भी उपलब्ध है)
उड़ीसा	5 वर्ष	62 वर्ष	उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश अथवा जिला जज या सेवारत सिविल अधिकारी	**वेतनः** पेंशन को घटाते हुए 20450 रुपए प्रति माह या अंतिम आहरित वेतन इनमें से जो भी अधिक हो तथा राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष को यथा-उपलब्ध सुविधाएँ
पंजाब	5 वर्ष	64 वर्ष	उच्च न्यायालय के सेवारत या सेवानिवृत न्यायाधीश या राज्य सरकार में 2 वर्षों से वित्तीय आयुक्त अथवा प्रधान सचिव के रूप में कार्यरत	**वेतनः** उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के समान
तमिलनाडु	2 वर्ष (बाद की 2 अवधियों के लिए भी नियुक्त हो सकता है)	62 वर्ष	सरकार के सचिव स्तर से नीचे नहीं	**वेतन :** उच्च न्यायालय के सेवारत न्यायाधीश को यथा स्वीकार्य
उत्तर प्रदेश	5 वर्ष	65 वर्ष	भारत सरकार में संयुक्त सचिव के रैंक से कम नहीं या जिला मजिस्ट्रेट अथवा मंडलीय आयुक्त और वरिष्ठ सचिवालयी प्रशासनिक पदधारक	**वेतन :** उन्हें अपने मूल विभाग में यथा स्वीकार्य
पश्चिम बंगाल	5 वर्ष	65 वर्ष	किसी प्रशासनिक पद पर केन्द्र सरकार या राज्य सरकार के कार्यों का पर्याप्त अनुभव	**वेतनः** पेंशन घटाकर 8000 रुपए प्रति माह (पुराना वेतनमान)

स्रोतः लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और पंचायती राज संस्थाओं पर कार्य समूह की रिपोर्ट, योजना आयोग/पंचायती राज मंत्रालय, नवम्बर, 2006

3.2.2.3. संविधान कार्यकरण सम्बन्धी राष्ट्रीय आयोग (एनसीआरडब्ल्यूसी) ने वर्ष 2002 में सिफारिश की थी कि जिस प्रकार भारत के निर्वाचन आयुक्त को सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश का हैसियत प्राप्त है ठीक उसी तरह राज्यों के निर्वाचन आयुक्तों को भी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का दर्जा प्राप्त होना चाहिए।

3.2.2.4. इसमें कोई संदेह नहीं कि राज्य निर्वाचन आयोगों को अपने कार्य पूर्णतः निष्पक्ष रूप से निष्पादित करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, आयुक्त को त्रुटिहीन निष्ठा का होना चाहिए। सभी प्रकार के बाहरी प्रलोभन और दबावों के प्रतिरोध के लिए निर्वाचन आयोग को पर्याप्त स्वायत्तता और शक्तियाँ सुलभ होनी चाहिए। अपनी रिपोर्ट 'शासन में नीतिशास्त्र' में आयोग ने सिफारिश की है कि मुख्य चुनाव आयुक्त तथा अन्य चुनाव आयुक्तों का चयन एक ही पद्धति से होना चाहिए। इसी के अनुक्रम में आयोग का मानना है कि राज्य के मुख्यमंत्री, सभापति तथा राज्य के प्रतिपक्ष के नेता को मिलाकर बनाए गए मण्डल की सिफारिशों पर ही राज्य के निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति होनी चाहिए।

3.2.2.5. आयोग के समक्ष अनुरोध किया गया है कि राज्य निर्वाचन आयोग को भारतीय निर्वाचन आयोग के नियंत्रण में लाया जाए। इस उपाय से राज्य निर्वाचन आयोग राज्य से अपेक्षित स्वतंत्रता को प्राप्त कर सकेगा और वे अपने कार्यों तथा दायित्वों को वस्तुनिष्ठ रूप में निष्पादित कर पाने में सक्षम होंगे। इस उपाय से चुनावी-प्रक्रियाओं में समतात्मक दृष्टि भी विकसित होगी। तथापि कोई भी स्वतंत्र और संवैधानिक संस्था किसी अन्य संवैधानिक प्राधिकरण के नियंत्रण में कार्यरत नहीं हो सकती। ऐसे में एकमात्र विकल्प यही बचता है कि संविधान के अनुच्छेद 243ट को निरस्त किया जाए और स्थानीय चुनावों की जिम्मेदारी भारतीय निर्वाचन आयोग को सौपते हुए संविधान के अनुच्छेद 324 को संशोधित किया जाए। अनुच्छेद 324 क्षेत्रीय आयुक्तों की नियुक्ति का प्रावधान करता है। इस प्रावधान के अंतर्गत प्रत्येक राज्य में एक क्षेत्रीय आयुक्त की नियुक्ति की जाए और स्थानीय चुनावों के लिए वह राज्य निर्वाचन आयोग के लिए काम करे। इसके विपरीत यह भी तर्क दिया जा सकता है कि चूंकि स्थानीय निकायों की संख्या काफी ज्यादा है। अतः स्थानीय शासनों से सम्बन्धित चुनाव सम्बन्धी मामलों में ध्यान देने के लिए भारत के निर्वाचन आयोग को समय मुश्किल से ही मिल पाएगा और इसलिए बेहतर यही होगा कि प्रत्येक राज्य में अपने-अपने राज्य निर्वाचन आयोग के प्रावधान के साथ एक विकेन्द्रीकृत कार्यतंत्र हो। चूंकि अब सभी राज्यों ने अपने राज्य निर्वाचन आयोग का गठन कर लिया है अतः ऐसे में अनुच्छेद 243ट को निरस्त करते हुए इन पदों व कार्यालयों को समाप्त किया जाना व्यावहारिक नहीं

होगा। आयोग का अनुभव है कि सुविधाओं का संतुलन राज्य निर्वाचन आयोग की स्वतंत्रता की सुदृढ़ता में निहित है। इसके साथ ही (जैसा कि ऊपर सुझाया गया है) राज्य निर्वाचन आयोग की नियुक्ति के लिए मुख्यमंत्री, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और विधानसभा में विपक्ष के नेता को मिलाकर बनाए गए एक मण्डल का प्रावधान करते हुए राज्यगत कानून बनाया जा सकता है। सेवा के पुनःग्रहण के अधिकार के साथ सेवारत कर्मचारियों की नियुक्ति जैसे कुछ विशिष्ट बातों को इस प्रक्रिया से दूर रखा जाना चाहिए। नियुक्ति की अर्हताएँ पदभार की अवधि और सेवानिवृति की आयु आदि के सम्बन्ध में एकरूप पैरामीटरों और मानकों को ही विकसित व संस्थाबद्ध किए जाने की आवश्यकता है। आयोग का यह भी विचार है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की भांति 62 वर्ष की आयु सीमा की शर्त के साथ 5 वर्ष की अवधि का सेवा काल उपयुक्त है। फिर भी आयोग का सुदृढ़ विश्वास है कि भारतीय निर्वाचन आयोग और राज्य निर्वाचन आयोगों को एक धरातल पर लाने के लिए एक प्रभावकारी संस्थात्मक कार्यतंत्र विकसित और सुदृढ़ किया जाना चाहिए। इससे राज्य निर्वाचन आयोगों को नियमित अन्तरक्रिया, संभार तंत्रीय तालमेल, अवसंरचनात्मक आदान-प्रदान और तकनीकी सहायता आदि की सुविधाएँ प्राप्त हो सकेंगी। इससे राज्य निर्वाचन आयोग वह संस्थागत सुदृढ़ता और विश्वसनीयता पर भी ध्यान केन्द्रित करने का अवसर मिलेगा जो कि भारतीय निर्वाचन आयोग ने पिछले दो दशको के दौरान काम करते हुए अर्जित की है। इसके अतिरिक्त आयोग का यह भी विचार है कि संसदीय और राज्य विधानसभाओं के चुनावों में बड़े पैमाने पर लगाई गई इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों (ईवीएम) द्वारा प्राप्त अपार सफलताओं को देखते हुए इन्हें स्थानीय चुनावों में भी लगाया जाना चाहिए। इसके लिए राज्य कानूनों में ईवीएम के व्यापक उपयोग का प्रावधान किया जाना चाहिए।

3.2.2.6. सिफारिशें

(क.) **राज्य निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा राज्य के मुख्यमंत्री, राज्य के विधानसभाध्यक्ष और विपक्ष के नेता को मिलाकर बनाए गए एक मण्डल की सिफारिशों के आधार पर की जानी चाहिए।**

(ख.) **बेहतर समन्वय, एक-दूसरे के अनुभवों से लाभाविन्त होने तथा संसाधनों की सहभागिता सुनिश्चित करने की दृष्टि से भारतीय निर्वाचन आयोग और राज्य निर्वाचन आयोग को एक ही धरातल पर लाने के लिए एक संस्थात्मक कार्यतंत्र तैयार और विकसित किया जाना चाहिए।**

3.2.3. विधायी निकायों में प्रतिनिधित्व में शहरी - ग्रामीण असन्तुलन सुधारना

3.2.3.1. संविधान का अनुच्छेद 82 यह प्रावधान करता है कि, लोकसभा में सीटों का आवंटन तथा प्रादेशिक चुनाव क्षेत्रों में राज्यों का बंटवारा हर जनगणना के बाद किया जाना चाहिए। इसी तरह के प्रावधान अनुच्छेद 170 में राज्य विधानसभाओं के लिए किए गए है। तथापि संविधान के 42वें संशोधन ने वर्ष 2001 तक सीटों के इस प्रकार के पुनःआवंटन पर रोक लगा दी थी। बाद में 84वें संशोधन द्वारा यह रोक और बढ़ाई गई। 84वें संशोधन का 'उद्देश्य तथा कारण कथन' इस प्रकार हैं:

संविधान के अनुच्छेद 82 और 170(3) के परन्तुक बताते है कि जब तक वर्ष 2000 के बाद की पहली जनगणना के आंकड़े प्रकाशित नहीं हो जाते तब तक चुनाव क्षेत्रों के नए सिरे से पुनःसमायोजन का काम नहीं किया जा सकता। ये परन्तुक परिवार नियोजन के मानकों को प्रोत्साहित करने के एक उपाय के रूप में संविधान (42वें संशोधन) अधिनियम, 1976 के द्वारा अधिरोपित किए गए थे। चूंकि तबसे वर्ष 2000 के बाद की जाने वाली पहली जनगणना का काम शुरू हो चुका है अतः नए सिरे से सीमानिर्धारण पर लगा हुआ संवैधानिक निषेध इस जनगणना के आंकड़े प्रकाशित होने के साथ ही व्यपतगत हो जाएगा। नए सीमानिर्धारण के पक्ष और विरोध में लगातार मांग की जा रही है। देश के विभिन्न भागों में परिवार-नियोजन के क्षेत्र में हुई प्रगति को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय जनसंख्या नीति सम्बन्धी कार्यनीति के रूप में सरकार ने हाल ही में जनसंख्या स्थिरीकरण हेतु कार्यसूची के अनुपालन में राज्य सरकार को समर्थ बनाने की दृष्टि से एक अभिप्रेरक उपाय के तौर पर नए सिरे से सीमनिर्धारण के काम पर लगे निषेध को वर्ष 2026 तक लगाए रखने का निर्णय लिया है।

बॉक्स 3.1. परिसीमन अधिनियम, 2002

यह अधिनियम राज्यों में लोकसभा की सीटों में पुनःसमायोजन, प्रत्येक राज्य की विधानसभा में सीटों की कुल संख्या, विधानसभा वाले प्रत्येक राज्य तथा संघ क्षेत्रों तथा राज्य और संघ क्षेत्रों का लोकसभा और विधानसभा क्षेत्रों में विभाजन करने तथा उससे संबंधित मामलों के सम्बन्ध में प्रावधान करने के लिए है।"

यह परिसीमन आयोग के गठन का प्रावधान करता है जो कि वर्ष 1991 (धारा-4 (2)) की जनसंख्या के आधार पर लोकसभा तथा राज्य विधानसभाओं के लिए प्रत्येक राज्य में प्रादेशिक चुनाव क्षेत्रों का विभाजन और पुनःसमायोजन करेगा। यह वर्ष 1971 के जनगणना आंकड़ों के आधार पर प्रत्येक राज्य के लिए लोकसभा तथा राज्य विधानसभा की सीटों की संख्या भी निर्धारित करेगा और वर्ष 2001 (धारा-8) के जनगणना आंकड़ों के आधार पर अनु. जाति तथा अनु. जन-जाति के लिए आरक्षित की जाने वाली सीटों की संख्या भी निश्चित करेगा। तदन्तर यह आयोग प्रत्येक राज्य के लिए आवंटित लोकसभा सीटों की संख्या और वर्ष 1971 के जनगणना आंकड़ों के आधार पर एक सदस्यीय प्रादेशिक चुनाव-क्षेत्रों को पुनःसमायोजित और उनका पुनःसीमानिर्धारण करते हुए प्रत्येक राज्य के लिए निर्दिष्ट राज्य विधानसभा सीटों के वितरण का काम भी करेगा। ऐसा करते समय वह यह भी सुनिश्चित करेगा कि सभी चुनाव क्षेत्र भौगोलिक रूप से एक मुकम्मल या संपूर्ण क्षेत्र हो और प्रत्येक विधानसभा चुनाव क्षेत्र किसी एक ही संसदीय चुनाव क्षेत्र के दायरे में ही परिसीमित हो। (धारा-9)।

स्रोत : http://Lawmin.nic.in/legislative/election/volume %201/Delimitation9620act.96202002pdf

सरकार ने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों को शामिल करते हुए प्रत्येक राज्य में लोकसभा, राज्य विधानसभाओं को आवंटित सीटों की संख्या में कोई फेर-बदल किए बिना वर्ष 1991 की जनगणना में अभिनिश्चित जनसंख्या के आधार पर राज्यों में चुनाव क्षेत्रों के पुनःसमायोजन और औचित्यीकरण का कार्य शुरू करने का भी निर्णय लिया है जिससे कि विभिन्न चुनाव क्षेत्रों में जनसंख्या/मतदाताओं के असमान विकास के कारण घटित असंतुलन को दूर किया जा सके।

यह भी प्रस्ताव है कि वर्ष 1991 की जनगणना के आधार पर अभिनिश्चित आबादी के आधार पर ही लोकसभा, राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित सीटों की संख्या को पुनःनिर्धारित किया जाए।"

3.2.3.2 जनसंख्या और सीट का अनुपात बना रहे इसके लिए संविधान ने प्रत्येक जनगणना के बाद चुनाव क्षेत्रों के परिसीमन सम्बन्धी कई प्रावधान किए हुए है। जनसंख्या वृद्धि पूरे देश भर में एक जैसी नहीं है। इसके अलावा गाँवों से शहरों की तरफ हो रहे भारी प्रवास के कारण शहरी निर्वाचन क्षेत्रों की जनसंख्या ग्रामीण जनसंख्या की तुलना में अधिक तेजी से बढ़ी है। इसके परिणामस्वरुप शहरी निर्वाचन क्षेत्रों में मतदाताओं की औसत संख्या ग्रामीण निर्वाचन क्षेत्रों की तुलना में कहीं अधिक है। इसलिए लोकसभा और विधानसभाओं में सीटों पर 42वें संशोधन द्वारा रोक लगाए गए तथा आगे 84वें संशोधन द्वारा उसे यथा लागू बनाए गए निषेध को भली प्रकार समझा जा सकता हैं क्योंकि यह परिवार नियोजन के उद्देश्यों के लिए सहायक हैं। लेकिन किसी राज्य को आबंटित सीटों की संख्या के दायरे में यह वांछनीय होगा कि उक्त सीटों का समायोजन जारी रहे। परिसीमन अधिनियम, 2002 प्राथमिक रूप से इसी प्रयोजन को पूरा करना चाहता है। अधिनियम की धारा 8 के अनुसार परिसीमन आयोग से परिसीमन का कार्य करने को कहा गया है, अधिनियम के अनुसारः

*"**8. सीटों की संख्या का पुनःसमायोजन**-*आयोग अनुच्छेद 81, 170, 330 और 332 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए तथा, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली के सिवाय, संघ राज्य क्षेत्रों और संघ राज्य क्षेत्र अधिनियम 1963 (1963 का 20) की धारा 3 और 39 के सम्बन्ध में तथा अनुच्छेद 239कक के खण्ड (2) के उपखण्ड (ख) में राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली के सम्बन्ध में आदेश द्वारा निम्नवत निर्धारित करेगाः

(क) वर्ष 1971 में हुई जनगणना में यथा-अभिनिश्चित आंकड़ों के आधार पर और धारा (4) में निहित प्रावधानों की शर्त पर प्रत्येक राज्य को आबंटित लोकसभा सीटों की संख्या निर्धारित करने तथा वर्ष

(2001) की जनगणना के आधार पर यथा-अभिनिश्चित आंकड़ों के अनुसार अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित, यदि कोई हों, सीटों की संख्या निर्धारित करने, और

(ख) वर्ष 1971 की जनगणना में यथा-अभिनिश्चित आंकड़ों के आधार पर तथा धारा (4) में निहित प्रावधानों के अनुपालन की शर्त पर प्रत्येक राज्य के लिए विधानसभाओं हेतु निर्दिष्ट सीटों की कुल संख्या नियत करने और वर्ष 2001 की जनगणना के आधार पर अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित की जाने वाली कुल सीटों की संख्या यदि कोई हो, निर्धारित करेगा।"

3.2.3.3. इस प्रकार का कार्य राज्य में प्रति सीट मतदाताओं की संख्या के संदर्भ में शहरी तथा ग्रामीण जनसंख्या के बीच के असन्तुलन को दुरूस्त कर देगा। तथापि गौर करने योग्य बात यह है कि शहरी क्षेत्रों की जनसंख्या फिर भी ग्रामीण जनसंख्या की तुलना में अधिक तेजी से बढ़ेगी, अतः वांछनीय होगा कि प्रत्येक जनगणना के बाद यही प्रक्रिया दोहराई जाए। इसके लिए इसे संविधान में प्रावधानों के जरिए जोड़ दिया जाए। लोकसभा में सीटों की संख्या और राज्य में विधानसभा सीटों की संख्या नहीं बदलेगी किन्तु राज्य में सीटों का आवंटन अवश्य बदल जाएगा। इससे ग्रामीण मुद्दों के साथ-साथ शहरी मुद्दों पर भी विधायकों का ध्यान आकृष्ट करने में मदद मिलेगी।

3.2.3.4. सिफारिशें

(क) **तीव्र शहरीकरण की दृष्टि से शहरी तथा ग्रामीण जनसंख्या में मतदाता असन्तुलन को दूर करने के लिए राज्य में लोकसभा तथा विधानसभा दोनों के लिए निर्वाचन क्षेत्रों के प्रादेशिक समायोजन का कार्य प्रत्येक जनगणना के बाद किया जाना चाहिए। इसके लिए संविधान के अनुच्छेद 81, 82, 170, 330 तथा 332 को संशोधित करने की आवश्यकता है।**

3.3. स्थानीय शासनों के कार्य

3.3.1. शक्तियों तथा उत्तरदायित्वों की सुपुर्दगी

3.3.1.1. अनुच्छेद 243छ (पंचायत के सम्बन्ध में) तथा अनुच्छेद 243ब (नगरपालिकाओं के सम्बन्ध में) के अंतर्गत 73वें तथा 74वें संवैधानिक संशोधनों ने राज्य विधानमंडल को कानून द्वारा निम्नलिखित की शक्तियां दी है कि उन्हें:

- स्व-शासन की संस्था के रूप में कार्य करने में समर्थ बनने की दृष्टि से आवश्यक समझी गई शक्तियाँ और प्राधिकार हासिल होंगी।

- निम्नलिखित पर शक्तियों तथा उत्तरदायित्वों की सुपुर्दगी के लिए आवश्यक प्रावधान हेतु जरूरी कानून बना सकेगे बशर्ते कि यथा विहित शर्तों का अनुपालन किया जाए।"

  (क) आर्थिक विकास तथा सामाजिक न्याय की योजना तैयार करना, तथा

  (ख) उन्हें सौंपे गए अनुच्छेद 243छ के अनुरूप आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए स्कीमों का कार्यान्वयन, कार्यों का निष्पादन तथा ग्यारहवीं अनुसूची (पंचायतों) और बारहवीं अनुसूची (नगरपालिकाओं) को क्रमशः सौंपे गए सूचीबद्ध मामलों के विषयों के साथ उन्हें सौंपी गई स्कीमों (अनुच्छेद 243ब) का कार्यान्वयन करना।

3.3.1.2. इन दोनों अनुच्छेदों में दोहराए जाने वाले विषयों का अभिप्राय स्व-शासन की एक संस्था के रूप में कार्य करने के लिए पंचायतों और नगरपालिकाओं को समर्थ बनाने सम्बन्धी सुपुर्दगी करनी है। इसके लिए उन्हें आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए स्थानीय योजना तैयार करने और प्रासंगिक सूचियों में सूचीबद्ध विषयों के साथ कार्यकलाप करने/स्कीमें लागू करने के लिए भी सशक्त किया जा सकता है।

3.3.1.3. यद्यपि 15 वर्ष बीत चुके हैं किन्तु विभिन्न स्तरों पर स्थानीय शासनों को दी गई शक्तियों तथा दायित्वों की सुपुर्दगी की प्रगति अभी भी काफी कमजोर और विषम है। सुपुर्दगी की मौजूदा स्थिति के एक सर्वेक्षण से निम्नलिखित स्थिति सामने आई हैः

(क) अधिकांश राज्यों में पंचायतों/नगरपालिकाओं और नगरपालिकाओं के सम्बन्ध में बहु प्रयोज्य विधानों के माध्यम से सुपुर्दगी का कार्य किया गया है, जिसमें ग्यारहवीं तथा बारहवीं अनुसूची में दर्ज मामले मात्र दोहराए गए हैं:

(ख) कथित रूप से सुपुर्द किए जाने वाले विषयों की संख्या कुछ अन्यों में अनुसूचियों में दी गई समग्र सूची के अनुसार कुछ राज्यों में संख्यात्मक तौर से थोड़ी बहुत अलग है। तथापि सभी मामलों में किसी प्रदत्त विषयवस्तु के सम्बन्ध में स्थानीय शासन के विभिन्न स्तरों के कार्य के सुपुर्दगी की प्रगति बहुत धीमी है।

(ग) पिछले तीन वर्षों के दौरान पंचायती राज मंत्रालय के अध्यवसायी आग्रह के कारण स्थानीय शासन के विभिन्न स्तरों के "कार्यकलाप निरुपण" का विवरण सभी राज्यों में पूरा किया गया है।

(घ) यद्यपि यह प्रक्रिया अभी आंशिक और दीर्घकालीन है कुछ मामलों में राज्य सरकारों द्वारा कार्यकलाप निरुपण सूचियों का प्रारूप भी अनुमोदित नहीं किया गया है।

(ड.) यहाँ तक कि जहाँ कार्यकलाप निरुपण का अनुमोदन हो भी गया है वहाँ कार्य करने में स्थानीय शासन को समर्थ बनाने वाली अन्य समान्तर कार्रवाइयाँ नहीं की गई है। अपने कार्यात्मक आदेशों तथा अनुदेशों के साथ-साथ डीआरडीए जैसे समानान्तर सरकारी निकाय और (जल, विद्युत आदि जैसे) संवैधानिक निकाय बिना किसी परिवर्तन के बने हुए हैं तथा कथित रूप से सुपुर्द अपने कार्यों को निष्पादित करने से स्थानीय शासन को रोक रहे हैं।

(च) कुछ मामलों में तो मौजूदा व्यवस्था के भीतर जो कार्यकलाप स्थानीय शासन द्वारा किए जाते हैं, वे भी हितधारकों के समानान्तर सामुदायिक संगठनों द्वारा प्रोत्साहित और वित्तपोषित की जा रही हैं और उक्त संगठन अपने तथा स्थानीय शासनों के बीच सह-क्रियात्मक तथा सहयोगी सम्बन्ध विकसित किए बिना ही उन कार्यकलापों को विशेष रूप से अपने तक ही सीमित रख रहे हैं।

3.3.1.4. इस प्रकार स्थानीय स्तर पर "कार्यान्वयन का स्थान" संघ, राज्य तथा स्थानीय जैसे बहु-स्तरीय सरकारी संस्थाओं से भरा हुआ है और यहाँ तक कि एक ही क्षेत्र के रूप में देखें तो विभ्रम, अनावश्यक दोहराव, अक्षमता, निधियों का अपव्यय, निम्न उत्पादन और अकुशल परिणाम, इस प्रक्रियात्मक अराजक जंगल का कुल परिणाम यही सब है। स्थानीय संगठनों, जिन्हें कार्यान्वयन के एक छोटे हिस्से के रूप में उत्कृष्ट व्यवहार्य स्तर पर प्रत्यक्षतः और समग्रतः सम्बद्ध होना चाहिए था और विविध अवसरों पर जिससे परामर्श किया जाना था उसे ही आज अधिकांश मामलों में उपेक्षित और नजरअंदाज किया जा रहा है।

3.3.1.5. शहरी और ग्रामीण विकास सम्बन्धी स्थायी समिति 2004 (तेरहवीं लोक सभा) ने संविधान के प्रावधानों को लागू करा पाने में केन्द्रीय और राज्य सरकारों की असफलता इंगित की है।

संविधान के अनुच्छेद 243छ के अनुसारः "भाग IX का समग्र उद्देश्य पंचायतों को उन शक्तियों और दायित्वों से लैस करना है जो कि स्व-शासन के संस्थान के रूप में उनके सफलतापूर्वक कार्यनिष्पादन की दृष्टि से आवश्यक समझी जाएं आर्थिक-विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएँ तैयार करने तथा ग्यारहवीं अनुसूची में शामिल मामलों सहित आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए स्कीमों

बॉक्स 3.2 ग्यारहवीं अनुसूची (अनुच्छेद 243छ)

1. कृषि विस्तार सहित कृषि।
2. भूमि सुधार, भूमि सुधारों का कार्यान्वयन, भूमि समेकन और मृदा-संरक्षण।
3. लघु सिंचाई, जल प्रबंधन तथा जलसंभर विकास।
4. पशुपालन, डेयरी तथा मुर्गी पालन।
5. मत्स्य पालन
6. सामाजिक वानिकी तथा कृषि वानिकी।
7. लघु वनोत्पाद।
8. खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों सहित लघु उद्योग।
9. खादी, ग्राम एवं कुटीर उद्योग।
10. ग्रामीण आवास।
11. पेय जल।
12. ईंधन एवं चारा।
13. सड़कें, पुलिगा, पुल, नौका चालन, जल मार्ग तथा संचार के विविध अन्य साधन।
14. विद्युत वितरण सहित ग्रामीण विद्युतीकरण।
15. अ-पारम्परिक ऊर्जा स्रोत।
16. निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम।
17. प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय सहित शिक्षा
18. तकनीकी प्रशिक्षण व व्यावसायिक शिक्षा।
19. वयस्क तथा अनौपचारिक शिक्षा।
20. पुस्तकालय।
21. सांस्कृतिक गतिविधियाँ।
22. बाजार तथा मेले।
23. अस्पतालों, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और औषधालयों सहित स्वास्थ्य और स्वच्छता।
24. परिवार कल्याण।
25. महिला तथा बाल विकास।
26. विकलांग तथा मानसिक अपंगों के कल्याण सहित सामाजिक कल्याण।
27. कमजोर वर्गों, विशेषकर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का कल्याण।
28. सार्वजनिक वितरण प्रणाली।
29. सामुदायिक परिसंपत्तियों का रख-रखाव।

को कार्यान्वित करने के लिए यथा आवश्यक समझी गई पंचायतों को लैस करने के लिए राज्य सरकारों को पर्याप्त शक्तियाँ प्रदान की गई है। तथापि समिति यह कहने पर बाध्य है कि संविधान (73वां संशोधन) लागू किए हुए 9 वर्ष से भी अधिक समय बीतने के बावजूद बहुत थोड़े राज्य ही ऐसे है जो कि भाग IX के प्रावधानों को लागू करने की दिशा में गंभीर दिखे हैं। समिति का यह भी मानना है कि कुछ विशिष्ट कार्यकलापों से पंयायतों का लैस किया जाना तभी सार्थक हो सकता हैं जबकि उन्हें प्रशिक्षित कार्यपालक कर्मचारी और पर्याप्त वित्तीय संसाधन भी उपलब्ध कराए जाएं। इस प्रकार समिति नोट करती है कि स्व-शासन की संस्था के रूप में पंचायतें अपने दायित्वों का कुशलतापूर्वक निर्वाह सिर्फ तभी कर सकती हैं जबकि उनकी सुपुर्दगी का ढांचा त्रिकोणीय रूप से तीन एफ-अर्थात् फंक्शन, फंक्शनरी और फाइनेंस पर आधारित हो। अर्थात् यह सशक्तिकरण कार्यों, कार्यपालक कर्मचारियों और वित्तपोषण के त्रिकोणीय आधार पर निर्भर होना चाहिए। समिति इस बात पर भी अप्रसन्न है कि बहुत थोड़े ही राज्य ऐसे हैं जिन्होंने ग्यारहवीं अनुसूची में शामिल सभी 29 विषयों के लिए कार्यपालक मशीनरी और वित्तपोषण जैसे साधनों से जोड़ते हुए इस सुपुर्दगी को वास्तविक अर्थों में महत्त्वपूर्ण बनाया है[6]

6. शहरी और ग्रामीण विकास पर स्थायी समिति (2004) (तेरहवीं लोक सभा)

इस सम्बन्ध में आवश्यकता है कि अनुच्छेद 243 के संवैधानिक प्रावधानों को सुदृढ़ बनाने के अलावा स्थानीय शासनों के सशक्तिकरण को प्रभावी बनाने के लिए व्यावहारिक उपायों को अभिज्ञात किया जाए। इस सम्बन्ध में दो अहम क्षेत्र हैं जिन पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। पहला, अनुच्छेद 243ढ और 247यच आदेश देता है कि ऐसे सभी कानून जो कि संविधान के भाग IX तथा X के यथा विहित प्रावधानों के 'असंगत' है या अनुरूप नहीं है, के संविधान की सम्पुष्टि के अनुरूप संशोधित होने या निरस्त होने तक या 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधनों को लागू हुए एक वर्ष बीतने की अवधि तक लागू बने रहेंगे। 73वां तथा 74वां संवैधानिक संशोधन क्रमशः 24 अप्रैल, 1993 और 1 जून 1993 को लागू हुए थे, और जैसा कि पहले बताया गया है, 15 वर्ष बीतने के बावजूद अधिकांश राज्यों ने संविधान के भाग IX और X के असंगत विधानों की पहचान तक नहीं की है। केरल अकेला एक अपवादपूर्ण प्रदेश है जिसने करीब दर्जन भर ऐसे असंगत और अनुरूपी कानूनों को पहचान कर उन्हें संशोधित कर डाला है। स्पष्टतः जब शासन का संरचनात्मक विन्यास पूरी तरह तैयार हो चुका हो तो कई मौजूदा कानूनों में उपयुक्त संशोधन करने तथा अब अंतरित शक्तियों का राज्यों द्वारा व्यवहार करने और स्थानीय शासन के लिए अधिकारी आदि उपलब्ध कराने के लिए कई संवैधानिक प्रावधानों का प्रबन्धन करना पड़ता है। महज स्थानीय शासन के गठन से ही प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा जब तक कि इसके लिए एक विस्तृत और सर्वांग संपूर्ण कार्रवाई न की जाए।

बॉक्स 3.3: बारहवीं अनुसूची (अनुच्छेद 243ब)

1. नगर आयोजना सहित शहरी आयोजना।
2. भूमि उपयोग तथा भवन निर्माण का विनियमन।
3. आर्थिक एवं सामाजिक विकास हेतु आयोजना।
4. सड़कें तथा पुल।
5. घरेलू, औद्योगिक तथा व्यावसायिक प्रयोजनों के लिए जलापूर्ति।
6. लोक स्वास्थ्य, सफाई संरक्षण तथा ठोस उपशिष्ट प्रबन्धन।
7. अग्नि शमन सेवाएं।
8. शहरी वानिकी, पर्यावरण संरक्षण तथा पारिस्थितिकीय पहलुओं का संवर्धन।
9. विकलांग तथा मानसिक रूप से रुग्ण लोगों सहित समाज के कमजोर वर्गों के हितों की सुरक्षा करना।
10. गंदी बस्ती सुधार तथा उन्नयन।
11. शहरी निर्धनता उन्मूलन।
12. पार्कों, बगीचों और खेल के मैदानों के साथ-साथ शहरी सुविधाओं तथा सुख-सुविधाओं का प्रावधान।
13. सांस्कृतिक, शैक्षिक तथा कलात्मक पहलुओं का संवर्धन।
14. श्मशान तथा श्मशान घाटों, कब्रिस्तानों तथा पूजा स्थलों का रख-रखाव।
15. कांजी हाउस पशुओं के प्रति क्रूरता पर रोक।
16. जन्म तथा मृत्यु पंजीकरण सहित व्यापक आंकड़ों का रख-रखाव।
17. स्ट्रीट लाइट, पार्किंग स्थलों, बस स्टाप तथा सार्वजनिक सुविधाओं सहित जन सुविधाएं।
18. बूचड़खानों और चर्म शोधनशालाओं का पंजीकरण।

3.3.1.6. पैरा 3.1.1.8 में बताए गए कारणों से आयोग का विचार है कि स्थानीय स्तर पर निष्पादित किए जाने वाले सभी कार्यकलापों को शामिल करते हुए शहरी निकायों के लिए नियत कार्यों का एक

नया और अधिक व्यापक सेट निर्धारित किया जाना चाहिए। इसके अलावा बारहवीं अनुसूची में पहले से ही सूचीबद्ध किए जा चुके विषयों के अतिरिक्त स्कूल शिक्षा, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों/क्षेत्रीय अस्पतालों के रूप में सार्वजनिक स्वास्थ्य, यातायात प्रबन्धन, तथा सिविल पुलिस कार्यकलापों तथा पंजीकरण सहित भूमि प्रबंधन आदि कार्यों को भी इसमें शामिल किया जा सकता है।

3.3.1.7. सिफारिशें :

(क.) स्थानीय शासन के प्रत्येक स्तर के लिए प्रत्येक विषय-वस्तुगत कानून के रूप में कार्यकलापों का एक सुस्पष्ट परिसीमांकन होना चाहिए।

(ख.) प्रत्येक विषयवस्तु कानून, जिसमें स्थानीय स्तर पर बेहतर तरीके से निष्पादित किए जाने वाले कार्यात्मक तत्व भी निहित है, को इन स्तरों पर सम्यक सुपुर्दगी के लिए कानून में या अधीनस्थ विधान के रूप में प्रविधित होना चाहिए। इस संदर्भ में केन्द्र तथा राज्य के सभी प्रासंगिक कानूनों की तत्काल समीक्षा होनी चाहिए तथा तदनुरूप उन्हें संशोधित किया जाना चाहिए।

(ग.) नए कानूनों की स्थिति में, यह सलाह दी जाती है कि (वित्तीय ज्ञापन तथा अधीनस्थ विधान ज्ञापन सम्बन्धी सादृश्यता पर) एक स्थानीय शासन ज्ञापन हो, जिसमें स्पष्ट रूप से दर्शाया गया हो कि क्या इसमें स्थानीय शासन द्वारा किए जाने वाले कोई कार्य शामिल है, और यदि हाँ तो क्या इसके लिए कोई कानूनी प्रावधान किया गया है।

(घ.) शहरी स्थानीय निकायों की स्थिति में बारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के अतिरिक्त निम्नलिखित कार्यों को भी शहरी स्थानीय निकायों को सौंपा जाना चाहिए।

- **स्कूली शिक्षा।**
- **सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र/क्षेत्रीय अस्पताल के साथ लोक स्वास्थ्य।**
- **यातायात प्रबंधन तथा सिविल पुलिस कार्यकलाप।**
- **शहरी पर्यावरण प्रबन्धन तथा विरासत तथा**
- **पंजीकरण सहित भूमि प्रबंधन।**

तथापि ये मात्र निदर्शनात्मक अतिरिक्त कार्य हैं और सम्बद्ध राज्यों द्वारा शहरी स्थानीय निकायों को ऐसे ही कई अन्य कार्य भी सौंपे जा सकते हैं।

3.4. स्थानीय निकायों के लिए संरचनात्मक कानून

3.4.1. पैरा 3.1.1.4 में उल्लिखित संविधान के उद्देश्य तथा कारण सम्बन्धी विवरण (74वां संशोधन) अधिनियम में कई राज्यों में स्थानीय निकायों की कमजोरियों का विशेष उल्लेख किया गया है।

3.4.2. संविधान का अनुच्छेद 243(घ) पंचायतों को ग्रामीण क्षेत्रों के लिए स्व-शासन की संस्था के रूप में परिभाषित करता है। अनुच्छेद 243छ यह आशय व्यक्त करता है कि पंचायतों के लिए कानून तैयार करते समय राज्य विधानमंडल को उन्हें ऐसी शक्ति और प्राधिकार सौंपना चाहिए जो कि स्व-शासन की एक संस्था के रूप में उनके कार्यों के निष्पादन के लिए आवश्यक समझी जाए। इस प्रकार "अपने स्तर पर पंचायतें स्वयं एक सरकार है" और उन्हें सरकार के रूप में ही शासन सम्बन्धी कार्य करने की अनुमति होनी चाहिए। इसका अर्थ है कि उनका अपना एक पृथक और स्वायत्त अधिकार क्षेत्र होना चाहिए। तथापि यदि हमारे देश में बहु-स्तरीय 'शासनों' का चलन है तो प्रत्येक स्तर की सरकार या शासन केवल आंशिक स्वायत्तता का उपयोग ही कर सकेगा। पंचायतों के लिए निश्चित स्वायत्तता का दायरा क्या हो यह निर्णय का एक मामला हो सकता है, लेकिन इस बात पर कतई सहमत नहीं हुआ जा सकता कि स्व-शासन की संस्थात्मक अवधारणा वाले संस्थान को स्थानीय स्तर पर एक निरर्थक निकाय बने रहने दिया जाए। पंचायतों के लिए स्वायत्त अधिकार क्षेत्र का सृजन महज प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण के विरोध में सरकारी शक्तियों के प्रभावी विकेन्द्रीकरण के लिए संविधान के आदेश पर आधारित है। इसके लिए कुछ विशिष्ट प्रकार्यों तथा कार्यकलापों को राज्य सरकारों से वापस लेकर उन्हें स्थानीय निकायों को सौंपे जाने की जरूरत है, पंचायतों का यह संप्रत्ययीकरण एक युगान्तरकारी मोड़ साबित होगा और यह वर्षों पुरानी उस अवधारणा से पूरी तरह से अलग होगा स्थानीय शासन की इन संस्थाओं को राज्य सरकार की ताबेदार संस्था के रूप में ही माना जाता था।

3.4.3. संविधान की ग्यारहवीं अनुचूसी में उन सभी 29 कार्यों और कार्यकलापों की सूची दी गई है जो कि स्थानीय निकायों को अंतरित किए जाने के लिए अभिप्रेत हैं यह सूची सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों (शिक्षा, स्वास्थ्य, बाल-विकास, सामाजिक सुरक्षा कृषि तथा गैर-कृषि आर्थिक कार्यकलापों आदि) से लेकर अवसंरचनात्मक विकास व सामाजिक-आर्थिक विकास हेतु जरूरी संस्थागत कार्यों व कार्यकलापों की श्रृंखला का एक व्यापक प्रतिबिम्ब तैयार करती हैं, इस प्रकार स्पष्ट रूप से जोर विकास पर ही केन्द्रित हैं। तथापि एक विकास और कार्य के बीच व्याप्त अंतर स्थानीय स्तरीय कार्यकलापों और स्थानीय शासन के बीच एक प्रमुख विवृति के रूप में विद्यमान है।

3.4.4. शहरी क्षेत्र में भी एक समान स्थिति है। अनुच्छेद 243त(ङ) परिभाषित करता है कि नगरपालिका स्व-शासन का एक संस्था है। अनुच्छेद 243ब जो पंचायतों के सम्बन्ध में अनुच्छेद 243छ का अनुवर्तन करता है, प्रस्ताव करता है कि राज्य का विधानमंडल विधि द्वारा सशक्त करेगा और *"उन शक्तियों व प्राधिकारों से सम्पन्न करेगा जो कि स्व-शासन की संस्था के रूप में अपने कार्यों का निष्पादन करने की दृष्टि से उनके लिए आवश्यक समझी जाएं। इन कानूनों में नगरपालिकाओं को शक्तियों तथा दायित्वों की सुपुर्दगी के लिए किए गए प्रावधान भी विहित होंगे।"*

3.4.5. पंचायती राज मंत्रियों का पहला गोल मेज सम्मेलन 24-25 जुलाई, 2004 को कोलकाता में हुआ था, जिसमें केन्द्र तथा राज्य सरकारों की संयुक्त स्वीकृति के लिए नीचे लिखी सिफारिशों पर सम्बद्ध सरकारों में सहमति बनी थी।

(I) संविधान (अनुच्छेद 243छ) में उस सुपुर्दगी का प्रावधान करता है, जो कि दोहरे प्रयोजनों के लिए स्व-शासन की संस्था के रूप में अपने कार्यकलापों के निष्पादन के लिए पंचायती राज संस्थाओं को सशक्त बनाता हो। ये पयोजन हैः (i) अपने सम्बद्ध क्षेत्रों में आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं बनाने और (ii) पंचायती राज संस्थाओं को सौपें गए मामलों के लिए ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के लिए तथा राज्य विधि रूप से लगाई गई शर्तो का पालन करते हुए अपने सम्बद्ध क्षेत्रों में आर्थिक विकास तथा सामाजिक न्याय के कार्यक्रमों को लागू करना। अतः इस प्रकार उसे सौंपे गए कार्यों के सम्बन्ध में मात्र एक कार्यान्वयन एजेंसी बनने की बजाए इनका मुख्य उद्देश्य पंचायती राज संस्थाओं को स्व-शासन की एक संस्था के रूप में सुनिश्चित करना है।

(II) जबकि सुपुर्दगी में समयबद्ध तरीकों से राज्य विधान के लिए प्रदान किए गए विषयों की समूची श्रृंखला शामिल होनी चाहिए वहीं राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को उक्त कार्यकलापों का उचित प्राथमिकीकरण करते हुए अपने सुपुर्दगी कार्यक्रम को प्राथमिकता देते हुए तैयार करना चाहिए। पूरी और प्रभावी सुपुर्दगी निम्नलिखित कार्यों के सम्बन्ध में पंचायती राज संस्थाओं को स्व-शासन व्की संस्था के रूप में सशक्त बनाना है।

(III) इस दिशा में अनिवार्य उपाय सुपुर्द कार्यों से सम्बन्धित कार्यकलापों की पहचान करना है ताकि इन प्रत्येक कार्यकलापों को त्रि-स्तरीय पद्धति के उपयुक्त स्तर से जोड़ा जा सके। जहाँ तक संभव हो किसी प्रदत्त कार्यकलाप के बीच स्तरों का कोई दोहराव नहीं होना चाहिए।

(IV) पंचायती राज प्रणाली के स्तर जिसे कोई प्रस्तुत कार्यकलाप सौंपा जाना है, की पहचान करने के लिए जहाँ तक संभव हो आनुषांगिकता के सिद्धान्त का पालन किया जाना चाहिए। आनुषांगिकता के सिद्धांत का पालन किया जाना चाहिए। आनुषांगिकता का सिद्धांत कहता है कि, कोई भी कार्यकलाप जो नीचे के किसी स्तर पर निष्पादित हो सकता है, का निष्पादन प्राथमिकतापूर्वक उस स्तर पर कराया जाए ना कि किसी अन्य उच्च स्तर पर.............

(VIII) सुपुर्द कार्यों की अपरिवर्तनीयता बढ़ाने के उपाय के रूप में सुझाव है कि सुपुर्दगी विधायी उपायों या वैकल्पिक तौर पर कार्यपालक आदेशों के माध्यम से सुपुर्दगी के लिए एक सुदृढ़ कानूनी ढांचा तैयार करके ही किया जाना चाहिए।

3.4.6. राष्ट्रीय संविधान कार्यकरण समीक्षा आयोग (एनसीआरडब्ल्यूसी) ने अपनी रिपोर्ट में सिफारिश की है कि शहरी तथा ग्रामीण दोनों स्थानीय निकायों की शक्तियों के सम्बन्ध में संविधान में कुछ विशिष्ट परिवर्तन किए जाने चाहिए। ये परिवर्तन इस प्रकार हैः

"अतः आयोग सिफारिश करता है कि ग्यारहवीं तथा बारहवीं अनुसूची को इस प्रकार से नए सिरे से तैयार किया जाए कि वह पंचायतों और नगरपालिकाओं के लिए पृथक राजकोषीय अधिकार क्षेत्र बना सके। तदनुसार अनुच्छेद 243ज तथा 243भ को संशोधित करते हुए राज्य के विधानमंडल के लिए पंचायतों और नगरपालिकाओं के लिए शक्तियों का प्रत्यायोजन अनिवार्य बनाया जाना चाहिए।"

3.4.7 संवैधानिक प्रावधानों तथा कई विशेषज्ञ समूहों यहाँ तक कि संसदीय समितियों द्वारा की गई टिप्पणियों के बावजूद स्थानीय शासनों का सशक्तिकरण सही अर्थों में नहीं हो सका है। ऐसी परिस्थितियों में केन्द्र सरकार की यह जिम्मेदारी होती है कि वह 73वें तथा 74वें संवैधानिक संशोधनों को शब्दों तथा उसमें निहित भावना के अनुरूप लागू करना सुनिश्चित करे। चूंकि केन्द्र सरकार द्वारा वित्तपोषित प्रमुख विकास स्कीमें स्थानीय शासनों द्वारा कार्यान्वित की जा रही है, तथापि, उठने वाला मुद्दा यह है कि राज्यों द्वारा स्थानीय शासनों को विधिवत रूप से सशक्त किया गया है या नहीं यह सुनिश्चित करने के लिए केन्द्रीय हस्तक्षेप का तौर-तरीका क्या हो।

3.4.8. हमारा संविधान ऐसे समय में तैयार किया गया था जबकि पहली और सर्वोपरि आवश्यकता देश को एक राष्ट्र के रूप में समेकित करना था। 400 से ज्यादा राजसी राज्यों को बड़े राज्यों के सादृश्य मूलन संघ के रूप में संगठित किया गया। अगले कुछ वर्ष इन राज्यों को नए सिरे से संगठित और सुदृढ़ करने में लग गए। समय की मांग को देखते हुए संविधान ने स्थानीय निकायों को ज्यादा महत्त्व नहीं दिया

और विधायी शक्तियाँ शासन के दो स्तरों और पृथक 'विषयों' तक ही सीमित रह गई। बीच के दशकों में शासन के संस्थान के रूप में स्थानीय निकायों की भूमिका तथा उपयुक्तता पर बहस छिड़ी और इसमें यह बात उभरकर सामने आई कि (क) शासन के तीसरे स्तर को कुछ विधायी शक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। (ख) शासन के सभी तीनों स्तरों को एक ही आधार पर कानूनी जामा पहनाया जाना चाहिए और (ग) शासन के नए क्षेत्र उभरे हैं।

3.4.9. आयोग नोट करता है कि संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची-II में मद संख्या 5 की स्थिति ने सभी दायित्व राज्यों के साथ स्थानीय निकायों पर डाल दिए हैं। इसे निम्नानुसार पढ़ा जा सकता है-

"स्थानीय शासन, अर्थात् नगर निगमों, सुधार न्यासों, जिला बोर्डों, खनन बंदोवस्ती प्राधिकरणों तथा स्थानीय स्व-शासन अथवा ग्राम प्रशासन के प्रयोजनार्थ अन्य स्थानीय प्राधिकरण।"

3.4.10 वर्ष 1950 में जब संविधान को अपनाया गया था तब यह आवंटन उपयुक्त था और मौटे तौर पर यहां तक कि आज भी वैसा ही बना रहा। स्थानीय निकायों का अधिशासन राज्यों की अनदेखी करते हुए संघ द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता। फिर भी, एक बड़ी नगरपालिका निकाय के बहुआयामी कार्यकलाप आज ऐसे हैं जो संपूर्ण रूप से राष्ट्र पर प्रभाव डालते हैं, जैसे वाणिज्यिक विकास; और उनका अंतर्राष्ट्रीय विस्तार हो सकता है जैसे कुछ नगरों में अंतर्राष्ट्रीय विमानपत्तनों का होना। जिलों में, जिले के विकास के लिए निधिकरण बहुतायत में केंद्र से आता है क्योंकि स्थानीय शासनों के लिए पर्याप्त रूप से व्यवस्था की जाने वाली राज्य के संसाधनों की कमी उन्हें निधियों के लिए भारत सरकार से अनुरोध करने के लिए बाध्य करती है। जवाहरलाल नेहरु राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से शहरी कार्यों में केंद्र की अप्रत्यक्ष छाप आवश्यक हो गई है। ग्रामीण विकास में, केंद्र द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अपने कार्यक्रमों में शर्ते निर्धारित की गई हैं।

3.4.11 शासन के विभिन्न स्तरों के माध्यम से स्थानीय स्तर के कार्यकलापों का प्रवाह सुगम बनाने के लिए तरीका यह हो सकता है कि सूची-II की मद संख्या 5 (स्थानीय शासन); अथवा कतिपय कार्य, जो केवल संघ अथवा राज्य के पास है, परंतु जो प्रत्यक्षतः शासन के सभी तीन स्तरों के संगत है, को संघ अथवा राज्य द्वारा उपयुक्त, पदानुक्रमीय और ढांचागत विधान समर्थ बनाने के लिए समवर्ती सूची में रख दिए जाएं। यह स्थानीय निकायों के संबंध में "कार्यों" को "विषयों" में अंतरित कर देगा। यह संसद को "स्थानीय शासन" विषय पर विधान बनाने में समर्थ करेगा और इस प्रकार संघ स्थानीय शासनों को शक्तियों, कार्यों और उत्तरदायित्वों की सुपुर्दगी अधिदेशित कर सकेगा।

3.4.12. 74वें संवैधानिक संशोधन के माध्यम से हमारे आर्थिक और राजनीतिक प्रणाली के जिन परिवर्तनों के बारे में सोचा गया था उन्हें सक्रिय करने का एक दूसरा मार्ग यह भी हो सकता है कि कार्यो की सुपुर्दगी के साथ-साथ स्थानीय निकायों को विधायी शक्तियाँ भी सौंपी जाएं। सातवीं अनुसूची में एक सूची-iv भी बनाई जाए जो स्थानीय निकायों को विधायी शक्तियाँ प्रदान करें। यदि शहरी निकाय के लिए एक तथा ग्रामीण के लिए दूसरी सूची का होना जरूरी समझा जाए तो उक्त सूची के दो भाग भी हो सकते हैं।

3.4.13. तीसरा तरीका ज्यादा समेकित है एक विधिक रूप से बाध्यकारी विधायी ढांचा तैयार किया जाए, जिसके अन्तर्गत राज्य तथा स्थानीय शासन काम करेंगे, यह प्रारूप थोड़ा-बहुत दक्षिण अफ्रीका के नगरनिगम मॉडल जैसा ही होगा। इस संरचना के कानून किसी अन्य देश में ही मौजूद है। इस संरचना के कानून यूरोपीय संघ में निर्देश जैसे ही हैं। किन्तु कुल मिलाकर यह एक दक्षिण अफ्रीकी मॉडल है जिसपर यहां बल दिया जा सकता है।

3.4.14. *दक्षिण अफ्रीकी मॉडलः* एक पदानुक्रमित संरचना के अंतर्गत दक्षिण अफ्रीका ने सरकार का एक सहकारी मॉडल बनाया है। तब संविधान के अनुच्छेद 40 और 41 को इस प्रकार पढ़ा जा सकता हैः

40. गणतंत्र की सरकार

1. *गणतंत्र में सरकार एक राष्ट्रीय, प्रादेशिक और स्थानीय शासन वृत्त के रूप में गठित की जाती है, जो कि विशिष्ट, परस्पर-निर्भर और अन्तः सम्बद्ध है।*
2. *शासन के सभी क्षेत्र इस अध्याय में यथानिर्दिष्ट सिद्धांतों का अवलोकन और अनुपालन करेंगे और उन्हें अपने कार्यकलापों को इस अध्याय में विहित पैरामीटरों के दायरे में ही संचालित करेंगे।*

41. सहकारी शासन और अन्तर-शासकीय सम्बन्धों के सिद्धान्त

1. *शासन के सभी क्षेत्र तथा प्रत्येक क्षेत्र में विद्यमान राज्य*

   (ड.) अन्य किसी स्तर के शासन की संवैधानिक हैसियत, संस्थाओं, शक्तियों तथा कार्यों का पूरा-पूरा सम्मान करेंगे।

   (च) कोई भी शक्तियाँ या कार्य तब तक धारित नहीं करेंगे जब तक कि संविधान के अनुसार वह उसे निर्दिष्ट न की गई हो।

(छ) अपनी शक्तियों का व्यवहार और अपने कार्यों को इस प्रकार से निष्पादित करेगा कि ऐसा करने में किसी अन्य शासन स्तर के भौगोलिक, कार्यात्मक अथवा सांस्थानिक अखण्डता का अतिक्रमण न हो, और

(ज) पारस्परिक विश्वास और सदिच्छापूर्वक एक-दूसरे से निम्नवत सहयोग करेगा-

(i) मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को प्रोत्साहन देगा।

(ii) प्रत्येक दूसरे को सहायता व समर्थन देगा।

(iii) समान हित के मामलों पर एक दूसरे को संसूचित करेगा और परामर्श देगा।

(iv) अपनी कार्रवाईयों और विधानों का अन्यो के साथ समन्वय करेगा।

(v) सहमत कार्यविधि का पालन करेगा और

(vi) एक-दूसरे के विरूद्ध कानूनी कार्यवाही से बचेगा।

2. संसद के किसी अधिनियम को-

(क) अन्तः शासनिक सम्बन्धों को बढ़ावा देने और सुविधाजनक बनाने के लिए संरचना व संस्थागत आधार स्थापित व उपलब्ध करना चाहिए।

(ख) अन्तः शासनिक विवादों के लिए समुचित कार्यतंत्र और प्रक्रियात्मक अवसर उपलब्ध करना चाहिए।

अनुच्छेद 104 के अन्तर्गत प्रादेशिक विधानमंडल अपने कार्य क्षेत्र के लिए कानून बना सकेगा।

1. किसी प्रान्त का विधायी प्राधिकार उसके प्रान्तीय विधानमंडलों में निहित है तथा प्रान्तीय विधानमंडल को निम्नलिखित की शक्तियां सौंपता है।

(क) अपने प्रान्त के लिए संविधान पारित करना अथवा धारा 142 और 143 के अनुसार इसके द्वारा पारित संविधान में संशोधन करना।

(ख) निम्नलिखित के सम्बन्ध में विधान पारित करना-

(i) अनुसूची 4 में सूचीबद्ध किसी कार्यात्मक क्षेत्र में आने वाला कोई विषय।

(ii) अनुसूची 5 में सूचीबद्ध किसी कार्यात्मक क्षेत्र में आने वाला कोई विषय।

(iii) उन कार्यात्मक क्षेत्रों के बाहर का कोई विषय तथा जिसे राष्ट्रीय विधान द्वारा प्रान्त को निर्दिष्ट किया गया हो।

(iv) कोई मामला जिसके लिए संविधान के किसी प्रावधान द्वारा प्रान्तीय विधान का अधिनियमन संकल्पित हो, और

(ग) उस प्रान्त में नगर परिषद को उसकी कोई विधायी शक्तियां सौंपना।

3.4.15. स्थानीय शासन पर यहाँ एक हिस्सा ऐसा भी है जिसे भारतीय संविधान के भाग IX तथा IXक के समकक्ष कहा जा सकता है[7] और यहाँ अनुसूची 4 भी है, जिसमें समवर्ती राष्ट्रीय तथा प्रान्तीय विधायी दक्षता के लिए कार्यात्मक क्षेत्रों को तथा अन्य अनुसूची 5 में विशेष रूप से प्रान्तीय क्षेत्र को स्पष्ट किया गया है।

3.4.16. वर्तमान मुद्दे के सम्बन्ध में इन दोनों संविधानों (भारतीय तथा दक्षिण अफ्रीकी) के बीच मुख्य अन्तर निम्नवत प्रतीत होता हैः

(i) दक्षिण अफ्रीका में समवर्ती विधानों के लिए संविधान की अनुसूची 4 में सूचीबद्ध कार्यों में नगरनिगम शासन से सम्बन्धित मामलों का एक विस्तृत भाग शामिल है जबकि भारतीय संविधान में यह विशेष रूप से राज्य का 'विषय' है।

(ii) दक्षिण अफ्रीकी संसद 'अन्तः-शासनिक सम्बन्धों के संवर्धन और सुविधाजनक बनाने के लिए' प्रावधान हेतु किसी मामले पर संरचनात्मक कानून बना सकती है।

3.4.17 दक्षिण अफ्रीका का नगरपालिका अधिनियम, 2000 देश में शहरी अधिशासन के लिए एक संरचनात्मक उपाय के रूप में अधिनियमित किया गया था। इस अधिनियम के उद्देश्य निम्नानुसार हैंः

"नगर पालिकाओं को प्रगामी रूप से स्थानीय समुदायों के सामाजिक तथा आर्थिक उत्थान, तथा सभी के लिए सुगम आवश्यक सेवाओं हेतु सर्व-साधारण के अभिगम को आसान बनाने, नगरपालिका क्षेत्र में निवास कर रहे स्थानीय समुदाय को शामिल करते हुए नगरपालिका की वैधानिक प्रकृति परिभाषित करने, नगरपालिकाओं की राजनीतिक व प्रशासनिक संरचनाओं के साथ-साथ काम करने, उन तौर-तरीकों, जिनके द्वारा नगरपालिका की शक्तियाँ और उनके कार्यकलाप व्यवहृत और निष्पादित की गई है, सामुदायिक सहभागिता सुनिश्चित करने, योजना के मुख्य सिद्धान्तों के लिए एक सहज और समर्थकारी संरचना तैयार करने, निष्पादन प्रबन्धों, संसाधनों के अर्जन तथा विकासात्मक स्थानीय शासन के प्रयोजन के तौर पर चिन्हित बदलावों के लिए, स्थानीय लोक

7 दक्षिण अफ्रीकी संविधान में "संविधान शासन" को भारत के समान ग्रामीण और शहरी शासनों में पृथक और विभेद नहीं किया जाता है।

प्रशासन तथा मानव संसाधन विकास हेतु संरचना तैयार करने, निर्धनों को शक्तिसम्पन्न बनाने और यह सुनिश्चित करने कि नगरपालिकाएं सेवा टैरिफ और ऋण नियंत्रण नीतियों को इस तरीकों से लगाए कि उससे सेवा सम्बन्धी प्रावधानों के लिए उनकी संरचनात्मक जरूरतें पूरी होती रहें, ऋण नियंत्रण और ऋण संग्रहण के लिए, आवश्यक समर्थन/सहायता के लिए संरचनात्मक कार्य संस्थापित करने, समुदायों के विशिष्ट प्राकृतिक वातावरण के साथ तादातम्य बनाए रखते हुए सभी समुदायों के समग्र सामाजिक तथा आर्थिक उत्थान के लिए शासन के सभी स्तरों द्वारा की जाने वाली कार्यकलापों को समेकित करने में सक्षम एक दक्ष और अग्रणी विकास एजेंसी के रूप में विनिर्मित स्थानीय शासन का सतत् प्रगत्यात्मक रूप से कायान्तरण करने की दृष्टि से प्रबोधन तथा अन्य सरकारों द्वारा मानक नियत करने, स्थानीय शासन से जुड़े कानूनी मसलों के लिए, तथा इससे संयोगवश जुड़े अन्य सभी मामलों के लिए आधारभूत सिद्धान्त कार्यतंत्र और प्रक्रियात्मक कार्यविधियों के प्रावधान के लिए।"

3.4.18. स्थानीय स्व-शासन के मामलों में प्रारम्भ से ही यह मुद्दा उभरा है कि नागरिकों को निरूपित अधिकारों और दायित्वों की मात्रात्मक कोटि क्या हो, दक्षिण अफ्रीकी अधिनियम में स्थानीय समुदाय के सदस्यों के अधिकार व दायित्वों को स्पष्ट रूप से निरूपित किया गया हैं। यहाँ अधिनियम के प्रारंभिक अंश को यथावत देना प्रासंगिक होगा :

"नगरपालिकाओं के अधिकार तथा दायित्व की विधिक प्रकृति।"

विधिक प्रकृति

2. नगरपालिका

(क) स्थानीय शासन के रूप में निर्धारित क्षेत्र के भीतर विधायी और कार्यकारी प्राधिकार का प्रयोग करते हुए शासन के स्थानीय क्षेत्र में राज्य का एक अंग हैःनगरपालिका सीमांकन अधिनियम, 1998;

(ख) इसमें शामिल होता हैः

(i) राजनीतिक संरचना तथा नगरपालिका का प्रशासन और

(ii) नगरपालिका का समुदाय;

(ग) क्षेत्र के अंतर्गत इसके कार्यकलाप, राजनीतिक, सांविधिक तथा इसकी राजनीतिक संरचना, राजनीतिक पदाधिकारियों तथा प्रशासन और इस समुदायों के पारस्परिक अन्तर सम्बन्धों के अनुरूप होते हैं, और

(घ) इसका एक पृथक विधायी व्यक्तित्व होता है जिसमें नगरपालिका कार्रवाई के लिए इसके समुदाय की तरफ से दायित्व शामिल नहीं होते हैं।

सहकारी शासन

3.(1) नगरपालिकाओं को संविधान की धारा 41 में संकल्पित सहकारी शासन की संवैधानिक प्रणाली के भीतर ही अपनी कार्यपालक तथा विधायी प्राधिकारों का व्यवहार करना चाहिए।

(2) शासन के राष्ट्रीय और प्रान्तीय स्तर को संविधान की धारा 41 में संकल्पित सहकारी शासन की संवैधानिक प्रणाली के भीतर अपने कार्यात्मक व विधायी प्राधिकारों का पालन इस विधि तथा तरीके से करना चाहिए कि इससे किसी अन्य नगरपालिका के अपने कार्यपालक तथा विधायी प्राधिकारों के व्यवहार की योग्यता और अधिकार क्षेत्र में कोई संकट या बाधा न हो।

(3) प्रभावी स्व-शासन के प्रयोजन से संगठित स्थानीय शासन को--

(क) शासन के एक विशिष्ट स्तर के रूप में स्थानीय शासन के लिए एक समान दृष्टि को विकसित करना चाहिए।

(ख) नगरपालिकाओं के बीच आपसी सहयोग, सहायता और संसाधनों का आदान-प्रदान बढ़ाना चाहिए।

(ग) स्थानीय शासन के सामान्यतः सम्बन्धित समस्याओं समाधान की खोज करनी चाहिए।

(घ) सहकारी शासन और अन्तः शासनिक सम्बन्धों के सिद्धान्तों का अनुपालन सुविधाजनक बनाना।

नगर परिषदों के अधिकार और कर्तव्य

4.(1) नगरपालिका परिषदों को निम्नलिखित का अधिकार होगा-

(क) अपनी निजी पहल पर स्थानीय समुदाय के स्थानीय शासन मामलों को अधिशासित करने का अधिकार।

(ख) नगरपालिका के कार्यकारी तथा विधायी प्राधिकारों का उपयोग करने तथा ऐसा करने में किसी भी अनुपयुक्त हस्तक्षेप के लिए बाध्य न होने और

(ग) नगरपालिका के काम-काज का वित्तपोषण निम्न प्रकार से करने-

(i) सेवा के लिए शुल्क प्रभारित करने, और

(ii) शुल्क, राष्ट्रीय विधान द्वारा यथा प्राधिकृत सीमा तक शुल्कों संपत्ति पर महसूल और अन्य करों, लेवी पर अधिकार लगाने।

(2) नगरपालिका की वित्तीय और प्रशासनिक क्षमता के भीतर व्यावहारिक विचारण के अन्तर्गत नगरपालिका परिषद का निम्नलिखित कर्त्तव्य होगा-

(क) नगरपालिका के कार्यपालक और विधायी प्राधिकारों का व्यवहार करना तथा स्थानीय समुदाय के हितों के लिए नगरपालिका के संसाधनों का उपयोग करना।

(ख) बिना किसी पक्षपात या पूर्वाग्रह के लोकतांत्रिक और जिम्मेदार शासन उपलब्ध कराना।

(ग) स्थानीय समुदाय को प्रोत्साहन तथा समावेशन।

(घ) यह सुनिश्चित करने कि स्थानीय समुदायों को नगरपालिका सेवाएँ वित्तीय तथा पर्यावरणीय संदर्भ में धारणीय रूप में प्राप्त हो, के लिए प्रयास करना।

(ड.) निम्न पर स्थानीय समुदायों से परामर्श करना :

(i) नगरपालिकाओं द्वारा प्रदत्त नगरपालिका सेवाओं के स्तर, गुणवत्ता उनकी पहुंच तथा प्रभावोत्पादकता के बारे में।

(ii) सेवा सुपुर्दगी के लिए उपलब्ध विकल्प।

(च) स्थानीय समुदाय के सदस्यों को उनकी हकदारी के अनुरूप नगरपालिका सेवाओं में समान पहुंच के अवसर सुलभ कराना।

(छ) नगरपालिका में विकास को बढ़ावा देने तथा निकाय कार्य करना।

(ज) नगरपालिका के कार्यपालक तथा विधायी प्राधिकारों के व्यवहार तथा उपयोग में लैगिंक समानता को बढ़ावा देना।

(झ) नगरपालिका में एक सुरक्षित और स्वस्थ माहौल को बढ़ावा देना, और

(ञ) संविधान की धारा 24, 25, 25, 27 और 29 में विहित मौलिक अधिकारों की प्रगामी प्राप्ति में राज्य के अन्य अंगों के साथ सहयोग करना और, समन्वय बनाए रखना।

(3) अपने कार्यपालक और विधायी प्राधिकारों का संव्यवहार करते समय नगरपालिका को नागरिकों के अधिकारों तथा अधिकार विधेयक द्वारा संरक्षित अन्य व्यक्तियों के अधिकारों का पूरा सम्मान करना चाहिए।

स्थानीय समुदाय के सदस्यों के अधिकार तथा कर्त्तव्य

5.(1) स्थानीय समुदाय के सदस्यों को अधिकार होंगे कि-

(क) कार्यतंत्र और इस अधिनियम के निबन्धनों में प्रदत्त प्रक्रिया और कार्यविधि या लागू किसी अन्य कानून के अनुरूप

(i) नगरपालिका की निर्णयकारी प्रक्रियाओं में योगदान देना, और

(ii) नगरपालिका परिषद अथवा अन्य किसी राजनीतिक संरचना या किसी राजनीतिक पदाधिकारी अथवा नगरपालिका प्रशासनिक अधिकारी को लिखित या मौखिक सिफारिशें, प्रतिवेदन अथवा शिकायतें प्रस्तुत करना।

(ख) नगरपालिका परिषद को, या किसी अन्य राजनीतिक संरचना अथवा राजनीतिक पदाधिकारी या नगरपालिका के किसी प्रशासनिक व्यक्ति को लिखने वाली शिकायतों के साथ-साथ उनके लिखित या मौखिक पत्राचारों का शीघ्र प्रत्युत्तर देना।

(ग) उनके अधिकारों, सम्पत्तियों और युक्तिसंगत अपवादों को प्रभावित करते हुए नगरपालिका परिषदों, या अन्य राजनीतिक संरचना या किसी राजनीतिक पदाधिकारी अथवा नगरपालिका प्रशासन के निर्णयों की सूचना प्राप्त करना।

(घ) वित्तीय स्थिति के साथ-साथ नगरपालिका के काम-काज की स्थिति की नियमित जानकारी लेना।

(ड.) यह मांग करना कि नगरपालिका परिषदों तथा उसकी समितियों की कार्यवाहियाँ-

(i) धारा 20 के अधीन, जन सामान्य के लिए मुक्त होनी चाहिए।

(ii) पक्षपात और पूर्वाग्रह के बिना संचालित हो, और

(iii) व्यक्तिगत हितों से प्रभावित न रहे।

(च) सार्वजनिक सुविधाओं का उपयोग तथा व्यवहार करने, तथा

(छ) नगरपालिका द्वारा यथा उपलब्ध नगरनिगम सेवाओं तक पहुंच सुनिश्चित करना बशर्ते कि उप-धारा (2) (ख) द्वारा नियत दायित्वों का अनुपालन विधिवत किया जाए।

(2) स्थानीय समुदाय के सदस्यों का निम्नलिखित कर्त्तव्य होगा-

(क) अपने अधिकारों का उपयोग करते समय नगरपालिका के कार्यतंत्र, प्रक्रिया तथा कार्यविधि का अनुपालन करें।

(ख) जहाँ कहीं लागू हो, तथा धारा 97 (1) (ग) की शर्तों के अध्यधीन रहते हुए सेवा शुल्क, शुल्कों पर प्रभार, सम्पत्ति कर पर देय महसूल तथा अन्य करों, लेवी व नगरपालिका द्वारा लगाए गए शुल्कों को तत्काल अदा करना।

(ग) स्थानीय समुदाय के अन्य सदस्यों के नगरपालिका प्राधिकारों का सम्मान करना।

(घ) नगरपालिका सम्बन्धी कार्यों के लिए नगरपालिका अधिकारियों को अपने घरों में औचित्यसंगत तरीके से प्रवेश करने की अनुमति देना।

(ड.) नगरपालिका के लागू सभी नियमों तथा कानूनों का पालन करना।

नगरपालिका प्रशासन के कर्त्तव्य

6. (1) नगरपालिका का प्रशासन संविधान की धारा 195(1) में अन्तर्निहित सिद्धान्तों और लोकतांत्रिक मूल्यों द्वारा नियंत्रित होता है।

(2) नगरपालिका प्रशासन को निम्नलिखित होना चाहिए-

(क) स्थानीय समुदाय की आवश्यकताओं के प्रति प्रत्युत्तरदायी

(ख) अपने कर्मचारियों के बीच लोक सेवा की एक संस्कृति तथा उत्तरदायित्व भावना को विकसित करना।

(ग) भ्रष्टाचार निरोध के उपायों को अपनाना।

(घ) स्थानीय समुदाय में स्पष्ट सम्बन्ध रखना तथा इनके बीच में सहयोग और संप्रेषण बनाए रखनां

(ड.) समुदाय के सदस्यों के उनकी हकदारी के अनुरूप नगरपालिका द्वारा प्राप्त सेवा के स्तर तथा मानक आदि के बारे में पूरी और यथा तथ्य जानकारी देना।

(च) समुदाय के सदस्यों को समाविष्ट लागतों व प्रभारी व्यक्तियों और नगरपालिका की प्रबंधन सम्बन्धी अन्य जानकारियां देना।

अधिकारों का प्रयोग और कर्त्तव्यों का निष्पादन

7. नगरपालिका परिषदों, स्थानीय समुदाय के सदस्यों के अधिकारों व कर्त्तव्यों तथा नगरपालिका प्रशासनों के कर्त्तव्यों जैसा कि धारा 4,5, और 6 में सुस्पष्ट है, संविधान के इस अधिनियम के अन्य प्रावधानों तथा अन्य लागू विधानों के अधीन है।"

3.4.19. आयोग का सुविचारित मत यह है कि स्थानीय शासन राज्य के न्यायसम्मत अधिकार क्षेत्र में आता है। स्थानीय शासन के लिए एक संरचनात्मक कानून अधिनियमित करने के लिए संघ सरकार को सशक्त करने की दृष्टि से इस विषय को समवर्ती सूची में शामिल करना वांछनीय नहीं होगा। अतः आयोग का मानना है कि संसद द्वारा संरचनात्मक कानून अनुच्छेद 252 (अनुच्छेद 252 अन्य राज्यों के द्वारा उक्त कानून के अंगीकरण तथा सहमति के द्वारा संसद को दो या अधिक राज्यों के लिए कानून बनाने की शक्ति) के अधीन पारित किया जा सकता है। शेष राज्यों को भी बाद में इस कानून को अपनाने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। इस कानून को स्थानीय प्राधिकरण के सम्बन्ध में नागरिकों के अधिकारों तथा कर्त्तव्यों और उसी प्रकार स्थानीय निकायों तथा विलोमतः नागरिकों के अधिकारों और कर्त्तव्यों का भी उल्लेख करना चाहिए। इसे तीसरे स्तर पर कार्यकलापों सम्बन्धी व्यापक सिद्धान्तों का प्रावधान भी करना चाहिए। समान रूप से यह भी महत्त्वपूर्ण है कि मॉडल कानूनों में राज्यों द्वारा शक्तियों तथा कार्यों, उत्तरदायित्वों की सुपुर्दगी के लिए दिशानिर्देश भी विहित होने चाहिए।

3.4.20. सिफारिशें

(क) भारत सरकार को स्थानीय शासनों के लिए एक संरचनात्मक कानून का प्रारूप तैयार करके उसे संसद में प्रस्तुत करना चाहिए। राज्यों के अंगीकरण के लिए, दक्षिण अफ्रीकी अधिनियम के अनुरूप यह संरचनात्मक कानून संविधान के अनुच्छेद 252 के अंतर्गत अधिनियमित किया जा सकता है। निम्नलिखित आधारों पर, इस कानून में स्थानीय शासनों और समुदायों को शक्तियों, उत्तरदायित्वों तथा कार्यों की सुपुर्दगी के व्यापक सिद्धान्तों को निर्धारित किया जाना चाहिए:

- **आनुषांगिकता का सिद्धान्त**
- **लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण**
- **कार्यों की रूपरेखा**
- **वास्तविक रूप में सुपुर्दगी**
- **अभिसरण**
- **नागरिक केन्द्रीयता**

3.5. निधियों की सुपुर्दगी

3.5.1. स्थानीय शासनों की वित्त व्यवस्था

3.5.1.1. इस तथ्य के बावजूद कि, स्थानीय निकाय लोकतांत्रिक प्रक्रिया में तथा जनता की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं, इन निकायों द्वारा सृजित वित्तीय संसाधन इनकी आवश्यकताओं की तुलना में काफी कम होते हैं। सारणी 3.3. स्थानीय निकायों के कुल राजस्व में उनके निजी संसाधनों की प्रतिशतता दर्शाती है। आंकड़े बताते हैं कि ग्रामीण निकायों के कुल राजस्व का 93 प्रतिशत हिस्सा बाह्य संसाधनों से आया था जबकि दूसरी तरफ शहरी निकायों ने वर्ष 1998-99 में अपने कुल राजस्व का 59.69 प्रतिशत हिस्सा अपने निजी संसाधनों से उगाहा था किन्तु वर्ष 2002-2003 में यह प्रतिशत घटकर 58.44 ही रह गया। इसी प्रकार वर्ष 2002-03 में ग्रामीण तथा शहरी स्थानीय निकायों के लिए अपने निजी संसाधनों से शामिल राजस्व व्यय का प्रतिशत क्रमशः 9.26

तथा 68.97 प्रतिशत था। वर्ष 2002-2003 में अपने निजी करों से प्राप्त राजस्व ग्रामीण तथा शहरी स्थानीय निकायों के लिए क्रमशः 3.87 प्रतिशत तथा 39.23 प्रतिशत था।

सारणी 3.3. स्थानीय निकायों का राजस्व और व्यय

(करोड़ रूपए में)

	1998-99	1999-2000	2000-01	2001-02	2002-03
राजस्व					
निजी कर	5385.41	5828.5	6371.27	6696.62	5869.89
निजी कर-भिन्न	2648.98	2885.86	3307.49	3496.3	3133.91
निजी राजस्व	8034.39	8714.37	9678.76	10192.93	9003.79
आबंटन सुपुर्दगी	7431.03	9155.13	9513.01	8914.06	8877.13
सहायता-अनुदान	11552.05	15369.85	15665.44	15895.72	16230.45
अन्य	1792.84	2197.75	2968.2	2616.57	2495.64
कुल राजस्व	20775.93	26722.72	28146.64	27426.35	27603.23
कुल राजस्व व्यय	28810.32	35437.09	37825.4	37619.27	36607.02
राजस्व व्यय	22090.94	26579.45	29797.49	30381.95	28411.6
पूंजी व्यय	8250.88	9565.33	10005.7	9473.53	9871.72
कुल व्यय	30341.84	36144.79	39803.19	39855.48	38283.31

स्रोतः बारहवें वित्त आयोग को राज्य सरकारों द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़े।

3.5.1.2. स्थानीय निकाय अपने वित्तीय अन्तर्प्रवाह के लिए राज्य सरकारों पर अत्यधिक निर्भर होते हैं। यहाँ तक कि अपने रोजमर्रा के कार्यों के लिए भी इन्हें राज्यों की ओर ही देखना पड़ता है क्योंकि राज्य की समेकित निधि में जमा होने के कारण राज्य उत्पाद, मूल्य वर्धित कर, मोटर वाहन कर आदि घटने-बढ़ने वाले कर उन्हें सीधे नहीं मिलते। स्थानीय शासनों के लिए आय का प्रमुख स्रोत यथा सम्पत्ति कर

की अन्तर्निष्ठ प्रकृति और इन्हें जमा कराने में तंत्रगत अकुशलता दोनों कारणों से इनकी प्रतिबद्धताओं को पूरा कर पाने में नाकाफी होता है। नागरिक सुविधाएँ उपलब्ध कराने तथा कराधान की शक्तियों के बीच व्याप्त यह विषमता ही आवश्यक कर देती हैं कि या तो संयुक्त अनुदानों या अन्य राज्य कर में हिस्से अथवा विभिन्न विकास स्कीमों के भाग के रूप में स्थानीय शासनों को राज्य से निधियां अंतरित की जाएँ।

3.5.1.3. स्थानीय शासनों के संसाधनों के सृजन, संग्रहण दक्षता, निवेश और कराधान आदि समग्र वित्तीय पक्षों को शहरी तथा पंचायत वित्त सम्बन्धी अन्य अध्यायों में विस्तारपूर्वक आंका जाएगा। तथापि राज्य सरकार और शहरी व ग्रामीण स्व-शासनों के बीच एक आम मुद्दे के रूप में चर्चित विषयों यथा निधियों की सुपुर्दगी और राज्य वित्त आयोग के कार्यकलापों को जानना ज्यादा उपयुक्त होगा।

3.5.2. राज्य वित्त आयोग (एसएफसी)

3.5.2.1. अनुच्छेद 243ज तथा 243भ राज्य सरकार के लिए अनिवार्य बनाता कि करों तथा प्रशुल्क आदि अधिरोपित करने के लिए कानून द्वारा स्थानीय शासन को प्राधिकृत करे और राज्य सरकार द्वारा लगाए और संग्रहित किए गए कर/प्रशुल्क स्थानीय शासन को आबंटित करे। ये अनुच्छेद राज्य की समेकित निधि में से स्थानीय शासन को सहायता अनुदान का प्रावधान भी करते हैं। इन निकायों को की जाने वाली वित्तीय सुपुर्दगी राज्य वित्त आयोग द्वारा सुनिश्चित की गई है जो कि विविध करों, प्रशुल्कों पर हिस्सेदारी के सम्बन्ध में अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करता है। इन प्रावधानों के अंतर्गत 73वें संशोधन (अनुच्छेद 243 झ, 243म) तथा उसके अनुवर्ती प्रत्येक पांचवें वर्ष के समाप्त होते ही तथा नए वर्ष के प्रारम्भ में राज्य के राज्यपाल के लिए राज्य वित्त आयोग का गठन करना अपेक्षित होता है। इस आयोग का गठन नगरपालिकाओं की वित्तीय स्थिति की समीक्षा के लिए किया जाता है। आयोग के संगठन इसके सदस्य के लिए अपेक्षित अर्हताएँ तथा उनके चयन के तौर-तरीके राज्य विधान द्वारा कानूनी तौर पर निर्मित किए जाते हैं। संविधान में यह प्रावधान भी है कि राज्य का राज्यपाल आयोग द्वारा इन अनुच्छेदों के अंतर्गत की जाने वाली प्रत्येक सिफारिश पर की गई कार्रवाई सम्बन्धी एक व्याख्यात्मक ज्ञापन तैयार कराएगा, जिसे अवलोकन के लिए राज्य की विधानसभा में विधानसभा सदस्यों के सम्मुख प्रस्तुत किया जाएगा।

3.5.2.2 इस प्रकार (अनुच्छेद 243 झ तथा 242 म) गठित राज्य वित्त आयोग को निम्नलिखित पर राज्यपाल को सिफारिशें प्रस्तुत करनी होती हैं-

(क) वे सिद्धान्त जिन्हें निम्नलिखित नियंत्रित करना चाहिए-

(i) राज्य द्वारा लगाए जाने वाले करों, प्रशुल्कों, मार्ग करों और शुल्कों, जो कि इनके मध्य इस भाग के अंतर्गत ही बांटे जा सकते हैं, के कुल अर्जन में से राज्य तथा स्थानीय शासन के मध्य विभाजन करना तथा इन निकायों के सभी स्तरों को इसमें से उनका हिस्सा आवंटित करना,

(ii) स्थानीय निकायों को अथवा उन्हें विनियोजित या सौपे गए करों, प्रशुल्कों, मार्ग करों तथा शुल्कों का निर्धारण करना,

(iii) राज्य की समेमित निधि में से स्थानीय निकायों को सहायता अनुदान प्रदान करना।

(ख) स्थानीय निकायों की वित्तीय स्थिति सुधारने के लिए आवश्यक उपाय और

(ग) इन स्थानीय निकायों की सुदृढ़ वित्तीय स्थिति के हित में राज्यपाल द्वारा आयोग को सौंपा गया कोई अन्य विषय।

3.5.2.3. अनुच्छेद 243झ तथा 243म के प्रावधान अनिवार्य रूप से अनुच्छेद 280 पर प्रतिरूपित है जो कि निम्नलिखित पर सिफारिशें प्रस्तुत करने के लिए केन्द्रीय स्तर पर एक वित्त आयोग के गठन की बात करता हैः

(क) संघ तथा राज्य के बीच करों, जो कि इस अध्याय के अंतर्गत उनके बीच विभाजित होने है या विभाजित किए जा सकते हैं, का संवितरण करना तथा इस अर्जन में से राज्यों के बीच उनके सम्बन्धित हिस्सों का आवंटन करना।

(ख) भारत की समेकित निधि में से राज्यों के राजस्वों को सहायता अनुदानों को अधिशासित करने वाले सिद्धान्त,

(खख) राज्य के वित्त आयोग द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर राज्य में पंचायतों के संसाधनों अनुपूरक मदद सुलभ करने के लिए राज्य की समेकित निधि बढ़ाने के लिए आवश्यक उपाय;[8]

(ग) राज्य के वित्त आयोग द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर राज्य में नगरपालिकाओं के संसाधनों को अनुपूरक मदद सुलभ कराने के लिए राज्य की समेकित निधि को बढ़ाने के लिए आवश्यक उपाय;[9]

(घ) सुदृढ़ वित्त व्यवस्था के हित में राष्ट्रपति द्वारा आयोग को सौंपा गया कोई अन्य विषय।

8. 73वें संशोधन द्वारा प्रविष्ट

9. 74वें संशोधन द्वारा प्रविष्ट

3.5.2.4. दसवें वित्त आयोग ने पहली बार देश में शहरी स्थानीय निकायों के लिए (पाँच वर्ष की अवधि के लिए) 1,000 करोड़ रुपए का प्रावधान किया। आयोग ने पंचायतों के लिए प्रति व्यक्ति 100 रुपए का प्रावधान भी किया। ग्यारहवें वित्त आयोग ने स्थानीय वित्त तथा विभिन्न राज्य वित्त आयोगों की गई सिफारिशों का व्यापक अध्ययन किया। आयोग ने वित्तीय वर्ष 2000-01 से प्रारम्भ प्रत्येक पाँच वर्षों के लिए नगरपालिका के लिए 400 करोड़ रूपए तथा 1,600 करोड़ रूपए के कुल अनुदान सहित राज्य की समेकित निधि के आवर्धन के कई उपाय किए। संविधान के 73वें तथा 74वें संशोधन के कार्यान्वयन की प्रक्रिया का विश्लेषण करने के अलावा ग्यारहवें वित्त आयोग ने नीचे लिखे अनुसार कई विशिष्ट परिवर्तनों का भी सुझाव दियाः

(क) स्थानीय निकायों को कार्यों तथा स्कीमों की सुपुर्दगी विशिष्ट तौर पर कानून बनाकर किया जाना चाहिए।

(ख) शासन व्यवस्था में विभिन्न स्तर के पंचायती निकायों द्वारा अदा की जाने वाली भूमिकाओं को स्पष्ट रूप से इंगित करते हुए सुस्पष्ट विधायी व्यवस्था की आवश्यकता है।

(ग) जिला ग्रामीण विकास एजेंसी और जिला शहरी विकास एजेंसी जैसी विशेष एजेंसियों को स्थानीय शासन के साथ ही समेकित किया जाना चाहिए।

(घ) 74वें संशोधन के प्रावधानों को पाँचवीं अनुसूची क्षेत्र तक विस्तारित करने के लिए एक सक्षमकारी विधान लागू किए जाने की आवश्यकता है।

(ड.) सभी राज्यों में जिला आयोजना समितियों और महानगर आयोजना समितियों का गठन किया जाए।

3.5.2.5. केन्द्र से राज्यों को निधियों की सुपुर्दगी की सिफारिशें देने में वित्त आयोग की भूमिका की ही तरह राज्य वित्त आयोग भी उन सिद्धान्तों की सिफारिश करते हैं, जिनके माध्यम से एक तरफ राज्यों तथा दूसरी तरफ स्थानीय निकायों को करों का संवितरण किया जाना है। इस प्रकार राज्य वित्त आयोग राज्यगत संसाधनों में राज्य सरकार तथा स्थानीय निकायों की दावेदारी के बीच विवाचक की भूमिका अदा करता है। राज्य वित्त आयोग के गठन के विचारार्थ विषयों में आम तौर पर एक प्रावधान यह भी होता है कि अपनी सिफारिशें तैयार करते समय आयोग राज्य की संसाधनगत अवस्थिति और राजस्व व्यय की पूर्ति हेतु स्थानीय निकायों की अपेक्षाओं को ध्यान में रखेगा। सामान्यतः राज्य वित्त आयोग द्वारा राज्य

सरकारों के साथ-साथ स्थानीय शासन की वित्तीय स्थिति को ध्यान में रखने के इस दृष्टिकोण का पालन किया जा रहा है। इसके आधार पर राज्य वित्त आयोग ने समग्र रूप से शहरी तथा ग्रामीण स्थानीय निकायों को निधियों के सुपुर्दगी के अलावा सुपुर्दगी पैकेज की सिफारिश भी की है। राज्य वित्त आयोग ने विभिन्न शहरी निकायों तथा विभिन्न पंचायतों के बीच निधियों के अन्तर-वितरण के सिद्धान्तों की सिफारिश भी की है। विभिन्न राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों का एक विश्लेषण यह दर्शाता है कि विभिन्न राज्य के वित्त आयोगों की रिपोर्टों के मध्य, उनके दृष्टिकोण में काफी अंतर है। कई राज्यों ने पहले सभी राजस्वगत संसाधनों को इक्ट्ठा करने तथा बाद में उसे बांटने की अवधारणा का समर्थन किया है जबकि अन्यों ने विभिन्न करों के लिए विभिन्न सुपुर्दगी के प्रतिशत का तरीका अपनाया है। चूंकि इन स्थानीय निकायों को अधिशासित करने वाले कानून विभिन्न राज्यों में अलग-अलग हैं तथा इसी अनुक्रम में उन्हें सौंपे गए कार्यकलाप और दायित्व भी अलग-अलग है। लिहाजा इन विभिन्नताओं की वजह को पर्याप्त समझा जा सकता है।

बॉक्स 3.4: भारत में राज्य वित्त आयोगों के अनुभव

1. स्थानीय निकायों को सौंपे गए कार्यों के स्पष्ट आवंटन और राज्य स्थापनाओं के सुसंगत संरचनात्मक विन्यास का कोई ईमानदार प्रयास राज्य सरकारों द्वारा नहीं किया गया।
2. स्थानीय निकायों को स्थानांतरित राज्य सरकारी कर्मचारी को राजस्व संसाधन सुपुर्दगी प्रक्रिया से सुपरिचित नहीं बनाया गया।
3. राज्य वित्त आयोगों का ज्यादातर समय स्थानीय निकायों से उनके दिन-प्रतिदिन वित्तीय आंकड़े हासिल करने में खर्च हुआ जबकि यही काम दिन-प्रतिदिन स्तर पर राज्य सरकार की ज्यादा आसानी से कर सकती थी, राजकोषीय स्वायत्तता, राजस्व निर्भरता, व्यय/राजस्व विकेन्द्रीकरण जैसे नीतिगत निर्णयों के लिए गुणात्मक आंकड़ों के संग्रहण का काम नही हो सका।
4. एक अपर्याप्त धारणा यह है कि राज्य वित्त आयोगों के सिर्फ स्थानीय राजस्व की सहायता में राजकोषीय अंतरणों की सिफारिश ही करनी है। स्थानीय अवसंरचना सम्बन्धी निर्माण के लिए नहीं।
5. राज्य वित्त आयोगों ने स्थानीय निकायों के राजकोषीय प्रशासन को सुधारने का कोई गंभीर प्रयास नहीं किया जो कि महत्त्व राजकोषीय सुपुर्दगी से कहीं ज्यादा अहम और महत्त्वपूर्ण कार्य था।
6. राज्य वित्त आयोगों को स्थानीय कराधान या उगाहियों जैसे मामलों को शामिल करना अपेक्षित नहीं है, और यदि इन्हें शामिल करना ही है तो ऐसे में 'सुदृढ़ वित्त व्यवस्था के हित में' इसका उल्लेख विशेष रूप से राज्य वित्त आयोगों के विचारार्थ विषयों में होना चाहिए।
7. राज्य वित्त आयोग पहली संवीक्षा के बाद अपना कार्य आरंभ नहीं करते न ही वे राज्य करों, या प्रभारों पर अथवा किसी महत्त्वपूर्ण अंतरणों की सिफारिश करते हैं
8. राज्य वित्त आयोग द्वारा स्थानीय राजस्व प्रयासों और स्थानीय राजकोषीय स्वायत्तता पर अनुदानों के प्रतिकूल प्रभावों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता।
9. राज्य सरकारें राज्य वित्त आयोग को अपेक्षाकृत कम सम्मान देती है शायद इसलिए कि इनके सदस्यगण प्रायः सेवारत सरकारी कर्मचारी होते हैं, और
10. आम तौर पर राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों को स्वीकार करने तथा उन पर कार्रवाई करने में राज्य सरकारें काफी समय लगाती हैं।

स्रोतः "म्यूनिसिपल फाइनेंस इन इंडिया, आईआईपीए में श्री अभिजीत दत्ता द्वारा "दि नेशनल फाइनेंस कमीशन एण्ड फिस्कल डिवोल्यूशन टू लोकल बॉडीज" (एनआईआरडी) (एसएफसी कक्ष), हैदराबाद और एनआईयूए, नई दिल्ली द्वारा आंकड़ा संकलित)

3.5.2.6. ग्यारहवें वित्त आयोग ने कतिपय बाधाओं का उल्लेख किया था, जिसके कारण उसने राज्य वित्त आयोग की रिपोर्टों को अपनी सिफारिशों के लिए आधार मानने से मना कर दिया था। ये बाधाएं निम्नानुसार थीं:

(क) राज्य वित्त आयोग तथा केन्द्रीय वित्त आयोग की सिफारिशों की अवधि में तुल्यकालिकता होना।

(ख) स्थानीय निकायों को शक्तियों, प्राधिकारों और उत्तरदायित्वों के सुपुर्दगी के सम्बन्ध में सुस्पष्टता का अभाव।

(ग) राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों पर राज्य सरकारों द्वारा कार्रवाई करने के लिए अपेक्षित समय-सीमा का अभाव, और

(घ) राज्य वित्त आयोगों की रिपोर्टों की अनुपलब्धता।

3.5.2.7 बारहवें वित्त आयोग ने विस्तृत रूप से राज्य वित्त आयोगों के काम-काज की जांच की और इस सम्बन्ध में कुछेक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिफारिशें की। ये सिफारिशें यदि लागू हो जाएं तो कालान्तर में राजकोषीय विकेन्द्रीकरण को सुगम व सुवाही बनाने तथा स्थानीय निकायों को स्व-शासन की एक संस्था के रूप में विकसित करने के अंतिम लक्ष्य को प्राप्त करने में अभूतपूर्व सहायता मिलेगी। बारहवें वित्त आयोग की महत्त्वपूर्ण सिफारिशों में से एक सिफारिश राज्य वित्त आयोगों के गठन, इसके द्वारा अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने और इसकी रिपोर्ट में की गई सिफारिशों पर अनुवर्ती कार्रवाई करने के लिए समय सीमा निर्धारित करना तथा इसकी समक्रमिकता केन्द्रीय वित्त आयोग के साथ ही नियत करना है। बारहवें वित्त आयोग की सिफारिश है कि:

"वांछनीय है कि अपनी सिफारिशें सौंपने की तिथि से कम से कम दो वर्ष पहले राज्य वित्त आयोगों का गठन कर दिया जाता है और कार्रवाई के बाद संसद में की गई कार्रवाई प्रस्तुत करने के लिए राज्य सरकार को न्यूनतम तीन माह की समय-सीमा की अनुमति होनी चाहिए, बल्कि वरीयतः यह कार्य आगामी वित्त वर्ष के बजट के साथ ही किया जाना चाहिए। राज्य वित्त आयोगों की अवार्ड अवधि की समक्रमिकता केन्द्रीय वित्त आयोग के साथ होने का अर्थ यह कतई नहीं है कि ये सह-आवधिक होने चाहिए। आवश्यक बात यह है कि राज्य वित्त आयोगों की रिपोर्ट केन्द्रीय वित्त आयोग के लिए सहजतः सुलभ होनी चाहिए। जब कभी केन्द्रीय वित्त आयोग का गठन हो तो समरूप

सिद्धान्तों के आधार पर राज्य की आवश्यकताओं का आंकलन केन्द्रीय वित्त आयोग द्वारा किया जा सके। इसके लिए अपेक्षित ये रिपोर्टें कभी भी अत्यधिक विलम्ब से न जारी हों। चूंकि केन्द्रीय वित्त आयोग के गठन की आवधिकता सहज परिकलनीय है उसका अंदाजा लगाया जा सकता है। अतः राज्यों को भी उपयुक्त अपने सम्बद्ध वित्त आयोगों का गठन इसी क्रम से अर्थात् अपने समग्र उद्देश्यों को पूरा करने के लिए अपेक्षित विधान तैयार करने के लिए जरूरी कार्यविधि तथा समय-सीमा की उपलब्धता की दृष्टि से ही करना चाहिए।"

3.5.2.8. राज्य वित्त आयोगों की कार्यप्रणाली के बारे में बारहवें वित्त आयोग ने कई सिफारिशें की थीं, जो संक्षेप में निम्नुसार हैः

(क) केन्द्रीय वित्त आयोगों की तरह ही राज्य वित्त आयोगों द्वारा संयुक्त सिफारिशें भी सरकार द्वारा स्वीकृत होनी चाहिए।

(ख) केन्द्र से राज्यों के संसाधनगत सुपुर्दगी के सम्बन्ध में केन्द्रीय वित्त आयोग द्वारा अनुपालित प्रक्रिया का अनुसरण राज्य वित्त आयोगों को भी करना चाहिए।

(ग) संसाधनगत अंतराल का आंकलन करते समय राज्य वित्त आयोगों को ऐतिहासिक रूझानों पर आधारित भविष्यापेक्षी दृष्टि के बजाए संसाधनों के आंकलन के नियमपरक दृष्टिकोण को अपनाना चाहिए।

(घ) यह आवश्यक है कि राज्य वित्त आयोगों के गठन को महज संवैधानिक औपचारिकता भर न मानें बल्कि इसके गठन में राज्य के विख्यात, सक्षम और प्रबुद्ध लोगों को भी सहभागी बनाएं।

(ड.) राज्य वित्त आयोगों के गठन के सिलसिले में राज्यों को बेहतर सुझाव है कि वे अध्यक्ष और सदस्यों के लिए विनिर्दिष्ट अर्हताओं के बारे में केन्द्रीय विधानों का पालन करते हुए अपना संरचनात्मक ढांचा तैयार करें। यह भी महत्त्वपूर्ण रहेगा कि अर्थशात्र, लोक वित्त, लोक प्रशासन तथा विधि क्षेत्र से जुड़ी महत्त्वपूर्ण हस्तियों को इसमें पदाधिकारियों के रूप में शामिल किया जाए।

(च) प्रत्येक राज्य में उसके वित्त विभाग में एक राज्य वित्त आयोग प्रकोष्ठ होना चाहिए। इस प्रकोष्ठ का प्रमुख सचिव स्तर का एक अधिकारी हो जो राज्य वित्त आयोग के सचिव के रूप में भी काम करेगा।

3.5.2.9. केन्द्रीय वित्त आयोग की सिफारिश अनिवार्य नहीं है लेकिन प्रारम्भ से ही अनुवर्ती केन्द्र सरकारों ने वित्त आयोग द्वारा सुझाए गए सुपुर्दगी पैकेज का बिना किसी काट-छांट के स्वीकार करने की एक स्वस्थ परम्परा विकसित की है। फलतः ये सिफारिशें अनिवार्य मान ली गई है। तथापि राज्यों में इस तरह की कोई परम्परा नहीं रही है। फलतः राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों के बावजूद राज्य सरकारों ने स्थानीय शासनों के लिए पर्याप्त संसाधनों की व्यवस्था नहीं की। केन्द्रीय वित्त आयोग द्वारा किए गए सुपुर्दगी प्रस्तावों को सामान्यतः स्वीकार कर लेने की केन्द्रीय सरकार की स्वस्थ परम्परा का अनुपालन राज्य सरकारों द्वारा अपने राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों के संदर्भ में भी किया जाना चाहिए। इससे स्थानीय निकायों के कार्यों तथा शक्तियों की प्रभावी और प्रगामी सुपुर्दगी सुनिश्चित होगी और इस प्रकार उनके सशक्तिकरण को बढ़ावा मिलेगा।

3.5.2.10. तेरहवें वित्त आयोग, जिसका गठन संभवतः 2007/2008 में होना है, के साथ ही सभी राज्यों के लिए समुचित सलाह होगी कि वे भी अपने-अपने राज्य वित्त आयोगों का गठन अग्रिम रूप से कर लें जिससे कि राज्य वित्त आयोगों की रिपोर्टे विचारार्थ केन्द्रीय वित्त आयोग को उपलब्ध हो सके। इस क्रम में आयोग का विचार है कि संविधान की अपेक्षा के अनुरूप राज्य वित्त आयोगों का गठन पाँच वर्षों की अवधि के लिए किया जाए किन्तु समान रूप से महत्त्वपूर्ण यह है कि उन्हें पूरे देश भर में यथा समय गठित किया जाए जिससे कि बारहवें वित्त आयोग की संस्तुति के अनुसार उनकी सिफारिशों पर केन्द्रीय वित्त आयोग द्वारा भी ध्यान दिया जा सके।

3.5.2.11. संयोगवश संविधान द्वारा प्रत्येक पाँच वर्ष या इससे पहले केन्द्रीय वित्त आयोग के गठन का प्रावधान किया गया है। अनुच्छेद 280 स्पष्ट कहता है कि-

> *"राष्ट्रपति संविधान प्रारंभ होने दो वर्षों के भीतर प्रत्येक पाँचवें वर्ष की समाप्ति पर या इससे पूर्व, जिसे राष्ट्रपति आवश्यक समझें, आदेश द्वारा एक वित्त आयोग का गठन करेगा, जिसमें एक अध्यक्ष और चार अन्य सदस्य होंगे जिनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाएगी।"*

3.5.2.12. तथपि अनुच्छेद 243झ, जो कि राज्य वित्त आयोगों के गठन से सम्बन्धित है, राज्यों के लिए इस अवधि का प्रावधान नहीं करता है। संभवतः राज्य वित्त आयोगों के गठन में निरंकुशता और तदर्थवाद रोकने के लिहाज से ऐसा किया गया हो, किन्तु यह आवश्यकता कि केन्द्रीय वित्त आयोग द्वारा वित्त आयोगों की सिफारिशों को भी ध्यान में रखा जाएगा, को ध्यान में रखते हुए सरकार द्वारा अनुच्छेद 280(3)(खख) तथा (ग) के दायरे से बाहर आकर अनुच्छेद 243झ को उपयुक्त रूप से संशोधित किए जाने की आवश्यकता है।

3.5.2.13. आयोग बारहवें वित्त आयोग की इन सिफारिशों से भी सहमत है कि केन्द्रीय अधिनियम के अनुरूप प्रत्येक रज्य को भी एक अधिनियम के द्वारा राज्य वित्त आयोग के सदस्यों के रूप में नियुक्ति के पात्र व्यक्तियों की अर्हता विनिर्दिष्ट करनी चाहिए। इससे इन आयोगों में अपेक्षित योग्यता/अर्हता, अनुभव और सार्वजनिक समझ वाले व्यक्ति की नियुक्ति सुनिश्चित होगी।

3.5.2.14. राज्य वित्त आयोगों का काम निःसंदेह जटिल है। उन्हें सभी शहरी तथा ग्रामीण निकायों की स्थिति में संसाधनगत अन्तरालों का आकंलन करना होता है। यहाँ तक कि राज्य में भी, इन स्थानीय निकायों की वित्तीय अवस्थाओं तथा उनके द्वारा मुहैया कराई जा रही सेवाओं के स्तर में व्यापक भिन्नता होती है। स्थानीय शासनों के विविध पहलुओं पर आंकड़ागत संसूचनाओं का अभाव राज्य वित्त आयोगों के कार्य को और भी ज्यादा मुश्किल और पेंचीदा बना देता है। सामान्यतः राज्य वित्त आयोगों को संसाधनगत अन्तराल का आंकलन करने और तदनुसार निधियों के सुपुर्दगी की सिफारिश करने तक ही प्रयास करना होता है। किसी भी स्थानीय निकाय के संदर्भ में संसाधनगत अंतराल को निरपेक्ष शर्तों में नहीं मापा जा सकता, क्योंकि संसाधन अंतराल वस्तुतः उपलब्ध कराई जा रही सिविल सुविधाओं की गुणवत्ता तथा उनके स्तर, संसाधनों के अर्जन में स्थानीय निकायों की दक्षता, स्थानीय निकायों द्वारा वसूले जाने वाले सेवा-प्रभारों की प्रमात्रा आदि विविध घटकों का कार्य है। आयोग का विचार है कि राज्य वित्त आयोगों को निधियों की सुपुर्दगी को नागरिक सुविधाओं के सम्बन्ध में नागरिकों द्वारा प्रत्याशित गुणवत्ता और स्तर से ही जोड़ना चाहिए। इससे विभिन्न स्थानीय निकायों द्वारा उपलब्ध कराई जा रही सेवाओं की गुणवत्ता में कुछ हद तक एकरूपता लाई जा सकेगी। मूल रूप से इससे केन्द्र बिन्दु को सृजन से हटाकर 'परिणाम' पर लाया जा सकेगा।

3.5.2.15. यद्यपि निधियों के सुपुर्दगी के सम्बन्ध में सिफारिशें प्रस्तुत करते समय राज्य वित्त आयोग स्थानीय निकायों के संसाधनों को प्रभावित करने वाले अन्य मामलों पर भी सिफारिशें देते हैं किन्तु उक्त अंतरणों के परिणामों पर पर्याप्त जोर नहीं दिया गया। स्थानीय निकाय अपना अधिक से अधिक ध्यान राज्य से अधिकतम संभाव्य निधियाँ लेने पर ही केन्द्रित करते हैं। इस प्रक्रिया में स्थानीय निकायों के संसाधनों में वृद्धि सम्बन्धी अन्य सिफारिशों जैसे-उनके निजी कराधार में सुधार करना, कर संग्रहण में उच्च-स्तरीय दक्षता, व्यय में किफायत, अधिशेष स्टाफ में कटौती आदि पर ध्यान नहीं दिया जाता है। संक्षेप में स्थानीय निकाय सिफारिशों के केवल 'सरल तथा अनुकूल अंशों' को ही लागू करते हैं और 'कठोर अंशों' को प्रायः बिना अमल में लाए ही छोड़ दिया जाता है। परिणामस्वरूप राज्य वित्त आयोगों

की सिफारिशें प्रायः समग्रता में लागू नहीं हो पाती इसलिए उनके परिणाम या नतीजे प्रायः अधिकतम नहीं हो पाते। आयोग का मानना है कि राज्य वित्त आयोग को स्थानीय निकायों की वित्तीय स्थिति का अधिक व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत करना चाहिए और उनके काम-काज में सुधार के लिए ज्यादा ठोस और कारगर सिफारिशें करनी चाहिए। लघुतर स्थानीय निकायों की स्थिति में ये सिफारिशें व्यापक आधारयुक्त हो सकती है किन्तु वृहदतर स्थानीय शासनों की स्थिति में इन सिफारिशों को ज्यादा विशिष्ट होने की आवश्यकता है। ऐतिहासिक आंकड़े भी राज्य वित्त आयोग के पास उपलब्ध होने और आंकड़ा संग्रहण में हो रही कुशलता में सतत् सुधार होने से राज्य वित्त आयोग को इस स्थिति में होना चाहिए कि वह इस सम्बन्ध में विस्तृत, व्यापक और समग्र विश्लेषण प्रस्तुत कर सके।

3.5.2.16. स्थानीय निकायों के राजस्व का अच्छा-खासा हिस्सा उनकी संस्थापना सम्बन्धी आवश्यकताओं पर ही खर्च होता है। आम तौर पर स्थानीय निकाय कई मामलों में कर्मचारियों की अधिकता से ग्रस्त हैं और इसके कारण संगठन में अपेक्षित कुशलता और क्षमता उपलब्ध नहीं है। राज्य वित्त आयोग को विभिन्न स्थानीय निकायों के लिए संस्थापना सम्बन्धी खर्चों के लिए भी मानक तैयार करने चाहिए।

3.5.2.17. राज्य वित्त आयोग की सिफारिशों के कार्यान्वयन का अनुवीक्षण सामान्यतः कमजोर रहा है। विभिन्न वित्त आयोगों ने भी इस बात को महसूस किया है। यह आवश्यक है कि एक कार्यतंत्र विकसित किया जाए जो कि राज्य वित्त आयोग की सिफारिशों के कार्यान्वयन की समीक्षा करें। छः महीनों के भीतर राज्य की विधानसभा में की गई कार्रवाई सम्बन्धी एक रिपोर्ट' प्रस्तुत की जाए और इसके साथ अलग-अलग स्थानीय निकायों को की गई सुपुर्दगी तथा दिए गए अनुदानों के सम्बन्ध में तैयार की गई वार्षिक विवरणी और राज्य बजट दस्तावेजों के एक परिशिष्ट भी संलग्न होने चाहिए। यदि आवश्यक समझा जाए तो स्थानीय निकायों को की जाने वाली संसाधनों की यह सुपुर्दगी इस शर्त पर निर्भर होनी चाहिए कि वे राज्य वित्त आयोग की सिफारिशों को लागू करने पर सहमत हो।

3.5.2.18 सिफारिशें

(क) **आयोग पैराग्राफ 3.5.2.8 में सूचीबद्ध के अनुसार राज्य वित्त आयोग के काम-काज के सम्बन्ध में बारहवें वित्त आयोग के विचारों का अनुमोदन और पुनरावृत्ति करता है।**

(ख) **संविधान के अनुच्छेद 243झ(1) में शब्दांश 'प्रत्येक पाँचवें वर्ष' के बाद 'इस पूर्व समय पर' को शामिल करते हुए संशोधित किया जाए।**

(ग) एक अधिनियम के द्वारा प्रत्येक राज्य को राज्य वित्त आयोग के सदस्यों के रूप में नियुक्त किए जाने वाले पात्र व्यक्तियों की योग्यता को विनिर्दिष्ट करना चाहिए।

(घ) राज्य वित्त आयोग को निधियों की सुपुर्दगी और वितरण के लिए उद्देश्य तथा पारदर्शी मानकों को विकसित करना चाहिए। इन मानकों में पिछड़ेपन के क्षेत्र-वार संसूचक भी शामिल होने चाहिए। राज्य वित्त आयोगों को निधियों की सुपुर्दगी को सिविल सुविधाओं के नागरिकों द्वारा प्रत्याशित गुणवत्ता से जोड़ना चाहिए। तब यह प्रभावी मूल्यांकन के आधार के रूप में कार्य कर सकता है।

(ड.) राज्य वित्त आयोग की सिफारिशों पर तैयार 'की गई कार्रवाई रिपोर्ट (एटीआर)' सिफारिशें प्रस्तुत करने के छः माह की अवधि के भीतर अनिवार्य रूप से सम्बद्ध राज्य विधानसभा में प्रस्तुत की जानी चाहिए और इसके साथ ही अलग-अलग स्थानीय निकायों को की गई सुपुर्दगी तथा दिए गए अनुदानों सम्बन्धी वार्षिक विवरण तथा राज्य बजट दस्तावेजों के साथ अन्य सिफारिशों के कार्यान्वयन सम्बन्धी परिशिष्ट भी संलग्न होने चाहिए।

(च) राज्यों से शासन के तीसरे स्तर को की जाने वाली सुपुर्दगी में सुधार की आवश्यकता को भली प्रकार से ध्यान में रखने के लिए केन्द्रीय सरकार की ओर से राज्यों को की जाने वाली सुपुर्दगी में सुधार को भी शामिल किया जा सकता है।

(छ) जैसा कि बारहवें वित्त आयोग (टीएससी) ने भी सिफारिश की थी समान प्रारूपण अपनाया जाना चाहिए और राज्य वित्त आयोगों के उपयोग के लिए वार्षिक लेखा व अन्य आंकड़े भी संकलित तथा अद्यतन किए जाने चाहिए।

(ज) राज्य वित्त आयोग को स्थानीय निकायों की वित्तीय व्यवस्था का अधिक व्यापक विश्लेषण करना चाहिए और उनके काम-काज की स्थिति को सुधारने के क्रम में ज्यादा ठोस और आधारभूत सिफारिशें प्रस्तुत करनी चाहिए। लघुतर स्थानीय निकायों के मामले में ये सिफारिशें स्वाभाविक रूप से व्यापक हो सकती है किन्तु जहाँ तक बृहदतर स्थानीय निकायों का सम्बन्ध हो वहां ये सिफारिशें ज्यादा विशिष्ट होनी चाहिए। राज्य वित्त आयोगों के पास चूंकि ऐतिहासिक आंकड़े भी होते हैं और आंकडागत संग्रहण में हो रहे सुधार को अपनाकर दक्षता हासिल करते हुए राज्य वित्त आयोगों को इस अवस्थिति में होना चाहिए कि वह

अपेक्षतया विस्तृत विश्लेषण करने में सक्षम हो। विस्तृत शहरी समूह विशेषकर महानगरों के सम्बन्ध में राज्य वित्त आयोग द्वारा विशेष रूप से ध्यान दिया जाना आवश्यक होगा।

(झ) **राज्य वित्त आयोग को स्थानीय निकायों के लिए कर्मचारियों के पदस्थापन सम्बन्धी मानक भी निर्धारित करने चाहिए।**

(ञ) **यह आवश्यक है कि एक ऐसा कार्यतंत्र तैयार हो जो कि राज्य वित्त आयोग की सभी सिफारिशों के कार्यान्वयन की समीक्षा करे। यदि आवश्यक समझा जाए तो स्थानीय निकायों को की जाने वाली सुपुर्दगी इस शर्त पर निर्भर की जा सकती है कि वे राज्य वित्त आयोग की सिफारिशों को लागू करने पर सहमत होंगे।**

3.6. स्व-अधिशासन के लिए क्षमता-निर्माण

3.6.1. विकेन्द्रीकृत स्व-शासन में शहरी तथा ग्रामीण निकायों में क्षमता विनिर्माण का मामला व्यापक रूप से उपेक्षित क्षेत्र ही बना रहता है। इन निकायों के कर्मचारियों और निर्वाचित तत्वों के अल्पकालिक 'प्रशिक्षण' से परे देखें तो बहुत थोड़ा ही कार्य अभी तक किया गया है और इस क्षेत्र में भी बेहद सीमित शुरूआत और अनियमित प्रगति हुई है। परिणामस्वरूप, पंचायत और नगरपालिका संस्थाओं में क्षमता निर्माण की अत्यन्त कमी है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी अधिनियम (सार्वजनिक किए जाने के समय जिसका कुल परिव्यय 60000 करोड़ रुपए था) और जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन जेएनएनयूआरएम (5 वर्षों के लिए 63 शहरों हेतु 50,000 करोड़ रूपए) जैसी अन्य महत्त्वपूर्ण तथा अग्रणी योजनाएँ मुख्य रूप से इन संस्थाओं के द्वारा ही कार्यान्वित की जा सकती है। अतः यह सुनिश्चित करने कि, कार्यान्वयन एजेंसियों में अपने संवैधानिक कार्यकलापों को पूरा करने की क्षमता के साथ-साथ इन प्रमुख राष्ट्रीय कार्यक्रमों को लागू करने में आड़े आने वाली चुनौतियों का सामना करने की सक्षमता और योग्यता हो, इसके लिए स्पष्ट है कि एक वहनीय सुनियोजित और समर्थकारी प्रक्रिया शुरू किए जाने की आवश्यकता है।

3.6.2 इस धारणा कि क्षमता निर्माण केवल प्रशिक्षण और कर्मचारियों को नई कुशलताएं प्रदान करने और उनकी मौजूदा कुशलताएं सुधारने से ही संबद्ध है, को स्पष्ट किए जाने की आवश्यकता है। क्षमता निर्माण प्रशिक्षण की तुलना में कुछ और अधिक हैं और इसके दो मुख्य संघटक हैं, नामतः

- वैयक्तिक विकास
- संगठनात्मक विकास

3.6.3. वैयक्तिक विकास में व्यक्ति के ज्ञान, कौशल तथा उनके कार्यनिष्पादन के सुधार में उनके लिए तथा इसी प्रकार उनके संगठन के लिए समर्थकारी संसूचनाओं तक उनकी पहुंच में वृद्धि के साथ-साथ मानव संसाधन विकास शामिल है। जबकि दूसरी ओर संगठनात्मक विकास किसी संगठन को दो प्रमुख चुनौतियों का सामना करने के लिए समर्थ बनाना है। ये चुनौतियाँ हैंः

- बाह्य अनुकूलन और उत्तरजीविता
- आंतरिक एकीकरण

3.6.4. बाह्य अनुकूलन और उत्तरजीविता का अर्थ यह है कि कैसे कोई संगठन अनवरत रूप से बदल रहे चिरपरिवर्तनशील बाह्य वातावरण के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने के लिए खुद को तैयार करता है। इस प्रक्रिया में निम्न मामले शामिल है।

- मिशन, कार्यनीतियाँ तथा लक्ष्य।
- लक्ष्य हासिल करने के साधन, जिसमें समुपयुक्त प्रबन्धन संरचना, प्रक्रिया कार्यप्रणाली प्रोत्साहनों तथा पारितोषिक पद्धति का चयन भी शामिल है।
- उपाय या साधन, जिसमें यह भी शामिल है कि किस तरह वैयक्तिक या टीमें अपने लक्ष्यों की दिशा में प्रयासरत होती हैं, यह निर्धारित करने के लिए समुपयुक्त मुख्य परिणामों या विश्लेषक मानकों की स्थापना भी शामिल है।

3.6.5. आंतरिक एकीकरण संगठन में सद्भावपूर्वक और प्रभावी सम्बन्ध स्थापित करने के बारे में है, जिसमें सहभागी मूल्यों का विकास, शक्ति तथा समूहों व व्यक्तियों की वैयक्तिक हैसियत और वांछनीय व्यवहार को बढ़ावा देने तथा आवंछनीय व्यवहार को रोकने के लिए पुरस्कार और दण्डों आदि का विकास करना शामिल है।

3.6.6. क्षमता विनिर्माण का एक सम्बद्ध पहलू यह भी है जो आवश्यक विधायी और विनियामक परिवर्तनों के द्वारा अपने उद्देश्यों तथा लक्ष्यों के अनुसरण में अपनी क्षमता बढ़ाने के लिए संगठन में संस्थापक और कानूनी कार्यतंत्र तैयार करने से सम्बन्ध रखता है। स्थानीय निकायों में वैयक्तिक और संगठनात्मक क्षमता वृद्धि के लिए कार्य करते समय इन निर्देशक सिद्धांतों पर ध्यान देना आवश्यक है।

3.6.7. संगठनात्मक क्षमताओं के निर्माण का कार्य किसी व्यक्ति की कुशलता के स्तर को बढ़ाने की तुलना में कहीं ज्यादा जटिल और अपेक्षा रखने वाला है। ऐसा इसलिए कि अंशतः एक तो अब तक इस विषय को पूरी तरह से उपेक्षित रखा गया है तथा दूसरा इसलिए कि इस दिशा में लक्ष्य हासिल करने के लिए बहुत जटिल और मिश्रित शुरूआत किए जाने की आवश्यकता है। व्यापक स्तर पर देखें तो संगठनात्मक क्षमता निर्माण समुपयुक्त भर्ती तथा कार्मिक नीतियों तथा सेवा के आंतरिक प्रावधानों के सटीक मिश्रण और आउटसोर्सिंग कार्यकलापों के संरूपण तथा प्रतिपादन पर निर्भर है। संगठनात्मक क्षमता निर्माण में संगठन के भीतर यथोचित संरचनात्मक विन्यास, आन्तरिक प्रक्रियाओं का पुनः निर्माण प्राधिकारों तथा उत्तरदायित्वों का प्रयोजन, समर्थकारी विधायी संरचना का विर्माण, प्रबन्धन संसूचना पद्धति का विकास, संस्थात्मक पुरस्कार व दण्ड़ पद्धति और सुदृढ़ मानव संसाधन प्रबन्धन प्रक्रियाओं का अनुसरण आदि शामिल है।

3.6.8. संगठनात्मक क्षमता निर्माण का यह अर्थ नहीं है कि संगठन अपने कार्यों के निष्पादन के लिए सभी कुशल और ज्ञानवान लोगों को ही ले। हाल के वर्षों में कई एजेंसियों ने कुछ खास विशेषज्ञ कुशलताओं का विकास किया है। समझदारी की मांग यही है कि किसी संगठन में इस कौशल के उपयोग की क्षमता होनी चाहिए बजाए इसके कि उक्त कौशल को अर्जित करने के लिए वह संसाधनों की काफी मात्रा खर्च करें। सहभागिता तैयार करना, विकास नेटवर्क और कार्यों की आउटसोर्सिंग आदि सब पद्धतियाँ हैं, जो किसी सगठन की क्षमता को बढ़ाती है।

3.6.9. आयोग का विश्वास है कि स्थानीय निकायों को क्षमतावान बनाने की दृष्टि से उनमें पर्याप्त कर्मचारियों का पदस्थापन भी वह मुद्दा है जिस पर राज्य सरकारों का सक्रिय सहयोग लेते हुए राज्य वित्त आयोगों द्वारा सावधानीपूर्वक ध्यान दिया जाना आवश्यक है। आयोग तेरहवीं लोक सभा की शहरी तथा ग्रामीण विकास सम्बन्धी स्थायी समिति की छप्पनवीं रिपोर्ट में दर्ज उन अभ्युक्तियों से सहमत है, जिसे सारतः उसने कहा है। स्थानीय निकायों के विकास का रहस्य फंक्शन, फक्शनरी और फाइनेंस अर्थात् कार्यों, कार्य करने वालों और वित्तीय व्यवस्था का विकास है। इस दृष्टिकोण को भरपूर सराहना मिली किन्तु कुल मिलाकर संगठनात्मक लक्ष्य वैयक्तिक विकास और उन्नति की उपेक्षा भी हुई। इसने संस्थापनाओं के सुदृढ़ीकरण, आउटसोर्स से कराई गई कार्यकलापों की मॉनीटरिंग, अधिकतम आंतरिक संसाधन अर्जन की क्षमता और सेवा उपलब्धता की इकट्ठी लागत जैसे क्षेत्रों में मानकीकरण और नीति-नियम निर्धारण के लिए कार्रवाई शुरू करने में राज्य सरकारों के उत्तरदायित्व को भी रेखांकित किया।

3.6.10. अतः राज्य वित्त आयोगों के लिए आवश्यक है कि वे कार्यों की आउटसोर्सिंग की वांछित या अधिकतम मात्रा निर्धारित करने के लिए स्थानीय निकायों के विभिन्न स्तरों तथा श्रेणियों के लिए 'स्टाफिंग मानक' सुझाने की जिम्मेदारी भी उठाएं जबकि आउटसोर्सिंग का परिणाम 'प्रक्रियात्मक कर्मचारियों' में कटौती होता है। अतः जैसा कि पहले भी नोट किया गया है इसका सार्थक परिणाम प्रबोधन कार्यतंत्र के समुपयुक्त घटक पर ही निर्भर करता हैं। इस नजरिए पर समग्र दृष्टिकोण बना पाने की असफलता ही प्रायः बाह्य साधनों में कराए गए प्रकार्यों (विशेषकर लोक स्वास्थ्य और सफाई के क्षेत्र में) की जिम्मेवार होती है जो कि बाद में जन असन्तोष का एक कारण बनती है। इसी प्रकार कई अग्रणी योजनाओं/स्कीमों एनआईजीएस, जेएनएनयूआरएम के कार्यान्वयन की जिम्मेदारी पंचायती राज संस्थाओं और नगरपालिकाओं के विभिन्न स्तरों को ही निभानी पड़ती है। इसके अलावा भी ग्रामीण क्षेत्रों में कई ऐसी स्कीमें हैं जिसमें पंचायती राज संस्थाओं की अच्छी-खासी संलग्नता तथा सहभागिता होती है। ऐसी कई स्कीमों में मुख्य रूप से 'पर्यवेक्षण के लिए स्टाफिंग घटक की आवश्यकता होती है। तथापि ऐसी स्थितियों के लिए स्थानीय निकायों के तैयार होने की तत्परता एक समान नहीं होती और न ही इसे उपयुक्त रूप से आंका जाता है। यह अवलोकन मुख्यतः केन्द्रीय तौर पर प्रायोजित स्कीमों के संदर्भ में है। कई राज्यों में यह पद्धति भी भी देखी गई है कि राज्य क्षेत्र के दायरे में आने वाली कई स्कीमों के कार्यान्वयन में भी इन निकायों/संस्थाओं को उलझा लिया जाता है। यही स्थिति केन्द्रीय तौर पर प्रायोजित स्कीमों के संदर्भ में भी लागू होती है। इससे स्पष्ट संकेत मिलता है कि बढ़ती हुई मांग पूरी करने के लिए संगठनात्मक क्षमता बढ़ा पाने की असफलता स्थानीय स्व-शासन का बुरी तरह से उपेक्षित एक पहलू बन गया है।

3.6.11. यह धारणा हमें 'प्रशिक्षण' के माध्यम से क्षमता निर्माण के पारम्परिक तथ्य के करीब लाती है। जबकि ग्राम विकास की राज्यगत संस्थाएं व अन्य संस्थान प्रशिक्षण में लगे होते हैं ऐसे में पंचायतों के कार्यकर्त्ता पदाधिकारी 'लक्षित लाभार्थियों' को प्रशिक्षण प्रदान कर रहे होते हैं। सामान्यतः ये प्रशिक्षण पंचायतों और नगरनिगम कानूनों, लेखा-संहिताओं तथा कार्यालय प्रक्रियाओं की बुककीपिंग के प्राथमिक तत्व जैसे क्षेत्रों तक ही सीमित होता है। स्पष्ट है कि वास्तविक क्षमता निर्माण और दक्षता पाने के लिए इन दैनन्दिन उपायों के दायरे से बाहर निकलने की अत्यधिक आवश्यकता है। बेहतर स्थानीय शासन सम्बन्धी सिद्धान्तों, लैगिंक सरोकार व संवेदनाओं, आपदा प्रबंधन तथा सूचना के अधिकार जैसे कई पहलू है जिन पर प्रशिक्षण और वैयक्तिक क्षमता निर्माण के हरेक उपक्रमण में विशेष रूप से ध्यान दिया जाना

आवश्यक है। स्थानीय शासन के निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए प्रशिक्षण अभिक्रम यदा-कदा और अपर्याप्त रहा हे। इसके अलावा ग्राम पंचायतों के 'सुदूर प्रशिक्षण' की कुछ शुरूआत इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा भी कराई गई हैं। कुछ प्रशिक्षण कार्यक्रमों को अखिल भारतीय परिषद के द्वारा भी वितपोषित किया गया है तथा राज्यगत प्रशासनिक प्रशिक्षण संस्थाओं में भी सामयिक प्रशिक्षण सुलभ है। लेकिन निर्वाचित प्रतिनिधियों की क्षमता बढ़ाने के लिए कोई सार्थक और वास्तविक पहल इसमें शायद ही रहीं हो। स्पष्ट है कि ज्यादा से ज्यादा प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थापना के जरिए इस भारी प्रशिक्षण अंतराल को भरने की तात्कालिक प्रतिक्रियात्मक प्रवृत्ति ही इस समस्या का अकेला समाधान नहीं है।

3.6.12. 73वाँ संवैधानिक संशोधन निर्वाचन पदों में कम से कम 33 प्रतिशत महिला आरक्षण का प्रावधान करता है और इस प्रकार एक मिलियन महिलाओं को नेतृत्व की स्थिति में ला खड़ा करता है तथा उन्हें विकासात्मक प्रक्रिया की मुख्य धारा में खींच लाता है। वास्तव में पंचायत सीटों में महिलाओं की भागीदारी उनके लिए संविधान द्वारा नियत 33 प्रतिशत से भी अधिक हो चली है। वे अपने पदों पर उत्साह, हिम्मत और साहस भी लाई है और उन्होंने अनेक समुदायों में जीवन स्तर को वर्धित भी किया है। तथापि लिंगभेद की मोर्चाबंद अवधारणा के चलते आज भी ऐसे असंख्य उदाहरण मिल जाएंगे जहाँ पंचायतों की महिला संस्थाएं बाधाओं और अपवर्जनाओं से जूझ रही हैं और अपने दायित्वों तथा कर्त्तव्यों की यथेष्ठ जानकारी न होने के कारण आत्मविश्वास से परिपूर्ण नहीं हो रही है। यद्यपि विशेष प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण कार्यक्रमों से स्थिति थोड़ी सुधरी जरूर है तथापि महिला पंचायत नेताओं तथा सदस्यों में वास्तविक क्षमता निर्माण करने की दृष्टि से विशेष ध्यान दिया जाना अत्यन्त आवश्यक है जिससे कि वे शासन के तीसरे स्तर में अपनी निर्दिष्ट भूमिका का निर्वाह करने के लिए वास्तविक रूप से समर्थ हो सकें।

3.6.13. ग्रामीण तथा शहरी स्थानीय शासन संस्थाओं की वृद्धि और आसन्न भविष्य में उनकी अनवरत बढ़ती भूमिका और व्याप्ति को देखते हुए यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि वित्तीय प्रबंधन ग्रामीण विकास, आपदा प्रबंधन और सामान्य प्रबन्धन जैसे विभिन्न विषयों पर प्रशिक्षण दे रहे सभी मौजूदा संस्थाओं का एक नेटवर्क तैयार किया जाए जिससे कि संस्थात्मक वैयक्तिक क्षमताओं के विनिर्माण के लिए विद्यमान प्रशिक्षण पद्धतियों और प्रशिक्षण प्रारूपों का एक संक्षिप्त और सुदृढ़ समूह तैयार किया जा सके। केन्द्रीय पंचायत राज तथा शहरी विकास मंत्रियों के लिए विशिष्ट व महत्त्वपूर्ण प्रशिक्षण कार्यक्रमों का वित्तपोषण एक अहम् मामला है। अच्छा होगा कि प्रशिक्षणपरक आवश्यकताओं, उनका मूल्यांकन

तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों के विस्तृत विवरण विषयों को स्थानीय प्रशिक्षण संस्थाओं पर ही छोड़ दिया जाए ताकि वे स्थानीय आवश्यकताओं और अपेक्षाओं के अनुरूप प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार कर सकें। यहां पर समान रूप से यह भी महत्त्वपूर्ण है कि ये प्रशिक्षण इन संगठनों की कार्यकलापों सम्बन्धी योजनांकन की मुख्य धारा पर निर्भर होने चाहिए जिससे कि एक सतत् क्रियाशील गतिविधि के रूप में यह प्रवाहमान बने रहें।

3.6.14. यद्यपि यह भी एक तर्क हो सकता है कि पंचायतों और नगरनिगमों के लिए अकेले प्रशिक्षण संस्थान तैयार करने की आवश्यकता नहीं है। इसमें थोड़ा संदेह है कि अनुप्रयोग और कार्रवाई अनुसंधान, मामले की स्थिति का अध्ययन, प्रमुख शुरूआतों का प्रलेखन और महत्त्वपूर्ण हस्तक्षेपों का मूल्यांकन आदि ऐसी गतिविधियाँ है जिन पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित किए जाने की आवश्यकता है। इसके अलावा कुछ वृहदतर और बेहतर रूप में शक्ति सम्पन्न स्थानीय निकाय ही इस हैसियत में हो सकते हैं कि वे शैक्षणिक पहलों की शुरुआत तथा वित्तपोषण कर सकें और उन्हें इस क्षेत्र में कार्रवाई करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इस पक्ष में प्राथमिक जिम्मेदारी राज्य तथा केन्द्रीय सरकार पर आन पड़ती है कि वे राज्य/राष्ट्रीय स्कीमों को उपयुक्त वित्तपोषण उपलब्ध कराने के माध्यम से अपनी इस जिम्मेवारी का निर्वहन करें। शोध तथा उच्च शिक्षा की वित्तपोषक संस्थापनाओं को स्थानीय निकायों द्वारा निष्पादित कार्यों से सम्बन्धित विषयों तथा विकेन्द्रीकृत शासन, आनुषांगिकता तथा अन्य सम्बन्धित मसलों से जुड़े विषयों पर सैद्धान्तिक आधार भूमि और विश्लेषणपरक ढांचा उपलब्ध कराने वाले विषयों पर उनमें शामिल निहितार्थों के साथ' विशुद्ध अकादमिक' शोध को बढ़ावा देने की दिशा में एक सार्थक और समर्थ भूमिका अदा करनी चाहिए।

3.6.15. विकेन्द्रीकरण के परिणामस्वरूप स्थानीय निकाय कई सेवाओं के लिए जवाबदेह हो गए है। उनके द्वारा अनुभव की गई कठिनाइयों में अभियांत्रिकी डिजाइन, परियोजना प्रबंधन, उच्च तकनीकी उपस्करों का रख-रखाव और लेखाकरण आदि कार्यों से जुड़ी सेवाओं के लिए अपेक्षित तकनीकी कुशलता और विशेषकर दक्षता युक्त कर्मचारियों/अधिकारियों का अभाव भी एक अहम कठिनाई है। 'पूर्व-विकेन्द्रित' अवधि में ये सेवाएँ कुछ हद तक राज्य सरकारों द्वारा उपलब्ध कराई जाती थीं। अतः यह उपयुक्त होगा कि ऐसी सभी उपलब्ध विशेषज्ञता का एक पूल स्थानीय निकायों के परिसंघ द्वारा या किसी व्यावसायिक एजेंसी द्वारा अनुरक्षित किया जाए और मांग तथा भुगतान अदायगी पर स्थानीय निकाय इसका लाभ उठाते रहें।

3.6.16. सिफारिशें

(क) ग्रामीण तथा शहरी स्थानीय स्व-शासन संस्थाओं में जारी क्षमता प्रयासों को संगठनात्मक निर्माण अपेक्षाओं तथा इसमें कार्यरत व्यक्तियों, चाहे वे निर्वाचित हो या नियुक्त और दक्षता उन्नयन दोनों पर ही विशेष रूप से केन्द्रित होना चाहिए। पंचायत और नगरपालिका के प्रासंगिक कानूनों और उसके अन्तर्गत तैयार की गई नियमपुस्तकों में इस बारे में समर्थकारी प्रावधान सुनिश्चित होने चाहिए। महिला सदस्यों के लिए विशेष क्षमता निर्माण कार्यक्रम भी होने चाहिए।

(ख) राज्य सरकारों को उपयुक्त दिशानिर्देश और सहयोग प्रदान करते हुए स्थानीय निकायों को प्रोत्साहित करना चाहिए कि वे अपनी कुछेक विशिष्ट कार्यकलापों का निष्पादन किसी सरकारी या निजी, जैसा जरूरी हो, एजेंसियों से ही आउटसोर्स कराएं, आउटसोर्सिंग की गतिविधि पर नजर रखने और उनकी सतत् मॉनीटरिंग के लिए एक आंतरिक क्षमता का विकास होना भी अत्यन्त आवश्यक है। इसी प्रकार स्थानीय निकायों में राजकोषीय अनुशासन और ईमानदारी लाने के लिए राज्य सरकार द्वारा एक पारदर्शी, निष्पक्ष प्रापण प्रक्रिया विधि सुस्थापित किए जाने की आवश्यकता है।

(ग) विस्तृत अवधारणात्मक और समग्र प्रशिक्षण में विशिष्ट प्रशिक्षण संस्थाओं के विविध विषयगत विशेषज्ञ तथा संसाधन अपेक्षित है। इसे वित्तीय प्रबन्धन, ग्रामीण विकास, आपदा प्रबंधन और सामान्य प्रबन्धन जैसे विविध विषयों से सम्बन्धित संस्थाओं का एक 'नेटवर्क' बनाकर ही बेहतर तरीके से प्राप्त किया जा सकता है। यह कार्य राज्य सरकारों में नोडल एजेंसी द्वारा ही सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

(घ) क्षमता निर्माण में सहायता के रूप में इन निकायों को विनिर्दिष्ट कार्यों तथा दायित्वों के निष्पादन से जुड़े विविध मामला अध्ययनों, उत्कृष्ट संव्यवहारों तथा मूल्यांकन के प्रलेखन के लिए ग्रामीण और शहरी विकास की राज्य योजनाओं के अंतर्गत समुचित स्कीमों की रूपरेखा तैयार किए जाने की आवश्यकता है।

(ङ.) निर्वाचित प्रतिनिधियों तथा कर्मचारियों के प्रशिक्षण को एक सतत् प्रक्रिया के रूप में लिया जाना चाहिए। राज्य वित्त आयोगों द्वारा अपनी सिफारिशें देते समय प्रशिक्षण पर व्यय की जाने वाली राशि को भी ध्यान में रखना चाहिए।

(च) **व्यापक लोकहित के लिए एक दीर्घावधिक रणनीतिक संस्थात्मक क्षमता निर्माण में शैक्षणिक शोध व अनुसंधान की एक महती भूमिका है। भारतीय सामाजिक विज्ञान शोध परिषद जैसे संगठनों को स्थानीय निकायों के कार्यकलापों के विविध पहलुओं पर सैद्धान्तिक, अनुप्रयोगमूलक तथा कार्यात्मक शोध हेतु वित्तपोषण को प्रोत्साहित करना चाहिए।**

(छ) **स्थानीय निकायों के एक संघ/संकाय द्वारा विशेषज्ञों तथा सुविज्ञ निष्णातों (अर्थात इंजीनियरों, योजनाकारों आदि) का एक समूह तैयार किया जा सकता हैं जब कभी किसी विशिष्ट कार्य के लिए जरूरी हो तो इस साझा समूह का आंकलन स्थानीय निकायों द्वारा किया जा सकता है।**

3.7 विकेन्द्रित आयोजना

3.7.1 संवैधानिक प्रावधान

3.7.1.1 संविधान के अनुच्छेद 243छ, 243ब, 243यघ और 243यङ के अंतर्गत स्थानीय स्तर पर आयोजना की अवधारणा को संस्थात्मक स्वरूप प्रदान किया गया है।

243छ. पंचायतों की शक्तियां, प्राधिकार और उत्तरदायित्व : संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य का विधानमंडल, विधि द्वारा पंचायतों को ऐसी शक्तियां और प्राधिकार प्रदान कर सकेगा, जो उन्हें स्वायत्त शासन की संस्थाओं के रूप में कार्य करने में समर्थ बनाने के लिए आवश्यक हों और ऐसी विधि में पंचायतों को उपयुक्त स्तर पर, ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो उसमें आगे विनिर्दिष्ट की जाएं, निम्नलिखित के संबंध में शक्तियां और उत्तरदायित्व सुपुर्द करने के लिए उपबंध किए जा सकेंगे, अर्थात :

(क) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं तैयार करना;

(ख) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की ऐसी स्कीमों को, जो उन्हें सौंपी जाए, जिनके अंतर्गत वे स्कीमें भी हैं जो ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के संबंध में हैं, कार्यान्वित करना।

243ब - नगरपालिकाओं, आदि की शक्तियां, प्राधिकार और उत्तरदायित्व : इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य का विधानमंडल, विधि द्वारा -

(क) नगरपालिकाओं को ऐसी शक्तियां और प्राधिकार प्रदान कर सकेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की संस्थाओं के रूप में कार्य करने में समर्थ बनाने के लिए आवश्यक हो और ऐसी विधि में

नगरपालिकाओं को, ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो उसमें विनिर्दिष्ट की जाएं, निम्नलिखित के संबंध में शक्तियां और उत्तरदायित्व सुपुर्द करने के लिए उपबंध किए जा सकेंगे, अर्थात :-

(i) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं तैयार करना;

(ii) ऐसे कृत्यों का पालन करना और ऐसी स्कीमों को, जो उन्हें सौंपी जाए, जिनके अंतर्गत 3 स्कीमें भी हैं तो बारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के संबंध में हैं, कार्यान्वित करना;

(ख) समितियों को ऐसी शक्तियां और प्राधिकार प्रदान कर सकेगा जो उन्हें अपने प्रदत्त उत्तरदायित्वों को, जिनके अंतर्गत वे दायित्व भी हैं जो बारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के संबंध में हैं, कार्यान्वित करने में समर्थ बनाने के लिए आवश्यक हों।

243यघ - जिला आयोजना के लिए समितियां : (1) प्रत्येक राज्य में जिला स्तर पर, जिले में पंचायतों और नगरपालिकाओं द्वारा तैयार की गई योजनाओं का समेकन करने और संपूर्ण जिले के लिए एक विकास योजना का प्रारूप तैयार करने के लिए, एक जिला आयोजना समिति का गठन किया जाएगा।

(2) राज्य का विधानमंडल, विधि द्वारा निम्नलिखित के संबंध में उपबंध कर सकेगा, अर्थात :-

(क) जिला आयोजना समितियों की संरचना

(ख) वह रीति जिसमें ऐसी समितियों में स्थान भरे जाएंगे।

परंतु ऐसी समिति की कुल सदस्य संख्या के कम से कम चार बटा पांच सदस्य, जिला स्तर पर पंचायत के और जिले में नगरपालिकाओं के निर्वाचित सदस्यों द्वारा, अपने में से जिले में ग्रामीण क्षेत्रों की और नगरीय क्षेत्रों की जनसंख्या अनुपात में निर्वाचित किए जाएंगे;

(ग) जिला योजना में संबंधित ऐसे कृत्य जो ऐसी समितियों को समनुदिष्ट किए जाएंगे;

(घ) वह रीति जिससे ऐसी समितियों के अध्यक्ष चुने जाएंगे।

(3) प्रत्येक जिला आयोजना समिति, विकास योजना तैयार करने में, -

(क) निम्नलिखित का ध्यान रखेगी, अर्थात :-

(i) पंचायतों और नगरपालिकाओं के सामान्य हित के विषय, जिनके अंतर्गत स्थानिक आयोजना, जल तथा अन्य भौतिक और प्राकृतिक संसाधनों में हिस्सा बताना, अवसंरचना का एकीकृत विकास और पर्यावरण संरक्षण है;

(ii) उपलब्ध वित्तीय या अन्य संसाधनों की मात्रा और प्रकार;

(ख) ऐसी संस्थाओं और संगठनों से परामर्श करेगी जिन्हें राज्यपाल आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट करे।

(4) प्रत्येक जिला आयोजना का अध्यक्ष वह विकास योजना, जिसकी ऐसी समिति द्वारा सिफारिश की जाती है, राज्य सरकार को भेजेगा।

243यङ - महानगर आयोजना के लिए समिति - (1) प्रत्येक महानगर क्षेत्र में, संपूर्ण महानगर क्षेत्र के लिए विकास योजना प्रारूप तैयार करने के लिए, एक महानगर आयोजना समिति का गठन किया जाएगा।

(2) राज्य का विधानमंडल, विधि द्वारा निम्नलिखित के लिए उपबंध कर सकेगा, अर्थात :-

(क) महानगर आयोजना समिति की संरचना;

(ख) वह नीति, जिससे ऐसी समितियों के स्थान भरे जाएंगे;

परंतु ऐसी समिति में कम से कम दो-तिहाई सदस्य, महानगर क्षेत्र में नगरपालिकाओं के निर्वाचित सदस्यों और पंचायतों के अध्यक्षों द्वारा अपने में से उस क्षेत्र में नगरपालिकाओं की और पंचायतों की जनसंख्या के अनुपात के अनुसार निर्वाचित किए जाएंगे;

(ग) ऐसी समितियों में भारत सरकार और राज्य सरकार का तथा ऐसे संगठनों और संस्थाओं का प्रतिनिधित्व, जो ऐसी समितियों को समनुदिष्ट कार्य कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक समझे जाएं;

(घ) महानगर क्षेत्र के लिए योजना और समन्वय से संबंधित ऐसे कार्य जो ऐसी समितियों को समनुदिष्ट किए जाएं;

(ङ) वह रीति जिससे ऐसी समितियों के अध्यक्ष चुने जाएंगे।

(3) प्रत्येक महानगर आयोजना समिति, विकास योजना का प्रारूप तैयार करने में -

(क) निम्नलिखित का ध्यान रखेगी, अर्थात -

(i) महानगर क्षेत्र की नगरपालिकाओं और पंचायतों द्वारा तैयार की गई योजनाएं;

(ii) नगरपालिकाओं और पंचायतों के सामान्य हित के विषय, जिनके अंतर्गत उस क्षेत्र की समन्वित स्थानिक योजना, जल तथा अन्य भौतिक और प्राकृतिक संसाधनों में हिस्सा बताना, अवसंरचना का एकीकृत विकास और पर्यावरण संरक्षण है;

(iii) भारत सरकार और राज्य सरकार द्वारा निश्चित समस्त उद्देश्य और प्राथमिकताएं;

(iv) उन निवेशों की मात्रा और प्रकृति जो भारत सरकार और राज्य सकार के अभिकरणों द्वारा महानगर क्षेत्र में किए जाने संभाव्य हैं तथा अन्य उपलब्ध वित्तीय या अन्य संसाधन;

(ख) ऐसी संस्थाओं और संगठनों से परामर्श करेगी जिन्हें राज्यपाल आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट करे।

(4) प्रत्येक महानगर आयोजना समिति का अध्यक्ष, वह विकास योजना, जिसकी ऐसी समिति द्वारा सिफारिश की जाती है, राज्य सरकार को भेजेगा।

3.7.1.2 इसके अलावा बारहवीं अनुसूची, जोकि शहरी स्थानीय निकायों के कार्यों का निर्धारण करती है, भी शहरी स्थानीय निकायों के मुख्य कार्यों के रूप में नगर योजना के साथ शहरी योजना, भूमि उपयोग का विनियमन तथा आर्थिक व सामाजिक विकास हेतु योजना को भी सूचीबद्ध करती है।

3.7.2 पंचायतों, शहरी स्थानीय निकायों, जिला आयोजना समितियों और महानगर आयोजना समितियों की योजनाकारी भूमिकाएं

3.7.2.1 बृहद ग्रामीण पंचायतों की योजनात्मक भूमिका, जोकि आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाओं पर केन्द्रित है तथा जिसमें शहरी स्थानीय निकायों (अथवा संक्रमण में ग्रामीण क्षेत्रों) की तुलना में विकासात्मक योजना के रूप में वर्णित किया जा सकता है तथा जिसमें कार्रवाई योजना, भूमि उपयोग का विनियमन तथा आर्थिक-सामाजिक विकास हेतु योजना भी शामिल है, के बीच एक सुस्पष्ट विभेद किए जाने की आवश्यकता है। यहां जिला आयोजना समितियों और महानगर आयोजना समितियों की व्यापक व बृहद भूमिका, जो कि अपेक्षाकृत ज्यादा बृहद क्षेत्र की समन्वित स्थानिक योजना, पानी की हिस्सेदारी तथा अन्य भौतिक और प्राकृतिक संसाधनों की भागीदारी और बुनियादी संरचनात्मक समेकित विकास तथा पर्यावरण संरक्षण तथा उसी प्रकार अपने कार्य क्षेत्र में पड़ने वाले विभिन्न स्थानीय निकायों की विकास योजनाओं के समेकन पर विशेष बल देती हैं, को भी स्पष्ट किया जाना आवश्यक है।

3.7.3 राज्यों में विधायी प्रावधान

3.7.3.1 संवैधानिक प्रावधानों के आलोक में कई राज्यों ने विभिन्न स्तरों पर योजनाकारी निकायों की संरचना और उनके कार्यों की रूपरेखा निर्धारित करते हुए नए कानून बनाए या मौजूदा पंचायत तथा नगरपालिका कानूनों को संशोधित किया है।

3.7.3.2 उदाहरणार्थ केरल में पंचायत की भूमिका को केरल पंचायत अधिनियम,1994 में निम्नवत परिभाषित किया गया है :-

"प्रत्येक स्तर पर पंचायतें उन्हें निर्दिष्ट कार्यों व कार्यकलापों के संबंध में अपने-अपने संबद्ध पंचायती क्षेत्रों के लिए विनिर्धारित प्रारूप और प्रविधि के अनुसार प्रत्येक वर्ष आगामी वर्ष के बारे में एक विकास योजना तैयार करेंगी और विचारार्थ निर्दिष्ट तिथि से पहले उक्त योजना को जिला आयोजना समिति के कार्यालय में प्रस्तुत करेंगी।

(2) ग्राम सभाओं द्वारा प्रस्तुत योजना प्रस्तावों को ध्यान में रखते हुए ग्राम पंचायते एक विकास योजना तैयार करेंगी।

(3) जहां कहीं, क्षेत्रवार प्राथमिकता और सरकार द्वारा निर्दिष्ट सब्सिडी के लिए नियत मानदंडों का पालन न करने या मसौदा विकास योजना में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति विकास स्कीमों के लिए पर्याप्त निधियां उपलब्ध न हो अथवा उक्त स्कीमें अधिनियम या नियमों के अनुसरण में तैयार न की गई हो, आदि आधार पर जिला आयोजना समिति इस मसौदा विकास योजना में कोई बदलाव लाती है, ऐसी स्थिति में पंचायतें उन बदलावों को मानने के लिए बाध्य होंगी।

(4) वार्षिक और पंचवर्षीय योजनाओं के अलावा पंचायतें आगामी पन्द्रह वर्षों की अवधि का पूर्वानुमान करते हुए एक परिप्रेक्ष्यगत योजना खाता तैयार करेंगी जिसमें अवसंरचनात्मक विकास हेतु व्यापक आयोजना, संसाधनों तथा आगामी विकासपरक आवश्यकताओं पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित किया जाएगा और इस प्रकार ये योजनाएं संबद्ध जिला आयोजना समितियों में प्रस्तुत की जाएंगी।"

3.7.3.3. तमिलनाडु में जिला आयोजना समितियों का गठन तमिलनाडु पंचायत अधिनियम, 1994 में इस प्रकार से परिभाषित किया गया है :-

"सरकार जिले में जिला पंचायतों, पंचायत संघ परिषदों, ग्राम पंचायतों (कस्बाई पंचायतों)[10] नगर परिषदों तथा नगरनिगमों द्वारा तैयार योजनाओं को समेकित करने के लिए तथा पूरे जिले के लिए समग्र रूप से एक विकास योजना का प्रारूप तैयार करने के लिए प्रत्येक जिलों में एक जिला आयोजना समिति का गठन करेगी (जिसे अब से यहां समिति के रूप में संदर्भित किया जाएगा)।"

10 1997 के तमिलनाडु अधिनियम 55 द्वारा प्रविष्ट।

इसकी संरचना की रुपरेखा निम्नानुसार हैः-

(i) *जिला पंचायत का अध्यक्ष;*

(ii) *जिले में नगरनिगम का मेयर;*

(iii) *जिला समाहर्ता;*

(iv) *कमियों की यह संख्या; सरकार द्वारा यथाविनिर्दिष्ट जिला पंचायतों, कस्बा पंचायतों तथा नगरनिगम पार्षदों और जिले में नगरनिगम परिषदों के बीच में निर्धारित कार्यविधि द्वारा चयनित सदस्यों और जिले में शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों की आबादी के समानुपातिक आधार पर चुने गए समिति के सदस्यों की कुल संख्या के चार बटा पांचवे हिस्से से कम नहीं होगी।*

इसके अतिरिक्त, सांसद और विधायक जिला आयोजना समितियों में स्थायी आमंत्रित सदस्य होते हैं तथा इसके साथ ही जिला और नगर निगम अध्यक्षों के चुनाव में निर्वाचकों के रूप में विधान परिषद के सदस्य ही पंजीकृत हैं। यह भी निर्दिष्ट किया जाता है कि जिला पंचायत का अध्यक्ष ही जिला आयोजना समिति का भी अध्यक्ष होता है और जिले का समाहर्ता जिला आयोजना समिति का उपाध्यक्ष होता है। योजना निरूपण के क्षेत्र में जिला आयोजना समिति की भूमिका संविधान के अनुच्छेद 243यघ के अनुरूप पूरे राज्य में समानतः परिभाषित है।

3.7.3.4 तथापि राज्यों में जिला आयोजना समितियों के संगठन तथा उसके अध्यक्ष के संबंध में कई विविधताएं व्याप्त हैं, जो सारणी 3.4 में दर्शाई गई हैं :-

सारणी 3.4 : जिला आयोजना समितियों की संरचना - कुछ राज्यों में विभिन्नता

राज्य	निर्वाचित सदस्य	मनोनीत सदस्य	अध्यक्ष	सचिव
असम (असम पंचायत अधिनियम, 1994)	चार-पांच	एक-पांच	जिला परिषद का अध्यक्ष	जिला परिषद का मुख्य कार्यकारी अधिकारी
कर्नाटक (कर्नाटक पंचायती राज अधिनियम का भाग 301)	चार-पांच	एक-पांच	जिला परिषद का अध्यक्ष	जिला परिषद का सीईओ
केरल	12	3	जिला पंचायत का अध्यक्ष	जिला समाहर्ता
मध्य प्रदेश	चार-पांच	एक-पांच	राज्य सरकार द्वारा नामित मंत्री	जिला समाहर्ता

राज्य	निर्वाचित सदस्य	मनोनीत सदस्य	अध्यक्ष	सचिव
महाराष्ट्र [महाराष्ट्र जिला आयोजना समिति गठन और कार्य अधिनियम]	चार-पांच	एक-पांच	राज्य सरकार द्वारा नामित मंत्री	जिला समाहर्ता
राजस्थान	20	5	जिला परिषद का अध्यक्ष	जिला परिषद का मुख्य योजना अधिकारी
तमिलनाडु (तमिलनाडु पंचायत अधिनियम)	चार-पांच	एक-पांच	जिला पंचायत का अध्यक्ष	जिला पंचायत का मुख्य कार्यकारी अधिकारी
उत्तर प्रदेश	चार-पांच	एक-पांच	राज्य सरकार द्वारा नामित मंत्री	मुख्य विकास अधिकारी
पश्चिम बंगाल	चार-पांच	एक-पांच	जिला परिषद का अध्यक्ष	जिला समाहर्ता

स्रोत : विभिन्न राज्यों से संग्रहित

3.7.3.5 इसी प्रकार महानगर आयोजना समितियों को लेकर भी समस्त राज्यों में प्राथमिक तौर पर उनकी संरचना के बारे में विभिन्नता व्याप्त है। केरल में केरल पंचायत अधिनियम, 1994 के अंतर्गत महानगर आयोजना समितियों के गठन को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है :

"महानगर आयोजना समिति में पन्द्रह सदस्य होंगे, जिनमें से —

(क) दस सदस्य नगरपालिकाओं के चयनित सदस्यों और क्षेत्र की नगरपालिकाओं तथा ग्राम पंचायतों के बीच की आबादी के अनुपात के आधार पर नगरपालिका क्षेत्र में ग्राम पंचायतों के अध्यक्षों के द्वारा या उनके बीच में से चुने जाएंगे।

(ख) पांच सरकार द्वारा नामित होंगे जिनमें से —

(i) एक सरकार में सचिव स्तर का अधिकारी होगा या स्थानीय प्रशासन अथवा लोक प्रशासन से जुड़ा अनुभव प्राप्त महत्वपूर्ण व्यक्ति होगा।

(ii) एक कस्बा नियोजन समिति का कम से कम वरिष्ठ कस्बा नियोजक स्तर का अधिकारी होगा।

(iii) एक लोक निर्माण विभाग से न्यूनतम अधीक्षण अभियंता के रैंक का अधिकारी होगा।

(iv) एक किसी भी सरकारी कार्यालय को अधिकारी होगा जिसका स्तर उप-सचिव स्तर से नीचे नहीं हो;

(v) एक उस जिले का समाहर्ता होगा जहां उक्त महानगर क्षेत्र पड़ता हो अथवा जहां एक से अधिक जिले पड़ते हों उस स्थिति में उनमें से किसी भी एक जिले का समाहर्ता, जिसे सरकार चाहे, होगा।

(3) खंड (क) के उप-खंड (2) में निर्दिष्ट सदस्य राज्य निर्वाचन आयोग के नियंत्रण, पर्यवेक्षण और दिशानिर्देश में चुने जाएंगे तथा उन्हीं में से किसी एक को अध्यक्ष के रूप में चुना जाएगा।"

केरल अधिनियम में यथा-परिभाषित महानगर आयोजना समितियों द्वारा तैयार की जाने वाली योजनाओं की प्रकृति व्यापक रुप से संविधान में यथानिहित प्रावधानों का ही अनुपालन करती है, जो कि इस प्रकार है :

"महानगर आयोजना समितियां निम्नलिखित पर मसौदा विकास तैयार करेगी —

(क) निम्न के संबंध में —

(i) महानगर क्षेत्र में नगरपालिका और पंचायत द्वारा तैयार की गई योजनाएं;

(ii) क्षेत्र की समन्वित स्थानिक योजना, जल की भागीदारी तथा भौतिक और प्राकृतिक संसाधनों की अन्य योजनाओं, अवसंरचना का समेकित विकास और पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ नगरपालिकाओं तथा पंचायतों के समान हितों के मामले;

(iii) केन्द्रीय अथवा राज्य सरकार द्वारा निर्धारित समग्र उद्देश्य और प्राथमिकताएं।"

3.7.3.6 पश्चिम बंगाल में महानगर आयोजना समिति अधिनियम, 1994 में लागू किया गया और वर्ष 2001 में राज्य के मुख्यमंत्री को द्वारा अध्यक्ष चुनते हुए एक महानगर आयोजना समिति गठित की गई। कोलकाता महानगर विकास प्राधिकरण (केएमडीए) महानगर आयोजना समिति का तकनीकी सचिवालय है तथा केएमडीए का सचिव ही महानगर आयोजना समिति का सचिव है। पश्चिम बंगाल देश का अकेला प्रांत है जहां अभी तक महानगर आयोजना समिति वास्तविक रूप से गठित हुई है।

3.7.3.7 महाराष्ट्र में, महानगर आयोजना समिति अधिनियम 1999 में पारित किया गया। इसमें राज्य सरकार द्वारा नामित व्यक्ति को अध्यक्ष बनाया गया है। एमएमआरडीए तथा मिले जुले अधिकारियों को महानगर आयोजना समिति का तकनीकी स्कंध माना गया है और विधायक/सांसद तथा विशेषज्ञों को सदस्य माना जाता है। तथापि, अभी भी महानगर आयोजना समिति का वास्तविक गठन होना वहां शेष है।

3.7.4 पंचायत स्तर पर आयोजना

3.7.4.1 पंचायत स्तर पर संस्थात्मक विकेन्द्रित योजना की संवैधानिक स्कीम अमली तौर पर साकार नहीं हो सकी। इसका एक कारण यह था कि जैसी कल्पना संविधान के अनुच्छेद 243छ में की गई थी, उसके

अनुसार कई राज्यों में कानूनों में पंचायत के सभी स्तरों पर विकास योजनाएं तैयार करने संबंधी वास्तविक प्रावधान नहीं किए गए थे।

3.7.4.2 यहां तक कि उन राज्यों, जहां संबंधित पंचायत अधिनियमों, में ऐसा प्रावधान है, में इस कार्य को गंभीरता से नहीं लिया गया है। इसके भी कई कारण हैं। पहला, कई राज्यों में कार्यों/कार्यकलापों की वास्तविक सुपुर्दगी, नहीं हो सकी है। स्थानीय स्तर के कार्यकलापों के संबंध में शक्तियों और उत्तरदायित्वों की सार्थक सुपुर्दगी न होने पर स्थानीय निकायों से यह उम्मीद भी नहीं की जा सकती कि वे अपने नियत प्रकार्यों को गंभीरता से लागू करेंगे, क्योंकि जिस योजना को वे तैयार करते हैं उसे कार्यान्वित करने का प्राधिकार उनके पास नहीं है। दूसरा, स्थानीय योजना कार्य शुरू करने में स्थानीय निकायों की राह में आने वाली दूसरी बाधा अनाबद्ध निधियों का अभाव है। स्थानीय स्तर की योजनाओं में तात्कालिक स्थानीय आवश्यकताओं और उनके निवारण संबंधी सरोकार परिलक्षित होते है। अतः जब तक पंचायतों के पास स्कीमवार उपयोग हेतु निजी निधियां नहीं होती तब तक इन्हें वास्तविक में नहीं बदला जा सकता, जो परियोजनाबद्ध निधियों द्वारा शामिल नहीं हो सकती उन्हें पूरा करने के लिए स्थानीय निकायों की अनाबद्ध निधियां होनी चाहिए। अंततः हाल ही तक राष्ट्रीय योजना आयोग ने भी स्थानीय शासन स्तर की योजनाओं पर और स्थानीय योजनाओं को राज्य योजनाओं के साथ समेकित करने में कोई खास रूचि नहीं दिखाई थी। राज्य योजना बोर्ड भी व्यापक रूप से स्थानीय योजनाओं के लिए एक व्यवहार्य ढांचा तैयार कराने में नाकाम रहे हैं।

3.7.4.3 उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में स्थानीय निकायों के लिए एक स्वायत्त अधिकार क्षेत्र तैयार करना और इन निकायों के लिए अनाबद्ध निधियों का प्रवाह सुनिश्चित करना स्थानीय स्तर की योजनाओं के सांस्थानीकरण की एक पूर्व शर्त है। इन मुद्दों पर विशिष्ट सिफारिशें इस रिपोर्ट में अन्यत्र की गई हैं।

3.7.4.4 पंचायत योजना - एक समग्र अवधारणा - पंचायत योजनाओं को स्वाभाविक रुप से समग्र योजना जैसा व्यापक होना चाहिए जिसमें बहुविध क्षेत्र समेकित हों जिससे कि वह संविधान में यथा परिकल्पित "आर्थिक विकास तथा सामाजिक न्याय" के लक्ष्यों को हासिल करने का प्रभावी साधन बन सके। दूसरी ओर कुछ केन्द्रीय तौर पर प्रायोजित कार्यक्रमों ने शिक्षा या स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों में बेहतरीन क्षेत्रवार योजनाओं को तैयार किया है। स्थानीय स्तर पर समग्र विकास योजना के लिए सुमेलित क्षेत्रवार योजनाओं का होना अत्यंत आवश्यक है।

3.7.5 जिला स्तर पर आयोजना

3.7.5.1 जिला आयोजना समितियों की भूमिका

3.7.5.1.1 संविधान के अनुच्छेद 243यघ के अंतर्गत मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, जम्मू और कश्मीर तथा राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली के अतिरिक्त प्रत्येक राज्य में जिला स्तर पर गठित की जाने वाली जिला आयोजना समितियों की भूमिका जिले में पंचायतों और नगरपालिकाओं द्वारा तैयार की गई योजनाओं को समेकित करना, और जिले के लिए विकासात्मक योजना का प्रारूप तैयार करना है। अतः जिला आयोजना समिति के गठन के संबंध में कानूनी ढांचा तैयार करने का कार्य राज्य विधानमंडल पर निर्भर है बशर्ते कि इन समितियों की कुल संख्या में 5 में से चार सदस्य जिले शहरी तथा ग्रामीण आबादी के समानुपातिक आधार पर जिला स्तर पर पंचायतों और नगरपालिका के निर्वाचित सदस्यों के बीच में से या उनके द्वारा चुने जाएंगे। जमीनी स्तर पर प्रभावकारी सहभागितापूर्ण योजना सुनिश्चित करने के लिए ग्राम स्तर से ऊपर की सहभागी योजनाओं में पंचायतों की केन्द्रीय भूमिका बनाए रखने की दृष्टि से जिला योजना तंत्र का पुनःअभिमुखीकरण आवश्यक है। ग्यारहवीं योजना के प्रारंभ तथा इसके अंतर्गत संविधान के भाग IX और IXक के अनुरूप जिला योजनाएं तैयार करने का निर्दिष्ट दायित्व सुनिश्चित करने की दृष्टि से योजना आयोग ने भी सितम्बर और नवम्बर 2005 में सभी राज्यों से अनुरोध किया है कि वे संविधान के अनुच्छेद 243यघ के अनुसरण में जिला आयोजना समितियां स्थापित करें।

3.7.5.2 जिला योजनाओं की प्रकृति

3.7.5.2.1 जिला योजनाओं के बारे में भी अच्छी खासी विभ्रमपूर्ण स्थिति बनी हुई है। एक भ्रम तो इनके स्वरूप को लेकर ही है कि क्या यह पंचायत या नगरपालिका योजनाओं का एकत्रीकरण है? वे कौन सी चीजे हैं जिनका निवारण ग्राम पंचायतों, मध्यस्थ पंचायतों और नगरपालिकाओं के सूक्ष्म स्तर पर नहीं किया जा सकता है किन्तु समस्याओं और मुद्दों के समुचित अनुमान के लिए जहां एक बृहद दृष्टिकोण अपनाया जाना जरूरी है, इन प्रश्नों के समुचित और सुस्पष्ट उत्तर अभी भी अनुपलब्ध हैं। दूसरा भ्रम योजनाओं के अधिकार क्षेत्र को लेकर है। क्या जिला योजनाओं में केवल उन्हीं योजनाओं को शामिल किया जाना चाहिए जिनके कार्य स्थानीय निकायों को सौंपे गए है या चूंकि इन योजनाओं का जिले की अर्थव्यवस्था, समाज या भौतिक परिस्थिति पर प्रभाव पड़ सकता है अतः इन्हें स्थानीय शासन निकायों को न सौंपी गई राज्य सरकारी कार्यकलापों में ही शामिल किया जाना चाहिए। यह भी अनुत्तरित प्रश्न है। दूसरे शब्दों में कहें तो क्या जिले के लिए विकास योजना तैयार करने की प्रक्रिया में उच्चतर स्तर की सरकार तथा स्थानीय शासन के अवबोधनों के बीच कोई सुसंगति या समन्वय रखे जाने की

आवश्यकता है? किसी विवाद के मामले में, इसका समाधान कैसे किया जाना चाहिए? कई जिलों तथा महत्वपूर्ण शहरी क्षेत्रों में, जहां विकास कार्यकलापों का निष्पादन सांविधिक रूप से गठित विकास प्राधिकरणों द्वारा किया जाता है वहां यह कहा जाता है कि इस प्रश्न के बारे में संतोषजनक उत्तर निरंतर अभ्यासपूर्ण समय के साथ ही मिल सकेगा। लेकिन इस बात को उन्हें स्वीकार करने या उचित रूप से निवारण न करने के लिए एक अन्यत्रता के रूप में नहीं लिया जा सकता। इस संदर्भ में यह अत्यंत आवश्यक है कि जिला योजना की अवधारणा में और अधिक सुस्पष्टता लाई जाए। जिला योजना का वास्तविक सार जिले में ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों के लिए एक समेकित योजना सुनिश्चित कराना है।

बॉक्स 3.5 योजना आयोग द्वारा जारी दिशानिर्देश

जिले के लिए योजनाओं की तैयारी के दौरान निम्नलिखित कार्यविधि का अनुपालन किया जाना चाहिएः

- योजना प्रक्रिया ग्राम स्तर पर शुरू होनी चाहिए। ग्राम सभाओं से उभरती हुई प्राथमिकताओं तथा मांगों के आधार पर ग्राम पंचायतें अपनी योजनाओं को अंतिम रूप देंगी तथा मध्यस्थ पंचायत द्वारा शुरू की जाने वाली परियोजनाओं/ कार्यकलापों में अपने सुझाव देंगी। ग्राम पंचायत योजना को योजना के कार्यान्वयन के लिए जुटाए जाने वाले सामुदायिक अंशदान का आकलन भी प्रस्तुत करना चाहिए।
- ग्राम पंचायत से प्राप्त सुझावों और प्राथमिकताओं के आधार पर मध्यस्थ पंचायतें अपनी योजनाएं तैयार करेंगी। मध्यस्थ स्तर पर कार्यान्वित की जाने वाली परियोजनाएं तथा गतिविधियां इसकी योजना में शामिल की जाएंगी तथा जिनमें एक से अधिक मध्यस्थ पंचायतों की संलग्नता हो पूरी परियोजनाएं, जिला पंचायत योजना में शामिल कराने के लिए जिला पंचायत को भेजी जाएगी।
- जिला पंचायत मध्यस्थ पंचायतों से प्राप्त सुझावों तथा अपनी निजी प्राथमिकताओं के आधार पर अपनी योजना तैयार करेगी।
- जिला योजना तीनों स्तर की पंचायतों से प्राप्त योजनाओं तथा जिले शहरी स्थानीय निकायों के आधार पर जिला योजना समिति द्वारा तैयार किया जाएगा।
- सभी स्थानीय निकाय जिला योजना के विभागीय घटक में शामिल किए जाने के लिए पृथक सुझाव देने के लिए प्राधिकृत होंगे।
- किसी भी राज्य में जिला योजनाओं पर किए जाने वाले परिव्यय की कुल राशि उस राज्य की सकल योजना परिव्यय की 40 प्रतिशत के लगभग हो सकती है।
- जिला आयोजना समिति ग्रामीण तथा शहरी स्थानीय शासन से प्राप्त सभी योजनाओं को समेकित करेगा और उन्हें जिले की विभागीय योजना में समेकित करेगा और वार्षिक योजना तथा पंचवर्षीय योजना का मसौदा तैयार करेगा।

योजना आयोग का निर्णय है कि "जिला योजना प्रक्रियाएं" राज्यों की ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012) तथा वार्षिक योजनाओं की तैयारी का एक अभिन्न भाग होना चाहिए। आयोजना की इश प्रक्रिया का नीचे से ही सांस्थानीकरण करना आवश्यक है।

3.7.5.2.2 बहु-स्तरीय योजना के इस दौर में विभिन्न स्तरों को जानकारियां और दक्षता मुहैया कराना भी एक अहम समस्या है, जिसका सम्यक समाधान खोजा जाना जरूरी है। इस संबंध में स्थानीय निकायों को यथा आवश्यक निविष्टियां उपलब्ध कराने के लिए प्रत्येक जिले में एक प्रतिबद्ध केन्द्र स्थापित करने पर भी विचार किया जा सकता है। इसके साथ ही यह भी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि उच्चतर

स्तर से स्थानीय स्तर के शासनों तक तथा विलोमतः प्रवाही एक दोतरफा सूचना प्रवाह भी बरकरार रहे। उन्नत सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में यह कार्य कोई खास कठिन नहीं होना चाहिए।

बॉक्स 3.6 : जिला आयोजना समितियों का समर्थक ढांचा - विशेषज्ञ दल की सिफारिशें

इस संबंध में जमीनी स्तर पर आयोजना पर विशेषज्ञ दल द्वारा निम्नलिखित सिफारिशें प्रस्तुत की गई हैं :

- सीएसएस के दिशानिर्देश, कि जिला स्तरीय योजना बनाने तथा उनके कार्यान्वयन का काम डीआरडीए और जिला स्वास्थ्य समितियों आदि जैसे समानांतर निकायों को सौंपा जाए, में इस प्रकार से संशोधन किए जाने की आवश्यकता है जिससे कि जिला स्तरीय योजना प्रक्रिया में जिला आयोजना समिति को भी शामिल किया जा सके।
- योजना आयोग को सभी राज्यों को सूचित करना चाहिए कि जिला आयोजना समिति ही वह एकल निकाय है जिसे जिला स्तर पर योजनाओं के समेकन का काम सौंपा गया है।
- योजना आयोग एक समय सीमा निर्धारित करे जिसके भीतर जिला आयोजना समिति के कार्यों के निष्पादन के तौर तरीकों को शामिल करते हुए सभी राज्यों के लिए विस्तृत हिदायतें व अनुदेश जारी करना जरूरी हो।
- जिला योजना इकाई के प्रमुख के रूप में एक व्यावसायिक रूप से दक्ष तथा पूर्णकालिक जिला योजना अधिकारी को अवश्य ही होना चाहिए। यदि ऐसा कोई व्यक्ति सरकार में उपलब्ध न हो तो संविदात्मक अनुबंध या आउटसोर्स के द्वारा व्यावसायिक रूप से पक्ष ऐसे व्यक्ति को लाने पर विचार किया जाए तथा उसे लागू किया जाए।
- योजना, प्रबंधन और मूल्यांकन में जिला आयोजना समिति को सहायता प्रदान करने की दृष्टि से जिला तथा राज्य, दोनों ही स्तर पर विश्व विद्यालयों तथा शोध संस्थाओं के माध्यम से संस्थात्मक सहयोग व समर्थन को अभिचिन्हित किया जाए।
- योजना आयोग को जिला योजनाओं के लिए अपेक्षित और आवश्यक सहयोग तथा समर्थन, जो अब केवल जिला आयोजना समितियों को ही दिया जाएगा, पहले की भांति जारी रखना चाहिए।
- विशेषज्ञ को व्यक्तिगत रूप से या दल के रूप में काम करने के लिए रखा जा सकता है। उन्हें अंशकालिक आधार पर, अनुबंध के आधार पर या आवश्यकता हो तो पूर्णकालिक रूप से रखा जा सकता है।
- यह राज्य सरकारों का काम है कि वे जिला आयोजना समितियों को सहायता व सहयोग प्रदान करने के लिए रखे जाने वाले विशेषज्ञों की संख्या निर्धारित करें, उन्हें अंशकालिक आधार पर भी रखा जा सकता है। यह कार्य प्रत्येक राज्य में सुपुर्दगी के विस्तार पर निर्भर होगा।
- यद्यपि आदर्श नीति यही होगी कि उन्हें स्थानीय रूप से ही लिया जाए किन्तु आवश्यक हो तो उन्हें जिले के अधिकतर क्षेत्र के बाहर से भी लिया जा सकता है। यदि आवश्यक हो तो यह ध्यान अवश्य रहे कि यह भागीदारी स्वैच्छिक हो तथा राजनीतिक पक्षपात से ऊपर हो और विभिन्न दृष्टिकोणों का सम्मान करने में सक्षम हो, भी सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है।
- छोटे तथा मध्यम आकार के कस्बों के तेजी से होते शहरीकरण के साथ ही स्थानीय संसाधनों की हिस्सेदारी, क्षेत्र योजना,भूमि तथा कचरा और मल-जल निपटान तथा पंचायतों और नगरपालिकाओं के बीच घनिष्ठ तालमेल के लिए अपेक्षित अन्य सभी मामलों पर योजना बनाने में जिला आयोजना समिति को सहयोग देने के लिए नगरपालिका तथा शहरी-ग्रामीण मामलों पर विशेषज्ञों की सेवाओं की विशेष आवश्यकता है।
- जिला आयोजना समिति निरूपण तथा समेकन दोनों ही प्रक्रियाओं के लिए कुछ क्षेत्रीय उप-समितियां गठित कर सकती है।
- यह पुरजोर सिफारिश की जाती है कि प्रत्येक मध्यस्थ पंचायत को एक नियोजक और आंकड़ा यूनिट मुहैया कराई जाए जो कि इंजीनियरिंग, कृषि, जल-संभर विकास, महिला तथा बाल कल्याण, सार्वजनिक स्वास्थ्य आदि जैसी विविध सेवाओं (जिनके लिए योजना तथा कार्यान्वयन में सहयोग हेतु ग्राम सभाओं द्वारा अनुरोध किया जा सकता है) के लिए संकेन्द्रित सेवाओं के एक पूल के रूप में कार्य कर सकती है तथा जिन्हें प्रत्येक मध्यस्थ पंचायत के स्तर पर एक संसाधन केन्द्र की बृहतर अवधारणा के साथ भी समेकित और सुमेलित किया जा सकता है।
- जिला आयोजना समिति का एक आधारभूत कार्य जिले में विकेन्द्रित योजना के लिए क्षमता निर्माण करना है। समुचित योजना की राह में एक भारी अड़चन मध्यस्थ तथा ग्राम पंचायतों के स्तर पर योजना सहयोग जुटाने वाले कर्मचारियों का अभाव और बेहतर तथा बोधगम्य संसूचनाओं की अनुपलब्धता है।
- जिला आयोजना समिति को कल्पनादृष्टि दस्तावेजों की तैयारी हेतु महत्वपूर्ण अवलंबों, डाटाबेस के रख-रखाव, योजनाकारों के प्रशिक्षण, परिणामों के मूल्यांकन, कार्यनिष्पादन का आंतरिक मूल्यांकन तथा परिणामों का स्वायत्त और स्वतंत्र मूल्यांकन का कार्य भी सौंपा जाना चाहिए।

3.7.5.2.3 यह सुनिश्चित करने कि संविधान में यथानिहित परिकल्पना के अनुसार ही योजना की अवधारणा जमीनी स्तर से तैयार हो, के क्रम में राष्ट्रीय योजना आयोग ने दिशानिर्देश जारी किए हैं (बॉक्स 3.5 में देखें)। इन दिशानिर्देशों पर अमल करने की आवश्यकता है। इन निर्देशों में जिला आयोजना समितियों द्वारा स्थानीय शासन संस्थाओं से परामर्श करते हुए जिले के लिए एक दूरदर्शी खाका तैयार किया जाना भी शामिल है। अन्य चीजों के साथ-साथ यह दस्तावेज अथवा खाका विभिन्न क्षेत्रों में जिले की प्राप्ति का विश्लेषण करेगा, पिछड़ेपन के कारणों की पहचान करेगा और समस्याओं के समाधान की राह में आने वाली बाधाओं तथा अड़चनों की ओर इशारा भी करेगा। इस प्रकार यह दस्तावेज स्थानीय शासन संस्थाओं द्वारा योजनाओं की तैयारी के लिए एक रूपरेखा भी मुहैया कराएगा।

3.7.5.2.4 विकेन्द्रीकृत योजना में विकेन्द्रीकृत परामर्श और स्थिति का जायजा लेने की प्रक्रिया भी समावेशित होनी चाहिए। इसके साथ ही स्थानीय निकाय स्तर पर योजना तथा तदंतर समेकन और एकीकरण प्रक्रिया भी अनुपालित होनी चाहिए। जमीनी स्तर पर योजना संबंधी एक विशेषज्ञ समूह, जिसकी अध्यक्षता श्री वी. रामचन्द्रन कर रहे थे, ने ग्राम पंचायत स्तर, मध्यस्थ पंचायत और जिला स्तर जैसे विभिन्न स्तरों पर योजना प्रक्रिया से संबंधित विस्तृत ब्यौरों का अध्ययन किया। पंचायती राज मंत्रालय द्वारा उनकी सिफारिशों को स्वीकार किया गया है और मंत्रालय उनके कठोर अनुपालन, विशेषकर जिला आयोजना समितियों की क्षमता को सुदृढ़ बनाने के उपायों के संबंध में, की मॉनीटरिंग कर रहा है। विशेषज्ञ समूह ने विस्तृत सिफारिशें की है (देखें बॉक्स 3.6)।

3.7.5.2.5 जिला आयोजना समितियों का गठन - देश भर के राज्यों में मौजूदा प्रास्थिति सारणी 3.5 में दी गई है -

सारणी 3.5 : राज्यों में जिला आयोजना समिति के गठन की प्रास्थिति (अनुच्छेद 243यघ)

क्रम सं0	राज्य/सं.रा.क्षे.	जिला आयोजना समितियों के गठन की स्थिति
1	आन्ध्र प्रदेश	अभी तक गठित नहीं। तथापि, आन्ध्र प्रदेश सरकार द्वारा दिसम्बर, 2003 में जिला आयोजना समितियों के गठन के लिए एक अध्यादेश जारी किया गया है।
2	अरूणाचल प्रदेश	गठित नहीं
3	असम	गठित नहीं

क्रम सं0	राज्य/सं.रा.क्षे.	जिला आयोजना समितियों के गठन की स्थिति
4	बिहार	38 में से 37 जिलों में तदर्थ आधार पर गठित जिला आयोजना समितियों का अध्यक्ष जिला पंचायत का अध्यक्ष हैं
5	छत्तीसगढ़	गठित है, मंत्री जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष है
6	गोआ	गठित है, जिला पंचायत का अध्यक्ष ही जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष भी है
7	गुजरात	गठित नहीं
8	हरियाणा	19 में से कुवल 16 जिलों में
9	हिमाचल प्रदेश	कुल 12 में केवल 6 जिलों में गठित। जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष मंत्री है
10	कर्नाटक	गठित है। जिला पंचायत का अध्यक्ष जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष है
11	झारखंड	पंचायत चुनाव अभी होने हैं
12	केरल	हां, जिला पंचायत का अध्यक्ष ही जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष है
13	मध्य प्रदेश	हां, जिला प्रभारी मंत्री अध्यक्ष हैं
14	महाराष्ट्र	गठित नहीं
15	मणिपुर	हां, 4 में से 2 जिलों में गठित है। अध्यक्ष जिला पंचायत ही अध्यक्ष है
16	उड़ीसा	केवल 26 जिलों में मंत्री जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष है
17	पंजाब	गठित नहीं

क्रम सं0	राज्य/सं.रा.क्षे.	जिला आयोजना समितियों के गठन की स्थिति
18	राजस्थान	गठित। जिला पंचायत का अध्यक्ष जिला आयोजना समिति अध्यक्ष है
19	सिक्किम	हां
20	तमिलाडु	हां, जिला पंचायत का अध्यक्ष जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष है
21	त्रिपुरा	गठित नहीं
22	उत्तर प्रदेश	गठित नहीं
23	उत्तराखंड	गठित, मंत्री जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष है
24	पश्चिम बंगाल	गठित, जिला पंचायत का अध्यक्ष इसका भी अध्यक्ष है
25	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	गठित, जिला पंचायत का अध्यक्ष ही जिला आयोजना समिति का भी अध्यक्ष है
26	चंडीगढ़	गठित नहीं
27	दादरा एवं नागर हवेली	गठित, जिला पंचायत का अध्यक्ष ही जिला आयोजना समिति का भी अध्यक्ष है
28	दमन और दीव	गठित, जिला पंचायत का अध्यक्ष ही जिला आयोजना समिति का भी अध्यक्ष है
29	लक्षद्वीप	गठित, समाहर्ता-सह-विकास आयुक्त जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष है
30	पांडिचेरी	गठित नहीं। पंचायत चुनाव नहीं हुए

स्रोत : पंचायती राज मंत्रालय की वेबसाइट

3.7.5.3 राज्यों में जिला आयोजना समितियों की संरचना

3.7.5.3.1 जिला आयोजना समितियों के गठन के बारे में राष्ट्रीय शहरी कार्य संस्थान का अवलोकन इस प्रकार है :

"इनमें अरूणाचल प्रदेश, असम, बिहार, छत्तीसगढ़, हरियाणा, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल शामिल हैं। जिला आयोजना समितियों के सदस्यों की संख्या सभी राज्यों में अलग-अलग है। साधारणतया इनमें जिले का प्रभारी मंत्री, निगम का मेयर, परिषद का अध्यक्ष, जिला परिषद/पंचायत का अध्यक्ष, स्थानीय निकायों (शहरी तथा ग्रामीण दोनों) के निर्वाचित सदस्य, विशेष आमंत्रित सदस्य (जो कि सांसद, विधायक, विधान परिषद सदस्य आदि होते हैं), नामित सदस्य, प्रभागीय आयुक्त, जिला समाहर्ता, जिला योजना अधिकारी, जिला सांख्यिकी अधिकारी, आदि अधिकारी शामिल होते हैं। जहां तक जिला आयोजना समितियों के कार्यकलापों का संबंध है, यह समझा जाता है कि कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु में जिला आयोजना समितियां गठित हो चुकी हैं और तकनीकी तौर पर वे कामकाज कर रही हैं। तथापि यह पता चला है कि कर्नाटक राज्य में ये अपेक्षा के अनुरूप काम नहीं कर रही हैं। वास्तव में दक्षिण भारतीय राज्यों में अकेले केरल ही वह प्रांत है जहां जिला आयोजना समितियां सक्रिय और संक्रियात्मक रूप से विद्यमान है। मध्य प्रदेश के संबंध में, यह पता चला है कि यहां जिला आयोजना समितियों को कोई अधिशासी शक्तियां नहीं दी गई हैं। छत्तीसगढ़ में जिला आयोजना समितियां कुल मिलाकर सक्रिय नहीं है और जिला आयोजना समितियों की कोई बैठक भी आयोजित नहीं हुई [11]।"

3.7.5.3.2 जहां तक जिला आयोजना समितियों के अध्यक्षों का प्रश्न है इस संबंध में मुख्यतः दो व्यापक पद्धतियां देखी गई हैं। पहला, किसी राज्य मंत्री का इसके अध्यक्ष पद पर रहना (जो कि महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश में हैं) तथा दूसरा है जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष जिला परिषद, अध्यक्ष/जिला पंचायत प्रधान को बनाया जाना (यह पद्धति केरल, पश्चिम बंगाल कर्नाटक आदि में लागू है)। यह मामला प्रकारान्तर से राज्यों से जिलों तथा स्थानीय निकायों के होने वाले विकेन्द्रीकरण के व्यापक मामले से भी घनिष्ठ रूप से जुड़ जाता है। क्या जिला पंचायत या जिला परिषद को भविष्य में जिला शासन में कोई अहम या बड़ी भूमिका निभानी चाहिए या नहीं यह वह मामला है, जिसका विश्लेषण अनुवर्ती पैराग्राफों में किया जाएगा।

11 एनआईयूए, 74वें संवैधानिक संशोधन का प्रभाव

3.7.5.4 ग्रामीण शहरी विभेद और जिला आयोजना समिति की तुलना में जिला परिषद की दीर्घावधिक भूमिका

3.7.5.4.1 आयोग का दृष्टिकोण है कि संविधान के 73वें तथा 74वें संशोधन द्वारा सृजित सभी संस्थाओं में जिला आयोजना समिति (डीपीसी) एक ऐसी संस्था है, जो अभी भी कई राज्यों में एक प्रभावी संस्था के तौर पर उभर पाने में नाकाम रही है। कई राज्यों ने तो जिला आयोजना समिति का गठन तक नहीं किया। इसके अलावा इस संस्था के साथ कई अंतर्निहित समस्याएं भी जुड़ी हुई हैं। किसी भी विकासशील राज्य में शासन चाहे किसी भी स्तर का क्यों न हो योजना उनका एक अनिवार्य कार्यकलाप होता है। विकास योजनाओं के कार्य शुरू करने के लिए शासन की संरचना से स्वतंत्र एक पृथक प्राधिकरण के सृजन का कोई औचित्य नहीं है। संविधान की विकेन्द्रीकरण स्कीम के अंतर्गत जिला आयोजना समिति ही एकमात्र ऐसा निकाय है, जहां कुल सदस्यों में से पांच बटा एक सदस्य नामांकित किए जा सकते हैं। नामित सदस्य जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष भी हो सकता है। संकीर्ण राजनीतिक निहितार्थों की राह पर सदस्यों को अभिप्रेरित करने के लिए शासक पार्टी द्वारा इस नामांकन का उपयोग एक सुविधाजनक साधन के तौर पर भी किया जा सकता है। कुछ राज्यों में समिति का प्रमुख किसी मंत्री को बनाने का चलन है। इस प्रकार यह जिला आयोजना समिति को स्थानिक निकाय से कही सुदृढ़ शक्ति केन्द्र के रूप में परिवर्तित करता है। इसके अलावा जिला आयोजना समिति पंचायत और नगरपालिका प्रणाली में अकेली समिति है और इन दोनों के बीच कोई अवयव संबंधी जुड़ाव भी नहीं है। आंशिक रूप से अप्रत्यक्ष निर्वाचन और अंशतः नामांकन के जरिए गठित होने के कारण यह निकाय न तो सीधे जनता के प्रति जबावदेह हैं और न ही पंचायती राज संस्थाओं और नगरपालिका प्रणाली के प्रति। इन्हीं सब खामियों के चलते अपने वर्तमान स्वरूप में जिला आयोजना समिति लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में कोई योगदान दे पाने में मुश्किल से ही समर्थ हो सकती है। इस तथ्य कि, प्रत्येक प्रमुख केंद्र-प्रायोजित स्कीमों के लिए पृथक जिला योजना अपेक्षित है, के चलते स्थिति और भी जटिल हो गई है।

3.7.5.4.2 तथापि, यह इंगित किया जा सकता है कि दिशानिर्देशों के अधीन केरल में जिला आयोजना समिति स्थानीय निकायों को तकनीकी दिशानिर्देश प्रदान करते हुए, अन्य तकनीकी बातों के लिए स्थानीय योजनाओं की जांच करते हुए, स्कीमों की अतिव्याप्ति और पुनरावृत्ति के निवारण तथा जिला योजनाओं की तैयारी के लिए विभिन्न स्थानीय शासन के स्तरों पर आयोजना संबंधी कार्यो के समन्वय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जब सभी स्थानीय निकायों से अपने संबंधित क्षेत्रों के लिए योजनाएं तैयार करना अपेक्षित होता है तब यह आवश्यक है कि उपरोक्त कार्यकलाप जिला स्तर पर निष्पादित किए जाएं।

3.7.5.5 जिला परिषद - जिला आयोजना समितियों की तुलना में संगतता

3.7.5.5.1 कुछ स्थानों में यह आग्रह है कि कठोर बोधात्मक संदर्भों में लें तो केवल ग्राम पंचायत और नगरपालिका ही स्थानीय शासन के तौर पर स्वीकारी जा सकती है। यह भी महत्वपूर्ण है कि कराधान की शक्ति, जो कि सरकारी प्राधिकरण होने का एक प्रमुख संकेत है, सभी स्थानीय निकायों में से इन्हीं दो निकायों द्वारा व्यवहार में लाई जाती है। दूसरी ओर पारंपरिक रूप से देखें जो जिला हमारे देश के प्रशासन की एक अपरिहार्य इकाई है। इस प्रकार यदि स्थानीय प्रशासन का लोकतांत्रिकरण ही इस सारी कवायद का अंतिम उद्देश्य है तो जिला स्तर पर एक प्रातिनिधिक निकाय होना ही चाहिए जैसाकि ज्यादातर राज्यों मं कहा गया है। एक जिला परिषद या जिला पंचायत होने का औचित्य इसी पर निर्भर करता है। यहां तक कि जब अंग्रेजों ने भी देश में स्थानीय स्व-शासन की शुरूआत की तो जिला बोर्डों की स्थापना की गई। इस प्रकार हम देखते है कि जिला पंचायतों की अपनी एक सुदीर्घ परंपरा रही है। इसकी तुलना में मध्यस्थ पंचायत कहीं नई अवधारणा है - बल्कि कहा जा सकता है कि बलवंत राय मेहता समिति की रिपोर्ट की देन है। अशोक मेहता समिति ने दो स्तरीय संरचना की सिफारिश की थी।

3.7.5.5.2 दूसरी तरफ नगरपालिकाओं या निगमों के रूप में शहरी क्षेत्र में स्थानीय शासन की एक अलग व्यवस्था कायम है। पंचायत के विभिन्न स्तरों पर एक संस्थात्मक संपर्क भी विद्यमान है क्योंकि निचले स्तर का अध्यक्ष ऊंचे के स्तर में सदस्य होता है। इनके बीच प्रचालनात्मक संपर्क भी होता है क्योंकि उच्चतर स्तर के लिए निचले स्तर से पूरी तरह से असंबद्ध रहते हुए अपने कामकाज को कर पाना खासा मुश्किल होता है और इसी प्रकार निचला स्तर भी अक्सर अपने कार्यों तथा दायित्वों के सफल निर्वाह के लिए अपने उच्च-स्तरीय शासन के सहयोग और सहायता पर ही निर्भर होता है। दूसरी ओर, शहरी स्थानीय निकाय स्वतंत्र रूप से कार्य करते हैं और न केवल एक-दूसरे से बल्कि पंचायत प्रणाली से भी अलग रहते हैं।

3.7.5.5.3 यह संस्थागत व्यवस्था, जिसके अंतर्गत पंचायतों को केवल ग्रामीण तथा नगरपालिकाओं को केवल शहरी क्षेत्र का प्रबंध करना होता है, गांवों और कस्बों के सूक्ष्म स्तर पर ही कार्य करती है तो उक्त भेद समाप्त हो जाता है। उदाहरणार्थ किसी जिले की विकास योजनाओं में शहरी तथा ग्रामीण दोनों ही सरोकारों को ध्यान में रखना होता है। जिला योजनाएं, दो पृथक योजनाओं, एक जिसमें ग्रामीण के लिए सूक्ष्म स्तरीय योजनाएं शामिल हों, तथा दूसरी किसी अलग कस्बे के लिए शामिल योजनाओं के लिए

हों, के समूह से बढ़कर कोई और ही चीज है। जैसाकि एक सूक्ष्म स्तर से मध्यम तथा बृहदतर स्तर तक बढ़ती है, इसके अनुरूप उनकी परिप्रेक्ष्य योजनाओं के परिप्रेक्ष्य और प्राथमिकताएं भी बदलती हैं। इस परिवर्तन को संविधान मानता है और तदनुसार विनिर्दिष्ट करता है कि पृथक पंचायत या नगरपालिका योजना से विशिष्ट होने के नाते जिला योजना को पंचायतों और नगरपालिकाओं के बीच समान हितों वाले मामलों पर ही ध्यान देना चाहिए। अन्य शब्दों में कहें तो इसका सीधा अर्थ है कि ग्रामीण और शहरी क्षेत्र की विकास संबंधी आवश्यकताओं को एक समेकित तरीके से ही निपटाया जाना चाहिए और इसके लिए जिला योजना, जो कि गांवों और कस्बों से युक्त एक व्यापक क्षेत्रीय योजना है, को स्थानिक योजना, भौतिक तथा प्राकृतिक संसाधनों, एकीकृत अवसंरचनात्मक विकास और पर्यावरण संरक्षण (अनुच्छेद 243यघ(3)जैसे घटकों पर भी पूरा पूरा ध्यान देना चाहिए। ये सभी महत्वपूर्ण हैं क्योंकि ग्रामों और कस्बों के बीच के संबंध अन्योन्य अनुपूरक हैं। दोनों ही एक दूसरे की आवश्यकता है। उद्योग लगाना, व्यापार, कारोबार जैसे काम और उच्च शिक्षा, विशिष्ट स्वास्थ्य सेवा, संचार आदि विविध सेवाओं का उत्पादन ग्रामीण जनता के विकास व कल्याण पर भी प्रभाव डालता है। इसी प्रकार शहरी केन्द्रों का सम्यक व क्रमिक विकास भी ग्रामीण अन्तःक्षेत्र में संस्थापित आंगिक संयोजन पर निर्भर करता है।

3.7.5.5.4 विकेन्द्रित व्यवस्था के इस दौर में इस प्रकार एक ऐसे निकाय की आवश्यकता है जो ग्रामीण तथा शहरी अलग-अलग निकायों के बीच समन्वय स्थापित कर सके और इसी के साथ-साथ वह अलग-अलग स्थापित इन स्थानिक निकायों द्वारा पृथक रूप से निष्पादित न किए जा सकने वाले स्थानीय शासन के ऐसे कार्यों का उत्तरदायित्व भी निभा सके, जैसाकि पहले भी स्पष्ट किया गया था। जिला आयोजना समिति इस कार्य के लिए एक अनुपयुक्त संस्था है। इस परिप्रेक्ष्य में जिला शासन की अवधारणा प्रासंगिक दिखती है। यह महसूस किया जाता है कि जिला पंचायत या जिला परिषद जिला शासन की इस भूमिका में पूरी तरह से खरी उतरती है बशर्ते कि उसके अधिकार क्षेत्र को विस्तारित कर उसे सहर्ष जिले तक व्यापक बना दिया जाए। इसके सदस्यों को ग्रामीण तथा शहरी, दोनों ही क्षेत्रों से चुना जा सकता है। इस स्कीम के अंतर्गत स्थानीय शासन की संस्थाओं में ग्रामीण शहरी भेद अलग-अलग नगरपालिकाओं और पंचायतों के मध्यस्थ स्तर तक ही रहेगा। जिला स्तर पर यह भेद गायब हो जाएगा और इस स्तर पर स्थानीय शासन शहरी तथा ग्रामीण, दोनों ही क्षेत्रों का संतुलित प्रतिनिधित्व करेगा। ऐसी स्थिति में आज की तुलना में जिला पंचायतें कहीं ज्यादा सार्थक और कारगर भूमिकाएं निभा सकेंगी। वास्तव में जैसे-जैसे और मध्यस्थ पंचायतें स्व-शासन की

संस्थाओं के रूप में अपना कार्यकलाप करना शुरू करेंगी वैसे-वैसे ही ग्रामीण क्षेत्रों के प्रातिनिधिक निकाय के तौर पर केवल जिला पंचायत की भूमिका आवश्यकता कम से कमतर होती चली जाएगी। लेकिन संपूर्ण जिले के शासन के रूप में बढ़ी हुई इसकी नई भूमिका के चलते यह लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की परियोजना को एक नया आयाम दे सकती है। जैसाकि पिछले स्थानों में पहले भी बताया गया है, जिला समाहर्ता के मौजूदा पद को उक्त जिला प्रशासन के मुख्य अधिकारी के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है, जो कि सभी स्थानीय मामलों में निर्वाचित जिला शासन के प्रति पूरी तरह से उत्तरदायी होगा। यह कोई नया विचार नहीं है। 1980 में कर्नाटक राज्य ने जिला प्रशासन की अवधारणा पर एक प्रयोग किया था। वर्ष 1988 में विकेन्द्रीकरण पर प्रस्तुत एक रिपोर्ट के आधार पर केरल में वर्ष 1991 में जिला परिषदों का गठन किया गया तथा यह पूरे एक वर्ष तक जारी रहा। जिला परिषद के अधिकार क्षेत्र को बढ़ाकर पूरे जिले तक करने और मौजूदा रूप में विद्यमान जिला आयोजना समिति को समाप्त करने का सुझाव भी समाज विज्ञान संस्थान द्वारा दिया गया। यह सुझाव उन्होंने राष्ट्रीय संविधान कार्यकरण समीक्षा आयोग (2001) को प्रस्तुत अपने परामर्शी पत्र में दिया था। हाल ही में राष्ट्रीय सलाहकार परिषद ने भी इसी प्रकार के कुछ सुझाव दिए हैं जो निम्नानुसार है :-

- स्थानीय शासन का जिला स्तर शहरी तथा ग्रामीण दोनों ही जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करे।
- जिला स्तर पर शहरी तथा ग्रामीण दोनों ही जनसंख्या के लिए एक ही प्रतिनिधि निकाय के चुनाव की दृष्टि से तदनुसार संविधान के अनुच्छेद 243(घ) को संशोधित किए जाने की आवश्यकता है।
- चूंकि जिला स्तर ही शहरी तथा ग्रामीण, दोनों ही क्षेत्रों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व कर रहा है। अतः जिला आयोजना समिति का मौजूदा प्रारूप अनुपयोगी और व्यर्थ है अतः इस संदर्भ में अनुच्छेद 243यघ को निरसित किया जा सकता है।

3.7.5.5.5 तथापि, विभिन्न स्थानीय निकायों पर योजना प्रक्रियाओं में समन्वयन करने, उन्हें तकनीकी दिशानिर्देश उपलब्ध कराने, तकनीकी और वित्तीय क्षमता सुनिश्चित करने के लिए स्थानीय योजनाओं की जांच करने, स्कीमों के दोहराव और अतिव्याप्ति से बचने और जिला योजना की तैयारी करने के लिए योजना क्षमता से लैस एक प्रतिबद्ध समिति का होना अत्यंत आवश्यक होगा। उक्त समिति जिला परिषद की अधीनता में रहकर कार्य कर सकती है।

3.7.5.5.6 महानगरीय क्षेत्रों, जो कि प्रायः एक या अधिक जिलों तक फैले होते हैं, के मामले में संविधान द्वारा महानगर आयोजना समिति के रूप में एक वैकल्पिक संस्थात्मक संरचना का बाध्यकारी

प्रावधान किया हुआ है और इसके योजना संबंधी कार्यों को जिला आयोजना समिति/जिला परिषद के कार्यकलापों के साथ पूरी तरह से सुसंगत और सामंजस्य युक्त होना होगा जिस पर इस अध्याय में बाद में चर्चा की जाएगी।

3.7.5.6 सिफारिशें :

(क) ग्रामीण तथा शहरी दोनों ही क्षेत्रों से प्रतिनिधित्व शामिल करते हुए सभी जिलों में जिला परिषद गठित की जाएं। इसे संविधान के अनुच्छेद 243छ तथा 243ब के अनुरूप प्रदत्त शक्तियों तथा कार्यकलापों के प्रयोग की शक्तियां प्राप्त हों। इस स्थिति में जिला आयोजना समितियां या तो रहेगी ही नहीं या रहेगी तो ज्यादा से ज्यादा जिला परिषद की एक सलाहकारी अवयव बन कर ही रहेगी। इस विचार को सुसाध्य बनाने के क्रम में तदनुसार संविधान के अनुच्छेद 243घ को संशोधित किया जाना चाहिए।

(ख) इस बीच विद्यमान संवैधानिक स्कीम के अनुरूप स्थानीय निकायों के चुनावों के पूरा होने के तीन महीनों के भीतर सभी राज्यों में जिला आयोजना समितियों का गठन किया जाना चाहिए और जिले में योजना तैयार करने का यह अकेला निकाय होना चाहिए। जिला आयोजना समितियों की सहायता योजना कार्यालय द्वारा की जाए जिसका प्रमुख एक पूर्णकालिक जिला योजना अधिकारी होगा।

(ग) शहरी जिलों, जहां योजना संबंधी गतिविधियां विकास प्राधिकरणों द्वारा निष्पादित की जा रही है, वहां इन प्राधिकरणों को जिला आयोजना समितियों और अंततः जिला परिषद की तकनीकी/आयोजना शाखा के रूप में ही कार्यरत होना चाहिए।

(घ) योजनाएं तैयार करने में स्थानीय निकायों को महत्वपूर्ण निविष्टयां मुहैया करने के लिए प्रत्येक जिले में एक प्रतिबद्ध केन्द्र स्थापित किया जाए। शासन के विभिन्न स्तरों के बीच संसूचनाओं के दो तरफा प्रवाह को भी सुनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है।

(ङ) जिले के लिए योजना तैयार करने के संबंध में योजना अयोग द्वारा जारी दिशानिर्देशों तथा जिले में योजना प्रक्रिया के संबंध में विशेषज्ञ समूह द्वारा दी गई सिफारिशों को कठोरतापूर्वक कार्यान्वित किया जाए।

(च) प्रत्येक राज्य सरकार को स्थानीय स्तर की योजना की सहभागी कार्यपद्धति विकसित करनी चाहिए और विकेन्द्रित योजना प्रणाली को संस्थागत रूप देने के लिए जैसा आवश्यक हो, सहयोग मुहैया कराना चाहिए।

(छ) जिले के लिए एक बोधगम्य योजना तैयार करने के लिए समय सीमा निर्धारित करते हुए राज्यों को एक योजना कैलेंडर तैयार करना चाहिए जिसके दायरे में ही सभी स्थानीय निकाय अपनी योजनाएं तैयार करें और अपने से उच्च स्तर को भेजें।

(ज) राज्य योजना बोर्डों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि जिला योजनाएं उनके द्वारा तैयार की गई राज्य योजनाओं के अनुसार ही समेकित व एकीकृत की जाएं। राज्यों के लिए यह बाध्यकारी किया जाए कि वे अपनी विकास योजनाएं स्थानीय निकायों की योजनाओं के समेकन के बाद ही तैयार करें। इस प्रक्रिया को संस्थागत स्वरूप प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय योजना आयोग को उचित पहल करनी चाहिए।

3.7.6 शहरी क्षेत्रों के लिए आयोजना

3.7.6.1 संवैधानिक प्रावधानों के कार्यान्वयन की वर्तमान प्रास्थिति

3.7.6.1.1 विभिन्न राज्यों में महानगर आयोजना समिति की वर्तमान प्रास्थिति सारणी 3.6 में दी गई है।

सारणी 3.6 : महानगर आयोजना समिति के गठन की प्रास्थिति

क्रम सं0	राज्य का नाम	राज्य में महानगर क्षेत्रों की संख्या (एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले नगर/शहरी क्षेत्र)	वर्ष 2006 के अंत तक महानगर आयोजना समिति के गठन की प्रास्थिति
1	आन्ध्र प्रदेश	3	अभी तक गठित नहीं
2	असम	-	अभी तक गठित नहीं
3	बिहार	1	अभी तक गठित नहीं
4	गुजरात	4	अभी तक गठित नहीं

5	हरियाणा	1	अभी तक गठित नहीं
6	झारखंड	2	अभी तक गठित नहीं
7	कर्नाटक	1	अभी तक गठित नहीं
8	केरल	1	अभी तक गठित नहीं
9	मध्य प्रदेश	3	अभी तक गठित नहीं
10	महाराष्ट्र	4	अधिनियम पारित किन्तु महानगर आयोजना समिति अभी तक गठित नहीं है
11	पंजाब	2	अभी तक गठित नहीं
12	राजस्थान	1	अभी तक गठित नहीं
13	तमिलनाडु	3	अभी तक गठित नहीं
14	उत्तर प्रदेश	6	अभी तक गठित नहीं
15	पश्चिम बंगाल	2	हां (कोलकाता के लिए)
16	राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली	1	अभी तक गठित नहीं
17	संघ राज्य क्षेत्र चंडीगढ़	1	अभी तक गठित नहीं
	कुल	**36**	

3.7.6.1.2 जबकि कई राज्यों में जिला आयोजना समितियों का गठन हो चुका है, किन्तु महानगर आयोजना समिति केवल एक पश्चिम बंगाल में ही गठित है। कोलकाता महानगर योजना समिति (केएमपीसी) में 60 सदस्य होते हैं, जिसमें मुख्यमंत्री, नगरपालिका कार्य तथा शहरी विकास विभाग का प्रभारी मंत्री, स्थानीय निकायों के निर्वाचित सदस्य और नामित सदस्य भी शामिल है। 60 सदस्यों में से दो-तिहाई निर्वाचित तथा एक-तिहाई नामित सदस्य होते हैं। राज्य का मुख्य मंत्री महानगर आयोजना समिति का अध्यक्ष होता है तथा नगरपालिका कार्य तथा शहरी विकास विभाग का प्रभारी मंत्री इसका उपाध्यक्ष होता है। कोलकाता महानगर विकास प्राधिकरण (केडीएमए) केएमपीसी का तकनीकी सचिवालय है तथा केडीएमए का सचिव ही केएमपीसी का सचिव होता है।

3.7.6.1.3 महानगर आयोजना समिति के गठन का एक प्रस्ताव महाराष्ट्र में भी अग्रिम चरणों में है। महाराष्ट्र महानगर आयोजना समिति अधिनियम विनिर्दिष्ट करता है कि राज्य सरकार महानगर आयोजना समिति का अध्यक्ष नामित करेगी और मुंबई महानगर क्षेत्र के लिए विकास योजना तैयार करने में महानगर आयोजना समिति की सहायता के लिए यह अपने तकनीकी अथवा योजना स्कंध के रूप में एमएमआरडीए को भी समावेशित करेगी। केरल नगरपालिका अधिनियम के प्रावधान के अनुसार महानगर आयोजना समिति के अध्यक्ष का चुनाव निर्वाचित सदस्यों में से किया जाएगा।

3.7.6.2 आयोजना प्राधिकरणों की बहुलता

3.7.6.2.1 वर्तमान में शहरों में योजना एजेंसियों में बहुलता व्याप्त है। देखा गया है कि : *"संवैधानिक रूप से प्राधिकृत ये दो योजना कार्यतंत्र अर्थात जिला आयोजना समितियां और महानगर आयोजना समितियां जब इन्हें सभी राज्यों में स्थापित किया जाएगा तो इन्हें प्रमुख शहरों में अर्थात विविध आयोजना संरचनाओं, जो कि विकास प्राधिकरणों, नगर एवं ग्राम योजना विभागों तथा आवासीय परिषदों और/या नगरनिगमों के रूप में विद्यमान है, से जूझना पड़ेगा। यह देखा गया है कि कई भारतीय नगरों में विकास प्राधिकरण ही योजनाकर्ता और विकासकर्ता की दोनों भूमिकाएं एक साथ निभा रहे हैं इसके फलस्वरूप वास्तविक या भौतिक विकास प्रायः योजना संबंधी सरोकारों पर हावी हो सकता है"* [12] इस समय हम पारंपरिक दौर में रह रहे हैं जहां ज्यादातर नगरों में शहरी व्यापक योजना कार्य में कार्यकारी एजेंसियों की बहुलता बनी हुई है। एक तरफ हमारे संवैधानिक प्रावधान जहां स्थानीय स्तर के आयोजना कार्य स्थानीय निकायों तथा क्षेत्रीय आयोजना कार्य जिला आयोजना समितियों और महानगर आयोजना समितियों जैसे निकायों द्वारा कराए जाने पर विशेष बल देते हैं, वहीं दूसरी तरफ जेएनएनयूआरएम जैसी स्कीमों के अंतर्गत भारत सरकार की पूर्वापेक्षाएं व सोपाधिकताएं है जिनमें उन क्षेत्रों में त्वरित संक्रमण के लिए राज्य सरकारों को सहायता प्रदान की जाती है जहां के नगरीय योजना संबंधी सभी कार्यकलापों के प्राधिकार वहां के स्थानीय निकायों को प्राप्त हैं।

3.7.6.2.2 महानगरीय क्षेत्र में खास तौर पर यह एक अतिरिक्त मुद्दा खड़ा हो जाता है कि दोनों समितियां अर्थात जिला आयोजना समिति और महानगर आयोजना समिति (डीपीसी और एमपीसी) विभिन्न परिप्रेक्ष्य में परस्पर आमना-सामना कैसे करेंगी। जैसाकि दिल्ली को ही लें, दिल्ली 7 राजस्व क्षेत्रों वाला महानगर है इनमें से कई में अभी भी ग्रामीण क्षेत्र विद्यमान हैं किन्तु आगामी दशकों में या उसके

12 शहरी अवसंरचना में योजना - इंडिया इन्फ्रास्ट्रक्चर रिपोर्ट, 2006 में ओलिवियर टाउटेन और एस. गोपीप्रसाद

आसपास लगभग सारे ही इलाके का शहरीकण होना ही है। ऐसा ही एक दूसरा मामला हो सकता है, जहां किसी विशिष्ट महानगर का शहरीकरण योग्य भू-क्षेत्र एकाधिक जिलों तक फैला हो। ऐसे में यदि अधिकार व्याप्ति क्षेत्र का सुस्पष्ट विभाजन किए बिना ही यदि उनके लिए जिला आयोजना समितियों और महानगर आयोजना समितियों का गठन कर दिया जाता है तो यह केवल मुश्किलों और उलझनों को बढ़ाना ही होगा। महानगर आयोजना समितियों के साथ एक अड़चन यह भी होती है कि उनकी बाह्य परिधि प्रायः ग्रामीण क्षेत्रों तक फैली होती हैं। यहां एक मुद्दा बाहरीपन का भी होता है। कई सुविधाएं ऐसी होती है जिनके उपयोगकर्ता भारी संख्या में उन बाह्य क्षेत्रों के निवासी हो सकते हैं जहां तक इस समिति का अधिकार क्षेत्र समाप्त हो जाता हो। बस सेवाओं के रूट प्रायः उन गैर-शहरी क्षेत्रों में होते हैं जहां से काफी यात्री और पर्यटक शहरों में आते हैं। जलापूर्ति का स्रोत सैकड़ों किलोमीटर दूर हो सकता है तथा ठोस अपशिष्ट भरण का क्षेत्र भी अनिवार्यतः बाह्य क्षेत्रों में ही होता है, इनमें से कई सेवाएं ऐसी हैं जो कि विभिन्न स्थानीय निकायों के अधिकार क्षेत्र को पार कर सकती हैं, जैसे कि विद्युत पारेषण। अतः उपयोगी होगा कि महानगर आयोजना समिति में तत्काल सम्मिलित होने वाले ग्रामीण जिलों के दृष्टिकोण और हितों के बीच पूरा सामंजस्य बैठाया जाए। दूसरा पहलू इन दोनों के बीच भावी संबंधों और इन दो संस्थाओं की सरकार के स्वामित्व को लेकर है। उदाहरणार्थ भारत सरकार का शहरी विकास मंत्रालय महानगर आयोजना समिति के लिए जबावदेह है जबकि जिला योजना पंचायती राज मंत्रालय से जुड़ी हुई है। ज्यादातर राज्यों में समन्वय या तालमेल की ही समान समस्या है। स्पष्ट है कि कठिनाई फील्ड में कही ज्यादा तीखी होगी। आजकल कई मामलों में जिला परिषद का अधिकार क्षेत्र कई नगरों तक फैला होता है। ऐसी स्थिति में क्या किसी महानगर आयोजना समिति और पड़ोसी जिला आयोजना समिति के विचारों या दृष्टिकोण में कोई भिन्नता होनी चाहिए, और ऐसी स्थिति में निर्णय कौन लेगा।

3.7.6.2.3 एक संभावित विकल्प यह होगा कि राज्य सरकार महानगर आयोजना समिति के अधिकार क्षेत्र को इस प्रकार से अधिसूचित करें कि इसके दायरे में आने वाले सभी जिले पूरी तरह से शहरीकृत हो अथवा शहरीकरण हो रहे (अर्ध शहरी) सीमाएं एक ही महानगर आयोजना समिति में शामिल हों तथा ऐसे जिले/क्षेत्रों के लिए किसी जिला आयोजना समिति की आवश्यकता नहीं होगी। तमिलनाडु ने इस समस्या को इस प्रावधान के साथ सुलझाया है कि चेन्नई महानगर पालिका क्षेत्र के लिए गठित महानगर आयोजना समिति को ही महानगर पालिका क्षेत्र में शामिल सभी राजस्व जिलों के भागों के संबंध में जिला आयोजना समिति माना जाएगा। इससे राज्य सरकार द्वारा विधिवत अधिसूचित समग्र महानगर

पालिका क्षेत्र के लिए, बिना किसी प्रतियोगी जिला आयोजना समिति के एकल योजना प्राधिकरण सुनिश्चित होगा तथा इससे भी आगे बढ़कर योजना कार्यों का समेकन, इस महानगर पालिका क्षेत्रों के लिए मौजूदा विकास प्राधिकरणों के मानव संसाधनों को संबद्ध जिला आयोजना समिति/महानगर आयोजना समिति सचिवालयों में एकीकृत किया जाना भी सुनिश्चित हो सकेगा। बेहतर तालमेल की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए यह जरूरी है कि पंचायतों और स्थानीय निकायों के अध्यक्षों को महानगर आयोजना समिति में शामिल किया जाए। इस प्रयोजन के लिए पास की जिला पंचायत के अध्यक्षों और सीमा सन्निहित जिला आयोजना समिति तथा जिला परिषदों के अध्यक्षों को महानगर आयोजना समिति में पदेन सदस्यों के रूप में रखा जाना चाहिए। यहां तक कि, संविधान में यथाविहित अनुसार-जिला आयोजना समिति की स्थापना एक स्वतंत्र योजना निकायों के रूप में करते हुए संबद्ध जिला शासन (चाहे वह जिला शासन जिला परिषद, या जिला पंचायत अथवा जिला परिषद कहा जाए) को रिपोर्ट करने वाले एक सहायक योजना कार्यालय के रूप में ही क्यों न की गई हो, जैसी सिफारिश आयोग द्वारा अपनी इस रिपोर्ट में अन्यत्र कहीं की गई है। फिर भी एकल योजना प्राधिकरण का उक्त सिद्धांत यहां भी लागू होगा। इस परिप्रेक्ष्य में कई जिलों में विस्तारित महानगरपालिका क्षेत्रों में अलग से एक महानगर आयोजना समिति का गठन किया जा सकता है, जिसमें इसकी शहरी-अर्थ शहरी सीमाओं के दायरे में आने वाली जिला परिषदों/जिला परिषदों/जिला पंचायतों से प्रतिनिधियों को सदस्य के रूप में शामिल किया जा सकता है। इस तरह किसी भी स्थिति में इन क्षेत्रों के लिए जिला आयोजना समिति की आवश्यकता नहीं रहेगी।

3.7.6.2.4 सिफारिशें :

(क) शहरी क्षेत्रों के बीच योजना के कार्यकलाप स्थानीय निकायों तथा आयोजना समितियों के बीच सुस्पष्ट रूप से आबंटित व चिन्हित होने चाहिए। रूपरेखा के स्तर पर योजना की जिम्मेदारी स्थानीय निकायों की होनी चाहिए। जिला आयोजना समितियां/जिला परिषदें और महानगर आयोजना समिति (जब गठित हों) को क्षेत्रगत और आंचलिक योजनाओं की जिम्मेदारी दी जा सकती है। प्रत्येक स्तर पर सार्वजनिक परामर्श का स्तर बढ़ाया जाना चाहिए।

(ख) महानगरीय क्षेत्रों में, शहरीकृत किए जाने वाले संभावित क्षेत्र (विस्तारित महानगरीय क्षेत्र) का आकलन राज्य सरकार द्वारा किया जाना चाहिए और इसके लिए एक महानगर आयोजना समिति गठित की जाए जो कि उक्त क्षेत्र के लिए जिला आयोजना समिति के रूप

में ही मानी जाए। चूंकि यह क्षेत्र आम तौर पर एक से अधिक जिले में शामिल होगा, उन जिलों के लिए जिला आयोजना समिति गठित न की जाएं (या उनका अधिकार क्षेत्र संबद्ध राजस्व जिले के ग्रामीण हिस्से तक ही सीमित कर दिया जाना चाहिए)। अर्धशहरी क्षेत्रों के साथ समूचे महानगरीय क्षेत्र के लिए एक मास्टर प्लान/सीडीपी तैयार करने के लिए महानगर आयोजना समितियों को ही कहा जाए।

(ग) **विकास प्राधिकरणों (डीए) के योजना विभागों को जिला आयोजना समितियों और महानगर आयोजना समितियों में मिला दिया जाए जो कि मास्टर प्लान और मंडलीय योजनाएं तैयार करेगा।**

(घ) **महानगर आयोजना समितियों द्वारा तैयार की गई मास्टर प्लान/सीडीपी को संबद्ध विस्तारित महानगर क्षेत्रों के भीतर प्रवर्तित ओर विनियमित करने का दायित्व संवैधानिक रूप से विशिष्टतया स्थानीय निकायों का ही होना चाहिए।**

(ङ) **शहरी क्षेत्रों हेतु भूमि के विकास में विकास प्राधिकरणों (डीए) जहां कहीं ये अस्तित्वमान हैं, की एकाधिकारी भूमिका को समाप्त कर दिया जाना चाहिए। तथापि, सार्वजनिक एजेंसियों को महत्वपूर्ण नगरस्तरीय अवसंरचनाओं तथा निर्धनों के लिए कम लागत पर आवास मुहैया कराने जैसे विकास कार्यों में अहम भूमिका निभाना जारी रखना चाहिए। इस प्रयोजन के लिए विकास प्राधिकरणों के भूमि प्रबंधन तथा इंजीनियरिंग विभागों को संबद्ध नगरपालिकाओं/निगमों में आमेलित कर दिया जाना चाहिए।**

3.8 जिम्मेवारी और पारदर्शिता

3.8.1 प्रभावी जिम्मेवारी की आवश्यकता

3.8.1.1 जबकि स्थानीय लोकतंत्र सहित लोकतंत्र, अधिशासन सुधारने का सही साधन है, लोकतांत्रिक अपूर्णता का एकमात्र प्रतिकारी उपाय भी ज्यादा से ज्यादा और बेहतर लोकतंत्र ही है। स्थानीय सशक्तिकरण के माध्यम से लोकतांत्रिक स्थितियों का सतत सुधार अनिवार्य रूप से एक विकासमूलक प्रक्रिया है। पिछले दशकों के अनुभवों से पता चलता है कि कई मामलों में, स्थानीय शासन भ्रष्टाचार, संरक्षणबाद, शक्तियों का निरंकुश इस्तेमाल और नाकारापन जैसी उन्हीं समस्याओं से घिरी हुई थी जिससे सरकारें त्रस्त रहती हैं।

3.8.1.2 यह असफलता भी लोकतांत्रिक विकास की एक व्यापक प्रक्रिया है जिसका हल अत्यंत धैर्यपूर्वक, अध्यवसाय और अभिनव तरीकों से खोजे जाने की आवश्यकता है। ऐसे वातावरण में, जहां भ्रष्टाचार अभी भी एक अहम समस्या बना हुआ है, वहां अकेले स्थानीय निकायों से ही यह अपेक्षा नहीं रखी जा सकती कि माहौल से निष्प्रभावी रहते हुए वे रातों-रात सत्यनिष्ठा और सक्षमता के प्रतीक बन कर उभरेंगे। शक्तियों का इस्तेमाल प्रायः विकृत हुआ करता है और वह अविवेकपूर्ण और अनुत्तरदायी शासन प्रणाली को जन्म देता है। बिना किसी आश्चर्य के स्थानीय निकाय के स्तर पर भी शक्तियों का प्रयोग एक समान विधि से ही होना चाहिए। अंतर यही है कि स्थानीय भ्रष्टाचार और विवेकहीनता जन जीवन से गहराई से जुड़ी होती है और चूंकि वे सुविधा तथा सेवाओं को सीधे प्रभावित करती है इसलिए वे ज्यादा सुस्पष्ट तरीके से अनुभव होती है तथा नजर आती हैं। कालांतर में, जैसे-जैसे लोग अपने द्वारा दिए जाने वाले मतदान और लोकहित की गुणवत्ता तथा सेवा की बेहतरी के बीच के संबंध को समझेंगे निःसंदेह स्थितियां पहले से बेहतर होती जाएंगी। सार्वभौमिक विशेषाधिकार और लोकतंत्र का यही तकाजा है।

3.8.1.3 तथापि, चूंकि शक्ति के साथ भ्रष्टाचार और दुरूपयोग प्रायः जुडा सा होता है, अतः जबावदेही और दायित्व बोध के प्रभावकारी उपाय की खोज करने की आवश्यकता है जिससे कि प्राधिकार के दुरूपयोग पर रोक लगाई जा सके ओर सेवाओं की गुणवत्ता को सुधारते हुए जन आकांक्षाओं को सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान की जा सके।

3.8.2 जिम्मेवारी के तत्व

3.8.2.1 आमतौर पर सार्वजनिक संस्थाओं की जिम्मेवारी समग्र रुप से दो ही विषयों पर अभिकेन्द्रित होती है, नामतः (क) उन कार्यकलापों को रोकना जिसे करने के लिए वह विधायी या अधीनस्थ कानूनों द्वारा प्राधिकृत नहीं है (ख) सार्वजनिक प्रणाली का समेकन या वित्तीय स्वामित्व का रखरखाव, जो कि प्रायः वित्तीय नियमों के अनुपालन का समानुपाती ही होता है। ये सभी महत्वपूर्ण और अहम बाते हैं। किन्तु कुछ और भी कारक है, जिसका अनुपालन स्थानीय निकायों के लिए अपेक्षित है। इन्हीं में से एक कारक है - प्रतिसंवेदना किसी भी स्थानीय निकाय के कार्यकलापों को आम जन की आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील होना ही चाहिए। सरकारी गतिविधियों की सर्वांगसमता तथा समुदाय के द्वारा अनुभव की जा रही आवश्यकताओं के प्रति प्रत्याशा ही सरकार है, और यह प्रत्याशा किसी अन्य स्तर के शासन से उतनी ज्यादा नहीं होती जितनी कि स्थानीय निकाय के स्तर पर अनुभव की जाती है, क्योंकि यह जनता

के सर्वाधिक निकट होता है। अन्य कारक निष्पादन का वह पैमाना है, जिसके माध्यम से कोई भी यह पता कर सकता है कि क्या अधिकतम लाभ अर्जित करने के क्रम में सार्वजनिक निधियों को उपयोग में लाया गया है अथवा नहीं। दक्षता और प्रभावोत्पादकता निष्पादन प्रक्रिया के दो प्राथमिक मानक हैं। दक्षता से आशय (उपलब्ध सेवाओं या उत्पादित लोकहित के संदर्भ में) लागत की तुलना में प्राप्त उत्पादन के अनुपात से है। विभिन्न तकनीकी पैरामीटरों तथा अन्य मानकों से इस अनुपात की तुलना करने पर कोई भी आकलन कर सकता है कि कोई सार्वजनिक संस्था कितनी अच्छी तरह से अपने संसाधनों का उपयोग कर रही है या क्या वह कम संसाधनों के उपयोग से अधिक उत्पादन हासिल कर रहा हैं जबकि प्रभावोत्पादकता वह उच्चांश (डिग्री) है जिसपर कार्यक्रम के परिणाम के रूप में प्रत्याशित अपेक्षा के अनुरूप ही किसी सार्वजनिक एजेंसी द्वारा कोई सेवा उपलब्ध कराई जाती है या जनहित उत्पादित किया जाता है। प्रत्याशित किए जा रहे परिणाम जनता द्वारा अनुभव की गई आवश्यकताओं से निकलते हैं। इस प्रकार स्थानीय निकायों की जिम्मेवारी के विविध घटकों के विन्यास की प्रक्रिया को निम्नलिखित बिन्दुओं पर अभिकेन्द्रित होना चाहिए :-

(क) *स्वामित्व सुनिश्चित करने के लिए संस्थात्मक कार्यतंत्र; स्वामित्व, जिसमें संसाधनों के उपयोग की निष्ठा व ईमानदारी, उद्देश्यों, कानून तथा विनियमों का प्रभावी कार्यान्वयन, सरकारी कर्मचारियों/प्रतिनिधियों की भाड़ा उगाही प्रवृत्ति को शामिल किया जा सकता है, तथा प्रशासनिक शक्तियों के उपयोग में निष्पक्षता।*

(ख) *स्थानीय निकायों में लोगों के प्रति संवेदना बढ़ाने के उपाय।*

(ग) *परिणामों के जरिए स्थानीय निकायों का मूल्यांकन करना या दक्षता, प्रभावोत्पादकता तथा अन्य संसूचकों के संदर्भ में उनके निष्पादन का आकलन करना।*

3.8.3 स्वामित्व सुनिश्चित करने के लिए संस्थात्मक कार्यतंत्र

3.8.3.1 पारंपरिक रूप से स्थानीय निकाय राज्य सरकार द्वारा नियंत्रित होते है, जिन्हें वह वित्तीय विनियमनों, प्रशासनिक पर्यवेक्षण और विधायी प्रावधानों आदि के माध्यम से नियंत्रित करता है। वित्तीय स्वामित्व के सुनिश्चयन की पारंपरिक पद्धति में - (क) लेखों तथा अन्य वित्तीय दस्तावेजों की यथासमय वार्षिक लेखापरीक्षा और जांच, (ख) नियमित आंतरिक लेखापरीक्षा, (ग) वित्तीय अनियमितताओं में सुधार करते हुए लेखापरीक्षा रिपोर्टों पर यथावश्यक अनुवर्ती कार्रवाई, (घ) व्यपगतन के लिए जबावदेही निर्धारित करना और इन व्यपगतन के लिए जिम्मेदार लोगों के विरूद्ध दंड का उपयोग करना, आदि

गतिविधियां शामिल हो सकती हैं। "लेखांकन और लेखापरीक्षा" से संबंधित उपायों व साधनों पर इस रिपोर्ट में अन्यत्र विचार-विमर्श किया गया है। स्थानीय निकायों में जबावदेही सुनिश्चित करने के लिए पहली आवश्यकता उन्हें एक सुदृढ़ और संतुलित संस्थात्मक कार्यतंत्र मुहैया कराना है। ये कार्यतंत्र प्राथमिक रूप से लेखापरीक्षा राज्य सरकार के नियंत्रण और एक स्वतंत्र शिकायत निवारक निकाय से संबंधित हैं।

3.8.3.2 *लेखापरीक्षा :* "लेखापरीक्षा की सबसे सामान्य और आम परिभाषा, किसी व्यक्ति, संगठन, पद्धति, प्रक्रिया, परियोजना अथवा उत्पाद का मूल्यांकन अथवा आकलन है। सूचना की वैधता और विश्वसनीयता के अभिज्ञान और आंतरिक नियंत्रण के प्रणालीगत आकलन के लिए लेखापरीक्षा का निष्पादन किया जाता है।" पारंपरिक तौर पर लेखापरीक्षा प्रमुखतः वित्तीय लेखापरीक्षा, किसी कंपनी के वित्तीय लेखे और रिपोर्टिंग प्रणाली के बारे में सूचनाएं प्राप्त करने से जुड़ा हुआ है। वस्तुतः लेखापरीक्षा शब्द को परिभाषित करते हुए शब्दकोष ने इसे "लेखों की एक कार्यालयी/आधिकारिक जांच" के रूप में व्यक्त किया है। आज लेखापरीक्षा का व्याप्ति क्षेत्र अत्यंत विशाल है और अंततः शासन के अनवरत सुधार से निर्देशित होता है। इस संदर्भ में लेखापरीक्षा की तीन व्यापक श्रेणियों में, अनुपालन लेखापरीक्षा, वित्तीय लेखापरीक्षा और निष्पादन लेखापरीक्षा शामिल हैं।

3.8.3.2.1 हाल के वर्षों में गबन और घोटालों की भारी संख्या ने लेखापरीक्षा के सुदृढ़ीकरण और निगमित क्षेत्रों में निगम प्रशासन में लेखापरीक्षा समितियों की भूमिका को सुदृढ़ किए जाने पर सबका ध्यान खींचा है। भारत में लेखापरीक्षा समिति की भूमिका लगातार विवाद और बहस का विषय रही है, और सेबी की ही तरह सरकार द्वारा भी पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और नैतिक आचार-व्यवहार में सुधार लाने की दृष्टि से उपयुक्त सिफारिशें करने के लिए लेखापरीक्षा समितियां गठित की गई हैं।

3.8.3.2.2 नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक की रिपोर्ट पर लोक लेखा समिति की जांच के प्रावधान के साथ ही भारत में लेखापरीक्षा का एक व्यापक कार्यतंत्र मौजूद है। काफी हद तक यह रचनातंत्र अत्यंत प्रभावी सिद्ध हुआ है। तथापि लेखापरीक्षा के विद्यमान कार्यतंत्र के आधार पर सार्वजनिक एजेंसियों को जबावदेह ठहराना मुश्किल होता है क्योंकि लेखापरीक्षा द्वारा इसकी जांच करने तथा इस पर कोई निर्णय होने के बीच काफी लंबा समय लग जाता है, और इसके अलावा समुचित मॉनीटरिंग और अनुवर्ती कार्रवाई के अभाव में काफी लेखापरीक्षा अभ्युक्तियां/आपत्तियां लोगों का ध्यान आकृष्ट किए बिना ही रह जाती हैं।

* विकीपीडिया इनसाइक्लोपीडिया

3.8.3.2.3 इसलिए वांछनीय होगा कि निगमित क्षेत्र के लिए विनिर्दिष्ट कुछ बेहतरीन पद्धतियों को सार्वजनिक क्षेत्र में लागू करने के बारे में सोचा जाए। ऐसी ही एक पद्धति राज्य सरकार द्वारा घोषित सत्यनिष्ठा, व्यावसायिक सक्षमता और समुचित निरीक्षण सामर्थ्य वाले सदस्यों को मिलाते हुए एक स्वतंत्र लेखापरीक्षा समिति की नियुक्ति करना है। सार्वजनिक क्षेत्र में कुछेक घटनाएं इस तरह से हुई और सरकारी लेखापरीक्षा की गुणवत्ता की असफलता ही थी जिसके कारण संयुक्त राज्य अमरीका के सरकारी लेखापरीक्षा कार्यालय (जीएओ) को यह सिफारिश करनी पड़ी कि सार्वजनिक क्षेत्र की संस्थाओं को लेखापरीक्षा समितियों के उपयोग के लाभों के बारे में सोचना पड़ा। वर्ष 2003 में, जीएओ ने सरकारी लेखापरीक्षा मानकों को संशोधित करते हुए यह आवश्यक किया कि लेखापरीक्षक कुछ सूचनाएं लेखापरीक्षा समितियों और विशिष्ट वैयक्तिकों को देंगे, जिनके साथ वे लेखापरीक्षा हेतु संपर्क कर सकें। तदनुसार इस भूमिका को निभाने के लिए प्रत्येक सरकारी संस्था को एक लेखापरीक्षा समिति अथवा किसी सदृश निकाय को नामोदिष्ट करना होता है।

3.8.3.2.4 लेखापरीक्षा समितियों के लिए अपेक्षित है कि वे पारदर्शिता, उत्तरदायित्व भावना और नैतिक आचरण सहित प्रशासन के सभी पहलुओं के सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करें। स्थानीय निकायों के मामलों में ऐसी लेखापरीक्षा समितियां जिला स्तर पर ही बनाई जा सकती हैं। महानगरपालिका क्षेत्रों के लिए पृथक लेखापरीक्षा समितियां गठित की जा सकती हैं। लेखापरीक्षा समितियों को अनिवार्यतः वित्तीय सूचनाओं के एकीकरण, आंतरिक नियंत्रण की पर्याप्तता, लागू नियमों और विनियमों के सम्यक अनुपालन तथा समीक्षाधीन संस्था से जुड़े सभी व्यक्तियों के अपेक्षित नैतिक आचरण एवं व्यवहार से संबंधित निरीक्षण पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। इन भूमिकाओं को प्रभावी तरीके से निभाने और अपने दायित्वों का निष्पादन कर्मठतापूर्वक करने की दृष्टि से आयोग का मानना है कि लेखापरीक्षा समितियां स्वतंत्र होनी चाहिए, सभी आवश्यक सूचनाएं इनकी पहुंच में होनी चाहिए, इनमें तकनीकी विशेषज्ञों से परामर्श का सामर्थ्य होना चाहिए और अंत में जनता के प्रति इन्हें जबावदेह होना चाहिए। एक बार जिला परिषद (जैसा कि इस रिपोर्ट में अन्यत्र कहा गया है) गठित हो जाती हैं, तो जिले के भीतर पड़ने वाले स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा तथा अन्य वित्तीय विवरणियों की जांच जिला परिषद की एक विशिष्ट समिति से कराई जा सकती है। वित्तीय व्यपगतों (चूकों) के बारे में जबावदेही निर्धारित करने का प्राधिकार भी इसी समिति को होना चाहिए। जहां तक जिला परिषद की स्वयं की लेखापरीक्षा का संबंध है तो यह काम विधान परिषद की एक विशिष्ट समिति द्वारा किया जा सकता है। लेखापरीक्षा समिति को संबद्ध स्थानीय निकाय को ही रिपोर्ट प्रस्तुत करनी चाहिए।

3.8.3.3 *विधायी निरीक्षण* : इस पर भी शासन का एक स्वतंत्र और स्वाधीन तीसरा स्तर भी होना चाहिए जिसे राज्य विधानमंडल के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए। इस संबंध में आयोग का सुविचारित मत यह है कि राज्य विधानमंडल में स्थानीय निकायों पर एक पृथक समिति को संस्थात्मक स्वरूप प्रदान करते हुए विधायी पर्यवेक्षण को सुनिश्चित किया जा सकता है। जैसाकि "लेखा और लेखापरीक्षा" विषय के अंतर्गत इस रिपोर्ट में अनुशंसित है, यह समिति भी लोक लेखा समिति की तर्ज पर काम कर सकती है।

3.8.3.4 स्वाधीन शिकायत निवारण कार्यतंत्र (स्थानीय निकाय माध्यस्थम)

3.8.3.4.1 उपर्युक्त के अलावा, एक शिकायत निवारण कार्यतंत्र को भी संस्थात्मक आधार दिए जाने की आवश्यकता है, जोकि स्थानीय निकायों के अधिकारियों और निर्वाचित प्रतिनिधियों के संबंध में प्राप्त शिकायतों का निवारण करेगा। यह शिकायतों को स्वर देने के लिए नागरिकों को एक मंच उपलब्ध कराएगा और साथ ही समुचित निवारक कार्रवाई के लिए प्रणालीगत खामियों को भी दूर करेगा। स्थानीय शासन संस्थाओं को वर्धित सुपुर्दगी के साथ ही आधारभूत स्तर पर विकास स्कीमों का एक समुच्चय लागू किया जाएगा। औसतन, एक पंचायत साल भर में एक करोड़ रुपए के कार्यक्रमों को लागू कर सकती है। सार्वजनिक निधियों का यह भारी आकार लोगों की प्रत्याशाओं को भी जागृत करेगा। इससे यह चिन्ता भी बढ़ सकती है कि पूर्व सुरक्षोपायों के बिना किया जाने वाला विकेन्द्रीकरण भ्रष्टाचार का एक कारण बन सकता है, खास कर तब जबकि इस प्रक्रिया में केन्द्र तथा राज्य सरकारों में यथा विद्यमान की भांति समुचित उत्तरदायित्व कार्यतंत्र संबंधी प्रावधान सृजित न किए गए हों। अपनी चतुर्थ रिपोर्ट, "शासन में नैतिकता" में आयोग ने इस मामले पर विचार किया है। आयोग का दृष्टिकोण है कि कई जिलों के एक समूह के लिए एक माध्यस्थम नियुक्त किया जाना चाहिए जोकि स्थानीय निकायों के निर्वाचित तथा नियुक्त दोनों ही प्रकार के पदाधिकारियों के विरूद्ध प्राप्त भ्रष्टाचार ,कु-प्रशासन संबंधी शिकायतों पर कार्रवाई कर सके। इस संदर्भ में "लोक सेवक" शब्द को संबंधित राज्य विधान में उपयुक्त रूप से परिभाषित किया जाना होगा। माध्यस्थम को इन मामलों की जांच करने और आवश्यक कार्रवाई के लिए संबंधित प्राधिकरण को रिपोर्ट प्रस्तुत करने का प्राधिकार होगा। उक्त सक्षम प्राधिकरण को माध्यस्थम द्वारा यथा-अनुशंसित कार्रवाई करनी होगी। इस मामले में किसी असहमति की स्थिति में इस असहमति के कारण लिखित रूप से दर्ज कराए जाने चाहिए और इसे सार्वजनिक स्तर पर रखा जाना चाहिए। स्थानीय निकाय माध्यस्थम के संबंध में संबद्ध राज्य के पंचायत अधिनियमों तथा शहरी स्थानीय निकाय अधिनियमों में संशोधन किए जाने की आवश्यकता होगी।

3.8.3.4.2 आयोग ने इस मुद्दे पर और विचार किया तथा उसका मानना है कि स्थानीय निकाय का माध्यस्थम एकल सदस्यीय निकाय होना चाहिए। उक्त माध्यस्थम की नियुक्ति राज्य के मुख्यमंत्री, विधानसभा के अध्यक्ष तथा विधानसभा में विपक्ष के नेता को मिलाकर बनाई गई समिति द्वारा किया जाना चाहिए। माध्यस्थम की नियुक्ति प्रायः अखंड निष्ठा वाले विख्यात व्यक्तियों के उस सूची में से की जाए जिसके सदस्य सेवारत सरकारी अधिकारी न हों। आयोग का यह विचार भी है कि महानगर क्षेत्र में कई जिलों का समूह होने की स्थिति में महानगरपालिका स्थानीय निकाय के लिए अलग से एक माध्यस्थम नियुक्त किया जाना चाहिए जो कि उक्त जिलों के समूह हेतु नियुक्त माध्यस्थम से अलग हो।

3.8.3.4.3 अपनी रिपोर्ट "शासन में नैतिकता" में आयोग ने सिफारिश की है कि स्थानीय निकाय के माध्यस्थम को लोकायुक्त के समग्र दिशानिर्देश और पर्यवेक्षण में काम करना चाहिए। लोकायुक्त को स्थानीय निकाय माध्यस्थम के ऊपर समीक्षात्मक तथा संशोधनात्मक शक्तियां प्राप्त होंगी। आयोग का विचार है कि किसी स्थानीय निकाय के संबंध में कोई आम शिकायत या फरियाद या इसके निर्वाचित सदस्य के विरूद्ध भ्रष्टाचार अथवा कुप्रशासन की स्थिति में स्थानीय निकाय माध्यस्थम को ऐसे मामले की जांच करने और अपनी रिपोर्ट लोकायुक्त को भेजने का अधिकार होगा, जोकि आगे इसे राज्य के राज्यपाल को भेजने की सिफारिश करेगा। माध्यस्थम द्वारा की गई सिफारिश के अस्वीकृत होने की स्थिति में राज्य सरकार को ऐसा करने के कारणों का स्पष्ट उल्लेख करते हुए इसे जनता में सार्वजनिक करना होगा। शिकायतों पर अपनी जांच करने में माध्यस्थम के लिए कोई समय-सीमा भी निर्धारित की जा सकती है।

3.8.3.4.4 आयोग का यह भी मानना है कि जहां तक इन स्थानीय निकायों के विधि शासित चुनावों के उल्लंघन से संबंधित मामलों का प्रश्न है, ऐसे मामलों में छानबीन के लिए उपयुक्त प्राधिकारी राज्य निर्वाचन आयोग (एसईसी) होगा। ऐसे मामलों पर एसईसी अपनी रिपोर्ट राज्य के राज्यपाल को प्रस्तुत करेगा जोकि आगे उसके सुझाव/सलाह पर कार्रवाई करेगा।

3.8.4 जनता के प्रति स्थानीय निकायों की प्रत्युत्तरदायिता में सुधार के उपाय

3.8.4.1 प्रभावी सेवा सुपुर्दगी, सुगम्यता और पहुंच सुनिश्चित कराने के लिए नागरिकों के प्रति स्थानीय निकायों में व्याप्त प्रत्युत्तरदायिता में सुधार लाने की आवश्यकता है। उक्त प्रत्युत्तरदायिता निम्नलिखित रूप में बढ़ायी जा सकती है :

- कार्यों का प्रत्यायोजन।
- शिकायतों के निवारण का आंतरिक कार्यतंत्र।

- सामाजिक लेखापरीक्षा।
- पारदर्शिता।

3.8.4.2 *कार्यों का प्रत्यायोजन* : निम्नतम स्तर तक के पदाधिकारियों को जबावदेह बनाने और अद्यतन व अधुनातन स्तर पर उत्तरदायित्व लाने के लिए स्थानीय निकायों में निम्नतम संभावित पदाधिकारियों को कार्यों का प्रत्यायोजन किया जाना चाहिए। इससे एक आम आदमी के साथ पारस्परिक संबंधों में स्थानीय निकाय प्रत्युत्तरदायी बन सकेंगी।

3.8.4.3 *शिकायत निवारण के लिए आंतरिक कार्यतंत्र* : जबकि स्थानीय निकायों को उत्तरदायी बनाने के लिए लेखापरीक्षा और सरकारी नियंत्रण का होना अत्यंत आवश्यक है, और एक स्वतंत्र शिकायत निवारण निकाय लोगों को जबावदेही लागू कराने के लिए एक बहु-प्रतीक्षित साधन उपलब्ध कराएगा फिर भी स्थानीय निकायों को अपनी खामियों से सीखने की स्थिति में होना चाहिए और स्वयं को जनता की अपेक्षाओं व आवश्यकताओं के अनुरूप ढालना चाहिए। इसके लिए शिकायत निवारण का एक सुदृढ़ आंतरिक कार्यतंत्र अपेक्षित होगा।

3.8.4.4 सामाजिक लेखापरीक्षा

3.8.4.4.1 स्थानीय सेवा सुपुर्दगी में सुधार और विधि तथा विनियमों का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि सामाजिक लेखापरीक्षा की पद्धति को संस्थात्मक स्वरूप दिया जाए। सामाजिक लेखापरीक्षा की प्रभावी प्रणाली निम्नलिखित दो धारणाओं पर आधारित होनी चाहिए, पहली सेवा संबंधी मानकों को नागरिक चार्टर के जरिए स्पष्टतः परिलक्षित किया जाए, दूसरा स्थानीय निकायों द्वारा प्रस्तुत कराई जा रही सेवाओं की प्राप्ति पर अपने आप ही आवधिक प्रदर्शन किया जाए। प्रभावोत्पादकता सुनिश्चित करने की दृष्टि से भी सामाजिक लेखापरीक्षा पद्धति का होना आवश्यक है। उन्हें इसके उद्देश्यों व्याप्ति क्षेत्र और तौर-तरीकों को स्पष्ट करते हुए सामाजिक लेखापरीक्षा का एक समुपयुक्त ढांचा खड़ा करना चाहिए। उक्त ढांचा अपने नागरिक सामाजिक संगठनों तथा अन्य संस्थाओं से सघन विचार-विमर्श और परामर्श के माध्यम से सभी राज्यों द्वारा अपने-अपने यहां खड़ा किया जाए। सामाजिक लेखापरीक्षा का काम शुरू करने में स्थानीय समुदाय को जागरूक तथा सचेत बनाने के लिए एनजीओ और सीबीओ को सहायता व प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। औपचारिक लेखापरीक्षा को सामाजिक लेखापरीक्षा के निष्कर्षों पर विधिवत ध्यान देना चाहिए तथा यही क्रिया विलोमतः भी होनी चाहिए।

3.8.4.4.2 "शासन में नैतिकता" विषय पर प्रस्तुत अपनी चौथी रिपोर्ट में आयोग ने पारदर्शी प्रशासन सुलभ कराने और उत्तरदायित्व बोध लागू कराने की प्रक्रिया में नागरिक समितियों और सामाजिक लेखापरीक्षा की महत्ता को रेखांकित किया है। रिपोर्ट के "सामाजिक अवसंरचना" से संबंधित 5वें अध्याय में पैरा 5.1.12 के अंतर्गत निम्नलिखित सिफारिशें की गई हैं :

"(क) सेवा स्तर का स्पष्ट उल्लेख करते हुए नागरिक चार्टर तैयार किया जाए और निर्धारित सेवा स्तर यदि प्राप्त न किए गए हों तो इसका निवारण भी प्रस्तुत किया जाए।

(ख) महत्वपूर्ण सरकारी संस्थाओं और कार्यालय में नैतिक व नीतिगत पैरामीटरों के आकलन और अनुरक्षण करने में नागरिकों को भी शामिल किया जाए।

(ग) नागरिकों द्वारा की जाने वाली शुरूआतों के लिए उन्हें प्रोत्साहित करने की कोई पुरस्कार योजना लागू होनी चाहिए।

(घ) स्कूल जागरूकता कार्यक्रम शुरू किए जाएं जिसमें, नैतिकता की महत्ता और भ्रष्टाचार से किस तरह कारगर तरीके से लड़ा जा सकता है, आदि विषयों को रेखांकित किया जाए।"

3.8.4.4.3 सामाजिक लेखापरीक्षा के संबंध में अपनी रिपोर्ट में आयोग का दृष्टिकोण रहा है कि :

"5.4 सामाजिक लेखापरीक्षा

5.4.1 किसी ग्राहक या लाभार्थी समूहों या नागरिक समाज समूहों द्वारा की जाने वाली सामाजिक लेखापरीक्षा एक दूसरा महत्वपूर्ण तरीका है जिसके माध्यम से, सरकार के लिए सेवाओं तथा उत्पादों की प्रापण प्रक्रिया चूक/त्रुटि की रोकथाम, कल्याणकारी भुगतानों के संवितरण, स्कूलों और छात्रावासों में शिक्षकों और छात्रों तथा अस्पतालों में स्टाफ की उपस्थिति जैसी अन्य सरकारी नागरिकोन्मुखी सेवाओं की सुपुर्दगी से संबंधित सभी सूचनाओं को प्रकाशित किया जा सकता है। विभागीय पर्यवेक्षकों द्वारा किया जाने वाला आकस्मिक व औचक निरीक्षण इस संदर्भ में और भी उपयोगी हो सकता है। इन सभी के ब्यौरों में न जाते हुए यहां आयोग यह सुझाव देना चाहेगा कि सामाजिक लेखापरीक्षा के प्रावधान को सभी स्कीमों के लिए प्रचालनात्मक दिशानिर्देशों के एक अनिवार्य अंग के रूप में शामिल किया जाना चाहिए।

5.4.2 सिफारिशें

(क) सभी विकासपरक स्कीमों और नागरिक अभिकेन्द्रित कार्यक्रमों के प्रचालनात्मक दिशानिर्देशों में सामाजिक लेखापरीक्षा का प्रावधान होना चाहिए।"

3.8.4.4.4 "मानव पूंजी प्रकटीकरण, हकदारी और अधिशासन - एक मामला अध्ययन" शीर्षक से राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के कार्यान्वयन पर प्रस्तुत अपनी द्वितीय रिपोर्ट में आयोग ने सामाजिक लेखापरीक्षा की आवश्यकता पर विशेष बल दिया। इस सिलसिले में आयोग का मानना है कि,

"5.4.6.4 सभी कार्यों का सामुदायिक नियंत्रण और सामाजिक लेखापरीक्षा

5.4.6.4.1 प्रचालनात्मक दिशानिर्देशों में स्पष्ट है कि कार्य की प्रगति और गुणवत्ता पर निगरानी बनाए रखने के लिए एक स्थानीय सतर्कता तथा अनुवीक्षण समिति होनी चाहिए जिसमें कार्यस्थल अर्थात जहां कार्य हो रहा है, के लोगों को ही सदस्य बनाया जाएगा। अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति तथा महिलाओं का पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करते हुए ग्राम सभा द्वारा इस समिति के सदस्यों का चुनाव किया जाएगा।

बॉक्स 3.7 : नागरिक-केंद्रिक जिम्मेदारी : हुबली धारवाड़ नगरनिगम का मामला

पारदर्शिता और गुणवत्ता जांच बनाए रखने के लिए किसी ठेकेदार द्वारा किए गए कार्यो पर, प्रत्येक माह जिन बिलों के आधार पर उसे भुगतान किया जाना है, उन बिलों को निगम की वेबसाइट में डाला जाएगा। जिसमें कार्य की संख्या, कार्य विवरण और बिल की राशि का उल्लेख होगा। प्रत्येक माह 15 से 25 तारीख के बीच उक्त विवरण वेबसाइट में देख जा सकेगा। कोई भी नागरिक उक्त कथित कार्य की जांच करने के लिए स्वतंत्र होगा और जिस कार्य की सफलतापूर्वक समाप्ति के लिए बिलों को प्रस्तुत किया गया है, उन कार्यों में कोई चूक या अपूर्णता की स्थिति में वह व्यक्ति ऐसे ठेकेदार के विरूद्ध शिकायत दर्ज करा सकेगा। इस तरह की कोई भी शिकायत मिलने पर संबद्ध प्राधिकारी इसकी जांच व सत्यापन करेगा और उसके सत्यापन के बाद ही ठेकेदार को उसके बिलों का भुगतान किया जा सकेगा। यदि उक्त शिकायत सच साबित होती है तो संबंधित ठेकेदार ओर इंजीनियर के विरूद्ध आवश्यक कार्रवाई की जाएगी। शिकायतकर्ता कोई पंजीकृत एनजीओ होना चाहिए जिसका उस खास वार्ड में अथवा आवासीय कल्याण संघ में कार्यालय स्थित हो। शिकायतकर्ता के वैयक्तिक होने की स्थिति में शिकायत के समर्थन में तीन नागरिकों के हस्ताक्षर उनके दूरभाष नम्बरों के साथ शिकायत के साथ भेजे जाने चाहिए। किसी शिकायत के झूठा पाए जाने पर उक्त एनजीओ या नागरिक से प्राप्त आगे किसी शिकायत पर विचार नहीं किया जाता है।

स्रोत : http:/ www.hdmc.gov.in/quality_check_public.php

5.4.6.4.2 एनआरईजीए की धारा 17 निर्दिष्ट करती है कि ग्राम सभाएं आरईजीएस के अंतर्गत सभी परियोजनाओं की नियमित लेखापरीक्षा कराएंगी। सामाजिक लेखापरीक्षा वह प्रक्रिया है जिसमें प्रायः एक सार्वजनिक मंच के माध्यम से विकास कार्यक्रमों के निष्पादन में सरकारी एजेंसियों द्वारा उपयुक्त वित्तीय तथा गैर-वित्तीय दोनों ही संसाधनों के ब्यौरों का आदान-प्रदान किया जाता है। सामाजिक लेखापरीक्षा अंत प्रयोक्ताओं को विकास कार्यक्रमों में संवीक्षा का एक अवसर मुहैया कराता है, इस प्रकार वह लोगों उत्तरदायित्व और पारदर्शिता के प्रवर्तन का अधिकार भी प्रदान करता है। प्रचालनात्मक दिशानिर्देशों का अध्याय-11 एनआरईजीए के समुचित कार्यान्वयन के लिए सामाजिक लेखापरीक्षा के महत्व पर विशेष बल देता है। इसमें अनवरत लेखापरीक्षा और छः महीनों

में एक बार सामाजिक लेखापरीक्षा का बाध्यकारी प्रावधान किया गया है। दिशानिर्देशों में प्रचार की विधि, अपेक्षित प्रलेखन और बाध्यकारी कार्यसूची का विनिर्देशन भी किया गया है। दिशानिर्देशों का अक्षरशः अनुपालन कालांतर में सामाजिक जिम्मेवारी को लागू करेगा।

5.4.6.4.3 "प्रभावी सामाजिक लेखापरीक्षा के लिए अनिवार्य अपेक्षाएं, सूचना प्रलेखन और प्रचार की समुचित प्रणाली, लेखापरीक्षा आयोजन के लिए विशेषज्ञों की उपस्थिति और अपने अधिकारों के प्रति ग्राम सभा सदस्यों की जागरूकता हैं। अतः इसके लिए समुचित प्रलेखन, क्षमता निर्माण तथा जागरूकता सृजन जैसे कार्यक्रमों पर ध्यान देना आवश्यक है। इन सभी पहलुओं पर उनके संबद्ध पैराग्राफों में विचार-विमर्श किया गया है।"

3.8.4.4.5 इसलिए स्थानीय स्व-शासन के सभी स्तरों पर इन संस्थाओं में जिम्मेवारी और पारदर्शिता सुनिश्चित करने के लिए सामाजिक लेखापरीक्षा की प्रभावी प्रणाली होना महत्वपूर्ण है। इस संबंध में "जमीनी स्तर पर आयोजना" के संबंध में गठित विशेषज्ञ दल की मार्च 2006 की रिपोर्ट (पैरा 5.9.5) में कुछ कार्यात्मक बिंदुओं का सुझाव दिया गया है, जिनका उल्लेख नीचे किया गया हैः-

(क) सामाजिक लेखापरीक्षा स्थानीय निकायों द्वारा कार्यान्वित की जाने वाली प्रत्येक स्कीम के लिए अलग-अलग नहीं होनी चाहिए। प्रत्येक स्कीम के लिए अलग से विनिर्दिष्ट सामाजिक लेखापरीक्षाओं की बहुलता इस प्रक्रिया के महत्व को कम कर देती है।

(ख) सामाजिक लेखापरीक्षा को पर्याप्त प्रचार दिया जाना जरूरी है।

(ग) सामाजिक लेखापरीक्षा रिपोर्ट पर "की गई कार्रवाई रिपोर्ट" भी समयबद्ध होनी चाहिए और इसे सार्वजनिक किया जाना चाहिए। यह भी सलाह है कि किसी भी सामाजिक लेखापरीक्षा के साथ ही पिछली लेखापरीक्षा पर "की गई कार्रवाई रिपोर्ट" संलग्न करना आवश्यक है।

(घ) लोगों को स्थानीय निकायों के रिकार्डों, विशेषकर संपत्ति कर संबंधी प्रलेखों, कराधान और संग्रहीत करों, मापन पुस्तकों व मस्टर रोल आदि, की जांच का अवसर दिया जाना चाहिए।

(ङ) पंचायती राज संस्थाओं के मामलों में, एक पद्धति तैयार की जा सकती है, जिसमें उच्च स्तर की पंचायत यथा मध्यस्थ पंचायत अपनी व्याप्ति क्षेत्र में आने वाली सभी पंचायतों के तुलनात्मक निष्पादन का ब्यौरा उपलब्ध कराएगी जिससे कि लोगों को पता चल सके कि उपलब्ध कराई जा रही किसी सेवा के संबंध में उनकी पंचायत का निष्पादन स्तर क्या है।

(च) *राज्य सरकारों को ग्राम सभा की समितियों द्वारा ग्राम पंचायतों की सामाजिक लेखापरीक्षा को प्रोत्साहित करना चाहिए।*

(छ) *सामाजिक लेखापरीक्षा में समुदाय आधारित संगठनों को भी पूरी तरजीह दी जानी चाहिए।*

आयोग इन कार्रवाई बिन्दुओं को एकबार फिर दोहराता है तथा अनुपालन के लिए राज्य सरकारों को इसकी सिफारिश करता है।

3.8.4.5 पारदर्शिता

3.8.4.5.1 सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के अंतर्गत सभी प्रकार की सूचनाओं यथा दायित्वों, कार्यों तथा वित्तीय लेनदेन और संकल्पों आदि को स्वतः स्पष्ट तरीकों से प्रदर्शित किया जाना चाहिए। इस प्रावधान को सभी स्थानीय शासन निकायों के लिए एक अनिवार्य नियम बनाया जाना चाहिए। कई निकायों ने पारदर्शिता के अपने कार्यतंत्र विकसित किए हैं (बॉक्स 3.7 देखें)। अन्य स्थानीय निकायों द्वारा भी इन पद्धतियों को अपनाना चाहिए।

3.8.5 स्थानीय निकायों के कार्यनिष्पादन का मूल्यांकन

3.8.5.1 जैसाकि ऊपर बताया गया है, सहभागिता और पारदर्शिता को बढ़ावा देने वाले प्रयासों के साथ-साथ स्थानीय शासन निकायों को दक्षता, प्रभावकारिता और संसाधनों का अर्जन जैसे संदर्भों में भी विकसित किया जाना चाहिए। इसको हासिल करने का एक तरीका स्थानीय निकायों के निष्पादन के संबंध में निर्देशक चिन्हों को स्थापित करना होगा। सेवा सुपुर्दगी में प्रभावोत्पादकता सुनिश्चित करने के लिए स्थानीय निकायों के निष्पादनों का घनिष्ठ अनुवीक्षण होना चाहिए। इसका उत्कृष्ट तरीका यह है कि इन संस्थाओं में सभी स्तरों पर एक अनुवीक्षण योग्य प्रक्रिया आरंभ की जाए। स्थानीय स्तर पर विचार-विमर्श के जरिए अनुवीक्षण हेतु मानदंडों के विकास के माध्यम से यह कार्य किया जा सकता है। संसूचक संकेतकों का विकास ही क्षमता निर्माण की उत्कृष्ट प्रक्रिया बन जाती है। निष्पादन के स्व-आकलन की उक्त विधियों के प्रोत्साहन का एक उपाय यह भी है कि पंचायती राज संस्थाओं की स्थिति में जिले के भीतर तथा शहरी स्थानीय निकायों की स्थिति में राज्य के भीतर किसी खास संकेतक के संदर्भ में संगत आंकड़ों को समेकित किया जाए और बेहतरीन संभावित अवस्थिति तथा उसी प्रकार किसी एक क्षेत्र में अर्जित उपलब्धियों के न्यूनतम वास्तविक स्तर के साथ इसकी तुलना की जाए। इन निकायों के लिए सेवा सुपुर्दगी के संबंध में कुछ खास स्वीकृत गुणवत्ता मापदंडों को विनिर्दिष्ट करना और

नागरिक चार्टर के उपयोग से इनका व्यापक प्रचार करना तथा उनके अनुपालन की पुष्टि के क्रम में समय-समय पर आवधिक जांच करना भी विशेष रूप से लाभकारी होगा।

3.8.5.2 तमिलनाडु में भारत-यूएसएआईडी फायर डी (वित्तीय संस्थात्मक सुधार और विस्तार) परियोजना के अंतर्गत नगरपालिकाओं के तुलनात्मक आकलन के उपायों को विकसित करने के संबंध में एक अध्ययन किया गया। अध्ययन में नगरपालिकाओं के निष्पादन स्तरों के मूल्यांकन में कुल इक्तालीस (41) संकेतकों को अपनाया गया जिसमें से वित्तीय (15), सेवा स्तर और कवरेज (17) और सेवा दक्षता के (9) संकेतक शामिल थे।[13] इस परियोजना में ऋण प्रबंधन के संकेतकों में प्रति व्यक्ति बकाया ऋण और अधिदेशों को, मल-जल निकासी तथा सफाई स्तर के सेवा त्वरित संकेतकों में सार्वजनिक सुविधाओं की प्रदत्त प्रति व्यक्ति इकाई और मल-जल निकासी तथा सफाई के लिए विशेषतया सेवा-दक्षता संकेतकों में प्रति 10,000 आबादी पर अपेक्षित स्टाफ आदि को शामिल किया गया था। स्थानीय निकायों के निष्पादन के आधार पर मानक निर्धारण का कार्य सम्पन्न किया गया था।

3.8.5.3 केन्द्रीय पंचायती राज मंत्रालय में पंचायतों के लिए (2005 में) एक पुरस्कार योजना शुरू की है। इस स्कीम के अंतर्गत उत्कृष्ट ग्राम पंचायत का निर्धारण करने के लिए एक अहम पैमाना "विशिष्ट अभिज्ञात पैरामीटरों और कार्यकलापों की चिन्हित श्रृंखला के संदर्भ में परीक्षित सेवा सुपुर्दगी" है।[14]

3.8.5.4 आयोग का विचार है कि राज्य सरकार को उक्त पैरामीटरों को विकसित करने के लिए कार्रवाई करनी चाहिए। इस प्रयोजन हेतु सरकार स्वायत्त व्यावसायिक मूल्यांकनकर्ताओं की सेवाओं का उपयोग भी कर सकती है। यह पैरामीटर निर्धारण दक्षता और परिणामों के संदर्भ में वांछित जिम्मेवारी हासिल कर सकेगा।

3.8.5.5 उपर्युक्त के अलावा, स्थानीय निकायों के निष्पादन का मूल्यांकन नागरिकों के दृष्टिकोण से भी किया जा सकता है। इसके लिए दोनों ही छोरों से "पृष्ठभूमि जानकारी संबंधी कार्यतंत्र" की धारणा को लागू करना अत्यंत आवश्यक है। यह पृष्ठभूमि संबंधी जानकारी विधायी तथा कार्यविधिक सम्पुष्टि, सेवाओं तथा सुविधाओं, सार्वजनिक कार्यों तथा परियोजनाओं और आयोजना तथा कल्पनादृष्टि पर निर्भर हो सकती है। इसे पोलिंग बूथ (मतदाता केन्द्र), गांवों (यदि वे एक वृहद पंचायत का भाग है), बोर्डों और यहां तक कि समुदायों के स्तर पर भी किया जा सकता है। इन पृष्ठभूमि संबंधी जानकारियों की प्रणाली में ऊपर निर्दिष्ट श्रेणियों पर एक संतोषजनक स्कोर का संसूचक संकेत भी शामिल किया जाना चाहिए। इन पृष्ठभूमि संबंधी जानकारियों की पद्धतियों का एक सम्मिश्रण स्थानीय निकायों के निष्पादन के संबंध

13 www.teri.res.in/terilim/users.case3/html

14 htpp/www. Panchayat.in/awards_for best_panchayats.htm

में एक "नागरिक रिपोर्ट कार्ड" मुहैया कराएगा। छत्तीसगढ़ में "सामुदायिक रिपोर्ट कार्ड" के आधार पर निष्पादन रेटिंग के लिए एक पायलेट परियोजना प्रायोगिक तौर पर लागू की गई जिसमें सभी सात जिलों में से नमूने के रूप में 30 ग्राम सभाओं को चुना गया तथा उनमें से कुल बारह (12) गांवों की सेवाओं का आकलन किया गया। इनमें ग्राम सभाएं आयोजित करना, स्वास्थ्य, शिक्षा, पेयजल, सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस), अन्य स्कीमों में - मध्यान्ह भोजन स्कीम, सफाई, भौतिक अवसंरचनाएं, हैंड पम्प रखरखाव, नावा अंजौर (छत्तीसगढ़ जिला निर्धनता उन्मूलन परियोजना) और कराधान[15] आदि शामिल है। आयोग अनुभव करता है कि सहभागी किस्म की ये प्रणालियां, जो कि पूरे विश्व में शासन, सेवा सुपुर्दगी और सशक्तिकरण सुधार के एक प्रभावी साधन के रूप में मान्य हो रही है, जिम्मेवारी बढ़ाने के साधन के तौर पर इन्हें भी तेजी से अपनाए जाने की आवश्यकता है।

3.8.6 सिफारिशें :

(क) वित्तीय सूचनाओं की सत्यनिष्ठा, आंतरिक नियंत्रण की पर्याप्तता, लागू कानूनों या विधानों के अनुपालन तथा स्थानीय निकायों में शामिल सभी व्यक्तियों के नैतिक आचरण के संबंध में निरीक्षण करने के लिए प्रत्येक जिला स्तर पर राज्य सरकार द्वारा लेखापरीक्षा समितियां गठित की जानी चाहिए। इन समितियों में सभी सूचनाओं तक पहुंच, तकनीकी विशेषज्ञों के साथ विचार-विमर्श की क्षमता, और जनता के प्रति जिम्मेवारी के साथ-साथ स्वायत्तता और स्वतंत्रता भी निहित होनी चाहिए। महानगरीय निगमों के लिए अलग से समितियां गठित होनी चाहिए। एक बार जिला परिषद गठित हो जाने पर जिला परिषद की एक विशेष समिति जिले में स्थित स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा रिपोर्टों तथा वित्तीय विवरणियों की जांच करे। वित्तीय चूक होने की स्थिति में भी उक्त समितियां प्राधिकृत की जा सकती हैं। जिला परिषद की अपनी लेखापरीक्षा रिपोर्ट की स्थिति में विधायी परिषद की एक पृथक समिति द्वारा यही कार्य निष्पादित किया जा सकता है।

(ख) स्थानीय निकायों के लिए राज्य विधानमंडल की एक पृथक स्थायी समिति होनी चाहिए। यह समिति लोक लेखा समिति की विधि-विधान पर भी हो सकती है।

(ग) नीचे लिखे सुरक्षा उपायों के अनुक्रम में एक स्थानीय निकाय माध्यस्थम गठित किया जाए। स्थानीय निकाय माध्यस्थम के संबंध में यथापेक्षित प्रावधानों के लिए संबद्ध राज्य पंचायत अधिनियमों तथा शहरी स्थानीय निकायों के अधिनियमों को संशोधित किया जाना चाहिए।

15 htpp/www.sasanet.org/documents/LearningNote/Chattisgarh.pdf

(i) जिलों के एक समूह के लिए एक स्थानीय निकाय माध्यस्थम गठित किया जाए जो स्थानीय निकायों के भ्रष्टाचार तथा कुप्रशासन तथा इन निकायों के निर्वाचित तथा नियुक्त दोनों प्राधिकारियों के विरूद्ध प्राप्त शिकायतों पर ध्यान देगा। इसके लिए संबंधित राज्य विधान में प्रमुख शब्द "लोक सेवक" को उपयुक्ततः परिभाषित किया जाना चाहिए।

(ii) स्थानीय निकाय माध्यस्थम एकल सदस्यीय निकाय होना चाहिए जिसकी नियुक्ति राज्य के मुख्यमंत्री, राज्य विधानसभा के अध्यक्ष और विधानसभा में मुख्य विपक्षी नेता को मिलाकर गठित एक समिति द्वारा की जानी चाहिए। माध्यस्थम का यह पद असंदिग्ध सत्यनिष्ठा वाले महत्वपूर्ण व्यक्तियों की सूची में से ही किसी को दिया जाना चाहिए। उक्त व्यक्ति कोई भी सेवारत सरकारी अधिकारी नहीं होना चाहिए।

(iii) माध्यस्थम को प्राप्त शिकायतों पर जांच करने तथा उपयुक्त कार्रवाई के लिए अपनी रिपोर्ट सक्षम प्राधिकारियों को भेजने का प्राधिकार होगा। स्थानीय निकायों तथा इसके निर्वाचित अधिकारियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार या सामान्य कुप्रशासन की कोई शिकायत मिलने पर माध्यस्थम अपनी रिपोर्ट लोकायुक्त को भेजेगा जो आगे अपनी सिफारिशों के साथ आवश्यक कार्रवाई के लिए इसे राज्य के राज्यपाल को भेजेगा। माध्यस्थम की सिफारिशों से किसी प्रकार की भी कोई अस्वीकृति या असहमति होने की स्थिति में इसका कारण सहित उल्लेख सार्वजनिक रूप से करना आवश्यक होगा।

(iv) महानगरपालिका की स्थिति में एक पृथक माध्यस्थम गठित किया जाए।

(v) शिकायतों पर अपनी जांच पूरी करने के लिए माध्यस्थम के लिए समय-सीमा भी निर्धारित की जा सकती है।

(घ) यदि शिकायतें या फरियाद इस स्थानीय निकायों में विधि शासित चुनावों के उल्लंघन से संबंधित हों और जो सदस्यों की सदस्यता निरस्त करने या अयोग्य ठहराए जाने का कारण बन सकती हों तो उक्त स्थिति में जांचकर्ता प्राधिकारी को राज्य के चुनाव आयोग को यह मामला सौंप देना चाहिए जो इस संबंध में अपनी सिफारिशें राज्य के राज्यपाल को भेज देगा।

(ङ) नागरिकों को सुगम पहुंच सुलभ कराने के लिए स्थानीय निकायों के नियंत्रण के अंतर्गत प्राधिकारियों के पदानुक्रम में यथा उपयुक्त विचारित निम्नतम पद तक कार्यों का प्रत्यायोजन किया जाना चाहिए।

(च) नागरिकों की फरियादों व शिकायतों पर ध्यान देने तथा सहज समाधान प्रस्तुत करने के लिए प्रत्येक स्थानीय निकाय में शिकायतों के निवारण संबंधी नियत मानकों का एक आंतरिक कार्यतंत्र होना चाहिए।

(छ) सामाजिक लेखापरीक्षा के पुख्ता मानक स्थापित करने के लिए प्रत्येक राज्य को "आधारभूत स्तर पर योजना" विषय पर विशेषज्ञ समूह की रिपोर्ट के पैराग्राफ 5.9.5 में सुझाए गए कार्य बिन्दुओं को लागू करने के लिए तत्काल आवश्यक कदम उठाने चाहिए।

(ज) यह भी सुनिश्चित किया जाए कि सूचना के अधिकार अधिनियम,2005 के अंतर्गत "स्व-स्पष्ट प्रकटीकरण" केवल उक्त अधिनियम के भाग 4(1) में यथा-विद्यमान सत्रह मदों तक ही सीमित न रहे बल्कि अन्य मामलों, जहां कहीं भी जनहित जुड़ा हो, को भी इसमें शामिल किया जाना चाहिए।

(झ) प्रत्येक राज्य द्वारा सुस्पष्ट निष्पादन संकेतकों पर आधारित एक पैरामीटर प्रणाली विकसित करने के लिए एक उपयुक्त कार्यतंत्र अपनाया जाना चाहिए। इस संबंध में - स्वायत्त और निष्पक्ष व्यावसायिक मूल्यांकनकर्ताओं की सेवाओं का लाभ भी उठाया जा सकता है।

(ञ) स्थानीय निकायों के निष्पादन के आकलन के लिए मूल्यांकन उपाय या साधनों का अभिविन्यास किया जाए, जिसमें मूल्यांकन प्रक्रिया में नागरिकों को भी पर्याप्त महत्व दिया जाना चाहिए। स्थानीय निकायों के निष्पादन से संबंधित एक पृष्ठभूमि संबंधी जानकारी के कार्यतंत्र में "नागरिक रिपोर्ट कार्ड" जैसे साधनों को भी शामिल किया जा सकता है।

3.9 लेखाकरण और लेखापरीक्षा

3.9.1 संवैधानिक सशक्तिकरण, संसाधनों तथा सरकारी अंतरणों की बढ़ती हुई मात्रा के माध्यम से स्थानीय स्व-शासन संस्थाओं की क्षमता के विकास में एक सुदृढ़ और मजबूत लेखाकरण मशीनरी भी शामिल है, जो लेखाकरण के कठोर मापदंडों को अपनाने पर तत्पर हो। अपने बजट भाषण 2006-07 में केन्द्रीय वित्त मंत्री ने संकेत दिया था कि आठ अग्रणी कार्यक्रमों में संसाधनों की भारी मात्रा व्यय की जाएगी। उक्त आठ कार्यक्रमों में सर्वशिक्षा अभियान, मध्याह्न भोजन स्कीम, पेय जल मिशन, समग्र स्वच्छता अभियान, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, एकीकृत बाल विकास सेवा, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कार्यक्रम तथा जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन (जेएनएनयूआरएम) आदि

शामिल हैं। जेएनएनयूआरएम के अपवाद स्वरूप शेष सभी स्कीमें वर्ष 2006-07 तथा 2007-08[16] "के दौरान यथेष्ठ आबंटन के साथ-साथ पंचायतों के मुख्य कार्य क्षेत्र में ही आती हैं। इन स्कीमों के लिए आबंटित निधियों का विवरण सारणी 3.7 में दर्शाया गया है।

सारणी 3.7 : अग्रणी स्कीमों के लिए निधियों का आबंटन

क्रम सं0	स्कीम	मंत्रालय/विभाग	वर्ष 2006-07 में आबंटन (करोड़ रुपए में)	वर्ष 2007-08 में आबंटन (करोड़ रुपए में)
1	सर्वशिक्षा अभियान	बुनियादी शिक्षा विभाग	10041	10671
2	मध्याह्न भोजन स्कीम	बुनियादी शिक्षा विभाग	4813	7324
3	पेय जल मिशन	पेय जल आपूर्ति विभाग	4680	6500
4	संपूर्ण स्वच्छता अभियान	पेय जल आपूर्ति विभाग	720	1060
5	राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन	स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय	8207	10890
6	एकीकृत बाल विकास सेवाएं	मानव संसाधन विकास मंत्रालय-महिला एवं बाल कल्याण विभाग	4087	4761
7	राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम (एसजीआरवाई सहित)	ग्रामीण विकास मंत्रालय	14300	12000
	कुल		**46848**	**53306**

3.9.2 यहां तक कि जेएनएनयूआरएम के मामले में भी यह संकल्पित है कि केन्द्र तथा राज्य सरकारों से निधियां राज्य द्वारा नामोद्दिष्ट नोडल एजेंसी को सीधे अंतरित की जाएंगी और अभिचिन्हित परियोजनाओं के मामलों में निधियां सभी नगरों में शहरी स्थानीय निकायों/परा-स्थानिकों को इस नोडल एजेंसी के माध्यम से आवंटित की जाएंगी।[17] इस प्रकार विभिन्न सामाजिक-आर्थिक विकासपरक कार्यक्रमों के

16 स्रोत : "जमीनीं स्तर पर आयोजना" विषय पर विशेषज्ञ समूह की रिपोर्ट मार्च, 2006 तथा केन्द्रीय बजट वर्ष 2007-08।
17 स्रोत : रुपरेखा दस्तावेज, जेएनएनयूआरएम http//jnuram.nic.in/overview.pdf से दिनांक 5.07.2007 को प्राप्त।

अंतर्गत स्थानीय निकायों को किए जाने वाले निधियों के विशाल प्रवाह और शासन की तीसरे स्तर के बढ़ते हुए महत्व के साथ-साथ उत्तरदायित्व क्रांतिक महत्ता अर्जित करती जाती है। अतः देश में स्थानीय निकायों की भारी संख्या को देखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि लेखे और लेखापरीक्षा के रखरखाव पर पर्याप्त ध्यान दिया जाए।

3.9.3 संविधान का अनुच्छेद 243ञ पंचायतों के लेखे की लेखापरीक्षा के संबंध में निम्नवत प्रावधान करता है :

"राज्य का विधान, विधि द्वारा पंचायतों द्वारा लेखे के अनुरक्षण तथा उन लेखे की लेखापरीक्षा के संबंध में प्रावधान बनाएगा।"

3.9.4 संविधान का अनुच्छेद 243य नगरपालिकाओं की लेखापरीक्षा के बारे में यही प्रावधान करता है। यहां तक कि विभिन्न राज्यों ने लेखे की लेखापरीक्षा और उनके रखरखाव के संबंध में अपने-अपने पंचायती राज तथा नगरपालिका अधिनियमों में कई आम प्रावधानों को सम्मिलित किया है तथापि सामान्यतया विस्तृत दिशानिर्देश अभी तक जारी नहीं हुए हैं। इस स्थिति पर ग्यारहवें वित्त आयोग (ईएफसी) की टिप्पणी इस प्रकार से है :

"संविधान का अनुच्छेद 243ञ और 243य राज्यों से यह अपेक्षा करता है कि वे पंचायतों और नगरपालिकाओं द्वारा लेखे के अनुरक्षण तथा उन लेखे की लेखापरीक्षा के लिए, विधि द्वारा, प्रावधान बनाएंगे। इसके अनुपालन में ज्यादातर राज्य विधानों में इस प्रयोजन से सामान्य प्रावधान बनाए गए हैं लेकिन कई वर्षों के बावजूद विस्तृत और व्यापक दिशानिर्देश अभी तक विनिर्दिष्ट नहीं हुए हैं। कई राज्यों में इन निकायों द्वारा लेखे के अनुरक्षण के लिए प्रारूप तथा कार्यविधि एक दशक पहले ही विनिर्दिष्ट हो चुकी थी, किन्तु उनकी शक्तियों, संसाधनों तथा उत्तरदायित्वों में बहुविध वृद्धि को ध्यान में रखते हुए उनमें कोई सुधार अभी तक नहीं हुआ फलतः वे पहले की भांति ही बरकरार बने हुए हैं। कई राज्य स्तरीय पंचायतों में वित्तीय तंगी के चलते अंशकालिक या पूर्णकालिक सचिव के अलावा कोई दूसरा कर्मचारी तक नहीं है। इसलिए ग्राम पंचायतों से यह अपेक्षा करना कि, वे लेखे के उचित रखरखाव के लिए प्रतिबद्ध तथा विशेष रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति नियुक्त करेंगी, अस्वाभाविक और असहज होगा। कालांतर में पंचायतों तथा नगरपालिकाओं को किए जाने वाले निधियों के प्रवाह में अच्छी खासी वृद्धि होगी। इसलिए स्थानीय निकायों द्वारा लेखे की देखभाल व उनके रखरखाव की

ऐसी पद्धति विकसित किए जाने की आवश्यकता है जो कि सभी राज्यों द्वारा समान रूप से अपनाई तथा अनुपालित की जा सके। जहां तक लेखापरीक्षा का संबंध है, कई राज्यों में तो राज्य विधान ने प्राधिकार विनिर्देशन का कार्य राज्य सरकारों पर छोड़ा हुआ है। कुछेक राज्यों में पंचायतों ओर नगरपालिकाओं के लेखे की लेखापरीक्षा का उत्तरदायित्व निदेशक, स्थानीय लेखापरीक्षा या किसी सदृश प्राधिकरण को सौंपा गया है। लेखापरीक्षा के काम में नियंत्रक और महा लेखापरीक्षक की भूमिका बहुत थोड़े राज्यों में ही है किन्तु वह भी केवल जिला स्तरीय पंचायतों और बहुत बड़े शहरी निकायों तक ही सीमित है। हमारे विचार से लेखा तथा लेखापरीक्षा का यह क्षेत्र नियंत्रक और महा लेखापरीक्षक की घनिष्ठ देखरेख में ही निर्दिष्ट किए जाने की आवश्यकता है, और इसके समर्थन में हमारे द्वारा स्थानीय निकायों को अनुशंसित अनुदानों में से निधियों का विशिष्ट चिन्हांकन भी किया जाना चाहिए"। [18]

बॉक्स 3.8 : महाराष्ट्र में नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा पंचायती राज संस्थाओं की लेखापरीक्षा का सिंहावलोकन

1. लेखा संहिता और कोषागार नियमावली के प्रावधानों के उल्लंघन में कोषागार से किए गए आहरणों तथा उनके प्रेषण को समाहित नहीं किया गया था। तेरह जिला परिषदों में बैंक पास बुक के साथ रोकड़ बही का समाधान भी विलंबित/अतिदेय था, कोषागार से 17.42 करोड़ रुपए आहरित थे जो कि असमाहित ही पड़े थे (पैराग्राफ 2.3)।
2. सभी 14 जिला परिषदों में कुल 232.96 करोड़ रुपए की खर्च न की गई अनुदान राशि व्यय किए बिना ही पड़ी रही और जून 2004 से दिसम्बर, 2004 के बीच इसे सरकारी लेखे में जमा नहीं कराया गया (पैराग्राफ 2.6)।
3. दस जिला परिषदों में 12.17 करोड़ रुपए के व्यपगत निक्षेप राजस्व शीर्ष में जमा नहीं कराए गए, यहां तक कि तीन वर्ष की अनुबंधित समय-सीमा बीतने पर भी नहीं (पैराग्राफ 2.8)।
4. चार जिला परिषदों में 4.85 करोड़ रुपए की राशि अनियमित तरीकों से निक्षेपित पड़ी रही (पैराग्राफ 2.9)।
5. तीन जिला परिषदों में 1.04 करोड़ रुपए की प्राप्तियां वर्ष 2000-01 तथा 2003-2004 के बीच सरकारी खाते में जमा नहीं कराई गईं (पैराग्राफ 2.10)।
6. सात जिला परिषदों में 1.83 करोड़ रुपए ब्याज के तौर पर अर्जित किए गए किन्तु इन्हें डीआरडीए में जमा नहीं कराया गया (पैराग्राफ 2.14)।

स्रोत : नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक लेखापरीक्षा रिपोर्ट (पंचायती राज) महाराष्ट्र वर्ष 2004-05; सिंहावलोकन दिनांक 3.07.2007 के http:// www.cag.gov.in/html/LB/ mb04_05/overviewpdf से प्राप्त।

3.9.5 ग्यारहवें वित्त आयोग (ईएफसी) के अवलोकन में स्थानीय निकायों के लेखे तथा लेखापरीक्षा में भारत के नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक की भूमिका को बढ़ाए जाने की बात कही गई है। इस संबंध में ग्यारहवे वित्त आयोग की मुख्य सिफारिशें निम्नानुसार थीं:

(क) पंचायतों तथा शहरी स्थानीय निकायों के सभी विद्यमान सोपानों/स्तरों के लेखें के समुचित अनुरक्षण व उनकी लेखापरीक्षा पर सतत नियंत्रण तथा पर्यवेक्षण का उत्तरदायित्व नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक को सौंपा जाना चाहिए।

18 पैरा 8.19, ग्यारहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट जून, 2000

(ख) स्थानीय निकायों के लेखे की लेखापरीक्षा के लिए जिम्मेवार ठहराए गए निदेशक, स्थानीय निधि लेखापरीक्षा अथवा अन्य सदृश एजेंसी को नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक के तकनीकी और प्रशासनिक पर्यवेक्षण में काम करना चाहिए ठीक उसी प्रकार जैसे कि राज्य का मुख्य चुनाव अधिकारी केन्द्रीय निर्वाचन आयोग के नियंत्रण और देखरेख में काम करता है।

(ग) स्थानीय निकायों के लेखे के रखरखाव तथा बजट तैयार करने के लिए नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक को प्रारूप विनिर्दिष्ट करने चाहिए। ये प्रारूप नेटवर्कयुक्त वातावरण में कम्प्यूटरीकरण की दृष्टि से परीक्षणीय होने चाहिए।

(घ) स्थानीय निकाय, विशेषकर ग्राम स्तरीय पंचायतें तथा कुछ मामलों में मध्यस्थ पंचायतें, जिनके पास प्रशिक्षित लेखा कर्मचारी नहीं होते है, लेखे की देखभाल, अनुसरण के लिए बाहरी एजेंसी/व्यक्तियों से संपर्क कर सकती हैं।

(ङ) स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा का कार्य नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक को सौंपा जाए जोकि अपने निजी स्टाफ द्वारा या पारिश्रमिक की अपनी निर्धारित दरों पर किसी बाहरी एजेंसी से भुगतान पर यह काम करा सकेगा।

(च) पंचायतों तथा नगरपालिकाओं के लेखे की लेखापरीक्षा से संबंधित सीएंडएजी रिपोर्ट को लोक लेखा समिति की तर्ज पर गठित राज्य विधानसभा की एक विशिष्ट समिति के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा।[19]

3.9.6 ग्यारहवें वित्त आयोग (ईएफसी) द्वारा की गई सिफारिशों का अध्ययन विभिन्न राज्य वित्त आयोगों द्वारा किया गया और इस सिलसिले में प्राप्त व्यावहारिक अड़चनों ने उन्हें इन सिफारिशों में किंचित संशोधन के लिए विवश किया। इस प्रकार तमिलनाडु के द्वितीय राज्य वित्त आयोग ने (2002-07) सिफारिश की कि निदेशक, स्थानीय निधि लेखापरीक्षा (डीएलएफए) को नगरनिगमों, नगरपालिकाओं, कस्बा पंचायतों, जिला पंचायतों और पंचायत संघों के लिए सांविधिक लेखापरीक्षक बनाया जाना चाहिए जबकि ग्राम पंचायतों की लेखापरीक्षा उप-प्रखंड विकास अधिकारी द्वारा किया जाना जारी रहे, साथ में शर्त यह है कि जांच लेखापरीक्षा डीएलएफए[20] द्वारा की जाए। दस नगरपालिकाओं और नगरनिगमों के लिए एक पायलेट स्कीम संचालित करते हुए तमिलनाडु देश का पहला प्रांत था जिसने प्रोद्भवन लेखाकरण प्रणाली को अपनाने में अग्रणी भूमिका निभाई। द्वितीय राज्य वित्त आयोग ने सिफारिश की कि कर्मचारियों को विधिवत प्रशिक्षण[21] के बाद वर्ष 2003-04 के बाद से प्रोद्भवन लेखाकरण प्रणाली को

19 पैरा 8.19, ग्यारहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट जून, 2000
20 पैरा 3.6 द्वितीय राज्य वित्त आयोग रिपोर्ट, तमिलनाडु, मई, 2001, खंड-I
21 पैरा 3.7 द्वितीय राज्य वित्त आयोग रिपोर्ट, तमिलनाडु, मई, 2001, खंड-I

प्रगामी रूप से सभी कस्बा पंचायतों और पंचायत संघों तक लागू किया जाए। तथापि यह सुझाव भी दिया गया कि, *"महालेखाकार स्थानीय निधि लेखापरीक्षा के निदेशक की लेखापरीक्षा रिपोर्टों का अध्ययन करे और तकनीकी निविष्टियों तथा मानकों को शामिल करते हुए इनमें बढ़ोतरी की दृष्टि से सुधारों का सुझाव दे। स्थानीय निधि लेखापरीक्षा निदेशक को महालेखाकार की ओर से सतत रूप से तकनीकी दिशानिर्देश मिल सकता है"।*

3.9.7 द्वितीय राज्य वित्त आयोग, उत्तर प्रदेश ने भी पंचायती राज संस्थाओं के लेखे तथा लेखापरीक्षा को सरलीकृत व सुवाही बनाने के क्रम में ईएफसी की सिफारिशों की जांच की। इसने नोट किया कि उत्तर प्रदेश सरकर स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक की देखरेख में कराने पर सहमत हैं जबकि जिला पंचायतों की लेखापरीक्षा महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) उत्तर प्रदेश द्वारा कराई जाएगी और क्षेत्र तथा ग्राम पंचायतों की लेखापरीक्षा का कार्य महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) कार्यालय की लेखापरीक्षा पार्टियों और राज्य सरकार के पंचायती राज लेखापरीक्षा स्टाफ को सौंपा जाएगा। तथापि पंचायती राज संस्थाओं की भारी संख्या और ग्राम पंचायतों के बेहद छोटे आकार तथा निम्न आय स्तर को देखते हुए इसकी सिफारिश थी कि — *"राज्य में पंचायती राज संस्थाओं की लेखापरीक्षा के लिए एक पृथक संगठन बनाया जाना चाहिए, और इसे सहकारी समितियों की लेखापरीक्षा को विद्यमान व्यवस्था से असंयुक्त किया जाए। इसे वित्त विभाग के नियंत्रणाधीन एक स्वायत्त निकाय होना चाहिए और जैसी कि राज्य सरकार द्वारा सहमति दी गई है इस निकाय को नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक के पर्यवेक्षण और दिशानिर्देश में कार्यरत रहना चाहिए।*[22]" नगरपालिका लेखाकरण के संबंध

बॉक्स 3.9 विवेकसम्मत लेखाकरण और रिपोर्टिंग मानदंड का मामला

अरक्कोणम नगरपालिका, जिला वेल्लूर, तमिलनाडु के एक मामले में नगरपालिका ने रेल मंत्रालय से जमीन खरीदने के लिए 10.75 प्रतिशत वार्षिक की ब्याज दर पर 9.88 लाख रुपए का कर्ज लिया और रेल मंत्रालय से उनकी स्वीकृति हासिल किए बिना यह राशि अदा कर दी। चूंकि रेलवे के साथ यह सौदा पूरा नहीं हो सका और पूरी भूमि का अतिक्रमण हो गया इसलिए अंततः (जनवरी 2004 तक) नगरपालिका ने अपनी इस खरीद का विचार ही छोड़ दिया। रेलवे को चुकाए गए 9.88 लाख रुपए ब्याज सहित वापस पाने के लिए नगरपालिका ने राज्य सरकार की भी सहायता के लिए नहीं कहा। अक्तूबर, 2005 तक स्थिति यह थी कि नगरपालिका ने इस भुगतान के लिए उगाहे गए कर्ज (9.88 लाख रुपए) भी इस पर आए ब्याज (15.20 लाख रुपए) और दंडात्मक ब्याज (3.47 लाख रुपए) नहीं चुकाया था।

स्रोत : नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक की रिपोर्ट (शहरी स्थानीय निकाय), तमिलनाडु वर्ष 2004-05 (3.07.2007) को आहरित http:/www.cag.gov.in/ html/LBI Tno4 05/ULB_chap.111 pdf

22 पैरा 11.91 द्वितीय राज्य वित्त आयोग (पंचायती राज और शहरी स्थानीय निकाय), उत्तर प्रदेश सरकार की रिपोर्ट, जून, 2002, खण्ड 1

में एसएफसी ने नोट किया कि यह राजस्व लेखाकरण पर आधारित एक पुरानी पद्धति थी जो कि शहरी स्थानीय निकायों के वित्तीय निष्पादन के बारे में कोई सार्थक सूचना मुहैया नहीं कराती। यह इस तर्क को भी निरस्त करती है कि नगरपालिकाएं अपनी कार्यकलापों पर बेहतर बजटीय नियंत्रण बनाए रखने के लिए नकद आधारित लेखाकरण पद्धति का अनुपालन करती हैं। स्थानीय निकायों के लेखाकरण अनुरक्षण के लिए विस्तृत प्रारूपों के विकास के लिए इसने नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक को संदर्भित किया और सिफारिश की कि, "स्थानीय निकायों के लेखाकरण तथा लेखापरीक्षा पर एक समेकित वार्षिक रिपोर्ट तैयार कराई जाए तथा उक्त रिपोर्ट को प्रत्येक वर्ष राज्य की विधानसभा में प्रस्तुत किया जाना अनिवार्य हो और राज्य विधानमंडल की समनुदिष्ट एक विशेष समिति, जिसका कार्यकलाप लोक लेखा समिति जैसा ही हो, में एक रिपोर्ट पर व्यापक विचार-विमर्श किया जाए [23]।"

3.9.8 पंचायती राज मंत्रालयों के प्रभारी मंत्रियों का छठा गोलमेज सम्मेलन गुवाहाटी में नवम्बर, 2004 को आयोजित हुआ था। सभी अन्य बातों के साथ-साथ पंचायती राज संस्थाओं की लेखापरीक्षा के संबंध में निम्नलिखित सिफारिशों को अपने-अपने संबद्ध राज्यों में अपनाए जाने पर सहमत थे[24]।

- संवैधानिक आदेशों द्वारा अपेक्षित स्तर तक अपने कार्यकलापों को समुन्नत बनाने के लिए डीएलएफए तथा अन्य सदृश निकायों को नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक अभिमुखी होना चाहिए।
- पंचायतों के कार्यकलापों के अनुरूप लेखाकरण तथा लेखापरीक्षा प्राचल स्थापित किए जाएं तथा इन मानकों की तैयारी में पंचायती राज संस्थाओं को सक्रिय रूप से जुड़ना चाहिए।
- पंचायती राज संस्थाओं के लिए तैयार किए जाने वाले लेखापरीक्षा और लेखाकरण मानक आधारभूत, सरल और निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए सहज बोधगम्य होने चाहिए। उन्हें निम्नलिखित पर केन्द्रित होना चाहिए।
    - 0 लेनदेन की जांच कब करें।
    - 0 क्या अनुवीक्षण करें।
    - 0 लेनदेन का प्रलेखन कैसे करें और
    - 0 लेनदेन का प्रकटन कैसे करें।

23 पैरा 17.17 द्वितीय राज्य वित्त आयोग रिपोर्ट, तमिलनाडु, मई, 2001, खंड-I

24 स्रोत : पंचायती राज मंत्रालय के प्रभारी मंत्रियों के सातवें गोलमेज सम्मेलन के संकल्पों का संग्रह http:// panchayat.gov.in से दिनांक 03.07.2007 को प्राप्त

- लोक लेखा समिति, खासकर पंचायती राज संस्थाओं के लिए या राज्य विधानसभा की पंचायती राज समिति को प्रस्तुत किए जाने वाले पंचायती राज संस्थाओं के लेखे के लिए राज्य विधान में समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए।
- निर्वाचित स्थानीय प्राधिकरणों के लिए समुपयुक्त राजकोषीय उत्तरदायित्व अधिनियमों के द्वारा यथा उपयुक्त संस्थात्मक व्यवस्था भी की जानी चाहिए।

3.9.9 शहरी विकास और निर्धनता उन्मूलन मंत्रालय, (जो कि अब शहरी विकास मंत्रालय है) भारत सरकार ने पहले ही इंडो-यूएसएआईडी फायर परियोजना के साथ-साथ "भारत में नगरपालिका के नए कानून बनाने के लिए नीतिगत विकल्पों" की एक विरचना तैयार की है। इस प्रयास के एक हिस्से के तौर पर भारतीय सनदी लेखाकार संस्थान (आईसीएआई) ने शहरी स्थानीय निकायों द्वारा लेखाकरण तथा वित्तीय रिपोर्टिंग पर एक तकनीकी निर्देशिका तैयार की है। इस निर्देशिका में "नगरपालिकाओं की वित्तीय विवरणियों पर दिशानिर्देश" भी दिए गए हैं।"[25] उसके कुछ महत्वपूर्ण दिशानिर्देश निम्नानुसार हैं :

(क) *स्थानीय निकायों की वित्तीय विवरणी (अर्थात तुलनपत्र और आय-व्यय लेखे) प्रोद्भवन आधार पर तैयार किए जाएंगे।*

(ख) *लेखाकरण नीतियां एक से दूसरे वित्त वर्ष में अनवरत रूप से लागू होंगी। लेखाकरण नीतियों में होने वाला कोई भी परिवर्तन, जिससे चालू अवधि में या अनुवर्ती अवधि में कोई वास्तविक प्रभाव पड़ने की संभावना हो, सर्वसामान्य को स्पष्ट किया जाएगा। लेखाकरण नीतियों में होने वाला कोई भी बदलाव, जिससे कि चालू अवधि में कोई वास्तविक प्रभाव पड़ना सुनिश्चित है, की स्थिति में, उक्त परिवर्तन से होने वाले प्रभाव की राशि को वित्तीय विवरणी में यथासंभावित सीमा तक दर्शाया जाएगा अथवा जहां ऐसे किसी प्रभाव का आकलन कर पाना संभव न हो, वहां पूर्णतः या आंशिक रूप से, यह तथ्य स्पष्टतः उल्लिखित होगा।*

(ग) *सभी ज्ञात देनदारियों तथा हानियों, चाहे वह राशि पूरी तरह से निश्चयपूर्वक निर्धारण योग्य भी न हो और उपलब्ध सूचना के संदर्भ में उत्कृष्ट अनुमान पर ही निर्भर क्यों न हो, के लिए प्रावधान किया जाएगा। संबंधित राजस्व प्राप्त होने तक मान्यता नहीं होगी और विचारित राशि के संबंध में कोई महत्वपूर्ण अनिश्चितता नहीं होगी; और अंततः वसूली की प्रत्याशा करना असंगत नहीं होगा।*

25 स्रोत : दिनांक 3.07.2007 को प्राप्त http://urbanindia.nic.in/moud/legislation/li_by_min/Model_Municipal_law/indexpop.html

(घ) *तुलनपत्रों में लेखाकरण प्रक्रिया तथा प्रस्तुतिकरण और लेनदेन व घटनाओं का तथा आय-व्यय लेखा महज कानूनी तौर पर ही नहीं अपितु वास्तविक अर्थों व संदर्भों में नियंत्रित किया जाएगा।*

(ङ) *तुलनपत्र में किसी मद के विगोपन अर्थात प्रकटीकरण के तौर-तरीकों तथा/अथवा आय-व्यय राशि के निर्धारण में उक्त मद के वास्तविक विवेचन पर विधिवत ध्यान दिया जाएगा।*

3.9.10 यह भी ध्यान में रखा जाना आवश्यक है कि, शहरी स्थानीय निकायों के खाते प्रायः नकद आधार पर रखे जाते है और वहां प्रमाणन की कोई एकीकृत व्यवस्था लागू नहीं है। लेखाकरण की नकद प्रणाली के अंतर्गत राजस्व और व्यय जब वास्तविक तौर पर प्राप्त होते हैं तभी उन्हें बहियों में दर्ज किया जाता है, चाहे उनकी लेखाकरण अवधि कुछ भी क्यों न रही हो। दूसरी तरफ लेखाकरण के प्रोद्भवन आधार में अर्जित संपत्ति के साथ ही राजस्व तथा व्यय को एक निर्दिष्ट समय पर ही अभिचिन्हित किया जाता है। बहियों में उनकी प्रविष्टि तभी होती है जब वे घटते हों। इसी प्रकार आय या व्यय आस्तियों अथवा देनदारियों पर वित्तीय लेनदेन उनके वास्तविक रूप से घटित होने पर ही दर्ज होते हैं। समय का बिताना तथा सेवा सुपुर्दगी संविदाओं का पूर्ण या आंशिक कार्यान्वयन, मूल्यों का ह्रास यहां तक कि धन के वास्तविक भुगतान या प्राप्तियों के जरिए भी दर्ज नहीं हो पाती लेखाकरण की उक्त प्रणाली, विशेषकर शहरी स्थानीय निकायों के संदर्भ में, के कुछ लाभ इस प्रकार से हैं [26]।

- राजस्व को अर्जन होने पर ही माना जाता है और इसी प्रकार "आय" में प्राप्त या प्राप्य दोनों ही प्रकार का राजस्व शामिल होता है। प्रोद्भवन आधार केवल वास्तविक आय को ही दर्ज नहीं करता अपितु राजस्व संग्रहण की दक्षता और उसके सतर को भी रेखांकित करता है और इसके माध्यम से वित्तीय निर्णय लेने में निर्णयकर्ताओं को सुविधा होती है।
- व्यय भी तभी मान्य होता है जब उसके भुगतान की देनदारी उत्पन्न हो, और इस प्रकार यह दिए जा चुके तथा देय दोनों ही तरह की राशियों को बताता है। लेखाकरण के प्रोद्भवन आधार पर प्राप्तियों पर किया गया व्यय तथा अनुरक्षण उनके घटित होने की अवधि के खर्च के रूप में ही माना जाएगा, और यदि वर्ष के दौरान उसका भुगतान नहीं किया जाता है तो उसे देनदारी के रूप में माना जाए तथा वह तुलनपत्र में उसी रूप में दर्शाया जाएगा।
- वर्ष के दौरान व्ययों का मिलान अर्जित आय से किया जाता है। इस प्रकार यह वर्ष में संचालित कार्यों के संबंध में संगठन के वास्तविक निष्पादन को समझने के लिए एक प्रभावी साधन के रूप में भी काम आता है।

26 स्रोत : राष्ट्रीय नगरपालिका लेखा नियमपुस्तिका, नवम्बर, 2006, भारत सरकार, शहरी विकास मंत्रालय।

- राजस्व और पूंजी प्रकृति के मदों के बीच एक स्पष्ट अंतर बनाए रखा जाता है। यह वित्तीय विवरणों यथा, आय और व्यय विवरण तथा तुलन-पत्र के सही प्रस्तुतिकरण में सहायता करता है।
- आय तथा व्यय के लेखे में अप्रभारित लागत को आगे अंतरित कर दिया जाता है तथा उसपर लगातार नजर रखी जाती है। अपनी उपादेयता खो चुकी या भावी संदर्भों में महत्वहीन हो रही लागतों को समाप्त कर दिया जाता है।
- इस योजना से निर्णय लेने, प्रबंधन के प्रत्येक स्तर पर नियंत्रण बनाए रखने तथा उचित गुणतायुक्त सूचनाएं सही समय पर प्राप्त होने में मदद मिलती है।
- वित्तीय संस्थाओं द्वारा वित्तीय मूल्यांकन की स्थिति में प्रोद्भवन लेखाकरण प्रणाली को अपनाने का एक विशिष्ट लाभ यह है कि यह प्रणाली क्रेडिट रेटिंग एजेंसियां, जो कि ऋण साधनों के माध्यम से, वित्तीय बाजार में निधि उगाहने की एक अपरिहार्य पूर्वापेक्षा है, क्रेडिट रेटिंग की सुविधा भी उपलब्ध करा सकती है।

3.9.11 तदनुसार, भारत के नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक के कार्यालय के साथ मिलकर शहरी विकास मंत्रालय, भारत सरकार, राष्ट्रीय शहरी कार्य संस्थान (एनआईयूए) तथा इंडो-यूएसएआईडी फायर-डी परियोजना ने शहरी स्थानीय निकायों के लिए एक राष्ट्रीय नगरपालिका लेखा संहिता (एनएमएएम) तैयार की है। एनएमएएम द्वारा यथा विनिर्दिष्ट अब शहरी स्थानीय निकायों के लेखे प्रोद्भवन आधार पर तैयार किए जाते हैं। इन मानकों को औपचारिक बनाने की जो प्रक्रिया शहरी विकास मंत्रालय और आईसीएआई ने विनिर्दिष्ट की है नए मानक उन्हीं को बनाया गया है। आयोग का विचार है कि शहरी स्थानीय निकायों द्वारा प्रस्तुत किए जाने के लिए राज्य सरकारों को यह नियमपुस्तिका अपनानी चाहिए।

3.9.12 शहरी विकास मंत्रालय द्वारा परिचालित आदर्श नगरपालिका विधि (एमएमएल) में उल्लेख है कि, — *"वित्तीय विवरणी में यथानिहित नगरपालिका लेखे, जिनमें विशेष निधियों के लेखे, यदि हों, भी शामिल हैं और तुलनपत्रों की लेखापरीक्षा तथा जांच राज्य की ओर से लेखापरीक्षा के लिए नामोद्दिष्ट व्यावसायिक सनदी लेखाकारों के पैनल व लेखापरीक्षकों से कराई जाएगी* [खंड 93(1)] [27]। यह व्यवस्था कंपनी अधिनियम, 1956 के अंतर्गत भारतीय कंपनियों के लिए प्राधिकृत लेखापरीक्षा के समान ही है। लेखा प्रमाणीकरण की प्रक्रिया में पारदर्शिता, व्यावसायिक प्रतिस्पर्धा और दायित्व बोध सुनिश्चित करने के लिए आयोग का यह मानना है कि नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक को सनदी लेखाकारों के लिए सदस्यों की अर्हता, सेवा अवधि और फर्मों का अनुभव आदि दिशानिर्देशों का विनिर्देशन करना चाहिए। इसके अलावा यह भी अनुभव किया जाता है कि लेखापरीक्षा के समुचित आयोजन के लिए कंपनी अधिनियम में यथाविहित व्यवस्था के अनुसार भारत के नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा विस्तृत

27 स्रोत : दिनांक 13.08.2007 को प्राप्त http://urbanindia.nic.in/moud/legislation/li_by_min/Model_Municipal_Law/indexmml.html

दिशानिर्देश जारी होने चाहिए। इस प्रक्रिया में यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि स्थानीय निधि लेखापरीक्षा अथवा नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा की गई लेखापरीक्षा उनके दायित्वों के निर्वहन से इस लेखापरीक्षा से अलग और अतिरिक्त होगी।

3.9.13 जैसाकि ऊपर दर्शाया गया है, ग्यारहवें वित्त आयोग ने सूचित किया है कि भारत के नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक (सीएंडएजी) को पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों के विद्यमान सभी तीन स्तरों की लेखापरीक्षा तथा लेखे के समुचित अनुरक्षण की जिम्मेदारी सौंपी जानी चाहिए। इस समय नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा पंचायती राज संस्थाओं तथा शहरी स्थानीय निकायों[28] की लेखापरीक्षा तथा लेखे के अनुरक्षण के संबंध में विकसित संरचनात्मक प्रावधान इस प्रकार से हैं :

- पंचायती राज संस्थाओं तथा शहरी स्थानीय निकायों के लिए लेखापरीक्षा मानक।
- लेखाओं की लेखापरीक्षा प्रमाणन के लिए दिशानिर्देश।
- पंचायती राज संस्थाओं के लिए नियमपुस्तिका।
- जिला परिषदों, पंचायत समितियों और ग्राम पंचायतों के लिए लेखापरीक्षा के प्रशिक्षण मॉड्यूल।
- पंचायती राज संस्थाओं की कार्यकलापों तथा कार्यकलापों के लिए संहिताओं की सूची।
- पंचायती राज संस्थाओं के बजट तथा लेखा संबंधी प्रारूप।
- विस्तृत प्रारूपणों के साथ शहरी स्थानीय निकायों के लिए सुझाई गई लेखाकरण की नूतन प्रोद्भवन प्रणाली।
- पंचायती राज संस्थाओं के लेखे तथा बजट पर प्रशिक्षण मॉड्यूल - सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक - 2 भाग।

3.9.14 दिनांक 31 मार्च, 2007 की यथास्थिति 24 राज्यों, जहां संविधान का 73वां तथा 74वां संशोधन लागू है, में से केवल 19 राज्य[29] ही ऐसे थे, जहां पंचायती राज संस्थाओं तथा शहरी स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा और लेखे पर तकनीकी दिशानिर्देश और पर्यवेक्षक की भूमिका निभाने का दायित्व नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक को सौंपा गया है। राज्य में सभी पंचायती राज संस्थाओं तथा शहरी स्थानीय निकायों के लेखे तथा लेखापरीक्षा के अनुरक्षण तथा पैरामीटर संबंधी तकनीकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए आयोग का सुविचारित मत है कि पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय

28 स्रोत : दिनांक 03.07.2007 को प्राप्त http://kag.nic.in/html/localbodies.htm

29 स्रोत : दिनांक 03.07.2007 को प्राप्त http://kag.nic.in/html/localbodies.htm

निकायों के लेखे तथा लेखापरीक्षा की देख-रेख का कार्य स्थानीय निकायों द्वारा अधिशासित संबद्ध नियमों में यथापेक्षित प्रावधान करते हुए नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक को संस्थात्मक तरीके से सौंपा जाना चाहिए और साथ ही लेखाकरण प्रारूपों और मानकीककृत पैरामीटरों व कानूनों को भी उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

3.9.15 इसी प्रकार पंचायती राज संस्थाओं के लिए नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा विनिर्धारित लेखे तथा बजट प्रारूपों पर जिन 22 राज्यों ने समुचित प्रत्युत्तर दिया था उनमें से 11 राज्यों ने भी स्वीकृति देते हुए औपचारिक आदेश जारी किए हैं।[30] पंचायती राज संस्थाओं द्वारा विकसित प्रारूप मुख्यतः एक साधारण प्राप्ति है और नकद आधार पर भुगतान लेखा के साथ यह महत्वपूर्ण विवरण भी है जो कि प्रोद्भूत आय और व्यय का ध्यान रखे। यह प्रारूपण यह भी सुनिश्चित करता है कि राज्यों की ओर से पंचायतों को सुपुर्द सभी कार्यकलाप समुचित रूप से वर्गीकृत हैं। यह राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर पर वर्गीकरण कोड के साथ समक्रमिक भी है। आयोग नवम्बर 2004 में गुवाहाटी में आयोजित पंचायती राज के प्रभारी मंत्रियों के छठे गोलमेज सम्मेलन में अनुशंसित बात पर विशेष जोर देना चाहेगा जिसमें कहा गया था कि पंचायतों का प्रारूपण निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए सहज, बोधगम्य और सुस्पष्ट होना चाहिए।

3.9.16 ग्यारहवें वित्त आयोग का एक सुझाव यह भी था कि निदेशक स्थानीय निधि लेखापरीक्षा (डीएलएफए) या स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा के लिए जबावदेह किसी भी अन्य एजेंसी को नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक के "तकनीकी तथा प्रशासनिक पर्यवेक्षण" में ही काम करना चाहिए ठीक उसी तरह जैसे राज्य का मुख्य चुनाव अधिकारी केन्द्रीय निर्वाचन आयोग की अधीनता में काम करता है। आयोग का मत है कि नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक की भूमिका तकनीकी दिशानिर्देशन और पर्यवेक्षण तक ही सीमित होनी चाहिए प्रशासनिक नियंत्रण नहीं होना चाहिए। वस्तुतः डीएलएफए की एक स्वतंत्र और स्वायत्त संस्थात्मक हैसियत है। इसलिए यह केवल स्थानीय निकायों के लेखे के लिए नामोद्दिष्ट विशेषज्ञ निकाय के रूप में कार्य कर सकती हैं। इससे स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा तथा जबावदेही पर सकारात्मक प्रभाव तो पड़ेगा ही साथ ही डीएलएफए की महत्ता में भी वृद्धि होगी। इसलिए आयोग यह अनुभव करता है कि इसे हासिल करने के लिए स्थानीय निधि लेखापरीक्षा हेतु निर्दिष्ट निकाय के प्रमुख को राज्य सरकार द्वारा नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा संवीक्षित/सत्यापित सूची में से ही चुना जाना चाहिए। इससे उक्त निकाय यथापेक्षित स्वतंत्रता तथा नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक कार्यालय

30 स्रोत : दिनांक 03.07.2007 को प्राप्त http://kag.nic.in/html/localbodies.htm

द्वारा समन्वयन की सुविधा को भी आत्मसात कर सकेगा। इसके अलावा नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा तकनीकी दिशानिर्देश तथा पर्यवेक्षण की व्यवस्था और सुदृढ़ बनाने की दृष्टि से आयोग का यह भी मत है कि ऐसी व्यवस्थाओं को राज्यों द्वारा स्वीकृति पर स्थानीय निकायों को वित्त आयोग के अनुदान का निर्गमन शर्तबद्ध किया जाए।

3.9.17 डीएलएफए या राज्य सरकार द्वारा नामोद्दिष्ट किसी अन्य प्राधिकरण से लेखापरीक्षा के संवैधानिक प्रावधान के अलावा नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक (कर्त्तव्य शक्तियां तथा सेवा की शर्तें) के अधिनियम 1971 की धारा 14 के अधिकार क्षेत्र में कुछ विशिष्ट निकायों की लेखापरीक्षा भी आएगी। इस धारा की शर्तों के अनुसार किसी राज्य या संघ शासित क्षेत्र, जिसकी अपनी विधानसभा हो, का कोई भी निकाय अथवा प्राधिकरण जो भारत की समेकित निधि में से अनुदानों या ऋणों के रूप में वित्तपोषित होता है, नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक उस निकाय या प्राधिकरण की समस्त प्राप्तियों तथा व्ययों की विधि विहित लेखापरीक्षा करने के लिए प्राधिकृत होगा। इस खंड में यथाविहित प्रयोजन यदि अनुदान या ऋण 25 लाख रुपए से कम नहीं है और उक्त निकाय के कुल व्यय के 75 प्रतिशत से कम नहीं है तो उसे पर्याप्ततः वित्तपोषित ही माना जाएगा। किसी निकाय द्वारा एक वित्त वर्ष में एक करोड़ रुपए तक का प्राप्त ऋण या अनुदान की स्थिति में यह प्रावधान है कि नियंत्रक एवं महा लेखापरीक राष्ट्रपति या राज्य अथवा संघ शासित क्षेत्र के प्रशासक की पूर्व अनुमति लेकर, उस निकाय की लेखापरीक्षा कर सकेगा। वास्तव में इस प्राधिकार का व्यवहार करते हुए नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक, जहां कहीं लागू हो, इस अधिनियम की धारा 14 के अंतर्गत विभिन्न राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं तथा शहरी स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा पहले से ही कर रहा है। इसके साथ ही कथित अधिनियम की धारा 20 के अंतर्गत संबद्ध सरकारों के साथ किए गए पारंपरिक समझौते के आधार पर नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा कई विशिष्ट निकायों की लेखापरीक्षा का प्रावधान पहले से ही विद्यमान है। इस प्रावधान के अनुसार कई राज्य अपने स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा का दायित्व नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक को पहले ही सौंप चुके हैं। वास्तव में बिहार, पश्चिम बंगाल, झारखंड आदि राज्यों में नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक की संस्था है, जो स्थानीय निधियों के जांचकर्ता के रूप में कार्य करती हैं। यहां तक कि कर्नाटक में पहले दो स्तरों यथा-जिला परिषद और तालुका परिषद पहले से ही नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा एकल लेखापरीक्षक के रूप में लेखापरीक्षित किए जा रहे हैं; त्रिपुरा में भी राज्य सरकार ने पंचायती राज संस्थाओं के लेखे की लेखापरीक्षा की जिम्मेदारी नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक को सौंपी है। आयोग का विचार है कि इस मामले पर अंतिम निर्णय की जिम्मेदारी संबद्ध राज्यों पर ही छोड़ दी जानी चाहिए।

3.9.18 समान रूप से ही यह भी महत्वपूर्ण है कि नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक की लेखापरीक्षा रिपोर्टों पर तत्काल कार्रवाई होनी चाहिए। दायित्वबोध से परिपूर्ण करने के लिए आवश्यक है कि लेखापरीक्षा रिपोर्ट पर उपचारात्मक कार्रवाई तत्काल की जाए। इससे स्थानीय शासनों की प्रभावोत्पादकता में अभूतपूर्व वृद्धि होगी। जैसी कि ग्यारहवीं वित्त आयोग की सिफारिश भी थी कि स्थानीय निकायों पर नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक की सिफारिशों को राज्य विधानमंडल में रखा जाना चाहिए और जनहित की दृष्टि से यह भी कल्याणकारी रहेगा कि लोक लेखा समिति (पीएसी) की तर्ज पर एक पृथक समिति बनाकर इस समिति में उक्त रिपोर्टों पर विचार-विमर्श किया जाए। पंचायती राज के प्रभारी मंत्रियों की छठे गोलमेज सम्मेलन में भी इसी प्रकार की सिफारिश की गई थी। इन्हीं बातों को आयोग भी दोहराना चाहता है। स्थानीय निकायों पर लेखापरीक्षा रिपोर्ट को राज्य विधानसभा में प्रस्तुत किया जाना चाहिए और लोक लेखा समिति की भांति ही राज्य विधानसभा की एक पृथक समिति में इनपर व्यापक विचार होना चाहिए। स्थानीय निकायों के अधिशासी राज्य विधानसभाओं में समुचित प्रावधान शामिल करते हुए नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक या लेखापरीक्षा के लिए नामोद्दिष्ट प्राधिकृत अथवा डीएलएफए को अपेक्षित संगत सूचना मांगने और रिकार्ड देखनें की शक्तियां प्राधिकृत की जानी चाहिए।

3.9.19 लेखे तथा लेखापरीखा के संबंध में उपर्युक्त मानकों के अनुरूप स्थानीय शासनों विशेष रूप से पंचायती राज संस्थाओं को प्रशिक्षित व दक्ष व्यावसायिक व्यक्तियों की उपलब्धता सुनिश्चित करते हुए सुदृढ़ किए जाने की आवश्यकता है। आयोग का विचार है कि पंचायती राज संस्थाओं तथा शहरी स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए राज्य सरकारों को चाहिए कि वे इन संस्थाओं का उपयुक्त क्षमता निर्माण करें।

3.9.20 स्थानीय निकायों की क्षमता और लेखापरीक्षा कार्यतंत्र की विश्वसनीयता में प्रभावी वृद्धि से निष्पादन लेखापरीक्षा की एक प्रणाली धीरे-धीरे लागू की जानी चाहिए। इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त पैरामीटर विकसित किए जाने चाहिए। यह स्थानीय निकायों के कार्यकरण को सुदृढ़ करेंगे तथा बहु वांछित जिम्मेदारी का तत्व शामिल करेंगे।

3.9.21 चूंकि स्थानीय निकायों को काफी निधियां अंतरित हो रही है अतः दायित्वबोध अर्थात जिम्मेदारी की भावना के साथ-साथ वित्तीय प्रबंधन संबंधी ठोस और कारगर सिद्धांतों का अनुपालन स्थानीय निकायों के लिए एक अपरिहार्य शर्त बन गई है। इनमें अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित शामिल होना चाहिए :

- प्रभावी तथा सतत राजकोषीय - अनुवीक्षण प्रणाली।
- स्थानीय निकायों के ऋणों को विवेकसम्मत स्तर तक बरकरार रखना।
- आकस्मिक देनदारियों तथा गारंटियों का विवेकसम्मत प्रबंधन।
- ऋणों का उत्पादक प्रयोग।

कर्नाटक स्थानीय निधि प्राधिकरण राजकोषीय उत्तरदायित्व अधिनियम, 2003 को लागू करने के साथ ही कर्नाटक सरकार ने कुछ आवश्यक कदम उठाए हैं। इस संबंध में नवम्बर, 2004 में गुवाहाटी में आयोजित पंचायती राज के प्रभारी मंत्रियों के छठे गोलमेज सम्मेलन में व्यक्त विचारों को एक बार फिर दोहराते हुए आयोग का मानना है कि राजकोषीय उत्तरदायित्व का एक उपयुक्त अधिनियम कानूनी तौर पर सभी राज्यों द्वारा तैयार किया जाना चाहिए।

3.9.22 सिफारिशें :

(क) शहरी स्थानीय निकायों के संबंध में राष्ट्रीय नगरपालिका लेखा नियमपुस्तिका (एनएमएएम) में यथा विहित लेखाकरण प्रणाली राज्य सरकारों को अपनानी चाहिए।

(ख) शहरी स्थानीय निकायों की वित्तीय विवरणी और तुलनपत्रों की लेखापरीक्षा किसी लेखापरीक्षक द्वारा उसी तरीके से की जानी चाहिए जैसाकि कंपनी अधिनियम 1956 में सरकारी कंपनियों के लिए अपेक्षित है। थोड़ा सा अंतर यही होगा कि इन स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा की स्थिति में सनदी लेखाकारों की एक सूची बनाने का कार्य नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा यथा-विनिर्दिष्ट दिशानिर्देश के अनुसार होना चाहिए तथा इन दिशानिर्देशों के अनुसार चयन का कार्य राज्य सरकार द्वारा किया जाना है। स्थानीय निधि लेखापरीक्षा तथा नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा अपने दायित्वों के निर्वहन के फलस्वरूप की जाने वाली लेखापरीक्षा इस लेखापरीक्षा से अलग और अतिरिक्त होगी।

(ग) पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा और लेखे के संबंध में तकनीकी दिशानिर्देश तथा पर्यवेक्षण मुहैया कराने के लिए राज्य सरकारों तथा भारत के नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक के बीच की मौजूदा व्यवस्था को स्थानीय शासनों को अधिशासित करने वाले राज्य कानूनों में संस्थाबद्ध रूप में शामिल किया जाना चाहिए।

(घ) यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि पंचायतों के लिए की जाने वाली लेखापरीक्षा व लेखाकरण प्रारूप बहुत सरल, सहज और बोधगम्य हो जिससे कि वह पंचायती राज संस्थाओं के सभी प्रतिनिधियों को आसानी से समझ में आ सके।

(ङ) निदेशक, स्थानीय निधि लेखापरीक्षा (डीएलएफए) अथवा स्थानीय निकायों के लेखे की लेखापरीक्षा के लिए नामोद्दिष्ट किसी अन्य एजेंसी की स्वायत्तता व निष्पक्षता बनाए रखने के लिए आवश्यक है इस कार्यालय को संस्थात्मक रूप से राज्य सरकार के नियंत्रण से बाहर ही रखा जाए। इस निकाय के लिए प्रमुख का चुनाव उस सूची से किया जाना चाहिए जिसका सत्यापन तथा विधीक्षण नियंत्रक तथा महा लेखापरीक्षक द्वारा विधिवत किया गया हो।

(च) स्थानीय निकायों के लेखे की लेखापरीक्षा पर नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक के तकनीकी पर्यवेक्षण से संबंधित व्यवस्था की स्वीकृति पर स्थानीय निकायों को वित्त आयोग के अनुदान का निर्गमन शर्तबद्ध किया जा सकता है।

(छ) स्थानीय निकायों पर लेखापरीक्षा रिपोर्टों को राज्य विधानसभा के समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिए और लोक लेखा समिति (पीएसी) की तर्ज पर गठित विधानसभा की एक पृथक समिति में इनपर ब्यौरेवार चर्चा की जानी चाहिए।

(ज) स्थानीय निकायों को अधिशासित करने वाले राज्य विधानों में उपयुक्त प्रावधान शामिल करते हुए लेखापरीक्षा संचालन के लिए नामोद्दिष्ट एजेंसी/डीएलएफए अभिकरण या नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक को इन निकायों से सभी संगत सूचनाएं/दस्तावेज मंगाने का पूरा अधिकार होना चाहिए।

(झ) प्रत्येक राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि लेखाकरण तथा लेखापरीक्षा मानदंड पूरा करने के लिए स्थानीय निकाय पर्याप्त रूप से सक्षम और समर्थ हों।

(ञ) परिणामोन्मुखी लेखापरीक्षा प्रणाली को धीरे-धीरे आरंभ किया जाए। इस उद्देश्य के लिए सरकारी स्कीमों के संदर्भ में निष्पादन के प्रमुख संसूचकों संबंधी एक स्कीम का निर्णय लेने और अग्रिम तौर पर उसकी घोषणा किया जाना आवश्यक है।

(ट) संस्थात्मक लेखापरीक्षा प्रबंधों के अनुकरण में स्थानीय निकायों में विवेकसम्मत वित्तीय प्रबंधन व्यवहार तथा पद्धतियों को अपनाने तथा उसे लगातार प्रबोधित करने के लिए आवश्यक है कि स्थानीय निकायों हेतु राजकोषीय उत्तरदायित्व पर एक उपयुक्त कानून बनाते हुए राज्य सरकारों द्वारा इस वैचारिक सुधारों को संस्थात्मक स्वरूप प्रदान किया जाए।

3.10 प्रौद्योगिकी तथा स्थानीय अधिशासन

3.10.1 सूचना और संचार प्रौद्योगिकी

3.10.1.1 सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने वह साधन उपलब्ध कराए हैं जो बोझिल प्रक्रियाओं के सरलीकरण, नागरिकों और अत्यंत दक्ष व निष्णात पदाधिकारियों के पारस्परिक संपर्क घटाने, दायित्वबोध और पारदर्शिता में अभिवृद्धि करने तथा विविध सेवाओं के लिए एकल स्थल सेवा सुपुर्दगी सुलभ कराने के लिए स्थानीय शासनों द्वारा उपयोग में लाए जा सकते हैं। आयोग इन सभी मामलों पर "ई-अधिशासन" संबंधी अपनी रिपोर्ट में व्यापक विचार-विमर्श करेगा।

3.10.1.2 सिफारिशें :

(क) प्रक्रिया के सरलीकरण जबावदेही और पारदर्शिता को बढ़ाने तथा एकल स्थल के माध्यम से विविध सेवाओं की सुपुर्दगी सुलभ कराने की दृष्टि से स्थानीय शासनों को सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी को पूर्णतः उपयोग में लाना चाहिए।

3.10.2 अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी

3.10.2.1 उपग्रह संचार (सैटकॉम) और भू-अवलोकन (ईओ) के विकास के साथ अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी ने हाल के वर्षों में प्रभावशाली संबोधन व्यवस्था के माध्यम से ग्रामीण तथा शहरी विकास से संबद्ध कई महत्वपूर्ण तथा अहम पहलुओं को गहराई से प्रभावित किया है। वस्तुतः भारत शहरी तथा ग्रामीण विकास करने में तथा इन मामलों का समाधान आधारभूत स्तर पर खोजने की दिशा में अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के दो उत्कृष्ट उपादानों का संयुक्त उपयोग प्रभावशाली तरीकों से करने में अग्रणी भूमिका निभा रहा है।

3.10.2.2 उपग्रह संचार (सैटकॉम) ने स्वास्थ्य देखभाल, विकास संचार तथा शिक्षा जैसी ग्रामीण तथा सामुदायिक स्तर पर प्रासंगिक सेवाओं को उपलब्ध कराने में अपनी प्रचालनात्मक सक्षमता का उत्कृष्ट प्रदर्शन किया है। जबकि वही दूसरी ओर अनमोल तथा उच्च विभेदक भू-अवलोकन (ईओ) के चित्रों/छवियों ने समुदाय केन्द्रित, भू-संदर्भित सूचनाओं का अपार भंडार मुहैया कराया है जो भू-प्रयोग/शामिल भूमि, क्षेत्रगत आकृति विज्ञान, भू-जल तथा भूतल जल, मृदा विशिष्टताओं, पर्यावरण तथा अवसंरचनात्मकता आदि उपादानों के प्रबंधन तथा विनियोजन में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ है। सैटकॉम तथा ईओ ने आपस में द्विगुणित होकर आपदा प्रबंधन कार्यों और सामुदायिक स्तर पर भी अपनी अनूठी उपयोगिता व उपादेयता दर्शायी है तथा सहयोग दिया है।

3.10.2.3 उपग्रहों ने दूरदर्शन तथा आकाशवाणी प्रसारण और अत्यंत लघु रन्ध्रक टर्मिनलों (वीसेट) के साथ दूरसंचार के लिए एक बुनियादी संरचना मुहैया कराई है। वस्तुतः इनसैट - 3बी तथा ईडीयू सैट के विस्तारित सी बैंड चैनलों का उपयोग प्रशिक्षण तथा विकास संचार चैनलों (टीडीसीसी), ऐसी सेवा जो 1995 से ही कार्यात्मक रूप से सक्रिय है, के रूप में किया जा रहा है। कई राज्यों की सरकारें सुदूर शिक्षा, ग्रामीण विकास, महिला एवं बाल कल्याण, पंचायत राज और औद्योगिक प्रशिक्षण में व्यापक रूप से टीडीसीसी प्रणाली का उपयोग कर रही हैं। इस दिशा में झाबुआ विकास संचार परियोजना (जेडीसीपी) के अंतर्गत मध्य प्रदेश में अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी को बखूबी उपयोग में लाया गया है। जेडीसीपी नेटवर्क में मध्य प्रदेश के झाबुआ जिले में 150 गांवों में 150 डायरेक्ट रिसेप्शन टर्मिनल तथा सभी प्रखंड मुख्यालयों में 12 इंटर एक्टिव टर्मिनल शामिल हैं। विकास संचार की इस समग्र सीमा में जल संभर विकास, कृषि, पशुपालन, वन, महिला तथा बाल देखभाल, शिक्षा और पंचायती राज विकास जैसे विविध क्षेत्रों पर ध्यान दिया गया है।

3.10.2.4 अन्य क्षेत्र जहां ग्रामीण क्षेत्र में गुणात्मक परिवर्तन की दृष्टि से अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी को काम में लाया जा रहा है, वे निम्नानुसार हैं :

(i) दूर-शिक्षा : ईडीयू सैट को विशेष रूप से श्रव्य-दृश्य माध्यमों, डिजिटल इंटर-एक्टिव कक्षाओं तथा मल्टी मीडिया-बहु-केन्द्रिक प्रणाली उपलब्ध कराने के लिए ही डिजाइन किया गया है।

(ii) दूर-चिकित्सा शास्त्र : आज इन्सेट आधारित दूर-चिकित्सा शास्त्र का नेटवर्क 235 अस्पतालों अर्थात जम्मू और कश्मीर, पूर्वोत्तर क्षेत्र तथा अंदमान व निकोबार द्वीपसमूहों में स्थित अस्पतालों सहित 195 जिला/दूरवर्ती/ग्रामीण अस्पतालों एवं बड़े शहरों के उच्च विशिष्टता वाले 40 अस्पतालों के साथ-साथ भारतीय वायुसेना के कुछ अस्पतालों से जुड़ा हुआ है।

(iii) ग्राम संसाधन केन्द्रों (वीआरसी) के माध्यम से एकीकृत सेवाएं : ये सेवाएं अंतरिक्ष से संभव हुई सेवाओं एवं उत्पादों की दूर-शिक्षा जैसी किस्मों के लिए एक "एकल स्थल" सुपुर्दगी कार्यतंत्र है, जिसमें जागरूकता सृजन, व्यावसायिक प्रशिक्षण, जीविका सहायता हेतु कौशल विकास तथा अनुपूरक शिक्षा; प्राथमिक, रोगनाशक और निवारक स्वास्थ्य देखभाल पर केन्द्रित दूर-चिकित्साशास्त्र, स्थानीय स्तर पर नियोजन एवं विकास हेतु प्राकृतिक संसाधनों से संबंधित सूचना; कृषि, मात्स्यिकी, भूमि और जल संसाधन प्रबंधन संबंधी अन्योन्याश्रित सलाहकारी समितियों पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। इनका कार्यान्वयन इसरो (आईएसआरओ) द्वारा

प्रसिद्ध गैर-सरकारी संगठनों और सरकारों के साथ भागीदारी करके किया जाता है।

(iv) मौसम एवं जलवायु : अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी संपूर्ण भारतीय क्षेत्र की गंभीर मौसमी, परिस्थितियों सहित मौसम प्रणालियों की चौबीसों घंटे निगरानी कर रहा है।

(v) आपदा प्रबंधन : इसरो/डॉस (आईएसआरओ/डीओएस) का आपदा प्रबंधन सहायता कार्यक्रम संबंधित केन्द्रीय और राज्य एजेंसियों के सहयोग से दोनों अंतरिक्ष आधारित संचार और दूरस्थ संवेदी क्षमताओं का उपयोग करके आपदा प्रबंधन हेतु देश के संकल्प को सुदृढ़ करने के लिए शुरू किया गया है। इसरो/डॉस दृश्य-दूरसंचार (वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग) और सूचना के आदान-प्रदान की क्षमताओं के साथ उपग्रह आधारित, सुरक्षित, वर्चुअल प्राइवेट नेटवर्क (वीपीएन) के जरिए राष्ट्रीय आपात नियंत्रण कक्ष और राज्य नियंत्रण कक्षों की भी नेटवर्किंग कर रहा है। यह वीपीएन प्राकृतिक आपदाओं के दौरान विभिन्न प्रमुख संस्थानों, आपदा प्रबंधकों और उच्च स्तर के प्रशासनिक कार्यालयों के बीच वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग एवं सूचना का तत्क्षण आदान-प्रदान करता है। अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी का उपयोग बाढ़ नियंत्रण की योजना बनाने और उससे होने वाली हानि का आकलन करने तथा सूखे के आकलन और मॉनिटरिंग में भी किया जाता है।

बॉक्स 3.10 : आयोजना में सुधार लाने के लिए राष्ट्रव्यापी जीआईएस

अरब खाड़ी के पश्चिमी तट पर अवस्थित 5,22,000 की आबादी वाला देश कातार व्यापक और समेकित राष्ट्रव्यापी भौगोलिक सूचना प्रणाली को अपनाने वाला पहला देश है। तीन दशक पहले तेल की खोज के कारण तीव्र और बड़े पैमाने पर हुए विकास के रिकार्ड को अद्यतन रखने में सरकारी एजेंसियां असमर्थ थीं। अतः एजेंसी समन्वय के साथ-साथ सूचना के अभाव की वजह से संसाधनों का प्रबंधन अकुशल रहा। कातार का अत्याधुनिक उत्कृष्ट डिजीटल टोपोग्राफिक डाटाबेस उच्च गति, फाइबर ऑप्टिक नेटवर्क के जरिए 16 सरकारी एजेंसियों के लिए एक कॉमन बेस मैप मुहैया कराता है। सरकार की संबद्ध और अद्यतन डाटाबेस के जरिए मलजल व्यवस्था, विद्युत और जल जैसी सेवाएं प्रदान करने में पैसे की बचत हुई। डिजीटल मानचित्र और स्थान अवनिर्धारक आपातकाल में शीघ्रता से कार्रवाई करने के लिए अग्नि-ट्रकों और एम्बूलैंसों को अनुमति देते हैं। जीआईएस औजारों का उपयोग करते हुए संपूर्ण कातार हेतु नीतियों, मानकों और विनियमों में निरंतरता और एकरूपता हासिल कर ली गई है।

स्रोत : http://www.bestpractices.org/bpbriefs/urban_infrastructure_html

(vi) प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन : उपग्रह दूर-संवेदन से सहदर्शी और आवर्तिमूलक कवरेज के जरिए इन्वेन्टरी और मॉनिटरिंग प्रयोजनों के लिए प्राकृतिक संसाधनों के बारे में जानकारी एकत्र करने के वैज्ञानिक तरीके मुहैया होते हैं। सामाजिक-आर्थिक विकास के प्रमुख क्षेत्रों में कई राष्ट्रीय मिशन उपयोगकर्ता एजेंसियों की सक्रिय भागीदारी से राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधन

प्रबंधन प्रणाली (एनएनआरएमएस) के संरक्षण में पूरे किए गए हैं। ग्रामीण भूमि प्रबंधन, ग्रामीण अवसंरचना, जल निकायों का संरक्षण, भूजल का मानचित्रण और पेय जल मुहैया कराना, बंजरभूमि का मानचित्रण, सहभागी जल संभर विकास, ग्राम मानचित्रों आदि का भौगोलिक संदर्भ इसके महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं।

3.10.2.5 स्थानीय निकायों द्वारा अधिकांश उपर्युक्त उपयोगिताओं/सेवाओं का उपयोग शहरी इलाकों के लिए भी किया जा सकता है। दूर संवेदन से शहरी भूमि उपयोग के मानचित्रण और पर्यावरणीय मॉनिटरिंग के लिए आंकड़ों का एक महत्वपूर्ण स्रोत उपलब्ध हो गया है। वास्तव में, इसरो (आईएसआरओ) के कारटोसेट-2 (सीएआरटीओएसएटी-2) सैटेलाइट में एक मीटर तक के स्पेशियल रीजोल्यूशन के साथ सर्ववर्णिक (पेनक्रोमेटिक) बिंब मुहैया कराने की क्षमता है। ऐसे बिंबों का उपयोग स्थानीय निकायों द्वारा शहरी अवसंरचना और परिवहन प्रणाली नियोजन, मॉनिटरिंग और कार्यान्वयन; अलग-अलग बस्तियों और सड़कों के मानचित्रण, शहरी कॉम्प्लैक्स और शहरी जनोपयोगी सेवाओं, आदि में किया जा सकता है। [31]

3.10.2.6 हाल के वर्षों में, उपग्रह ओर हवाई दूर संवेदन तथा जीआईएस पैकेज तथा अन्य डाटाबेस प्रबंधन प्रणालियों का उपयोग करके आकाशीय डाटाबेस की व्यवस्थापना के जरिए आंकड़े एकत्र करने और उन्हें अद्यतन करने में आश्चर्यजनक प्रगति हुई है। मुंबई महानगर क्षेत्र; राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (एनसीआर); अहमदाबाद नगर विकास प्राधिकरण (एयूडीए); हैदराबाद नगर विकास प्राधिकरण (हुडा); बंगलुरू महानगर क्षेत्र (बीएमआर); पिम्परी, इंदौर, लखनऊ, मैसूर, जयपुर और कई अन्य शहरों के लिए जीआईएस आधारित अध्ययन शुरू किए गए हैं। इन परियोजनाओं और कार्यक्रमों ने नियोजन हेतु उपयोगी दिशानिर्देश प्राप्त करने में मल्टी-पैरामीटर डाटाबेस की उपयोगिता प्रदर्शित कर दी है। विशिष्ट रूप से, दूर-संवेदी डाटा का उपयोग नगर भूमि उपयोग/ अव्यवस्थित फैलाव/क्षेत्रीय योजनाओं को तैयार करने के लिए उपयुक्तता विश्लेषण; मौजूदा और प्रस्तावित भूमि उपयोग, वहनीय नगर विकास योजना, मल साफ करने संबंधी संयंत्र स्थलों का पता लगाने के लिए समेकित विश्लेषण; नगर नियोजन सूचना प्रणाली आदि हेतु जीआईएस दृष्टिकोण के लिए किया जा सकता है। केन्द्रीय शहरी विकास मंत्रालय (एमयूडी) ने नोडल एजेंसी के रूप में नगर एवं देश नियोजन संगठन (टीसीपीओ) के साथ एक "राष्ट्रीय नगर सूचना प्रणाली" (एनयूआईएस) स्थापित करने की पहल की है। एनयूआईएस के प्रमुख उद्देश्य हैं - (क) नगर नियोजन के विभिन्न स्तरों के लिए गुणवत्ता के साथ-साथ आकाशीय सूचना आधार विकसित करना; (ख) आधुनिक डाटा स्रोतों का उपयोग करना; (ग) डाटाबेस, कार्यपद्धति, उपकरण सॉफ्टवेयर, डाटा

31 स्रोत : http://www.isro.org/pslv-c7/PSLV-C7_Background.pdf

एक्सचेंज प्रारुप आदि के संबंध में मानक विकसित करना; (घ) नगरों और शहरों के स्वास्थ्य के निर्धारण और प्रबोधन हेतु शहरी सूचकांक विकसित करना; (ङ) क्षमता बढ़ाना; और (च) नियोजन हेतु समर्थन प्रणाली मुहैया कराना। आधार मानचित्रों और भूमि मानचित्रों के आकाशीय आंकड़ों के कुछ मुख्य स्रोत उपग्रह दूर संवेदन डाटा तथा हवाई फोटोग्राफ से प्राप्त होंगे, जिनका उपयोग परम्परागत मानचित्रों के साथ-साथ सांख्यिकीय आंकड़ों से समाकलन और जीआईएस डाटाबेस के विकास हेतु किया जाएगा। वास्तव में जयपुर शहर और उसके आसपास के 2500 वर्ग किलोमीटर के जयपुर विकास क्षेत्र को शामिल करने के लिए शहरी सूचना प्रणाली (यूआईएस) पहले से ही विकसित कर ली गई है।

3.10.2.7 आयोग का विचार है कि स्थानीय सरकारों को सूचना आधार तैयार करने और स्रोत केन्द्रों के जरिए सेवा प्रदान करने के लिए अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी द्वारा मुहैया कराई गई सुविधाओं का उपयोग करना चाहिए।

3.10.2.8 सिफारिशें :

(क) सूचना आधार तैयार करने और सेवाएं मुहैया कराने के लिए स्थानीय निकायों द्वारा अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी को काम में लाना चाहिए।

(ख) स्थानीय शासन को एक ही स्थान पर सेवा केन्द्र बनाने चाहिएं ताकि विभिन्न प्रकार की वेब आधारित और सेटेलाइट आधारित सेवाएं मुहैया कराई जा सकें। तथापि, इसके लिए अपेक्षित है कि स्थानीय शासनों की क्षमता बढ़ाई जाए।

ग्रामीण अधिशासन

4

4.1 संस्थात्मक सुधार

4.1.1 निरंतर शहरीकरण के बावजूद भारत की 70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या गांवों में रह रही है और राष्ट्र का करीब 60 प्रतिशत कार्य बल अपनी आजीविका कृषि और इससे संबंधित कार्यकलापों से प्राप्त करता है। इसलिए सुधरा हुआ अधिशासन ग्रामीण क्षेत्रों में स्व-अधिशासित संस्थाओं के सशक्तिकरण और उनकी कुशल कार्यप्रणाली से दृढ़ता के साथ संबद्ध है।

4.1.2 ग्रामीण और शहरी अधिशासन दोनों के लिए अपेक्षित संवैधानिक, कानूनी, वित्तीय और संस्थात्मक सुधारों से संबंधित आम प्रमुख मुद्दों की जांच आयोग द्वारा इस रिपोर्ट के अध्याय 3 में व्यापक रूप से की गई है। इस अध्याय का ध्यानकेंद्रण उन मुद्दों पर है जो विशिष्ट रूप से ग्रामीण स्व-अधिशासन वाली संस्थाओं से संबद्ध है।

4.1.3 ग्राम पंचायत का आकार

4.1.3.1 संविधान के अनुच्छेद 243ख के अंतर्गत सभी राज्य और संघ राज्य क्षेत्र, जिन पर संविधान का भाग IX लागू होता है, जिला, मध्यस्थ और ग्राम स्तर पर पंचायतों का गठन करेंगे। संविधान में पंचायतों के लिए जनसंख्या अथवा क्षेत्रफल की दृष्टि से कोई आधार निर्धारित नहीं किया गया है। भली-भांति अभिकल्पित प्रशासनिक अवसंरचना युक्त जिला पिछले दो सौ साल से देश के बड़े भागों में सरकार की एक संयुक्त इकाई रही है। पिछले पांच दशकों में प्रखंड और मंडल भी ग्रामीण इलाकों में सहायक शासी इकाइयों के रूप में उभरे हैं। लेकिन, ग्राम पंचायत से अभिप्रेत सर्वाधिक निचले स्तर की मूलभूत संरचना से है जोकि स्थानीय शासन का सर्वाधिक सक्रिय और प्रारंभिक अवस्था का घटक है। इनका आकार इनकी कार्यप्रणाली को जटिल बनाता है। सारणी 4.1 में दिया गया राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों में पंचायतों का भौगोलिक ब्यौरा संगत है।

सारणी 4.1 : राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों में पंचायतों का जनसांख्यिकीय ब्यौरा

क्रम सं.	राज्य	ग्रामीण जनसंख्या (जनगणना-2001)	पंचायतों की संख्या			प्रति पंचायत औसत जनसंख्या		
			जिला	मध्यस्थ	ग्राम	जिला	मध्यस्थ	ग्राम
1	आन्ध्र प्रदेश	55401067	22	1098	21825	2518230	50595	2528
2	अरूणाचल प्रदेश	870087	14	136	1639	62149	6398	531
3	असम	23216288	20	188	2223	1160814	124151	10783
4	बिहार	74316709	38	531	8471	1955703	139956	8773
5	छत्तीसगढ़	16648056	16	146	9820	1040504	114028	1822
6	गोवा	677091	2	0	190	338546		3582
7	गुजरात	31740767	25	224	13919	1269631	141700	2297
8	हरियाणा	15029260	19	119	6187	791014	126296	2429
9	हिमाचल प्रदेश	5482319	12	75	3243	45860	73098	1691
10	झारखंड	20952088	22	211	3746	952368	99299	5593
11	कर्नाटक	34889033	27	176	5653	1292186	198233	6173
12	केरल	23574449	14	152	999	1683889	155095	23789
13	मध्य प्रदेश	44380878	48	313	23051	986242	141792	2015
14	महाराष्ट्र	55777647	33	351	27918	1690232	159821	1953
15	उड़ीसा	31287422	30	314	6234	1042914	99641	5019
16	पंजाब	16096488	17	141	12447	946852	114975	1294
17	राजस्थान	43292813	32	237	9188	1352900	182670	4712
18	सिक्किम	480981	4	0	166	120245		2897
19	तमिलनाडु	34921681	28	385	12618	1204196	90706	2768
20	त्रिपुरा	2653453	4	23	513	663363	115368	5172
21	उत्तर प्रदेश	131658339	70	820	52000	1880833	160559	2532
22	उत्तराखंड	6310275	13	95	7227	485406	66424	873
23	पश्चिम बंगाल	57748946	13	341	3354	3208275	169352	17218

*** मणिपुर के ब्यौरे अनुपलब्ध हैं*

स्रोत : 1. मध्यावधि मूल्यांकन पर आधारित - पंचायतों 2006-07 (खंड-1) की स्थिति (http://panchayat.gov.in/mopr% Dirmap publication 2007%2D08)2, लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और पंचायती राज संस्था संबंधी कार्य दल की रिपोर्ट, नवम्बर, 2006, योजना आयोग और पंचायती राज मंत्रालय।

यह देखा जा सकता है कि औसत आकार की पंचायतों में राज्य-दर-राज्य व्यापक अंतर है। ग्राम और मध्यस्थ पंचायत के औसत आकार के आधार पर राज्यों का वर्गीकरण सारमी 4.2 और सारणी 4.3 में दिया गया है :

सारणी 4.2 : ग्राम पंचायत का आकार

बहुत छोटी ग्राम पंचायतें (जनसंख्या 2000 से कम)	छोटी ग्राम पंचायतें (जनसंख्या 2000 से 5000 के बीच)	मध्यम आकार की ग्राम पंचायतें (जनसंख्या 5000 से 10,000 के बीच)	बड़ी ग्राम पंचायतें (जनसंख्या 10,000 से अधिक)
अरूणाचल प्रदेश (531)	गुजरात (2297)	उड़ीसा (5019)	असम (10783)
उत्तराखंड (873)	हरियाणा (2429)	त्रिपुरा (5272)	पश्चिम बंगाल (17218)
पंजाब (1294)	आन्ध्र प्रदेश (2528)	झारखंड (5593)	केरल (23789)
हिमाचल प्रदेश (1691)	उत्तर प्रदेश (2532)	कर्नाटक (6173)	
छत्तीसगढ़ (1822)	तमिलनाडु (2768)	बिहार (8773)	
महाराष्ट्र (1953)	सिक्किम (2897)		
मध्य प्रदेश (2015)	गोवा (3582)		
	राजस्थान (4712)		

स्रोत : लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और पंचायती राज संस्था संबंधी कार्य दल की रिपोर्ट, नवम्बर, 2006, योजना आयोग और पंचायती राज मंत्रालय

सारमी 4.3 : मध्यस्थ पंचायत का आकार

बहुत छोटी मध्यस्थ पंचायतें (जनसंख्या 55000 से कम)	छोटी मध्यस्थ पंचायतें (जनसंख्या 55000 और 100000 के बीच)	मध्यम आकार की मध्यस्थ पंचायतें (जनसंख्या 1,00000 और 1,50,000 के बीच)	बड़ी मध्यस्थ पंचायतें (जनसंख्या 1,50,000 से अधिक)
अरूणाचल प्रदेश (6398)	उत्तराखंड (66424)	पंजाब (114975)	केरल (155095)
उत्तराखंड (50595)	हिमाचल प्रदेश (73098)	छत्तीसगढ़ (114028)	महाराष्ट्र (159821)
तमिलनाडु (90706)	त्रिपुरा (115368)	उत्तर प्रदेश (160559)	
झारखंड (99299)	असम (124151)	पश्चिम बंगाल (1693542)	
उड़ीसा (99641)	हरियाणा (126296)	राजस्थान (182670)	
	बिहार (139956)	कर्नाटक (198239)	
	गुजरात (141700)		
	मध्य प्रदेश (141792)		

स्रोत : लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और पंचायती राज संस्था संबंधी कार्य दल की रिपोर्ट, नवम्बर, 2006, योजना आयोग और पंचायती राज मंत्रालय

4.1.3.2 राज्यों को ग्राम पंचायत परिसीमन की नए सिरे से जांच करने की आवश्यकता है ताकि सेवाएं प्रदान करने में और अधिक दक्षता लाने की चेष्टा की जा सके। यद्यपि छोटे गांवों को एक जगह मिलाने से लाभ हो सकते हैं, फिर भी कारोबार बड़ी ग्राम सभाओं के रूप में हो सकता है। लोगों की सहभागिता ग्राम सभा के आकार के प्रतिलोमी अनुपात में होती है। पहाड़ी क्षेत्रों के लिए, कम जनसंख्या घनत्व, कठोर, भूभाग और कमजोर संचार व्यवस्था के आधार पर छोटी ग्राम पंचायतों के लिए कोई औचित्य हो सकता है। लेकिन अधिक जनसंख्या वाले राज्यों के मैदानी इलाकों में भी ग्राम पंचायतें सामान्यतः छोटी हैं। संभवतः इसका कारण ऐतिहासिक हो सकता है जो इस अभीष्ट अभिप्राय पर आधारित हो कि प्रत्येक गांव के लिए एक पंचायत होनी चाहिए। बहुत सारी ग्राम पंचायतें इतनी छोटी हैं कि वे स्थानीय सरकार की स्वायत्तशासी संस्थाओं के रूप में कार्य नहीं कर सकतीं। आर्थिक दृष्टि से व्यवहार्य और अनेक प्रकार के उत्तरदायित्वों को पूरा करने में सक्षम एक ऐसी प्रशासनिक इकाई बनने के उद्देश्य से यह जरूरी है कि ग्राम पंचायत में जनसंख्या कम से कम हो। चूंकि इस मुद्दे से संबंधित कोई आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं, इसलिए एक ऐसी निश्चित संस्तुति करना कठिन है कि ग्राम पंचायत का इष्टतम आकार क्या हो। लेकिन इस बात पर जोर दिया जा सकता है कि बहुत छोटी ग्राम पंचायत मौजूदा विकेन्द्रीकरण योजना के अंतर्गत इसके लिए परिकल्पित भूमिका निभाने में कामयाब नहीं होंगी। ग्राम पंचायत का न्यूनतम आकार निर्धारित करने के लिए निम्न घटकों पर विचार करना होगा, वे हैं - (क) संसाधन सृजन की संभाव्यता, (ख) कर्मचारी संरचना की वहनीयता, (ग) प्रमुख कार्यों के लिए नियोजन की एक इकाई के रूप में उपयुक्तता, (घ) भौगोलिक संसजकता, (ङ) भूभाग संबंधी स्थितियां और (च) पंचायत क्षेत्र के भीतर संचार सुविधाएं।

4.1.3.3 उन राज्यों और जिलों में जहां पंचायती राज (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम, 1996, (पीईएसए) के प्रावधान लागू होते हैं वहां ऐसा कोई भी पुनर्गठन करते समय इनका अनुपालन करना आवश्यक होगा ताकि ग्राम सभा का आधिपत्य रहे और जनजातीय समुदाय के परिसीमन का ऐसे किसी भी प्रयास से विघटन न हो। भूभाग और पृथक्करण, विशेषकर कम जनसंख्या वाले क्षेत्रों में, यह निर्धारण करने में महत्वपूर्ण घटक होंगे कि पुनर्गठन का प्रयास किया जाए या नहीं।

4.1.3.4 यह अनिवार्य है कि छोटे आकार की ग्राम पंचायतों वाले राज्य उपर्युक्त तथ्यों पर विचार करने के पश्चात उन्हें पुनर्गठित करने के लिए विस्तृत कार्रवाई करें। यह नोट करना भी महत्वपूर्ण होगा कि पंचायतों का आकार यदि अत्यधिक हो जाएगा तो उनकी लोकप्रिय सहभागिता संबंधी समस्याएं बढ़

जाएंगी। ऐसे मामलों में वार्ड/क्षेत्र सभा पर बल देना समीचीन होगा ताकि स्थानीय सहभागिता को प्रोत्साहित किया जा सके। ग्राम सभा संवैधानिक रूप से अधिदेशित जमीनी स्तर का संगठन बना रहेगा।

4.1.3.5 सिफारिशें :

(क) **राज्य सुनिश्चित करें कि जहां तक संभव हो ग्राम पंचायतें उपयुक्त आकार की हों जिससे वे स्व-शासन की व्यवहार्य इकाइयों के रूप में प्रतिष्ठित हो सकें ओर प्रभावी लोकप्रिय भागीदारी भी कर सकें। इस कार्रवाई के लिए स्थानीय भौगोलिक और जनसांख्यिकीय स्थितियों पर भी ध्यान देना जरूरी होगा।**

4.1.4 वार्ड सभा - इसकी आवश्यकता

4.1.4.1 संविधान के अनुच्छेद 243-ख के अंतर्गत ग्राम सभा को इस प्रकार परिभाषित किया जाता है – "ग्राम सभा एक ऐसी संस्था है जो ग्राम स्तर पर पंचायत के अधिकार क्षेत्र में आने वाले गांव से संबंधित निर्वाचक नामावली में दर्ज व्यक्तियों से बनती है।" ग्राम सभा का स्थानीय शासन की संपूर्ण स्कीम में मुख्य स्थान है क्योंकि यही वह संस्था है जो गांव के प्रत्येक व्यक्ति को स्थानीय निर्णय लेने वाली प्रक्रियाओं में भाग लेने का अवसर प्रदान करती है। ग्राम सभा की उपयुक्त कार्यप्रणाली और पंचायती राज संस्था के बीच प्रत्यक्ष संबंध हैं। पंचायती राज प्रणाली के मध्यस्थ और शीर्ष स्तरों के जरिए जिला योजना के साथ तारतम्य लाने वाली ग्रामीण योजना की उत्पत्ति इसी संस्था से ही होती है।

4.1.4.2 जब तक ग्राम पंचायत छोटी होती है तब तक दो स्तर वाली संरचना भलीभांति कार्य करती है। लेकिन जब ग्राम पंचायत बड़ी हो जाती हैं जैसे कि केरल, पश्चिम बंगाल, बिहार और असम में हैं तो उसकी आनुषांगिकता की अवधारणा समाप्त हो जाती है। आकार के कारण लोगों और ग्राम पंचायत के बीच संबंधों में बहुत दूरी होती है; दो कमजोरों एवं ग्राम पंचायत के बीच भागीदारी उच्च वेबेरियन संरचना की भूमिका निभाती है। प्रायः छोटी बस्तियों की समस्याओं को दरकिनार कर दिया जाता है। इस समस्या का स्पष्ट समाधान यह है कि ग्राम पंचायत के आकार को कम कर दिया जाए। तथापि, क्षमता और प्रशासनिक व्यवहार्यता की दृष्टि से ग्राम पंचायत के आकार को एक निश्चित महत्वपूर्ण सीमा से कम करने की अपनी सीमाएं हैं। यदि पंचायत को स्व-शासन की एक इकाई के रूप में प्रभावी एवं दक्ष बनाने का इरादा है तो इसके पास इष्टतम सहायता संरचना और वित्तीय संसाधन होने चाहिएं। मध्यस्थ निकाय

अर्थात वार्ड सभा के सृजन से अधिक लोगों की भागीदारी सुसाध्य हो सकेगी तथा साथ ही यह ग्राम पंचायत की प्रशासनिक व्यवहार्यता सुनिश्चित करेगी। प्रत्येक ग्राम पंचायत क्षेत्र को ऐसे कई वार्डों में विभाजित किया जा सकता है। वार्ड सभा की लोगों के साथ अधिक निकटता होगी और यह नागरिकों की प्रभावी भागीदारी के साथ वार्ड के लिए विस्तृत और व्यावहारिक प्रस्ताव तैयार करने की स्थिति में होगी। प्रत्येक खण्ड में वार्ड सभा की दो स्तरीय प्रणाली तथा पंचायत स्तर पर ग्राम सभा कर्नाटक में पहले से ही हैं। कई सभाओं को विभिन्न गरीबी विरोधी, सामाजिक सहायता और मजदूरी रोजगार कार्यक्रमों के अंतर्गत लाभार्थियों की पहचान करने और प्राथमिकता निर्धारित करने का कार्य सौंपा गया है। इस प्रकार तैयार सूची ग्राम सभा के समक्ष अनुमोदनार्थ प्रस्तुत की जानी है। उन्हें अपने क्षेत्र में स्कीमों की प्राथमिकता निर्धारित करने तथा जलापूर्ति, सफाई व्यवस्था और स्ट्रीट लाइट लगाने जैसी सेवाएं प्रदान करने की भी भूमिका दी गई है। यथासंभव सबसे निचले स्तर पर लोकतंत्र को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से उड़ीसा ग्राम पंचायत अधिनियम, 1964 में पल्ली सभा नामक नागरिक समूह जो थोड़े में मकानों वाले समूह स्तर पर ग्राम सभा के अधीन कार्य करते हैं, को उनके लिए विशिष्ट अधिकार सौंपे गए हैं। राजस्थान में भी राज्य पंचायत अधिनियम में वार्ड सभा की व्यवस्था की गई है, जिसकी अध्यक्षता उस क्षेत्र से चुने गए पंचायत सदस्य द्वारा की जाती है।

4.1.4.3 आयोग का विचार है कि सूक्ष्म स्तर पर प्रभावी लोकप्रिय भागीदारी रखने के उद्देश्य से बड़ी ग्राम पंचायतों को कई वार्डों/इलाकों में विभाजित कर देना चाहिए। छोटी बस्ती अथवा समूह की इकाई का प्रतिनिधित्व करते हुए वार्ड सभा एक मंच उपलब्ध कराएगी जहां लोग अपनी आवश्यकताओं पर प्रत्यक्षतः विचार-विमर्श कर सकते हैं तथा क्षेत्र विशिष्ट स्थानीय योजना तैयार कर सकते हैं। वार्ड सभा ग्राम सभा के कतिपय अधिकारों और कार्यों का उपयोग कर सकती है तथा उन्हें ग्राम पंचायतों के कुछ अधिकार एवं कार्य भी सौंपे जा सकते हैं। यदि संभव हो तो ग्राम पंचायत सदस्य के प्रादेशिक डिवीजन को वार्ड सभा के अधिकार क्षेत्र के साथ सह-समापक बनाया जा सकता है। संबंधित राज्य पंचायत अधिनियम में साधारण संशोधन से यह प्रावधान किया जा सकता है।

4.1.4.4 सिफारिशें :

(क) **जहां कहीं बड़ी ग्राम पंचायतें हैं, वहां राज्यों को ऐसी वार्ड सभा बनाने के लिए कदम उठाने चाहिएं जो पंचायतों के कतिपय अधिकारों का उपयोग करेंगी तथा ग्राम सभा के कार्यों तथा ग्राम पंचायतों को सौंपे जा सकने वाले कार्य करेंगी।**

4.1.5 पंचायती राज संस्थाओं में कार्मिक प्रबंधन

4.1.5.1 कर्मचारी एक ऐसा संसाधन है जो हर किसी संगठन के पास अपने कार्यकलापों को निष्पादित करने के लिए अवश्य होना चाहिए। मानव संसाधनों पर नियंत्रण संगठनात्मक स्वायत्तता का एक महत्वपूर्ण तत्व है। इस संबंध में पंचायतें संपूर्ण देश में असंतोषजनक चित्र प्रस्तुत करती हैं। अधिकांश राज्यों में पंचायतों के पास अपने कर्मचारी भर्ती करने तथा उनका वेतन, भत्ते और सेवा की अन्य शर्तें निर्धारित करने का अधिकार नहीं है। इसके अतिरिक्त, वित्तीय संसाधनों के अभाव के कारण कर्मचारी भर्ती करने का अधिकार, ऐसा अधिकार होने के बावजूद भी, पूर्णतः इस बात पर निर्भर करता है कि उनका उपयोग पूरी तरह कर लिया गया है अथवा नहीं। इसलिए पंचायतों को कर्मचारियों की सहायता लेने के लिए राज्य सरकार के अधिकारियों पर निर्भर रहना पड़ता है। प्रतिनियुक्ति पर नियुक्त कर्मचारियों का संगठन दो प्रमुख कमजोरियों का सामना करता है। पहला, बार-बार स्थानांतरण से समर्पित कर्मचारियों का विकास नहीं हो पाता। दूसरा, कर्मचारी दो प्राधिकारियों के अधीन रहता है। यह दोहरा नियंत्रण ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न सरकारी अधिकारियों के कार्यकलापों में इष्टतम समन्वय स्थापित करने में आने वाली प्रमुख बाधा है। आयोग का विचार है कि पंचायतों के पास भी स्थानीय स्तर की शासन व्यवस्था के अनुरूप अपने निजी कर्मचारी होने चाहिएं। उनके पास राज्य के कानूनों और कतिपय मानकों के व्यापक ढांचे के भीतर रहते हुए अपने कर्मचारी भर्ती करने और उनकी सेवा शर्तें निर्धारित करने के पूर्ण अधिकार होने चाहिएं।

4.1.5.2 पूर्णतः अंतवर्ती उपाय के रूप में, जब तक पंचायती राज संस्थाओं की कार्मिक संरचना कोई निश्चित आकार नहीं ले लेती तब तक राज्य सरकार के कर्मचारियों को प्रतिनियुक्ति पर लिया जा सकता है, लेकिन ऐसी प्रतिनियुक्ति संबंधित पंचायत की सहमति के बाद ही की जाए।

4.1.5.3 इस पहलू का एक महत्वपूर्ण मुद्दा उन सरकारी कर्मचारियों से संबंधित है जो इस समय पंचायती राज संस्थाओं में कार्य कर रहे हैं। इन तीनों स्तरों पर अलग-अलग मानवशक्ति की आवश्यकता का आकलन और समीक्षा करने की आवश्यकता है। इस प्रकार किए गए आकलन के आधार पर मौजूदा कर्मचारियों को तीनों स्तरों पर अभिज्ञात किए गए पदों पर वितरित किया जाए। कुछ पदों, उदाहरणार्थ, प्राइमरी स्कूल के अध्यापकों की रिक्तियां वर्तमान सूची में उपलब्ध कर्मचारियों की संख्या की तुलना में अधिक हो सकती हैं। ऐसे पदों पर नई भर्ती करने की आवश्यकता होगी। दूसरी ओर, सेवाओं की आउटसोर्सिंग से कुछ पद अनावश्यक हो सकते हैं। इन पदों पर कार्यरत कर्मचारियों को वापस उनके मूल संगठन में भेजना पड़ेगा। आयोग का विचार है कि सभी राज्यों में अगले एक वर्ष के अंदर शून्य आधारित दृष्टिकोण के आधार पर स्टाफिंग पैटर्न की विस्तृत समीक्षा की जानी चाहिए। विशेषकर, जिला

परिषदों[32] को इस कार्य से संबद्ध किया जाना चाहिए। स्थानीय निकायों के लिए कार्यरत लोगों का स्वामित्व इन निकायों में निहित होना चाहिए।

4.1.5.4 सिफारिशें :

(क) पंचायतों के पास कार्मिक भर्ती करने और उनकी सेवा शर्तें विनियमित करने का अधिकार होना चाहिए, बशर्ते कि ऐसा राज्य सरकार द्वारा निर्धारित कानूनों और मानकों के अधीन किया जाए। यह प्रणाली तीन वर्ष से अधिक अवधि तक जारी नहीं होनी चाहिए। तब तक पंचायतें, एक निश्चित अवधि के लिए, राज्य सरकार के विभागों/एजेंसियों से प्रतिनियुक्ति पर कर्मचारी नियुक्त कर सकती हैं।

(ख) सभी राज्यों में अगले एक वर्ष में पंचायती राज संस्थाओं में कर्मचारी नियुक्ति शून्य आधारित दृष्टिकोण के आधार पर स्टाफिंग पैटर्न और प्रणाली की विस्तृत समीक्षा की जाए ताकि स्टाफ पर पंचायती राज संस्था के स्वामित्व की नीति कार्यान्वित की जा सके। विशेषकर, जिला परिषदों को इस कार्य से संबद्ध करना चाहिए।

4.1.6 पंचायती राज संस्था और राज्य सरकार

4.1.6.1 विभिन्न राज्यों के पंचायती राज अधिनियमों के अंतर्गत संबंधित राज्य सरकार अथवा उनके नामित अधिकारियों के पास पंचायती राज संस्थाओं द्वारा की गई समीक्षा और परिशोधित कार्रवाई के संबंध में पर्याप्त अधिकार हैं। ये अधिकार इस प्रकार हैं : (क) किसी पंचायत के संकल्प को निलंबित करने का अधिकार, (ख) किसी पंचायत के कार्यों की जांच करने का अधिकार, (ग) कुछ विशिष्ट शर्तों के अधीन पंचायत के निर्वाचित प्रतिनिधियों को हटाने का अधिकार, (घ) निरीक्षण करने और नीति निर्देशन जारी करने का अधिकार, (ड) पंचायतों से अधिकारों और कार्यों को वापस लेने का प्रावधान, (च) उच्च स्तर अथवा राज्य प्राधिकारी द्वारा पंचायत बजट को अनुमति देने का प्रावधान, आदि।

4.1.6.2 राज्यों के पंचायती राज अधिनियम को ध्यान से देखें तो पता चलता है कि राज्य सरकार ने मोटे तौर पर प्रायः सभी को पंचायती राज संस्थाओं की तुलना में नियंत्रणकारी स्थिति में रखा है। कुछ अधिनियमों में ऐसे अधिकार जिला समाहर्ता अथवा मंडलीय आयुक्त को दिए गए हैं और कुछ मामलों

32 जिला परिषद के संदर्भ को जब भी गठित हों जिला परिषद के संदर्भ के रूप में माना जाना चाहिए।

में इन अधिकारों का प्रयोग अंशतः समाहर्ता द्वारा और अंशतः राज्य सरकार द्वारा किया जाता है। सभी मानकों की दृष्टि से इन अधिकारों का कार्यक्षेत्र बहुत व्यापक है तथा मुख्यतः शक्ति सम्पन्न प्राधिकारियों की व्यक्ति सापेक्ष संतुष्टि पर निर्भर करता है। दृष्टांत के रूप में, बिहार राज्य पंचायती राज अधिनियम, 2006, कर्नाटक पंचायती राज अधिनियम, 1993 और असम पंचायत अधिनियम, 1994 के उद्धरण इस रिपोर्ट के **अनुबंध-IV(1)** में दिए गए हैं।

4.1.6.3 राज्य सरकार की पंचायत के निर्वाचित प्रतिनिधियों को निलंबित करने अथवा हटाने संबंधी अधिकार की बारीकी से जांच करने की आवश्यकता है। इस शक्ति के मनमाने उपयोग के कई दृष्टांत हैं। कई राज्यों में पंचायत के उच्चतर स्तर से या तो परामर्श किया जाता है अथवा निचले स्तर के पदाधिकारियों के संबंध में इस शक्ति का इस्तेमाल करने का प्राधिकार दिया जाता है। आयोग का विचार है कि यह प्रावधान अनुपयुक्त है, क्योंकि पंचायत के सभी स्तर स्व-शासन की संस्थाएं हैं तथा इसलिए उनमें किसी प्रकार के पदानुक्रम से कोई संबंध नहीं हो सकता।

4.1.6.4 राज्य सरकार के निर्वाचित स्थानीय निकायों का अधिक्रमण करने के अधिकार के संबंध में यह कहना प्रासंगिक होगा कि पंचायती राज प्रणाली (वर्ष 1960 पश्चात) के प्रथम चरण में राज्य सरकार ने इस अधिकार का अविवेकपूर्वक उपयोग किया। लेकिन अनुच्छेद 243ङ (1), (2) और (3) के प्रावधानों से यह अनिवार्य हो गया है कि स्थानीय निकाय का चुनाव इसका कार्यकाल पूरा होने/इसके भंग होने के छः माह के भीतर करा लिया जाएगा। स्थानीय निकाय को अधिक्रमित करने का प्रयास कठिन हो गया है। तथापि, आशंका रहती है कि कहीं स्थानीय निकाय राज्य सरकार की संकीर्ण राजनीतिक विचारधारा की शिकार न हो जाएं।

4.1.6.5 मुद्दा यह है कि राज्य सरकार के ये नियंत्रण अधिकार सांविधिक दृष्टि से कितने होने चाहिएं। अनुच्छेद 243छ की भावना यही है कि पंचायती राज संस्थाओं को स्वायत्तता के साथ संवैधानिक पहचान दी जाए। हालांकि राज्य के कानून उन सीमाओं का निर्धारण करते हैं जिनके भीतर स्थानीय शासन को कार्य करना होता है, फिर भी संवैधानिक प्रावधान का अभिप्रायः इन दोनों के बीच "अधीनस्थ और श्रेष्ठतर" के संबंध से नहीं है। पैराग्राफ 4.1.6.1 में उल्लिखित दबंग अधिकारों का उपयोग करने की 73वें संशोधन के बाद कोई गुंजाइश नहीं रही है।

4.1.6.6 असामान्य व्यवहार, कुप्रशासन, राजकोषीय उत्तरदायित्व मानकों का उल्लंघन, पंचायत की संपत्ति का अनियमित/अवैध सुपुर्दगी, प्राधिकार का दुरूपयोग, भ्रष्टाचार और भाई-भतीजाबाद जैसी कुछ ऐसी स्थितियां हैं जो पंचायत राज संस्थाओं या उनके निर्वाचित प्रतिनिधियों के खिलाफ कार्रवाई को उचित ठहराती हैं। आयोग का विचार है कि यह सुनिश्चित करना भी राज्य सरकार की जिम्मेवारी है कि पंचायतें अपने कार्यकलाप अपनी स्वायत्तता के भीतर रहकर ही कानून के अनुसार निष्पादित करती हैं। लेकिन यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि "जिम्मेवारी का अर्थ यह नहीं कि पंचायतों की कार्यप्रणाली का नियमित रूप से पर्यवेक्षण किया जाए अथवा उनपर अपना नियंत्रण रखा जाए। जहां तक चुनाव से संबंधित मुद्दों का संबंध है, स्वयं संविधान में प्रत्येक राज्य में "राज्य चुनाव आयोग" की स्थापना करने की व्यवस्था है। चुनाव संबंधी कानून के अतिक्रमण से संबंधित किसी भी प्रकार की शिकायत के लिए इस संस्थान को अंतिम निर्णय लेने और उसे राज्यपाल के पास भेजने का अधिकार होना चाहिए। इसके अतिरिक्त, आयोग ने इस रिपोर्ट के पैरा 3.8.6 पड़ोसी जिलों के एक समूह के लिए "स्थानीय माध्यस्थम" के रूप में एक स्वतंत्र शिकायत निवारक कार्यतंत्र की स्थापना करने की सिफारिश की है। जब कभी किसी पंचायत या इसके किसी सदस्य की शिकायत स्थानीय माध्यस्थम से की जाएगी तो वह मामले की जांच करेगा तथा लोकायुक्त के माध्यम से अपनी रिपोर्ट राज्य के राज्यपाल को भेजेगा।

4.1.6.7 एक ऐसी भी स्थिति आ सकती है जब पंचायत स्तर पर प्रशासनिक और कानूनी मशीनरी पूरी तरह से ठप्प हो जाए तथा संबंधित निर्वाचित निकाय को तत्काल निलंबित करने अथवा भंग करने की आवश्यकता पड़ जाए। आयोग का विचार है कि ऐसे मामलों में भी राज्य सरकार को सारे रिकार्ड जांच और उपयुक्त कार्रवाई के लिए स्थानीय माध्यस्थम के समक्ष प्रस्तुत करने होंगे जैसाकि ऊपर विस्तार से बताया गया है। स्थानीय माध्यस्थम/लोकायुक्त द्वारा की गई सिफारिशों के साथ असहमति होने के सभी मामलों में कारणों को जनता के अधिकार क्षेत्र में रखने की आवश्यकता होगी।

4.1.6.8 सिफारिशें :

(क) **राज्य के कुछ अधिनियमों में किसी पंचायत के बजट को उच्च स्तर अथवा किसी अन्य राज्य के प्राधिकारी द्वारा अनुमोदित करने के संबंध में किए गए प्रावधानों को समाप्त किया जाए।**

(ख) **राज्य सरकारों के पास पंचायती राज संस्थाओं द्वारा पारित किसी संकल्प को निलंबित करने अथवा निरस्त करने अथवा पद के दुरूपयोग, भ्रष्टाचार आदि के आधार पर निर्वाचित**

प्रतिनिधियों के विरूद्ध कार्रवाई करने अथवा पंचायतों को अधिक्रमित/भंग करने का अधिकार नहीं होना चाहिए। ऐसे सभी मामलों में जांच करने तथा कार्रवाई की सिफारिश करने का अधिकार स्थानीय माध्यस्थम के पास होना चाहिए जो अपनी रिपोर्ट लोकायुक्त के माध्यम से राज्यपाल को भेजेगा।

(ग) चुनाव के अतिक्रमण और चुनाव संबंधी अन्य शिकायतों की जांच करने का अधिकार राज्य निर्वाचन आयोग के पास होना चाहिए जो अपी सिफारिशें राज्यपाल को भेजेगा।

(घ) यदि किसी अवसर पर राज्य सरकार यह महसूस करती है कि उपर्युक्त "ख" में उल्लिखित एक या अधिक आधारों पर पंचायतों अथवा उनके निर्वाचित प्रतिनिधियों के विरुद्ध तत्काल कार्रवाई की आवश्यकता है तो उसे सारे रिकार्ड तत्काल जांच के लिए माध्यस्थम के समक्ष प्रस्तुत करने चाहिएं। ऐसे सभी मामलों में माध्यस्थम अपनी रिपोर्ट लोकायुक्त के माध्यम से निर्धारित अवधि में राज्यपाल को भेजेगा।

(ङ) स्थानीय माध्यस्थम/लोकायुक्त द्वारा की गई सिफारिशों से असहमति के सभी मामलों में असहमति के कारणों को जनता के अधिकार क्षेत्र में रखने की आवश्यकता होगी।

4.1.7 परास्थानिकों की स्थिति

4.1.7.1 परास्थानिकों के संस्थान/संगठन पूर्णरूपेण अथवा आंशिक तौर पर सरकारी हैं तथा इनका प्रबंधन सरकार द्वारा किया जाता है (स्वायत्तशासी अथवा अर्ध-सरकारी)। इनका संगठन या तो राज्य के किसी विशिष्ट अधिनियमन के अथवा सोसायटी पंजीकरण अधिनियम के अंतर्गत किया जा सकता है। सामान्य तौर पर इन निकायों का गठन विशिष्ट सेवाएं प्रदान करने, अथवा राज्य/संघ सरकार/अंतर्राष्ट्रीय दाता एजेंसियों द्वारा प्रायोजित विशिष्ट स्कीमों अथवा कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए किया जाता है। चूंकि इनमें से कई कार्यकलाप संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची की विषयवस्तु में हैं, इसलिए पर्याप्त निधि और कर्मचारियों से युक्त उनका पृथक अस्तित्व स्थानीय सरकारी संस्थाओं की प्रभावी कार्यप्रणाली और अधिकारिता में बाधा है।

4.1.7.2 कुछ महत्वपूर्ण परास्थानिक इस प्रकार हैं - जिला ग्रामीण विकास एजेंसी (डीआरडीए), जिला स्वास्थ्य सोसायटी (डीएचएस), जिला जल एवं सफाई समिति (डीडब्ल्यूएससी) और मत्स्य पालक विकास एजेंसी (एफएफडीए)। कुछ परास्थानिक उच्च स्तर के हैं जैसे राज्य जल एवं मल जल बोर्ड,

खादी एवं ग्रामीण उद्योग आयोग (केवीआईसी) और राज्य प्राथमिक शिक्षा बोर्ड। इनके कार्य प्रत्यक्षतः स्थानीय संस्थाओं से टकराते हैं।

4.1.7.3 जिला स्तर पर सर्वाधिक महत्वपूर्ण परास्थानिक डीआरडीए है। सोसायटी पंजीकरण अधिनियम के अंतर्गत बनी इस एजेंसी का सृजन अनिवार्यतः एक अर्ध-स्वायत्तशासी संगठन के रूप में किया गया था ताकि जीविका-विकास, मजदूरी एवं रोजगार सृजन संबंधी विभिन्न कार्यक्रमों और जिला स्तर पर संघ एवं राज्य सरकारों के सामाजिक समर्थन संबंधी कार्यकलापों को कार्यान्वित किया जा सके। इसका उद्देश्य एक ऐसी संरचना का सृजन करना था, जो स्कीमों के कार्यान्वयन, उनकी मॉनिटरिंग और निधि प्रवाह के क्षेत्रों में लचीलापन रखे। वर्तमान में, अधिकांश केंद्र-प्रायोजित स्कीमों,संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (एसजीआरवाई) आदि के लिए निधियां डीआरडीए को सौंपी जाती हैं जहां से इनका वितरण प्रखंड स्तर पर कार्यान्वयन एजेंसियों को किया जाता है। इनकी कई स्कीमों में पंचायतों विशेषकर ग्राम पंचायतों के पास कार्यान्वयन एवं मॉनिटरिंग संबंधी उत्तरदायित्व हैं। आयोग का विचार है कि इन सभी तीनों स्तरों पर निर्वाचित प्रतिनिधि होने से जिलों और पंचायतों में अब लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया सुदृढ़ता से स्थापित हो गई है, इसलिए जिले में डीआरडीए के समान एक-पृथक एजेंसी रखने का कोई औचित्य नहीं है। केरल, कर्नाटक और पश्चिम बंगाल जैसे कुछ राज्यों में जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों का जिला पंचायतों के साथ पहले ही विलय हो चुका है। आवश्यक है कि अन्य राज्य भी इसी प्रकार की कार्रवाई करें।

4.1.7.4 ऐसा ही मामला जिला जल एवं सफाई समिति (डीडब्ल्यूएससी) का है जो ग्रामीण जलापूर्ति और सफाई स्कीमों को देखती है। पेयजल सुविधाएं और सफाई व्यवस्था मुहैया कराने का प्राथमिक उत्तरदायित्व राज्य सरकारों के पास है। संघ सरकार केन्द्र-प्रायोजित स्कीम - त्वरित ग्रामीण जल जलापूर्ति कार्यक्रम (एआरडब्ल्यूएसपी), जिसके अंतर्गत राज्य सरकारों को ग्रामीण जलापूर्ति स्कीमों को लागू करने के लिए निधियां मुहैया कराई जाती हैं, के माध्यम से नीतिगत, प्रौद्योगिकीय और वित्तीय सहायता दे रही है। पेय जल की आपूर्ति भारत निर्माण के छह घटकों में से एक है, जिसे ग्रामीण अवसंरचना का निर्माण करने के लिए 2005-06 से 2008-09 तक अर्थात चार वर्षों में कार्यान्वित की जाने वाली अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य योजना के रूप में समझा गया है। उक्त घटक का उद्देश्य है कि "2009 तक प्रत्येक परिवार के पास पेय जल का सुरक्षित स्रोत हो : 55067 शामिल नहीं किए गए परिवारों को शामिल किया जाए। इसके अतिरिक्त, वे सभी परिवार जो स्रोत के लोप हो जाने तथा वे परिवार, जिनके पास दूर की जाने वाली जल गुणवत्ता संबंधी समस्याएं हैं, के कारण फिसलकर पूर्ण

कवरेज से आंशिक कवरेज पर पहुंच गए हैं।" यद्यपि 73वें संशोधन से पेय जल और सफाई पंचायतों को सौंपी जाने वाली विषयसूची में शामिल हैं, फिर भी इस कार्यक्रम में उनकी भागीदारी महत्वपूर्ण नहीं रही है। आयोग का विचार है कि चूंकि लोकतांत्रिक तौर पर चुनी गई संस्थाएं पंचायतें ग्रामीण इलाकों में इन कार्यों के लिए नागरिकों के प्रति उत्तरदायी होती हैं, इसलिए डीडब्ल्यूएससी को जिला पंचायत की समिति होना चाहिए। इस कार्यक्रम के महत्व को देखते हुए इस कार्य को गांवों में बहुत बड़े पैमाने पर करने की आवश्यकता हो सकती है। इस कार्यक्रम का अनुवीक्षण करने के लिए प्रखंड स्तर पर भी एक समिति की आवश्यकता हो सकती है। यदि ऐसा है तो इस समिति को मध्यस्थ पंचायत का एक निकाय होना चाहिए। इसके अतिरिक्त, कई राज्यों ने शहरी और ग्रामीण देनों को पेय जल आपूर्ति स्कीमों की देखभाल करने के लिए राज्य जल एवं मल-जल बोर्ड नामक एक उच्च-स्तरीय संगठन का भी सृजन किया है। आयोग का विचार है कि उच्च स्तर की तकनीकी एवं व्यावसायिक समर्थन की आवश्यकता वाली कुछ बड़ी निवेश स्कीमों को छोड़कर, पंचायतों ने ग्रामीण जलापूर्ति प्रणाली को बहुत ही सरलता एवं सहजता से संचालित किया है। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में राज्य जल एवं मल-जल बोर्ड की उपस्थिति को पर्याप्त रूप से कम करने की आवश्यकता है।

4.1.7.5 इस समय, एक जिले में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम) के कार्यक्रमों की देखभाल करने के लिए एक जिला स्वास्थ्य सोसायटी (डीएचएस) है। इसके अधिकांश कार्य ग्रामीण क्षेत्र से संबंधित हैं (उदाहरणार्थ, अस्पताल, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और औषधालय)। ये कार्य ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध हैं और इसलिए यह सोसायटी इन कार्यक्रमों के लिए पंचायत राज संस्थाओं के प्रति जबावदेह है। तथापि, जिला अस्पतालों और विशेषज्ञ इकाइयों का प्रबंधन, तथा गैर-सरकारी नर्सिंग होम और स्वास्थ्य की देखभाल करने वाले संगठनों का विनियमन जैसे कुछ ऐसे कार्य हैं जिनके लिए उच्च स्तर के व्यावसायिक एवं तकनीकी दक्षता की आवश्यकता होती है। अतः उस सीमा तक, डीएचएस को कार्यात्मक स्वायत्तता की आवश्यकता होगी। आयोग का विचार है कि ग्रामीण स्वास्थ्य देखभाल पंचायती राज संस्थाओं की प्राथमिक चिन्ता है, इसलिए डीएचएस को जिला पंचायत (जिला परिषद) के साथ संबंध रखना चाहिए। इसी प्रकार, मत्स्य पालक विकास एजेंसी (एफएफडीए) का पृथक अस्तित्व हो सकता है, क्योंकि इसके कार्यकलापों का पंचायती राज संस्थाओं के कार्यकलापों के साथ पूर्णतः कोई मेल नहीं है। तथापि, ग्रामीण इलाकों में जीविका कार्यक्रम के रूप में मत्स्य पालन की संभाव्यता को ध्यान में रखते हुए, इस निकाय को भी पंचायतों के विभिन्न स्तरों, विशेषकर ग्राम पंचायत के घनिष्ठ सहयोग से कार्य करने की आवश्यकता होगी।

4.1.7.6 जमीनी स्तर पर केंद्र-प्रायोजित स्कीमों के अंतर्गत आने वाली परियोजनाओं को दो समानांतर संगठन देखते हैं। एक, कार्यक्रम संबंधी निकायों से बना है, जो स्कीमों के कार्यान्वयन और प्रगति की जांच करता है। वे हैं — सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत विद्यालय शिक्षा समिति (वीईसी), ग्रामीण जल एवं सफाई समिति, मध्याह्न भोजन कार्यक्रम समिति और आईसीडीएस केन्द्र समिति। दूसरी संरचना पंचायती राज संस्थाओं की है। इसे भी लाभानुभोगी पहचान जैसे कार्यान्वयन के कुछ पहलु सौंपे गए हैं। तथापि, संबंधित पंचायत के अधिकांश कार्यक्रम संबंधी निकाय स्वतंत्र रूप से कार्य करते हैं। इस पद्धति को बदलने की आवश्यकता है। ऐसे समानांतर निकायों को पंचायत प्रणाली के साथ समेकित करने के लिए जरूरी उपायों पर विचार-विमर्श इस रिपोर्ट के पैराग्राफ 4.4 में किया गया है।

4.1.7.7 आयोग का विचार है कि परास्थानिकों को पंचायती राज संस्थाओं के कार्यों और उनके प्राधिकारों को क्षति पहुंचाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। कुछ मौजूदा समितियों को पंचायतों में सम्मिलित करने तथा उनमें से कुछ को पुनर्गठित करने की आवश्यकता पड़ सकती है ताकि उनके साथ आर्गेनिक संबंध रखे जा सकें। संघ तथा राज्य सरकारों को सामान्यतः पंचायती राज संस्थाओं के बाहर विशिष्ट समितियों का गठन नहीं करना चाहिए। तथापि, व्यावसायिक अथवा तकनीकी आवश्यकताओं की वजह से यदि कुछ विशेषज्ञ समितियों को गठित करना अपेक्षित हो और यदि उनके कार्यकलाप सूचीबद्ध एवं अंतरित कार्यकलापों से मेल खाते हों तो उन्हें कई पंचायतों के समग्र पर्यवेक्षण एवं दिशानिर्देशों के अंतर्गत करना चाहिए। इसी प्रकार, समुदाय स्तर के निकायों का सृजन उच्च स्तर पर लिए गए निर्णयों द्वारा नहीं किया जाना चाहिए। यदि ऐसा करना आवश्यक समझा जाए तो उनके सृजन की पहल नीचे से होनी चाहिए तथा उन्हें पंचायती राज संस्थाओं के प्रति जबावदेह होना चाहिए।

4.1.7.8 सिफारिशें :

(क) परास्थानिकों को पंचायती राज संस्थाओं के प्राधिकार को कमजोर कर देने की अनुमति नहीं दी जाएगी।

(ख) जिला ग्रामीण विकास एजेंसी (डीआरडीए) को जारी रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। केरल, कर्नाटक और पश्चिम बंगाल द्वारा की गई पहल के अनुसरण में अन्य राज्यों में भी डीआरडीए का विलय संबंधित जिला पंचायतों (जिला परिषद) के साथ कर दिया जाए। ऐसी ही कार्रवाई जिला जल एवं सफाई समिति (डीडब्ल्यूएससी) के लिए की जानी चाहिए।

(ग) पंचायती राज संस्थाओं के साथ संबंध रखने के लिए जिला स्वास्थ्य सोसायटी (डीएचएस) और एफएफडीए का पुनर्गठन किया जाना चाहिए।

(घ) संघ एवं राज्य सरकारों को सामान्यतः पंचायती राज संस्थाओं से बाहर विशिष्ट समितियों का गठन नहीं करना चाहिए। तथापि, व्यावसायिक अथवा तकनीकी आवश्यकताओं की वजह से यदि ऐसी विशेषज्ञ समितियों का गठन करना अपेक्षित हो और यदि उनके कार्यकलाप ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध कार्यकलापों से मेल खाते हों तो उन्हें कार्य या तो पंचायतों के समग्र पर्यवेक्षण और दिशानिर्देशों के अंतर्गत करने चाहिएं अथवा उनके पंचायती राज संस्थाओं के साथ संबंध पंचायत के संबंधित स्तर के साथ परामर्श करके स्थापित किए जाने चाहिएं।

(ङ) सामुदायिक स्तर के निकायों का सृजन उच्च स्तर पर लिए गए निर्णय द्वारा नहीं किया जाना चाहिए। यदि आवश्यक समझा जाए तो पहल नीचे से होनी चाहिए तथा उन्हें पंचायती राज संस्थाओं के प्रति जबावदेह होना चाहिए।

4.1.8 पंचायती राज संस्थाएं और प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन

4.1.8.1 ग्रामीण इलाकों में प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन अर्थात भूमि, जल स्रोतों और वानिकी तथा पारिस्थितिकी सरोकारों का ग्रामीण के जीवन में बहुत महत्व होता है। इसीलिए गांव के आम लोगों की भूमि के रिकार्डों सहित भूमि रिकार्डों का प्रबंधन प्राकृतिक संसाधनों के सतत् उपयोग हेतु पूर्व शर्त है। इस समय, इस कार्यकलाप की पूरी तरह से कायापलट करने की आवश्यकता है। ग्राम स्तर पर सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करने वाला निकाय होने की वजह से यह महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। वन ग्रामीणों के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अत्यंत कठोर और प्रायः हृदयविहीन वन कानूनों के कारण, वनों के भीतरी अथवा बाहरी हिस्से पर अवस्थित गांव भी अपनी ही भूमि पर विदेशी हो गए हैं। इन संसाधनों के उचित उपयोग हेतु योजनाएं बनाने में पंचायती राज संस्थाओं को और अधिक स्थान देने की आवश्यकता है। ग्रामीणों की जीविका में वृद्धि करने के लिए ग्राम जल स्रोत भी उतने ही महत्वपूर्ण होते हैं। यदि इनका प्रबंधन सही तरीके से किया जाए तो वे ग्राम पंचायत हेतु एक अच्छा स्रोत बन सकते हैं। प्रबंधन और इन प्राकृतिक आस्तियों के उपयोग में लोगों की भागीदारी से यह सुनिश्चित हो सकेगा कि पारिस्थितिकी सुरक्षित हाथों में है। यह आवश्यक है कि इन संसाधनों के संरक्षण और विकास की जबावदेही स्थानीय निकायों को सौंपी जाए। यह उत्तरदायित्व स्वयंसेवकों के एक दल के माध्यम से पंचायतों द्वारा निभाया जा सकता है, जो "ग्रीन गाड्र्स" के रूप में कार्य करेंगे। आयोग इन सभी मुद्दों का विश्लेषण "जिला प्रशासन" संबंधी अपनी रिपोर्ट में विस्तार से करेगा।

4.2 कार्यात्मक सुपुर्दगी

"स्थानीय निकायों को कार्यों की सुपुर्दगी" (ग्रामीण और शहरी दोनों) की व्यापक रूपरेखा इस रिपोर्ट के पैरा 3.3 में पहले ही दर्शा दी गई है। तथापि, तीनों "एफ" (फंक्शन्स, फंड्स और फंक्शनरीज) अर्थात (कार्य, निधि और पदाधिकारी) को पंचायती राज संस्थाओं को सौंपने के संबंध में राज्य सरकार की विगत में रही अनिच्छा को ध्यान में रखते हुए इन पहलुओं की विस्तार से जांच करने की आवश्यकता है।

चित्र 4.1 : राज्यों में सुपुर्दगी की तुलनात्मक स्थिति

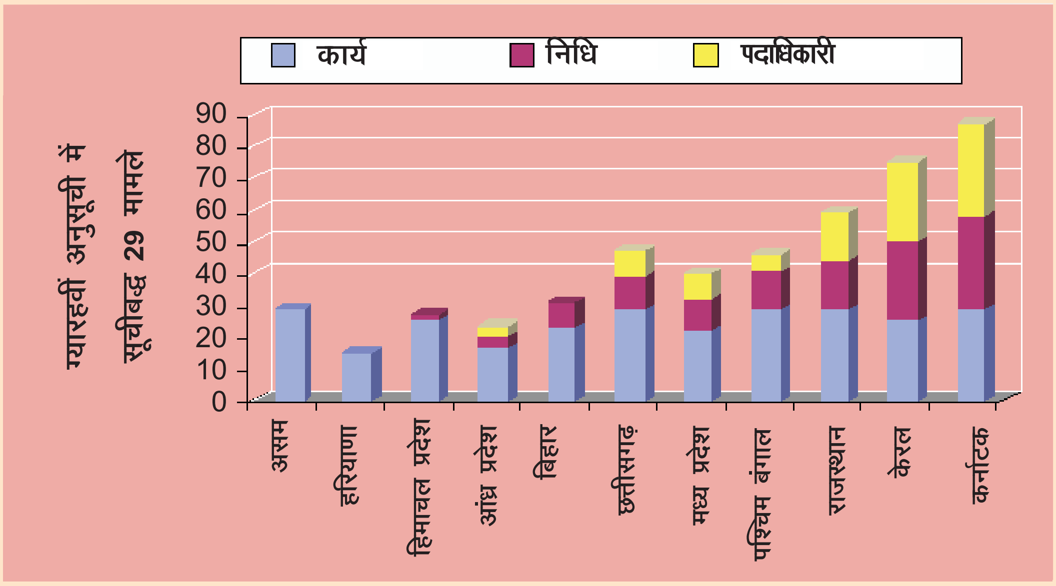

स्रोत : *www. Panchayat.nic.in*

4.2.1 वर्तमान स्थिति

4.2.1.1 संविधान के अनुच्छेद 243छ और ग्यारहवीं अनुसूची में दिखाए गए 73वें संशोधन में की गई परिकल्पना के अनुसार ग्रामीण शासन के विकेन्द्रीकरण हेतु प्रस्तावित स्कीम के पीछे भावना यह थी कि पंचायतों की स्थापना स्व-शासी संस्थाओं के रूप में की जाए तथा उनहें आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय हेतु योजनाएं तैयार करने और उन्हें कार्यान्वित करने का कार्य सौंपा जाए। तथापि, जैसा कि पहले देखा गया है, देश के अधिकांश भागों में स्थानीय निकायों को स्वायत्तशासी स्थान देने से मना करके अनुच्छेद 243छ के आशय की अनदेखी कर दी गई है। पंचायतें "अनुज्ञात्मक कार्यात्मक अधिकार क्षेत्र"

नामक ढांचे के भीतर कार्य करना जारी रखेंगी, चूंकि राज्य सरकारों के संबंधित विभागों से कुछ सीमित कार्यात्मक क्षेत्र वापस ले लिए गए हैं तथा उन्हें स्थानीय निकायों को अंतरित कर दिया गया है। केवल लघु नागरिक कार्य स्थानीय अर्ध-सरकारी निकायों को सौंपे गए हैं। पंचायतों के विभिन्न स्तरों को सौंपे गए अन्य सभी तथाकथित विकास कार्य वास्तव में राज्य सरकारों के संबंधित विभागों अथवा परास्थानिक द्वारा किए जाते हैं। संसाधनों के साथ-साथ कर्मचारी भी राज्य सरकार के नियंत्रण में रहते हैं। अतः कार्यों की प्रभावी सुपुर्दगी, जैसी कि संविधान में परिकल्पना की गई है, नहीं की गई है।

4.2.1.2 सुपुर्दगी को कार्यात्मक बनाने की दृष्टि से संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयवस्तु को पृथक-पृथक कार्यकलापों में विभाजित करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि व्यापक कार्य अथवा विषय के भीतर सभी कार्यकलाप पंचायत राज संस्थाओं को हस्तांतरित करना उपयुक्त नहीं हो सकता। राज्य सरकार कुछ कार्यकलाप समष्टि स्तर पर रोक सकती है। उदाहरण के लिए, प्राथमिक शिक्षा में, पाठ्यक्रम तैयार करना, मानकों को बनाए रखना, पाठ्य पुस्तक तैयार करना आदि जैसे कार्यकलाप राज्य सरकार के पास रखने पडेंगे, जबकि विद्यालयों के प्रबंधन से संबंधित कार्य ग्राम पंचायत अथवा जिला परिषद के पास हो सकते हैं। किसी व्यापक कार्य अथवा किसी विषय के कार्यकलाप निरुपण के बगैर स्थानीय निकायों के लिए व्यावहारिक सुपुर्दगी स्कीम तैयार करना संभव नहीं है। पंचायती राज मंत्रालय, भारत सरकर ने 2004 में संपूर्ण देश में सात गोलमेज सम्मेलनों का आयोजन करके तथा प्रभावी पंचायती राज के लिए राष्ट्रीय रुपरेखा शुरू करके इस दिशा में पहल की थी। अभी तक कुछ ही राज्यों ने प्रत्युत्तर दिया है और उनमें से भी केवल कुछेक ने ही गहन कार्यकलाप निरुपण का कार्य पूरा किया है।

4.2.1.3 अनुच्छेद 243छ निर्धारित करता है कि किसी राज्य का विधान, विधि द्वारा, पंचायतों को ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान कर सकता है जो स्व-शासन के संस्थाओं के रूप में कार्य करते हेतु उन्हें समर्थ बनाने के लिए जरूरी हों। प्रायः सभी राज्यों ने पंचायती राज संस्था को कार्य संविधि द्वारा नहीं, बल्कि नियमों अथवा कार्यकारी आदेशों के रूप में प्रत्यायोजित विधान द्वारा सौंपने का निर्णय लिया है।

4.2.1.4 उन राज्यों ने भी, जिन्होंने विकेन्द्रीकरण के लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति दिखलाई है, वास्तविक सुपुर्दगी नहीं कि तथा उन्हें संघ एवं राज्य सरकार की स्कीमों व परियोजनाओं को कार्यान्वित

करने की केवल जिम्मेवारी सौंपी गई है। वास्तविक सुपुर्दगी का अर्थ यह होगा कि पंचायतों को उनकी आवश्यकताओं एवं आवश्यकताओं के लिए सर्वाधिक उपयुक्त स्कीमों एवं परियोजनाओं को डिजाइन करने, नियोजन करने ओर उन्हें कार्यान्वित करने का कार्य सौंपा गया है। जब तक यह कार्य नहीं हो जाता तब तक पंचायतें स्व-शासन की संस्थाएं नहीं बनेंगी तथा वे राज्य सरकार की केवल कार्यान्वयन एजेंसी बनी रहेगी।

4.2.1.5 सुपुर्दगी की वर्तमान स्थिति (नवम्बर, 2006 के अनुसार) सारणी 4.4 में दर्शाई गई है।

सारणी 4.4 : नवम्बर, 2006 की स्थिति के अनुसार कार्यों की सुपुर्दगी की स्थिति

राज्य	विधान द्वारा विषयों का अंतरण	कार्यकलाप निरुपण के अधीन शामिल विषय	अद्यतन स्थिति
आन्ध्र प्रदेश	17 विषय	9 विषय	कार्यकलाप निरुपण के लिए विशेष मुख्य सचिव के अधीन गठित एक कार्य बल ने विस्तृत निरूपण तैयार किए हैं। इस समिति की सिफारिशों के अनुसार कार्यकलाप निरुपण को समाविष्ट करने वाले सरकारी आदेशों का मसौदा मंत्रियों के समूह के विचाराधीन है ताकि उसे अंतिम रूप दिया जा सके। इन विचार-विमर्शों के पूरा होने के बाद विभागों को निदेश दिए गए हैं कि वे सरकारी आदेशों को अंतिम रूप प्रदान करें ताकि उन्हें जारी किया जा सके।
असम	29 विषय	29 विषय	असम ने दावा किया है कि वह कार्यकलाप निरुपण तीन वर्ष पहले ही कर चुका है। तथापि, पृथक-पृथक विभागों ने निधियों और अधिकारियों को स्थानांतरण संबंधी कार्यकारी आदेशों के माध्यम से इस पद्धति को शुरू नहीं

राज्य	विधान द्वारा विषयों का अंतरण	कार्यकलाप निरुपण के अधीन शामिल विषय	अद्यतन स्थिति
			किया है। तथापि, पंचायती राज मंत्री के हाल ही के असम दौरे के बाद से राज्य ने कार्यकलाप निरुपण पर अपने प्रयासों को पुनः अंजाम देना शुरू कर दिया है। इसने वर्तमान वर्ष में कार्यकलाप निरुपण शुरू करने तथा वर्ष 2007-08 के लिए राज्यों के अनुपूरक बजट अनुमानों के समय तक राजकोषीय सुपुर्दगी द्वारा इसको अनुरूपी बनाने के लिए अब एक रुपरेखा तैयार की है।
अरूणाचल प्रदेश	3 विषय		राज्य सरकार ने गैर-सरकारी संगठन, पीआरआईए की सहायता से कार्यकलाप निरुपण को पूरा करने के लिए अपने एक अधिकारी को नियुक्त किया है। इस अधिकारी ने कार्यकलाप निरुपण पर अपनी रिपोर्ट मई, 2006 में राज्य सरकार को प्रस्तुत कर दी है। अब उसने वायदा किया है कि वह कार्यकलाप निरुपण संबंधी कार्य को शीघ्र पूरा कर लेंगे। वर्तमान में, ग्रामीण विकास, कृषि और बागवानी कार्यक्रमों के संबंध में केवल लाभार्थियों के चयन का कार्य पंचायतों को सौंपा गया है।
बिहार	25 विषय	25 विषय	बिहार ने कार्यकलाप निरुपण का कार्य 2001 में ही शुरू कर दिया था। तथापि, इन आदेशों को लागू नहीं किया था। अतः राज्य ने गैर-सरकारी संगठन, पीआरआईए की सहायता

राज्य	विधान द्वारा विषयों का अंतरण	कार्यकलाप निरुपण के अधीन शामिल विषय	अद्यतन स्थिति
			से कार्यकलाप निरुपण पर विस्तृत कार्रवाई करनी पुनः शुरू कर दी है। इस समय ग्रामीण विकास और पंचायती राज के आयुक्त और प्रधान सचिव की अध्यक्षता में समिति कार्यकलाप निरुपण के संबंध में विस्तृत कार्य शुरू कर रही है। इस कार्य में वित्त और पदाधिकारियों का सुपुर्दगी भी शामिल है। वित्त के संबंध में वित्त आयुक्त की अध्यक्षता में एक पृथक समिति का गठन किया गया है ताकि बजट में पंचायत क्षेत्र स्थल के सृजन से संबंधित रुपात्मकताओं पर विचार एवं संव्यवहार करना शुरू कर सके।
छत्तीसगढ़	29 विषय	वन एवं पेयजल आपूर्ति को छोड़कर 27 विषय	यद्यपि 27 विषयों के लिए कार्यकलाप निरुपण का कार्य पूरा हो गया है, फिर भी अपेक्षित कार्यकारी आदेश अभी तक जारी नहीं किए गए हैं।
गोवा	6 विषय	18 विषय	18 कार्य ग्राम पंचायतों को और 6 जिला परिषदों को अंतरित कर दिए गए हैं। गोवा को राजकोषीय सुपुर्दगी के संबंध में अनुवर्ती कार्रवाई करने की आवश्यकता है।
गुजरात	15 विषय	14 विषय	14 विषयों के लिए कार्यकलाप निरुपण का कार्य पूरा हो गया है। 5 विषयों का आंशिक रूप से सुपुर्दगी कर दिया गया है। 10 कार्यों के संबंध में कार्यकलाप अभी अंतरित किए जाने हैं। कार्यकलाप निरुपण हेतु राज्य द्वारा एक मैट्रिक्स तैयार कर लिया गया है।

राज्य	विधान द्वारा विषयों का अंतरण	कार्यकलाप निरुपण के अधीन शामिल विषय	अद्यतन स्थिति
हरियाणा	29 विषय	10 विषय	10 विषयों के संबंध में कार्यकलाप निरुपण 17.2.2006 को मुख्य मंत्री, हरियाणा और केन्द्रीय पंचायती राज मंत्री की संयुक्त उपस्थिति में जारी किया गया था।
हिमाचल प्रदेश	26 विषय		15 विभागों ने पंचायतों को शक्तियां प्रत्यायोजित करने के आदेश जारी कर दिए थे। लेकिन पंचायती राज मंत्रालय द्वारा दिए गए सुझावों के अनुसार औपचारिक मॉडल मैट्रिक्स में किसी भी कार्यकलाप निरुपण का प्रयास नहीं किया गया है।
कर्नाटक	29 विषय	29 विषय	सभी 29 मदों के संबंध में कार्यकलाप निरुपण का कार्य अगस्त, 2003 में ही पूरा कर लिया गया है, उसके बाद अक्तूबर, 2004 में राज्य बजट के माध्यम से निधियों की सुपुर्दगी की गई थी।
केरल	26 विषय	26 विषय	कार्यकलाप निरुपण का कार्य उत्तरदायित्व निरुपण के रूप में पूरा किया गया थ। अब राज्य नई कार्यकलाप निरुपण मैट्रिक्स, जिसमें नगरपालिकाओं को भी शामिल किया गया है, तैयार करके इस उत्तरदायित्व निरुपण को पुनः देखेगा। अंतरित कार्यों के लिए पंचायतों को मुक्त निधियां भी अंतरित की जा रही हैं।

राज्य	विधान द्वारा विषयों का अंतरण	कार्यकलाप निरुपण के अधीन शामिल विषय	अद्यतन स्थिति
मध्य प्रदेश	23 विषय	23 विषय	कार्यकलाप निरुपण का कार्य दो चरणों में शुरू किया गया था — प्रथम, समर्थन नामक गैर-सरकारी संगठन की सहायता से 7 विषय शामिल किए गए थे। यह गैर-सरकारी संगठन अब शेष उन 16 और विषयों, जो अंतरित कर दिए गए हैं, के लिए कार्यकलाप निरुपण पूरे कर चुका है। इन पर समान संबंधित विभागों के साथ विचार-विमर्श किया जा रहा है।
महाराष्ट्र	18 विषय		इस राज्य में कार्यकलाप निरुपण के संबंध में कोई खास प्रगति नहीं हुई है। राज्य ने हाल ही में निर्णय लिया है कि वह इस संबंध में प्रगति की समीक्षा करेगा।
मणिपुर	22 कार्य	22 विषय	प्रारंभ में कहा गया था कि 22 विषयों के कार्यकलाप निरुपण का कार्य पूरा कर लिया गया है। तथापि, चूंकि ये शुरू नहीं किए गए थे, इसलिए राज्य ने इनकी पुनः समीक्षा की है तथा जनवरी, 2006 में 16 विषयों के कार्यकलाप निरुपण हेतु एक अधिसूचना जारी की गई थी। इसे अब कार्यान्वित किया जा रहा है।
उड़ीसा	25 विषय	7 विषय	9 विषयों के संबंध में कार्यकलाप निरुपण की प्रगति केन्द्रीय पंचायती राज मंत्री और मुख्य मंत्री की संयुक्त उपस्थिति में जारी कर दी गई है। राज्य अब पंचायतों को राजकोष की

राज्य	विधान द्वारा विषयों का अंतरण	कार्यकलाप निरुपण के अधीन शामिल विषय	अद्यतन स्थिति
			सुपुर्दगी कर रहा है तथा इसका उद्देश्य अगले वित्तीय वर्ष में इस कार्य को पूरा करना है।
पंजाब	7 विषय		कार्यकलाप निरुपण का मसौदा सभी विभागों के लिए व्यापक तौर पर तैयार किया गया है। स्वास्थ्य एवं शिक्षा जैसे कुछ क्षेत्रों में महत्वपूर्ण कार्य शुरू किया जा रहा है। मैट्रिक्स पर पंचायती राज मंत्रालय के साथ विचार-विमर्श किया गया है और यह अधिसूचना के लिए तैयार है।
राजस्थान	29 विषय	12 विषय	कार्यकलाप निरुपण की कवायद 18 विभागों के लिए शुरू की गई थी तथा 12 विभागों में अब पूरी कर ली गई है। पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़ करने के लिए उपायों की सिफारिश करने हेतु अगस्त,2004 में एक मंत्रिमंडल उप-समिति का गठन किया गया था। इसकी रिपोर्ट 2007, जब ग्यारहवीं योजना शुरू हुई, तक पूर्ण सुपुर्दगी की सिफारिश करती है।
सिक्किम	28 कार्य		कार्यकलाप निरुपण का कार्य शुरू हो चुका है और इसके अक्तूबर, 2006 में घोषित किए जाने की संभावना है।
तमिलनाडु	29 विषय		तमिलनाडु दावा करता है कि उसने सभी विषय पंचायती राज को अंतरित करने के लिए अनुदेश जारी कर दिए हैं, लेकिन ये कागजों पर ही किए गए हैं। ग्रामीण सड़कों, जलापूर्ति, सफाई और ग्रामीण आवास स्कीमों

राज्य	विधान द्वारा विषयों का अंतरण	कार्यकलाप निरुपण के अधीन शामिल विषय	अद्यतन स्थिति
			से संबंधित विषयों पर अब कार्यकलाप निरुपण के संबंध में विचार-विमर्श शुरू किया जा रहा है।
त्रिपुरा	29 विषय	21 विषय	1994 में 21 विषय अंतरित करने के आदेश जारी किए थे। छठी अनुसूची से संबंधित प्रचालनात्मक समस्याओं के कारण 8 विषयों के आदेश अभी प्रतीक्षित हैं। कार्यकलाप निरुपण का कार्य जारी है।
उत्तर प्रदेश	12 विषय		समिति (भोलानाथ तिवारी की रिपोर्ट) की सिफारिशों के एक भाग के रूप में 32 विभागों में कार्यकलाप निरुपण का कार्य पूरा हो गया है। तथापि, यह रिपोर्ट कार्यान्वित नहीं की गई है।
उत्तराखंड	14 विषय	9 विषय	9 विभागों का कार्यकलाप निरुपण संबंधी कार्य पूरा हो गया है तथा सरकार के विचाराधीन है।
पश्चिम बंगाल	29 विषय	15 विषय	कार्यकलाप निरुपण का कार्य पूरा कर लिया गया है तथा 7.11.2005 को 15 विषयों के बारे में आदेश जारी कर दिए गए हैं।
संघ राज्य क्षेत्र			
दादर एवं नगर हवेली	29 विषय	29 विषय	2002 में अधिसूचित दादर एवं नगर हवेली ग्राम पंचायत (संशोधन) विनियमन, 1994 में संशोधन करके ग्यारहवीं अनुसूची के सभी 29 मामलों के संबंध में कार्यकलाप निरुपण संबंधी कार्य पूरे कर लिए गए हैं।

राज्य	विधान द्वारा विषयों का अंतरण	कार्यकलाप निरुपण के अधीन शामिल विषय	अद्यतन स्थिति
दमन और दीव	18 विषय	18 विषय	गृह मंत्रालय ने पंचायतों को अधिकारों और कार्यों का सुपुर्दगी करने के संबंध में अध्ययन करने और सिफारिश करने हेतु वित्त आयोग का गठन किया। गृह मंत्रालय के अनुमोदन के बाद 2001 में, 18 विषयों से संबंधित कार्यकलाप एवं स्कीमें पंचायतों को हस्तांतरित कर दी गई हैं।
अंडमान एवं निकोबार द्वीपसमूह	8 विषय	8 विषय	8 विषयों के कार्यकलाप निरुपण का कार्य पूरा हो गया है। इनमें मात्स्यिकी, निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम, आपदा प्रबंधन और ग्रामीण विद्युतीकरण शामिल है।
लक्षद्वीप द्वीप समूह	25 विषय	25 विषय	जनवरी, 2006 में पंचायती राज मंत्री के लक्षद्वीप दौरे के बाद पंचायती राज और केरल के एक दल ने संघ राज्य क्षेत्र के लिए कार्यकलाप निरुपण का कार्य पूरा कर लिया है और प्रशासन द्वारा अधिसूचित कर दिया गया है।
चंडीगढ़			कार्यकलाप निरुपण का कार्य नहीं किया गया है। चूंकि चंडीगढ़ अपने गांव को शहरी क्षेत्र में समाविष्ट करने जा रहा है, इसलिए कार्यकलाप निरुपण अनावश्यक मान लिया गया है।

स्रोत : मध्यावधि मूल्यांकन पर आधारित — पंचायतों की वर्ष 2006-07 की स्थिति (खंड-1) (http://panchayat_gov.in/mopr%2 Dirmapublication 2007%2D08/)

4.2.1.6 संविधान के अनुच्छेद 243छ का मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि पंचायतें सभी स्तरों पर स्व-शासन की संस्था के रूप में कार्य करें न कि कार्यान्वयन एजेंसियों के रूप में। ऐसा कार्यों, निधियों और पदाधिकारियों के सुपुर्दगी के द्वारा किया जाएगा। इस कार्य में संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में यथा उल्लिखित संपूर्ण विषयों को शामिल किया जाना है। अधिकांश राज्य अधिकतर महत्वपूर्ण विषय पहले ही पंचायतों को सौंप चुके हैं। कुछ राज्य सभी 29 विषयों की सुपुर्दगी राज्य अधिनियम के माध्यम से कर चुके हैं। लेकिन, व्यावहारिक तौर पर ऐसे स्थानांतरण अपूर्ण रहे। प्रथम, प्रासंगिक सोच का अभाव रहा है कि अर्थव्यवस्थाओं का पैमाना, दक्षता, क्षमता, प्रवर्तन तथा समीपता संबंधी विचारधाराओं पर आधारित कौन-सा कार्यकलाप विकसित किया जाना चाहिए। इससे सरकार के विभिन्न स्तरों के अधिकार क्षेत्रों की अतिव्याप्ति बढ़ी है। यह स्थिति जबावदेही की गंभीरता से जड़ खोद रही है। दूसरे, कई मामलों में जब राज्य स्थानीय शासन को उत्तरदायित्व सौंपता है तो वे मुख्य कार्यकलापों तथा विकसित सेवाएं प्रदान करने के लिए जरूरी उन कार्यकलापों के निष्पादन का कार्य राज्य की लाइन एजेंसियों पर छोड़ देते हैं।

4.2.2 सुपुर्दगी के मूल सिद्धांत

4.2.2.1 उपर्युक्त लेखे से पता चलता है कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का संवैधानिक डिजाइन अभी तक व्यवहार में नहीं आया है। आधार वाक्य से प्रारंभ करके कि पंचायत एक स्थानीय शासन व्यवस्था है जो लोगों के सर्वाधिक निकट होती है, वित्तीय एवं कार्यात्मक स्वायत्तता प्राप्त करती है तथा सुपुर्दगी संबंधी कार्य को निम्नलिखित मुख्य सिद्धांतों के आधार पर आगे बढ़ाना है :

(i) पंचायत के प्रत्येक स्तर हेतु एकमात्र कार्यात्मक अधिकार क्षेत्र अथवा स्वतंत्र कार्रवाई क्षेत्र होना चाहिए। राज्य सरकार को सामान्य दिशानिर्देश देने के सिवाए इस क्षेत्र पर किसी भी प्रकार का नियंत्रण नहीं रखना चाहिए। इसी क्षेत्र के भीतर यदि कोई कार्यकलाप राज्य सरकार के किसी लाइन विभाग द्वारा वर्तमान में निष्पादित किया जाता है तो उस विभाग को सुपुर्दगी के बाद कार्यकलाप को निष्पादित करने में रोक लगा देनी चाहिए।

(ii) कार्यकलाप के वे ऐसे क्षेत्र हो सकते हैं जहां राज्य सरकार और पंचायतें समान भागीदारों के रूप मं कार्य करते हैं।

(iii) एक ऐसा भी क्षेत्र हो सकता है जहां पंचायत संस्था संघ अथवा राज्य सरकार की स्कीमों/ कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए एजेंसियों के रूप में कार्य करेंगी। (कार्यप्रणाली की

हिस्सेदारी पद्धति और एजेंसी पद्धति के बीच अंतर यही है कि उत्तरदायित्वों के निर्वहन में स्वतंत्रता एजेंसी पद्धति की तुलना में हिस्सेदारी पद्धति में अधिक है।)

उपर्युक्त तीनों क्षेत्रों में, पहले दो क्षेत्रों का प्रभुत्व होना चाहिए। एजेंसी (iii) में दिए गए कार्यों की तरह कार्य करती है, अतः उसे, जहां स्थानीय शासन संस्था को स्वायत्तता प्राप्त हो वहां अन्य दो कार्रवाई क्षेत्रों को अधिक महत्व देने की अनुमति नहीं देनी चाहिए।

(iv) पंचायत प्रत्येक स्तर पर स्थानीय शासन की एक संस्था होती है। अतः उच्च स्तरीय पंचायत और निम्न स्तरीय पंचायत के बीच कोई क्रम संबंध नहीं हो सकता।

4.2.3 कार्यकलाप निरूपण

4.2.3.1 कार्यकलाप निरूपण का अर्थ है विषयों का विस्तार करके कार्य की छोटी-छोटी इकाइयों में निरूपित करना और तदुपरांत इन इकाइयों को सरकार के विभिन्न स्तर के कार्य सौंपना। इस असमूहन प्रक्रिया को बजट मदों अथवा व्यवस्थित स्कीमों द्वारा अनुचित रूप से प्रभावित करने की आवश्यकता नहीं है। स्कीमें विशिष्ट रूप से एक गतिविधि अथवा उप-कार्यकलापों से संबद्ध हो सकती हैं अथवा इसमें कई गतिविधियां शामिल हो सकती हैं। कार्यकलापों का यह निरूपण कुछ वस्तुनिष्ठ सिद्धांतों के आधार पर किया जाना चाहिए। किसी कार्यक्रम के हितकारी चयन जैसे कार्यकलाप विभिन्न बजट से संबंधित मदों तक विस्तारित हो सकते हैं, लेकिन यह पंचायतों के सबसे निचले स्तर पर किया जाना चाहिए। स्कीम-वार कार्यकलापों के आधार पर एक जैसी गतिविधि के लिए अलग-अलग मापदंड नहीं होने चाहिएं।

4.2.3.2 कार्यकलाप निरूपण का पहला कदम प्रत्येक कार्यात्मक क्षेत्र को सुपुर्दगी के अनुरूप अवर्गीकृत करके विस्तृत करना होगा। उदाहरण के लिए बुनियादी शिक्षा को अध्यापकों की उपस्थिति की मॉनीटरिंग, विद्यालयों की मरम्मत, उपकरणों की अधिप्राप्ति, अध्यापकों की भर्ती अथवा निष्कासन आदि जैसे उप-कार्यकलापों में विभाजित किया जा सकता है। बागवानी को बीज आपूर्ति, नर्सरी उत्पादन, तकनीकी सहायता, और नियंत्रण, मूल्य और विपणन की सूचना मुहैया कराना तथा फसल-कटाई के बाद सहायता आदि में विभाजित किया जा सकता है। इन विभाजित कार्यकलापों को पांच श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है, जो इस प्रकार है : (i) मानक निर्धारित करना, (ii) नियोजन, (iii) आस्ति सृजन (iv) कार्यान्वयन एवं प्रबंधन (v) मॉनीटरिंग एवं मूल्यांकन।

4.2.3.3 एक बार जब गतिविधियां अलग-अलग हो जाती हैं तब अगला कदम उनमें से प्रत्येक को पंचायतों के वे स्तर सौंपे जाते हैं जहां उनका निष्पादन सर्वाधिक कुशलता से किया जा सके। अर्थव्यवस्थाओं का पैमाना, बाह्यता, साम्यता और विजातीयता जैसे घटक इस प्रक्रिया में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। अर्थव्यवस्थाओं के पैमाने की प्रवृत्ति सरकार के उच्चतर स्तरों की ओर बढ़ने की होती है। इसके विपरीत यदि कोई कार्यकलाप कार्यान्वयन में तटस्थ आंका जाता है तो कार्यान्वयन हेतु इसे निम्नतम स्तर तक ले जाने को तरजीह दी जा सकती है। घनिष्ठ संबद्धता अर्थव्यवस्थाओं के कार्यक्षेत्र का मुद्दा है। कुछ सेवाओं को इस प्रकार जोड़ा जाए कि ये एक स्तरीय सरकार के लिए और अधिक सक्षम बन जाएं ताकि जब उन्हें एक साथ मिलाया जाए तो उनकी और अधिक कुशलता से व्यवस्था की जा सके। इसका एक अच्छा उदाहरण बहु-ग्राम जलापूर्ति परियोजनाओं का है जिनकी व्यवस्था उच्च-स्तरीय स्थानीय शासन (जैसे जिला परिषद) द्वारा की जा सकती है अथवा स्थानीय शासनों की एसोसिएशनों द्वारा शुरू की जा सकती हैं अथवा क्षेत्रीय प्रदायकों को संविदा पर दी जा सकती है। यदि कोई कार्यकलाप स्थानीय निकाय के अधिकार क्षेत्र पर प्रभाव डालता है तो ऐसे कार्यकलाप उच्च स्तर पर ही किए जाने चाहिएं। उदाहरण के लिए, महामारी नियंत्रण की व्यवस्था ग्राम पंचायतों की बजाए उच्च स्तर पर की जानी चाहिए, क्योंकि रोगवाहक ग्राम पंचायत की सीमाओं से आगे बढ़ जाते हैं। कई बार कोई विशिष्ट कार्यकलाप स्थानीय स्तर पर वास्तव में कुशलतापूर्वक शुरू किया जा सकता है और उसकी कोई बाध्यता नहीं है, लेकिन साम्यता की दृष्टि से संपूर्ण अधिकार क्षेत्र में एकसमान विकास पैटर्न वांछनीय है। साम्यता के प्रयोजन से ऐसे कार्यकलाप उच्च स्तर पर करने होंगे। कार्यकलापों की अधिक विजातीयता, सूक्ष्म भेद को कम करके इसे निष्पादित किया जाए। उदाहरण के लिए मध्याहन भोजन के तत्व संपूर्ण राज्यों में भोजन की स्थानीय आदतों के कारण व्यापक रूप से अलग-अलग होते हैं। अतः बेहतर होगा कि इसे निम्नतम स्तर पर निष्पादित किया जाए।

4.2.3.4 लोक जबावदेही एक अन्य महत्वपूर्ण घटक है जो यह बताता है कि कार्यकलाप में कहां दरार होनी चाहिए। इस संबंध में निम्नलिखित प्रश्न प्रासंगिक हैं :

(i) *क्या कार्यकलाप आपके विवेक पर हैं यदि हां, तो निचले स्तर पर निष्पादन करना सर्वोत्तम है ताकि पारदर्शिता बनी रहे।*

(ii) *क्या यह संव्यवहार प्रधान है? यदि हां, तो पुनः इसे निचले स्तर पर निष्पादित करना सर्वोत्तम है।*

(iii) *निष्पादन का सर्वोत्तम निर्णायक कौन हो सकता हैं यदि निष्पादन मूल्यांकन के लिए तकनीकी कौशल अपेक्षित हो तो इसे उच्च स्तर की ओर धकेला जा सकता है।*

4.2.3.5 विश्व बैंक के कागजात "इंडिया-इंक्लूसिव ग्रोथ एंड सर्विस डिलीवरी" में सुझाव दिया गया है कि गतिविधियां उपयुक्त स्तर पर एक बार सही ढंग से निरूपित हो गईं तो ग्रामीण सेवा प्रदान करने के संबंध में तीन महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकलते हैं। ये निम्न प्रकार हैं :

(i) संचालन और अन्य सभी बातों की मॉनिटरिंग और मूल्यांकन हेतु एक ही स्तर की शासन व्यवस्था उत्तरदायी नहीं होनी चाहिए।

(ii) उत्पादन के लिए मानक और परिणामों के लक्ष्य निर्धारित करने तथा निष्पादन की मॉनीटरिंग करने तथा विकल्पों के प्रभाव का मूल्यांकन करने हेतु उच्चतर स्तर के शासन की क्षमता और प्रतिबद्धता को विकेन्द्रीकरण द्वारा सुदृढ़ किया जाना चाहिए।

(iii) आस्तियों के सृजन और संचालन पर स्थानीय नियंत्रण को बढ़ाने हेतु काफी संभावनाएं हैं।

4.2.3.6 संघ सरकार का पंचायतों के कार्यों एवं निधियों की सुपुर्दगी पर पंचायतों के कार्यात्मक क्षेत्र में मुख्यतः केंद्र-प्रायोजित स्कीमों और अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता के माध्यम से राज्यों को बड़े पैमाने पर राजकोषीय सुपुर्दगी के कारण महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। पंचायती राज मंत्रालय पुरानी और नई केंद्र-प्रायोजित स्कीमों के दिशानिर्देशों की जांच कर रहा है तथा सुझाव दे रहा है ताकि उन्हें पंचायतों के कार्यात्मक नियत कार्यों के साथ प्रतिस्पर्धा योग्य बनाया जा सके। तथापि, संकल्पना के स्तर पर ही मंत्रालयों को संघ, राज्य और पंचायत स्तर पर निरूपित किए जाने वाले कार्यकलापों को निरूपित करने की आवश्यकता होगी।

4.2.3.7 कार्यकलाप निरूपण यह सुनिश्चित करने में अवरोधक बन सकता है कि पंचायतों का आधार सुदृढ़ है। जब पंचायतों को साफ-साफ कार्य सौंपे जाते हैं, अंतरित निधि सौंपी जाती है तथा उन्हें सौंपे गए नए उत्तरदायित्वों के निष्पादन के लिए जबावदेह बनाया जाता है तो प्रभावी निष्पादन के लिए अपेक्षित क्षमता की मांग उनके लिए एक बड़ा प्रोत्साहन का कार्य करती है। इस प्रकार, भूमिका की स्पष्टता आपूर्ति प्रेरण से मांग प्रेरण होने, जोकि भारी लाभ है, से उत्प्रेरक क्षमता बढ़ती है। कार्यकलाप निरूपण के जरिए सौंपी गई सुस्पष्ट भूमिकाओं से शक्ति संपन्न पंचायतें भी प्रभावी निष्पादन के लिए अपेक्षित कर्मचारियों की मांग करना शुरू कर देंगी। इसलिए कार्यकलाप निरूपण बेहतर सेवाएं प्रदान करने के लिए अधिकारियों की उपयुक्त नियुक्ति के लिए प्रोत्साहित कर सकता है।

4.2.3.8 राज्य और संघ दोनों स्तरों पर कार्यकलाप निरुपण कार्य को सहजता से पूरा करने के उद्देश्य से गलतफहमी से बचने की आवश्यकता है। साथ ही कार्यकलाप निरुपण में (क) कार्य को स्पाइल की शेयरिंग" के रूप में समझना, अथवा (ख) संबंधित विभागों को "कमजोर" करने के कार्य से बचने की आवश्यकता है। निम्नलिखित दृष्टिकोण इस संबंध में किसी भी प्रकार की आशंका को दूर कर सकता है :

(i) पंचायतों और संबंधित विभागों को कौन से कार्यकलाप सौंपे जाएं, इस मुद्दे पर सर्वसम्मति के लिए गहन भागीदारीपूर्ण कार्य प्रारंभ करना;

(ii) प्रक्रिया में पारदर्शिता सुनिश्चित करना और विभिन्न हितधारकों के बीच विश्वास पैदा करना;

(iii) पंचायतों की क्षमताओं पर विचार करना, चरण-वार कार्यकलाप निरुपण हेतु विभिन्न विषयों को प्राथमिकता देना;

(iv) कार्यकलाप निरुपण संबंधी मामले को प्रस्तावित करते समय इस रिपोर्ट में लिखित वस्तुनिष्ठ सिद्धांतों का सख्ती से पालन करना;

(v) साथ ही कार्यकलाप निरुपण को (क) क्षमता वर्धन का निरुपण; (ख) वित्तीय आवश्यकताएं, और (ग) प्रशासनिक आवश्यकताओं के साथ जोड़ना ताकि संक्रमण सरलता से हो सके और कार्यकलाप निरुपण को तत्काल संचालित किया जा सके;

(vi) स्थायित्व, कार्यकलाप निरुपण के लिए विधायी संस्वीकृति के कारणों को वास्तविक तौर पर कानून के एक भाग के रूप में शामिल करके प्रोत्साहित करना।

4.2.3.9 आयोग का विचार है कि प्रत्येक राज्य को संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में उल्लिखित मामलों के संबंध में कार्यकलाप निरुपण विस्तार से प्रारंभ करना चाहिए। ऐसा करते समय पूर्व पैराग्राफों में विचारित सिद्धांतों को ध्यान में रखना चाहिए। इस क्षेत्र में अब तक हुई प्रगति संतोषजनक नहीं है और इसलिए वांछनीय है कि प्रत्येक राज्य को एक विशिष्ट कार्य बल (टॉस्क फोर्स) का गठन करना चाहिए ताकि इस कार्य को समयबद्ध रूप से पूरा किया जा सके। इसी प्रकार, केन्द्रीय मंत्रालयों को सभी केंद्र-प्रायोजित स्कीमों के लिए प्रमुख कार्यक्रमों को प्राथमिकता देते हुए कार्यकलाप निरुपण गहनता से करने की आवश्यकता होगी।

4.2.3.10 सिफारिशें :

(क) राज्यों को ग्यारहवीं अनुसूची में उल्लिखित सभी मामलों के संबंध में विस्तृत कार्यकलाप निरुपण प्रारंभ करना चाहिए। इस प्रक्रिया में विषय के सभी पहलुओं, अर्थात आयोजना, बजट-निर्माण और वित्त व्यवस्था का प्रावधान, को शामिल किया जाना चाहिएं। राज्य सरकार को इस कार्य को पूरा करने के लिए एक वर्ष के भीतर कार्य बल का गठन कर लेना चाहिए।

(ख) संघ सरकार को केंद्र-प्रायोजित योजनाओं के संबंध में भी समान कार्रवाई करने की आवश्यकता होगी।

4.2.4 पंचायतों को विनियामक कार्य सौंपना

4.2.4.1 चूंकि पंचायतें स्थानीय स्तर पर सरकार की अभिन्न अंग होती हैं, इसलिए उनके कार्यकलापों को केवल विकास कार्यों तक सीमित नहीं किया जा सकता। यदि जन सुविधा और विधि अथवा विनियमन का प्रभावी प्रवर्त्तन विनियामक कार्यों के विकेन्द्रीकरण को प्राधिकृत करता है तो ऐसे कार्यों को स्थानीय निकायों को सौंपना सर्वाधिक उपयुक्त होगा। ऐसे कई क्षेत्र हैं जहां स्थानीय सरकारों को विनियामक अधिकार सौंपने के बहुत ही ठोस आधार हैं। जन्म, मृत्यु, जाति और आवास संबंधी प्रमाणपत्र जैसे कार्यों से लेकर भवन उप-विधियां लागू करना, मतदाता पहचान पत्र जारी करना, तौल एवं माप से संबंधित विनियम लागू करना आदि जैसे कार्य स्थानीय सरकारों द्वारा बेहतर तरीके से निष्पादित किए जा सकेंगे। आयोग ने अपनी रिपोर्ट पब्लिक ऑर्डर के पैरा 5.15- में सामुदायिक नीति निर्धारण में ऐसा वातावरण तैयार करने के महत्व पर बल दिया गया है, जिससे सामुदायिक सुरक्षा और संरक्षण बढ़ सके। ग्राम पंचायतें लोगों के साथ अपनी अधिक निकटता के कारण सामुदायिक नीति निर्धारण में प्रभावी भूमिका निभा सकती हैं। अधिकांश विकसित देशों में नीति निर्धारण करना नगरपालिका का कार्य है तथा ऐसी कोई वजह नहीं कि ऐसा भारत में क्यों नहीं होना चाहिए। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया राज्य सरकार के कर्मचारियों से गांव की पुलिस के कार्यों और अधिकारों को धीरे-धीरे ग्राम पंचायतों के गांवों में हस्तांतरित किए बगैर पूरी नहीं हो सकती। इस रिपोर्ट में सुझाए गए सुधार कार्यों के कार्यान्वयन से पंचायती राज संस्था ऐसे और कई कार्य कुशलतापूर्वक संभालने की स्थिति में होंगी। अतः ऐसे विनियामक कार्य, जिन्हें पंचायतों को सौंपा जा सकता है, अभिज्ञात किए जाएं और उन्हें सतत् रूप से सुपुर्द किया जाए।

4.2.4.2 सिफारिशें :

(क) ग्रामीण नीति निर्धारण, भवन उप-विधियों का प्रवर्तन, जन्म, मृत्यु, जाति और आवास प्रमाणपत्र जारी करना, मतदाता पहचान पत्र जारी करना, तौल एवं माप से संबंधित विनियमों का प्रवर्तन ऐसे कुछ विनियामक कार्य हैं, जिन्हें पंचायतों को सौंपा जाना चाहिए। पंचायतों को छोटे धर्मादा और दानों की व्यवस्था करने का भी अधिकार दिया जाए। ऐसा धर्मार्थ वृत्तिदानों से संबंधित कानूनों में उपयुक्त रूप से संशोधन करके किया जा सकता है।

(ख) विनियामक कार्य, जिन्हें पंचायतों द्वारा निष्पादित किया जा सकता है, अभिज्ञात किया जाए और सतत आधार पर उन्हें सुपुर्द किया जाए।

4.3 पंचायत वित्त व्यवस्था

4.3.1 राजकोषीय विकेन्द्रीकरण

4.3.1.1 संविधान के भाग-IX का एक बड़ा भाग, जिसमें अनुच्छेद 243ग, 243घ, 243ङ, 243छ और 243ट शामिल हैं, पंचायती राज संस्थाओं के संरचनात्मक अधिकारों से संबंधित हैं; लेकिन इन संस्थाओं की स्वायत्तता ओर दक्षता दोनों ही दृष्टिकोणों से वास्तविक शक्ति उनकी वित्तीय स्थिति पर (अपने निजी संसाधन उत्पन्न करने की क्षमता सहित) निर्भर करती है। सामान्यतः हमारे देश में पंचायतें निम्नलिखित तरीकों से धन प्राप्त करती हैं :

- संविधान के अनुच्छेद 280 के अनुसार केन्द्रीय वित्त आयोग की सिफारिशों के आधार पर संघ सरकार से अनुदान।
- अनुच्छेद 243झ के अनुसार राज्य वित्त आयोग की सिफारिशों के आधार पर राज्य सरकार से सुपुर्दगी।
- राज्य सरकार से ऋण/अनुदान।
- केन्द्र-प्रायोजित स्कीमों और अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता के अंतर्गत कार्यक्रम विशिष्ट आबंटन।
- आंतरिक संसाधन सृजन (कर एवं कर-भिन्न)।

4.3.1.2 संपूर्ण देश में राज्यों ने पंचायतों की राजकोषीय अधिकारिता की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया है। चित्र 4.2 और 4.3 से स्पष्ट है कि पंचायतों के अपने निजी संसाधन बहुत ही कम हैं। केरल, कर्नाटक और तमिलनाडु ऐसे राज्य हैं जिन्हें पंचायती राज संस्थाओं की अधिकारिता के मामले में प्रगतिशील माना

जाता है, फिर भी पंचायतें सरकारी अनुदान पर अत्यंत निर्भर होती हैं। अतः इससे कोई भी निम्नलिखित व्यापक निष्कर्ष निकाल सकता है :

- पंचायत स्तर पर आंतरिक संसाधन सृजित करने की क्षमता कम है।
- ऐसा आंशिक तौर पर कर क्षेत्र बहुत कम होने तथा कुछ राजस्व एकत्र करने में पंचायतों की अनिच्छा के कारण है।
- पंचायतें संघ ओर राज्य सरकारों से मिलने वाले अनुदानों पर बहुत अधिक निर्भर हैं।
- संघ और राज्य सरकारों दोनों से मिलने वाला अधिकांश अनुदान स्कीम विशिष्ट है। पंचायतों के पास व्यय करने के संबंध में विवेकाधिकार और लचीलापन सीमित है।

चित्र 4.2

पंचायती राज संस्थाओं का अखिल भारतीय राजस्व - 1998-99

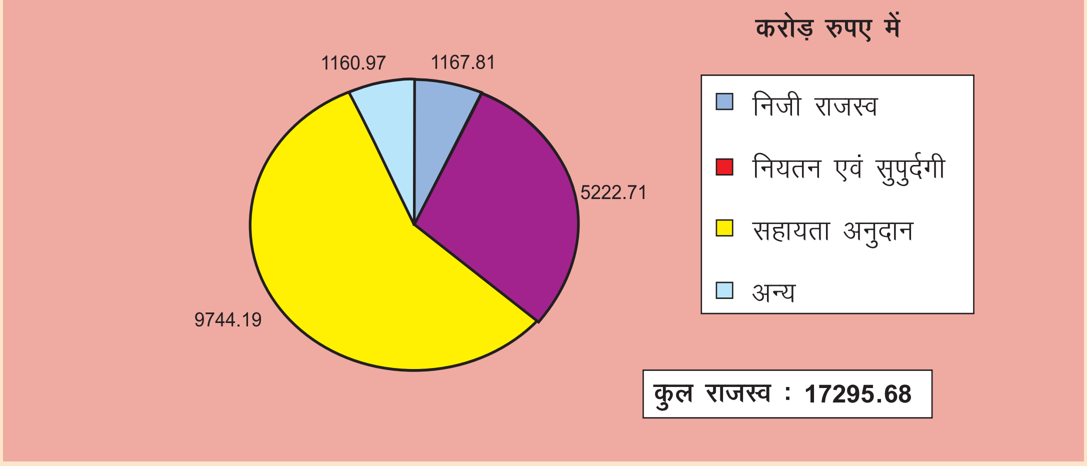

स्रोत : राज्यों द्वारा बारहवें वित्त आयोग को भेजे गए आंकड़ों पर आधारित

- अपनी कमजोर राजकोषीय स्थिति को देखते हुए राज्य सरकारें धनराशि पंचायतों को सौंपने की इच्छुक नहीं हैं।
- ग्यारहवीं अनुसूची के प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, जलापूर्ति सफाई और लघु सिंचाई जैसे अधिकांश महत्वपूर्ण मामलों में आज भी राज्य सरकार इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए प्रत्यक्षतः उत्तरदायी हैं और इसी प्रकार व्यय के लिए भी उत्तरदायी हैं। कुल मिलाकर एक ऐसी स्थिति बन गई है जहां पंचायतों की जिम्मेवारियां बहुत ज्यादा हैं लेकिन वहां संसाधनों की भारी कमी है।

4.3.1.3 राजकोषीय विकेन्द्रीकरण को प्रभावी बनाने के लिए स्थानांतरित कार्यकलापों से संबद्ध व्यय संबंधी नियत कार्यों के अनुरूप वित्त व्यवस्था होनी चाहिए। इसके लिए दोहरे दृष्टिकोण की आवश्यकता है - प्रथम कर और कर-भिन्न दोनों संसाधनों को प्रत्यक्षतः उपयोग में लाने के लिए राजकोषीय कार्यक्षेत्र की सीमा निर्धारित करना तथा दूसरे, संघ और राज्य सरकारों से निधियों की सुपुर्दगी।

4.3.1.4 भारतीय संदर्भ में, स्थानीय शासन के कराधान की संकल्पना और पद्धति में ब्रिटिश शासन के शुरूआती दिनों से ही कोई खास प्रगति नहीं हुई है। अधिकांश राजस्व प्रोद्भवन संपत्ति पर कर लगाने तथा संपत्ति से प्राप्त किराए और सेवा शुल्क जैसी कर-भिन्न प्राप्तियों से मिलने वाली मामूली सी सम्पूरक राशि के साथ व्यवसाय पर कराधान से होता है। यही उचित समय है जब स्थानीय शासनों के राजस्व आधार को और व्यापक बनाने के संबंध में राष्ट्रीय सहमति बनाई जाए। आयोग का विचार है कि इस क्षेत्र में एक व्यापक कार्य प्राथमिकता के आधार पर करने की आवश्यकता है। संसाधन जुटाने के चार प्रमुख पहलुओं पर एक साथ ध्यान देने हेतु कार्य करना होगा अर्थात (i) कराधान हेतु संभाव्यता (ii) वास्तविक कर-दरों का निर्धारण (iii) कर आधार को बढ़ाना तथा (iv) संग्रहण में सुधार लाना। यह तेरहवें वित्त आयोग का एक विचारार्थ विषय हो सकता है।

4.3.1.5 सरकार के उच्च स्तरों से निधियों की सुपुर्दगी से पंचायत के संसाधनों के प्रमुख घटक बनते हैं। निधियों की सुपुर्दगी और राज्य वित्त आयोगों की कार्यप्रणाली की जांच इस रिपोर्ट के अध्याय-3 में पहले ही कर दी गई है।

चित्र 4.3

पंचायती राज संस्थाओं का अखिल भारतीय राजस्व - 2002-03

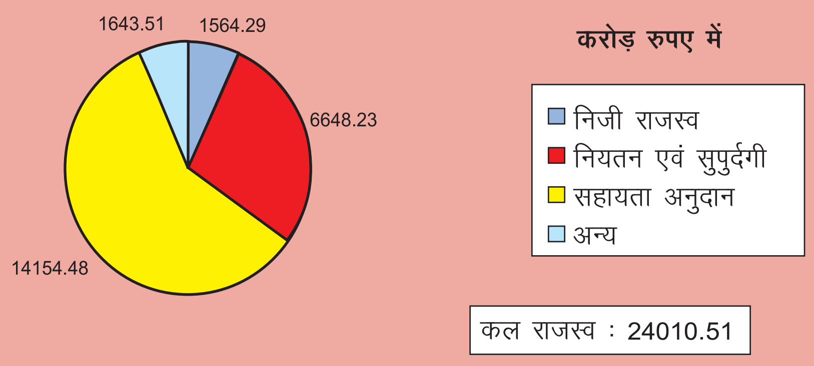

स्रोत : राज्यों द्वारा बारहवें वित्त आयोग को भेजे गए आंकड़ों पर आधारित

4.3.2 निजी संसाधनों का सृजन

4.3.2.1 यद्यपि, संपूर्ण शब्दों में, केन्द्र/राज्य सरकार निधियों की जो मात्रा पंचायत को अंतरित करती है उसी से पंचायतों की प्राप्ति का प्रमुख घटक बनता है, फिर भी पंचायती राज संस्था के निजी स्रोतों की उत्पत्ति ही इसकी वित्तीय स्थिति की आत्मा है। यह केवल स्रोतों का ही सवाल नहीं है, बल्कि यह स्थानीय कराधान प्रणाली के अस्तित्व का सवाल है। यह संस्था को नागरिकों के प्रति जवाबदेह भी बनाता है।

4.3.2.2 निजी संसाधन संग्रहण के रूप में ग्राम पंचायतें तुलनात्मक दृष्टि से बेहतर स्थिति में हैं क्योंकि उनका अपना कर क्षेत्र है, जबकि अन्य दो स्तर केवल पथ कर, शुल्क और आंतरिक संसाधन उत्पन्न करने हेतु कर-भिन्न राजस्व पर निर्भर हैं।

4.3.2.3 पंचायतों की कराधान शक्ति अनिवार्यतः अनुच्छेद 243ज से प्रवाहित होती है, जिसे निम्न प्रकार पढ़ा जाए :

"किसी राज्य का विधानमंडल, विधि द्वारा

- *पंचायत को ऐसी प्रक्रिया के अनुसार लेकिन किसी सीमा के अधीन ऐसे करों, प्रशुल्कों, पथ कर और शुल्कों का उद्ग्रहण करने, संग्रहण करने ओर उनका विनियोजन करने के लिए प्राधिकृत कर सकता है;*
- *ऐसे प्रयोजनों के लिए तथा ऐसी शर्तों व सीमाओं के अधीन रहते हुए राज्य सरकार द्वारा किए गए ऐसे करों, प्रशुल्कों, पथकरों व शुल्कों की उद्ग्रहण और संग्रहण राशि पंचायतों को सौंप सकता है;*
- *राज्य की समेकित निधि से पंचायतों को सहायता अनुदान देने का प्रावधान कर सकता है; और*
- *पंचायतों द्वारा अथवा पंचायतों की ओर से प्राप्त संपूर्ण धनराशि को जमा करने तथा ऐसी धनराशि को निकालने के लिए भी, जैसा भी विधि द्वारा विनिर्दिष्ट हो, ऐसी निधियों के गठन का प्रावधान कर सकता है।"*

4.3.2.4 राज्य पंचायती राज अधिनियमों में ग्राम पंचायतों को अधिकांश कराधान की शक्तियां प्रदान की गई हैं। मध्यस्थ और जिला पंचायतों (दोनों कर एवं कर-भिन्न) के राजस्व क्षेत्र को काफी छोटा रखा गया है तथा यह नौका सेवाओं, बाजारों, जल एवं सफाई व्यवस्था संबंधी सेवाओं, वाहनों का पंजीकरण, स्टाम्प ड्यूटी पर उपकर तथा कुछ अन्य करों जैसे आनुषंगी क्षेत्रों तक सीमित रहता है।

4.3.2.5 विभिन्न राज्यों के विधानों का अध्ययन करने से पता चलता है कि अनेकों कर, प्रशुल्क, पथ कर और शुल्क ग्राम पंचायतों के अधिकार क्षेत्र में आते हैं। अन्य बातों के साथ-साथ, इनमें चुंगी, संपत्ति/ग्रह कर, व्यवसाय-कर, भूमि कर/उप कर, वाहनों पर कर/पथ कर, मनोरंजन कर/शुल्क, लाइसेंस शुल्क, गैर-कृषि भूमि पर कर, मवेशियों के पंजीकरण पर शुल्क, सफाई/मल-जल निकासी/मल सफाई कर, जल दर/कर, प्रकाश व्यवस्था दर/कर, शिक्षा उप कर तथा मेलों और समारोहों पर कर शामिल हैं।

बॉक्स 4.1 : तमिलनाडु में ग्राम पंचायतों का आय-वार वर्गीकरण (2003-04 से 2005-06 तक के 3 वर्षों की औसत आय)

क्रम सं0	आय की सीमा (रुपए में)	ग्राम पंचायतों की संख्या
1	50000 तक	10
2	50000-1 लाख	178
3	1-5 लाख	7,422
4	5-10 लाख	3,181
5	10-25 लाख	1,489
6	25-50 लाख	252
7	50 लाख - 1 करोड़	60
8	1-3 करोड़	24
9	3 करोड़ से अधिक	2
	कुल	**12,618**

स्रोत : नीति संबंधी नोट 2007-08, तमिलनाडु सरकार, ग्रामीण विकास और पंचायती राज विभाग

4.3.3 राजस्व के अतिरिक्त स्रोतों का पता लगाना

4.3.3.1 पंचायती राज संस्थाओं को अपना कर आधार बढ़ाने के उद्देश्य से राजस्व के अतिरिक्त स्रोतों का पता लगाने की आवश्यकता है। भारतीय अर्थव्यवस्था ने पिछले कुछ वर्षों के दौरान प्रगति की है। परिवहन, पर्यटन और अवसंरचना जैसे क्षेत्रों में प्रशंसनीय व असाधारण विकास हुआ है तथा इनकी वृद्धि का एक अंश ग्राम क्षेत्र को भी दिया गया है। ग्रामीण निकायों को भूमि एवं भवन संबंधी परम्परागत क्षेत्रों के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों की ओर देखने तथा नए उभरते हुए क्षेत्रों में नए कर लगाकर/कर-भिन्न उपाय; उदाहरणस्वरूप, पर्यटक वाहनों, विशेष सुविधाओं, रेस्तराओं, थियेटर, साइबर फैके आदि पर शुल्क जैसे उपाय करके; अपने संसाधनों का संवर्धन करने की आवश्यकता है। कर-संग्रहण की क्लासिकल मदों में - व्यवसाय कर, मवेशी पंजीकरण शुल्क और वाहन पंजीकरण शुल्क लगाना - ये तीन ऐसे उल्लेखनीय क्षेत्र हैं जिनका पंचायतों द्वारा इष्टतम उपयोग नहीं किया गया है। पंचायतों को ऐसे संसाधनों का उपयोग करने में और अधिक काल्पनिक एवं सकारात्मक होने की आवश्यकता है। ऐसे करों और लेवी के लिए न्यूनतम दरें निर्धारित करने में राज्य सरकारों की भूमिका सीमित होनी चाहिए ताकि पंचायतें वास्तविक दरों पर इन करों को वसूल कर सकें।

4.3.3.2 अधिकांश राज्यों के अधिनियमों में पंचायतें सर्वाधिक परिसंपत्तियों, जैसे कि सिंचाई स्रोत, नौका घाट, बंजर भूमि, सामुदायिक भूमि, फलोद्यान एवं मेले, से सम्पन्न हैं। वाहन स्टैंड प्रभार तथा बाजार/दुकान/ठेला शुल्क जैसे कुछ अन्य क्षेत्र हैं जिनका पंचायती राज संस्थाओं द्वारा प्रभावी रूप से उपयोग करने की आवश्यकता है। इस प्रकार, ग्राम पंचायत में निहित सभी साझा संपत्ति स्रोतों को अभिज्ञात किया जाए और उसे राजस्व सृजन हेतु उत्पादक बनाया जाए।

4.3.3.3 कराधार/लेवी हेतु नए क्षेत्रों का पता लगाने तथा साझा परिसंपत्तियों के उत्पादक उपयोग के अलावा, पंचायतों को कुछ महत्वपूर्ण उपयोगी वस्तुओं की व्यवस्था करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाए। इससे न केवल बेहतर सेवा प्रदान करना सुनिश्चित होगा, बल्कि इससे पंचायतों को कुछ लाभ कमाने तथा अपने लिए अतिरिक्त राजस्व सृजित करने की भी प्रेरणा मिलेगी। ऐसा विशेष रूप से पंचायतों के उच्च पदों के लिए प्रासंगिक होगा। तदनुसार, प्रखंड एवं जिला स्तरों पर स्थानीय निकायों को प्रोत्साहित किया जाए कि वे परिवहन, जलापूर्ति और वाणिज्यिक आधार पर विद्युत वितरण जैसे उपयोगी सेवाओं की व्यवस्था करे। उन्हें ऐसी सभी सेवाओं के लिए वास्तविक प्रयोक्ता प्रभारों को संग्रहित करने की आवश्यकता है।

4.3.3.4 खनिजों से प्राप्त होने वाली रॉयल्टी और अन्य आय जैसे निष्क्रिय किराया, शुल्क, उप कर और अधिभार राज्य सरकार के प्रमुख स्रोत हैं। प्रमुख खनिजों की रॉयल्टी के कारण प्राप्त होने वाला राजस्व केन्द्र सरकार द्वारा तय किया जाता है तथा राज्य सरकार उसका संग्रहण करके उसे अपने पास रखती है। लघु खनिजों के मामले में, राज्य सरकारों के पास रॉयल्टी और निष्क्रिय किराए को निर्धारित करने एवं उसका संग्रहण करने का अधिकार है। वैचारिक तौर पर रॉयल्टी वह भुगतान है जो किसी राज्य को खनन पट्टाधारी द्वारा पट्टाकर्ता के रूप में किया जाता है। रॉयल्टी पट्टाधारी से संबंधित संपदा का उपयोग पट्टाधारी को वहां करने देने के लिए वसूली जाती है जहां धन संपदा समय से पहले ही समाप्त कर ली जाती है। राज्य सरकार को उस क्षेत्र में खनन हेतु प्राप्त होने वाली रॉयल्टी से होने वाली आय पर प्रथम अधिकार स्थानीय समुदाय, जिसका प्रतिनिधित्व स्थानीय पंचायत द्वारा किया जाता है, का होना चाहिए। इतना ही महत्वपूर्ण यह तथ्य है कि खनन कार्यकलापों के वित्तीय, पारिस्थितिकीय और स्वास्थ्य संबंधी प्रभाव उन क्षेत्रों में सबसे अधिक महसूस किया गया है जहां ऐसी खाने अवस्थित हैं तथा इस प्रकार स्थानीय निवासियों की प्रतिपूर्ति पर्याप्त रूप से होनी चाहिए। ग्रामीण स्थानीय निकायों को अंतरित किए जाने वाले अनुदान को अंतिम रूप देते समय राज्य वित्त आयोग को यही बात ध्यान में रखनी चाहिए।

4.3.3.5 स्थानीय निकायों को रॉयल्टी का एक बड़ा भाग आबंटित करने के अलावा राज्य सरकार भी उनको शक्ति सम्पन्न करने पर विचार कर सकती है ताकि राज्य सरकार इस प्रकार प्रोद्भूत स्थानीय उप कर वसूल कर सके। तमिलनाडु और कर्नाटक जैसे कुछेक राज्यों के अपने पंचायती राज अधिनियमों में ऐसे प्रावधान हैं। तमिलनाडु पंचायत अधिनियम, 1994 की धारा 167 के निबंधन में "प्रत्येक पंचायत विकास प्रखंड में, प्रत्येक फस्ली के लिए किसी भी भूमि के संबंध में सरकार को देय एक रुपए के भू-राजस्व पर एक रुपए की दर से स्थानीय उप कर वसूल किया जाएगा।"

स्पष्टीकरण : इस धारा और धारा 168 में, "भू-राजस्व से अभिप्रायः है भूमि पर देय सार्वजनिक राजस्व और इसमें भूमि की सिंचाई के लिए आपूरित अथवा उपयोग किए गए जल हेतु सरकार को देय जल कर, रॉयल्टी, पट्टा राशि अथवा सरकार से पट्टे पर अथवा लाइसेंस से सीधे धारित भूमि के संबंध में सरकार को देय अन्य राशि शामिल है, लेकिन इसमें धारा 168 के अंतर्गत देय कोई अन्य उप कर अथवा अधिभार शामिल नहीं होता है, बशर्ते कि प्रेषित भू-राजस्व को इस धारा के प्रयोजनार्थ देय भू-राजस्व नहीं समझा जाएगा।"

बॉक्स 4.2 : महत्वपूर्ण खनन कार्यकलापों के साथ राज्यों में खनिजों पर प्रोद्भूत रॉयल्टी

(करोड़ रुपए में)

राज्य	रॉयल्टी का कुल संग्रहण		
	2002-02	**2003-04**	**2004-05**
छत्तीसगढ़	552.36	637.17	694.61
झारखंड	797.65	900.16	916.2
कर्नाटक	83.89	143.62	210.94
मध्य प्रदेश	590.69	646.71	733.72
उड़ीसा	440.57	547.2	663.61
राजस्थान	399.68	457.96	589.79
महाराष्ट्र	400.69	475.96	568.24
गुजरात	172.63	217.90	238.95
केरल	1.63	10.45	12.61

राज्य	रॉयल्टी का कुल संग्रहण		
	2002-02	2003-04	2004-05
गोवा	14.81	17.87	17.44
तमिलनाडु	297.34	324.5	324.82
आन्ध्र प्रदेश	769.93	766.56	864.53
उत्तराखंड	22.55	30.65	35.6
उत्तर प्रदेश	262.42	254.18	291.94
हरियाणा	118.08	76.77	92.50
असम	9.36	12.64	13.36

स्रोत : राष्ट्रीय खनिज नीति- दिसम्बर, 2006 के संबंध में योजना आयोग द्वारा गठित उच्च-स्तरीय समिति की रिपोर्ट।

4.3.3.6 उप कर के अतिरिक्त, तमिलनाडु अधिनियम में स्थानीय उप कर अधिभार लगाने का भी प्रावधान है। आयोग का विचार है कि राज्य सरकारें, विशेषकर वे जिनके पास शानदार खनन कार्यकलाप हैं, खानों से एकत्र की गई रॉयल्टी पर स्थानीय निकायों द्वारा उपस्कर/अधिभार लगाने की संभावनाओं का पता लगा सकती हैं। अर्थव्यवस्था के उदारीकरण से राजमार्गों, पुलों और मालगोदामों के निर्माण तथा विद्युत स्टेशन स्थापित करने जैसे कार्य अवसंरचना विकास हेतु ग्रामीण इलाकों तक पहुंच रहे हैं। राज्य सरकारों को एक ऐसा तरीका सुझाना चाहिए जिससे पंचायतों को ऐसे उद्यमों से कुछ आय प्राप्त हो सके। खनन और अन्य अवसंरचनात्मक कार्यकलापों से मौजूदा सुविधाओं को भारी नुकसान पहुंचा है। सड़कों और अन्य प्रणालियों को अधिक रखरखाव की आवश्यकता होती है। आयोग का विचार है कि स्थानीय पंचायतों को ऐसे कार्यकलापों से अतिरिक्त/विशेष अधिभार वसूल करने का अधिकार होना चाहिए।

4.3.4 बेहतर निष्पादन के लिए प्रोत्साहन देना

4.3.4.1 स्थानीय निकायों के राजस्व संग्रहण में सुधार लाने के लिए एक प्रभावी और उचित साधन यह है कि उनके प्रयासों के लिए उन्हें प्रोत्साहन दिया जाए। जिन पंचायतों के सकारात्मक परिणाम रहे हैं उन्हें उपयुक्त पारितोषिक मिलना ही चाहिए। ऐसा केन्द्रीय वित्त आयोग और राज्य वित्त आयोग के अनुदानों को उनके अपने राजस्व सृजन संबंधी प्रयासों से जोड़कर किया जा सकता है। राज्य उन

पंचायतों को भी, जिन्होंने संग्रहण-निष्पादन में असाधारण प्रदर्शन किया है, विशिष्ट पूर्व घोषित दरों पर बोनस भुगतान मुहैया कराकर राजस्व एकत्र करने हेतु बढ़ावा दे सकता है। तथापि, बेहतर निष्पादन के लिए प्रोत्साहन देते समय, केन्द्र और राज्य सरकार के बीच मौजूद प्रणाली जैसा कोई राजकोषीय उत्तरदायित्व संबंधी कार्यतंत्र स्थापित करना उतना ही महत्वपूर्ण है। कई राज्य ऐसे हैं जिन्होंने कराधान के नए क्षेत्रों का पता लगाने के लिए अपनी पंचायतों को प्रोत्साहित किया है एवं उनकी सहायता की है और कुछ राज्य ऐसे हैं जिन्होंने कोई पहल नहीं की है। पहली वाली श्रेणी को कुछ न कुछ प्रोत्साहन देने का ठोस आधार है। ऐसे प्रोत्साहन से दूसरी पंचायतें भी यथासमय प्रेरित होंगी। पंचायती राज मंत्रालय ने पंचायत सशक्तिकरण एवं जबावदेही निधि (पीईएएफ) विकसित की है ताकि एक ओर राज्यों द्वारा पंचायतों को अधिकारिता तथा दूसरी ओर ग्राम/वार्ड सभाओं के प्रति पंचायतों की जबावदेही दोनों के लिए प्रोत्साहित किया जा सके।

4.3.5 पंचायतों के उच्च स्तरों द्वारा संसाधन सृजन

4.3.5.1 जैसाकि पहले ही देखा गया है कि अधिकांश राज्यों में ग्राम पंचायत ही है जिसे मुख्यतः कर और कर-भिन्न राजस्व उगाहने का अधिकार दिया गया है। कर राजस्व के क्षेत्र में केवल कुछ ही उपेक्षित कर मदें हैं जो मध्यस्थ पंचायतों और जिला परिषदों के पास रह गई हैं। उड़ीसा में कराधान के सभी अधिकार पूर्णरूप से केवल ग्राम पंचायतों के पास हैं। राजस्थान पंचायती राज अधिनियम मध्यस्थ पंचायत समिति को कुछ कराधान संबंधी अधिकार प्रदान करता है, लेकिन यह अधिकार केवल कुछ ही चुनिंदा मदों, जैसे भूमि लगान पर पंचायत समिति कर, विकास कर और शिक्षा उप कर, तक सीमित हैं। राजस्थान में जिला परिषद ग्रामीण इलाकों में भूमि की बिक्री पर अधिभार और बाजार शुल्क पर अधिभार ले सकती है। मध्य प्रदेश में मध्यस्थ पंचायतों द्वारा लिए गए कर व्यापार कर और मनोरंजन कर हैं, जबकि जिला परिषदों के पास कराधान का कोई अधिकार नहीं है। बिहार पंचायती राज अधिनियम नावों/वाहनों के पंजीकरण पर, मेलों आदि में सफाई व्यवस्था करने,

बॉक्स 4.3 : महाराष्ट्र में जिला परिषदों के कराधान संबंधी अधिकार

महाराष्ट्र जिला परिषद और पंचायत समिति अधिनियम, 1961 जिला परिषद को प्राधिकृत करता है कि वह संपत्ति कर, यात्रा कर, जल प्रभार, बाजार शुल्क, अनुमति शुल्क, भूमि और मकानों पर विशेष कर वसूल कर सकती है, जो निम्न प्रकार हैं :

(क) स्टाम्प ड्यूटी आधा प्रतिशत की दर पर जो अप्रैल, 1993 से बढ़कर एक प्रतिशत हो गई है;

(ख) भू-राजस्व पर 500 प्रतिशत तक उपकर;

(ग) जल प्रभारों पर उपकर जिसे बाद में समाप्त कर दिया गया था;

(घ) उनके अधिकार क्षेत्र के सकल संग्रहण की 7 प्रतिशत की दर पर वन राजस्व और जल प्रभार।

सार्वजनिक गलियों में प्रकाश की व्यवस्था और नौकाओं पर पथ कर पर शुल्क वसूल करने के लिए जिला परिषदों को अधिकार देता है तथा पंचायत समितियां भी कराधान के इन्हीं क्षेत्रों में समवर्ती अधिकार रखती हैं।

4.3.5.2 आयोग का विचार है कि पंचायती राज संस्थाओं को सौंपे गए कर क्षेत्र के भीतर कराधान का प्राथमिक अधिकार ग्राम पंचायतों के पास होना चाहिए। तथापि, जहां कर लगाने के लिए आकलन की इकाई अधिक है अथवा ऐसे कराधान का अंतः पंचायत विस्तार हो तो उच्च संरचनाओं – मध्यस्थ पंचायत और जिला परिषद को समवर्ती अधिकार दिए जाएं, बशर्ते कि यह निर्धारित सीमा में हो। लघु विद्युत परियोजनाओं, बड़े पैमाने की खनन कार्यकलापों को संचालित करना, बड़ी नदी पर नौका सेवाएं प्रदान करना कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहां कराधान उच्च स्तर द्वारा किया जाना चाहिए। तथापि, जब कभी कोई कर/शुल्क जिला परिषद अथवा मध्यस्थ पंचायत द्वारा लगाया जाता है तो ऐसा कर या शुल्क संबंधित जिला पंचायतों द्वारा इस प्रकार संग्रहित किया जाए मानो यह उनके द्वारा लगाया गया कर या शुल्क हो।

4.3.5.3 सिफारिशें :

(क) स्थानीय शासनों के राजस्व आधार को विस्तृत और सुदृढ़ करने के संबंध में एक विस्तृत कार्य शुरू करने की आवश्यकता है। इस कार्य में संसाधन जुटाने के चार प्रमुख पहलुओं अर्थात (i) कराधान की संभाव्यता (ii) यथार्थ कर दरों का निर्धारण (iii) कर आधार को बढ़ाना (iv) संग्रहण में सुधार लाना; को एक साथ देखना होगा। सरकार तेरहवें वित्त आयोग के विचारार्थ विषयों में इसे किसी एक विचारार्थ विषय के रूप में समाहित कर सकती है।

(ख) ग्राम पंचायतों में निहित संपत्ति की सभी आय सम्पदाओं को अभिज्ञात, सूचीबद्ध करना और इसे राजस्व उत्पत्ति के लिए उत्पादक बनाया जाए।

(ग) राज्य सरकारों की विधि द्वारा पंचायतों के कर दायरे को बढ़ाया जाए। साथ ही, इसी कर दायरे में कर वसूलना पंचायतों के लिए अनिवार्य बनाया जाए।

(घ) उच्च स्तर पर, स्थानीय निकायों को ठोस वित्तीय आधार और व्यवहार्यता के आधार पर परिवहन, जल आपूर्ति और ऊर्जा संवितरण जैसे कार्यों को संचालित/व्यवस्थित करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाए।

(ङ) विस्तृत कर क्षेत्र में, अन्य बातों के साथ-साथ, मवेशियों, रेस्तराओं, बड़ी दुकानों, होटलों, साइबर कैफे और पर्यटन बसों आदि का पंजीकरण शामिल है।

(च) इन करों और प्रशुल्कों के लिए कर समूह निर्धारित करने में राज्य सरकारों की भूमिका सीमित होनी चाहिए।

(छ) राज्य सरकार द्वारा संग्रहित खनिजों से प्राप्त रॉयल्टी का पर्याप्त हिस्सा पंचायती राज संस्थाओं को दिया जाना चाहिए। पंचायती राज संस्थाओं को अनुदानों की सिफारिश करते समय राज्य वित्त आयोगों द्वारा इस पहलू पर विचार किया जाना चाहिए।

(ज) राज्य सरकारों को खनन कार्यकलापों से रॉयल्टी पर उप कर वसूल करने के लिए पंचायती राज संस्थाओं को और अधिकार देने चाहिएं। इसके अतिरिक्त, उन्हें ऐसे कार्यकलापों (खानों/खनिजों/ संयंत्रों) पर अतिरिक्त/विशेष अधिभार आरोपित करने और संग्रहित करने के लिए भी अधिकार दिए जाने चाहिएं।

(झ) अपने संसाधनों को बढ़ाने के लिए राज्यों और पंचायती राज संस्थाओं द्वारा उठाए गए अभिनव कदमों के लिए उन्हें इसका प्रतिफल केन्द्रीय वित्त आयोग और राज्य वित्त आयोग के अनुदानों को ऐसे उपायों से जोड़कर दिया जाना चाहिए। राज्य बेहतर निष्पादन कर रहे पंचायती राज संस्थाओं को पुरस्कार दे सकते हैं।

(ञ) पंचायती राज संस्थाओं को सौंपे गए कर क्षेत्र में, कराधान के संबंध में प्राथमिक प्राधिकार ग्राम पंचायतों के पास होने चाहिएं। तथापि, जहां ऐसे कराधान के संबंध में पंचायतों के बीच प्रशासनाएं हों तो वहां उच्च-स्तरीय स्थानीय शासन संस्थाओं अर्थात मध्यस्थ पंचायत एवं जिला परिषद को सीमाओं के अधीन समवर्ती अधिकार दिए जा सकते हैं। जब कभी कोई कर/शुल्क उच्च स्तर द्वारा आरोपित हो तो ऐसे करों का संग्रहण संबंधित ग्राम पंचायतों द्वारा किया जाना चाहिए।

4.3.6 निधियों के सुपुर्दगी/आबंटन में पारदर्शिता

4.3.6.1 सरकार के उच्च स्तरों से स्थानीय निकायों को निधियों की सुपुर्दगी के संबंध में, आयोग का विचार है कि ऐसी सुपुर्दगी शर्तरहित होनी चाहिए ताकि पंचायती राज संस्थाएं स्थानीय प्राथमिकताओं की ओर ध्यान दे सकें। पांच वर्ष की अवधि के लिए अंतरित की जाने वाली निधियों की अनुमानित मात्रा

स्थानीय निकायों को अग्रिम में बतायी जानी चाहिए ताकि पंचायतें आबंटन अवधि के लिए सेवाएं प्रदान करने तथा गरीबी कम करने, शिक्षा और स्वास्थ्य देखभाल आदि के क्षेत्र में निश्चित न्यूनतम स्तर प्राप्त करने के लिए न्यूनतम मानक तय कर सकें। यह एक बहुत भारी-भरकम कार्य है, क्योंकि मानक और प्राप्ति स्तर एवं उनकी लागत का निर्धारण करना एक पेचीदा और चुनौतीपूर्ण कार्य है। लेकिन, पंचायती राज संस्थाओं द्वारा परिणाम आधारित निष्पादन सुनिश्चित करने के लिए ऐसा कार्य आवश्यक है। निधियों की सुपुर्दगी किसी निर्धारित फार्मूले के अनुसार होना चाहिए तथा स्थानीय शासनों को निधियों की सुपुर्दगी करने के लिए एक पृथक बजट संबंधी दस्तावेज प्रकाशित करके उनकी पुर्वानुमानिकता और आश्वासन को सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

4.3.6.2 पंचायती राज संस्थाओं को अंतरित निधि की मात्रा तथा इसको जारी करने की प्रक्रिया के अलावा इसके आबंटन में वस्तुनिष्ठता और पारदर्शिता सुनिश्चित करना भी महत्वपूर्ण है। क्षेत्रीय असमानता और पिछड़े क्षेत्रों का विकास संबंधी समस्याओं की ओर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। राज्य वित्त आयोग को पंचायती राज संस्थाओं को निधियों की सुपुर्दगी हेतु पिछड़ेपन की सूची तैयार करने का प्रयास करना चाहिए। राज्य वित्त आयोग की सिफारिशों को ऐसे पिछड़ेपन की सूची द्वारा मूल रूप से दिशानिर्देश देने की आवश्यकता है। इस संबंध में इस रिपोर्ट की पैरा संख्या 3.5.2.18 में सिफारिशें की गई हैं।

4.3.6.3 पंचायतों के लिए उपलब्ध आबंटन कार्य विशिष्ट होता है तथा इन्हें चार बड़ी श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, अर्थात (क) कृषि, भूमि संरक्षण, लघु सिंचाई, पशुपालन, सामाजिक वानिकी, छोटे पैमाने के उद्योग आदि जैसे जीविका संबंधी कार्यकलाप, (ख) पेयजल सुविधा, सड़क, संचार आदि जैसी अवसंरचनात्मक सुविधाओं का सृजन, (ग) शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी सामाजिक क्षेत्र की गतिविधियां, (घ) निर्धनता कम करने संबंधी कार्यक्रम; (ङ) सार्वजनिक वितरण, सार्वजनिक आस्तियों का रखरखाव, ग्रामीण विद्युतीकरण आदि जैसे विविध कार्यकलाप।

4.3.6.4 सबका विचार है कि पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय अधिकारिता की अनिवार्य शर्तें यह है कि आकस्मिकताओं और मध्यावधिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अनाबद्ध निधियां दी जाएं। इस दिशा में पिछड़ा क्षेत्र अनुदान निधि (बीआरजीएफ) शुरू करके एक अच्छी शुरूआत की गई है। यह स्कीम तीन राज्यों के 250 पिछड़े जिलों को शामिल करती है। यह क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करने के

लिए तैयार की गई है और इसकी निधि का उपयोग जिला नियोजन की प्रक्रिया के माध्यम से किया जाएगा। यह निधि मुहैया कराने का उद्देश्य (i) स्थानीय निकायों द्वारा अभिज्ञात किए गए महत्वपूर्ण अंतरों को पाटना, पंचायती राज संस्थाओं की क्षमता बढ़ाने और स्थानीय निकायों द्वारा व्यावसायिक सहायता को सूचीबद्ध करने के लिए वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराना है। पंचायतें कार्यक्रमों और उनकी प्राथमिकता का चयन, लाभार्थियों की पहचान और लेखापरीक्षा एवं मॉनीटरिंग में लचीला रूख रखती हैं। इन सभी कार्यकलापों में ग्राम सभा को पूरी तरह से संलिप्त होना होता है। वर्ष 2006-07 के अपने शुरूआती वर्ष में इस परियोजना के लिए केन्द्रीय बजट में 5000 करोड़ रुपए की राशि निर्धारित की गई थी, जिसे वर्ष 2007-08 में बढ़ाकर 5800 करोड़ रुपए कर दिया गया है।

4.3.6.5 आयोग का विचार है कि केन्द्र सरकार की कुछ बड़ी केंद्र-प्रायोजित स्कीमों अथवा राज्यों की विशेष प्रयोजन वाले कार्यक्रमों को छोड़कर, पंचायती राज संस्थाओं को निधियों का आबंटन निर्बाध निधि के रूप में होना चाहिए ताकि पंचायती राज संस्थाएं खर्च करने में कुछ हद तक लचीलापन प्राप्त कर सकें। आबंटन आदेश में केवल विषयों का संक्षिप्त विवरण और संभावित परिणाम होने चाहिएं। निधियां निर्मुक्त करते समय राज्यों को वित्त आयोग द्वारा निर्धारित उपयोग संबंधी शर्तों को छोड़कर अन्य शर्तें नहीं लगानी चाहिएं।

4.3.7 बजट कार्यविधि और निधियों की सुपुर्दगी

4.3.7.1 इस समय, पंचायती राज संस्थाओं को निधियों का हस्तांतरण कई बजट शीर्षों के अंतर्गत प्रायः छोटे-छोटे आबंटनों के रूप में किया जाता है। लाभार्थियों के ऐसे किसी विशेष वर्ग (उदाहरणार्थ अनुसूचित जातियों के लिए विशेष घटक योजना) के लिए मांग उठ सकती है जहां आबंटन राशि कई अलग बजट शीर्षों से प्राप्त होती हो। आबंटन की ऐसी जटिल प्रक्रिया लेखाकरण की सीमाओं को भ्रमित करती हैं। लेखापरीक्षक के लिए भी ऐसे विविध आबंटन की जांच करना कठिन कार्य हो जाता है। आयोग का विचार है कि पंचायती राज संस्थाओं को राज्य सरकार द्वारा निधियों के आबंटन हेतु बजट सूचकांकन और लेखाकरण प्रक्रिया को सरल तथा उपयोगकर्ता और लेखापरीक्षा के अनुकूल बनाने की आवश्यकता है। पंचायतों को अपने लेखे को कम लागत पर पारदर्शिता के साथ रखने की भी आवश्यकता है। अतः राज्य बजट में पंचायत एक पृथक क्षेत्र के रूप में होना चाहिए। आयोग इस मामले की जांच अपनी "वित्तीय प्रबंधन प्रणालियों का सुदृढ़ीकरण" संबंधी रिपोर्ट में भी करेगा।

4.3.7.2 राज्य बजट प्रत्येक शीर्ष के अंतर्गत राज्यवार आबंटन और जिलावार आबंटन में विभाजित किया जाना चाहिए। प्रत्येक जिले की आबंटित राशि जिलावार आबंटन में पृथक रूप से दर्शायी जानी चाहिए। विभिन्न शीर्षों के अंतर्गत जिला आबंटन राशि को एक साथ लाया जाए जिससे जिला बजट विकसित होगा। जिला बजट की राशि निम्नलिखित के अंतर्गत रखी जा सकती है :

(i) स्थापित सिद्धांतों पर आधारित वैध कारणों से राज्य स्तर पर विभागों का नियंत्रण

(ii) कार्यनिष्पादन हेतु जिला परिषद को अंतरित स्कीमें

(iii) पंचायतों के हाथ में दी गई निधियां

4.3.7.3 पंचायतों के प्रभावी कार्यकरण के लिए राज्य सरकार से पंचायतों को निधियां अंतरित करने की प्रक्रिया भी महत्वपूर्ण मुद्दा है। वर्ष 2005 में पंचायती राज मंत्रालय ने पंचायतों को इलैक्ट्रानिक रूप से निधियां अंतरित करने की व्यवहार्यता की जांच करने के लिए समिति का गठन किया। इस समिति ने सिफारिश की कि संपूर्ण देश की लगभग 2.4 लाख पंचायतों को बैंकों के माध्यम से निधियां शीघ्रता से अंतरित की जा सकती हैं। कर्नाटक में राज्य सरकार ने छः राष्ट्रीयकृत और बारह ग्रामीण बैंकों को शामिल करने की व्यवस्था की, जिसमें से राज्य के सभी स्तरों की सभी 5800 पंचायतों ने खाता खुलवाया। अब कर्नाटक में बारहवें वित्त आयोग की निधि तथा राज्यों की सांविधिक अनुदान राशि पंचायतों को पंचायती राज विभाग से बगैर किसी बिचौलिए के इन बैंकों के माध्यम से दी जाती है। इस व्यवस्था के फलस्वरूप राज्य मुख्यालय से पंचायत तक निधियों की सुपुर्दगी में लगने वाला अधिकतम समय दो माह से घटकर बारह दिन रह गया है। पंचायती राज मंत्रालय ने इस प्रक्रिया के संबंध में एक सॉफ्टवेयर तैयार किया है। इस प्रक्रिया को अपनाने के लिए राज्य सरकारों को प्रोत्साहित किया जाए ताकि उनकी निधियों की सुपुर्दगी कार्यविधि में तेजी लाई जा सके।

4.3.7.4 सम्प्रति, राज्य सरकारें पंचायती राज संस्थाओं को निधियां जारी करने के लिए किसी समय-सीमा से बंधी हुई नहीं हैं। प्रायः आबंटन राशि वित्तीय वर्ष की समाप्ति से कुछ पहले ही जारी की जाती है, जिससे स्थानीय निकायों के पास वास्तविक कार्यनिष्पादन के लिए बहुत कम समय बचता है। कई बार धनराशि अनाहरित/अव्ययित रह जाती है। पंचायतों को उस राशि को अगले वित्तीय वर्ष में पुनः वैध कराने के लिए बहुत अधिक कागजी कार्रवाई करनी पड़ती है। ऐसा विलंब इस तथ्य के कारण होता है कि विशिष्ट राष्ट्रीय स्कीमों के लिए संघ सरकार से प्राप्त आबंटन राशि राज्य सरकार के अर्थोपायों का

एक हिस्सा बन जाती है। आयोग का विचार है कि राज्य सरकारों को पूर्व-निर्धारित समय-सीमा के अनुसार पंचायती राज संस्थाओं को अनुदान जारी करने के लिए कदम उठाने चाहिएं ताकि निधियों का उपयोग मौजूदा वर्ष के दौरान ही करना संभव हो सके। निधियों की निर्मुक्ति दो किस्तों में की जा सकती है अर्थात प्रथम उचित अंतर वाली वित्तीय वर्ष की शुरूआत में और दूसरी उस वर्ष के सितम्बर माह के अंत में।

4.3.7.5 सिफारिशें :

(क) विशेष रूप से आबद्ध प्रमुख केंद्र-प्रायोजित स्कीमों और राज्यों के विशेष प्रयोजन वाले कार्यक्रमों को छोड़कर पंचायती राज संस्थाओं को अन्य सभी आबंटन निर्बाध निधि के रूप में होने चाहिएं। आबंटन आदेश में व्यापक विषयों का केवल संक्षिप्त सार तथा उनके संभावित परिणाम होने चाहिएं।

(ख) राज्य सरकारों को राज्य और जिला क्षेत्र के पृथक बजट की प्रणाली, बाद वाले बजट में जिलावार आबंटनों को दर्शाते हुए, को समाहित करने के लिए अपने वित्तीय कार्य की नियमावली को संशोधित करना चाहिए।

(ग) राज्य बजट में पृथक पंचायत क्षेत्र होना चाहिए।

(घ) राज्य सरकारों को निधियों का तेजी से सुपुर्दगी करने के लिए केन्द्रीय पंचायती राज मंत्रालय द्वारा तैयार "पंचायतों को निधियों का अंतरण" संबंधी सॉफ्टवेयर का प्रयोग करना चाहिए।

(ङ) राज्य सरकारें पंचायतों को निधियों की सुपुर्दगी इस प्रकार करें कि इन संस्थाओं को वर्ष के दौरान ही आबंटन का उपयोग करने के लिए पर्याप्त समय मिल सके। निधियों की निर्मुक्ति समान अंतर वाली किस्तों के रूप में की जाए। ऐसा दो किस्तों में किया जा सकता है; पहला वित्तीय वर्ष के शुरूआती वर्ष में और दूसरा उस वर्ष के सितम्बर माह के अंत में।

4.3.8 पंचायती राज संस्थाएं और ऋण तक उनकी पहुंच

4.3.8.1 विगत वर्षों में ग्रामीण क्षेत्र की मांगें मूलभूत मांगों से अंतरित होकर जीवन के लिए जरूरी आवश्यकताओं अर्थात खाद्य, आश्रय और सुरक्षा से स्थानांतरित होकर पेय जल, सिंचाई के लिए विद्युत, शिक्षा, उन्नत स्वास्थ्य संबंधी सेवाएं, भौतिक अवसंरचना और कृषि निविष्टियों एवं सेवाओं में परिवर्तित

हो गई हैं। इन सभी के लिए निधियों की आवश्यकता बहुत अधिक है। राजस्व वसूली (कर एवं कर-भिन्न दोनों) में वृद्धि करने के लिए प्रयास करने के अलावा पंचायतों को बैंकों/वित्तीय संस्थाओं से उधार लेने की आवश्यकता हो सकती है। उधार केवल सेवाएं प्रदान करने में सुधार हेतु लिया जाए। साथ ही, उन्हें अपने ऋण की अदायगी के लिए नागरिकों से उपभोक्ता प्रभार एकत्र करने की भी आवश्यकता है। वर्ष 1963 में केन्द्र-राज्य संबंधों से संबंधित सन्थानम समिति ने सुझाव दिया था कि पंचायती राज संस्थाओं को उधार लेने अथवा ऋण एकत्र करने (वाणिज्यिक बैंक तब ग्रामीण क्षेत्र को उधार देने के लिए अनिच्छुक थे) के लिए अधिकार दिए जाएं। समिति ने सुझाव दिया कि इस प्रयोजन के लिए स्थानीय शासन वित्त निगमों की स्थापना की जाए। कई राज्य सरकारों ने ऐसे निकायों की स्थापना की है। जब कभी, पंचायती राज संस्थाओं के पास परियोजनाएं रहीं वे लाभकारी प्रकृति की दिखाई दीं। उन्होंने निधियों के लिए ऐसी एजेंसियों से अनुरोध किया। कुछ पंचायतों ने इस सुविधा का लाभ उठाया और छोटी परियोजनाओं की स्थापना की, लेकिन प्रयोक्ता प्रभारों के संग्रहण में उनके प्रयास बहुत ही असंतोषजनक थे तथा उनमें से अधिकांश ने चूक की। मौजूदा उदार ऋण परिदृश्य में स्थानीय निकाय अपनी ऋण संबंधी व्यवहार्यता को सुदृढ़ करने के लिए बाजार से उधार ले सकते हैं। इस कार्यक्रम की वहनीयता और पंचायतों की वित्तीय स्थिति पर निर्भर करते हुए पंचायती राज संस्थाओं की ऐसी पहलों को उदारतापूर्वक प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है। एक बार जब परियोजनाएं सकारात्मक परिणाम देना शुरू कर देती है तो बैंक और अन्य ऋण संस्थान इस क्षेत्र में अपने कार्यकलाप शुरू करेंगे। आयोग का विचार है कि राज्य सरकारों को ऐसी पहलों को प्रोत्साहित करना चाहिए। राज्य सरकार की भूमिका राज्य वित्त आयोग के दिशानिर्देशों के अनुसार उधार लेने की सीमा तय करने तक सीमित होनी चाहिए।

4.3.8.2 सिफारिश :

(क) **पंचायतों को अपनी अवसंरचात्मक आवश्यकताओं के लिए बैंकों/वित्तीय संस्थाओं से उधार लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। राज्य सरकार की भूमिका केवल उधार लेने की सीमा तय करने तक सीमित होनी चाहिए।**

4.3.9 स्थानीय क्षेत्र विकास स्कीमें

4.3.9.1 राज्य सरकार के नियमित विभागों और पंचायतों के तीनों स्तर के अतिरिक्त कई जिलों के ग्रामीण इलाकों में क्षेत्र विकास प्राधिकरणों/ग्रामीण विकास बोर्डों द्वारा भी कार्य किया जा रहा है। ये

संगठन फसल सुधार, लघु सिंचाई सुविधाओं के सृजन, स्थानीय अवसंरचना के उन्नयन तथा अन्य क्षेत्र विशिष्ट आवश्यकताओं पर बल देते हुए अपने अधिकार क्षेत्र में योजनाबद्ध व्यय हेतु केन्द्र और राज्य दोनों सरकारों से प्राप्त अनुदान प्राप्त करते हैं। यह व्यवस्था अनियमित है। स्थानीय विकास संबंधी आवश्यकताओं की ओर ध्यान देने के लिए जमीनी स्तर की लोकप्रियता से चुनी गई संस्थाएं, पंचायतें हैं, इसलिए पृथक विकास प्राधिकरण और बोर्डों का औचित्य नाममात्र ही हो सकता है। नीतिगत और व्यापक अधिशासन संबंधी मुद्दों के अलावा और कई कठिनाईयां हैं जैसे संसाधनों को जमीनी स्तर पर पहुंचाने के संबंध में स्कीमें बनाना। निधियों के प्रवाह की विविधता के फलस्वरूप प्रशासन में भ्रांति पैदा होती है, आर्थिक अक्षमता बढ़ती है और अंततोगत्वा अधिशासन अप्रभावी हो जाता है।

4.3.9.2 अगला मुद्दा है सांसद और विधायक स्थानीय क्षेत्र विकास निधि का, जिसमें सरकार से काफी आबंटन प्राप्त होता है। ये स्कीमें यह सोचकर बनाई गई थीं कि जिला स्तर पर मौजूद प्रशासनिक प्रणाली ग्रामीण इलाकों की आवश्यकताओं का आकलन नहीं कर पाती और उनके लिए पर्याप्त रूप से व्यवस्था नहीं करती। सोचा गया था कि लोकप्रियता के आधार पर चुने गए प्रतिनिधियों (सांसद/विधायक) की मतदाताओं तक पहुंच होती है और इसीलिए वे अपने निर्वाचन क्षेत्र की जमीनी सच्चाई से अच्छी तरह अवगत होंगे। इसलिए उन्हें अपने क्षेत्र में विकासात्मक कार्यक्रम शुरू करने के लिए विवेकाधिकार निधि दी गई थी। लेकिन अब जब संवैधानिक तौर पर अधिदेशाधीन सरकार का तीसरा स्तर सुदृढ़ता के साथ आस्तित्व में है तो विधायकों और सांसदों को कोई विवेकाधिकार निधि देना विकेन्द्रीकरण के यथार्थ ढांचे के प्रतिकूल होगा।

4.3.9.3 यह प्रणाली एक अलग परिप्रेक्ष्य में भी अनैतिक है। यह निधि आसीन सांसद अथवा विधायक को अपने चुनावी भविष्य को संवारने में अपने प्रतिद्वन्दी उम्मीदवार की तुलना में अधिक लाभ प्रदान करती है ओर इससे विरोधी उम्मीदवार को समान अवसर नहीं मिलता। इसके अतिरिक्त, सांसद और विधायक इस विवेकाधिकार निधि को प्राप्त करके वास्तव में अपने आप कार्यकारी अधिकारी बन बैठते हैं। आयोग ने अपनी "अधिशासन में नीतिशास्त्र" संबंधी रिपोर्ट में यह अवलोकन किया था कि —

> *"विभिन्न पार्टियों के नेता और विधायक आवश्यकता महसूस करते हैं कि विवेकाधीन सार्वजनिक निधि उनके अधीन हो ताकि वे अपने निर्वाचन क्षेत्र की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सार्वजनिक निर्माण कार्यों को शीघ्रता से निष्पादित करा सकें। तथापि, ये स्कीमें अधिकारों के पृथक्करण की धारणा को भारी क्षति पहुंचाती हैं, चूंकि विधायक प्रत्यक्षतः कार्यकारी बन जाता है। दिया गया तर्क कि विधायक इन स्कीमों के अंतर्गत सार्वजनिक निधि का उपयोग सीधे नहीं करते*

हैं, क्योंकि वे जिला मजिस्ट्रेट के नियंत्रण में होते हैं, सही नहीं है। वास्तव में, कोई भी मंत्री सार्वजनिक धन को प्रत्यक्ष नहीं संभालता। राजकोष अधिकारियों एवं आहरण अधिकारियों के अलावा कोई भी अधिकारी व्यक्तिगत तौर पर नकद राशि नहीं रखता। विधानमंडल द्वारा बजट का अनुमोदन करने के पश्चात, दिन-प्रतिदिन के व्यय संबंधी निर्णय लेना एक प्रमुख कार्यकारी कार्य है।"

तदनुसार, आयोग ने सिफारिश की कि एमपीएलएडीएस और एमएलएएलएडीएस जैसी स्कीमें समाप्त कर दी जानी चाहिएं।

4.3.9.4 उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए आयोग का विचार है कि ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए सार्वजनिक निकायों को निधियां केवल पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से ही दी जानी चाहिएं।

4.3.9.5 सिफारिशें :

(क) ग्रामीण क्षेत्रों में सभी सार्वजनिक विकास स्कीमों के लिए निधियां केवल पंचायतों के माध्यम से ही दी जानी चाहिएं। समान कार्य करने वाले स्थानीय क्षेत्र विकास प्राधिकरणों, क्षेत्रीय विकास बोर्डों और अन्य संगठनों को तत्काल प्रभाव से बंद कर देना चाहिए तथा उनके कार्य और उनकी आस्तियां पंचायत के उपयुक्त स्तर को सौंप दी जानी चाहिएं।

(ख) आयोग ने "अधिशासन में नीतिशास्त्र" संबंधी अपनी रिपोर्ट में की गई अपनी अनुशंसा को दोहराते हुए कहा कि एमपीएलएडी और एमएलएएलए स्कीमों को समाप्त कर दिया जाना चाहिए।

4.4 ग्रामीण विकास

4.4.1 सिंहावलोकन

4.4.1.1 जैसाकि इस रिपोर्ट के पैराग्राफ 4.1 में कहा गया है कि विगत कुछ दशकों में तीव्र शहरीकरण के बावजूद अधिकांश भारतीय देश के लगभग 5,93,000 गांवों में रहते हैं। हालांकि, हाल ही के वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था का समग्र निष्पादन प्रभावी रहा है, लेकिन इस विकास का लाभ सभी क्षेत्रों में समान रूप से नहीं मिला है। स्वास्थ्य, जल, सफाई व्यवस्था, पोषण और साक्षरता स्तर जैसे विकास संबंधी पहलुओं की प्रगति हमारी अधिशासन प्रणालियों के सामने, विशेषकर ग्रामीण इलाकों में, प्रमुख चुनौती पेश करती है। यूएनडीपी मानव विकास रिपोर्ट 2006 के अनुसार, विश्व के देशों में विकास के संयुक्त पैमाने के आधार पर भारत का 126वां स्थान है। प्रत्येक परिवार का उपभोक्ता व्यय और रोजगार संबंधी

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के 59वें दौर से पता चलता है कि अखिल भारतीय स्तर पर एक हजार पर तीन ग्रामीण परिवार ऐसे हैं जिन्हें वर्ष के किसी माह के दौरान पर्याप्त भोजन भी नसीब नहीं होता है, जबकि एक हजार पर तेरह परिवार ऐसे हैं जिन्हें वर्ष में कुछ माहों के दौरान ही पर्याप्त भोजन प्राप्त होता है।

4.4.1.2 यह इस पृष्ठभूमि में है कि ग्रामीण इलाकों और ग्रामीणों का विकास हमारी योजना का प्राथमिक सरोकार है। दसवीं पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिए नौवीं योजना के दौरान आबंटित 42,874 करोड़ रुपए की तुलना में 77,474 करोड़ रुपए की राशि आबंटित की गई है। ग्रामीण विकास का बजट परिव्यय भी जो वर्ष 2005-06 में 28,314 करोड़ रुपए था, बढ़कर वर्ष 2006-07 में 31,444 करोड़ रुपए हो गया। इसे वित्तीय वर्ष 2007-08 में पुनः बढ़ाकर 36,588 करोड़ रुपए कर दिया गया है। केन्द्र, राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों में वार्षिक योजना 2006-07 के बजट अनुमान निम्नलिखित सारणी में दर्शाए गए हैं :

सारणी 4.5 : केन्द्र, राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों के लिए वर्ष 2006-07 की वार्षिक योजना का बजट अनुमान

(करोड़ रुपए में)

क्रम सं0	विकास शीर्ष	केन्द्र			राज्यों एवं संघ राज्य क्षेत्रों का परिव्यय	कुल
		बजट सहायता	आं.ब.बा.सं.	परिव्यय		
1	कृषि और संबद्ध कार्यकलाप	7273.19	112.38	7385.57	8777.21	16162.78
2	ग्रामीण विकास	15643.95	0	15643.95	15066.74	30710.69
3	सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण	586.55	0	586.55	32602.80	33189.35
4	ऊर्जा	8011.96	61581.55	69593.51	20905.35	90498.86
5	उद्योग और खनिज	5375.41	9157.93	14533.34	3679.62	18212.96
6	परिवहन	23756.57	24857.23	48613.80	23440.86	72054.66
7	संचार	593.05	19290.70	19883.75	481.96	20365.71

8	विज्ञान,प्रौद्योगिकी और पर्यावरण	8061.34	0	8061.34	333.39	8394.73
9	सामान्य आर्थिक सेवाएं	3171.74	0	3171.74	6854.39	10026.13
10	सामाजिक सेवाएं	58180.52	7757.16	65937.68	66050.83	131988.51
11	सामान्य सेवाएं	630.25	0	630.25	3528.94	4159.19
12	विशेष क्षेत्र कार्यक्रम	0	0	0	5521.89	5521.89
	कुल	**131284.53**	**122756.95**	**254041.5**	**187244.00**	**441285.46**

स्रोत : योजना आयोग की वार्षिक रिपोर्ट 2006-07

4.4.1.3 जैसाकि सारणी 4.5 से देखा जा सकता है, 441285.46 करोड़ रुपए के कुल योजना बजट में से 30710.69 करोड़ रुपए की राशि वर्ष 2006-07 में केवल ग्रामीण विकास के लिए निर्धारित की गई थी। इसके अतिरिक्त, कृषि और संबद्ध कार्यकलापों, सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण, सामाजिक सेवाओं

बॉक्स 4.4 : भारत निर्माण : कार्य

- प्रत्येक गांव में विद्युत मुहैया कराई जानी है : वर्ष 2009 तक शेष 1,25,000 गांवों को शामिल किया जाना हैं तथा 2.3 करोड़ परिवारों को जोड़ना है।
- 1000 और अधिक आबादी वाले प्रत्येक बस्ती (पहाड़ी और जनजातीय क्षेत्रों में 500) में सभी मौसमों के अनुकूल सड़क मुहैया कराना : शेष 66,802 बस्तियों को वर्ष 2009 तक शामिल किया जाना है।
- प्रत्येक बस्ती में पेयजल का सुरक्षित स्रोत रखना : 55,067 शामिल नहीं की गई बस्तियों को वर्ष 2009 तक शामिल किया जाना है। इसके अतिरिक्त, उन सभी बस्तियों की समस्याओं का निराकरण किया जाना है जो स्रोत की असफलता के कारण पूर्ण कवरेज से आंशिक कवरेज तक लुढ़क गई हैं तथा वे बस्तियां जहां जल की गुणवत्ता संबंधी समस्याएं हैं।
- प्रत्येक गांव में टेलीफोन की सुविधा मुहैया कराना : शेष 66,822 गांवों को नवम्बर, 2007 तक शामिल किया जाना है।
- वर्ष 2009 तक 10 मिलियन हैक्टेयर (100 लाख) अतिरिक्त सिंचाई क्षमता सृजित की जानी है।
- वर्ष 2009 तक ग्रामीण निर्धनों के लिए 60 लाख मकान बनाए जाएंगे।

हालांकि यह कार्यसूची नई नहीं है, फिर भी यहां प्रयास यह है कि कार्यक्रम को समयबद्ध, पारदर्शी और जबावदेह बनाने के लिए इन लक्ष्यों को अत्यावश्यकता का भाव प्रदान किया जाए। ग्रामीण अवसंरचना में इनके निवेशों से ग्रामीण भारत की वृद्धि की संभावना बढ़ जाएगी।

स्रोत : *http:// bharatnirman.gov.in./download.pdf*

और अन्य संबद्ध क्षेत्रों को पर्याप्त निधियां आबंटित की गई हैं। ये सभी क्षेत्र ग्रामीण विकास की समग्र योजना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मार्च 2005 में, भारत सरकार ने "भारत निर्माण योजना" शुरू की। यह एक अतिव्यापक धारणा है जिसका उद्देश्य 2005 से 2009 तक की अवधि के बीच केवल 4 वर्षों के दौरान ग्रामीण अवसंरचना के छह प्रमुख क्षेत्रों में भारी उछाल लाना है। ये हैं - निश्चित सिंचाई, पेय जल आपूर्ति, ग्रामीण सड़कें, ग्रामीण आवास, ग्रामीण विद्युतीकरण और ग्रामीण संपर्क।

4.4.1.4 पीयूआरए, "ग्रामीण इलाकों में शहरी सुविधाओं का प्रावधान" भारत सरकार का एक अन्य महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। ग्रामीण-शहरी की खाई को पाटने तथा संतुलित सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति द्वारा प्रवर्तित धारणा पर आधारित यह कार्यक्रम अगस्त, 2003 में शुरू किया गया था। इसका उद्देश्य एक लाख और इससे कम आबादी वाले शहरों के आस-पास वाले 10-20 गांवों के अभिज्ञात ग्रामीण समूहों में भौतिक और सामाजिक अवसंरचना के अंतर को दूर करना है ताकि उनका और आगे विकास किया जा सके। हस्तक्षेप और समर्थन वाले अभिज्ञात क्षेत्र निम्नलिखित हैं -

- सड़क, परिवहन और विद्युत संयोजकता;
- दूरसंचार, इंटरनेट और सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी विश्वसनीय सेवाओं के रूप में इलैक्ट्रानिक संयोजकता;
- अच्छे शैक्षणिक ओर प्रशिक्षण संस्थाओं के रूप में ज्ञान की संयोजकता;
- बाजार संयोजकता, जिससे किसानों को उनके उत्पाद का सर्वाधिक मूल्य प्राप्त हो सके;
- पेय जल आपूर्ति का प्रावधान तथा मौजूदा स्वास्थ्य सेवाओं का उन्नयन।

इस समय सात राज्यों में प्रायोगिक परियोजनाएं शुरू की गई हैं और प्रत्येक राज्य में 10-15 गांवों के एक समूह का चयन किया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में सभी जिलों को शामिल करने वाली एक नियमित स्कीम के रूप में पीयूआरए के कार्यान्वयन के संबंध में एक प्रस्ताव सरकार के पास विचाराधीन है।

4.4.1.5 योजना आयोग द्वारा गठित भारत के लिए 2020 की कल्पनादृष्टि संबंधी समिति ने अपनी रिपोर्ट "इंडिया विजन 2020" में विकेन्द्रीकरण और अधिशासन प्रणाली में लोगों की सहभागिता के महत्व को निम्नलिखित रूप में पहचाना :

"भारत का आर्थिक और प्रौद्योगिकीय संक्रमण तथा बहुपक्षीय राजनीतिक बदलाव साथ-साथ होता है जो काफी धीमा, कम स्पष्ट रूप से परिभाषित और कम सुस्पष्ट हो सकता है, लेकिन फिर भी

सरकार के अब से 20 वर्ष तक के कार्यकरण पर गहरा प्रभाव पड़ेगा। उस बदलाव के मुख्य परिणामों में निम्नलिखित बातों के शामिल होने की संभावना है :

1. *विकेन्द्रीकरण और लोगों की सहभागिता*

- स्थानीय निकायों को शक्ति की सुपुर्दगी तीव्र दर से जारी रहेगी। जमीनी स्तर का दबाव पड़ने से ऊपर से नीचे तक सरकार के पैर तेजी से उखड़ जाएंगे।
- स्थानीय समुदाय की राज्य और केन्द्र सरकार की कार्रवाई पर निर्भरता कम तथा अपनी निजी पहल और संगठनात्मक क्षमता पर अधिक होगी।
- वित्तीय सुपुर्दगी से स्थानीय निकायों को करों का उद्ग्रहण करने और स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग पर अधिक नियंत्रण रखने के लिए और अधिक अधिकार प्राप्त होंगे। इससे वे स्थानीय अवसंरचना को वित्तपोषित करने के लिए और अधिक उत्तरदायी होंगे।
- ग्राम सभाओं, प्रातिनिधिक लोकतंत्र के यथा विरोध स्वरूप के माध्यम से प्रत्यक्ष लोकतंत्र स्थानीय स्तर पर और अधिक प्रचलित हो जाएगा। स्थानीय स्तर पर लोग संसाधनों के संवितरण और स्थानीय परियोजनाओं के प्रबंधन हेतु प्राथमिकताएं निर्धारित करने में और अधिक शामिल होंगे।
- बेहतर शिक्षित और बेहतर जानकारी प्राप्त मतदाता अपने अधिकारों की अधिक मांग करेगा तथा निष्पादन न करने वाली सरकारों और उनके अलग-अलग सदस्यों के प्रति विवेचनात्मक होगा।"

4.4.2 केन्द्र-प्रायोजित योजनाओं का आकलन

4.4.2.1 अनुच्छेद 282 के अंतर्गत संघ सरकार द्वारा राज्यों को दिए गए विशेष प्रयोजन वाले सर्वाधिक अनुदानों के लिए केंद्र-प्रायोजित स्कीमें उत्तरदायी हैं। वर्ष 2006-07 में 200 से अधिक केंद्र-प्रायोजित स्कीमें थीं, जिनमें 72,000 करोड़ रुपए[33] से अधिक का वार्षिक आबंटन शामिल था और इनमें से कुछ सर्वाधिक लब्धप्रतिष्ठ स्कीमें ग्रामीण विकास क्षेत्र की हैं। उस वर्ष के दौरान उनमें से सात स्कीमों के लिए 46,848 करोड़ रुपए (पैरा 3.9.1) रखा गया। वर्ष 2007-08 में इन स्कीमों के लिए 52,206 करोड़ रुपए का आबंटन चौकाने वाला रहा। संघ सरकार के व्यापक दिशानिर्देशों के अंतर्गत इन अधिकांश कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की जिम्मेदारी राज्य सरकारों की है तथा राज्यों को आवंटन अधिकांशतः

33 पंचायतों की स्थिति की मध्यावधि समीक्षा और मूल्यांकन, खंड-1, पंचायती राज मंत्रालय

अनुदानों के रूप में दिया जा रहा है। कुछ मामलों में संबंधित केन्द्रीय मंत्रालय कार्यक्रम संबंधी समितियों के माध्यम से कार्यक्रम को स्वयं कार्यान्वित करने का निर्णय ले सकता है। मध्याहन भोजन कार्यक्रम से लेकर सर्व शिक्षा अभियान तक, केंद्र-प्रायोजित स्कीमों की सूची में गरीबी विरोधी एवं सामाजिक क्षेत्रों से संबंधित विषयों की व्यापक सीमा शामिल है।

4.4.2.2 विगत में ऐसी स्कीमों को भारी मात्रा में धनराशि दिए जाने के बावजूद भारी चिन्ता का विषय है कि परिणाम निवेशों के अनुरूप नहीं रहे हैं। केंद्र-प्रायोजित स्कीमों के निष्पादन का पूर्णतः आकलन करने से पता चलता है कि इनमें निम्नलिखित कमियां हैं :

- साइलोज में पड़ी अधिकांश स्कीमें बगैर किसी क्षैतिज एकरूपता अथवा उर्ध्वाकर एकीकरण के लाजबाव स्कीमों के रूप में बनाई और कार्यान्वित की गई, जिनके फलस्वरूप जिला योजनाओं में गुणात्मक वृद्धि हुई जो एक दूसरे के साथ असंबद्ध थी एवं उनमें आपसी तौर पर विरोधाभास था और वे बगैर किसी एकीकृत दृष्टिकोण अथवा परिप्रेक्ष्य के तैयार की गई थीं।
- ये स्कीमें प्रायः कठोर रूप में डिजाइन की जाती हैं और उनमें स्थानीय स्तर पर विकास के लिए जरूरी विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार अनुकूलन के लिए अपेक्षित नम्यता नहीं होती है।
- सुपुर्दगी कार्यतंत्र तैयार करने के दृष्टिकोण में कोई निरंतरता नहीं है। प्रायः प्रत्येक स्कीम के लिए स्वतंत्र संरचनाओं का सृजन किया जाता है, जिसके फलस्वरूप स्थानीय स्तर पर ऐसी संरचनाओं में वृद्धि हो जाती है और उनमें कोई पारंपरिक क्रिया अथवा समन्वय नहीं होता।
- इन स्कीमों का रूपांकन, कार्यान्वयन और मॉनीटरिंग व्यावसायिक समर्थन की दृष्टि से राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय स्तरों पर काफी कमजोर होता है। प्रायः संबंधित विभाग कार्यान्वयन प्रक्रिया को जरूरी सुयोग्यता अथवा क्षमता के बगैर ही सामान्य दृष्टिकोण के साथ नियंत्रित करते हैं।
- प्रायः स्थानीय स्थिति को समझने अथवा उसका प्रभावी ढंग से प्रत्युत्तर दिए बगैर किसी कार्यतंत्र के सूक्ष्म प्रबंधन पर अत्यधिक बल दिया जाता है।
- उत्पादन की गुणवत्ता और दृश्य परिणामों के व्यक्त उद्देश्यों के बावजूद कई कार्यक्रम खर्चोन्मुखी होते हैं।

4.4.3 केंद्र-प्रायोजित स्कीमों में पंचायती राज संस्थाओं की प्रमुखता

4.4.3.1 अधिकांश केंद्र-प्रायोजित स्कीमें अनुच्छेद 243छ और संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में पंचायतों के लिए अभिनिर्धारित मामलों को देखती हैं। इसके कुछ उदाहरण हैं — राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम, संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, सर्व शिक्षा अभियान, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, समेकित बाल विकास सेवाएं, मध्याहन भोजन कार्यक्रम, पेय जल मिशन, संपूर्ण सफाई अभियान, इंदिरा आवास योजना, स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना, वयस्क साक्षरता और दूरस्थ ग्राम विद्युतीकरण कार्यक्रम। इस लम्बी सूची में से नौ प्रमुख कार्यक्रमों ने मौजूदा वर्ष 2007-08 के दौरान लगभग 65,875 करोड़ रुपए लिए। चूंकि संसाधनों की एक बड़ी राशि राज्यों को इन स्कीमों के माध्यम से मिलती है, इसलिए इन कार्यक्रमों का कुशल कार्यान्वयन राज्यों के आर्थिक विकास के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। दीर्घकाल में ऐसे कार्यक्रमों के अंतर्गत लाई गई स्कीमों के लिए भी पंचायत निकाय की समग्र विकास योजना में स्थान पाने की आवश्यकता है। तदनुसार, यह अनिवार्य है कि इन कार्यक्रमों के उद्देश्यों को पूरा करना ही पंचायतों का केन्द्रीयता माना जाए। हालांकि, कुछ स्कीमों के कार्यान्वयन में पंचायती राज संस्थाओं की प्रमुख भूमिका होती है, कुछ उन्हें बाईपास कर देती हैं और कुछ पृथक संरचनाएं खड़ी कर देती हैं। हालांकि वे स्कीमें, जो पंचायतों की भागीदारी को अनुमति देती हैं, प्रायः निर्णय लेने में उन्हें पर्याप्त छूट नहीं देती। उन स्थानीय विशिष्ट बातों का ध्यान रखने के लिए ऐसी नम्यता अनिवार्य है जो उपर्युक्त से डिजाइन की गई कठोर स्कीमों को समायोजित नहीं कर सकतीं।

4.4.3.2 केंद्र-प्रायोजित स्कीमों को डिजाइन करते समय निम्नलिखित चार महत्वपूर्ण तत्वों को अनिवार्यतः समाहित करना चाहिए :-

- स्कीमों की परिकल्पना करते समय यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि पंचायतों को यह आश्वासन दिलाया जाए कि वे स्थानीय कल्याण के लिए तैयार की गई हैं।
- पंचायती राज संस्थाओं विशेषकर ग्राम पंचायतों को कार्यान्वयन की जिम्मेवारी सौंपने के संबंध में स्पष्ट उपबंध होने चाहिएं।
- स्कीमें बेहद कठोर दिशानिर्देशों से युक्त नहीं होनी चाहिएं तथा कार्यान्वयन स्तर पर निर्णय लेने में उनमें पर्याप्त लोच होनी चाहिए।
- पंचायतों को पर्याप्त अवसर दिए जाने चाहिएं ताकि वे अपने क्षेत्रों को समग्र विकास योजनाओं के ढांचे के भीतर ऐसी स्कीमों को संघटित कर सकें।

4.4.3.3 योजना आयोग के कार्य दल ने देखा कि कई बड़ी केंद्र-प्रायोजित योजनाएं विभागीय तौर पर अथवा उपयोगकर्ता एसोसिएशनों, एजेंसियों, स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी) और गैर-सरकारी संगठनों जैसे सहायक संगठनों के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं से बगैर किसी संपर्क के कार्यान्वित की जा रही हैं। तत्पश्चात निर्णय लिया गया था कि केंद्र-प्रायोजित योजनाओं को संचालित करने वाले सभी मंत्रालयों को चाहिए कि वे संविधान के अनुच्छेद 243छ में की गई परिकल्पना के अनुसार पंचायतों की भूमिका की पृष्ठभूमि में इन स्कीमों की समीक्षा करें। पंचायती राज मंत्रालय को नोडल मंत्रालय का दर्जा दिया जाना था तथा उन नए कार्यक्रमों से संबंधित सभी मामलों में परामर्श लिया जाना था जिनकी जिम्मेदारी पंचायतों पर मानी जाती है। इस संबंध में निम्नलिखित मुद्दे महत्वपूर्ण हैं :-

- भारत सरकार के प्रत्येक मंत्रालय को अपनी केंद्र-प्रायोजित स्कीमों के संबंध में कार्यकलाप निरुपण शुरू करना चाहिए तथा उन स्तरों का पता लगाना चाहिए जहां कार्यकलापों को मंत्रालय स्तर, राज्य सरकार के स्तर अथवा पंचायत स्तर पर अवस्थित करने की आवश्यकता है।
- उपर्युक्त उपलब्धियों के आधार पर स्कीम के दिशानिर्देशों में उपयुक्त रूप से आशोधन करने की आवश्यकता है।
- इस समय कई बड़ी केंद्र-प्रायोजित योजनाएं हैं जिनका आकार और आबंटन की सीमा अलग-अलग है। अब इस बात को स्वीकार करने की आवश्यकता है कि मंत्रालयों को एक निश्चित आकार से कम आकार की कोई केंद्र-प्रायोजित योजना मंत्रालय द्वारा न बनाई जाए। छोटी स्कीमें सीधे राज्य योजनाओं में शामिल की जा सकती हैं।
- केंद्र-प्रायोजित योजनाओं की शर्तों द्वारा बनाई गई समानांतर संस्थाओं को समाप्त कर दिया जाए तथा उनका विलय पंचायती राज संस्थाओं की स्थायी समितियों के साथ कर दिया जाए। उनमें से कुछेक को पंचायती राज संस्थाओं के साथ घनिष्ठ संबंध बनाए रखने की आवश्यकता हो सकती है।

4.4.3.4 आयोग का विचार है कि पंचायती राज संस्थाओं को निधियां जारी करने की मौजूदा प्रणाली यथासमय उस प्रणाली के साथ प्रतिस्थापित की जाए जहां अधिकांश आबंटन निर्बाध अनुदान के रूप में किया जाता है। क्षेत्र कार्यक्रम के समग्र उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए राज्य और स्थानीय शासनों की परियोजना घटकों को डिजाइन करने एवं उनके कार्यान्वयन संबंधी कार्यतंत्र में लोच रखनी चाहिए।

4.4.4 कुछ बड़ी केंद्र-प्रायोजित योजनाओं का विश्लेषण

केंद्र-प्रायोजित स्कीमों के संबंध में व्यक्त सरोकारों के महत्व को समझने के लिए कुछ बड़ी स्कीमों की जांच करना उपयोगी होगा।

बॉक्स 4.5 : राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन — एक कल्पनादृष्टि

- राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (2005-12) में उन 18 राज्यों में जहां लोगों का स्वास्थ्य खराब है और/अथवा स्वास्थ्य सेवा संबंधी अवसंरचना कमजोर है, वहां विशेष ध्यान देते हुए देश की संपूर्ण ग्रामीण आबादी को प्रभावी स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने का प्रयास किया गया है।
- ये 18 राज्य हैं — अरूणाचल प्रदेश, असम, बिहार, छत्तीसगढ़, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, जम्मू और कश्मीर, मणिपुर, मिजोरम, मेघालय, मध्य प्रदेश, नागालैंड, उड़ीसा, राजस्थान, सिक्किम, त्रिपुरा, उत्तराखंड और उत्तर प्रदेश।
- स्वास्थ्य संबंधी सरकारी खर्च की राशि जो जीडीपी की 0.9% है को बढ़ाकर जीडीपी का 2-3% करने के लिए इस मिशन में सरकार की बचनबद्धता को व्यक्त करने का प्रयास किया गया है।
- इसका उद्देश्य स्वास्थ्य प्रणाली में संरचनात्मक सुधार कार्य शुरू करना है ताकि यह बढ़े हुए आबंटन को प्रभावी रूप से संभाल सकें तथा ऐसी नीतियों को बढ़ावा दे सकें जिनसे देश में सरकारी स्वास्थ्य प्रबंधन तथा स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने वाली व्यवस्था को सुदृढ़ किया जा सके।
- प्रमुख घटक हैं — प्रत्येक गांव में महिला स्वास्थ्य कर्मी का प्रावधान करना; पंचायत की स्वास्थ्य एवं सफाई समिति की देखरेख में एक स्थानीय दल के माध्यम से ग्राम स्वास्थ्य योजना बनाना; प्रभावी उपचारात्मक स्वास्थ्य देखभाल हेतु ग्रामीण अस्पतालों को सुदृढ़ करना तथा भारतीय सरकारी स्वास्थ्य मानकों (आईपीएचएस) के माध्यम से उन्हें समुदाय के प्रति सुस्पष्ट और जबावदेह बनाना; निधियों के इष्टतम उपयोग हेतु वर्टिकल स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण कार्यक्रमों और निधियों का एकीकरण तथा प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल संबंधी सुपुर्दगी को सुदृढ़ करना।
- इसमें स्थानीय स्वास्थ्य परम्पराओं को पुनर्जीवित करने तथा मुख्य धारा आयुष (एवाईयूएलएच) को सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली से जोड़ने का प्रयास किया गया है।
- इसका उद्देश्य जिला स्वास्थ्य योजना के माध्यम से सफाई और स्वास्थ्य विज्ञान, पोषण और सुरक्षित पेयजल जैसे स्वास्थ्य निर्धारकों के साथ स्वास्थ्य सरोकारों का प्रभावी सभाकलन करना है।
- इसमें जिला स्वास्थ्य प्रबंधन हेतु कार्यक्रमों के विकेन्द्रीकरण का अनुरोध किया गया है।
- इसमें अंतर्राज्यीय तथा अन्तः-जिला असमानताओं के साथ-साथ सार्वजनिक स्वास्थ्य अवसंरचना की पूरी न हो सकी आवश्यकताओं का निराकरण करना है, विशेषकर उच्च ध्यानकेंद्रण वाले 18 राज्यों में।
- इससे समयबद्ध लक्ष्य प्राप्त होंगे तथा उनकी प्रगति से संबंधित रिपोर्ट सार्वजनिक की जाएगी।
- इसमें ग्रामीण लोगों विशेषकर ग्रामीण महिलाओं और बच्चों के लिए समान, वहनीय, जबावदेह और प्रभावी प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल की सुलभता में सुधार लाने का प्रयास किया जाएगा।

स्रोत : http:// mohfw.nic.in/NHRM

4.4.4.1 राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम)

4.4.4.1.1 यह मिशन एक व्यापक कार्यक्रम है, जिसमें ग्रामीण स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में (क) चिकित्सा कार्मिकों के उन्नत निष्पादन, (ख) अवसंरचना के उन्नयन और (ग) जेनेरिक दवाइयों की बाधारहित उपलब्धता के माध्यम से गुणात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास किया गया है। प्रारंभ में इसमें उन 18 राज्यों पर ध्यान केन्द्रित किया गया है जहां लोगों का स्वास्थ्य खराब है और/अथवा स्वास्थ्य सेवा संबंधी अवसंरचना कमजोर है। इसका उद्देश्य इसी अवधि के दौरान स्वास्थ्य संबंधी सरकारी खर्च की राशि, जो सकल घरेलू उत्पाद का 0.9 प्रतिशत है, को बढ़ाकर सकल घरेलू उत्पाद का 3.0 प्रतिशत करना है। इसके प्रमुख लक्ष्य हैं — शिशु मृत्यु दर (आईएमआर)। मातृत्व मृत्यु दर (एमएमआर) में कमी लाना, सर्वसाधारण की सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच; महिला एवं बाल स्वास्थ्य देखभाल, सफाई एवं स्वास्थ्य विज्ञान, टीकाकरण और पोषण तथा संक्रामक और असंक्रामक रोगों का नियंत्रण। व्यापक प्राथमिक स्वास्थ्य संबंधी देखभाल, जनसंख्या स्थिरीकरण और आयुष (आयुर्वेद, योग एवं प्राकृतिक स्वास्थ्य चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी) को लोकप्रिय बनाना। हालांकि, इस कार्यक्रम की एक महत्वपूर्ण नीति पंचायती राज संस्थाओं को प्रशिक्षित करना, और उनकी क्षमता बढ़ाना है ताकि वे सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं को स्वीकार कर सकें, नियंत्रित कर सकें और सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था कर सकें। इस कार्यक्रम के वास्तविक कार्यान्वयन से कुछ नुकसान भी हो सकते हैं, जैसे कि (i) जिला एवं ग्राम स्वास्थ्य समितियों जैसी समानांतर संरचनाओं का सृजन और (ii) निधियों की गुणात्मक सुपुर्दगी। इस स्कीम में सुधार लाने की आवश्यकता है ताकि जिले में कार्य कर रहीं पंचायतों के तीनों स्तरों को पूरी तरह से एकीकृत किया जा सके। इस कार्यक्रम के अंतर्गत प्रत्येक उपकेन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र (सीएचसी) को बतौर रखरखाव संबंधी अनुदान 10,000 रुपए ; 25,000 रुपए और 50,000 रुपए प्रतिवर्ष मिलेंगे। इस कार्यक्रम के अंतर्गत कुल आबंटन के सत्तर प्रतिशत की राशि प्रखंड स्तर से कम स्तर की संरचनाओं अर्थात प्राथमिक एवं उपकेन्द्र के लिए उपलब्ध कराई जाएगी। ऐसे बड़े और फैले हुए कार्यक्रम के प्रभावी कार्यान्वयन की मांग है कि इसमें लोगों की प्रभावी भागीदारी हो।

4.4.4.1.2 सामुदायिक एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों (सीएचसी, पीएचसी) और उपकेन्द्रों की मॉनिटरिंग और समीक्षा करना पंचायतों और स्थायी समितियों का नेमी कार्य बनाने की आवश्यकता है। ऐसी मॉनिटरिंग और समीक्षा में वे सभी पैरामीटर शामिल होने चाहिएं जो एनआरएचएम की कल्पनादृष्टि, लक्ष्य और नीति संबंधी कागजातों में प्रतिपादित किए गए हैं। केन्द्र कर प्रबंधन समिति संस्थापित करने की

बॉक्स 4.6 : एनआरएचएम में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका

इस मिशन में पंचायती राज संस्थाओं के लिए निम्नलिखित भूमिका की संकल्पना की गई है :

- राज्य अपने समझौता ज्ञापन में पंचायती राज संस्थाओं के स्वास्थ्य के लिए निधियों, अधिकारियों और कार्यक्रमों के सुपुर्दगी के लिए प्रतिबद्धता इंगित करेंगे।
- जिला स्वास्थ्य मिशन (डीएचएम) का नेतृत्व जिला परिषद द्वारा किया जाए। जिला स्वास्थ्य मिशन जिला, उपकेन्द्रों, पीएचसी और सीएचसी में सभी सार्वजनिक स्वास्थ्य संस्थाओं को नियंत्रित मार्गनिर्देशित और उनका प्रबंधन करेगा।
- प्रत्याशित सामाजिक स्वास्थ्य कर्मियों (एएसएचए) का चयन ग्राम पंचायत द्वारा किया जाएगा और वे ग्राम पंचायतों के प्रति जबावदेह होंगे।
- पंचायत की ग्राम स्वास्थ्य समिति, ग्राम स्वास्थ्य योजना तैयार करेगी तथा अंतःक्षेत्रीय एकीकरण को बढ़ावा देगी।
- प्रत्येक उपकेन्द्र के पास 10,000 रुपए प्रतिवर्ष की दर से स्थानीय कार्रवाई हेतु अनाबद्ध निधि रखनी होगी। यह निधि सहायक नर्स मिडवाइफ (एएनएम) और सरपंच के संयुक्त बैंक खाते में जमा करने होंगे तथा यह खाता ग्राम स्वास्थ्य समिति के परामर्श से एएनएम द्वारा संचालित किया जाएगा।
- अस्पताल के अच्छे प्रबंधन हेतु रोगी कल्याण समिति में पंचायती राज संस्था की भागीदारी।
- पंचायती राज संस्थाओं के सदस्यों को प्रशिक्षण देने का प्रावधान।

स्रोत : http:// mohfw.nic.in/NHRM

मौजूदा पद्धति जारी रह सकती है, लेकिन विभागीय कमान के अंतर्गत तीन प्रमुख घटकों (सार्वजनिक स्वास्थ्य, महिला स्वास्थ्य और बाल स्वास्थ्य) में से प्रत्येक घटक के लिए पृथक ग्राम समितियों की पद्धति को समाप्त करने की आवश्यकता है। ग्रामीण स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली के उपर्युक्त तीनों पहलुओं की देखभाल करने के लिए ग्राम सभा द्वारा गठित एकल ग्राम समिति होनी चाहिए। मध्यस्थ और जिला स्तर पर भी प्रखंड समिति और जिला परिषद को स्वयं ही कार्यान्वयन एवं मॉनिटरिंग समितियों के रूप में कार्य करना चाहिए। जिला स्तर पर एक सलाहकार समिति होनी चाहिए, जिसमें जिला परिषद को समय-समय पर मार्गनिर्देश देने के लिए क्षेत्र विशेषज्ञ होने चाहिएं।

4.4.4.2 त्वरित ग्रामीण जलापूर्ति कार्यक्रम (एआरडब्ल्यूएसपी)[34]

4.4.4.2.1 यह कार्यक्रम 1972-73 से अस्तित्व में है। इस कार्यक्रम का मूल उद्देश्य देश के संपूर्ण ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को सुरक्षित पेय जल निरंतर और समान रूप से मुहैया कराना है। इसके अभिप्रेत परिणाम इस प्रकार हैं — (i) बेहतर जीवन स्तर सुनिश्चित करना, (ii) सामान्य स्वास्थ्य स्तर में सुधार लाना, और (iii) महिलाओं से कठोर मजदूरी कराने में कमी लाना। इस समय संघ और राज्य सरकारों के बीच निधिकरण पैटर्न 50:50 है।

34 स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट 2006-07, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।

इस संपूर्ण कार्यक्रम को 1986 में मिशन का रुप दिया गया था तथा इसे पेय जल प्रबंधन संबंधी प्रौद्योगिकी मिशन के अंतर्गत लाया गया था तथा वर्ष 1991 में इसे राजीव गांधी राष्ट्रीय पेय जल मिशन (आरजीएनडीडब्ल्यूएम) नाम दिया गया था। वर्ष 1999 में भारत सरकार में एक अलग पेय जल आपूर्ति विभाग बनाया गया था।

4.4.4.2.2 यह सुनिश्चित करने के लिए कि ग्रामीण पेज जलापूर्ति के विभिन्न पहलुओं पर पर्याप्त रूप से ध्यान दिया गया है, एआरडब्ल्यूएसपी के लिए बजट में रखी गई निधि को विभिन्न घटकों में विभाजित कर दिया गया है। निधियों को विभाजित करने के मानदंड और निधिकरण पैटर्न नीचे दर्शाए गए हैं :

- 20 प्रतिशत तक की निधियां सुधार प्रक्रिया अर्थात वर्ष 1999 में चुनिन्दा जिलों में प्रारंभ किए गए क्षेत्रीय सुधारों के लिए रखी जाती हैं और बाद में स्वजलधारा —90 प्रतिशत भारत सरकार का हिस्सा, 10 प्रतिशत सामुदायिक अंशदान - के माध्यम से इसे संपूर्ण देश में फैलाया जाता है।
- 5 प्रतिशत निधियां रेगिस्तान विकास कार्यक्रम के अंतर्गत राज्यों के लिए रखी जाती हैं। इसमें भारत सरकार शत-प्रतिशत धनराशि लगाती है तथा राज्य का कोई हिस्सा नहीं होता।
- 5 प्रतिशत धनराशि प्राकृतिक आपदाओं के कारण उत्पन्न होने वाली आकस्मिकताओं को पूरा करने के लिए रखी जाती हैं। इसमें भारत सरकार का निधिकरण शत-प्रतिशत है और राज्य का कोई हिस्सा नहीं है।
- राज्यों को शेष निधियों का आबंटन निर्धारित मानदंड के अनुसार किया जाता है। उनके लिए राज्य संसाधनों के अंतर्गत अनुरूपी शेयर मुहैया कराना अपेक्षित है। राज्य उक्त निधियों का उपयोग प्रचालन और अनुरक्षण (ओएंडएम) के लिए कर सकता है। वे अपनी वार्षिक आबंटित राशि की 20 प्रतिशत राशि उप-मिशन परियोजनाओं के लिए परियोजनाएं शुरू करने के लिए कर सकते हैं। मौजूदा उप-मिशन आर्सेनिक, फ्लोराइड, खारापन और आयरन का नियंत्रण करने पर हैं। एआरडब्ल्यूएसपी निधियों की 15 प्रतिशत राशि का उपयोग जल की गुणवत्ता और 5 प्रतिशत राशि का उपयोग वहनीयता पर किया जाता है। उप-मिशन परियोजनाओं के लिए निधिकरण पैटर्न संघ और राज्यों के बीच 75 : 25 है।

- फरवरी, 2006 से संशोधित मार्गनिर्देशों के अंतर्गत जल की गुणवत्ता की बढ़ती हुई समस्या से निपटने के लिए निर्णय लिया गया है कि केवल जल की गुणवत्ता से प्रभावित राज्यों के लिए राज्य सरकारों द्वारा अनुमोदित परियोजनाओं के लिए ध्यानकेंद्रित निधिकरण करने हेतु जल की गुणवत्ता के लिए केन्द्र में एआरडब्ल्यूएसपी निधियों की 20 प्रतिशत राशि रोक रखी जाए। गंभीर रूप से प्रदूषित जल से निपटने के लिए ध्यानकेंद्रित निधिकरण करने हेतु आपवादिक मामलों में यह उच्चतम सीमा अधिक हो सकती है। इस वर्ष से निधिकरण का पैटर्न संघ और राज्यों के बीच 50 : 50 है।

4.4.4.2.3 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के लिए अपेक्षित है कि वे एआरडब्ल्यूएसपी निधियों की कम से कम 25 प्रतिशत राशि अनुसूचित जातियों के लिए तथा अन्य न्यूनतम 10 प्रतिशत राशि अनुसूचित जनजातियों के लिए निर्धारित करें तथा उनका उपयोग करें। इस कार्यक्रम के अंतर्गत शामिल किए जाने के प्रयोजन से 100 व्यक्तियों अथवा 20 परिवारों के एक समूह को एक बस्ती माना जाएगा। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए इस सीमा में और छूट दी जा सकती है।

4.4.4.2.4 इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन हेतु राज्य सरकारों को एजेंसी का चयन करने की स्वतंत्रता दी गई है। यह सार्वजनिक स्वास्थ्य और इंजीनियरी विभाग (पीएचईडी) भी हो सकती है और राज्य ग्रामीण विकास विभाग अथवा कोई अन्य परास्थानिक भी। कुछ राज्यों में यह कार्य जल एवं मल-जल बोर्ड को सौंपा गया है।

4.4.4.2.5 पेय जल स्कीमों के चयन और कार्यान्वयन में उपयोगकर्ता समूहों/पंचायतों की भागीदारी को बढ़ावा देने के उद्देश्य से और उसके बाद प्रचालन और अनुरक्षण (ओएंडएम) के लिए राज्य सरकारों को कहा गया था कि वे 11वीं योजना के शुरू होने से पहले भारत सरकार के साथ समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर करें। राज्य सरकार से यह भी कहा गया था कि वे समुदाय और पंचायती राज संस्थाओं की भागीदारी और पेय जल आस्तियों की उन्हें चरणबद्ध रूप से सुपुर्दगी करने के लिए कार्य योजना संरचना तैयार करें। समझौता ज्ञापन के पीछे प्रयोजन भारत निर्माण के लक्ष्यों को हासिल करने के लिए राज्यों को बचनबद्ध करना; इस क्षेत्र के लिए पर्याप्त निधियां मुहैया कराना; जल एवं सतही जल रिचार्ज के संरक्षण हेतु कार्यक्रमों के अभिसरण के लिए कार्यतंत्र तैयार करना था। इस समझौता ज्ञापन का एक अन्य उद्देश्य पंचायती राज संस्थाओं के लिए क्षमता बढ़ाने का प्रभावी कार्यक्रम बनाना; प्रचालन और अनुरक्षण

के लिए प्रयोक्ता प्रभार वसूलने के लिए उन्हें शक्ति सम्पन्न बनाना तथा उपयोगकर्ता समूहों/पंचायती राज संस्थाओं को तकनीकी और वित्तीय सहायता मुहैया कराना है। तथापि, अभी तक किसी भी राज्य ने संघ सरकार के साथ किसी भी समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर नहीं किए हैं।

4.4.4.3 सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए)

4.4.4.3.1 यह प्रतीत होता है कि सर्वशिक्षा अभियान इस प्रणाली के सामुदायिक स्वामित्व के जरिए प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाता है। इस कार्यक्रम में उन सभी प्राथमिक विद्यालयों और गैर-औपचारिक शिक्षा केन्द्रों पर ध्यान दिया गया है, जो गांव अथवा पड़ोस में अवस्थित हैं। सर्व शिक्षा अभियान एक ऐसा प्रयास है जो एक मिशन के रूप में समुदाय के स्वामित्व वाली गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के प्रावधान के जरिए सभी बच्चों की मानवीय क्षमताओं में सुधार लाने हेतु अवसर मुहैया कराता है। इसका अंतिम उद्देश्य है (क) संपूर्ण देश में गुणवत्तापूर्ण बुनियादी शिक्षा की मांग को पूरा करना; (ख) वर्ष 2010 तक प्रारंभिक स्कूली शिक्षा के लिए बच्चों का शत-प्रतिशत सम्मिलन सुनिश्चित करना, और (ग) इसी अवधि के दौरान सार्वभौमिक प्रतिधारण प्राप्त करना है।

4.4.4.3.2 आशा थी कि ग्रामीण क्षेत्रों में सामान्य रूप में पंचायतों और विशेष रूप में ग्राम पंचायतों की इस कार्यक्रम में महत्वपूर्ण भूमिका होगी। पंचायतें एसएसए कागजातों के पाठों में चित्रित की गई हैं; लेकिन ऐसा प्रतीत नहीं होता कि उन्हें स्कूल प्रणाली के प्रबंधन, मॉनिटरिंग और पर्यवक्षण के संबंध में कोई महत्वपूर्ण जिम्मेवारी सौंपी गई हो। एसएसए में परिकल्पना की गई है प्रखंड तथा वास्तव में जिला शिक्षा योजना के आनुक्रमिक निरूपण के प्रारंभिक बिंदु के रूप में बस्ती दर के शिक्षा नियोजन की परिकल्पना की गई है। लेकिन प्रतीत होता है कि योजना की कुछ मौलिक कमियां हैं। समुदाय आधारित संगठनों (सीबीओ) की संख्या पर विचार किया जाता है ताकि स्कूल प्रबंधन समिति, अभिभावक शिक्षक संघ, माता अध्यापक संघ, ग्राम शिक्षा समिति, निवास स्तर के शिक्षा नियोजन आदि के लिए समष्टि योजना दलों के रूप में समष्टि स्तर के नियोजन को सरल एवं सुसाध्य बनाया जा सके। लेकिन सीबीओ और ग्राम पंचायत के बीच संबंध गायब है। इस कार्यक्रम में मध्यस्थ (ब्लॉक) और जिला स्तर की पंचायतों की इस कार्यक्रम में कोई भूमिका नहीं है। जिला स्तर पर, संपूर्ण कार्य जिला सर्व शिक्षा अभियान कक्ष द्वारा संभाले जा रहे हैं। यह एक व्यावसायिक निकाय है, जो परिवर्तन प्रबंधन इकाई के रूप में तथाकथित रूप् से गठित है। लेकिन, इस कार्यक्रम में जिला और मध्यस्थ पंचायतों के साथ इसके संबंधों की संकल्पना नहीं की गई है।

4.4.4.3.3 आयोग का विचार है कि पंचायती राज संस्था प्रणाली के साथ समेकित सर्व शिक्षा अभियान न केवल परियोजना से बेहतर परिणाम प्राप्त करने के लिए आवश्यक है, बल्कि प्रक्रियाओं की वहनीयता एवं इसके द्वारा शुरू किए गए संस्थाओं के लिए भी आवश्यक है।

4.4.4.4. समेकित बाल विकास स्कीम (आईसीडीएस)

4.4.4.4.1 यह स्कीम वर्ष 1975 में 33 सामुदायिक विकास प्रखंडों में प्रारंभ की गई थी। आईसीडीएस आज प्रारंभिक बाल्यावस्था विकास को शामिल करने वाला सबसे बड़ा वैश्विक कार्यक्रम है। यह एक अन्तःक्षेत्रीय कार्यक्रम है, जिसमें दूरस्थ इलाकों में रहने वाले 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों तक पहुंचा जाता है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य इन बच्चों के पोषण एवं स्वास्थ्य संबंधी देखभाल स्तर में सुधार लाना, मृत्यु दर, कुपोषण और स्कूल छोड़ने वालों की दर को कम करना, तथा अंत में बालक की देखभाल हेतु माता और परिवार की क्षमता को बढ़ाना है।

4.4.4.4.2 समेकित बाल विकास योजना, अपने शुरूआती दिनों से ही, विभागीय तौर पर चलाया जा रहा कार्यक्रम है। प्रत्येक राज्य की एक अलग प्रबंधन संरचना है, जिसमें राज्य समन्वयक/विभाग के सचिव, प्रखंड स्तर पर बाल विकास परियोजना अधिकारी, पर्यवेक्षक और आंगनवाडी केन्द्र के कार्मिक होते हैं। आईसीडीएस में तीन स्तरीय पंचायत की भागीदारी अभी तक शून्य रही है। इस कार्यक्रम के इतने लम्बे समय से चलने के बावजूद इसके प्रभाव के बारे में विचारों में विरोध रहा है। लोगों के मन में यह भावना रही है कि किसी प्रकार यह स्कीम लाभार्थियों से दूर रही है; लोग इसे अभी तक स्वीकार नहीं कर सके हैं। इसलिए, इस कार्यक्रम के दिशानिर्देशों की समीक्षा आवश्यक है ताकि पंचायतों, विशेषकर ग्राम पंचायतों को उसके कार्यकरण में प्रभावी भूमिका दी जा सके।

4.4.4.4.3 आयोग का विचार है कि समेकित बाल विकास योजना कार्यक्रम को व्यापक स्वास्थ्य देखभाल सुपुर्दगी संरचना के एक भाग के रूप में देखा जाए। इस प्रणाली के अन्य घटकों अर्थात टीकाकरण, प्रसव-पूर्व देखभाल, परिवार नियोजन एवं स्वास्थ्य देखभाल संबंधी मुख्यधारा में रोगवाहक नियंत्रण का कुशलतापूर्वक एकीकरण करके ग्रामीण इलाकों में बालकों एवं महिलाओं के लिए एक संयुक्त स्वास्थ्य देखभाल मशीनरी तैयार की जा सकती है। ऐसा इन सभी घटकों के स्थानीय स्तर के कार्यकलापों तथा ऐसे घटकों से संबद्ध स्थानीय संस्थाओं (उदाहरणार्थ, स्वास्थ्य उपकेन्द्र, आंगनवाडी केन्द्र) की व्यवस्था की जिम्मेवारी पंचायती राज संस्थाओं को अंतरित करके किया जा सकता है।

4.4.4.5 मध्याहन भोजन कार्यक्रम

4.4.4.5.1 प्राथमिक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पौषणिक सहायता कार्यक्रम औपचारिक तौर पर वर्ष 1995 में प्रारंभ किया गया था। इस कार्यक्रम का उद्देश्य प्राथमिक शिक्षा में दाखिला लेने वाले विद्यार्थियों की संख्या बढ़ाकर और उनकी शिक्षा को जारी रखकर प्राइमरी शिक्षा के सार्वभौमिकरण में सहायता देना तथा सरकारी, स्थानीय निकायों और सहायता प्राप्त स्कूलों की प्राथमिक कक्षाओं में पढ़ने वाले बच्चों के पौषणिक स्तर में सुधार लाना है।

4.4.4.5.2 कई राज्यों ने इस कार्यक्रम की व्यवस्था में ग्राम पंचायतों को शामिल नहीं किया है, फिर भी उनमें से अधिकांश ने प्राथमिक शिक्षा इन संस्थाओं को अंतरित कर दी हैं। इसके बावजूद, स्थानीय स्तर पर इसकी जिम्मेवारी स्कूलों और वीईसी को तथा जिला स्तर पर समाहर्ता को सौंप दी गई है। मध्यस्थ और जिला पंचायतों को इस कार्यक्रम से कोई लेना-देना नहीं है। पंचायतों के इस महत्वपूर्ण कार्यक्रम से हटने के कारण संस्थात्मक शून्य आ गया है; समष्टि स्तरों पर कार्यान्वयन एजेंसियों को अकेला छोड़ दिया गया है। इस कार्यक्रम की नियमित मॉनिटरिंग हेतु कोई एजेंसी नहीं है। आयोग का विचार है कि पंचायती राज संस्थाओं के भाग न लेने से इस कार्यक्रम की मॉनिटरिंग कमजोर रह गई है। यह बात संदेह से परे है कि बच्चों का कल्याण एक ऐसा क्षेत्र है जहां समुदाय की सभी संरचनाएं, चाहे वे ग्राम सभा हों, वार्ड सभा हों अथवा ग्राम पंचायत, अधिक से अधिक सहयोग दिखाने की इच्छुक होंगी। इस कार्यक्रम के दिशानिर्देश को तत्काल संशोधित करने की आवश्यकता है ताकि इसे सीधे पंचायत की मॉनिटरिंग के अंतर्गत लाया जा सके।

4.4.5 आयोग ने एनआरईजीए की जांच अलग से की है तथा इसने अपनी दूसरी रिपोर्ट, जिसका शीर्षक "अनलॉकिंग ह्यूमन कैपिटल, एन्टाइटलमेंट्स एण्ड गवर्नेस - ए केस स्टडी" है, में अपनी सिफारिशें दे दी हैं। जमीनी स्तर के नियोजन के संबंध में विशेषज्ञ दल ने भी बहुत महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं ताकि सभी केन्द्रीय कार्यक्रमों के नियोजन और कार्यान्वयन में पंचायतों की केन्द्रीयता सुनिश्चित की जा सके। **सिफारिशें अनुबंध-IV(2) पर संलग्न हैं।**

4.4.6 केंद्र-प्रायोजित योजनाओं की तुलना में पंचायतों की भूमिका अब भी 73वें संशोधन की प्रतिबद्धता के अनुरूप नहीं हैं। केंद्र-प्रायोजित योजनाओं को अपनी अलग उर्ध्वाकार पहचान छोड़नी होगी तथा उसे पंचायती राज प्रणाली की समग्र विकास योजना का हिस्सा बनना पड़ेगा। आयोग महसूस करता है कि इनके कार्यान्वयन में क्षेत्रीय/आधिकारिक/कार्यात्मक अभिसरण हो। यदि वे ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध

मामलों को देखें तो इन स्कीमों में पंचायती राज संस्थाओं की केन्द्रीयता सुनिश्चित होनी चाहिए। निम्नतम स्तर पर ग्राम और वार्ड सभा तथा उच्च स्तरों पर पंचायत समिति और जिला परिषद होनी चाहिएं जिन्हें कार्यान्वयन, मॉनिटरिंग और सामाजिक लेखापरीक्षा की दृष्टि से अपने सभी कार्यकलापों को देखना चाहिए। इन कार्यक्रमों में, जहां ये गतिविधियां पंचायत/वार्ड स्तर से कम स्तर वाले क्षेत्रों और बस्तियों में होती हैं वहां एक छोटी स्थानीय केन्द्र समिति का गठन किया जाए ताकि इन कार्यकलापों की सहायता की जा सकें। ऐसी स्थानीय समिति केवल विमर्शी निकाय होगी, जिसकी जिम्मेवारी ग्राम सभा/वार्ड सभा को नियमित रूप से पृष्ठभूमि संबंधी जानकारी देने की होगी और वह इसके लिए जबावदेह होगी। ऐसी परियोजनाएं निरूपित करते समय संघ ओर राज्य सरकारों को नम्यता संबंधी तत्व शामिल करने की आवश्यकता है ताकि उन्हें स्थानीय परिस्थितियों व आवश्यकताओं के अनुसार ढाला जा सके। संबंधित मंत्रालय को केवल दिशानिर्देश जारी करने चाहिएं तथा कार्यान्वयन संबंधी लोच का मामला स्थानीय निकायों पर छोड़ देना चाहिए। इन कार्यक्रमों के सामाजिक-आर्थिक प्रभाव का आकलन आवधिक तौर पर करने के उद्देश्य से परिणाम की मॉनिटरिंग करने वाली प्रणाली प्रारंभ करनी चाहिए। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (एसएसएसओ) के उपयुक्त रूप से सुदृढ़ होने पर उसे इसकी जिम्मेवारी सौंपी जा सकती है।

4.4.7 सिफारिशें :

(क) इस रिपोर्ट के अनुबंध-iv(2) में दिए गए जमीनी स्तर के नियोजन संबंधी विशेषज्ञ दल के विचारों को पृष्ठांकित करते समय आयोग ने सिफारिश की कि केंद्र-प्रायोजित योजनाओं के कार्यान्वयन में क्षेत्रीय/आधिकारिक/कार्यात्मक अभिसरण हो।

(ख) यदि वे ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध मामलों को देखें तो इन स्कीमों में पंचायती राज संस्थाओं की केन्द्रीयता सुनिश्चित होनी चाहिए।

(i) ऐसी सभी स्कीमों में ग्राम/वार्ड सभा को इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन, मॉनिटरिंग और लेखापरीक्षा हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण/अत्याधुनिक सहभागी निकाय के रूप में स्वीकार करना चाहिए।

(ii) ग्यारहवीं अनुसूची के अंतर्गत कार्यों को देख नहीं रहीं तथा केवल ग्रामीण इलाकों में कार्य कर रहीं कार्यक्रम समितियों को संबोधित पंचायतों और उनकी स्थायी संस्थाओं

के साथ मिलाए जाने की आवश्यकता है। व्यापक भूमिका रखने वाली कुछ अन्य समितियों को पंचायतों के साथ घनिष्ठ संबंध रखने के लिए पुनर्गठित किए जाने की आवश्यकता हो सकती है।

(iii) **उन कार्यक्रमों में, जहां कार्यकलाप पंचायत/वार्ड स्तर से नीचे के क्षेत्रों और बस्तियों में किए जाते हैं, वहां छोटी स्थानीय केन्द्र समिति की संरचना इन कार्यकलापों के समर्थन में होनी चाहिए। इस केन्द्र समिति को केवल वैचारिक निकाय के रूप में कार्य करना चाहिए तथा ग्राम सभा/वार्ड सभा को नियमित रूप से पृष्ठभूमि संबंधी जानकारी देने की जिम्मेवारी भी इसी की होनी चाहिए तथा इसके प्रति जबावदेह होना चाहिए।**

(ग) **इस कार्यक्रम को मंजूरी देते हुए मंत्रालय को कार्यान्वयन संबंधी लोच की गुंजाइश रखते हुए केवल व्यापक दिशानिर्देश जारी करने चाहिएं ताकि पंचायतों की सक्रिय भागीदारी के जरिए स्थानीय संगतता सुनिश्चित हो सके।**

(घ) **सभी केंद्र-प्रायोजित कार्यक्रमों के लक्ष्य उपयुक्त रूप से निर्धारित किए जाएं तथा एक निश्चित अवधि में इसके सामाजिक-आर्थिक प्रभाव का आकलन करने के लिए एक कार्यतंत्र होना चाहिए। एनएसएसओ को उपयुक्त रूप से सुदृढ़ किया जाए और यह कार्य उसे सौंपा जाए।**

4.4.8 सूचना, शिक्षा एवं सम्प्रेषण — आईईसी

4.4.8.1 विधान स्वमेव लोगों की अधिकारिता की गारंटी नहीं देता। इसके लिए एक ऐसा वातावरण होना चाहिए जो विधान के अर्थ और आशय को एक ऐसे रूप में निम्नतम स्तर तक पहुंचाने की अनुमति देता हो और जो आम आदमी के लिए बोधगम्य हो। इससे जमीनी स्तर पर क्षमता बढ़ती है और फलस्वरूप लोकतांत्रिक संस्थाएं मजबूत होती हैं। स्थानीय निकायों में लोगों की इच्छुक और सक्रिय भागीदारी इन संस्थाओं की लोकतांत्रिक कार्यप्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए अनिवार्य है। इन संस्थाओं के बारे में जागरूकता उत्पन्न करने में अत्यधिक कार्य करने की आवश्यकता है।

4.4.8.2 नागरिक समाज के निर्माण और उसके सुदृढ़ीकरण में सूचना का महत्व भलीभांति मान्य है, लेकिन इसका उत्तरदायित्व केवल सरकारी मशीनरी पर नहीं है। विभिन्न स्रोतों से प्राप्त सूचना तथा बहु-आयामी प्रौद्योगिकियों का उपयोग करते हुए ज्ञान का सृजन लोकतांत्रिक संरचना में एक राजनीतिक

अधिकारिता के लिए अनिवार्य है। लोगों में जागरूकता उत्पन्न करने, लोगों को एकत्रित करने और उन्हें ज्ञान और कौशल प्रदान करने के लिए सूचना, शिक्षा एवं सम्प्रेषण को शक्तिशाली साधन के रूप में अभिज्ञात किया गया है। इस प्रकार, प्रिंट मीडिया, इलैक्ट्रोनिक मीडिया और सम्प्रेषण की लोक शैली के ड्रामा, नाटक आदि जैसे अन्य तरीके महत्वपूर्ण साधन हैं, जिनका उपयोग पंचायती राज संस्थाओं के बारे में जानकारी प्राप्त करने, उनकी कार्यप्रणाली, लोगों की सहभागिता का महत्व; सामाजिक लेखापरीक्षा की संकल्पना तथा जबावदेही एवं पारदर्शिता सुनिश्चित करने के लिए किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, इस क्षेत्र में अधिक सफलता हासिल करने हेतु ऐसे कार्यकलापों का अभिसरण सुनिश्चित करना होगा।

बॉक्स 4.7 : ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा ग्रामीण रेडियो का प्रसारण

मीडिया चैनलों के स्थापित तरीकों में रेडियो ग्रामीण इलाकों में लोगों तक अपनी बात पहुंचाने का प्रभावी माध्यम है। ग्रामीण इलाकों में रेडियो की पहुंच और संभाव्यता पर विचार करते हुए मंत्रालय एआईआर पर रेडियो कार्यक्रमों को प्रायोजित कर रहा है। हिन्दी और दस अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में प्रसारण के अलावा, मंत्रालय डीएवीपी के माध्यम से लोक संगीत पर आधारित डेढ़ घंटे का रेडियो कार्यक्रम दे रहा है तथा 128 से अधिक स्थानीय तथा 19 भाषाओं और बोलियों में एआईआर के प्राथमिक स्टेशनों पर प्रसारण कर रहा है।

पूर्वोत्तर क्षेत्र और छत्तीसगढ़, उड़ीसा के पश्चिमी भाग आदि में जनजातीय बेल्ट की क्षेत्र और क्षेत्र विषयक आवश्यकता को पूरा करने के लिए पूर्वोत्तर की प्रत्येक भाषा में डेढ़ घंटे का कार्यक्रम जनजातीय बोलियों तथा उप बोलियों में प्रसारित किया जा रहा है तथा प्रसारण साप्ताहिक तौर पर किया जा रहा है।

स्रोत : ग्रामीण विकास मंत्रालय, वार्षिक रिपोर्ट, 2004-05

4.4.8.3 नेशनल रीडरशिप सर्वे, 2006 के अनुसार, प्रिंट मीडिया शहर के 45 प्रतिशत और ग्रामीण इलाकों के 19 प्रतिशत लोगों को शामिल करता है[35]। ग्रामीण लोगों के बीच जागरूकता उत्पन्न करने में प्रिंट मीडिया की सीमाओं को शहरी और ग्रामीण विकास संबंधी संसदीय स्थायी समिति द्वारा पूरी तरह मान्यता दी गई थी (13वीं लोक सभा)[36]। इसके अतिरिक्त ग्रामीण विद्युतीकरण के अभाव और टेलीवीजन सैट की अपेक्षाकृत अधिक लागत के कारण ग्रामीण इलाकों में दृश्य मीडिया की उपयोगिता भी सीमित है। यह "रेडियो प्रसारण" दोनों लोगों तक पहुंच (आबादी का 99.13 प्रतिशत)[37] तथा शामिल लागत के माध्यम से प्रचार-प्रसार के महत्व को रेखांकित करता है। इसके अतिरिक्त यह माध्यम ग्रामीण इलाकों में बिजली की उपलब्धता पर आश्रित नहीं है, जो वर्तमान में देश के करीब 56.5 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों के लिए बहुत बड़ी बाधा है जिनके पास आज भी विद्युत का कनेक्शन नहीं है। बिहार (94.9 प्रतिशत), झारखंड (90 प्रतिशत), असम (83.5 प्रतिशत), उड़ीसा (80.6 प्रतिशत), उत्तर प्रदेश (80.2

35 स्रोत : पैरा 30, सूचना और प्रसारण पर 11वीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) के कार्य दल की रिपोर्ट, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, जनवरी, 2007; http://planningcommission.nic.in/aboutus/Committee/wrkgrp11/wg11-iandb.doc

36 स्रोत : पैरा 8.3, 37वीं रिपोर्ट, अगस्त, 2002; "पंचायतों की दशाः एक मध्यावधिक समीक्षा और आकलन," 22 नवम्बर, 2006, खण्ड-III, पंचायती राज मंत्रालय, भारत सरकार में पुनः प्रस्तुत।

37 स्रोत : पैरा 95, सूचना और प्रसारण पर 11वीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) के कार्यदल की रिपोर्ट, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, जनवरी, 2007

प्रतिशत) और पश्चिम बंगाल (79.7 प्रतिशत)[38] जैसे राज्यों में स्थिति और खराब है। इस प्रकार ग्रामीण रेडियो प्रसारण लोगों तक अपनी बात पहुंचाने का प्रभावी माध्यम है।

4.4.8.4 पंचायती राज संस्थाओं और कार्यप्रणाली और इसमें उनकी भूमिका के बारे में ग्रामीण इलाकों के लोगों को जागरूक बनाने के लिए ऐसा ग्रामीण प्रसारण जिला स्तर पर प्रयोग में आने वाली स्थानीय भाषा (भाषाओं) में करना होगा। ऐसा मुख्यतः अधिकांश ग्रामीण इलाकों में प्रचलित निम्न साक्षरता स्तर (राष्ट्रीय ग्रामीण साक्षरता दर : 59.4 प्रतिशत) के कारण है। ग्रामीण साक्षरता से आशय केवल स्थानीय भाषा में पढ़ने और लिखने की योग्यता से होगा। इसका कारण यह है कि भारत की जनगणना में साक्षरता के अर्थ को "किसी भी भाषा में पढ़ने और लिखने की योग्यता" के रूप में परिभाषित किया गया है[39]। इस प्रकार, स्थानीय भाषा में रेडियो का प्रसारण साक्षरता और निरक्षरता दोनों ही मामलों में समान रूप से प्रभावी होगा। कम साक्षरता दर का मुद्दा ग्रामीण इलाकों की महिलाओं और समाज के वंचित वर्गों के मामले में अधिक चिन्ताजनक है। उदाहरण के तौर पर कुछ चुनिन्दा राज्यों में ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर चित्र 4.4 में दी गई है :

चित्र 4.4 चुनिन्दा राज्यों में ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर

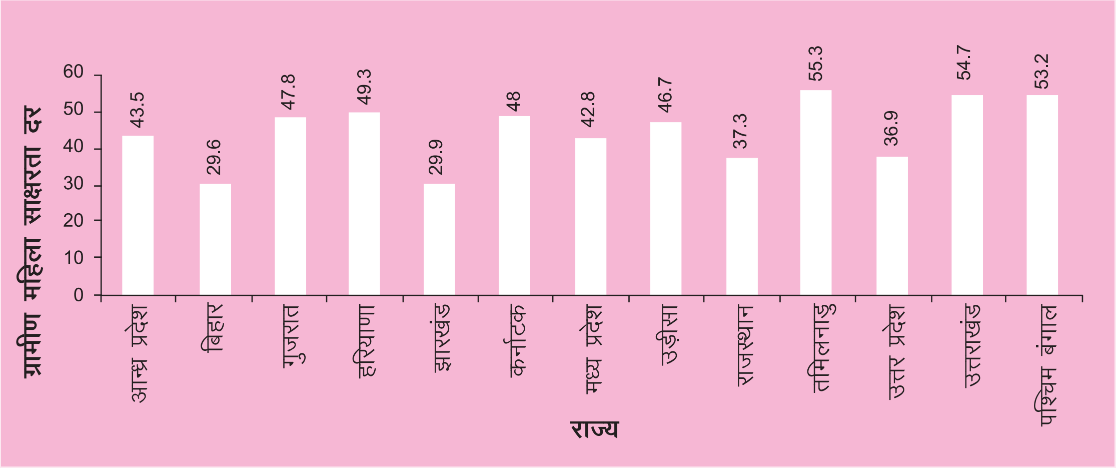

स्रोत : प्राथमिक जनगणना का सार, भारत की जनगणना, 2001

इन आंकड़ों में संविधान के अनुच्छेद 243घ (3) के दृष्टिगत इसके महत्व को स्वीकार किया गया है जिसमें व्यवस्था की गई है कि महिलाओं के लिए सीटों की कुल संख्या की एक-तिहाई सीटों से कम सीटों का आरक्षण न हो (अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति से संबंधित महिलाओं के लिए आरक्षित सीटों सहित) ताकि प्रत्येक पंचायत में प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा ये महिलाओं द्वारा भरी जा सकें। इस

38 स्रोत : विद्युत मंत्रालय, भारत सरकार; http://powermin.gov.in/rural_electrification/electrification_ of_rural_household,htm; दिनांक 09.10.2007 को पुनः प्राप्त

39 भारत की जनगणना साक्षरता की परिभाषा "किसी भाषा में पढ़ने और लिखने के सामर्थ्य" के रूप में देती है; स्रोत : http://www.censusindia.net/census2001/history/censusterms.html

प्रकार, 1 दिसम्बर, 2006 की स्थिति के अनुसार,ग्राम पंचायतों में 36.7 प्रतिशत और मध्यस्थ पंचायतों में 37.1 प्रतिशत महिलाएं प्रतिनिधि चुनी गई थीं[40]। यह फिर रेडियो प्रसारण जैसे माध्यम के जरिए कम साक्षरता दर के बीच ग्रामीण इलाकों में जागरूकता पैदा करने की आवश्यकता को रेखांकित करता है। जागरूकता और सूचना के बगैर अधिकारिता से लोगों का मोह भंग होगा और स्थानीय संस्थाओं का भी अधोपतन होगा। ऐसे परिदृश्य में अनिवार्य है कि जिला स्तर पर प्रचलित स्थानीय भाषा को जागरूकता सृजन संबंधी पहलों का साधन माना जाए तथा ग्रामीण रेडियो प्रसारण को अपने कार्यक्रम जिले में प्रचलित स्थानीय भाषा में ही प्रसारित करने चाहिएं[41]। वास्तव में, केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय इस दृष्टिकोण को पहले ही अपना चुका है और अपने कार्यक्रमों का प्रसारण हिन्दी और दस क्षेत्रीय भाषाओं के अलावा 19 स्थानीय भाषाओं और बोलियों में कर रहा है (देखें बॉक्स 4.7)। इसी प्रकार, सरकार के तीन स्तरीय दृष्टिकोण जो पंचायती राज विधानों की मदें हैं, शामिल लोकतांत्रिक प्रक्रिया, चुनाव कराना, सामाजिक लेखापरीक्षा कराना, विचार व्यक्त करने के साधन और जन-शिकायतों का निराकरण, संस्थाओं की क्षमता को मापने के तरीके, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 का उपयोग आदि का लोगों में सम्प्रेषण स्थानीय भाषा में बोली के माध्यम से ओर अधिक प्रभावी ढंग से किया जा सकता है। ऐसे संदेशों वाले ग्रामीण रेडियो प्रसारण ग्राम सभा बैठकों, पंचायत बैठकों, जिला, मध्यस्थ और ग्राम पंचायत स्तरों पर लिए गए निर्णयों, पंचायतों की लेखापरीक्षा आदि करने के संबंध में सम्प्रेषण के माध्यम के रूप में भी कर सकता है।

4.4.8.5 आयोग का विचार है कि प्रिंट मीडिया, दृश्य मीडिया, इलेक्ट्रोनिक मीडिया, लोक कला और थियेटर आदि जैसे सम्प्रेषण के विभिन्न तरीकों का उपयोग ग्रामीण जनता के बीच जागरूकता पैदा करने के लिए किया जाए। जैसाकि पहले उल्लेख किया गया है यह सुनिश्चित किया जाए कि सहक्रियाओं को हासिल करने तथा पहुंच को अधिकतम करने संबंधी दृष्टिकोण में अभिसरण है। आयोग का यह भी विचार है कि जिला स्तर के ग्रामीण प्रसारण को ऑल इंडिया रेडियो का पूर्णरूपेण

बॉक्स 4.8 : झारखंड में समुदाय रेडियो

झारखंड राज्य में, समुदाय रेडियो कार्यक्रम "चला हो गांव में" (आओ गांव चलें), की शुरूआत एनजीओ "भारत विकास हेतु विकल्प" द्वारा तथा प्रसारण, ऑल इंडिया रेडियो, डाल्टनगंज द्वारा किया गया तथा इसने 18 मई, 2007 को अपना 500वां एपीसोड पूरा किया। इस कार्यक्रम में स्थानीय बोली, जो पलामू और गढ़वा जिलों में प्रचलित भोजपुरी और हिन्दी का मिश्रण है, का प्रयोग किया गया है ताकि स्थानीय शासन के मुद्दों और सामाजिक मुद्दों पर सामुदायिक सरोकारों को उठाया जा सके। रेडियो कार्यक्रमों में लगभग 32,000 स्थानीय कलाकारों ने अपना कार्यक्रम प्रस्तुत किया। यह कार्यक्रम झारखंड के तीन जिलों अर्थात पलामू, गढ़वा और लटेहर तथा उत्तर प्रदेश, बिहार और छत्तीसगढ़ के पड़ोसी राज्यों के जिलों में 7 मिलियन से अधिक आबादी की मांग की पूर्ति कर रहा है।

स्रोत : दिनांक 6.09.2007 को निकाला गया http:// www.aidindia.org uk/cr_section/pev_ 500ep. htm

40 स्रोत : सारणी 1क और 1ख, "पंचायतों की स्थिति : एक मध्यावधिक समीक्षा और आकलन", 22 नवम्बर, 2006, खण्ड-I पंचायती राज मंत्रालय, भारत सरकार

41 वर्ष 1991 की जनगणना में 2.31 करोड़ लोगों ने अपनी मातृभाषा के रूप में भोजपुरी 1.33 करोड़ राजस्थानी, प्रत्येक 1.05 करोड़ छत्तीसगढ़ी और मगही, 77.66 लाख ने मैथिली और 46.73 लाख ने मारवाड़ी दर्ज किया था (स्रोत : http://www.Censusindia.net/cendat/language/lang_tab12.pdf)

स्वतंत्र कार्यकलाप होना चाहिए। इसको हासिल करने के लिए पंचायती राज संस्थाओं से संबद्ध मुद्दों को शामिल करने तथा स्थानीय शासन में लोगों की सहभागिता के अलावा इन प्रसारणों में ध्यानकेंद्रण कृषि और ग्रामीण विकास से संबंधित मुद्दों पर होना चाहिए, जो मुख्यतः ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित हैं तथा नागरिकों को सूचना का अधिकार संबंधी कार्यक्रमों के साथ जोड़ते हैं। इसके लिए केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय को केन्द्रीय पंचायती राज मंत्रालय, ग्रामीण विकास, कृषि एवं अन्य संबद्ध मंत्रालयों से समन्वय करके एक कार्यतंत्र विकसित करना चाहिए।

4.4.8.6 सिफारिशें :

(क) **प्रिंट मीडिया, दृश्य मीडिया, इलैक्ट्रोनिक मीडिया, लोक कला और नाटकों आदि जैसे सम्प्रेषण के विभिन्न तरीकों का उपयोग करते हुए एक बहु-आयामी दृष्टिकोण अपनाना चाहिए ताकि पंचायती राज के बारे में लोगों को जानकारी दी जा सके तथा उनमें जागरूकता लायी जा सके। यह भी सुनिश्चित होना चाहिए कि सहक्रियाओं को हासिल करने तथा पहुंच को अधिकतम करने संबंधी दृष्टिकोण में अभिसरण है।**

(ख) **केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय को केन्द्रीय पंचायती राज मंत्रालय,ग्रामीण विकास मंत्रालय और कृषि मंत्रालय तथा संबंधित मंत्रालयों के साथ परामर्श करके एक कार्यतंत्र तैयार करें ताकि इस कार्यकलाप का कार्यान्वयन प्रभावी रूप से हो सके।**

(ग) **ग्रामीण प्रसारण को ऑल इंडिया रेडियो का पूर्णरूपेण स्वतंत्र कार्यकलाप बनाया जाए। ग्रामीण प्रसारण इकाइयां जिलों में स्थित होनी चाहिएं तथा प्रसारण मुख्यतः जिले की प्रचलित स्थानीय भाषा (भाषाओं) में किया जाए। इन कार्यक्रमों का ध्यानकेंद्रण पंचायती राज संस्थाओं, ग्रामीण विकास, कृषि, सूचना का अधिकार तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य, सफाई, शिक्षा आदि से संबंधित संगत मुद्दों पर होना चाहिए।**

4.5 सेवाओं की सुपुर्दगी में पंचायतों की भूमिका

4.5.1 विकास नए निवेशों और कार्यक्रमों का केवल एक समूह नहीं है, बल्कि यह नागरिकों को अच्छे किस्म की सेवाएं प्रदान करने का एक साधन है। ऐसी सेवाओं की एक सूची निम्नलिखित विशिष्ट श्रेणियों में व्यापक रूप से वर्गीकृत की जा सकती है—

- नागरिक सेवाएं जैसे जलापूर्ति एवं सफाई व्यवस्था;
- सामाजिक सेवाएं जैसे स्वास्थ्य एवं पोषण संबंधी देखभाल, परिवार कल्याण और प्राथमिक/स्कूल शिक्षा;

- अवसंरचना, उदाहरणार्थ सड़कों और पुलियाओं का निर्माण तथा ग्रामीण विद्युतीकरण;
- कल्याणकारी सेवाएं जैसे सामाजिक सुरक्षा, पेंशन और अनिवार्य वस्तुओं का संवितरण;
- हितधारकों को विकास संदेश देने के लिए विस्तार सेवाएं;
- शासन संबधी सेवाएं जैसे प्रमाणपत्र और लाइसेंस जारी करना, सूचना मुहैया कराना आदि।

4.5.2 अब तक ग्रामीण क्षेत्रों में नागरिकों को उपलब्ध सार्वजनिक सेवाओं की गुणवत्ता संतोषजनक नहीं रही है। उपयुक्त डिजाइन और प्रभावी विकेन्द्रीकरण से, इनमें से कई सेवाओं में पर्याप्त रूप से सुधार

बॉक्स 4.9 : ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में स्वास्थ्य और शिक्षा की उपलब्धता को बढ़ावा देने में योजना आयोग का दृष्टिकोण

11वीं योजना के स्वास्थ्य एवं शिक्षा संबंधी लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अपेक्षित है कि राज्य इन क्षेत्रों में अपनी भूमिका को और बढ़ाएं। इसका कारण यह है कि स्वास्थ्य, शिक्षा, स्वच्छ पेयजल और सफाई जैसी अनिवार्य सार्वजनिक सेवाओं तक पहुंच बढ़ती हुई आय का स्वाभाविक परिणाम नहीं है। इन सेवाओं की सुपुर्दगी सुनिश्चित करने के लिए सुविचारित सरकारी हस्तक्षेप आवश्यक है। यह इस संदर्भ में है कि राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन की शुरूआत गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य देखभाल, सफाई और पोषण की प्राप्ति एवं उपलब्धता में सुधार लाने के उद्देश्य से की गई है। इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अपेक्षित है कि ऐसी सेवाएं सार्वजनिक कार्रवाई के जरिए मुहैया कराने के लिए विभिन्न स्तरों पर राज्य की क्षमता को एकत्रित करने में विवेकपूर्ण प्रयास किए जाएं। जहां कहीं संभव हो, इसकी पूर्ति निजी प्रयासों से की जा सकती है, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि निजी क्षेत्र द्वारा आपूर्ति बढ़ाने की अनुमति देने के बाद भी अधिकांश उत्तरदायित्व सरकारी क्षेत्र पर ही रहेगा। इस कारण से शिक्षा और स्वास्थ्य पर योजना व्यय पर्याप्त रूप से बढ़ाना पड़ेगा। तथापि, केवल व्यय में वृद्धि पर्याप्त नहीं होगी, जब तक जबावदेही में भी सुधार न लाया जाए। स्थानीय तौर पर दी गई प्राथमिक शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी सेवाओं का पंचायती राज्य संस्थाओं द्वारा और सक्रिय पर्यवेक्षण का प्रभाव पड़ सकता है। माध्यमिक और उच्च शिक्षा के साथ-साथ क्षेत्रीय स्वास्थ्य देखभाल के लिए मॉनिटरिंग निष्पादन की अन्य पद्धतियां और जबावदेही निर्धारित करना आवश्यक है। मॉनिटरिंग में सुधार लाने और जबावदेही निर्धारित करने के तरीकों का पता लगाने में केन्द्र और राज्यों दोनों को सहयोग करना चाहिए। पंचायती राज संस्थाओं को प्रभावी सुपुर्दगी करने के उपायों से स्थानीय भागीदारी और जबावदेही में सुधार लाने में मदद मिलेगी। नागरिक समाज संगठन पंचायती राज्य संस्थाओं की इस क्षेत्र में मदद करने में प्रमुख भूमिका अदा कर सकते हैं।

स्रोत : http:// planningcommission.nic.in/plans/planrel/app11_16 jan.pdf

लाया जा सकता है। मौजूदा व्यवस्था के अंतर्गत, रोग नियंत्रण अथवा विद्यालयों में नामांकन हेतु यदा कदा किए जाने वाले अभियानों में भाग लेने को छोड़कर, पंचायती राज संस्थाओं की इस क्षेत्र के कई कार्यकलापों में व्यावहारिक तौर पर कोई भूमिका नहीं है। सार्वजनिक सेवा प्रदान करने में बेहतरी की ओर सर्वाधिक महत्वपूर्ण कदम जमीनी स्तर पर भागीदारी अर्थात पंचायती राज संस्थाओं की भागीदारी सुनिश्चित करना है। इस संदर्भ में ग्रामीण क्षेत्रों में सेवाओं की सुपुर्दगी के लिए उत्तरदायी कुछ संरचनाओं का विश्लेषण करना उपयोगी होगा।

4.5.2.1 *स्वास्थ्य*

4.5.2.1.1 प्राथमिक और सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों (पीएचसी/सीएचसी) एवं अस्पतालों के माध्यम से स्वास्थ्य देखभाल संबंधी सुविधाओं का प्रावधान तथा स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से रोगों की रोकथाम ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य देखभाल संबंधी सुपुर्दगी प्रणाली के दो प्रमुख घटक हैं। यद्यपि, प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल एक ऐसा विषय है जिसे संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची के अंतर्गत स्थानीय सरकार को इस क्षेत्र पर विशेष बल देने के उद्देश्य से सौंपा जा सकता है। संघ सरकार संपूर्ण देश में बहुत सारे केंद्रीय रूप से निधिपोषित कार्यक्रम प्रत्यक्षतः चला रही है। इन कार्यक्रमों का कार्यान्वयन राज्य और जिला स्तर पर कार्य कर रहीं विशेष संस्थाओं के माध्यम से किया जा रहा है। अधिकांश राज्यों में ग्राम पंचायतें पल्स पोलियो टीकाकरण जैसे आईईसी अभियान में स्वास्थ्य विभाग के कर्मचारियों के साथ भाग लेने के सिवाए इस क्षेत्र में कोई भूमिका अदा नहीं करती हैं। कुछ पंचायतों ने उप-केन्द्रों/पीएचसीज में छोटी-मोटी मरम्मत करने के अलावा पानी बिजली और शौचालयों की व्यवस्था जैसी अवसंरचना और सुख-सुविधाओं में योगदान दिया है। तथापि, उनके पास विषमताओं, विसंगतियों, अनियमितताओं अथवा सेवाओं की अनुपलब्धता, चाहे वह उप-केन्द्र स्तर पर ही अथवा पीएचसी स्तर पर, को दूर करने का कोई अधिकार नहीं है।

4.5.2.1.2 जिला और मध्यस्थ पंचायतों की भी भूमिका अवसंरचना और अधिप्राप्ति संबंधी सहायता यदा-कदा मुहैया कराने के लिए सीमित रही है। सभी प्रमुख कार्यकलाप संबंधित विभाग के पास हैं। दवाइयों की खरीद भी राज्य स्तर पर केन्द्रीकृत कर दी गई है सिवाए संकट के समय जब जिला परिषद की निधियों का उपयोग आपातकालीन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किया जाता है।

बॉक्स 4.10 : पेयजल कवरेज के प्रतिमान

- मानव जाति के लिए 40 एलपीसीडी पेयजल;
- डीडीपी के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रों में मवेशियों के लिए 30 एलपीसीडी अतिरिक्त जल;
- प्रत्येक 250 व्यक्तियों के लिए एक हैंडपम्प अथवा स्टेंड पोस्ट; और
- मैदानी इलाकों में 1.6 कि.मी. के भीतर तथा पहाड़ी क्षेत्रों में 100 मीटर की ऊंचाई तक जल स्रोतों की उपलब्धता।
- अन्य बस्तियों को जहां मैदानी इलाकों में 1.6 कि.मी. तथा पहाड़ी क्षेत्रों में 100 मीटर तक साफ जल स्रोत हैं (निजी अथवा सरकारी) लेकिन प्रणाली की क्षमता 10 एलपीसीडी से 40 एलपीसीडी के बीच है, आंशिक तौर पर शामिल क्षेत्र (पीसी) के रूप में श्रेणीबद्ध किया जाता है तथा 10 एलपीसीडी से कम जल स्रोत वाली बस्तियों को शामिल नहीं किए गए (एनसी) क्षेत्र के रूप में श्रेणीबद्ध किया जाता है।

स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट 2006-07 — ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार

4.5.2.1.3 सारांश में, इस समय, जहां तक प्राथमिक स्वास्थ्य संबंधी देखभाल का संबंध है, रोकथाम संबंधी और प्रवर्तक स्वास्थ्य देखभाल, जल, सफाई व्यवस्था, पर्यावरणात्मक सुधार तथा पोषण शामिल करने के लिए इसे आम संस्थागत संरक्षण के अंतर्गत समग्र रूप से लाया जाए तथा इस कार्य को सबसे अच्छी तरह पंचायती राज संस्थाओं द्वारा किया जा सकता है।

4.5.2.2 जलापूर्ति और सफाई व्यवस्था

4.5.2.2.1 प्राथमिक स्वास्थ्य की भांति पेय जल भी एक ऐसा विषय है जिसे संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची के अंतर्गत स्थानीय शासन को सौंपा जा सकता है। भारत सरकार इस क्षेत्र में कार्यक्रमों को निष्पादित करने के लिए पर्याप्त मात्रा में धन दे रही है। तथापि, राष्ट्रीय पेय जल मिशन के अंतर्गत ग्रामीण जलापूर्ति कार्यक्रमों के कार्यान्वयन हेतु मार्गनिर्देशों में कार्यान्वयन एजेंसी के चयन का कार्य राज्य सरकारों पर छोड़ दिया गया है। हालांकि कुछ राज्यों में ग्रामीण विकास/पंचायती राज विभाग पंचायतों के माध्यम से प्रबंध करते हैं तथा कई अन्य राज्यों में कार्यान्वयन सीधे राज्य जल एवं मल-जल बोर्ड के माध्यम से अथवा पीएचईडी जैसे राज्य सरकार के लाइन विभाग के माध्यम से किया जाता है। अधिकांश स्थानों में रख-रखाव की जिम्मेदारी उसी एजेंसी की होती है तथा बहुत कम समुदायों/प्रयोक्ता समूहों ने इस स्कीम को अपनाने के लिए स्वयं कहा है।

4.5.2.2.2 ग्रामीण भारत में पेय जल का सामान्य स्रोत हैं — खुले कुंए, लघु जल आपूर्ति योजना (एमडब्ल्यूएस), पाइपयुक्त जलापूर्ति योजनाएं (पीडब्ल्यूएस) तथा हैंडपम्प युक्त बोरिंग वाले कुंए (बीडब्ल्यूएच)। कुछ राज्यों में एमडब्ल्यूएस और पीडब्ल्यूएस का रख-रखाव जीपी तथा आईपी के साथ बीडब्ल्यूएच के पास है। जब बीडब्ल्यूएच के रख-रखाव की जिम्मेदारी ग्राम पंचायतों को सौंप दी गई है, फिर भी मरम्मतों के लिए इंजीनियरी सहायता मध्यस्थ अथवा जिला पंचायतों से प्राप्त होती है। उपयोगकर्ता प्रभारों की वसूली और संग्रहण ग्राम पंचायतों द्वारा किया जाता है, लेकिन, अधिकांश मामलों में जल टैरिफ बहुत ही कम रखा गया है और इसकी वसूली भी बहुत कम है। बारहवें वित्त आयोग ने सिफारिश की है कि पंचायती राज संस्थाओं को उपभोक्ता प्रभारों के रूप में आवर्ती लागत की कम से कम 50 प्रतिशत लागत वसूल करनी चाहिए।

4.5.2.2.3 कुछ राज्यों में, ग्रामीण क्षेत्रों में पेय जल स्कीमों की आयोजना और कार्यान्वयन की जिम्मेवारी जिला पंचायतों के पास है। तथापि, आमतौर पर निरूपण स्तर पर ग्राम पंचायतों के साथ परामर्श नहीं

किया जाता है। समुदाय की सहभागिता के जरिए केंद्र-प्रायोजित स्कीमों को कार्यान्वित करने के लिए कई गांवों में लाभार्थी समूह बनाए गए हैं जो प्रायः ग्राम पंचायतों से स्वतंत्र समानांतर निकायों के रूप में कार्य करते हैं। ग्राम पंचायतें रख-रखाव संबंधी समस्याओं का भी सामना करती हैं, चूंकि प्रापण की जिम्मेवारी जिला परिषद अथवा राज्य सरकार की होती है। भारत सरकार ने इस संबंध में कुछ पहल की है। राज्य सरकारों से कहा गया है कि वे ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारंभ से पूर्व भारत सरकार के साथ समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर करें ताकि समुदाय और पंचायती राज संस्थाओं को शामिल किया जा सके तथा उन्हें आस्तियों की चरणबद्ध रूप से सुपुर्दगी की जा सके। इस प्रणाली का कार्यान्वयन अवश्य सुनिश्चित होना चाहिए।

बॉक्स 4.11 : दसवीं योनजा में ग्रामीण इलाकों में जलापूर्ति पर बल

- "शामिल नहीं की गई" बस्तियों को प्राथमिकता दी जाएगी ताकि वे प्रत्येक व्यक्ति के लिए अपेक्षित मात्रा में पेयजल प्राप्त कर सकें।
- "आंशिक रूप से शामिल" उन सभी बस्तियों को, जिनमें इस समय 10 लीटर प्रति व्यक्ति से कम जल की आपूर्ति की जा रही है, संतृप्त किया जाएगा।
- जिन बस्तियों में पीने योग्य जल नहीं है, उन्हें पीने योग्य स्वच्छ जल की सुविधाओं से युक्त किया जाएगा।
- उन बस्तियों, जिन्हें विगत में जल की आपूर्ति पूर्णतः की गई थी, लेकिन समय के साथ-साथ पिछड़ कर पुनः "शामिल नहीं की गई" अथवा "आंशिक रूप से शामिल" श्रेणी में पहुंच गई हैं, का कायाकल्प किया जाएगा।

स्रोत : http:// planningcommission.nic.in

4.5.2.2.4 जल, सफाई और स्वास्थ्य के बीच प्रत्यक्ष संबंध होता है। वर्ष 2001 में ग्रामीण सफाई व्यवस्था का सीमाक्षेत्र केवल 22 प्रतिशत था। तथापि, वर्ष 1986 में शुरू किए गए केन्द्रीय ग्रामीण सफाई कार्यक्रम, जिसे वर्ष 1999 में अब संपूर्ण सफाई अभियान (टीएससी) के रूप में आशोधित कर दिया गया है, जैसी केंद्र-प्रायोजित स्कीमों के माध्यम से सरकार द्वारा किए गए सतत प्रयासों के कारण नवीनतम उपलब्ध आंकड़ों[42] के अनुसार कवरेज प्रतिशतता बढ़कर 43 प्रतिशत हो गई है। वर्ष 2007-08 के लिए टीएससी के लिए वार्षिक योजना परिव्यय 1,060 करोड़ रुपए है। अब तक देश के 570 जिले इस कार्यक्रम के अंतर्गत शामिल किए गए हैं तथा लक्ष्य वर्ष 2012 तक संपूर्ण सफाई में शामिल करने के उद्देश्य को हासिल करना है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य पूर्व आपूर्ति आधारित, उच्च सब्सिडी ओर विभागीय तौर पर निष्पादित कार्यक्रम को कम सब्सिडी, स्वास्थ्य शिक्षा पर विशेष बल देते हुए मांग आधारित संकल्पना में परिवर्तित करना है। स्कूलों, आंगनवाड़ी और वैयक्तिक मकानों में सफाई सुविधाओं की

42 स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट 2006-07, ग्रामीण विकास मंत्रालय

व्यवस्था के लिए बच्चों और वयस्कों दोनों के बीच स्वास्थ्य कर पद्धतियों को मन में बैठाने में समय लगेगा। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य संबंधी संकेतकों से कोई महत्वपूर्ण सुधार तब तक दिखाई नहीं देगा जब तक गांव के लिए उपयुक्त ठोस अपशिष्ट प्रबंधन प्रणाली के साथ शत-प्रतिशत स्वास्थ्य कवरेज सुनिश्चित न हो।

4.5.2.3 प्राथमिक शिक्षा

4.5.2.3.1 ग्रामीण भारत में प्राथमिक शिक्षा सुपुर्दगी के मुख्य कार्यकलापों में निम्नलिखित शामिल हैं:

- आबंटित की जाने वाली निधि;
- पाठ्यचर्या रूपरेखा तथा गहन अध्ययन संबंधी उपलब्धि स्तरों जैसे मानकों का निर्धारण;
- अवसंरचना का भौतिक विस्तार और गुणवत्ता सुधार के लिए योजना बनाना;
- मानवीय, सामाजिक और भौतिक आस्तियों का सृजन; और
- सृजित आस्तियों का प्रचालन और अनुरक्षण (ओएंडएम)।

4.5.2.3.2 गुणवत्तापूर्ण प्राथमिक शिक्षा की सुपुर्दगी के लिए विद्यार्थियों का नामांकन, स्कूल छोड़ने वालों का निवारण, पाठ्य पुस्तकों और शिक्षण सामग्रियों का प्रावधान, शिक्षकों की नियुक्ति, उनका सेवा-पूर्व प्रशिक्षण, विशिष्ट स्कूलों/कक्षाओं में शिक्षकों का समनुदेशन, कार्यनिष्पादन मूल्यांकन, सेवा के दौरान प्रशिक्षण, जीवनवृत्ति संभावनाएं, परीक्षा समय-अनुसूची का निर्धारण, स्कूल भवनों/सुविधाओं का अनुरक्षण, शिक्षकों पर पर्यवेक्षण, अनुशासन बनाए रखना और स्कूल प्रक्रियाओं का अनुवीक्षण कुछ उप-कार्यकलाप हैं।

4.5.2.3.3 चौदह (14) वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करना सरकार का संवैधानिक दायित्व हैं। संघ सरकार विशिष्ट केंद्र-प्रायोजित स्कीमों के माध्यम से राज्य सरकारों के प्रयासों को समर्थन देती रही है। अभी तक, तीन दशकों की अवधि के दौरान देश में ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड, अनौपचारिक शिक्षा, शिक्षण शिक्षा, प्राथमिक शिक्षा को पौषणिक सहायता, लोक-जुम्बिश, शिक्षा कर्मी और जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डीपीईपी) जैसे बुनियादी शिक्षा को शामिल करती हुई सात मुख्य स्कीमें रही हैं। इन स्कीमों के अधीन कार्यकलापों के मुख्य संघटकों में कक्षाओं का निर्माण, शिक्षण सामग्री का प्रावधान, शिक्षकों का प्रशिक्षण, स्वैच्छिक शिक्षकों का चयन और पौषणिक समर्थन के लिए खाद्यानों की आपूर्ति शामिल थी। इन सभी स्कीमों को अब सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए) में

एकीकृत कर दिया गया है। इस स्कीम का लक्ष्य वर्ष 2010 तक सभी बच्चों (6-14 वर्ष के आयु वर्ग) को कक्षा 8 तक की शिक्षा देना है। इसका लक्ष्य शिक्षा में सभी लैंगिक, सामाजिक और क्षेत्रीय अंतरों को भी दूर करना है। इस कार्यक्रम का कार्यनीति दस्तावेज पंचायती राज संस्थाओं की सक्रिय संबद्धता द्वारा प्रभावी विकेंद्रीकरण के माध्यम से सामुदायिक स्वामित्व की मांग करता है। यह महिलाओं के समूह ग्राम शिक्षा समिति (वीईसी) और कुछ अन्य बाहय संरचनाओं, जो पंचायती राज संस्थाओं के बाहर हैं, की भागीदारी की संकल्पना भी करती है।

सारणी 4.6 : एसएसए के प्रमुख निविष्टि लक्ष्यों की तुलना में प्रगति

क्रम सं0	मद	2006-07 सहित संचयी लक्ष्य		उपलब्धियां (31.3.2007 तक)
1	स्कूल भवनों का निर्माण	183461	पूर्ण एवं प्रगति पर	157516(85.85%)
2	अतिरिक्त कक्षाओं का निर्माण	692678	पूर्ण एवं प्रगति पर	650442(93.90%)
3	पेय जल की सुविधाएं	170267	पूर्ण एवं प्रगति पर	158361(93.01%)
4	शौचालयों का निर्माण	235041	पूर्ण एवं प्रगति पर	203577(86.61%)
5	निःशुल्क पाठ्य पुस्तकों की आपूर्ति	6.69 करोड़	आपूरित	6.40 करोड़ (96%)
6	अध्यापकों की नियुक्ति	10.12 लाख	पूर्ण एवं प्रगति पर	7.95 लाख (78%)
7	अध्यापकों को प्रशिक्षण (20 दिन)	3405615	पूर्ण एवं प्रगति पर	2952395(87%)
8	ईजीएस/एआईई केन्द्रों में नामांकन	12689299 बच्चे	69 लाख	54%
9	नए स्कूल खोलना	240072	पूर्ण एवं प्रगति पर	193220(80%)

स्रोत : http://ssa.nic.in

4.5.2.3.4 योजना आयोग की सिफारिशों के अनुसार, एसएसए के अंतर्गत स्कूलों की अवस्थिति और स्कूल भवनों के निर्माण का कार्य ग्राम पंचायतों का होगा। वे भी अध्यापकों का चयन करेंगे, लेकिन उनके प्रशिक्षण कार्यक्रम की व्यवस्था मध्यस्थ पंचायतों द्वारा की जाएगी। अध्यापन और प्रशिक्षण सामग्री की व्यवस्था जिला परिषद द्वारा की जाएगी, जिसके लिए उन्हें संसाधन केन्द्र अभिज्ञात करने चाहिएं और उन्हें बढ़ावा देना चाहिए। पोषण संबंधी कार्यक्रमों की व्यवस्था पूर्णरूपेण ग्राम पंचायतों द्वारा की जाएगी, जबकि जिला परिषद खाद्यानों की आपूर्ति के संबध में संयोजकों की व्यवस्था करेंगी।

4.5.2.3.5 एसएसए की शुरूआत के चार वर्ष बाद फरवरी, 2005 में हुई एसएसए संबंधी राष्ट्रीय मिशन की शासी परिषद की पहली बैठक में बताया गया था कि कक्षा 1 में दाखिल किए गए 100 बच्चों में से केवल 47 बच्चे कक्षा 8 तक पहुंचे। इस प्रकार, स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की दर 52.79 प्रतिशत रही, जो कि अस्वीकार्य तौर पर अधिक है। सरकारी तौर पर बताया गया था कि प्राइमरी स्तर पर (कक्षा 1 से 5 तक) स्कूल छोड़ने की दर 34 प्रतिशत है। विद्यार्थियों- अध्यापकों का प्रतिकूल अनुपात; स्कूलों में विद्यार्थियों की कम उपस्थिति, अध्यापन कार्य में प्रेरणा की कमी, अपर्याप्त बुनियादी सुविधाएं और अध्यापकों की अत्यधिक अनुपस्थिति को प्रमुख चिन्ताजनक क्षेत्रों के रूप में अभिज्ञात किया गया है। सेवा सुपुर्द करने वाले विभिन्न संस्थाओं को विस्तृत कार्य आबंटन से एसएसए के जरिए बुनियादी शिक्षा का सार्वभौमीकरण नहीं हो पाया है। इसका प्राथमिक कारण यही प्रतीत होता है कि इस कार्यक्रम की जिम्मेवारी पंचायतों को नहीं दी गई है।

4.5.2.3.6 उपर्युक्तानुसार योजना आयोग द्वारा भूमिकाओं का निरूपण करने के बावजूद; पंचायती राज संस्थाएं इस कार्यक्रम में कोई प्रभावी भूमिका अदा नहीं करती हैं। स्कूल विकास और प्रबंधन समिति (एसडीएमसी) और प्रखंड शिक्षा अधिकारी (बीईओ) इसके प्रमुख कार्यनिष्पादक दिखलायी पड़ते हैं। ग्राम स्तर पर केवल एसडीएमसीडी स्कूल प्रशासन के सभी पहलुओं के लिए उत्तरदायी होता है और इसमें ग्राम पंचायत की कोई भूमिका नहीं होती है। जिला परिषद अथवा शिक्षा संबंधी स्थायी समिति की नीति निर्माण में स्कूल प्रशासन में अथवा यूनीफॉर्म और छात्रवृत्तियों की अधिप्राप्ति और वितरण के संबंध में कोई भूमिका नहीं है। वस्तुतः, राज्य शिक्षा विभाग ही इस कार्यक्रम को चलाने के लिए प्रत्यक्षतः उत्तरदायी होता है।

4.5.2.3.7 आयोग महसूस करता है कि एसडीएमसी को पुनर्गठित करने की आवश्यकता है। नियमानुसार स्थानीय ग्राम पंचायत का प्रतिनिधि इस निकाय का सदस्य होना चाहिए। नामांकन, प्रतिधारण, स्थानीय भागीदारी और अन्य महत्वपूर्ण मुद्दों से संबंधित सभी कर्त्तव्यों के लिए एसडीएमसी को चाहिए कि वह

ग्राम पंचायत को रिपोर्ट करें। एक विस्तृत और स्पष्ट कार्यकलाप तथा संसाधन निरुपण संबंधी कार्य एसडीएमसी और पंचायती राज संस्थाओं की भूमिकाओं को स्पष्ट करते हुए शुरू करना चाहिए और उसके बाद सख्ती से उन्हें जारी रखना चाहिए।

4.5.3 उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, सेवा सुपुर्द करने वाले कार्यक्रमों में पंचायती राज संस्थाओं की केन्द्रीयता सुनिश्चित करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाने अपेक्षित हैं —

- सेवा को कार्यकलापों के रूप में अलग-अलग करना।
- पंचायती राज संस्थाओं सहित एजेंसियों को सेवा सुपुर्दगी के विभिन्न पहलुओं के लिए स्पष्ट उत्तरदायित्व सौंपना — इसमें पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका की सीमा नियोजन से लेकर पर्यवेक्षण और पृष्ठभूमि संबंधी जानकारी देने तक हो सकती है।
- मानवीय एवं वित्तीय दोनों प्रकार की सेवाएं प्रदान करने के लिए अपेक्षित संसाधनों का पंचायती राज संस्थाओं में निर्धारण।
- संस्थागत और अन्य प्रकार की सेवाओं के लिए मानक निर्धारित करना। इसे उपलब्ध सुविधाओं और मानवशक्ति के अनुसार ठीक करना होगा।
- प्रत्येक सेवा के संबंध में इन मानकों पर आधारित पंचायती राज संस्थाओं द्वारा सेवा सुपुर्दगी योजनाएं हितधारकों के साथ परामर्श करके तथा संसाधनों और उपलब्ध सुविधाओं के अनुसार तैयार करना। गुणवत्ता और मात्रा की दृष्टि से सेवाओं के उन्नयन में मील का पत्थर बनाना। सेवा सुपुर्दगी योजनाओं को हितधारकों, अधिकारियों, चुने गए प्रतिनिधियों और अस्पतालों, स्कूलों और आंगनवाड़ियों जैसे संस्थाओं के विशेषज्ञों के युक्त संस्थागत समितियों द्वारा तैयार किया जा सकता है। अन्य सेवाओं के संबंध में योजनाएं प्रयोक्ता समूहों के साथ परामर्श करके शुरू की जा सकती हैं।
- नागरिक चार्टर के रूप में सेवा सुपुर्दगी योजनाओं को प्रकाशित करना जिनसे सुनिश्चित सेवाओं माप और पृष्ठभूमि संबंधी जानकारी देने की प्रणालियों और शिकायत निवारण प्रणालियों के स्तर; का पता चलेगा।
- सेवा सुपुर्दगी योजनाओं के कार्यान्वयन की मॉनीटरिंग करने तथा उसमें और सुधार लाने के लिए निविष्टियां मुहैया कराने हेतु प्रयोक्ता समूहों, एसएचजी नेटवर्क और नागरिक समाज के समूहों सहित समुदाय आधारित मॉनिटरिंग प्रणाली अपनाना।

4.5.4 सिफारिशें :

(क) संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची के अनुसार प्राथमिक शिक्षा, निरोधक और प्रवर्तक स्वास्थ्य संबंधी देखभाल, जल आपूर्ति, सफाई, पर्यावरणात्मक सुधार तथा पोषण संबंधी स्थानीय स्तर के कार्यकलापों को पंचायती राज संस्थाओं के उपयुक्त स्तरों पर अंतरित कर दिया जाए।

(ख) राज्य सरकारों को अति-महत्वपूर्ण सेवा सुपुर्दगी नीति की संरचना तैयार करने की आवश्यकता है जिसके अंतर्गत प्रत्येक विभाग सेवा सुपुर्दगी योजनाएं तैयार करने हेतु विस्तृत मार्गनिर्देश निर्धारित कर सकता है।

4.5.5 ग्राम स्तर पर संसाधन केन्द्र

4.5.5.1 स्थानीय शासनों के रूप में लोकतांत्रिक अधिकारिता के साथ-साथ ग्राम और मध्यस्थ पंचायत के स्तरों पर स्थानीय सूचना एवं संसाधन केन्द्र खोलने की आवश्यकता है। आईसीटी और अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी पहले ही ऐसे कदम का आधार तैयार कर चुकी है। अब समय आ गया है जब राष्ट्रीय संसाधन प्रबंधन और आयोजना का संवर्धन सृजन और रख-रखाव सूचना के प्रवाह के जरिए किया जाए।

4.5.5.2 ग्राम पंचायत स्तर के इन संसाधन केन्द्रों को स्थानीय संसाधनों के प्रलेखन और निरुपण; मृदा किस्मों, मल जल पैटर्न, फसल उगाने और पशुपालन पद्धतियों; जल संसाधन; भूमि और फार्म जोत; प्राकृतिक तबाही की संवेदनशीलता प्रभाव , आवर्तन, बचाव, राहत और बन्दोबस्त आवश्यकता; ग्रामीण अवसंरचना आदि को प्रलेखन में स्थानीय शिक्षित युवाओं की क्षमता का उपयोग करना चाहिए। स्थानीय तौर पर उत्पन्न इस सूचना आधार की परिपुष्टि उपग्रह छायाचित्र और अन्य अंतरिक्ष योग्य सेवाओं के जरिए की जाए। इस प्रकार, अंतरिक्ष योग्य सेवाओं को ग्राम और मध्यस्थ पंचायत स्तरों पर मुहैया कराने की आवश्यकता है ताकि इन्हें डिजीटल रूप में परिवर्तित किया जा सके। ग्राम और मध्यस्थ स्तरों पर उत्पन्न सूचना जिला मुख्यालय में मिलायी और संश्लेषित की जानी चाहिए तथा बाद में इसका उपयोग संयुक्त जिला योजना की तैयारी के लिए किया जाना चाहिए।

4.5.5.3 एक बार जब ये संसाधन केन्द्र प्रचालनात्मक हो जाएं तो स्थानीय परम्परागत ज्ञान, विशेषकर दवाइयों, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन और कृषिगत पद्धतियों; स्थानीय कला और शिल्प; लोक स्मृतियां इससे पहले कि वे विस्तृत हों - लोक कहानियों और ऐतिहासिक घटनाओं, आन्दोलनों, लोगों और

स्मारकों, समुदाय संबंधी त्योहारों, जनसमूहों, घटनाओं और लोक सांस्कृतिक पद्धतियों आदि का उपयोग इनके विस्तृत प्रलेखन में किया जाए। इससे न केवल भावी पीढ़ियों के लिए डाटाबेस तैयार होगा, बल्कि पंचायतों में एक सामूहिक पहचान का भाव उभरेगा जिससे उनकी लोकतांत्रिक कार्यप्रणाली और सुदृढ़ होगी तथा साझा भाग्य और कल्पनादृष्टि का भाव मन में बैठाना होगा।

4.5.5.4 भारत सरकार ने हाल ही में एक राष्ट्रीय स्तर का कार्यक्रम शुरू किया है, जिसका लक्ष्य ग्रामीण अवसंरचना में सुधार लाना है ताकि बेहतर सेवा सुपुर्दगी सुनिश्चित हो सके। सरकार ने साझा सेवा केन्द्र (सीएससीज)[43] नामक स्कीम अनुमोदित की है, जिसमें संपूर्ण देश के करीब छः लाख गांवों में एक लाख साझा सेवा केन्द्रों की स्थापना की जाएगी। इन कॉमन सेवा केन्द्रों की परिकल्पना भारत के ग्रामीण नागरिकों की सरकारी और गैर-सरकारी और सामाजिक क्षेत्र सेवाएं समेकित रूप से प्रदान करने के लिए शुरूआती और अंतिम सुपुर्दगी बिन्दुओं के रूप में की गई है। ये केन्द्र ग्रामीण भारत के नागरिकों को वर्ल्ड वाइड वेब से जोड़ने के रूप में भी कार्य करेंगे। भारत सरकार के साझा सेवा केन्द्रों की एक अन्य समान पहल "मिशन 2007 : प्रत्येक गांव का एक ज्ञान केन्द्र" है। मिशन, 2007 की पहल जुलाई 2004 में की गई थी। इसका लक्ष्य ग्राम ज्ञान केन्द्रों का सृजन करके प्रत्येक गांव हेतु सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) के माध्यम से किए गए विकास के लाभों को प्राप्त करना है। इस महत्वाकांक्षी मिशन को हासिल करने के उद्देश्य से नेशनल एलाइन्स का गठन किया गया है। सरकार ने इसको राष्ट्रीय बजट में शामिल करके और ग्रामीण अवसंरचना विकास निधि[44] (आरआईडीएफ) से 100 करोड़ रुपए की सहायता देकर इस पहल का समर्थन किया है।

4.5.5.5. ऐसी पहलों का मूल्यांकन करते समय आयोग ने महसूस किया कि संपूर्ण देश में ग्राम और मध्यस्थ पंचायत स्तरों पर अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी योग्य संसाधन केन्द्रों की स्थापना करना सरकार की प्राथमिकता कार्यसूची में होना चाहिए। इसके लिए स्थानीय स्तर पर पर्याप्त क्षमता का निर्माण करना अपेक्षित होगा। सार यह है कि इसके लिए जरूरी है कि स्कूली शिक्षा के बाद वाले स्तर पर इस समय उपलब्ध सामान्य शिक्षा के स्थान पर कौशल और प्रौद्योगिकी आधारित प्रणाली जिसका ध्यानकेंद्रण कृषि और पशुपालन पद्धतियों पर हो, कम्प्यूटर का अनुप्रयोग, वाणिज्यिक फसल कार्य तथा मृदा एवं जल प्रबंधन संबंधी शिक्षा पर है। इससे ग्रामीण युवा अपने ज्ञान का उपयोग स्थानीय पर्यावरण में बेहतर जीविका उपार्जन करने तथा अपने स्थानीय संसाधनों की व्यवस्था उत्पादक और वहनीय तरीके से कर सकेंगे।

43 http://mit.gov.in

44 www.mission2007.in

4.5.5.6 सिफारिशें :

(क) सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईटीटी) और अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी संस्थापित करने के लिए कदम उठाए जाएं ताकि स्थानीय संसाधन निरुपण और स्थानीय सूचना आधार पर उत्पत्ति हेतु गांव और मध्यस्थ पंचायत स्तरों पर संसाधन केन्द्रों को समर्थ बनाया जा सके।

(ख) इन संसाधन केन्द्रों का उपयोग भी स्थानीय परम्परागत ज्ञान और विरासत के प्रलेखन हेतु किया जाना चाहिए।

(ग) फार्म और पशुपालन पद्धतियों, कम्प्यूटर अनुप्रयोगों, वाणिज्यिक फसल उगाकर तथा मृदा एवं जल प्रबंधन पर ध्यान केंद्रित करते हुए इस समय उपलब्ध स्कूली शिक्षा के बाद की सामान्य शिक्षा को कौशल एवं प्रौद्योगिकी आधारित प्रणाली में परिवर्तित करके स्थानीय स्तर पर क्षमता निर्माण का प्रयास करना चाहिए।

4.6 पांचवीं और छठी अनुसूची वाले क्षेत्रों में स्थानीय शासन

4.6.1 पांचवीं अनुसूची वाले क्षेत्रों में स्थानीय शासन

4.6.1.1 पंचायती राज (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम, 1996 पीईएसए की मुख्य विशेषताएं

4.6.1.1.1 इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कि भारत के विभिन्न हिस्सों में जनजाति एक ऐसा प्रभावी समुदाय और राजनीतिक संचेतना का साधन है, जिसे संविधान के भाग-X में देश के अनुसूचित और जनजातीय क्षेत्र में रहने वाले लोगों की सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा के संबंध में विशिष्ट प्रावधान समाहित किए गए हैं। इस प्रयोजनार्थ, अनुच्छेद 244 के तहत, संविधान का एक पृथक अनुबंध अनुसूची 5 के रूप में बनाया गया है। उनकी शेष पहचान की पृष्ठभूमि में अनुच्छेद 244(1)(5) के रूप में एक विशेष खंड नियत करता है कि संपूर्ण राज्यों में पंचायतों के सृजन से संबंधित भाग-IX के उपबंध इन क्षेत्रों में स्वतः लागू नहीं होते हैं।

4.6.1.1.2 इन क्षेत्रों में शासन के विकेन्द्रीकरण के लिए सरकार ने एक विशेष विधान — पंचायती राज (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम, 1996 बनाया, जो देश के नौ राज्यों अर्थात (i) आन्ध्र प्रदेश, (ii) छत्तीसगढ़, (iii) गुजरात, (iv) हिमाचल प्रदेश, (v) झारखंड, (vi) मध्य प्रदेश, (vii) महाराष्ट्र, (viii) उड़ीसा और (ix) राजस्थान में अवस्थित सभी अधिसूचित क्षेत्रों में लागू होता है।

4.6.1.1.3 इस विधान का सार ग्राम सभा को पंचायत प्रणाली की सर्वाधिक शक्तिशाली इकाई के रूप में स्वीकार करना है। इसमें माना गया है कि इन क्षेत्रों में रहने वाले लोग राजनीतिक शिक्षा और अधिकारिता की दृष्टि से भारी नुकसान में हैं। यह भी स्वीकार किया जा रहा है कि पूर्ण बहुस्तरीय पंचायत प्रणाली, जो मैदानी इलाकों में प्रचलित है, स्थानीय लोगों को हाशिए पर खड़ा कर सकती है। पीईएसए संरचना में आनुषांगिकता का ठोस तत्व लाने और निम्नतम स्तर पर अधिकतम शक्ति का उपयोग करने की व्यवस्था करती है।

4.6.1.1.4 इस अधिनियम में दी गई किसी गांव की परिभाषा के अनुसार साधारणतः गांव में अथवा आवासों का समूह अथवा छोटी बस्ती अथवा छोटी बस्तियों का समूह जिसमें एक समुदाय हो और जो परंपराओं एवं रीति-रिवाजों के अनुसार कार्यों की व्यवस्था कर रहा हो। शर्त यह है कि प्रत्येक गांव में एक ग्राम सभा होगी, जो लोगों की परंपराओं और रीति-रिवाजों, उनकी सांस्कृतिक पहचान, सामुदायिक संसाधनों और विवाद को निपटाने के प्रथागत तरीके को सुरक्षित रखने और संरक्षित करने के लिए सक्षम हो। प्रत्येक पंचायत स्तर पर आरक्षण के ढंग के संबंध में अधिनियम में शर्त है कि अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण सीटों की कुल संख्या से आधी से कम नहीं होगा तथा सभी स्तरों पर पंचायतों को अध्यक्षों की सभी सीटें अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित होंगी। यह भी व्यवस्था की गई है कि राज्य सरकार ऐसी अनुसूचित जनजातियों के संबंध में रखने वाले व्यक्तियों को नामजद करेगी, चूंकि मध्यस्थ स्तर पर पंचायत अथवा जिला स्तर पर पंचायत में कोई प्रतिनिधित्व नहीं है, तथा उस पंचायत में चुने जाने वाले सदस्यों की कुल संख्या दसवें हिस्से से अधिक नहीं होगी।

4.6.1.1.5 अधिनियम के अनुच्छेद 4 में ग्राम सभा/पंचायत के कार्यों; अधिकारों और उत्तरदायित्वों का ब्यौरा दिया गया है। इनको निम्नलिखित तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है :-

(क) **कार्य और उत्तरदायित्व जहां गांव की ग्राम सभा का अनुमोदन अनिवार्य हो :** (i) सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए योजनाओं, कार्यक्रमों और परियोजनाओं का अनुमोदन (इन्हें कार्यान्वयन हेतु अपनाने से पूर्व) (ii) निर्धनता-विरोधी/अन्य कार्यक्रमों के अंतर्गत लाभार्थियों की पहचान/चयन (iii) पंचायतों को निधियों के उपयोग का प्रमाणपत्र देना।

(ख) **कार्य और उत्तरदायित्व, जिसके लिए ग्राम सभा/उपयुक्त पंचायत के साथ परामर्श करना अनिवार्य है :** (i) विकास परियोजनाओं के लिए भूमि का अधिग्रहण, (ii) विस्थापित व्यक्तियों का पुनर्स्थापन/पुनर्वास।

(ग) **वे कार्य, जहां ग्राम सभा/पंचायत की पूर्व सिफारिश आवश्यक हो :** (i) लघु खनिजों के लिए पूर्वेक्षण लाइसेंस एवं खनन पट्टा देना; (ii) नीलामी द्वारा लघु खनिजों के दोहन के लिए रियायत देना।

4.6.1.1.6 यह अधिनियम राज्य सरकार को भी निदेश देता है कि अनुसूचित क्षेत्रों में पंचायतों को अधिकार और प्राधिकार प्रदान करते समय, चूंकि उन्हें स्व-शासन की संस्थाओं के रूप में स्थापित करने के लिए आवश्यक हो सकता है, राज्य सरकार यह सुनिश्चित करे कि ग्राम सभा और संबंधित पंचायतों को विशिष्ट अधिकार, निषेध प्रवर्तन लघु वनोत्पादों का स्वामित्व, भूमि अन्य संक्रामण की रोकथाम, गांव बाजारों का प्रबंधन, धन उधार लेना आदि के संबंध में विशिष्ट अधिकार दिए जाएं। यह अधिनियम ग्राम सभा को स्थानीय क्षेत्र की आयोजना के संबंध में संस्थाओं और अधिकारियों पर नियंत्रण रखने का अधिकार भी देता है।

4.6.1.1.7 पंचायतों से संबंधित ऐसे किसी कानून का प्रावधान, जो पीईएसए के अनुरूप हो, उसके कानून बनने के एक वर्ष बाद समाप्त हो जाएगा।

4.6.1.1.8 इस कानून का अनुच्छेद 4(ढ) इस दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है कि इसमें एक विशिष्ट धारा है कि अनुसूचित क्षेत्रों में उच्च स्तर की पंचायतें अपनी शक्ति और अधिकार का प्रयोग करके किसी भी सूरत में ग्राम सभा को हाशिए पर खड़ा न करें। इस संबंध में राज्यों को बहुत ही कठोर नीति निदेश दिए गए हैं।

4.6.1.2 पीईएसए और संघ/राज्य कानून

4.6.1.2.1 उपर्युक्त सभी नौ राज्यों ने अपने-अपने पंचायती राज अधिनियमों में पीईएसए की आवश्यकताओं के अनुरूप संशोधन कर दिए हैं। तथापि, विषय संबंधी कानूनों और नियमों, जिन्हें पीईएसए के उपबंधों के अनुसार उपयुक्त रूप से संशोधित करने की आवश्यकता नहीं है, के संबंध में अभी काफी कुछ किया जाना है। तकनीकी तौर पर पीईएसए को खंड 5 के अंतर्गत ऐसे सभी कानून 12 दिसम्बर, 1997 से स्वतः ही अवैध हो गए हैं। लेकिन, व्यवहार में इन कानूनों का पालन अभी भी राज्य की सरकारी मशीनरी द्वारा किया जा रहा है। इसी प्रकार, बहुत सारे संघ कानून ऐसे हैं जिन्हें पीईएसए के प्रावधानों के साथ सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता है। केन्द्रीय मंत्रालयों/विभागों की कई नीतियों और कार्यक्रमों के लिए उपयुक्त संशोधन करना अपेक्षित होगा।

4.6.1.2.2 पीईएसए को संवैधानिक वैधता अनुच्छेद 243ड (4)(ख) और पांचवीं अनुसूची से प्राप्त हुई है। इस अनुसूची में जनजातियों के शोषण को थामने तथा अनुसूचित क्षेत्रों में शांति और अच्छा प्रशासन मुहैया कराने के लिए समर्थ संरचना की व्यवस्था की गई है। पीईएसए चूंकि संघ का विधान और पांचवीं अनुसूची का तर्कसंगत विस्तार है, इसलिए यह देखना संघ सरकार का कार्य है कि प्रावधानों का सख्ती से पालन हो रहा है या नहीं। पीईएसए के प्रावधानों के कार्यान्वयन में यदि कोई राज्य अनिच्छा जाहिर करता है तो संविधान की पांचवीं अनुसूची के परंतुक 3 के भाग "क" के अंतर्गत भारत सरकार द्वारा विशिष्ट दिशानिर्देश जारी किए जा सकते हैं।

4.6.1.2.3 सिफारिशें :

(क) संघ और राज्य कानून विधान, जो पीईएसए के प्रावधानों पर प्रभाव डालते हैं, को तत्काल आशोधित किया जाए ताकि उन्हें इस अधिनियम के अनुरूप ढ़ाला जा सके।

(ख) यदि कोई राज्य पीईएसए के प्रावधानों के कार्यान्वयन में अनिच्छा जाहिर करता है तो भारत सरकार संविधान की पांचवीं अनुसूची के परंतुक 3 के भाग "क" के अधीन इसे दिए गए अधिकारों के अनुसार विशिष्ट दिशानिर्देश जारी करने पर विचार कर सकती है।

4.6.1.3 पीईएसए और सरकारी/केंद्र-प्रायोजित स्कीमों की विशिष्ट नीतियां

4.6.1.3.1 ऐसी बहुत सारी केंद्र-प्रायोजित स्कीमें हैं जो पीईएसए के अनुकूल नहीं हैं, उदाहरणार्थ बंजर भूमि, जल संसाधन और खनिजों की निष्कर्षण संबंधी नीति। जैसी कि व्याख्या की गई है और कार्यान्वयन किया गया है, इन नीतियों से कई अवसरों पर जनजातीय लोगों और प्रशासन के बीच झड़पें बढ़ी हैं। इसी प्रकार, राष्ट्रीय पुनर्स्थापन और पुनर्वास नीति परियोजना प्रभावित व्यक्तियों, 2003, राष्ट्रीय जल नीति, 2002, राष्ट्रीय खनिज नीति, 2003, राष्ट्रीय वन नीति, 1988, वन्य जीवन संरक्षण नीति, 2002 और राष्ट्रीय प्रारूप पर्यावरण नीति, 2004 के लिए भी पीईएसए के प्रावधानों का अनुपालन सुनिश्चित करने की दृष्टि से विस्तृत जांच करनी अपेक्षित होगी।

4.6.1.4 पीईएसए का प्रभावी कार्यान्वयन

4.6.1.4.1 पीईएसए विगत सात वर्षों से अस्तित्व में है, लेकिन इसके कार्यान्वयन के प्रति राज्यों की प्रतिक्रिया प्रायः धीमी रही है। राज्यों ने अपने पंचायती राज अधिनियमों में भारी परिवर्तन नहीं किए हैं।

इन क्षेत्रों में मुखर नेतृत्व न होने की वजह से अन्य मुद्दों की अनुपालना कमजोर रही है। पांचवीं अनुसूची के अंतर्गत भाग क(3) में संबंधित राज्यों के राज्यपालों को विशेष अधिकार सौंपे गए हैं। उन्हें अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में राष्ट्रपति को अपनी वार्षिक रिपोर्ट भेजनी होती है। इस रिपोर्ट का विश्लेषण संघ सरकार द्वारा किया जाएगा और यदि आवश्यक हो तो संघ सरकार के पास अधिकार हैं कि वे राज्यों को दिशानिर्देश जारी करें। वस्तुतः इस प्रावधान के अंतर्गत केन्द्रीय सरकार को दी गई शक्तियों के धारित क्षेत्र की अनुच्छेद 256 के अंतर्गत प्रदत्त शक्तियों से तुलना किए जाने की आवश्यकता है। किन्तु ऐसा कोई अवसर नहीं आया जबकि इस खंड के अंतर्गत केन्द्र सरकार ने कभी किसी राज्य सरकार को निर्देश जारी किए हों।

आयोग का विचार है कि जैसाकि संविधान के भाग क (3) की अनुसूची में यथाविहित है, राज्यपालों से मिलने वाली नियमित वार्षिक रिपोर्टों को उचित महत्ता दी जानी चाहिए।

4.6.1.4.2 यद्यपि आदिवासी क्षेत्रों में, समाज और अर्थव्यवस्था महिलाओं के इर्द-गिर्द ही रची-वसी होती हैं किन्तु ग्रामीण परिषदों/ग्राम सभा स्तर पर उनकी भागीदारी बहुत कम है। इस संबंध में उनकी हैसियत बढ़ाने की दिशा में विशेष प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। पीईएसए नियमों तथा दिशानिर्देशों में उपयुक्त प्रावधान करने और यह बाध्यकारी प्रावधान करने की आवश्यकता है कि ग्राम सभा बैठक का कोई भी कोरम तभी स्वीकार्य होगा जबकि उसके कुल मौजूद सदस्यों में कम से कम 33 प्रतिशत महिला सदस्य हों।

4.6.1.4.3 इस नियम का कारगर ढंग से अनुपालन करने के लिए तथा जनजातियों के अधिकारों को संरक्षण देने के लिए निचले स्तर के प्रशासन को सचेत होना चाहिए। बौद्धिक स्तर में वृद्धि और कार्य कुशलता उन्नयन संबंधी दोनों ही दृष्टिकोण से स्थानीय प्रशासन को सुदृढ़ बनाने के लिए विशेष प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। इनमें से एक उपाय यह भी हो सकता है कि प्रत्येक राज्य में एक ऐसे दल का गठन किया जाए जो पांचवीं अनुसूची के क्षेत्रों के प्रशासन तंत्र को मजबूत बना सके। यह दल कुछ महत्वपूर्ण प्रशासनिक मुद्दों पर विचार कर सकता है जैसेकि, पांचवीं अनुसूची के क्षेत्रों के कर्मचारियों के लिए एक अलग संवर्ग बनाना, कठिनाईपरक वेतन/भत्ते और अन्य प्रोत्साहनों के लिए प्रावधान करना, आवासीय और शिक्षा के मामले में विशेष वरीयता देना, आदि और राज्य सरकार को उपयुक्त सिफारिश देना। इस कार्य के महत्व को देखते हुए, संविधान के अनुच्छेद 275 के अंतर्गत केन्द्र सरकार द्वारा इस प्रयोजन के लिए धनराशि उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

4.6.1.4.4 सिफारिशें :

(क) जैसाकि संविधान की पांचवीं अनुसूची, भाग क(3) में निर्दिष्ट है, प्रत्येक राज्य के राज्यपाल से प्राप्त होने वाली नियमित वार्षिक रिपोर्टों को यथोचित महत्व दिया जाना चाहिए। ऐसी रिपोर्टों को तत्काल प्रकाशित करके जनता के समक्ष लाया जाना चाहिए।

(ख) यह सुनिश्चित करने के लिए कि ग्राम सभा की बैठकों में महिलाओं को हाशिए पर न रखा जाए, पीईएसए नियमों और दिशानिर्देशों में यह प्रावधान किया जाए कि ग्राम सभा की बैठक का कोरम तभी माना जाएगा जब उपस्थित सदस्यों में कम से कम तैंतीस प्रतिशत संख्या महिलाओं की हों।

(ग) प्रत्येक राज्य को एक ऐसे दल का गठन करना चाहिए जो पांचवीं अनुसूची क्षेत्र के प्रशासन तंत्र को सुदृढ़ कर सके। इस दल को निम्नलिखित मुद्दों पर विचार करने की आवश्यकता है — (i) विशेष प्रशासनिक व्यवसाएं, (ii) कठिनाईपरक वेतन का प्रावधान, (iii) अन्य प्रोत्साहन और आवासीय तथा शिक्षा के मामले में वरीयता देना। इस बारे में होने वाले सभी खर्च को संविधान के अनुच्छेद 275 के अंतर्गत हुआ व्यय माना जाना चाहिए।

4.6.1.5 जनजातीय उप-योजना (टीएसपी) का प्रभावी कार्यान्वयन

4.6.1.5.1 प्रधान मंत्री ने दिनांक 27.6.2005 को हुई राष्ट्रीय विकास परिषद की 51वीं बैठक को संबोधित करते हुए कहा था कि जनजातीय उप-योजना को न तो और किसी दिशा में मोड़ा जाना चाहिए और न ही इसे अनिश्चितकालीन बनाया जाना चाहिए। इसका स्पष्ट उद्देश्य यह होना चाहिए कि इससे जनजातियों के सामाजिक और आर्थिक विकास में जो कमी रह गई है उसको 10 वर्ष की अवधि के भीतर पूरा किया जा सके। पंचायती राज मंत्रालय द्वारा श्री वी. रामचन्द्रन की अध्यक्षता में गठित किए गए विकेन्द्रीकृत आयोजना संबंधी विशेषज्ञ दल ने इस समस्या का अध्ययन किया है और निम्नलिखित के बारे में कई सुझाव दिया है —(i) राज्यों में सामाजिक न्याय के लिए स्थायी समिति की भूमिका, (ii) ऐसी समितियों में गैर-सरकारी संगठनों का सहयोजन, (iii) पंचायतों को कार्यान्वयन की जिम्मेदारी सौंपा जाना, (iv) प्रभाव संबंधी आकलन, और (v) जनजातीय उप-योजना को केन्द्रीय समर्थन हेतु मानदंड।

4.6.1.5.2 आयोग का यह विचार है कि पिछले कई वर्षों से जनजातीय उप-योजना राज्य की

योजना संबंधी कामकाज का एक नियमित हिस्सा बनी रही है, अतः इसको एक सांस्कृतिक तौर-तरीके से कार्यान्वित किया गया है और इसे राज्य बजट का एक विशेष हिस्सा माना गया है। खराब आयोजना के साथ-साथ कमजोर कार्यान्वयन के परिणामस्वरूप कामकाज कोई उत्साहवर्धक नहीं रहा है। तकनीकी और बौद्धिक दृष्टि से योग्य कर्मचारी, जो कि विकास प्रक्रिया के आधारस्तम्भ होते हैं, ऐसे क्षेत्रों में काम करने के प्रति अनिच्छुक होते है। जहां तक सरकारी कर्मचारियों की बात है, इस क्षेत्रों में उनकी तैनाती होना एक प्रकार से दंड माना जाता है। स्थिति इस कारण से और भी गंभीर हो जाती है कि हमारे पास इससे संबंधित आंकड़ों का अभाव है क्योंकि विगत में प्रभाव संबंधी आकलन के लिए कोई प्रयास नहीं नहीं किया गया है। अतः लोगों को ऐसे उग्रवाद का भी सामना करना पड़ रहा है, जो इन राज्यों में बड़े पैमाने पर व्याप्त है। अतः आयोग यह महसूस करता है कि राज्य सरकारों के साथ-साथ केन्द्र सरकार को भी निम्नलिखित के बारे में विशेष कदम उठाने चाहिए यथा (i) राज्यों में अनुसूचित क्षेत्रों के लिए एक विशेष योजना एकक तैयार करना, (ii) उप-योजनाओं के लिए विशेष वित्तीय प्रावधान करना, (iii) सरकारी कर्मचारियों को प्रोत्साहन ओर उनका क्षमता संवर्धन, (iv) पिछली योजनाओं का प्रभाव संबंधी मूल्यांकन, और (v) चालू कार्यक्रमों की प्रभावी मानीटरिंग/सामाजिक लेखापरीक्षा।

4.6.1.5.3 सिफारिशें :

(क) पीछे किए गए उपर्युक्त प्रयासों को देखते हुए राज्य सरकारों को अपनी जनजातीय उप-योजनाओं को तैयार करने के लिए विशेष योजना एकक (जिसमें व्यावसायिक और तकनीकी दृष्टि से योग्य कर्मचारी हों) बनाना चाहिए।

(ख) जनजातीय उप-योजनाओं के कुछ हिस्से को पूर्वोत्तर राज्यों के लिए तैयार किए गए संसाधनों के केंद्रीय अव्यपगत पूल की तर्ज पर अव्यपगत बनाया जाना चाहिए। इस कोष से किए जाने वाले व्यय की मानीटरिंग करने के लिए जनजातीय मंत्रालय में एक विशेष प्रकोष्ठ बनाया जाना चाहिए।

(ग) पीईएसए के अंतर्गत आने वाले राज्यों के मामले में हर साल एक प्रभाव संबंधी मूल्यांकन रिपोर्ट तैयार करने पर सरकार को विचार करना चाहिए। यह कार्य ऐसे किसी राष्ट्रीय स्तर

की संस्था को सौंपा जाना चाहिए, जिसने विगत में ऐसा कार्य किया हो जैसाकि नेशनल कौंसिल फार एप्लाइड इकोनामिक रिसर्च (एनसीएईआर), नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक फाइनेंस एंड पॉलिसी (एनआईपीएफपी), नेशनल सैम्पल सर्वे आर्गेनाइजेशन (एनएसएसओ) या इसी प्रकार की कोई अन्य उपयुक्त एजेंसी। यह एजेंसी पूर्व निर्धारित सूचकांकों के आधार पर राज्यों के कामकाज का आकलन करेगी।

4.6.2 छठी अनुसूची वाले क्षेत्रों में स्थानीय शासन

4.6.2.1 संविधान के छठी अनुसूची वाले क्षेत्रों में स्थानीय शासन की संरचना विरोध संकल्प और राज्य/जिला प्रशासन संबंधी रिपोर्टों के एक भाग के रूप में शामिल की जाएगी।

शहरी अधिशासन

5

5.1. शहरीकरण और वृद्धि

5.1.1. शहरीकण में प्रवृत्ति

5.1.1.1. शहरी अधिशासन एक जटिल मुद्दा है, जो हमारे देश में आज के जन-प्रबधन में गंभीर चुनौती प्रस्तुत करता है। भारत के महानगरीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की दैनिक जीवनचर्या अव्यवस्थित और दुखदायी हो सकती है, खराब शहरी आयोजना के दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम हो सकते हैं। चरमराती अवसंरचनात्मक और अप्रभावी अधिशासन व्यवस्था हो सकती है। छोटे नगरों में, ग्रामीण और शहरी भारत के संयोजन क्षेत्र की स्थिति प्रायः बदतर होती है, अपर्याप्त सुविधाएं होती है, कोई शहरी पहचान नहीं होती तथा मूलभूत शहरी सेवाओं का विकास करने एवं उन्हें कायम रखने के लिए मानवीय एवं वित्तीय दोनों ही प्रकार के संसाधन सीमित होते हैं।

5.1.1.2. यूएनएफपीए की विश्व जनसंख्या की स्थिति 2007 के अनुसार :

> *".........2008 में विश्व एक अदृश्य लेकिन स्मरणीय मानदंड तक पहुंच जाएगा। इतिहास में पहली बार विश्व की आधी से अधिक जनसंख्या अर्थात 3.3 विलियन लोग शहरी क्षेत्रों में रह रहे होंगे और 2030 तक इनकी संख्या 5 विलियन तक पहुंच जाने की संभावना है। बहुत सारे नए शहरी गरीब होंगे। उनका भविष्य विकासशील देशों के शहरों का भविष्य स्वयं मानवता का भविष्य भी इनके विकास हेतु की जा रही तैयारी के संबंध में अब लिए गए निर्णयों पर अत्यन्त निर्भर करता है।"*

मानव अस्तित्व की शुरूआत से लेकर अब तक संपूर्ण विश्व के ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों की संख्या शहरों में रह रहे लोगों की संख्या से अधिक थी। जैसा कि ऊपर बताया गया है, वर्ष 2008 के अंत तक उम्मीद है कि स्थिति उलट जाएगी। इस भारी जनसांख्यिकीय परिवर्तन की मांग है कि नई प्रणालियाँ विकसित एवं कार्यान्वित की जाएं तथा लोगों एवं समुदायों की जीवन-शैली की प्राथमिकताओं एवं आकस्मिक बदलावों को पुनः परिभाषित किया जाए। नीति-निर्माताओं को यह दृष्टान्तीय परिवर्तन स्वीकार करना चाहिए तथा इसके लिए योजना बनाना चाहिए।

5.1.2. शहरीकरण और आर्थिक वृद्धि

5.1.2.1. शहरीकरण और आर्थिक विकास में गहरा सकारात्मक सह-संबंध है, जिसका पता इस बात से चलता है कि प्रति व्यक्ति उच्च आय वाले देश में शहरीकरणों की संभाव्यता अधिक होती है। तथापि, कुछ सबसे बड़े शहरी समूह अधिक गरीब देशों में हैं और ऐसा मुख्यतः इसलिए है कि इन देशों में जनसंख्या घनत्व बढ़ता जा रहा है और उनकी ग्रामीण अर्थव्यवस्था ग्रामीणों को शहरों की ओर कूच करने से रोकने में सक्षम है।

सारणी 5.1. विकास समूह द्वारा विश्व की कुल, शहरी और ग्रामीण जनसंख्या का वितरण : 1950-2030[45]

	विश्व जनसंख्या की प्रतिशतता			
विकास समूह	1950	1975	2000	2030
कुल जनसंख्या				
अधिक विकसित क्षेत्र	32.3	25.7	19.7	15.3
कम विकसित क्षेत्र	67.7	74.3	80.3	84.7
शहरी जनसंख्या				
अधिक विकसित क्षेत्र	58.2	46.4	30.9	20.5
कम विकसित क्षेत्र	41.8	53.6	69.1	79.5
ग्रामीण जनसंख्या				
अधिक विकसित क्षेत्र	21.6	13.5	9.7	7.1
कम विकसित क्षेत्र	78.4	86.5	90.3	92.9

5.1.2.2. शहरी क्षेत्रों से मिलने वाले आर्थिक लाभ बहुत सारे होते हैं। सामान्यतः औद्योगिक, वाणिज्यिक और सेवा क्षेत्र शहरी क्षेत्रों में और इसके आस-पास ही अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं। ये क्षेत्र एक ओर अधिक मात्रा में सामग्री, श्रम, अवसंरचना और सेवाओं से संबंधित आराम मुहैया कराते हैं तो दूसरी ओर उपभोक्ताओं के रूप में बाजार भी उपलब्ध कराते हैं।

5.1.2.3. जैसे-जैसे भारत विकसित राज्य बनने की ओर अग्रसर होगा, वैसे-वैसे हमारे सकल घरेलू उत्पाद में शहरोन्मुखी क्षेत्रों में उद्योग और सेवाओं का हिस्सा भी बढ़ेगा। हमारे सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का अब केवल पाँचवां हिस्सा है और इसका हिस्सा कम होता जा रहा है। अतः यह आवश्यक है

45 स्रोत : संयुक्त राष्ट्र विश्व शहरीकरण संभावनाएं, वर्ष 2003 का संशोधन

कि भारतीय नीति-निर्माता कृषि और ग्रामीण विकास की सहायता करने की अत्यावश्यकता पर से भी ध्यान हटाए बिना शहरी विकास, आयोजना और पूर्वोपायों पर भी ध्यान केन्द्रित करें।

5.1.3. भारत में शहरी विकास

5.1.3.1. भारत की जनसंख्या 1951 और 2001 के बीच 2.8 गुना बढ़ी है अर्थात 361 मिलियन से बढ़कर 1027 मिलियन हो गई है जबकि शहरी जनसंख्या में 4.6 गुना वृद्धि हुई है अर्थात यह 62 मिलियन से बढ़कर 285 मिलियन हो गई है। भारत में शहरीकरण की गति विश्व के अन्य देशों की गति की तुलना में धीमी रही है। संयुक्त राष्ट्र के अनुमानों के अनुसार, वर्ष 1950 में विश्व में शहरीकरण की मात्रा करीब 30 प्रतिशत थी, जो बढ़कर वर्ष 2000 में 47 प्रतिशत हो गई। भारत में वर्ष 1951 में इसकी वृद्धि-दर 17.3 प्रतिशत थी जो बढ़कर वर्ष 2001 में 27.8 प्रतिशत हो गई। चीन और इण्डोनेशिया जहाँ 1950[46] में शहरीकरण का स्तर बहुत ही कम था वहाँ की शहरी जनसंख्या के स्तर ने अब क्रमशः 32.1 और 40.9 प्रतिशत के साथ भारत को पछाड़ दिया है। 1990 के दशक में लगभग 68 मिलियन नए शहरी भारतीय थे। यह वृद्धि सम्पूर्ण थाईलैण्ड की जनसंख्या से अधिक थी। भारत की मौजूदा शहरी जनसंख्या विश्व के तीसरे सबसे बड़े देश अमरीका की जनसंख्या से अधिक हो गई है। आशा है वर्ष 2050 तक भारत की आधी से अधिक जनसंख्या शहरों में रहने वाली होगी।

5.1.3.2. शहरी केन्द्रों की संख्या और शहरी जनसंख्या की प्रतिशतता में वृद्धि को दर्शाते हुए भारत की शहरी जनसंख्या की वृद्धि सारणी 5.2 में की गई है।

सारणी 5.2. भारत : शहरी बस्तियों (यू.एल) और नगरों की संख्या और जनसंख्या (मिलियन में) (1901-2001)

जनगणना वर्ष	शहरी बस्तियों/ नगरों की संख्या	कुल जनसंख्या	शहरी जनसंख्या	कुल जनसंख्या की प्रतिशतता के रूप में शहरी जनसंख्या
1901	1,830	238,396,327	25,851,873	10.8
1911	1,815	252,093,390	25,941,633	10.3
1921	1,944	251,321,213	28,086,167	11.2
1931	2,066	278,977,238	33,455,989	12.0
1941	2,253	318,660,580	44,153,297	13.9

46 स्रोत : http://www.censusindia.net/results/cci_3html.

जनगणना वर्ष	शहरी बस्तियों/ नगरों की संख्या	कुल जनसंख्या	शहरी जनसंख्या	कुल जनसंख्या की प्रतिशतता के रूप में शहरी जनसंख्या
1951	2,822	361,088,090	62,443,934	17.3
1961	2,334	439,234,771	78,936,603	18.0
1971	2,567	548,159,652	109,113,977	19.9
1981	3,347	683,329,097	159,462,547	23.3
1991	3,769	846,387,888	217,551,812	25.7
2001	4,378	1,028,610,328	286,119,689	27.8

टिप्पणी : शहरी बस्तियां जो बहुत सारे नगरों और उनकी अधिवृद्धि से बनी हैं, को एक इकाई माना गया है। वर्ष 1981, 1991 और 2001 के कुछ आंकड़ें सामायोजित कर दिए गए हैं।
स्रोतः भारत की जनगणना 2001

5.1.3.3. विश्व के सबसे बड़े महानगरों में से तीन महानगर मुंबई, दिल्ली और कोलकात्ता भारत में हैं। (सूची सारणी 5.3 पर दी गई है)।

सारणी 5.3 : सबसे बड़े महानगर

रैंक	नाम	2005 में जनसंख्या (मिलियन) (पूर्वानुमान)
1.	टोकियो, जापान	35.327
2.	मैक्सिको सिटी, मैक्सिको	19.013
3.	न्यूयार्क, नेवार्क, सं.रा.अ.	18.498
4.	मुम्बई, भारत	18.336
5.	साओं पॉलो, ब्राजील	18.333
6.	दिल्ली, भारत	15.334
7.	कोलकात्ता, भारत	14.299
8.	ब्यूनस आयर्स अर्जेन्टाइना	13.349
9.	जकार्ता, इण्डोनेशिया	13.194
10.	शंघाई, चीन	12.665

स्रोतः http://www.un.org/esa/population/publications/wup2003/WUP2003report.pdf

5.1.3.4. दिलचस्प बात यह है कि पहले दस महानगरों की सूची में भारत के तीनों महानगरों में से कोई भी वर्ष 1975 तक की सूची में नहीं था। उस वर्ष भी मुंबई का विश्व सूची में केवल 15वाँ स्थान था, लेकिन वर्ष 1985 में 8वाँ हो गया था तथा आशा है कि वर्ष 2010 में इसका टोकियो के बाद दूसरा स्थान हो जाएगा। 1975 में दिल्ली का 25वाँ स्थान था और अब छठा स्थान है।[47] अन्य बड़े शहरों में भी काफी वृद्धि हुई हैं बंगलूरु (पहले बंगलौर) की जनसंख्या वर्ष 1901 में 0.17 मिलियन थी, जो बढ़कर 1951 में 0.80 मिलियन तथा वर्ष 1981 में 2.94 मिलियन और वर्ष 2001 में और तेजी से बढ़कर 5.68 मिलियन हो गई। इस प्रकार, भारत में शहरी संरचना के शीर्ष पर विशालकाय, जटिल नगरीय बस्तियाँ कोलकात्ता, मुम्बई, दिल्ली, चेन्नई और अब बंगलूर और हैदराबाद हैं। ये विश्व के 50 सबसे बड़े महानगरों में आते है। भारत के लिए इन बड़े शहरों तथा उन शहरों को जो उस समूह में आने वाले हैं, को विशेष प्रयासों द्वारा संगठित और व्यवस्थित करना अत्यंत आवश्यक होगा।

बॉक्स 5.1 : शहरी विकास का वृद्धि पथ

भारत की शहरी वृद्धि पथ चीन के वृद्धि पथ के एकदम विपरीत है। यहाँ शहरी आबादी 1949 और 1978 के बीच एकदम नियत्रित थी और शहरी जीवन अल्पसंख्याओं का विशेषाधिकार था। तथापि, अनुवर्ती आर्थिक नीतियों ने विशेष आर्थिक अंचलों में तेजी से बढ़ते हुए शहरी केन्द्रों में तटीय विस्थापन का पक्ष लिया। वास्तव में विस्थापन प्रतिबन्ध कम कर दिए गए थे तथा शहरों के प्रति सरकारी पक्षपात कम हो गया था, क्योंकि वे चीन की तीव्र आर्थिक वृद्धि के मुख्य साधन थे। अब चीन विश्व का एक विनिर्माण केन्द्र है और प्रायः इसकी सभी फैक्ट्रियाँ शहरों में अथवा शहरों के निकट अवस्थित है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार देश में 660 से अधिक शहर है।

भारत में 1961 से 2001 के बीच शहरी विकास के घटकों का हाल ही में किए गए आंकलन से पता चला है कि उस अवधि में 51 प्रतिशत से लेकर करीब 65 प्रतिशत तक शहरों में स्वाभाविक वृद्धि हुई। लैटिन अमरीका में मौजूदा शहरी विकास का लगभग 65 प्रतिशत विकास स्वाभाविक वृद्धि के फलस्वरूप हुआ, जबकि विशेषकर शहरी क्षेत्रों में उर्वरता दरों में भारी गिरावट आई थी। चीन, जहाँ विस्थापन हाल ही में सर्वाधिक हो गया है, असाधाण है।

स्रोतः यूएनएफपीए-विश्व जनसंख्या की स्थिति, 2007

5.1.3.5. बड़े शहरों की जनसंख्या वृद्धि शहरी भारत की समग्र जनसंख्या वृद्धि की तुलना में अधिक थी, जो वृहत्तर शहरों में संकेन्द्रण की और झुकाव दर्शाती है। एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले शहरों की वृद्धि सारणी 5.4 में दी गई है।

सारणी 5.4 भारत में 1901 से 2001 के बीच एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले शहरों/बस्तियों में शहरी जनसंख्या की वृद्धि

जनगणना वर्ष	संख्या	जनसंख्या (मिलियन में)	एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले शहर (मिलियन में)	शहरी जनसंख्या की प्रतिशतता
1901	1	1.51	1.51	5.84
1911	2	2.76	1.38	10.65

47 सारणी 5.3 और संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक/सामाजिक कार्य विभाग/जनसंख्या प्रभाग पर आधारितः विश्व शहरीकरण संभावना पर 2003 में किया गया संशोधन।

जनगणना वर्ष	संख्या	जनसंख्या (मिलियन में)	एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले शहर (मिलियन में)	शहरी जनसंख्या की प्रतिशतता
1921	2	3.13	1.56	11.14
1931	2	3.41	1.70	10.18
1941	2	5.31	2.65	12.23
1951	5	11.75	2.35	18.81
1961	7	18.10	2.58	22.93
1971	9	27.83	3.09	25.51
1981	12	42.12	3.51	26.41
1991	23	70.66	3.07	32.54
2001	35	107.88	3.08	38.60

स्रोतः भारत की जनगणना 2001

हालांकि वृहत्तम महानगर विशाल क्षेत्र में फैल गए हैं फिर भी राज्य की कई राजधानियों सहित द्वितीय स्तर के शहरों ने विकास का वह चरण प्राप्त कर लिया है जहाँ से वे बहुत पीछे नहीं हैं। लोगों का ग्रामीण क्षेत्रों से आगमन और घने शहरी केन्द्र से स्थान्तरण दोनों रूपों में मौजूद नगर के समीप नए शहरी क्षेत्रों की स्थापना के परिणामस्वरूप निरन्तर और शहरी क्षेत्र बने जिनसे बस्तियों का सृजन हुआ, जिन्हें परिभाषित करना मुश्किल है। भारत में बहिवर्ती क्षेत्रों को शहर के एक हिस्से के रूप में अधिसूचित करके शहर के आकार को पर्याप्त रूप के बढ़ाया जा सकता है। यहाँ एक मिलियन से अधिक आबादी वाले 27 सांविधिक शहर हैं, जिनमें 73 मिलियन लोग हैं। 35 शहरी बस्तियाँ हैं और इनमें से प्रत्येक बस्ती में एक मिलियन से अधिक जनसंख्या है। इस प्रकार इनमें 108 मिलियन लोग हैं, जो यह दर्शाते हैं कि 35 मिलियन लोग नगरों और मुख्य शहरों से बाहर थे लेकिन सटे हुए आसपास के शहरी क्षेत्रों में रह रहे हैं।

5.1.3.6. शहरी भारत में विरोधाभासों में से एक विरोधाभास निजी सम्पदा और अवसंरचना के अभाव के बीच स्पष्ट असमानता है। उपभोक्तावाद तेजी से बढ़ रहा है, अर्थव्यवस्था में वृद्धि हो रही है तथा भूमि की कीमतें बढ़ रही हैं, फिर भी स्थानीय और राज्य स्तर की सरकारें बढ़ती हुई जनसंख्या और अभिलाषा के

साथ गति कायम नहीं रख पा रही हैं। अवसंरचना तैयार करने के लिए संसाधन जुटाने हेतु शहरी जनसंख्या को बढ़ाने में समर्थ नहीं हैं। परिणामस्वरूप शहर का सपना जो भारी संख्या में लोगों को शहरों की ओर आकर्षित करता है दुस्वप्न बनता जा रहा है।

5.1.3.7. राष्ट्रीय शहरीकरण आयोग (एन.सी.यू.) ने वर्ष 1988 में अपनी चिन्ता इस प्रकार व्यक्त की थी कि,"

(1) वर्ष 1981 में, शहरी क्षेत्रों में 160 मिलियन लोग रह रहे थे, वर्ष 2001 तक इनकी संख्या बढ़कर 350 मिलियन हो जाएगी। ये लोग कहाँ जाएंगे वे अपनी जीविका किस प्रकार अर्जित करेंगे वे किस प्रकार घर में रहेंगे? क्या हम वास्तव में लोगों के इतने बड़े समूह को बुनियादी सुविधाएँ दे सकते हैं?

(2) हमारे शहरी क्षेत्र विशेषकर महानगर गंभीर संकट में हैं। हमारी आयोजना प्रक्रिया तात्विक रूप से दोषपूर्ण साबित हो चुकी है। शहरों में आबादी अत्यधिक है। शहरी भूमि अत्यन्त कम पड़ गई है। सेवाएँ चरमरा रही हैं, शहर का प्रबन्धन प्रायः अप्रभावी होता है मानव की दुर्दशा इतनी अधिक हो गई है कि विश्वास ही नहीं होता। हम किस प्रकार यह महसूस कर सकते हैं कि हमने एक राष्ट्र के रूप में प्रगति की है, जबकि केवल बीस वर्षों में हमारा लगभग प्रत्येक बड़ा शहर वास्तविक रूप से गंदी बस्तियों में परिवर्तित हो गया है।

(3) जिस प्रकार भौतिक अवंसरचना नष्ट और प्रशासनिक प्रणालियाँ विफल हो गई है, उसी प्रकार संसाधन जुटाने की प्रक्रिया भी विफल हो गई है। किसी भी कारण से, शहरी क्षेत्र में संसाधन आबंटन समस्या का पूर्वानुमान लगाने की बजाए उसका अनुकरण करता प्रतीत होता है। इसके आवंटन का निर्धारण स्थिति की विवशता से होता है। यह पुनः उस प्रणाली का प्रमाण है जो गंभीर संकट में है।

बॉक्स 5.2 : शहरी बस्तियाँ

शहरी बस्तियाँ एक ऐसा सतत शहरी फैलाव है, जिससे एक नगर और इससे सटे शहरी अपवृद्धि क्षेत्र अथवा दो या अधिक वास्तविक निकटस्थ नगर तथा ऐसे नगरों में सटे शहरी अपवृद्धि क्षेत्र बनते हैं। रेलवे कालोनियाँ, विश्वविद्यालय कैम्पस, पत्तन क्षेत्र, मिलिट्री कैम्प आदि शहरी अपवृद्धि (आउटग्रोथ) के उदाहरण हैं जो किसी सांविधिक नगर या शहर के समीप विकसित हो सकते हैं, लेकिन ये नगर या शहर के समीपस्थ गाँव या गाँवों की राजस्व सीमा में होने चाहिए। भारत की जनगणना 2001 के लिए निर्णय लिया गया था कि मुख्य नगर या कम से कम शहरी बस्तियों के किसी एक संघटक नगर को आवश्यक रूप से संविधिक नगर होना चाहिए तथा इसके सभी संघटकों की कुल जनसंख्या 20,000 से कम नहीं होना चाहिए। (1991 की जनगणना के अनुसार) इन दो बुनियादी मानदंडों के पूरा होने से निम्नलिखित संभव भिन्न स्थितियां हैं, जिनमें शहरी बस्तियां गठित की जा सकती हैं। (i) एक नगर अथवा शहर जिसमें एक अथवा अधिक अपवृद्धि शामिल हो; (ii) अपनी अपवृद्धि सहित अथवा रहित दो अथवा अधिक समीपस्थ नगर; (iii) अपनी अपवृद्धि के साथ एक नगर और एक अथवा अधिक समीपस्थ शहर, जिनमें से सभी एक निकटस्थ विस्तार निर्मित करते हैं।

भारत की जनगणना, 2001, परिभाषा

(4) हमारे शहरों और नगरों की अकुशलता अप्रचलित, सख्त और असक्षम कानूनों, विनियामक प्रावधानों एवं प्रतिमानकों द्वारा बनी हुई है। शहरी केन्द्र अपना ध्यान विविध कार्यकलापों पर केन्द्रित करके सम्पदा सृजित करने की बजाए पराश्रयी हो गए हैं जो सहायता के लिए कहीं ओर देखते रहते हैं। यह आर्थिक प्रणाली की विकृति है, क्योंकि अगर तार्किक दृष्टि से देखा जाए तो शहरी बाजारों को ही ग्रामीण क्षेत्रों में खुशहाली का मार्ग प्रशस्त करना चाहिए। परन्तु शहर दावा करते हैं कि वे अपने अनुरक्षण के लिए भी भुगतान नहीं कर सकते और निरन्तर आर्थिक सहायता के लिए लालायित रहते हैं। यह हमारी अर्थव्यवस्था के उन मौलिक संबंधों को बुरी तरह बिगाड़ देती हैं जो ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच होने चाहिए।

5.1.3.8. प्रथम राष्ट्रीय शहरीकरण आयोग को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत किए लगभग 20 वर्ष हो गए हैं। इस अवधि के दौरान, शहरी क्षेत्र की महत्ता और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था एवं रोजगार में इसका योगदान कई गुना बढ़ गया हैं, जबकि हमारे शहरों की अवसंरचना और बिगड़ गई है। हालांकि शहरी वृद्धि राष्ट्रीय शहरीकरण आयोग द्वारा प्रत्याशित वृद्धि की तुलना में धीमी रही हैं, फिर भी अभिज्ञात समस्याएँ अब भी वैध है। वास्तव में शहरी समस्याओं की मात्रा और जटिलताएँ बढ़ गई हैं, इसलिए 'शहरी अधिशासन' में तत्काल सुधार लाने की आवश्यकता है। आयोग की राय है कि बड़े सहित तीव्र शहरीकरण हेतु तथा देश में और अधिक सन्तुलित एवं कुशल शहरीकरण के लिए अपेक्षित सम्पूर्ण नीतिगत उपायों के समग्र एवं दीर्घकालिक दृष्टिकोण अपनाने के लिए एक नए राष्ट्रीय शहरीकरण आयोग का गठन किया जाए।

5.1.4. सिफारिश

(क) **सरकार को एक नए राष्ट्रीय शहरीकरण आयोग का गठन करना चाहिए ताकि वह देश में और अधिक संतुलित एवं कुशल शहरीकरण हेतु बड़ें शहरों को मिलाकर तीव्र शहरीकरण के संबंध में उपाय संबंधी सुझाव दे सके।**

5.2. शहरी अधिशासन की संरचना

5.2.1. व्यापक आम दृष्टिकोण

5.2.1.1. नागरिक अधिशासन के लिए अपेक्षित संरचना जटिल होती है। निश्चित तौर पर कोई एक मॉडल नहीं है जो सभी नगरों एवं शहरों के अनुकूल हो तथा वहाँ की भौगोलिक अवस्थिति आकार और

संस्कृति एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में भारी विविधता ला सके तथा कुछ आम मूलभूत संरचनात्मक विशेषताओं को अभिज्ञात करना संभव है जिन्हें स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल उपयुक्त रूप से परिशोधित किया जा सकता है। इस रिपोर्ट में पहले प्रतिपादित किए गए सिद्धान्तों और जो प्रस्तावित सुधार संबंधी उपायों का आधार तैयार करने में उन्हें ध्यान में रखते हुए यह लाभदायक होगा कि अपनी शहरी स्थानीय शासनों की आन्तरिक संरचना तथा बाहरी नगर सहायक संस्थाओं की व्यवस्था हेतु एक व्यापक आम दृष्टिकोण तैयार किया जाए। नगर-विषयक क्षमता को अधिकाधिक करने के उद्देश्य से विभिन्न संगठनों और संस्थाओं के बीच सम्बन्ध होना चाहिए। वास्तव में प्रशासनिक कुशलता लोकतांत्रिक कार्यप्रणाली तथा पारस्परिक उत्तरदायित्व के लिए अपेक्षित है कि श्रेणीबद्ध एवं मैट्रिक्स प्रणाली को मिलाकर एक समीचीन प्रणाली विकसित की जाए।

5.2.1.2. नगर क्षेत्रों के स्थानीय शासन के विभिन्न प्रकारः 74वें संवैधानिक संशोधन में तीन प्रकार के नगर निकायों की व्यवस्था की गई हैः*

1. नगर पंचायत (इसे किसी भी नाम से पुकारा जाए): नगर पंचायतें ऐसे संक्रमण क्षेत्र के लिए होती हैं जो अपने आपको ग्रामीण क्षेत्र से शहरी क्षेत्र में परिवर्तित कर रहे हैं;
2. नगर परिषदः यह 'और कम जनसंख्या वाले शहरी क्षेत्र' के लिए होती हैं, तथा
3. नगर निगमः 'अधिक जनसंख्या वाले शहरी क्षेत्र' के लिए है।

नगरीय स्थानीय शासन के उपर्युक्त वर्गीकरण में कार्यात्मक अधिकार क्षेत्र में विचलन हेतु मान्यता की आवश्यकता तथा सेवा करने के लिए जरूरी जनसंख्या आधारित आवश्यकताएँ अन्तर्निहित है।

5.2.1.3. जनगणना की श्रेणियाँः भारत की जनगणना, 2001 में दो प्रकार के नगर अभिज्ञात किए गए थे, (क) सांविधिक नगरः वे सभी स्थान जहाँ राज्य कानून द्वारा घोषित नगरपालिका, निगम, छावनी बोर्ड अधिसूचित नगर क्षेत्र समिति आदि हों, और (ख) जनगणना वाले नगर : वे स्थान जो निम्नलिखित मापदंडों पर खरे उतरें, (i) कम से कम 5,000 जनसंख्या हो (ii) कम से कम 75 प्रतिशत पुरुष गैर-कृषि क्षेत्रों में लगे हुए हों, और (iii) जनसंख्या का घनत्व कम से कम 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर[48] हो। भारत में श्रेणी-वार नगर केन्द्रों की संख्या सारणी 5.5 में दी गई है।

* शहरी स्थानीय निकाय नगरपालिका निकाय, नगरनिगम परिषद शब्द सामान्य अर्थ में शहरी स्थानीय शासन का प्रयोग रिपोर्ट में अन्तःपरिवर्तनीयता के रूप में किया गया है।

48 भारत की जनगणना, 2001 में अपनाए गए अनुसार नगर/शहर और नगर बस्तियों के संबंध में व्याख्यात्मक टिप्पणी।

सारणी 5.5 : वर्ग/श्रेणी द्वारा शहरी बस्तियाँ/नगरः भारत की जनगणना, 2001

वर्ग	जनसंख्या का आकार	नगर बस्तियों/नगरों की संख्या
वर्ग I	1,00,000 और अधिक	393
वर्ग II	50,000-99,999	401
वर्ग III	20,000-49,999	1,151
वर्ग IV	10,000-19,999	1,344
वर्ग V	5,000-9,999	888
वर्ग VI	5,000 से कम	191
अवर्गीकृत		10
सभी वर्ग		4378[49]

5.2.1.4. संविधान में शहरी स्थानीय निकायों को नगर पंचायत, नगर परिषद और नगर निगम के रूप में श्रेणीबद्ध करने के लिए पैरामीटर निर्धारित नहीं करता है तथा यह प्रत्येक राज्य को यह निर्णय लेने की अनुमति देता हैं, उदाहरणार्थ कि किसी शहरी केन्द्र की शहरी नगर परिषद, शहर नगर परिषद अथवा नगर निगम के रूप में वर्गीकृत करने के लिए क्या मापदण्ड हो। यह सम्पूर्ण राज्यों में श्रेणीकरण का एक समान प्रतिमान तय करने से रोकता है। आयोग इस तथ्य को स्वीकार करता है कि राज्यों में स्थिति भिन्न है तथा यहाँ संरचनाओं और प्रणालियों की व्यापक सीमा है। आयोग श्रेणीकरण की संस्तुति करेगा जो कई कारणों से बहुत ही उपयोगी हो सकती है। प्रथम, इससे स्पष्टता का वह अभाव कम होगा जो सम्पूर्ण राज्यों के शहरी निकायों की प्रकृति को समझने में है। दूसरे, इससे किसी ऐसे संरचित दृष्टिकोण को अंगीकार करने में मदद मिलेगी और अधिक व्यवस्थित राष्ट्रीय नियोजन प्रक्रिया और राष्ट्रीय एवं आयोगों के जरिए निधियों की सुपुर्दगी की ओर ले जाए। तदनुसार, सारणी 5.6 में दिए गए वर्गीकरण का उपयोग इस रिपोर्ट में सुविधा के लिए किया गया है।

49 राष्ट्रीय आपदा के कारण गुजरात राज्य के कतिपय नगरों/शहरों में जनगणना, 2001 नहीं हो सकी।
स्रोत : भारत के महापंजीयक का कार्यालय (भारत की जनगणना-2001 के लिए भारत और राज्य की जनसंख्या का योग)

सारणी 5.6 : शहरी स्थानीय शासनों का अनुशंसित वर्गीकरण

आकार	नामकरण	संख्या
शहरी स्थानीय शासन जिसमें 20,000 तक की जनसंख्या हो	नगर पंचायतें	2433
शहरी स्थानीय शासन जिसमें 20,000 से 1,00,000 तक की जनसंख्या हो	नगर परिषद	1552
शहरी स्थानीय शासन जिसमें 1,00000 से 10,00,000/- तक की जनसंख्या हो	शहर नगर परिषद	366
शहरी स्थानीय शासन, जिसमें 10,00,000 से 50,00,000 तक की जनसंख्या हो	नगर निगम	21
50,00,000 से अधिक जनसंख्या वाला शहरी स्थानीय शासन	महानगर निगम	6

* *इन मानकों को पर्वतीय क्षेत्रों में उपयुक्त रूप से परिशोधित किया जाए।*

5.2.2. प्रस्तावित मूलभूत संरचना - वार्ड समितियाँ और क्षेत्र सभाएं

5.2.2.1 बड़ी नागरिक सहभागिता की आवश्यकता

5.2.2.1.1 आयोग ने सांविधिक और व्यावहारिक रूप से आज मौजूद विभिन्न संरचनाओं की जांच की है। मौजूदा प्रणाली में दो कमियाँ हैं। पहली इसकी बहुत छोटी सी भूमिका यह है कि औसत नागरिक अपनी निजी शासन व्यवस्था में भूमिका निभाता है। दूसरी कमी यह है कि चुनिंदा प्रतिनिधियों के साथ-साथ अधिकारी पर्याप्त रूप से जवाबदेह नहीं होते हैं तथा यह प्रायः दक्षता और पारदर्शिता दोनों को क्षति पहुंचाता है। शहरी अधिशासन के लिए आशोधित संरचना का प्रस्ताव रखते समय इन मुद्दों को ध्यान में रखा जाता है।

5.2.2.1.2 ग्रामीण क्षेत्रों में, ग्राम पंचायत की निकटता और छोटे आकार के कारण नागरिकों की अधिक भागीदारी होती है, जबकि शहरी क्षेत्रों, में विशेषकर बड़े नगरों और शहरों में ऐसी सहभागिता मुश्किल होती है। लोगों की सहभागिता का एक स्तर सृजित करना आवश्यक है, जो शहरी वातावरण में ग्राम पंचायत के समान होगा।

5.2.2.1.3 कर्नाटक के लिए सारणी 5.7 में दिए गए आंकड़ें दर्शाते हैं कि ग्रामीण नागरिक अपने शहरी सहभागियों की तुलना में लोकतांत्रिक रूप से निर्णय लेने में कितना अधिक संलिप्त है :

सारणी 5.7 : राजनीतिक प्रतिनिधित्व अनुपात, 2000

कर्नाटक की ग्रामीण जनसंख्या			कर्नाटक की शहरी जनसंख्या		
स्तर	**इकाइयों की संख्या**	**प्रतिनिधियों की संख्या**	**स्तर**	**इकाइयों की संख्या**	**प्रतिनिधियों की संख्या**
जिला पंचायत	27	890	महानगर निगम	6	410
तालुक पंचायत	176	3,255	शहरी नगरपालिका परिषद	40	1,308
ग्राम पंचायत	5,659	80,023	नगरीय नगरपालिका परिषद	81	1,919
			नगर पंचायत	89	1,373
चुनिंदा प्रतिनिधियों की कुल संख्या		84,168	चुनिंदा प्रतिनिधियों की कुल संख्या		5023
नागरिक : प्रतिनिधित्व अनुपात		380,1	नागरिक, प्रतिनिधित्व अनुपात		3,400:1

स्रोत : जनाग्रह, बैंगलुरू द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट के आधार पर।

5.2.2.1.4. शहरी क्षेत्रों में नागरिकों और उनके द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों के बीच प्रतिनिधित्व अनुपात लगभग दस गुना अधिक है। ग्राम सभा 'ग्राम स्तर पर पंचायत क्षेत्र के भीतर आने वाले गाँव से संबंधित मतदाता सूचियों में पंजीकृत व्यक्तियों से बना एक निकाय' प्रत्येक ग्रामीण नागरिक को स्थानीय मुद्दों में भाग लेने के लिए अवसर प्रदान करता है। इसके विपरीत कुछ राज्यों में शहरी निकायों के लिए प्रस्तावित वार्ड (अथवा वार्डों) का अभी तक गठन नहीं किया गया है और जहाँ ये गठित हो गई हैं वहाँ नामांकन प्रक्रिया नागरिकों का सीमित प्रतिनिधित्व और अस्पष्ट अधिदेश जैसे विभिन्न तथ्यों के संयोजन से बाधित हो गई है। संविधान ने 3 लाख से अधिक जनसंख्या वाले सभी शहरों में ऐसी वार्ड समितियां बनाना अनिवार्य कर दिया है। इसका स्पष्ट अभिप्रायः विकेन्द्रीकृत शासन संरचना सृजित करना है ताकि नागरिकों की भागीदारी सुनिश्चित हो सके तथा स्थानिक तौर पर ही निर्णय लेने में सक्षम बनाया जा सके। कई बड़े शहरों में कई वार्डों (कुछ मामलों में 10 अथवा अधिक) को मिलाकर वार्ड समितियाँ बनाई गई हैं। इस प्रकार कुछ मामलों में वार्ड समिति तीन से पाँच लाख से अधिक लोगों की सेवा करती है।

विकेन्द्रीकृत संरचनाओं का ऐसा असावधानीपूर्वक सृजन संविधान की वास्तविक भावना का साफ तौर पर उल्लंघन है। किसी भी सूरत में ऐसी दिशा को अंगीकार करना अनिवार्य है, जिसमें जनसांख्यिकीय और आवासीय प्रवृत्ति बदल रही है तथा शहरी मामलों में नागरिकों की भागीदारी के प्रति 74वें संशोधन द्वारा उठाए गए कदमों को जारी रखा जा रहा है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु निम्नलिखित संरचना शहरी स्थानीय निकायों के लिए प्रस्तावित है।

5.2.2.1.5. शहरी स्थानीय निकाय शासन का तीन स्तर इस प्रकार होना चाहिए-

(क) नगर परिषद/नगर निगम जिस भी नाम से इसे पुकारा जाए।।

(ख) वार्ड समितियाँ, और

(ग) क्षेत्रीय समितियाँ अथवा सभाएँ।

तथापि इन स्थानीय निकायों के छोटे आकार और कम आबादी को देखते हुए नगर पंचायतों में तीन स्तर रखने की कोई आवश्यकता नहीं होनी चाहिए।

5.2.2.2. क्षेत्र सभाएं

5.2.2.2.1. यद्यपि परिषद और वार्ड स्तरों को साधारणतः सभी जानते हैं, फिर भी प्रस्तावित क्षेत्र सभा को कुछ ब्यौरों की आवश्यकता होती है, विशेषकर इसलिए कि यह शहरी शासन के अन्य दो ऊपरी स्तरों के लिए प्रारंभिक बिन्दु होगा। एक क्षेत्र सभा उन नागरिकों को शामिल करेगी जो एक या अधिक मतदान केंद्रों पर मतदाता हैं, लेकिन अधिमानतः 2500 मतदाताओं को शामिल नहीं कर रहे हैं क्योंकि भारत के निर्वाचन आयोग द्वारा यथानिर्णीत प्रत्येक मतदान केंद्र (बूथ) के लिए निर्वाचक का आकार 1000 से 1200 तक है। क्षेत्र में बच्चों की औसत संख्या को मिलाकर सभी की अधिकतम आबादी 4000 से 5000 निवासियों के बीच हो सकती है। इन मतदान केंद्रों (बूथ) के फुटप्रिन्ट क्षेत्र सभा की सीमाओं को परिभाषित कर सकते हैं।

5.2.2.2.2. क्षेत्रीय सभाओं की भूमिकाः क्षेत्र सभा की भूमिका पर कुछ विचार किए जाने की आवश्यकता है। एक क्षेत्र सभा के कार्य गाँवों में ग्राम सभा के कार्यों के समान होने चाहिए। यह राय बनाने के लिए केवल राजनीतिक रूप से नहीं होना चाहिए चूंकि कुछ उत्तरदायित्व औपचारिक तौर पर इससे सम्बद्ध नहीं है, इसलिए वैसा हो सकता है। सीमित अधिदेशाधीन अपने निजी कल्याण की देखभाल करने वाले अड़ोस-

पड़ोस के लोगों की जरूरतों का भी पता लगाए जाने की आवश्यकता है। ग्राम सभा कई ऐसे कार्य करती है जिनका निष्पादन ग्राम सभा क्षेत्र के भीतर ही किया जाता है। यही दृष्टिकोण क्षेत्र सभा, इसकी शहरी समकक्ष सभा के लिए भी अपनाया जा सकता है। ग्राम सभा वैध होनी चाहिए और इसका औपचारिक स्थान होना चाहिए, जिसको संविधान, संरचना, कार्यों, कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों की दृष्टि से सुस्पष्ट रूप से परिभाषित किए जाने की आवश्यकता होगी।[50] क्षेत्र सभा, ग्राम सभा के समान अर्थात विकासात्मक कार्यकलापों को प्राथमिकता देना और विभिन्न स्कीमों के तहत लाभार्थियों का पता लगाना जैसे कार्यों को निष्पादित करेगी।

5.2.2.2.3. <u>क्षेत्र सभा के सदस्य</u>ः वर्तमान में, अधिकांश राज्यों में वार्ड समिति की सदस्यता नामांकन द्वारा की जाती है। ऐसा आंशिक रूप से नामांकन में ठोस फायदा उठाने के लिए राज्य सरकार के झुकाव के कारण और अंशतः वार्ड के भीतर ही वैध नागरिक प्रतिनिधियों को अभिशक्त करने में आने वाली वास्तविक कठिनाई के कारण है। क्षेत्र सभा के सदस्यों का निर्वाचन जिस प्रणाली से होता है उससे ही इस कठिनाई पर काबू पाया जा सकेगा। ऐसी प्रणाली में मतदान केंद्र निर्वाचन आयोग द्वारा यथापरिभाषित सीमाओं से युक्त, का प्रत्येक पंजीकृत मतदाता उस क्षेत्र सभा का सदस्य होगा। क्षेत्र सभा से प्रत्येक मतदाता को उसको सदस्य होने उसमें शामिल होने और सहभागी होने की यथोचित अनुभूति होगी। प्रत्येक क्षेत्र सभा, पाँच वर्ष में एक बार, एक छोटी प्रतिनिधि समिति का चयन करेगी। यह प्रतिनिधि समिति एक ऐसे व्यक्ति का चयन करेगी जो उस क्षेत्रीय सभा की बैठकों की अध्यक्षता करेगा तथा संगत वार्ड समिति में उस क्षेत्र सभा का प्रतिनिधित्व करेगा। यह क्षेत्र सभा मतदान केंद्र (केंद्रों) के आधार पर सभी नागरिकों को उचित और यथार्थ अवसर और एक समान प्रतिनिधित्व प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त यह स्थानीय नागरिकों की भागीदारी को सरल एवं सुसाध्य बनाएगी। प्रतिनिधि समिति का चुनाव राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा पार्षदों के चुनाव के साथ ही कराया जाना चाहिए तथा इनका कार्यकाल पार्षदों के कार्यकाल के साथ ही समाप्त होना चाहिए।

5.2.2.3. वार्ड समितियाँ

5.2.2.3.1. मौजूदा संवैधानिक स्थिति यह है कि वार्ड समितियों के गठन में 'एक या अधिक वार्ड होने चाहिए और ये तीन लाख अथवा अधिक जनसंख्या वाली नगरपालिकाओं के प्रादेशिक क्षेत्र में ही होने चाहिए। (अनुच्छेद 243ध)। जैसा कि पहले भी बताया गया है कि उन राज्यों में भी जहाँ वार्ड समितियों

50 केंद्रीय शहरी विकास मंत्रालय ने "नगर राज विधेयक, 2006" नामक मॉडल सामुदायिक भागीदारी कानून परिचालित किया है। यह मॉडल विधेयक अधिकार, शक्तियों, कार्यों और कर्त्तव्यों सहित क्षेत्र सभा की विस्तृत संरचना निर्धारित करता है। मॉडल विधेयक में उपर्युक्त संरचना को कानूनी दस्तावेज में अन्तर्निहित करते हुए वार्ड समितियों की संरचना और अधिशासन के संबंध में विस्तृत प्रावधान भी शामिल करता हैं और इसमें क्षेत्र सभा और वार्ड समितियों के गठन, संरचना, कार्य, भूमिका और उत्तरदायित्व के ब्यौरे भी होते हैं।

का गठन किया गया है वहाँ एक अकेली वार्ड समिति में जनसंख्या प्रायः 3 लाख से काफी अधिक हो जाती है। उदाहरणार्थ मुंबई शहर में 227 पार्षद प्रभाग हैं जो 18.3 मिलियन लोगों की सेवा कर रहे हैं। वे 24 वार्ड समितियों में विभाजित हैं। प्रत्येक मौजूद वार्ड अधिकारी के अधिकार क्षेत्र के अनुरूप है तथा केवल वार्ड समितियाँ बनाने की संवैधानिक बाध्यता को पूरा करते हैं। ऐसी प्रत्येक समिति के अधिकार क्षेत्र में 9 अथवा 10 पार्षद प्रभाग हैं जो 7 से 11 लाख लोगों को शामिल कर रहे हैं। इसी प्रकार हैदराबाद में 100 पार्षद प्रभाग के लिए 10 वार्ड समितियाँ हैं तथा प्रत्येक समिति लगभग 4 लाख लोगों की सेवा कर रही है। कई वार्डों/डिवीजनों को मिलाने और एक सामान्य जनसंख्या वाले शहर के लिए निकाय का सृजन करने से वार्ड समिति का मुख्य प्रयोजन ही नष्ट हो जाता है। ऐसी बड़ी वार्ड समितियों में न तो नागरिकों की सहभागिता और न ही स्थानीय स्तर पर निर्णय लेना व्यवहार्य है तथा यह आन्तरिक प्रत्यायोजन में मदद करती हैं। एक बड़ी वार्ड समिति सदस्यता अथवा अध्यक्षता के आवर्तन — 'नष्ट' प्रणाली का सहारा लेने की प्रवृत्ति को बढ़ाती है तथा उनकी जवाबदेही एवं पारदर्शिता को कम करती है।

5.2.2.3.2. मौजूदा प्रणाली जिसमें एक से अधिक वार्डों के लिए एक वार्ड समिति होती हैं तर्कसंगत नहीं है, अतः इसे छोड़ देना चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक वार्ड के लिए एक वार्ड समिति होनी चाहिए और प्रत्येक वार्ड एक स्थानीय राजनीतिक सीमा का प्रभावी ढंग से प्रतिनिधित्व करे। वार्ड पार्षद अथवा कॉरपोरेटर जो वार्ड समिति का अध्यक्ष होगा, का निर्वाचन होना चाहिए। वह निःसंदेह नगर परिषद में वार्ड का प्रतिनिधित्व करेगा। इस प्रकार, कॉरपोरेटर/पार्षद की दो भूमिकाएँ होंगी-नगर परिषद में प्रतिनिधित्व संबंधी भूमिका और वार्ड सभा में कार्यकारी भूमिका। वार्डों में शामिल क्षेत्र सभाओं के अध्यक्ष वार्ड समिति का गठन करेंगे। आयोग का विचार है कि 3 लाख से कम आबादी वाले छोटे नगरों में भी औपचारिक कार्यतंत्र होना जरूरी है, ताकि नागरिकों की भागीदारी तथा वार्ड समितियों के जरिए उन्हें स्थानीय तौर पर निर्णय लेने योग्य बनाया जा सके।

5.2.2.3.3. वार्ड समिति के सदस्यों को क्षेत्र सभाओं के माध्यम से उन नागरिकों के साथ नियमित रूप से बैठकें करनी चाहिए जिनका वे प्रतिनिधित्व करते हैं ताकि उनके कार्यक्रम, उनकी आयोजना और कार्यान्वयन की समीक्षा की जा सके। क्षेत्र सभा के निर्वाचित सदस्यों के साथ समिति की नियमित बैठकें अवश्य होनी चाहिए। समिति को निश्चित ही वैध कार्य और उपयुक्त वित्तीय अन्तरण करने चाहिए। इन्हें विधानमंडल अथवा नगर परिषद द्वारा सौंपे गए सभी संगत कार्य शामिल करने चाहिए। वार्ड समिति के

लिए सुझाए गए कार्यात्मक और वित्तीय सुपुर्दगी इस प्रकार है ('स्थानीय शासनों, हितधारकों और नागरिकों का सशक्तिकरण', राष्ट्रीय सलाहकार परिषद के लिए विवेचना-पत्र, मार्च, 2005 पर आधारित)

(क) गलियों में प्रकाश-व्यवस्था, सफाई व्यवस्था, जलापूर्ति, मल-जल-निकास व्यवस्था, सड़कों का रख-रखाव, विद्यालय भवनों का रख-रखाव, स्थानीय अस्पतालों/औषधालयों, स्थानीय बाजारों, पार्कों, खेल के मैदानों आदि का रख-रखाव जैसे वार्ड स्तर पर किए जा सकने वाले सभी कार्यकलापों को नियत्रित करने हेतु वार्ड समितियों को और अधिकार दिए जाएंगे।

(ख) कर्मचारी वार्ड समिति को सौंपे गए सभी कार्यों के संबंध में कार्य इस समिति के तहत करेंगे तथा समिति के प्रति जवाबदेह होंगे। ऐसे सभी कर्मचारियों का वेतन उनके कार्यनिष्पादन के आधार पर समिति द्वारा प्राधिकृत/अदा किया जाएगा।

(ग) वार्ड समिति को सौंपे गए कार्यों के लिए आवंटित निधि वार्ड समिति को सामूहिक रूप से सौंपी जाएगी।

(घ) आवंटित कार्यों के लिए वार्ड समिति द्वारा स्वीकार किए गए बजट को नगर के समग्र बजट का निरूपण करते समय हिसाब में लिया जाएगा।

(ङ.) वार्ड समितियों की बैठकों का व्यापक रूप से प्रचार किया जाएगा ताकि उनमें वार्ड के निवासियों की अधिक से अधिक उपस्थिति और भागीदारी सुनिश्चित हो सके।

(च) इलाके की आर्थिक रुपरेखा के आधार पर वार्ड के एकत्रित सम्पत्ति कर का एक हिस्सा वार्ड समितियों को दिया जाना चाहिए।

(छ) वार्ड समिति किसी अन्य स्त्रोत से भी धन प्राप्त कर सकती है।

5.2.2.3.4. <u>अनिवासी हितधारक</u> : हालांकि प्रस्तावित संरचना निवासियों की सहभागिता के लिए मुहैया कराई जाएगी, फिर भी यह मान्यता बढ़ रही है कि शहरी क्षेत्रों में केवल अकेला मतदाता ही नहीं है, जिसे शामिल होने की आवश्यकता है, बल्कि कारोबारियों जैसे निवासी हितधारकों के शामिल होने की भी आवश्यकता है। यह एक अनोखी शहरी समस्या है, चूंकि ग्रामीण इलाकों में निवास और कार्य स्थल प्रायः एक ही होता है। शहरी क्षेत्रों में पॉकेट होते हैं, जो प्रमुख रूप से वाणिज्यिक होते हैं इन अनिवासी हितधारकों को वार्ड समिति स्तर पर कुछ प्रतिनिधित्व दिया जा सकता है, विशेषकर उनकी व्यापारिक एसोसिएशनों के जरिए। ऐसे पदों की सीमा वार्ड समिति में सीटों के अनुपातानुसार नियंत्रित की जा सकती है।

चित्र 5.1 प्रस्तावित प्रणाली का चित्रात्मक प्रदर्शन

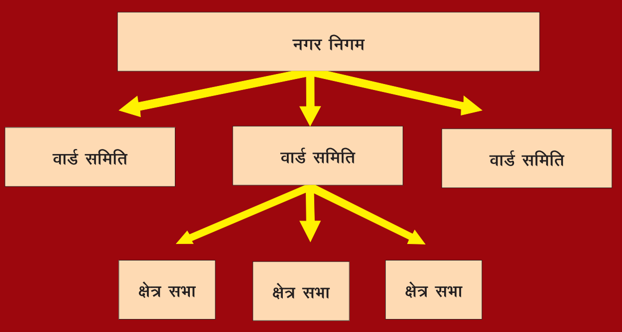

5.2.2.3.5. <u>तीन स्तरीय शासन-प्रणाली में कार्यों की रूपरेखा</u> : विभिन्न स्तरों पर, किए जा रहे कार्यों की जैसी रूपरेखा ग्रामीण स्थानीय शासन में है, वैसी ही रूपरेखा शहरी स्थानीय निकायों के मामले में भी तैयार करनी पड़ेगी। ऐसा करते समय आनुषांगिकता के सिद्धान्त का अनुपालन करना चाहिए। पंचायती राज संस्थाओं के लिए शुरू किए गए कार्यकलापों के समान कार्यकलाप निरुपण की प्रक्रिया सभी शहरी स्थानीय निकायों में भी कार्यान्वित की जानी चाहिए।

5.2.2.4. सिफारिशें

(क) सरकार शहरी निकायों की परिभाषा में और सुस्पष्टता लाने की दृष्टि से सम्पूर्ण देश के शहरी निकायों की एक आम श्रेणी को स्वीकार करने पर विचार कर सकती हैं, ताकि एक व्यवस्थित आयोजना प्रक्रिया और निधियों की सुपुर्दगी में मदद की जा सके। सारणी 5.6 में दिए गए आधार पर एक वर्गीकरण स्वीकार किया जा सकता है।

(ख) नगर पंचायतों जहाँ मध्य स्तर अपेक्षित नहीं होगा, के मामले को छोड़कर शहरी, स्थानीय शासन में प्रशासन के तीन स्तर होने चाहिए। ये स्तर निम्नलिखित होने चाहिए:

(i) नगर परिषद्/निगम (इसे जिस भी नाम से पुकारा जाए),

(ii) वार्ड समितियाँ, और

(iii) क्षेत्र समितियाँ या सभाएँ।

(ग) प्रत्येक क्षेत्र सभा, जिसमें एक या दो (या अधिक) मतदान केंद्र क्षेत्र हों, पाँच वर्ष में एक बार एक छोटी प्रतिनिधि समिति का निर्वाचन करेगी। यह प्रतिनिधि समिति एक व्यक्ति का चुनाव करेगी जो क्षेत्र सभा की बैठकों की अध्यक्षता करेगा तथा संगत वार्ड समिति में क्षेत्र सभा का प्रतिनिधित्व करेगा। राज्य, कानून द्वारा, ऐसे निर्वाचन के लिए प्रक्रिया और अन्य शर्तें निर्धारित कर सकता है।

(घ) वार्ड समितियाँ प्रत्येक वार्ड/कॉरपोरेटर्स डिवीजन में गठित की जानी चाहिए। एक वार्ड समिति में एक से अधिक वार्डों वाली मौजूदा प्रणाली को छोड़ देने की आवश्यकता है।

(ड.) वार्ड समितियों को वैध कार्य सौंपने की आवश्यकता हैं, जिन्हें उस स्तर पर संभाला जा सके। इन कार्यों में गलियों में प्रकाश-व्यवस्था, सफाई व्यवस्था, जलापूर्ति, मल-जल निकास व्यवस्था, सड़कों का रख-रखाव, विद्यालयी भवनों का रख-रखाव, स्थानीय अस्पतालों/औषधालयों, स्थानीय बाजारों, पार्कों, खेल के मैदानों आदि का रख-रखाव शामिल है।

(च) वार्ड समिति को सौंपे गए कार्यों के लिए आवंटित धनराशि वार्ड समिति को सामूहिक रूप से हस्तान्तरित की जाए। वार्ड समिति को आवंटित कार्यों के संबंध में वार्ड समिति द्वारा प्रस्तावित बजट को नगर के समग्र बजट का निरूपण करते समय हिसाब में लिया जाए।

(छ) वार्ड समितियों की बैठकों का व्यापक रूप से प्रचार किया जाए ताकि उनमें वार्ड के नागरिकों की अधिक से अधिक भागीदारी सुनिश्चित हो सके।

(ज) क्षेत्र के आधार पर वार्ड से एकत्रित सम्पत्ति कर का एक हिस्सा वार्ड समितियों को दिया जाना चाहिए।

(झ) विभिन्न स्तरों के बीच कार्यात्मक उत्तरदायित्वों का आवंटन स्पष्ट रूप से उल्लिखित किया जाना चाहिए। ऐसा करते समय आनुषांगिकता के सिद्धान्त का अनुपालन किया जाए। मौटे तौर पर क्षेत्र सभा को विकासात्मक कार्यकलापों को प्राथमिकता देने तथा विभिन्न स्कीमों के तहत लाभार्थियों को अभिज्ञात करने जैसे ग्राम सभा के कार्यों के समान कार्य निष्पादित करने चाहिए।

(ञ) पंचायती राज संस्थाओं के लिए प्रारंभ किए गए कार्यकलापों के समान कार्यकलाप निरुपण की प्रक्रिया सभी शहरी स्थानीय निकायों में भी कार्यान्वित की जानी चाहिए।

5.2.3. बड़े शहरों के लिए आंचलिक प्रणाली

5.2.3.1. बहुत बड़े आकार के शहर नियंत्रण की अवधि सहित स्थान, जनसंख्या और संवेदनशीलता की दृष्टि से अपने संगठन और प्रबन्धन के समक्ष चुनौतियाँ पेश करते हैं। बड़े शहरों में शहर की शासन-व्यवस्था भीतर अत्यधिक केन्द्रीकरण से उनकी सेवा प्रदान करने की दक्षता और प्रभावकारिता नष्ट हो जाएगी तथा नागरिकों की समस्याओं को दिन-प्रतिदिन के आधार पर निपटाना कठिन होगा। नागरिकों को अपना कार्य करवाने के लिए सिटी हॉल जाने की आवश्यकता किंचित ही पड़नी चाहिए तथा कई कार्य अंचल के स्तर पर करने का अधिकार देना संभव होना चाहिए। कोलकात्ता को नगरों (बोरो), जो वहाँ के शासन का एक अतिरिक्त स्तर हैं, में विभाजित किया गया है। मुंबई में, वार्ड अधिकारियों ने इलाके में निर्णय लेने, सेवाएँ प्रदान करने और सार्वजनिक निर्माण कार्यों का निष्पादन करने के लिए प्राधिकार प्रत्यायोजित कर दिए हैं। आयोग का विचार है कि एक बड़े शहर के अन्दर कई आंचलिक कार्यालय खोले जाने चाहिए। ऐसे आंचलिक कार्यालय कई शहरों में हैं, लेकिन सामान्यतः उनके पास पर्याप्त प्रत्यायोजित अधिकार नहीं है। प्रशासनिक प्रयोजनों के लिए निर्णय लेने के सभी अधिकारों सहित शहर की सरकार के अधिकारों को अंचलों में प्रत्यायोजित और लागू किया जा सकता है। मौटे तौर पर प्रत्येक पाँच लाख (या कम) आबादी के लिए एक आंचलिक कार्यालय खोलने पर विचार किया जा सकता है। यह प्रणाली अगले तीन वर्षों में सभी नगर निगमों में प्रारंभ की जा सकती है।

5.2.3.2. सिफारिश

(क) **महानगर निगमों और नगर निगमों में उन्हें प्रत्यायोजित सभी प्रकार के प्रशासनिक अधिकारों से युक्त आंचलिक कार्यालय तत्काल खोले जाएं जो सेवाओं और सुख-सुविधाओं के संबंध में लोगों के लिए मुख्य सम्पर्क केन्द्र बनें। प्रत्येक पाँच लाख (अथवा कम) जनसंख्या के लिए एक अंचल पर विचार किया जा सकता है। आगामी तीन वर्षों में अन्य बड़े शहरों में भी ऐसे ही आंचलिक कार्यालय स्थापित किए जाएं।**

5.2.4. महापौर/अध्यक्ष का कार्यकाल

5.2.4.1. महापौर/अध्यक्ष का निर्वाचन और कार्यकाल

5.2.4.1.1. अनुच्छेद 243द (2)(ख) में व्यवस्था है कि राज्य का विधानमंडल कानून बनाकर नगरपालिका के अध्यक्ष के निर्वाचन की पद्धति निर्धारित कर सकता है। तथापि, अध्यक्ष की भूमिका और कार्यों को

सुस्पष्ट तौर पर परिभाषित नहीं किया गया है। हालांकि संविधान में बड़े शहर के महापौर का कोई संदर्भ नहीं है। 'अध्यक्ष' स्पष्टतः एक सामान्य शब्द है तथा उसमें महापौर शब्द शामिल किया माना जाए।

5.2.4.1.2. अधिकांश राज्यों में शहरी स्थानीय सरकार में अध्यक्ष/महापौर का मुख्यतः औपचारिक पद है। अधिकांश मामलों में राज्य सरकार द्वारा नियुक्त आयुक्त के पास सभी कार्यकारी अधिकार होते हैं। इस तथ्य के बावजूद कि दशकों पहले, 1924 में नेताजी सुभाषचन्द्र बोस को औपनिवेशिक युग के दौरान 1924 में निर्वाचित परिषद और महापौर द्वारा कोलकात्ता नगर निगम के मुख्य कार्यकारी अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था (देखें बॉक्स 5.3) आज स्वतंत्र भारत में यह परिकल्पना नहीं की गई है कि नगर आयुक्त की नियुक्ति परिषद द्वारा की जा सकती है तथा वास्तविक कार्यकारी प्राधिकार अध्यक्ष/महापौर के पास रहेंगे। महापौर/अध्यक्ष की भूमिका को कम करने से स्व-शासन और स्थानीय सशक्तिकरण की भावना का स्पष्ट रूप से तिरस्कार है। सामान्यतः अध्यक्ष/महापौर परिषद की बैठकों की अध्यक्षता करता है तथा इसकी शहरी शासन में केवल महत्त्वहीन भूमिका होती हैं। तथापि, कोलकाता में अध्यक्ष और महापौर दो अलग-अलग प्राधिकारी है। पहला निगम की बैठकों की अध्यक्षता करता है दूसरा अर्थात परिषद महापौर (मेयर-इन-काउंसिल) निश्चित कार्यकारी कार्यों को करता है।

5.2.4.1.3. महापौर/अध्यक्ष के निर्वाचन की पद्धति और उनका कार्यकाल राज्य-दर-राज्य अलग-अलग है। अधिकांश बड़े राज्यों में अध्यक्ष का निर्वाचन निर्वाचित पार्षदों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। मध्य प्रदेश, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश इनके अपवाद हैं, जहाँ अध्यक्ष का निर्वाचन प्रत्यक्षतः शहर के मतदाताओं द्वारा किया जाता है।

5.2.4.1.4. महापौर/अध्यक्ष का कार्यकाल आन्ध्र प्रदेश, केरल, मध्य प्रदेश, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल में पांच वर्ष है। तथापि, असम, दिल्ली, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और कर्नाटक में अध्यक्ष का कार्यकाल केवल एक वर्ष होता है तथा पार्षद नए अध्यक्ष का चुनाव प्रत्येक वर्ष आवर्तन द्वारा करते हैं। गुजरात और महाराष्ट्र में अध्यक्ष का कार्यकाल ढाई वर्ष होता है, जैसा कि सारणी 5.8 में दर्शाया गया है।

सारणी 5.8 : नगर-निगम अध्यक्ष के निर्वाचन का तरीका और उनका कार्यकाल

राज्य	निर्वाचन	अवधि
आन्ध्र प्रदेश	अप्रत्यक्ष	पाँच वर्ष
असम	अप्रत्यक्ष	एक वर्ष

राज्य	निर्वाचन	अवधि
दिल्ली	अप्रत्यक्ष	एक वर्ष
गुजरात	अप्रत्यक्ष	ढाई वर्ष
हरियाणा	अप्रत्यक्ष	एक वर्ष
हिमाचल प्रदेश	अप्रत्यक्ष	एक वर्ष
कर्नाटक	अप्रत्यक्ष	एक वर्ष
केरल	अप्रत्यक्ष	पाँच वर्ष
मध्य प्रदेश	अप्रत्यक्ष	पाँच वर्ष
महाराष्ट्र	अप्रत्यक्ष	ढाई वर्ष
उड़ीसा	अप्रत्यक्ष	एक वर्ष
राजस्थान	अप्रत्यक्ष	पाँच वर्ष
तमिलनाडु	प्रत्यक्ष	पाँच वर्ष
उत्तर प्रदेश	प्रत्यक्ष	पाँच वर्ष
पश्चिम बंगाल	अप्रत्यक्ष	पाँच वर्ष

स्रोतः एनसीआरसीडब्ल्यू, विकेन्द्रीकरण और नगरपालिकाओं पर परामर्शदायी पत्र

5.2.4.1.5. अन्य देशों में शहर की सरकारों के कार्यकारी शीर्ष की नियुक्ति की कुछ पद्धतियां **अनुबन्ध-V (1)** में दी गई हैं। सामान्यतः नगर परिषद किसी शहर का नगर में निर्वाचित सरकार का सर्वाधिक आम स्वरूप है। अधिकांश शहरों में महापौर (मेयर) (लैटिन शब्द मेजर से लिया गया है जिनका अर्थ है बृहत्तम, महत्तर) निर्वाचित मुख्य कार्यकारी होता है। महापौर के अधिकारों और उत्तरदायित्वों के साथ-साथ उनके निर्वाचन की पद्धति के संबंध में स्थानीय कानूनों और प्रथाओं में व्यापक विचलन है। न्यूयार्क और लन्दन के मेयर का चुनाव लोकप्रिय है और प्रत्येक चार वर्षों में प्रत्यक्ष मतदान द्वारा होता है। टोरन्टो के मेयर का चुनाव तीन वर्षों में एक बार प्रत्यक्ष लोकप्रिय मतदान द्वारा होता है। टोकियो, सिडनी और एथेन्स के मेयर भी लोकप्रियता से चुने जाते है। पेरिस में मेयर का चयन आनुपातिक प्रतिनिधित्व द्वारा किया जाता है। रियो डी जेनिरो के मेयर का लोकप्रिय चुनाव दो दौर वाली बहुमत प्रणाली द्वारा किया जाता है। मैक्सिको सिटी, बोगोटा और ब्यूनस आयर्स के मेयर लोकप्रिय रूप से चुने जाते है। जोहान्सबर्ग में कार्यकारी मेयर

पार्टी के आनुपातिक प्रतिनिधि उम्मीदवारों की सूची में शीर्ष पर होता है जिसका उद्देश्य बहुमत की सहायता करना है। प्रायः इन सभी शहरों में नगर शासन एक शक्तिशाली संस्था होती है जिसकी शहर के अधिकांश पहलुओं के प्रबन्धन में बहुत ही वास्तविक और प्रभावी भूमिका होती है। मेयर आम तौर पर नगर शासन की कार्यकारी शाखा का मुखिया होता है। अधिकांश मामलों में सड़कें, जलापूर्ति, सफाई व्यवस्था, जल निकासी और मल निकासी की व्यवस्था के अतिरिक्त पुलिस, हवाई अड्डों, पत्तनों, अग्नि शमन सेवाओं, यातायात व परिवहन संबंधी व्यवस्था नगर शासन के नियंत्रणाधीन होती है।

5.2.4.1.6. मेयर का निर्वाचन प्रत्यक्षतः हो अथवा परोक्ष रूप से उसके संबंध में निर्णय लेने में कई बातों पर विचार करना जरूरी होता है।

5.2.4.1.7. स्थायित्व : परोक्ष रूप से चुना गया मेयर अपने पद पर तब तक रहता है जब तक परिषद में उसे बहुमत का समर्थन प्राप्त होता है। ऐसी प्रणाली में 'हॉर्स-ट्रेडिंग' अधिक होती है तथा मेयर के प्राधिकार कमजोर पड़ जाते हैं तथा प्रशासन की गुणवत्ता गिर जाती है। लोकप्रियता से चुना गया मेयर का कार्यकाल निश्चित होता है और उसे साधारणतया पार्षदों द्वारा नहीं हटाया जा सकता है। शहरों के सामने तीव्र शहरीकरण संबंधी और जटिल चुनौतियों पर ध्यान देते हुए यह बात सामने आई कि अच्छे शासन को बढ़ावा देने के लिए दूरदृष्टि और नेतृत्व का स्थायित्व महत्वपूर्ण है।

5.2.4.1.8. जवाबदेही : प्रत्यक्ष रूप से चुने गए महापौर/अध्यक्ष के संबंध में चिन्ता का विषय यह है कि निर्धारित कार्यकाल होने की वजह से महापौर द्वारा किए गए प्राधिकार के दुरूपयोग को आसानी से रोका नहीं जा सकता। तथापि, ऐसे दो कार्यतंत्र हैं जिनसे सुनिश्चित किया जा सकता है कि निर्धारित कार्यकाल वाला कार्यकारी महापौर निर्धारित सीमाओं को नहीं लांघता है। प्रथम परिषद के पास बजट को अनुमोदित करने, विनियम और प्रमुख नीतियाँ बनाने तथा असावधानी के संबंध में कार्रवाई करने का अधिकार हो। सुव्यवस्थित शहरी शासन व्यवस्था में परिषद और मेयर दोनों ही महत्तर प्राधिकार का प्रयोग करते हैं तथा दोनों इस प्रकार काम करते हैं कि एक-दूसरे पर नियंत्रण रहे। दूसरे, शहरी शासन में संस्थागत निगरानी लोगों की ठोस राय और स्वतंत्र प्रेस निष्पक्षता और दक्षता के सर्वोत्तम गारंटीदाता होते हैं।

5.2.4.1.9. संसक्ति (संबद्धता) : परिभाषा के अनुसार, परोक्ष रूप से चुना गया महापौर तब तक अपने पद पर आसीन रहता है जब तक उसे परिषद में बहुमत प्राप्त होता है। अतः परिषद और कार्यकारी महापौर के बीच लोगजाम नहीं होगा। लेकिन जब महापौर का निर्वाचन लोकप्रिय मतदान द्वारा होता है

बॉक्स 5.3 : मुख्य कार्यकारी अधिकारी के रूप में नेताजी

वर्ष 1924 में, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस को महापौर, देशबन्धु चितरंजनदास के प्रस्ताव पर तभी गठित हुए कलकत्ता नगर-निगम का मुख्य कार्यकारी अधिकारी बनाया गया था। नेताजी ने स्वयं लिखा है "यद्यपि सत्ताइस वर्ष की उम्र में इस महत्त्वपूर्ण पद पर मेरी नियुक्ति को स्वराजवादियों ने सामान्यतः स्वीकार कर लिया था, फिर भी पार्टी के भीतर कुछ मंडलों में कुछ हद तक यह विद्वेष का कारण बनने से नहीं रूका। सरकार को इससे बड़ी चिढ़ हुई तथा बहुत हिचकिचाहट के बाद उन्होंने अपना अनुमोदन देने का निर्णय लिया, क्योंकि सांविधिक दृष्टि से उनके लिए ऐसा करना अपेक्षित था।" (कलक्टेड वर्क्स, खंड-II, अध्याय V, 1981)

विरोध के बावजूद उनकी मुख्य कार्यकारी अधिकारी के रूप में नियुक्ति स्थानीय निकाय की सरकार के साथ प्रगाढ़ता की क्षमता को दर्शाती है। लेकिन यह भी दर्शाती है कि सरकार ने, आखिरकार, स्थानीय निकाय के विचारों को स्वीकार किया, यह ऐसा लक्ष्य है जो आज आसानी से नहीं मिलता।

और परिषद के सदस्यों का निर्वाचन एक पृथक मतदान द्वारा होता है तो यह संभव है कि महापौर और परिषद में बहुमत दो अलग-अलग पार्टियों के हों। इससे दोनों के बीच संसक्ति का अभाव हो सकता है तथा कार्यों में विलम्ब हो सकता है तथा पूरी तरह ठप्प भी हो सकता है। तथापि, जब कार्यकारी महापौर का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से होता है तो शक्तियाँ स्पष्ट रूप से अलग-अलग स्थापित होती हैं और दोनों में तालमेल बढ़ाने हेतु कई नैसर्गिक कार्यतंत्र हैं। प्रथम यह आम बात है कि महापौर की पार्टी का परिषद में बहुमत हो अथवा यह कम से कम सबसे बड़ा समूह हो। दूसरा, स्पष्ट अलग-अलग अधिकारों के साथ-साथ महापौर और परिषद दोनों की भूमिकाएँ स्पष्ट रूप से परिभाषित हों। प्रत्येक एक-दूसरे पर नियंत्रण के रूप में कार्य करते हैं, लेकिन किसी भी वैध कार्य को करने से नहीं रोक सकते। तीसरे, जब परिषद में प्रतिपक्षी पार्टी का नेतृत्व हो तो महापौर को परिषद उसके साथ चलानी होती है। द्विदलीय बनने के ऐसे प्रयास से वास्तव में नगर शासन सुदृढ़ होगा और प्रत्येक चुनाव द्वारा बगैर किसी बाधा के दीर्घकालिक नीतियों का कार्यान्वयन सुनिश्चित होगा। चौथा, एक स्वतंत्र माध्यस्थम, जैसा कि 'शासन-नीतिशास्त्र' संबंधी आयोग की रिपोर्ट के साथ-साथ इस रिपोर्ट में परिकल्पना की गई है, सभी स्तरों पर प्राधिकार के दुरूपयोग पर प्रभावी नियंत्रण रखने के तौर पर कार्य करेगा।

5.2.4.1.10. <u>प्रतिनिधित्व</u> : जब किसी पार्षद का निर्वाचन किसी एक वार्ड का प्रतिनिधित्व करने के लिए होता है और उसे परोक्ष रूप से महापौर के लिए चुन लिया जाता है तो प्रायः उसे अपने दृष्टिकोण को सम्पूर्ण शहर के परिप्रेक्ष्य में बढ़ाना कठिन होता है। बढ़ते हुए और महत्त्वपूर्ण शहर के नेतृत्व के लिए समग्र दृष्टिकोण और व्यापक परिप्रेक्ष्य अपेक्षित होता है। साथ ही प्रत्यक्ष लोकप्रिय अधिदेश महापौर को सम्पूर्ण शहर का प्रतिनिधित्व करने और उसकी ओर से बोलने की वैधता प्रदान करता है। महापौर के प्रत्यक्ष निर्वाचन में सम्पूर्ण शहर शामिल होगा और इससे उसे उन छोटे-छोटे और उप-स्थानीय मुद्दों जिनसे

स्थानीय पार्षद को निर्वाचित करते समय वहां के निवासियों का सरोकार होता है, की व्यवस्था करने की बजाए शहर के प्रति व्यापक दृष्टिकोण विकसित करने में मदद मिलेगी।

5.2.4.1.11. सशक्तिकरण में आरक्षण : स्थानीय सरकारों में बहुत बड़ी संख्या में पद अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, महिलाओं तथा कई राज्यों में पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित हैं। ऐसी स्थिति में यदि किसी महापौर का परोक्ष रूप से निर्वाचन किया जाता है तो यह पद विशिष्ट श्रेणी के लिए आरक्षित रहता है चाहे बहुमत वाली पार्टी में कोई उपयुक्त निर्वाचित पार्षद न हो। ऐसे कई उदाहरण है जब अल्पसंख्यक पार्टी के पार्षद को अध्यक्ष के रूप में निर्वाचित करना पड़ा, क्योंकि बहुमत वाली पार्टी में उस श्रेणी का कोई भी सदस्य निर्वाचित नहीं हुआ था। जब ऐसा कोई सदस्य बहुमत वाली पार्टी से पार्षद के रूप में निर्वाचित होता है तो उस समय भी जरूरी नहीं कि उस समुदाय का सर्वोच्च नेतृत्व पार्षद के पद पर चुनाव लड़ने का इच्छुक हो। परन्तु यदि महापौर का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से है तो पार्टी को शहर में उस श्रेणी के सर्वोत्तम उम्मीदवार को खड़ा करना पड़ेगा तथा उसके बेहतर नेतृत्व के उभरने की संभावना होगी। इस प्रकार पदों के आरक्षण से प्रत्येक चुनाव में लाभों से वंचित वर्गों को वास्तविक राजनीतिक अधिकार प्राप्त होंगे।

5.2.4.1.12. नेतृत्व विकास : स्वतंत्रता पूर्व, महान स्वतंत्रता-सेनानियों ने स्थानीय शासनों को नेतृत्व प्रदान किया। चित्तरंजन दास (1870-1925), जिन्हें प्यार से 'देशबन्धु' पुकारते थे, कलकत्ता नगर-निगम के प्रथम महापौर बने। 'नेताजी' सुभाष चन्द्र बोस को वर्ष 1930 में कलकत्ता का महापौर चुना गया था। बड़े लोकतंत्रों में स्थानीय सरकार का नेतृत्व एक ऐसा साधन है, जिससे, किसी विशेष शहर के नेतृत्व में, राज्य और राष्ट्रीय स्तर का पद प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त होता है। न्यूयार्क शहर के भूतपूर्व मेयर, रूडोल्क गिलानी, जो इस समय 2008 के संयुक्त राज्य अमरीका में राष्ट्रपति पद (प्रैसीडेन्सी) के एक अग्रणी रिपब्लिकन उम्मीदवार हैं। पेरिस, ब्यूनस आयर्स, रियो-डि-जेनेरो और लन्दन के मेयर प्रमुख राष्ट्रीय हस्ती हैं, जो प्रायः राष्ट्रीय पद हासिल करते हैं। चीन में शंघाई का मेयर राष्ट्रीय शासक वर्ग की एक शक्तिशाली हस्ती होता है। हमारे अपने देश में जैसा कि ऊपर उल्लिखित हैं, स्वतंत्रता संघर्ष के कई प्रमुख राष्ट्रीय नेताओं ने अनुभव प्राप्त किया तथा स्थानीय सरकार के नेतृत्व के जरिए उत्कृष्टता प्राप्त की। अतः महापौर का प्रत्यक्ष निर्वाचन जो शहर में ठोस सुस्पष्ट नेतृत्व को बढ़ावा देता है, सार्वजनिक जीवन और नेतृत्व विकास में प्रतिभा की भर्ती का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है।

5.2.4.1.13. आयोग का सुविचारित मत है कि महापौर/अध्यक्षों का चयन प्रत्यक्ष चुनाव में लोकप्रिय अधिदेश के जरिए वांछनीय है। ऐसे महापौर का कार्यकाल पाँच वर्ष निर्धारित होना चाहिए। परिषद के पास बजट का अनुमोदन करने, चूक एवं विनिमय संबंधी एवं प्रमुख नीतियाँ बनाने के अधिकार होने चाहिए।

5.2.4.2. महापौर/अध्यक्ष की भूमिका

5.2.4.2.1. महापौर की भूमिका के संबंध में तीन ऐसे मुद्दे हैं जिनका समाधान किया जाना चाहिए। पहला, क्या परिषद की बैठकों की अध्यक्षता करने के लिए अलग से अध्यक्ष होना चाहिए और क्या शहरी शासन की कार्यकारी शाखा का शीर्ष महापौर होना चाहिए? कोलकाता शहर में इस समय ऐसी ही व्यवस्था है। अधिकारों की पृथकता की व्यापक धारणा को ध्यान में रखते हुए तथा कुछ हद तक इस बात को ध्यान में रखते हुए कि हमारे राष्ट्रीय और राज्य विधानमंडलों में उनके अपने पीठासीन अधिकारी हैं, जबकि कार्यकारी शासन की अध्यक्षता प्रधानमंत्री/मुख्य मंत्री द्वारा की जाती है। तथापि, आयोग का विचार है कि शहर और स्थानीय स्तर पर अध्यक्ष और महापौर के कार्यों का इस प्रकार अलग-अलग होना अनावश्यक और दुर्वहनीय है। सभी ग्रामीण स्थानीय शासनों में अध्यक्ष भी कार्यकारी प्राधिकारी होता है। बतौर अध्यक्ष कार्य करने वाला महापौर परिषद और कार्यकारी के बीच सामंजस्यपूर्ण कार्यप्रणाली में मदद देगा। स्थानीय शासन में प्राधिकार का ध्यानकेंद्रण एकसमान और सुस्पष्ट परिभाषित होना चाहिए। तभी लोग मतदान करते समय अपनी पसन्द जाहिर कर सकते हैं। अतः आयोग सिफारिश करता है कि निर्वाचित महापौर परिषद के मुख्य कार्यकारी एवं अध्यक्ष दोनों ही रूपों में कार्य करें।

5.2.4.2.2. दूसरा, मुख्य कार्यकारी किसे होना चाहिए। निर्वाचित महापौर या नियुक्त आयुक्त? आयोग की ठोस राय यह है कि कार्यकारी शक्ति का प्रयोग निर्वाचित महापौर/अध्यक्ष द्वारा किया जाना चाहिए। क्योंकि लोकतांत्रिक व्यवस्था की मूलभूत वैध मांग यह है कि अधिकारों का उपयोग निर्वाचित कार्यकारी द्वारा किया जाना चाहिए। स्थानीय शासन अधिकारिता का समग्र तर्क यह है कि लोगों की सहभागिता और लोकतांत्रिक शासन को कारगर बनाने के लिए जितना संभव हो सके उतना लोगों के करीब होना चाहिए। केवल जब निर्वाचित कार्यकारी अपने वास्तविक प्राधिकार का प्रयोग करता है तो लोग अपनी वोट और सार्वजनिक माल एवं सेवाओं के प्रावधान के निबंधन में ऐसे वोट के परिणामों के बीच संबंधों को स्पष्ट कर सकते हैं। ऐसा स्पष्ट संबंध भी प्राधिकार और जवाबदेही की भावना को सुनिश्चित करता है। यदि निर्वाचित स्थानीय शासन के पास कोई वास्तविक प्राधिकार नहीं है और यदि कार्यकारी अधिकार

राज्य सरकार द्वारा नियुक्त अनिर्वाचित अधिकारी के पास हैं तो स्थानीय शासन को केवल प्रतीक के रूप में ले जाया जाता है। आयोग की राय है कि महापौर/अध्यक्ष को शहर अथवा नगर शासन का मुख्य कार्यकारी होना चाहिए तथा शहरी शासन के पास यह अधिकार होना चाहिए कि वह आयुक्त सहित सभी अधिकारियों की नियुक्ति कर सके तथा उन्हें उत्तरदायी ठहराया जा सके।

5.2.4.2.3. तीसरे, बड़े शहरों में महापौर के कार्यकारी प्राधिकार का पालन किस प्रकार किया जाए? छोटे नगरों और शहरों में निर्वाचित महापौर सभी कार्यकारी उत्तरदायित्वों का प्रत्यक्षतः निवर्हन कर सकता है। लेकिन शहर जैसे-जैसे बड़े होते जाते हैं, वैसे-वैसे भारी जनसंख्या और विभागों के समूह एवं जटिल कार्यों के कारण महापौर को अपने समग्र नियंत्रण और दिशानिर्देशन के तहत कार्यकारी प्राधिकारों का उपयोग करने के लिए समर्थन और व्यक्तियों के समूह की मदद की आवश्यकता होती है। अतः कार्यकारी शाखा के विभिन्न विभागों में महापौर की ओर से प्राधिकार का उपयोग करके उसके द्वारा नियुक्त प्राधिकारियों के साथ मंत्रिमण्डल प्रणाली का कोई न कोई रूप वांछनीय होता है। उन प्रणालियों में जहाँ मुख्य कार्यकारी का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से होता है और वहाँ शक्तियों की पृथक्करण पद्धति है तो मंत्रिमंडल का गठन प्रायः विधानमंडल के बाहर से होता हैं लेकिन, किसी शहर की सरकार में अधिकारों के पृथक-पृथक होने की अनिर्वायता को निर्वाचित परिषद और महापौर के बीच और अधिक सामंजस्य की आवश्यकता के अनुसार संतुलित बनाया जाए। इसलिए कार्यकारी कार्यों को करने के लिए महापौर का मंत्रिमंडल अथवा समिति निर्वाचित परिषद से बनाना वांछनीय है। आयोग सिफारिश करता है कि पार्षदों में से निर्वाचित महापौर द्वारा चुने गए महापौर के 'मंत्रिमण्डल' का गठन सभी नगरनिगमों में किया जाए। इस मंत्रिमण्डल का आकार परिषद की कुल सदस्य संख्या के दस प्रतिशत अथवा पन्द्रह प्रतिशत जो भी अधिक हो, से अधिक नहीं होना चाहिए। ऐसा मंत्रिमण्डल महापौर के प्रत्यक्ष नियंत्रण और पर्यवेक्षण में कार्य करेगा तथा किसी भी कार्यकारी मामले में अंतिम प्राधिकार महापौर के पास होगा।

5.2.4.3. सिफारिशें

(क) **नगर परिषद की अध्यक्षता करने तथा नगर स्थानीय शासन में कार्यकारी प्राधिकारी के कार्यों को सम्पादित करने का कार्य एक ही प्राधिकारी अर्थात अध्यक्ष अथवा महापौर के पास होना चाहिए।**

(ख) **अध्यक्ष/महापौर का निर्वाचन प्रत्यक्षतः सम्पूर्ण शहर में चुनाव करवाकर लोकप्रिय अधिदेश द्वारा होना चाहिए।**

(ग) **अध्यक्ष/महापौर नगर निकाय का मुख्य कार्यकारी होगा। कार्यकारी अधिकार उस प्राधिकारी के पास ही होने चाहिए।**

(घ) **निर्वाचित परिषद को बजट अनुमोदन ओवरसाइट एवं विनियम एवं नीतियाँ बनाने के कार्यों का निष्पादन करना चाहिए।**

(ङ.) **नगर निगमों और महानगरों में महापौर को अपना मंत्रिमण्डल नियुक्त करना चाहिए। मंत्रिमण्डल के सदस्यों का चुनाव महापौर द्वारा निर्वाचित कॉरपोरेटरों में से किया जाए। महापौर के मंत्रिमण्डल की संख्या निर्वाचित निगम की कुल संख्या के दस प्रतिशत अथवा पन्द्रह प्रतिशत जो भी अधिक हो से अधिक नहीं होनी चाहिए। यह मंत्रिमण्डल महापौर के समग्र नियंत्रण और दिशानिर्देशन में महापौर द्वारा उन्हें सौंपे गए मामलों के संबंध में कार्यकारी प्राधिकारों का उपयोग करेगा।**

5.2.5. शहरी स्थानीय शासनों की प्रबन्धन संरचना

5.2.5.1. जैसा कि नीचे स्पष्ट किया गया है, इनकी संरचना और कार्यों में व्यापक एकरूपता है।

5.2.5.2. आयुक्त

5.2.5.2.1. आज नगर आयुक्त मुख्य कार्यकारी होता है तथा उसके पास कार्यकारी अधिकार होते हैं।[51] हालांकि नगर निगम/परिषद शहर की शासन व्यवस्था के संबंध में नीतियाँ निर्धारित करती हैं, फिर भी आयुक्त ऐसी नीतियों के निष्पादन हेतु सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व संभालता है। आयुक्त के अधिकार वे होते हैं जो उसे संगत राज्य कानून द्वारा मुहैया कराए जाते हैं तथा निगम/परिषद द्वारा सौंपे जाते हैं। अधिकांश शहरी निकायों में आयुक्त (अथवा मुख्य अधिकारी) राज्य सरकार का वह अधिकारी होता है जिसे नगर निकाय में कार्य करने के लिए तैनात किया जाता है। आयोग पहले ही अनुशंसित कर चुका है कि महापौर/अध्यक्ष ही मुख्य कार्यकारी होना चाहिए तथा आयुक्त/मुख्याधिकारी को वे कार्य करने चाहिए जो उन्हें सौंपे जाते हैं।

5.2.5.2.2. जहाँ तक नगरपालिका आयुक्त की नियुक्ति का संबंध है, इसके दो दृष्टिकोण हैं। एक दृष्टिकोण यह है कि जब तक नगरपालिका आयुक्त राज्य सरकार द्वारा नियुक्त कोई 'बाहरी व्यक्ति' न हो तब तक वह दवाब को नहीं झेल सकता/सकती और यह स्थिति स्पष्ट रूप से सार्वजनिक हित में नहीं

51 उदाहरणार्थ, कोलकाता नगर निगम अधिनियम की धारा 39 में निर्दिष्ट करती है कि नगरनिगम आयुक्त निगम का प्रमुख कार्यकारी अधिकारी होगा।

है। दूसरा दृष्टिकोण यह है कि जब तक महापौर/अध्यक्ष का, स्थानीय सरकार के मुख्य कार्यकारी के नाते, आयुक्त सहित सम्पूर्ण कर्मचारियों पर पूर्ण नियंत्रण नहीं होगा तब तक वह मतदाताओं के प्रति अपने कर्त्तव्यों का पूरी तरह से निर्वहन करने की स्थिति में नहीं होगा। अतः आयुक्त/मुख्य अधिकारी की नियुक्ति महापौर/अध्यक्ष को करनी चाहिए। आयोग का विचार है कि निर्वाचित महापौर/अध्यक्ष मतदाताओं के प्रति जवाबदेह होता है। उस जवाबदेही के लिए स्थानीय सरकार के कर्मचारी पर भी अनुरूप प्राधिकार होना चाहिए। तदनुसार, आयुक्त/मुख्य अधिकारी की नियुक्ति के मामले में अन्तिम निर्णय महापौर/अध्यक्ष का होना चाहिए। तथापि, यह सुनिश्चित करने के लिए कि सही व्यक्ति का ही चयन हो, राज्य को इस पद के चयन और नियुक्ति हेतु प्रक्रिया और अर्हताएँ कानून द्वारा निर्धारित करना चाहिए।

5.2.5.2.3. आयुक्त के चयन और नियुक्ति की जिम्मेवारी दो वर्षों की अवधि के भीतर महानगर निगमों एवं नगरनिगमों की सौंपी जा सकती है। अन्य सभी शहरी स्थानीय शासनों के लिए यह तीन वर्षों में संभव होना चाहिए। चयन परिषद/निगम द्वारा संस्थापित द्विदलीय समिति द्वारा तैयार किए गए नामों के सूची से महापौर द्वारा किया जाना चाहिए। नियुक्ति कम से कम अवधि के लिए की जानी चाहिए और उसे केवल निष्पादन के आधार पर बढ़ाया जाए। ऐसे समय के दौरान आयुक्तों/मुख्य अधिकारियों की तैनाती राज्य सरकार द्वारा की जाती है। आयुक्त का चयन नामों की सूची से किया जाए जिससे महापौर अधिकारी का चयन कर सकता है।

5.2.5.3. नगरपालिकाओं में कर्मचारियों की नियुक्ति

5.2.5.3.1. *सामान्यत* : एक नगरपालिका में निम्नलिखित कर्मचारियों के समूह होने चाहिए। संरक्षणता एवं अपशिष्ट प्रबन्धन, इंजीनियरिंग, वित्तीय प्रबन्धन, लेखापरीक्षा, लोक स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा और संस्कृति तथा राजस्व। बड़ी नगरपालिकाओं में उन कुछ वरिष्ठ पदों को छोड़कर जहां अधिकारियों/कर्मचारियों की नियुक्ति राज्य सरकार द्वारा प्रतिनियुक्ति के आधार पर की जाती है। आयोग का विचार है कि अन्ततोगत्वा सभी नगर निकायों के पास अपने निजी कर्मचारी नियुक्त करने का अधिकार होना चाहिए। तथापि, राज्य सरकारें ऐसी नियुक्तियाँ करने की प्रक्रिया और सिद्धान्त निर्धारित कर सकती हैं। मौजूदा राज्य-वार नगरपालिका संवर्ग वर्तमान के लिए भी जारी रह सकता है। लेकिन ऐसे संवर्गों में कोई नई भर्ती करने की आवश्यकता नहीं है।

5.2.5.3.2. कुछ राज्यों में नगरपालिका प्रशासन निदेशालय भी हैं। ये निदेशालय स्थानीय निकायों का पर्यवेक्षण करते हैं और कई बार ये नगरपालिका के कार्मिकों के सामान्य संवर्ग के लिए संवर्ग नियत्रण

प्राधिकारी के रूप में भी कार्य करते हैं। यह परिकल्पना की गई है कि भविष्य में नगर निकाय अपने निजी कर्मचारियों की नियुक्ति करेंगे और उनकी व्यवस्था करेंगे। इस प्रकार, राज्य स्तर पर किए जाने वाले केन्द्रीकृत नियंत्रण की आवश्यकता समाप्त हो जाएगी। नगरपालिका प्रशासन निदेशालय की स्थानीय निकायों का पर्यवेक्षण करने की मौजूदा प्रणाली शहरी स्थानीय निकायों की स्वायत्तता में घुसपैठ है। आयोग का विचार है कि नगरपालिका प्रशासन निदेशालय जैसे संगठन वास्तविक विकेन्द्रीकरण के रास्ते में आते हैं, अतः इन्हें समाप्त किया जाए।

5.2.5.4. सिफारिशें

(क) महापौर नगरपालिका का मुख्य कार्यकारी होना चाहिए, जबकि आयुक्त को उसके द्वारा प्रत्यायोजित कार्यों को निष्पादित करना चाहिए।

(ख) आयुक्त और अन्य कर्मचारियों के चयन और नियुक्ति की जिम्मेवारी दो वर्षों की अवधि के भीतर महानगर निगमों को दे दी जाए। अन्य निकायों के लिए यह कार्य तीन वर्ष की अवधि के भीतर किया जाए। तथापि, राज्य कानून द्वारा ऐसी नियुक्ति की प्रक्रिया और शर्तें निर्धारित करें। उस अवधि के लिए आयुक्त/मुख्य अधिकारी का राज्य सरकार से लिया जाना जारी रहे तथा चयन राज्य सरकार द्वारा भेजे गए नामों की सूची से महापौर द्वारा किया जाए।

(ग) नगरपालिका प्रशासन निदेशालयों को जहाँ कहीं हों, समाप्त कर दिया जाए। यदि नगरपालिका के कर्मचारियों का राज्यवार संवर्ग है तो इनके लिए कोई नई नियुक्ति न की जाए तथा कर्मचारियों को एक उचित प्रक्रिया द्वारा नगरपालिकाओं में समायोजित किया जाए।

5.3. शहरी वित्त व्यवस्था

5.3.1. रुपरेखा

5.3.1.1. चूंकि नगरपालिका संस्थाओं का विकास स्वतंत्रता पूर्व अवधि के दौरान हुआ था, इसलिए उनकी भूमिका धीरे-धीरे उनको अधिकाधिक कार्य एवं अधिकार सौंपने के साथ-साथ बढ़ी। लॉर्ड मायो, गवर्नर जनरल (1869-72) ने निर्वाचित निकायों को और कार्य सौंपते हुए एक संकल्प जारी किया। वर्ष 1882 में लॉर्ड रिपन ने स्थानीय शासनों के कार्यक्षेत्र को और बढ़ाया। इसके बाद स्थानीय निकायों को कुछ कराधान के अधिकार दिए जाए। नगरपालिका संस्थानों को कई कार्य स्थानान्तरित करने के बावजूद

पर्याप्त वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता हमेशा एक मुद्दा बना रहा। गोपाल कृष्ण गोखले ने 13 मार्च, 1912 को भारतीय विधान परिषद में एक संकल्प रखा था, जो निम्नानुसार पठित है:

> *कि यह परिषद यहाँ गवर्नर जनरल से सिफारिश करती है कि अधिकारियों एवं गैर अधिकारियों की समिति का गठन किया जाए जो उन्हें सौंपे गए कर्त्तव्यों के कुशल निष्पादन हेतु विभिन्न प्रान्तों में स्थानीय निकायों के हाथ में संसाधनों की पर्याप्तता और अन्यथा की जाँच करें तथा यदि आवश्यक हों, सुझाव दें, इन निकायों की वित्तीय स्थिति में किस प्रकार सुधार लाया जाए। (प्रकाशन प्रबन्धक, 1951, पृ. 21)*[52]

बॉक्स 5.4 : शहरी स्थानीय निकायों की राजकोषीय भूमिका की अन्तर्राष्ट्रीय तुलना

भारतीय शहरी स्थानीय निकाय चुनिन्दा अन्य देशों की तुलना में अपेक्षाकृत सीमित राजकोषीय भूमिका निभाते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय राजकोषीय तुलनात्मक विवरण सम्पूर्ण डाटा स्रोतों और संस्थानों की अतुलनात्मकता संबंधी समस्याओं से भरा हुआ है तथा ऐसी तुलनाओं की व्याख्या बड़ी सावधानी से करनी चाहिए, फिर भी निगमों में प्रति व्यक्ति कुल खर्च और राजस्व की तुलना पोलेंड, रूस, ब्राजील, मैक्सिको या दक्षिण अफ्रीका के प्रति व्यक्ति कुल खर्च और राजस्व का औसत दर्शाता है कि भारतीय शहरी स्थानीय निकाय मैक्सिको, जो मोटे तौर पर महराष्ट्र के समान हैं, को छोड़कर सभी तुलनात्मक देशों के प्रति व्यक्ति खर्च और राजस्व की तुलना में इनका खर्च और आय पर्याप्त रूप से कम है। महाराष्ट्र में निगमों का प्रति व्यक्ति औसत खर्च 58 डालर है जो रूस के औसतन स्थानीय खर्च 349 डालर या पौलेंड के औसत स्थानीय खर्च 358 डालर से काफी कम है। इन खर्चों का अन्तर आय के अन्तर को दर्शाता है, लेकिन यह भी सत्य है कि भारतीय शहरी स्थानीय निकायों के पास स्वास्थ्य एवं शिक्षा सेवाओं के लिए महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व नहीं है जबकि अन्य देशों में यह एक महत्त्वपूर्ण स्थानीय जिम्मेवारी है। ऐसा ही अन्तर प्रति व्यक्ति राजस्व एकत्र करने में भी है।

स्रोतः अबर्नन फाइनेंस एंड गवर्नेंस रिव्यू, विश्व बैंक 2004

5.3.1.2. भारत सरकार अधिनियम, 1919 में स्थानीय निकायों के अधिकारों के स्पष्ट निर्धारण की व्यवस्था की गई है तथा इसमें नगरपालिका का पथ-कर भूमि कर, भवन-कर, वाहन एवं नाव पर कर, पशुओं पर कर, चुंगी, टर्मिनल कर, व्यापार कर, व्यवसाय एवं आजीविका पर कर, गैर-सरकारी बाजार पर कर और जलापूर्ति, प्रकाश-व्यवस्था और मल-जल निकास और जन-सुविधाएं जैसी नगरपालिका सेवाओं पर कर शामिल है।

5.3.1.3. अहमदाबाद नगरपालिका के तत्कालीन अध्यक्ष, सरदार बल्लभ भाई पटेल ने कहाः

> *"यह कहा जा रहा है कि निर्वाचन समूह का मताधिकार बढ़ा दिया गया है तथा स्थानीय निकायों को व्यापक अधिकार दे दिए गए हैं। सही, मैं स्वीकार करता हूं लेकिन जब तक स्थानीय वित्तीय व्यवस्था संबंधी प्रश्न का समाधान नहीं हो जाता तब तक अच्छा परिणाम क्या निकलेगा। मताधिकार का विस्तार और कर्त्तव्यों के कार्यक्षेत्र को बढ़ाना वैसा ही होगा जैसा कि मृत महिला का श्रृंगार करना।*[53]

52 15-8-07 को पुनः प्राप्त http//fincomindia.nic.in/speech/choubey_ulb.pdf

53 htpp://fincomindia.nic.in/speech/choubey_ulb.pdf सरदार बल्ल्भ भाई पटेल जो उस समय अहमदाबाद नगरपालिका के अध्यक्ष थे (1935) का 1935 में सूरत में प्रान्तीय स्थानीय निकायों के सम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण।

5.3.1.4. भारत सरकार का अधिनियम, 1935 में दो-स्तरीय फैडरेशन की स्थापना करने का अनुरोध किया गया है। तथापि, शहरी स्थानीय शासन के प्रति सम्पूर्ण दृष्टिकोण में बदलाव आया और स्थानीय निकायों के कराधान संबंधी अधिकार प्रान्तों को हस्तान्तरित करके कम किए गए। इस संरचना को हमारे संविधान में रखा गया था। स्थानीय निकायों की तुलना में राज्यों के अधिकारों को सातवीं अनुसूची की सूची II (राज्य सूची) में रखा गया तथा कर लगाने का प्राधिकार संघ सरकार और राज्यों तक सीमित रखा गया। राज्यों को अधिकार दिए गए थे कि वे नगरपालिकाओं के कार्यों और वित्तीय अधिकारों के संबंध में निर्णय ले सकते हैं।[54]

बॉक्स 5.5: शहरी स्थानीय निकायों की वित्तीय स्थिति

"समिति ने यह उल्लेख करते हुए अपना गहरा रोष प्रकट किया कि शहरों और नगरों में मूलभूत अवसंरचना और सेवाओं का प्रावधान करने एवं उनका रख-रखाव करने के लिए सांविधिक दृष्टि से उत्तरदायी अधिकांश नगरपालिकाएं आदि राजकोषीय दबाव में हैं। उन्हें विश्वास दिलाना पड़ा कि कई नगरपालिकाएँ अपने निर्धारित नागरिक कार्यों को करने, अपने कर्मचारियों को वेतन तथा मजदूरी देने में सक्षम नहीं रही है, हालांकि वृहत्तर नगर निगमों की वित्तीय स्थिति उतनी खराब नहीं रही थी जितनी की छोटी नगरपालिकाओं की रही थी।

[शहरी विकास संबंधी स्थायी समिति की दसवीं रिपोर्ट (2004-2005), चौदहवीं लोकसभा)]

5.3.1.5. हालांकि राजस्व संग्रहण के संबंध में नगरपालिकाओं के निष्पादन और खर्च के स्तर सम्पूर्ण राज्यों में अलग-अलग हैं, फिर भी सामान्यतः कहा जा सकता है कि 74वें संवैधानिक संशोधनों के बाद भी नगर संस्थाओं की वित्तीय स्थिति में उनके कार्यों और उत्तरदायित्वों के अनुरूप सुधार नहीं हुआ है। इसके अतिरिक्त छोटी नगर संस्थाओं की स्थिति अधिक खराब है और कई बार उन्हें अपनी संस्थापना लागत को भी पूरा करने में कठिनाई होती है।

5.3.1.6. अनुमान दर्शातें है कि सार्वजनिक क्षेत्र के समग्र व्यय में नगरपालिका के व्यय का हिस्सा जो वर्ष 1960-61 में 8 प्रतिशत था धीरे-धीरे घटकर वर्ष 1977-78 में 4.5 प्रतिशत रह गया तथा वर्ष 1991-92 में लगभग 2 प्रतिशत रह गया था। वर्ष 1991-92 में, नगरपालिकाओं ने अपने निजी संसाधनों से कुल 3,900 करोड़ रुपए उगाहे, जबकि राज्यों ने 48,660 करोड़ रुपए और केन्द्र ने 83,320 करोड़ रुपए उगाहे।[55] बारहवें वित्त आयोग के अनुसार नगरपालिका क्षेत्र का आकार उगाहे गए संसाधनों तथा नगरपालिकाओं द्वारा किए गए व्यय की दृष्टि से सकल घरेलू उत्पाद का केवल एक प्रतिशत था तथा शहरी स्थानीय निकायों में राज्यों से अंतरित धनराशि जो शहरी स्थानीय निकायों के लिए राजस्व का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं, राज्यों के निजी संसाधनों की केवल 3.8 प्रतिशत थी।

बॉक्स 5.6 : स्थापना पर व्यय

स्थापना (वेतन और मजदूरी) पर व्यय नगरपालिका के कुल व्यय का 54.2 प्रतिशत बैठता है। तथापि, कई राज्यों में यह 80.4 प्रतिशत से भी अधिक है। ....स्थापना और संचालन एवं रख-रखाव के बीच व्यय के विभाजन के संबंध में कोई मानदंड नहीं है और इसलिए यह सुनिश्चित करना संभव नहीं है कि ये समानुपात किसी भी दृष्टि से अत्यधिक हैं।

स्रोतः भारत अवसंरचना रिपोर्ट 2006-शहरी अवसंरचना।

54 15-8-07 को पुनः प्राप्त देखें htttpp://www.wordldban/mun_fin/unifpapers/garg.pdf,

55 पुनर्भाषित राज्य-नगरपालिका राजाकोषीय संबंध : राज्य वित्त आयोग के विकल्प और संदर्भ, 1995, एनआईपीएफपी।

5.3.2. शहरी स्थानीय निकायों की वित्तीय स्थिति

5.3.2.1. शहरी स्थानीय निकायों की सुदृढ़ता उनकी वित्तीय स्थिति और अपनी निजी आवश्यकताओं की देखभाल करने की उनकी क्षमता से परिलक्षित होगी। वित्तीय वहनीयता की मूलभूत आवश्यकता को वित्तीय अधिकारों की आवश्यकता के साथ जोड़कर देखा जाए। दुर्भाग्य से शहरी जनसंख्या राष्ट्रीय दर की तुलना में अधिक तेज दर से बढ़ रही है, जिससे शहरी निकाय वित्तीय संसाधनों के लिए केन्द्र और राज्यों पर अधिक निर्भर हो गए हैं। एक नगरपालिका की आय और व्यय का उदाहरण चित्र 5.2 और 5.3 में दर्शाया गया है।[56] शहरी स्थानीय निकाय के मामले में प्राप्तियों को मोटे तौर पर निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है:

- कर राजस्व-सम्पत्ति कर, विज्ञापन कर आदि,
- कर-भिन्न-किराया, रॉयल्टी, ब्याज, शुल्क और लाभ/लाभांश, जल, मल-जल निकासी आदि जैसे जनोपयोगी सेवाओं के लिए प्रयोक्ता प्रभार के रूप में आय,
- राज्य सरकार से निधियों की सुपुर्दगी,
- विकास योजनाओं के लिए केन्द्र और राज्य सरकारों से अनुदान,
- उधार।

चित्र 5.2 बंगलुरू शहर के राजस्व के स्रोत (2007-08)
(कुल प्राप्ति 3302 करोड़ रुपए)

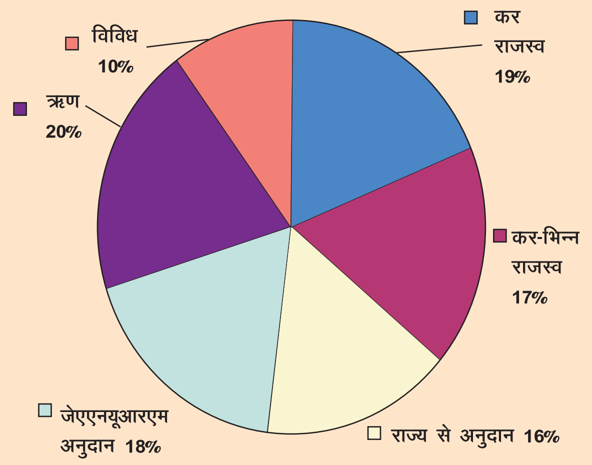

चित्र 5.3 म्यूनिसिपल सिटी कॉरपोरेशन (बंगलुरू-2007-08)
के वार्षिक व्यय का वर्गीकरण

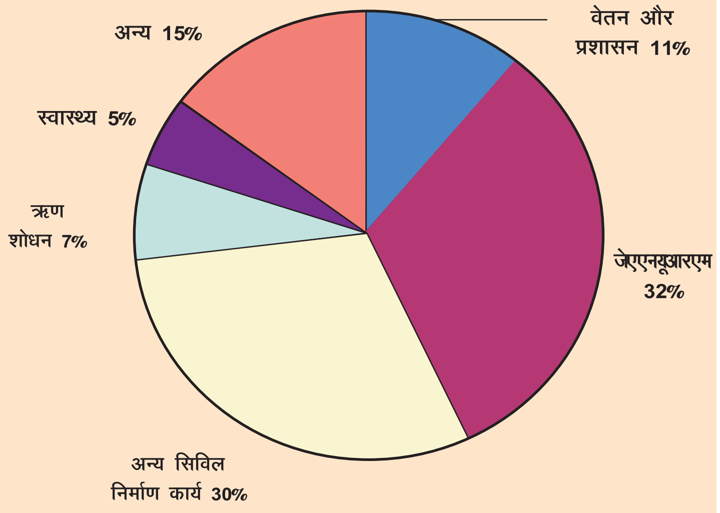

56 स्रोत : वृहत बंगलुरु महानगर पालिका की वेबसाइट, http://www.bmponiline.org/

5.3.2.2 नगरपालिका संसाधनों की अखिल भारतीय प्रवृत्ति सारणी 5.9 में दी गई है :

सारणी 5.9: नगरपालिका संसाधन की प्रवृत्ति

(करोड़ रुपए में)

राजस्व	1997-98	1998-99	1999-2000	2000-01	2001-02
निजी कर	6,060.34	6,582.77	7,235.65	8,261.89	8,756.10
निजी कर-भिन्न	7,606.07	11,914.50	2,101.74	2,562.75	2,918.55
कुल निजी राजस्व	7,666.41	8,497.27	9,337.39	10,824.64	11,674.65
राज्य-अन्तरण	3,275.01	4,281.28	5,225.63	5,423.33	5,629.58
सकल राजस्व	10,941.42	12,778.55	14,563.02	16,247.97	17,304.23
राजस्व व्यय	9,147.91	10,722.15	12,053.91	12,849.10	13,621.44

स्रोत : एनआईपीएफपी

5.3.2.3. बारहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट में उपलब्ध आंकड़े हालांकि कुछ हद तक अलग स्थिति को दर्शाते हैं। वह रिपोर्ट इंगित करती है कि वर्ष 2001-02 में नगरपालिकाओं का निजी राजस्व 8760.16 करोड़ रुपए था, जो अगले वर्ष घटकर 7360.28 करोड़ रुपए रह गया। वह राज्य सरकारों द्वारा मुहैया कराए गए संभवतः अपूर्ण आंकड़े थे।

सारणी 5.10 : स्थानीय शहरी निकायों (सभी स्तरों पर) का अखिल भारतीय राजस्व एवं व्यय (बारहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट के अनुसार)

(करोड़ रुपए में)

राजस्व	1998-99	1999-2000	2000-01	2001-02	2002-03
निजी-कर	4755.52	5151.01	5617.57	5885.81	4941.18
निजी-कर-भिन्न	2117.90	2228.84	2642.95	2874.35	2419.11
निजी राजस्व	6873.42	7379.86	8260.52	8760.16	7360.28
समनुदेशन + सुपुर्दगी	2208.32	2646.60	2981.84	2744.63	2228.90

सहायता अनुदान	1807.86	2251.21	2239.24	2671.65	2075.97
अन्य	625.03	895.30	1099.45	972.76	931.35
कुल अन्य राजस्व	4641.22	5793.10	6320.52	6389.04	5236.22
सकल राजस्व	11514.64	13172.96	14581.04	15149.20	12596.50
राजस्व व्यय	9059.47	110690.30	11665.88	12204.78	10671.63
पूंजीगत व्यय	2975.47	3761.36	4077.17	3709.51	3325.40
कुल व्यय	12034.95	14451.67	15743.05	15914.29	13997.02

स्रोतः वित्त आयोग द्वारा विभिन्न राज्य सरकारों से प्राप्त प्रश्नावली में दिए गए आंकड़े

5.3.2.4. एक समान लेखाकरण और रिपोर्टिंग संरचना के अभाव के कारण विभिन्न एजेंसियों द्वारा संकलित आंकड़ों में अन्तर के बावजूद यह स्पष्ट है कि नगरपालिका के राजस्व में सामान्यतः सीमित बढ़ोत्तरी हुई। एनआईपीएफपी के आंकड़ों के अनुसार वर्ष 1997-98 से 2001-02 तक शहरी स्थानीय निकायों के राजस्व की वृद्धि दर निम्नानुसार है :

नगरपालिकाओं की अपनी राजस्व प्राप्तियाँ	-	10.48 प्रतिशत
नगरपालिकाओं की कर राजस्व प्राप्तियाँ	-	9.20 प्रतिशत
नगरपालिकाओं की कर-भिन्न राजस्व प्राप्तियाँ	-	14.93 प्रतिशत
नगरपालिकाओं को राज्यों से अन्तरण	-	13.54 प्रतिशत

5.3.2.5. तुलनात्मक दृष्टि से संघ सरकार का कर राजस्व वर्ष 2001-02 में 187060 करोड़ रुपए था, जो वर्ष 2006-07 (बजट अनुमान) में 47.27 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि दर से बढ़कर 442153 करोड़ रुपए हो गया। इसी अवधि में राज्यों का कर राजस्व 128097 करोड़ रुपए से बढ़कर 252573 करोड़ रुपए हो गया, जो 39.44 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि दर्शाता है। यद्यपि आंकड़ों के दो सेट विभिन्न अवधियों से संबंधित हैं, फिर भी इसमें प्रदर्शित प्रवृत्ति काफी स्पष्ट है।

5.3.2.6. स्थानीय सरकारों के कार्यात्मक उत्तरदायित्वों और संसाधन सृजन की क्षमता के बीच प्रायः असमानता होती है। ऐसी असमानता सामान्यतः कराधान अधिकारों के अपर्याप्त प्रत्यायोजन अथवा प्रशासनिक सुविधा के मामले का परिणाम होती है - कुछ कर अधिक कुशलता से एकत्रित किए जा

सकते हैं, बशर्ते कि उनका प्रशासन सरकार के उच्चतर स्तर द्वारा किया जाए। अतः शासन का निचला स्तर वास्तविक अन्तरण हेतु उच्चतर स्तर पर निर्भर करेगा। संघ सरकार अपने राष्ट्रव्यापी अधिकार क्षेत्र के साथ आय कर, सीमा-शुल्क एवं उत्पाद-शुल्क जैसे करों की व्यवस्था करने के लिए तथा स्थानीय परिस्थितियों से अच्छी तरह परिचित स्थानीय सरकार सम्पत्ति कर जैसे करों का संचालन करना सर्वाधिक उपयुक्त है। संघ सरकार द्वारा संचालित कर लचीले, वृद्धिशील और व्यापक आधार वाले हैं। अतः संघ सरकार से राज्य सरकार को संध सरकार से स्थानीय सरकार को और राज्य सरकार से स्थानीय सरकार को निधियों का उपयुक्त अन्तरण करना बहुत जरूरी हो गया है। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रावधान मूलतः संविधान के अनुच्छेद 280 के रूप में किया गया था ताकि संघ से राज्यों को संसाधनों का उचित और समान अन्तरण सुनिश्चित हो सके। 73वें और 74वें संशोधन के बाद संविधान के अनुच्छेद 243झ में अब राज्य वित्त आयोगों के माध्यम से राज्यों से स्थानीय शासनों को संसाधनों के अन्तरण हेतु ऐसी ही व्यवस्थाएं की गई है। (राज्य वित्त आयोगों की भूमिका अध्याय 3.5 में विस्तार से दी गई है।)

5.3.2.7. राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों पर निधियों की सुपुर्दगी के अतिरिक्त केन्द्र और राज्य सरकार की ऐसी कई स्कीमें हैं जिनके तहत निधियाँ स्थानीय निकायों को जारी की जाती है। अवसंरचना के विकास हेतु केन्द्रीय सहायता संबद्ध सुधार मुहैया कराने के उद्देश्य से वर्ष 2005 में 63 शहरों में जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन (जेएनएनयूआरएम) की शुरूआत की गई थी इस मिशन से बाहर रह गए शहरों/नगरों के लिए शहरी विकास मंत्रालय ने एक अन्य स्कीम छोटे और मध्य नगरों के लिए शहरी अवसंरचना विकास स्कीम शुरू की है। वृहद शहरों में अवसंरचना विकास की पूर्व स्कीमों अर्थात छोटे और मध्यम नगरों का समेकित विकास (आईडीएसएमटी), त्वरित शहरी जलापूर्ति कार्यक्रम (एयूडब्ल्यूएसपी) तथा शहरी सुधार पहल निधि (यूआरआईएफ) को नई स्कीमों में मिला दिया गया है।

बॉक्स 5.7: नगरपालिकाओं का कर-अधिकार क्षेत्र

"समिति ने भी नोट किया कि राज्य सरकारें करों के संबंध में विशेष रूप से उल्लेख करती हैं कि नगरपालिका उन करों को वसूल और एकत्र कर सकती है जिन्हें अधिकांशतः के संविधान की सातवीं अनुसूची में दी गई राज्य सूची से लिया जाता है। चूंकि नगरपालिकाओं के लिए कोई सुस्पष्ट कर अधिकार क्षेत्र विनिर्दिष्ट नहीं किया गया है, इसलिए राज्य नगरपालिका कानून नगरपालिका करों के संबंध में एक समान नहीं है। अतः यह समिति सिफारिश करती है कि संघ सरकार सभी राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्रों की नगरपालिकाओं के लिए सुस्पष्ट कर-अधिकार क्षेत्र के लिए राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों पर दबाव डाले ताकि नगरपालिकाओं द्वारा और अधिक सुव्यवस्थित एवं उपयुक्त राजकोषीय प्रबन्धन किया जा सके।"

(स्रोतः शहरी विकास संबंधी स्थायी समिति (2004-05), दसवीं रिपोर्ट, सिफारिश, पैरा संख्या 3.10)

5.3.2.8. शहरी स्थानीय निकायों को सामान्यतः कई प्रकार के कर वसूल करने एवं उनका विनियोजन करने के लिए प्राधिकृत किया गया है। ये हैः सम्पत्ति कर, विज्ञापन कर, पशुओं पर कर, मनोरंजन कर आदि। राज्य के मुख्य कर जिनका एक हिस्सा शहरी स्थानीय निकायों को दिया जाता है, वे हैं-व्यवसाय कर, स्टाम्प शुल्क, मनोरंजन कर और मोटर वाहन कर। यह सुझाव देना आकर्षक है कि इनमें से कुछ कर नगरपालिकाओं द्वारा एकत्र किए और रखे जाते हैं। तथापि, नगरपालिका प्रशासन में सतही स्तर पर क्षमता की मौजूदा कभी को देखते हुए आशंका है कि इन करों को वसलूने के प्रयासों में कभी से नगरपालिका सेवाएँ ठप्प हो जाएंगी। इसके अतिरिक्त कर दक्षता के लिए राज्य स्तर पर करों के उद्ग्रहण की मांग की जा सकती है। इसके अतिरिक्त, इन सभी करों को सम्पूर्ण रूप से शहरी (और ग्रामीण) स्थानीय निकायों को अन्तरित करने से भी राज्य योजनाओं की वित्तीय स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

5.3.2.9. संविधान की कार्यप्रणाली की समीक्षा करने संबंधी राष्ट्रीय आयोग ने निम्न प्रकार सिफारिश की :

> *अतः आयोग सिफारिश करता है कि ग्यारहवीं और बारहवीं अनुसूची को इस प्रकार पुनर्गठित किया जाए कि पंचायतों और नगरपालिकाओं के लिए एक अलग से राजकोषीय व्यवस्था हो सके। तदनुसार, राज्यों के विधानमण्डलों को पंचायतों और नगरपालिकाओं के लिए अधिकार अन्तरित करने का कानून बनाना अनिवार्य करके अनुच्छेद 243ङ और 243भ में संशोधन किया जाए।*

5.3.2.10. आयोग का विचार है कि संविधान में संशोधन करके स्थानीय सरकारों के लिए एक अलग कर क्षेत्र सृजित करना व्यावहारिक नहीं हैं तथापि, राज्यों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कानून स्थानीय निकायों को करों के संबंध में पर्याप्त अधिकार देता है ताकि स्थानीय स्तरों पर कर और अधिक उपयुक्त रूप से वसूले जाएं।

5.3.3 सम्पत्ति कर सुधार

5.3.3.1 अधिकांश राज्यों द्वारा चुंगी समाप्त कर देने से सम्पत्ति कर स्थानीय शासनों के लिए राजस्व का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। हाल ही के वर्षों में सम्पत्ति कर प्रशासन में पर्याप्त सुधार किए गए हैं। प्रारम्भ में इस कर को वसूलने का आधार वार्षिक जमाबन्दी मूल्य (एआरवी.)[57] था। आंकलन की इस पद्धति में कई कमियाँ थीं-आंकलन का तरीका अपारदर्शी था और इसका आंकलन करने वाले अधिकारी को स्व-निर्णय लेने का अधिकार था तथा यह अलभ्य एवं अनुत्पलावक था। सर्वोच्च न्यायालय ने कराधान

57 एआरवी को किसी संपत्ति द्वारा प्राप्त कर सकने वाले अथवा करने वाले उचित किराए के रूप में परिभाषित किया जाता है।

पद्धति में सुधार लाने का निदेश दिया। भारत सरकार ने वर्ष 1998 में सम्पत्ति कर सुधार के लिए दिशानिर्देश निरूपित एवं परिचालित किए। परिणामस्वरूप अनेकों नगरपालिकाओं ने परम्परागत एआरवी आधारित आंकलन के स्थान पर 'यूनिट एरिया' अथवा 'पूंजीगत मूल्य' पद्धतियों को अपनाया। इन उपायों के बावजूद भी ऐसे कई और उपाय हैं जिनसे कर आधार में सुधार लाया जा सकता है तथा इसके उद्ग्रहण की क्षमता बढ़ाई जा सकती है। इनमें से कुछ पर अनुवर्ती पैराग्राफों में विचार-विमर्श किया गया है।

5.3.3.2. कर आधार को बढ़ानाः अनुमान है कि शहरी क्षेत्रों में वास्तविक तौर पर केवल करीब 60-70 प्रतिशत सम्पत्तियों का आंकलन किया जाता है। कम कवरेज के कई कारण है। नगरपालिकाओं की सीमाएँ उस गति से नहीं बढ़ी है जिस गति से शहर का अव्यवस्थित रूप से फैलाव हुआ है। फलस्वरूप बहुत सारी सम्पत्तियाँ नगरपालिकाओं के कानूनी अधिकार क्षेत्र से बाहर हैं। बड़े शहरों में जहाँ शहर विकास प्राधिकरण मौजूद हैं वहाँ ऐसे प्राधिकरणों द्वारा विकसित किए गए क्षेत्र तथा ऐसे क्षेत्रों में निर्मित भवनों का आंकलन तब तक नहीं किया जा सकता जब तक ये क्षेत्र तकनीकी तौर पर नगरपालिकाओं को नहीं सौंप दिए जाते। वास्तविक तौर पर इसमें कई वर्ष लग सकते हैं। राज्य कानून प्रायः भवनों की ऐसी बहुत सारी श्रेणियों को छूट देता है जो किसी धार्मिक अथवा धर्मादा संस्थानों से संबंध रखती है। इन संस्थानों में प्रायः सभी गैर-सरकारी शैक्षणिक एवं चिकित्सा संस्थान शामिल होते हैं। अप्राधिकृत निर्माण जो भारत के प्रायः सभी शहरों में काफी आम हैं, पर नगरपालिका प्राधिकारियों द्वारा आमतौर पर इस डर से कर नहीं लगाया जाता है कि इन भवनों पर सम्पत्ति कर लगाने से इनको विनियमित करने की मांग और सुदृढ़ हो जाएगी। संघ और राज्य सरकारों से संबंधित बहुत सारी सम्पत्तियों पर कर अनुच्छेद 285[58] के प्रावधानों के कारण नहीं लगाया जाता है। स्थानीय शासन ऐसी सम्पत्तियों के अधिभोक्ताओं को सेवाएँ मुहैया करता है तथा ठोस अपशिष्ट पदार्थ प्रबन्धन, सम्पर्क सड़कों का रख-रखाव तथा सामान्य नागरिक सुविधाएं जैसी सेवाएं मुहैया करवाने में लागत लगती है। अतः स्थानीय शासनों के पास इन सम्पत्तियों के संबंध में 'सेवा प्रभार' वसूल करने के अधिकार होने चाहिए। इसी प्रकार पट्टे पर ली गई नगरपालिका शासन की सम्पत्तियों पर कर नहीं लगाया जाता है। ऐसी सम्पत्तियाँ हालांकि दीर्घकाल तक अधिभोक्ताओं के अधिकार में रहती हैं फिर भी इनसे स्थानीय सरकार को बहुत कम आय होती है। सम्पत्ति के स्वामित्व के रिकॉर्ड का असंतोषप्रद मानक बहुत कम कर वसूली भी एक कारण हैं। अंतिम और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आंकलन करने वाले प्राधिकारियों और सम्पत्ति मालिकों के बीच सांठ-गांठ भी सम्पत्तियों के कर जाल में आने से बचने का एक कारण है।

58 अनुच्छेद 285ः(1) जहां तक संसद विधि द्वारा अन्यथा प्रदान नहीं करे तब तक किसी राज्य अथवा राज्य के भीतर किसी प्राधिकारी द्वारा अधिरोपित सभी करों से संघ की संपत्ति को छूट प्राप्त होगी।

5.3.3.3. आयोग का विचार है कि केन्द्र सरकार को उस मामले पर राज्यों के साथ लगातार सम्पर्क करना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि सभी राज्य या तो 'यूनिट एरिया' अथवा 'पूंजीगत मूल्य' प्रणाली को समयबद्ध रूप से अपना रहे हैं। सम्पत्ति कर से छूट सम्पत्तियों की श्रेणियों पर पुनः विचार-विमर्श करने और उन्हें कम से कम करने की आवश्यकता है। यह सुनिश्चित करने के उद्देश्य से कि अप्राधिकृत निर्माण कर जाल से बच न पाएं, राज्य कानून निर्धारित करें कि यदि कोई सम्पत्ति कानून को तोड़कर निर्मित की गई है तो उस सम्पत्ति पर कर वसलूने से सम्पत्ति स्वामी को उस पर स्वामित्व का कोई अधिकार नहीं मिलेगा। सम्पत्ति कर एकत्र करने की क्षमता में सुधार लाने के उद्देश्य से सभी सम्पत्तियों की मैपिंग के प्रयोजन हेतु जीईएस के उपयोग सहित सम्पत्ति कर में सुधार के लिए जेएनएनयूआरएम के तहत पहले से ही कई कदम उठाए जा रहे हैं। सभी सम्पत्तियों की सम्पत्ति का ब्यौरा सरकारी अधिकार क्षेत्र में डाला जाना चाहिए ताकि आंकलन प्राधिकारी और सम्पत्ति स्वामी के बीच किसी भी प्रकार की सांठ-गांठ न होने पाए। राज्य कानूनों में नगरपालिका प्राधिकारियों से संबंधित सम्पत्तियों पर पट्टे पर दी गई सम्पत्तियों को छोड़कर कर की व्यवस्था की जानी चाहिए। इसी प्रकार, कानून में संघ और राज्य सरकारों से संबंधित सम्पत्तियों पर सेवा प्रभार वसूल करने की व्यवस्था होनी चाहिए।

5.3.3.4. अपील करने की प्रक्रिया को युक्तिसंगत बनाना

किसी सम्पत्ति पर प्रभार योग्य कर का आंकलन करना सम्पत्ति कर प्रशासन में पहला कदम होता है। पहले, आंकलन अधिकारी के पास पर्याप्त विवेकाधिकार था और फलस्वरूप ऐसे अधिकारियों के विरुद्ध अनेकों शिकायतें थी तथा कई मामलों में कर-निर्धारिती को अपील फाइल करनी पड़ेगी, 'स्वयं निर्धारण', चाहे यह 'यूनिट एरिया प्रणाली' हो और चाहे 'पूंजीगत मूल्य प्रणाली' हो, की शुरूआत से कई अपीलों के कम होने की संभावना है। तथापि फिर भी ऐसे मामले हो सकते हैं, जिनमें विस्तृत जांच के अधीन कर के संशोधन की आवश्यकता पड़े। ऐसे मामलों में निर्धारिती यदि असन्तुष्ट हो तो वह स्पष्टतः अपील को अधिमानता देगा।

बॉक्स 5.8: कर संग्रहण क्षमता

(वर्तमान मांग की प्रतिशतता के रूप में संग्रहण (1999-2000)

मुंबई	55.6%
कोलकाता	55.0%
बंगलुरू	63.8%
हैदराबाद	74.8%
भोपाल	19.4%
लुधियाना	70.0%
मिर्जापुर	31.0%
अहमदाबाद	12.5%
चेन्नई	63.1%
जयपुर	58.9%
पटना	66.0%

स्रोतः डॉ. ए. रविन्द्र और वसन्त राव, भारत में सम्पत्ति कर सुधार (यू.एन.डी.पी. अध्ययन, 2002)

5.3.3.5. पूर्व प्रणाली में, निर्धारण अधिकारी के विरुद्ध अपील मुख्य कार्यकारी अधिकारी या स्थायी समिति, जिसमें निर्वाचित प्रतिनिधि होते हैं, से की जा सकती है। आयोग की राय है कि निष्पक्षता और वास्तविकता की दृष्टि से अपील स्वतंत्र अर्ध-न्यायिक प्राधिकारी से की जानी चाहिए।

5.3.3.6. संग्रहण क्षमता में सुधार लानाः देखा गया है कि नगरपालिका करों की संग्रहण क्षमता 40 प्रतिशत से 46 प्रतिशत की सीमा में है (एनआईयूए, 1993)। हाल ही में किया गया अध्ययन (देखें बॉक्स 5.8) व्यापक भिन्नता को दर्शाता है। घटिया डाटाबेस प्रबन्धन रिकॉर्डों को अव्यवस्थित रूप से रखना, करदाताओं और वसूली अधिकारियों के बीच सांठ-गांठ तथा कर प्रणाली की समझ का अभाव वसूली दर कम करने के मुख्य कारण हैं। अन्तिम लेकिन महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वसूली अधिकारियों के पास प्रवर्तन अधिकार होते हैं लेकिन वे प्रतिहिंसा के डर से प्रायः उनका इस्तेमाल नहीं करते। कराधान की नई, सरल और पारदर्शी प्रणाली शुरू करने से कर संग्रहण क्षमता में निश्चित रूप से सुधार आएगा। प्रत्येक नगरपालिका क्षेत्र में एक पृथक स्कंध द्वारा मुख्य कार्यकारी के प्रत्यक्ष नियंत्रण में सम्पत्तियों और उन पर वसूले ऋण करों की वास्तविक आवधिक जांच की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त आंकलन के यादृच्छिक रूप से चुनिन्दा मामलों की लेखापरीक्षा सरकारी लेखापरीक्षकों द्वारा उसी प्रकार की जानी चाहिए जिस प्रकार संघ और राज्य करों के मामले में सीएंडएजी द्वारा की जाती है। चूंकि दोनों 'यूनिट एरिया प्रणाली' और 'पूंजीगत मूल्य प्रणाली' स्वयं आंकलन के सिद्धान्तों पर आधारित है, इसलिए सम्पत्ति स्वामियों द्वारा तथ्यों को छुपाने के मामले में कानून में उदाहरणात्मक दंड देने का प्रावधान करना चाहिए।

5.3.3.7. सम्पत्ति कर को उत्प्लावक बनाना

वार्षिक किराया मूल्य (एआरवी) पर आधारित सम्पत्ति कर की बड़ी कमियों में से एक बड़ी कमी यह थी कि वह अनोत्प्लावक था। किसी सम्पत्ति के लिए निर्धारित कर को तब तक अपरिवर्तित रहना चाहिए जब तक नगरपालिका क्षेत्रों में सम्पत्ति कर में समग्र रूप से संशोधन न हो जाए। कुछ स्थानों पर ऐसे संशोधन कई वर्षों या दशकों से नहीं हुए हैं। यूनिट एरिया प्रणाली से कुछ हद तक इस समस्या से निजात मिली है, चूंकि कर आंकलन के विभिन्न पैरामीटर आवधिक रूप से परिवर्तित हो सकते हैं ताकि बाजार मूल्य प्रदर्शित हो सके। 'पूंजीगत मूल्य' पर आधारित सम्पत्ति कर से इस समस्या का पूरी तरह से निराकरण हो जाता है, चूंकि करों का निर्धारण सम्पत्ति मालिक द्वारा प्रत्येक वर्ष स्वयं किया जाता है और ऐसा करते समय उस वर्ष के लिए निर्धारित बाजार मूल्य को ध्यान में रखा जाता है। इससे सुनिश्चित होता है कि सम्पत्ति कर मौजूदा बाजार मूल्य को प्रदर्शित करता है, इसलिए यह उत्प्लावक है।

5.3.3.8. सिफारिशें

(क) राज्य सरकारें यह सुनिश्चित करें कि सभी स्थानीय निकाय सम्पत्ति कर का आंकलन समयबद्ध तरीके से करने के लिए 'यूनिट एरिया प्रणाली' अथवा 'पूंजीगत मूल्य प्रणाली' को अपनाएँ।

(ख) सम्पत्ति कर से छूट प्राप्त करने वाली श्रेणियों की समीक्षा करने और उन्हें न्यूनतम करने की आवश्यकता है।

(ग) यह सुनिश्चित करने के उद्देश्य से कि अप्राधिकृत निर्माण कर जाल से न बच पाएं राज्य कानून निर्धारित करें कि यदि कोई सम्पत्ति किसी कानून या विनियम का उल्लंघन करके निर्मित की गई है तो उस सम्पत्ति पर कर वसूलने से सम्पत्ति के स्वामी को उस पर स्वामित्व का कोई अधिकार नहीं मिलेगा।

(घ) सभी सम्पत्तियों के सम्पत्ति कर का ब्यौरा सरकारी अधिकार-क्षेत्र में डाला जाना चाहिए ताकि निर्धारक प्राधिकारी और सम्पत्ति के स्वामी के बीच सांठ-गांठ न होने पाए।

(ङ.) राज्य कानून में नगरपालिका प्राधिकारियों से संबंधित पट्टे पर दी गई सम्पत्तियों पर कर की अदायगी दखलकार द्वारा करने की व्यवस्था की जाए।

(च) केन्द्र और राज्य सरकारों से संबंधित सम्पत्तियों पर सेवा प्रभार वसूलने की व्यवस्था कानून में होनी चाहिए। यह सेवा प्रभार ठोस अपशिष्ट पदार्थ प्रबन्धन, सफाई व्यवस्था, सड़कों का रख-रखाव, गलियों में प्रकाश-व्यवस्था और सामान्य सिविक सुविधाएँ जैसी मुहैया कराई गई विभिन्न सेवाओं के बदले होना चाहिए।

(छ) सम्पत्तियों और उन पर वसूल किए गए करों की आवधिक रूप से वास्तविक जांच प्रत्येक नगरपालिका क्षेत्र में मुख्य कार्यपालक के नियंत्रण में एक पृथक स्कंध द्वारा प्रत्यक्षतः होनी चाहिए।

(ज) सभी नगरपालिका क्षेत्रों के लिए जीआईएस मैपिंग का उपयोग करते हुए सभी सम्पत्तियों के कम्प्यूटरीकृत डाटाबेस तैयार किए जाएं।

(झ) निर्धारण के यादृच्छिक रूप से चुनिन्दा मामलों में लेखापरीक्षा सरकारी लेखापरीक्षकों द्वारा उसी प्रकार की जाए जिस पर संघीय करों के मामले में सीएण्डएजी द्वारा की जाती हैं।

5.3.4. चुंगी

5.3.4.1. विगत में नगरपालिकाओं के राजस्व का मुख्य स्रोत चुंगी था। कर वसूली और संग्रहण की अप्रचलित पद्धति और व्यापार एवं परिवहन की सतत मांग के कारण अधिकांश राज्यों में इसे समाप्त कर दिया गया है। तथापि कुछ राज्यों में चुंगी अभी भी मौजूद है। इस पर बहस की गई कि 'चुंगी' की वसूली संग्रहण की अप्रचलित पद्धति पर आधारित है, जिसमें भ्रष्टाचार पनपता है और माल की निःशुल्क आवाजाही में बाधा डालता है। कई समितियों ने इस मुद्दे का अध्ययन किया है। महाराष्ट्र मुख्यतः मुम्बई में इस कर के जरिए 5,000 करोड़ रुपए से अधिक संग्रहित करता है। महाराष्ट्र सरकार ने चुंगी विकल्प का सुझाव देने के लिए एक अध्ययन दल बनाया। लेकिन यह रिपोर्ट तथाकथित रूप से अभी स्वीकार की जानी है तथा उस पर अमल किया जाना है। प्रशासनिक दक्षता की दृष्टि से चुंगी से माल की आवाजाही में विलम्ब होता है तथा यह न तो पारदर्शी है और न ही सक्षम। मुम्बई, जहां वर्ष 2007-08 में 3,925 करोड़ रुपए का संग्रहण करने का अनुमान है, में इस कर का आकलन करने और इसका संग्रहण करने हेतु 4500 से अधिक कर्मचारी है। आयोग का विचार है कि चुंगी को समाप्त कर दिया जाए लेकिन साथ ही राज्यों को ऐसी समाप्ति के फलस्वरूप राजस्व में हानि के लिए स्थानीय निकायों की प्रतिपूर्ति करने के लिए एक कार्यतंत्र विकसित करना चाहिए।

5.3.4.2. सिफारिश

(क) **चुंगी सामाप्त होनी चाहिए लेकिन राज्यों को ऐसी समाप्ति से होने वाली राजस्व की हानि के लिए स्थानीय सरकार की प्रतिपूर्ति करने हेतु कार्यतंत्र विकसित करना चाहिए।**

5.3.5. अन्य कर

5.3.5.1. स्थानीय शासन चूंकि राज्य का विषय है, इसलिए विभिन्न राज्यों ने स्थानीय निकायों को विभिन्न प्रकार के कर वसूलने के लिए प्राधिकृत कर दिया गया है। इन करों में कुछ इस प्रकार हें-व्यवसाय कर, विज्ञापन कर, मनोरंजन कर, पर्यटकों के प्रवेश पर कर, पशु कर, जल कर, प्रकाश-व्यवस्था कर आदि। इसके अतिरिक्त स्थानीय सरकार कई उपकर, जैसे शिक्षा उपकर, पुस्तकालय उपकर, भिक्षावृत्ति उपकर आदि वसूलती है। इन स्रोतों से होने वाली आय व्यवसाय कर से होने वाली आय की तुलना में काफी कम होती हैं। तथापि व्यवसाय कर में स्थानीय सरकारों के लिए महत्त्वपूर्ण संसाधन सृजित करने की क्षमता है। संविधान [अनुच्छेद 276 (2)] के तहत निर्धारित कर दर पर 2500 रुपए की ऊपरी सीमा इस कर की क्षमता को सीमित करती है। व्यवसाय कर पर ऊपरी सीमा को बढ़ाने के लिए इसे अनुच्छेद में संशोधन करने की आवश्यकता है। आयोग प्रत्येक कर की विस्तृत जॉच नहीं

कराएगा, लेकिन सिफारिश करता है कि इन करों के संचालन में कुछ सिद्धान्तों का पालन करना चाहिए। ये सिद्धान्त हैं-(1) कर वसूली को पूर्णतया पारदर्शी और यथार्थवादी बनाया जाए, (2) स्थानीय निकाय के लिए संग्रहण की लागत तथा करदाताओं के लिए अनुपालना लागत को न्यूनतम बनाया जाए, (3) सभी करों के संग्रहण को मॉनिटर करने के लिए मुख्य कार्यपालक के अधीन एक स्वतंत्र इकाई होनी चाहिए, और (5) जहाँ तक संभव हो, सभी प्रकार की उगाही करदाता की स्वयं घोषणा पर आधारित होनी चाहिए। लेकिन साथ ही यदि करदाता कोई छलकपट करता है या तथ्यों को छुपाता है तो उसे कठोर आर्थिक दंड दिया जाना चाहिए।

5.3.5.2. सिफारिशें

(क) सभी करों को प्रशासित करते समय निम्नलिखित सिद्धान्तों का अनुपालन करना चाहिए:

(i) कर निर्धारण पद्धति पूर्णतः पारदर्शी और यथार्थवादी होनी चाहिए,

(ii) जहाँ तक संभव हो, सभी प्रकार की उगाही करदाता की स्वयं की घोषणा पर आधारित होनी चाहिए लेकिन साथ ही यदि कर दाता कोई छलकपट करता है या तथ्यों को छिपाता है तो उसे कठोर आर्थिक दंड दिया जाए।

(iii) कर संग्रहण और अनुपालन लागत न्यूनतम स्तर तक घटायी जाए।

(iv) सभी करों की वसूली को मॉनिटर करने के लिए मुख्य कार्यपालक के अधीन एक स्वतंत्र यूनिट होनी चाहिए।

(v) निर्धारक अधिकारियों के आदेशों के खिलाफ अपील एक स्वतंत्र अर्ध-न्यायिक प्राधिकारी से की जानी चाहिए।

(ख) संविधान के अनुच्छेद 276 (2) में संशोधन किया जाए ताकि व्यवसाय कर की ऊपरी सीमा बढ़ाई जा सके तथा इस अधिकतम सीमा की आवधिक तौर पर समीक्षा की जानी चाहिए।

5.3.6. कर-भिन्न राजस्व :

5.3.6.1 *प्रयोक्ता प्रभार* : कर-भिन्न राजस्व का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोत प्रयोक्ता प्रभार है और प्रयोक्ता प्रभार वे अदायगियां हैं जो किसी नागरिक द्वारा उपयोग में लाई गई सार्वजनिक सेवाओं के बदले की जाती हैं। इनमें जल-प्रभार, सफाई-व्यवस्था और मलजल प्रभार, अपशिष्ट संग्रहण प्रभार, गलियों में

प्रकाश-व्यवस्था करने का प्रभार, पार्किंग शुल्क, मोटरचालकों द्वारा संकुलित सड़कों के इस्तेमाल के लिए शुल्क, स्थानीय सेवाओं आदि के इस्तेमाल के लिए शुल्क शामिल होंगे। ऐसी प्रवृत्ति रही है कि विभिन्न सेवाओं के लिए जो प्रभार लिया जाता है वह ऐसी सेवाओं पर आने वाली वास्तविक लागत की तुलना में काफी कम होता है। यह चिन्ता भारत के आर्थिक-सर्वेक्षण वर्ष 2006-07 में भी व्यक्त की गई है, जो इस प्रकार है :

वित्त व्यवस्था प्रतिमान की दृष्टि से शहरी अवसंरचना का आधार प्रयोक्ता प्रभार होता है। शहरी अवसंरचना संबंधी पूंजीगत व्यय के एक बड़े भाग को वित्तपोषित करने के लिए पूंजी बाजार से धनराशि प्राप्त करना शहरी संस्थानों के लिए संभव है। हालांकि, म्यूनिसिपल बांड इश्यूज़ वास्तव में जारी हो गए हैं, फिर भी एकत्रित संसाधनों का महत्व अब भी नगण्य है। प्रयोक्ता प्रभार वित्तपोषित दृष्टिकोण से राजकोषीय समस्या को और बढ़ाए बगैर शहरी अवसंरचना संबंध पूंजीगत व्यय में व्यापक वृद्धि करना सरल हो सकता है। इसके अतिरिक्त, टैरिफ पुनर्गठन या सब्सिडी देने से गरीबों पर और अच्छा एवं लक्षित प्रभाव पड़ेगा।

5.3.6.2 कार्यों की इस स्थिति के कई कारण हैं। प्रथम, अलोकप्रिय बनने की आशंका से उचित दर वसूल करने के लिए निर्वाचित स्थानीय सरकार अनिच्छुक होती है। परिणामस्वरूप, इन सेवाओं को बनाए रखने एवं संचालित करने हेतु उपलब्ध संसाधन सीमित हो गए हैं, जिसके फलस्वरूप सेवाओं की गुणवत्ता में गिरावट आ गई है। इससे एक दुश्चक्र बनता है जहां उपभोक्ता भी सेवा प्रभारों में किसी भी प्रकार की वृद्धि का विरोध करते हैं। दूसरे, स्थानीय स्तर (विशेषकर छोटी नगरपालिकाओं के मामले में) पर अपेक्षित आर्थिक एवं वित्तीय सुविज्ञता की उपलब्धता का अभाव उपयोगी सेवाओं के लिए सही दर प्राप्त करने से रोकता है। तीसरे, आबादी के एक हिस्से की कमजोर अदायगी क्षमता का उपयोग उन दूसरों से वसूल न करने के लिए बहाने के रूप में करना, जो अदा कर सकते हैं तथा जिन्हें अदा करना चाहिए।

5.3.6.3 संघ सरकार और राज्य वित्त आयोगों ने इस मुद्दे की जांच की और सिफारिश की कि नगरपालिका निकायों द्वारा मुहैया कराई गई सेवाओं के लिए उचित दरें वसूल की जानी चाहिएं। संघ सरकार ने जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन (जेएनएनयूआरएम) और छोटे और मध्यम नगरों के लिए शहरी अवसंरचना विकास स्कीम (यूआईडीएसएसएमटी) के अंतर्गत शहरी स्थानीय निकायों के लिए उचित प्रयोक्ता प्रभार वसूल करना अनिवार्य बना दिया है ताकि अगले पांच वर्षों में संचालन और रख-रखाव संबंधी पूर्ण लागत संग्रहित की जा सके।

5.3.6.4 आयोग का विचार है कि उपयुक्त प्रयोक्ता प्रभारों की वसूली और संग्रहण को बढ़ावा दिया जाए। इसके लिए नगरपालिकाओं को अनुदानों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा अपने निजी संसाधन जुटाकर पूरा किया जाए।

5.3.6.5 "प्रयोक्ता अदा करता है" का सिद्धांत बहुत सारी सेवाओं पर लागू होता है। लेकिन ऐसी कई सेवाएं हैं जहां वैयक्तिक प्रयोक्ता की पहचान नहीं होती है, फिर भी सेवाएं सामूहिक प्रकृति की होती हैं। ऐसे मामलों में "समुन्नति लेवी" का सहारा लिया जाए। ऐसा कई शहरों में पहले से ही किया जा रहा है। सृजित बाहरीपन पर आधारित प्रभारों की अन्य श्रेणी अथवा "प्रदूषणकर्त्ता अदा करते हैं" का सिद्धांत भारत में अभी भी शुरूआती चरण में है, लेकिन इसके पर्याप्त रूप से उपयोग करने की आवश्यकता है। बड़े पैमाने पर आर्थिक कार्यकलापों अथवा संकेन्द्रित आवासीय इकाइयों द्वारा हुए ट्रैफिक संकुलन इसका एक अच्छा उदाहरण है। ऐसे बड़े विकास की वजह से न केवल इन पड़ोसी इलाकों में भीड़-भाड़ हुई बल्कि शहर के केन्द्र में भी भीड़भाड़ बढ़ी। अतः सभी प्रमुख विकास कार्यों हेतु प्रभाव—अध्ययन कराना आवश्यक है तथा "संकुलन प्रभार" वसूला जाए और तब भीड़भाड़ को कम करने के लिए इस संकुलन प्रभार का प्रयोग किया जाए।

5.3.6.6 सभी नगरपालिका कानूनों में सामान्यतः बहुत सारे नागरिक अपराधों के लिए शुल्क आरोपित करने का प्रावधान है। हालांकि ऐसे जुर्मानों से आय महत्वपूर्ण नहीं हो सकती है। उनकी लेवी का विभिन्न नगरपालिका कानूनों और उपकानूनों के अनुपालन में हितकारी प्रभाव पड़ता है तथा इससे नगरपालिका संसाधनों में परोद्वा रूप से वृद्धि होती है। तथापि, ऐसा जुर्माना असाधारण मामलों में लगाया जाता है। इसका एक कारण यह है कि जुर्माना लगाने का अधिकार नगरपालिका प्राधिकारियों को नहीं दिया जाता है और कार्रवाई मजिस्ट्रेट के कोर्ट में करानी पड़ती है। सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि :[59]

बॉक्स 5.9 : प्रभाव शुल्क

आन्ध्र प्रदेश सरकार ने हैदराबाद नगर निगम को अनुमति दी कि वह उन वाणिज्यिक परिसरों के निर्माण के प्रभावों को कम करने के लिए प्रभाव शुल्क वसूल करे जिनके कारण ट्रैफिक बढ़ गया है और उस भीड़भाड़ को कम करने के उपाय करने जरूरी हो गए हैं। स्थल पर और स्थल से अलग क्षेत्र (स्थानीय क्षेत्र) की विकास लागत तथा संपूर्ण शहर की प्रभाव लागत के बीच विभेद किया जाता है। प्रभाव शुल्क अत्यधिक वाणिज्यिक विकास के कारण उत्पन्न होने वाली संपूर्ण यहर की समस्याओं के निराकरण के लिए लिया जाता है। ये शुल्क — 25 रुपए प्रतिवर्ग फुट के हिसाब से वसूल किए जाते हैं —नगर निगम के एक पृथक खाते में जमा करने अपेक्षित हैं तथा इनका उपयोग पूंजीगत सुधार तथा सड़कों की भीड़भाड़ कम करने संबंधी योजनाओं जैसे सड़कों को चौड़ा करना, संपर्क सड़कें बनाना, स्लिप सड़कें, समानान्तर सड़कें, ट्रैफिक सिग्नल, फ्लाई ओवर, रेल ओवर-ब्रिज, रेल अंडर-ब्रिज आदि सहित जंक्शन सुधार जैसे निर्माण कार्यों के कार्यान्वयन के लिए होना चाहिए। यह राशि किसी भी परिस्थिति में वेतन और रखरखाव कार्यों पर खर्च नहीं की जाए।

स्रोत : *इन्नोबेटिव अर्बन डेवलपमेंट फाइनेंसिंग प्रैक्टिसेज : ए केस स्टडी ऑफ हैदराबाद सिटी, इंडिया, पी.के.मोहंती; http://www.municipal-finance.org/downloads/Hyderabad.pdf*

59 लुधियाना नगर निगम बनाम आयुक्त, पटियाला 1995(2) आरआरआर 110 9 एससी)

विधायी प्रारूपण का सामान्य नियम यह है कि जब कभी यह किसी विशिष्ट अधिनियम को "जुर्माना सहित दंडनीय" कहता हो, तो इसके आरोपण पर विचार केवल आपराधिक न्यायालय द्वारा ही किया जाएगा।"

5.3.6.7 इस प्रकार, थोड़ा सा जुर्माना लगाने पर भी अभियोजन आपराधिक न्यायालय में ही शुरू करना पड़ेगा। नगरपालिका प्राधिकारी मुश्किल से ही ऐसी आपराधिक कार्रवाई शुरू करते हैं। इससे, बदले में, भावनाएं भड़कीं कि नगरपालिका प्राधिकारी कानून लागू करने में "नरम" होते हैं तथा यही नागरिक कानूनों को व्यापक पैमाने पर तोड़ने का मुख्य कारण है। आयोग का विचार है कि उन नागरिक कानूनों के उल्लंघन से संबंधित कई प्रकार के मामले नगरपालिका प्राधिकारियों को सौंप दिए जाने चाहिएं जो उन्हें उसी स्थान पर ही जुर्माना आरोपित करने का अधिकार देते हैं (आयोग ने अपनी रिपोर्ट "पब्लिक आर्डर" में सिफारिश की है कि नागरिक कानूनों के बेहतर अनुपालन के लिए नगर पुलिस सेवा शुरू की जाए)। नागरिक कानूनों का अनुपालन सही न होने का दूसरा कारण यह है कि निर्धारित दंड अपेक्षाकृत भय दिखाकर निवारण करने वाली प्रकृति के नहीं हैं। उदाहरणार्थ, अनेकों ऐसे अपराध हैं, जिनमें निर्धारित जुर्माना राशि 100 रुपए से भी कम है। अतः सभी नागरिक अपराधों के लिए निर्धारित दंड व्यवस्था की पुनः जांच करने तथा उसमें आशोधन करने की आवश्यकता है।

5.3.6.8 सिफारिशें :

(क) नगरपालिकाओं को दिए जाने वाले अनुदानों का एक महत्वपूर्ण भाग नगरपालिकाओं को अपने प्रयासों से संसाधन जुटाकर प्राप्त करना चाहिए।

(ख) शहर के सभी प्रमुख विकास कार्यों के लिए अर्थपूर्ण अध्ययन किया जाना चाहिए। जहां कहीं औचित्यपूर्ण हो वहां ऐसी परियोजनाओं के लिए संकुलन प्रभार और/अथवा बेहतरी शुल्क वसूल किया जा सकता है।

(ग) नागरिक कानूनों का उल्लंघन करने पर नगर प्राधिकारियों को जुर्माना लगाने का अधिकार दिया जाना चाहिए। संगत कानूनों में उपयुक्त रूप से आशोधन किया जाए।

(घ) नागरिक अपराधों के लिए निर्धारित जुर्माना राशि को बढ़ाए जाने की आवश्यकता है। जुर्माने की राशि कानून के तहत नियमों द्वारा विनियमित होनी चाहिए ताकि यह राशि कानून में संशोधन किए बगैर ही आवधिक रूप से परिशोधित की जा सके।

5.3.7 उधार

5.3.7.1 शहरी अवसंरचना परम्परागत रूप से नियोजित की गई है तथा राज्य सरकारों, नगर शासनों अथवा पैरास्टेटल द्वारा संघ/राज्य सरकार से अपने निजी राजस्व अधिशेषों अथवा अनुदानों के जरिए कार्यान्वित की गई है। नगरपालिकाएं और परास्थानिक भी अपने पूंजीगत व्यय को वित्तपोषित करने के लिए वित्तीय सस्थानों से ऋण प्राप्त कर रही हैं। इनमें से अधिकांश ऋणों की गारंटी राज्य सरकारों द्वारा दी जाती है। इस प्रकार के निधिकरण (सरकारी गारंटी से) का एक बड़ा नुकसान यह है कि यह उधार लेने वालों के उत्तरदायित्वों को कम कर देता है तथा वे ऐसी परियोजनाओं के लाभार्थियों पर उपयुक्त प्रभार लगाकर वसूली करने के संबंध में बहुत गंभीर नहीं होते हैं। इस प्रकार, इससे कुछ हद तक वित्तीय अनुशासनहीनता की भावना पनपती है। तथापि, राजकोषीय प्रबंधन कानून बनाने से राज्य सरकारों एवं नगरपालिकाओं दोनों के लिए अपेक्षित होगा कि वे और अधिक समझदारी से काम लें। परिणामस्वरूप, नगरपालिकाओं के लिए भविष्य में वित्तीय सुधार किए बिना ऋण प्राप्त करना मुश्किल हो सकता है। इसके अतिरिक्त, वित्तीय संस्थान भी और अधिक सावधान हो गए हैं तथा वे स्थानीय निकायों से (जैसे एस्क्रो लेखा) उन्नत किस्म की प्रतिभूतियों की मांग करते हैं। इससे स्थानीय शासनों के लिए आवश्यक हो गया है कि वे लेखाकरण में सुधार लाएं ताकि एक तरफ उनकी आस्तियों और देयताओं की सही तस्वीर परिलक्षित हो सके तथा दूसरी ओर अपनी वित्तीय स्थिति में सुधार लाने हेतु विवेकपूर्ण पद्धति अपनाई जा सके। भारत सरकार शहरी स्थानीय निकायों में जेएनएनयूआरएम के माध्यम से वित्तीय सुधार कार्य शुरू करने के लिए राज्यों को राजी कर रही है। ऐसे सुधार कार्य चरणबद्ध रूप से सभी स्थानीय शासन में शुरू किए जाएं।

बॉक्स 5.10 : उधार हेतु विनियामक ढांचा

एक ऐसा विनियामक ढांचा खड़ा करने की आवश्यकता है जो कठोर बजट लाने के अवरोधक पर दबाव डाले और राज्य बेलआउट्स के चक्र को समाप्त करें। ऐसी संरचना के लिए दिवालियापन संबंधी कानून बनाने, ऋणदाताओं के लिए प्रतिविधान, और उधार लेने वालों की चूक हेतु पूर्वाकलन प्रक्रियाओं तथा यदि आवश्यक हो तो शहरी स्थानीय निकायों के प्रबंधन में मध्यस्थता करने की संभावित पद्धतियों की व्यवस्था अपेक्षित हो। दक्षिण अफ्रीका ने स्थानिक उधार और वित्तीय आपातकालों के लिए अपेक्षाकृत सुदृढ़ विनियामक ढांचा विकसित किया है जो भारतीय राज्यों के लिए पूरी जानकारी मुहैया करा सकता है। 1990 के दशक में राज्य के तीन प्रमुख ऋण संकटों के अनुभव को देखते हुए ब्राजील की संघीय सरकार ने राजकोषीय उत्तरदायित्व कानून सहित उपराष्ट्रीय उधारों पर नियंत्रणों की एक श्रृंखला तैयार की। अंततः कठोर बजट संबंधी बाधा को दूर करने के लिए संबंधित राज्य शहरी स्थानीय निकायों के असफल हो जाने देने के लिए नहीं, बल्कि उन्हें कठिन परिस्थितियों से उबरने के लिए कटिबद्ध हों।

स्रोत : *विश्व बैंक*

5.3.7.2 वर्तमान में, स्थानीय शासनों के उधार लेने के अधिकार सीमित हैं तथा उन्हें किसी भी प्रकार का उधार लेने के लिए राज्य सरकार की अनुमति लेनी होती है। इस प्रणाली के स्थान पर स्वतः अनुमोदन प्रणाली होनी चाहिए बशर्ते कि वे कतिपय प्रतिमानों को पूरा करें। तथापि, उस समय राजकोषीय विवेक की आवश्यकता होगी जब राज्य सरकार द्वारा बड़े उधारों की संवीक्षा की जाएगी।

5.3.7.3 *पूंजी बाजार तक पहुंच* : पिछले दशक ने म्यूनिसिपल बांड के बाजार को उभरते हुए देखा है। विशेषकर बड़े शहरों में, नगरपालिकाओं, ने संसाधन जुटाने के लिए म्यूनिसिपल बांडों का सहारा लिया। बंगलौर नगरनिगम ऐसा पहला नगर निगम था जिसने 1990 के दशक की शुरूआत में राज्य सरकार की गारंटी के साथ बांड जारी करके निधियां जुटाई। दूसरी ओर, अहमदाबाद नगर निगम ने बांड जारी किए लेकिन उन पर राज्य सरकार की कोई गारंटी नहीं थी। अब तक कई नगरपालिकाएं पूंजी बाजार में उतर चुकी हैं और अवसंरचनात्मक विकास हेतु निधियां जुटा चुकी हैं। सत्य यह है कि नगरपालिका निकाय अपनी निजी क्रेडिट योग्यता की वजह से संसाधन जुटाने में सफल रहे हैं, जिससे उनकी शहरी परियोजनाओं को वित्तपोषित करने के लिए धन जुटाने की क्षमता का पता चलता है। संसाधन जुटाने की इस पद्धति का एक और लाभ यह है कि इससे ये निकाय अपनी क्षमता बढ़ाते हैं तथा सेवा की गुणवत्ता के प्रति अधिक जागरूक रहते हैं।

5.3.7.4 नगरपालिकाओं द्वारा ऋण प्रचालन लोक ऋण अधिनियम, 1944, भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड अधिनियम, 1992, स्थानीय प्राधिकरण ऋण अधिनियम, 1914, प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम, 1956 और निक्षेपागार अधिनियम, 1996 जैसे कई कानूनों द्वारा संचालित किया जाता है। इसके अतिरिक्त, नगरपालिका निकायों को पूंजी बाजार में उतरने से पूर्व बहुत सारे अनुदेशों/दिशानिर्देशों का अनुपालन करना होता है। इन कानूनी और वित्तीय आवश्यकताओं को संभालने के लिए नगरपालिका निकायों की क्षमता सीमित है। इसलिए यह सुनिश्चित करने के प्रयास किए जाएं कि उत्तरदायी उधार प्रोत्साहित हो और ऐसा करने के लिए क्षमता बढ़ायी जाए।

5.3.7.5 नगरपालिका बांडों पर आधारित परियोजनाओं के सफल कार्यान्वयन के लिए बांड सेवा के उद्देश्य से नगरपालिकाओं में सुदृढ़ वित्तीय एवं प्रशासनिक क्षमताएं अपेक्षित हैं। नगरपालिकाओं को अपनी सेवाओं के लिए आर्थिक मूल्य निर्धारण का अनुपालन करना होगा ताकि नागरिकों से उनकी वास्तविक लागत वसूल की जा सके। इसके अतिरिक्त, परियोजना निरूपण में व्यावसायिकता, विकल्पों के मूल्यांकन

और निर्णय लेने की प्रक्रिया में पारदर्शिता की वस्तुनिष्ठता बांड निर्गमन की सफलता के लिए आवश्यक पूर्व शर्त होगी। अंतिम लेकिन कम महत्वपूर्ण नहीं कि जुटाई गई धनराशि का उपयोग आर्थिक दृष्टि से व्यवहार्य स्कीमों के लिए किया जाना चाहिए।

5.3.7.6 आयोग सिफारिश करेगा कि नगरपालिका निकायों की अपने निजी संसाधन जुटाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। कोई भी उधार, चाहे वह वित्तीय संस्थानों से लिया गया आवधिक ऋण हो और चाहे बाजार से लिया गया ऋण, उसके लिए नगरपालिका निकायों को अपनी क्षमता के अनुसार ही ऋण स्वीकार करना चाहिए। प्रारंभ में, उधार आकर्षक दिखाई देता है क्योंकि इससे इन निकायों की नकदी निधि थोड़े समय के लिए बढ़ जाती है। लेकिन, यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता होगी कि संसाधनों का फैलाव आर्थिक कार्यकलापों में हो। तथापि, छोटे स्थानीय निकायों के लिए राज्य सहायता अपेक्षित होगी। ऐसे निकायों को राज्य गारंटी देने की आवश्यकता पड़ेगी या इसके स्थान पर वैकल्पिक सरणीबद्ध वित्तीय कार्यतंत्र रखना पड़ेगा।

5.3.7.7 सिफारिशें :

(क) **किसी राज्य में विभिन्न नगरपालिका निकायों के लिए उधार की सीमा राज्य वित्तीय निगम की सिफारिश पर तय की जाए।**

(ख) **नगरपालिका निकायों को उधार सरकारी गारंटियों के बिना ही लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। तथापि, राज्य सरकार द्वारा छोटी नगरपालिकाओं के लिए धनराशि एकत्र करके वित्त पोषण संबंधी कार्यतंत्र रखना पड़ेगा।**

(ग) **उत्तरदायी उधार की कानून और वित्तीय आवश्यकताओं को संभालने के लिए नगरपालिकाओं की क्षमता बढ़ानी चाहिए।**

5.3.8 संसाधन के रूप में भूमि का उन्नयन

5.3.8.1 नगरपालिका निकायों के तुलन-पत्र में प्रायः काफी तरह की आस्तियां होती हैं। इनमें अवसंरचना नेटवर्क से लेकर सार्वजनिक भवनों तक, आवास से लेकर नगरपालिका शॉपिंग केन्द्रों तक के साथ-साथ भूमि आती है। इस आयोग की इस सिफारिश को ध्यान में रखते हुए कि विकास प्राधिकरणों को संबंधित

शहरी स्थानीय निकायों के लिए आमेलित कर दिया जाए तथा उनकी तकनीकी/आयोजना संबंधी मानवशक्ति को जिला आयोजना समितियों और महानगर आयोजना समितियों के साथ मिला दिया जाए। विकास प्राधिकरण की मूल भूमि जोतों को भी वास्तव में नगरपालिका के स्वामित्व में होना चाहिए। शहरों में भूमि की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई कीमतों की वजह से यह अत्यंत आवश्यक हो गया है कि इन आस्तियों का प्रबंधन उचित ढंग से हो।

5.3.8.2 आस्ति प्रबंधन में यह निर्णय लेना भी शामिल है कि इन आस्तियों का क्या किया जाए, विशेष रूप से क्या ऐसी आस्तियों को पट्टे पर दिया जाए और यदि दिया जाए तो यह उत्पन्न होगी कि इनका मूल्य पुनः किस प्रकार तय किया जाए ताकि उपयोगकर्ता वास्तविक आर्थिक लागत अदा कर सके अथवा क्या अवसंरचना सृजन हेतु अग्रिम संसाधन उत्पन्न करने के उद्देश्य से तत्काल बिक्री करनी चाहिए। चीन के कई शहरों ने अपनी अवसंरचना में किए गए निवेश की आधी से अधिक राशि की वित्त व्यवस्था भूमि को पट्टे पर देकर की तथा अवसंरचना निवेश में धन लगाने के लिए अपने तुलन-पत्र पर आधारित भूमि मूल्य के अनुरूप ऋण लिया। चीन में भूमि को पट्टे पर देने में, उदाहरणार्थ, दीर्घकालिक अधिभोग और विकास अधिकारों की बिक्री शामिल होती है। इस प्रकार, शंघाई में 1992-2004 तक की अवधि के दौरान भूमि को पट्टे पर देने से 12.5 बिलियन अमरीकी डालर से अधिक राशि प्राप्त की जबकि शेनझान ने स्थानीय सरकारी राजस्व की 80 प्रतिशत राशि भूमि को पट्टे पर देकर उत्पन्न थी। भारत में भी, विगत तीन वर्षों में, दिल्ली विकास प्राधिकरण (डीडीए)[60] ने विकसित भूमि, अधिकांशतः वाणिज्यिक इस्तेमाल हेतु, की बिक्री करके बतौर राजस्व 6000 करोड़ रुपए अर्जित किए। भारत के शहरों में जमीन-जायदाद में आई तेजी से भूमि विक्रय के जरिए राजस्व क्षमता और बढ़ गई है। एक अन्य उदाहरण उद्धृत है, मुंबई में एमएमआरडीए ने जनवरी, 2006 में बांद्रा कुर्ला कॉम्पलेक्स का एक प्लॉट एक ही नीलामी में 2290 करोड़ रुपए में बेचा।

5.3.8.3 तथापि, भारत में शहर की सार्वजनिक भूमि की बिक्री विकास प्राधिकरण द्वारा की जाती है तथा यह न तो स्थानीय स्तर पर राजकोषीय विकेन्द्रीकरण में सहायक रही है और न ही इन्होंने नगरपालिका के पूंजीगत बजट में महत्वपूर्ण अंशदान किया है। तथापि, राजस्थान सरकार ने यह निर्धारित करके इस दिशा में प्रगतिशील कदम बढ़ाया कि जयपुर विकास प्राधिकरण की भूमि विक्रय से होने वाली आय की 15 प्रतिशत राशि नकदी की दृष्टि से सुदृढ़ जयपुर नगरनिगम को बतौर अनुदान दी जाएगी।

60 स्रोत : दिल्ली विकास प्राधिकरण की वार्षिक रिपोर्ट पर आधारित

5.3.8.4 आर्थिक शब्दों में नगरपालिकाओं को केबल संसाधन के रूप में भूमि उन्नयन से ही नहीं बल्कि उनकी आवर्ती लागत को शामिल करने के लिए आस्तियों की बिक्री पर आश्रित होने के राजकोषीय जोखिम (और उपयोगकर्ता प्रभारों के संबंध में राजनीतिक दृष्टि से कठोर निर्णय लेने में विलंब करने) से भी बचना है। उन्हें भूमि विक्रय से होने वाली आय का उपयोग मुख्य रूप से निवेश और पूंजीगत निर्माण कार्यों में करना चाहिए।

बॉक्स 5.11 : हरियाणा में प्रवर्तित-नए राजकोषीय साधन

- राज्य के भीतर एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाने ले जाने वाले सामान के मूल्य का 4 प्रतिशत की दर से स्थानीय क्षेत्र विकास कर।
- व्यवसाय, व्यापार और आजीविका पर कर।
- अग्नि कर, एआरवी के एक प्रतिशत की दर से।
- ड्राइविंग लाइसेंस पर 100 रुपए कर।
- बिजली की खपत पर पांच पैसे प्रति यूनिट।
- होटलों, रेस्तरांओं, बैंक्वेट हॉलों, पैट्रोल पम्पों, नर्सिंग होम, गैस एजेंसियों, गैर-सरकारी स्कूलों और कॉलेजों, फर्नीचर शो रूम, दुग्ध डेरियों, औद्योगिक इकाइयों पर 2500 रुपए प्रतिवर्ष।
- गैर-सरकारी प्रयोगशालाओं, वाणिज्यिक कॉलेजों, कम्प्यूटर केन्द्रों और बड़ी कंपनियों को शो रूमों पर 1500 रुपए प्रतिवर्ष।
- कर्मशालाओं, सर्विस स्टेशनों, बर्फ फैक्टरियों, आटा मिलों पर 1000 रुपए प्रतिवर्ष1
- टेन्ट हाऊस, केबल आपरेटर्स, प्रिंटिंग प्रैस, मेडिकल एवं जनरल स्टोर।
- नए वाहनों के पंजीकरण पर शुल्क

स्रोत : *नगरपालिका वित्तीय संसाधन सृजन : स्थिति, सरोकार और मुद्दे - गंगाधार झा*

5.3.8.5 अधिकांश नगरपालिका निकायों ने बहुत सारी संपत्तियां किराए अथवा पट्टे पर दी हुई हैं। तथापि, इन संपत्तियों से होने वाली आय काफी कम है। ऐसा मुख्यतः मौजूदा दखलकारों, जो न तो बाजार भाव से किराया देते हैं और न ही परिसर को खाली करते हैं, द्वारा मुकदमेंबाजी करने की वजह से है। ऐसे मुकदमें सामान्यतः बहुत वर्षों तक चलते हैं। आयोग का विचार है कि संबंधित नगरपालिका कानूनों में व्यवस्था होनी चाहिए कि नगरपालिका निकायों की निर्मित कोई भी संपत्ति 5 वर्ष से अधिक समय के लिए किराए पर नहीं दी जाएगी और निर्धारित अवधि समाप्त हो जाने के बाद वह संपत्ति केवल प्रतिस्पर्धात्मक प्रक्रिया द्वारा ही किराए पर दी जाएगी।

5.3.8.6 राजस्व प्राप्त हेतु भूमि-उन्नयन के लिए भूमि के रिकार्डों को उचित रूप से रखना एक मूलभूत आवश्यकता है। नागरिकों के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि भूमि और संपत्ति के रिकार्डों को रखने की मौजूदा प्रणाली में स्पष्ट शीर्षक सुनिश्चित नहीं हैं। पंजीकरण प्रक्रिया, संपत्ति कराधान प्रणाली और राज्य सरकार के राजस्व विभाग द्वारा अनुरक्षित अधिकारों के रिकार्ड (यदि वे सभी अनुरक्षित किए

जाते हों) के बीच कोई अभिसरण नहीं है। शहरी इलाकों में बढ़ता हुआ जनसंख्या घनत्व और जमीन-जायदाद की आसमान छूती कीमतें शहरी क्षेत्रों में उचित भूमि प्रबंधन प्रणालियों के महत्व को रेखांकित करती हैं। आयोग जिला प्रशासन संबंधी अपनी रिपोर्ट में इस विषय पर विचार करेगा।

बॉक्स 5.12 : संसाधन के रूप में एफएसआई

योजना बनाने की अनुमति देने की पारदर्शी नीति और सड़क को चौड़ा करने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए आन्ध्र प्रदेश सरकार ने हैदराबाद नगर निगम को फ्लोर स्पेस इंडेक्स (एफएसआई) का बतौर संसाधन उपयोग करके सड़कों को चौड़ा करने का कार्य शुरू करने की अनुमति दे दी है। आयुक्त क्षेत्रीकरण/बिल्डिंग/एफएसआई विनियमों द्वारा अनुमत निर्माण के अलावा अतिरिक्त निर्माण क्षेत्र में भवन निर्माण की अनुमति देने के लिए प्राधिकृत है। समस्तर रूप से अभ्यर्पित भूमि की क्षतिपूर्ति अनुमत निर्माण के अतिरिक्त उर्ध्वाकार निर्माण करने की अनुमति देकर की जाती है। निगम कम्पाउंड की ध्वस्त दीवारों/अन्य संरचनाओं का पुनः निर्माण कराता है तथा भू-स्वामियों को उर्ध्वाकार और ऊपर निर्माण करने की अनुमति प्रदान करता है। उर्ध्वाकार निर्माण करने की सीमा का निर्धारण पार्टी द्वारा अभ्यर्पित भूमि की लंबाई-चौड़ाई तथा क्षेत्र में प्रचलित एफएसआई के आधार पर किया जाता है। यदि उर्ध्वाकार और ऊपर निर्माण करने की गुंजाइश न हो तो भू-स्वामी हस्तांतरणीय विकास अधिकार (टीडीआर) का उपयोग कहीं और अथवा अन्य बिल्डर को बेचने के लिए कर सकता है। कई मामलों में भवनों का निर्माण गैर-आवासीय उपयोग (वाणिज्यिक/संस्थागत) के लिए करने की भी अनुमति दी जाती है ताकि भू-स्वामियों को सड़क चौड़ी करने के लिए मूल्यवान आवासीय भूमि को छोड़ने के लिए प्रेरित किया जा सके।

स्रोत : *इन्नोवेटिव अर्बन डेवलपमेंट फाइनेंसिंग प्रैक्टिसेज : ए केरल स्टडी ऑफ हैदराबाद सिटी, इंडिया, पी.के. मोहन्ती; http://www.municipal-finance.org/downloads/Hyderabad.pdf*

5.3.8.7 सिफारिशें :

(क) **नगरपालिका निकायों को अपनी संपत्तियों का आवधिक तौर पर अद्यतन डाटाबेस रखना चाहिए। इस प्रयोजन के लिए जीआईएस जैसे सूचना प्रौद्योगिकी साधनों का उपयोग किया जाए। यह डाटाबेस सरकारी अधिकार क्षेत्र में होना चाहिए।**

(ख) **नगरपालिकाओं और विकास प्राधिकारियों के पास उपलब्ध भूमि बैंकों को नगरपालिकाओं के लिए संसाधन उत्पन्न करने हेतु तैयार करना चाहिए। तथापि, ऐसे संसाधनों का उपयोग केवल अवसंरचना और पूंजीगत व्यय की वित्त व्यवस्था हेतु किया जाना चाहिए न कि आवर्ती लागतों को पूरा करने के लिए।**

(ग) **जब तक विकास प्राधिकरणों का विलय शहरी स्थानीय निकायों के साथ नहीं होता तब तक भूमि की बिक्री से ऐसी एजेंसियों द्वारा वसूल किए गए राजस्व का एक अनुपात अर्थात 25 प्रतिशत राशि नगरपालिकाओं को उपलब्ध करायी जाए ताकि वे अपनी अवसंरचना संबंधी वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा कर सकें।**

(घ) **संबंधित नगरपालिका के कानून में व्यवस्था होनी चाहिए कि नगरपालिका निकायों की कोई भी निर्मित संपत्ति निम्नलिखित प्रतिस्पर्धात्मक प्रक्रिया का अनुपालन किए बगैर किराए/पट्टे पर नहीं दी जाएगी। ऐसी पट्टा अवधि पांच वर्ष से अधिक नहीं होगी।**

5.3.9 अन्य उपायों के जरिए संसाधन जुटाना

5.3.9.1 राजस्व सृजन के परम्परागत तरीकों के अलावा ऐसे कई अभिनव शुल्क हैं जिनका उपयोग नगरपालिका निकायों के संसाधनों में वृद्धि करने के लिए किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, कई नगरपालिका निकायों ने एफएसआई का बतौर संसाधन उपयोग किया है। नगरपालिका निकायों द्वारा मुहैया कराई गई विभिन्न सेवाओं हेतु शुल्क संरचना का वैज्ञानिक पुनर्गठन किया है, सामान्य रूप से वाहनों पर अथवा संकुलित क्षेत्र में वाहनों के प्रवेश पर संकुलन प्रभार आदि वसूल किया। उचित होगा कि शहरी विकास मंत्रालय सभी अभिनव शुल्कों के बारे में जानकारी एकत्र करें। इससे राजस्व सृजन की क्षमता और ऐसी प्रत्येक लेवी के अन्य निहितार्थों का पता चलेगा तथा अतिरिक्त संसाधन जुटाने हेतु नगरपालिका निकायों के लिए दिशानिर्देशक के रूप में कार्य करेगा।

5.3.9.2 संसाधन सृजन का एक अन्य लोकप्रिय तरीका सरकारी-निजी भागीदारी (पीपीसी) है। सरकारी-निजी भागीदारी एक आदर्श मॉडल है जो नगरपालिका निकायों के सामाजिक सरोकारों और निजी क्षेत्र की व्यावसायिक दक्षता को मिलाता है। शहरी परिवहन, अपशिष्ट प्रबंधन, आवास, सड़क एवं पुल कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहां पीपीपी मॉडल सफल रहे हैं। तथापि, पीपीपी मॉडल के लिए नगरपालिका निकायों की ओर से सर्वाधिक देखभाल करने की आवश्यकता है चूंकि अपर्याप्त छानबीन, दोषपूर्ण करार, कमजोर प्रबोधन और मूल्यांकन कार्यतंत्र और इन सबसे अलावा वित्तीय कमजोरी विषय व्यवस्थाओं की ओर अग्रसर कर सकती है जिसके दीर्घ काल में जनहित को धक्का लग सकता है। अतः नगरपालिका निकायों की संस्थागत क्षमता को बढ़ाए जाने की आवश्यकता है चूंकि सफल पीपीपी परियोजनाओं के लिए आवश्यक पूर्व शर्त है। भारत सरकार ने शहरी अवसंरचना के संबंध में पहले ही पीपीपी दिशानिर्देश परिचालित कर दिए हैं।

5.4 अवसरंचना और सेवा का प्रावधान

5.4.1 शहरी स्थानीय निकायों द्वारा मुहैया कराई गई सेवाओं की किस्में

5.4.1.1 आर्थिक विकास में सबसे बड़ी बाधाएं शहरी अवसंरचना में कमियां हैं। अपर्याप्त सेवाओं द्वारा सृजित दबाब तथा कमजोर शासन द्वारा संयोजित सुविधाएं सभी नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। शहरी सेवाओं को मोटे तौर पर तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

(क) विनियामक सेवाएं;

(ख) अवसंरचनात्मक सेवाएं; और

(ग) सामाजिक सेवाएं।

आयोग को विश्वास है कि इन सेवाओं की सुलभता और सुगमता में सुधार लाने से शहरी नागरिकों के दैनिक जीवन में गुणात्मक सुधार आएगा।

5.4.2 विनियामक सेवाएं

5.4.2.1 इनमें मौटे तौर पर निम्नलिखित शामिल हैं:

(i) पूर्व निर्धारित योजनाओं के आधार पर आवासीय तथा वाणिज्यिक स्थानों के सृजन के लिए अनुमति प्रदान करना।

(ii) वाणिज्यिक कार्यकलापों, जो समाज के लिए हानिकारक नहीं हैं, हेतु लाइसेस को जारी करना;

(iii) सभी नागरिकों के पक्ष में कार्य कर रहे प्राधिकरणों द्वारा तथा निर्धारित सामाजिक तथा नागरिक व्यवहार के मानदंडों का अनुपालन सुनिश्चित करना; तथा

(iv) सार्वजनिक स्वास्थ्य, तथा शहरी क्षेत्र के पर्यावरण का विनियमन तथा रखरखाव।

इन सभी विनियामक उपायों में, सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए जरुरी होगा कि कुछ मूलभूत सिद्धांतों का अनुपालन हो - (क) सरलीकरण, (ख) पारदर्शिता (ग) वस्तुनिष्ठता (घ) अभिसरण तथा (ड.) द्रुत निपटान।

5.4.2.2 *सरलीकरण* : स्थानीय सरकारों द्वारा प्रदान की गई विनियमक सेवाएं नियमों एवं प्रक्रियाओं से बंधी हुई होती है। यह देखा गया है कि इनमें से अधिकतर प्रक्रियाएं जटिल और पुरानी पड़ चुकी होती है, जिससे लोगों को बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। प्रक्रियाओं की जटिलता तथा शामिल भ्रष्टाचार की मात्रा के बीच कारणात्मक संबंध भी होता है। इसके अलावा शक्तियों का अपर्याप्त प्रत्यायोजन, बहुस्तरीय पदानुक्रम वाली कार्यविधि के माध्यम से निर्णय लेना तथा लालफीताशाही जैसे कारक भी हैं। आयोग का विचार है कि राज्य सरकारों को नियमों और प्रक्रियाओं की विस्तृत रूप से समीक्षा करनी चाहिए ताकि ये नियम और प्रक्रियाएं सरल बने और उलझाने वाली न रहें।

5.4.2.3 *पारदर्शिता* : एक पारदर्शी संगठन वह होता है जिसमें निर्णय लेने की प्रणाली तथा कार्यविधि सार्वजनिक जांच पड़ताल के लिए खूली हों। स्थानीय सरकारों में पारदर्शिता न केवल अधिक उत्तरदायित्व को बढ़ावा देती है बल्कि लोगों की प्रभावी प्रतिभागिता को उत्पन्न करने तथा निर्णय लेने ती मनमानी को कम करने में भी सहायता करती है।

5.4.2.4 सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 को लागू करने के साथ प्रशासन में पारदर्शिता की दिशा में भारत ने एक प्रमुख कदम उठाया। आयोग ने "सूचना का अधिकार"; अच्छे अधिशासन की मुख्य कुंजी" के शीर्षक वाली अपनी पहली रिपोर्ट में "सूचना की स्वतंत्रता" के सभी पहलुओं की जांच की है, तथा व्यापक सिफारिशें की हैं।

5.4.2.5 *वस्तुनिष्ठा* : किसी एक संगठन में भ्रष्टाचार की व्यापकता को उसके पदाधिकारियों के विवेकाधिकार की मात्रा से जोड़ा जाता है। स्थानीय सरकारों द्वारा निष्पादित अधिकतर विनियामक कार्यों में इस विवेकाधिकार को पूरी तरह से समाप्त नहीं तो, कम तो किया जाना संभव है। "इकाई क्षेत्र विधि" पर आधारित संपत्ति कर का मूल्यांकन एक ऐसा ही उदाहरण है। जहां विवेकाधिकार को समाप्त किया जाना संभव न हो, वहां विवेकाधिकार को सही प्रकार से परिभाषित दिशानिर्देशों के द्वारा आबद्ध कर देना चाहिए।

5.4.2.6 *अभिसरण* : नगर में, विभिन्न सेवाए स्थानीय सरकार के विभिन्न विभागों, राज्य सरकारों के अभिकरणों तथा परास्थानिकों द्वारा प्रदान की जाती है। इन बहुत सी सेवाओं का यदि आपस में उचित तौर पर तालमेल नहीं होगा तो नागरिकों को इनमें से प्रत्येक सेवा का अलग-अलग उपागमन करना पड़ेगा, जिससे उनकी परेशानियों में वृद्धि होगी। "एक स्थानीय सर्वसेवा केन्द्र" के सृजन से इस समस्या

का हल तो होगा ही साथ ही नागरिकों के निवेदनों पर कार्यवाहियों में भी गति आएगी। आन्ध्र प्रदेश में ई-सेवा इस "एक स्थानीय सेवा केन्द्रों" का सफल उदाहरण है। सूचना प्रौद्योगिकी के समुचित उपयोग से ऐसे सेवा केन्द्रों पर विभिन्न सेवा प्रदायकों के बीच सामंजस्य लाया सकता है।

5.4.2.7 *द्रुत निपटान* : नागरिकों के निवेदनों पर कार्यवाही में विलम्ब अच्छे शहरी शासन की राह में मुख्य अवरोध हैं। इस विलम्ब से नागरिक न केवल, प्रताड़ित होते हैं बल्कि इससे पैसे के लेन-देन को भी बढ़ावा मिलता है। विनियामक अनुमोदन हेतु सभी आवेदनों का निपटान एक विनिर्दिष्ट समय सीमा में किया जाना आवश्यक है। विभिन्न वर्गों के आवेदनों को निपटाने के लिए विशिष्ट समय सीमा निर्धारित करने वाला नागरिक घोषणापत्र वहां निर्धारित किया जाना चाहिए जहां कहीं भी पहले से नहीं है और उसके बाद उसका ईमानदारी से पालन किया जाना चाहिए। घोषणापत्र में इस बात का भी उल्लेख होना चाहिए कि यदी इस घोषणापत्र का पालन नहीं किया गया तो उस स्थिति में नागरिकों के लिए क्या राहत उपलब्ध हैं।

5.4.2.8 नागरिकों के विभिन्न निवेदनों पर तीव्र गति से निर्णय करने के लिए आवश्यक है कि इन आवेदनों पर निर्णय क्षेत्रीय अथवा उप-क्षेत्रीय स्तर पर प्रत्यायोजित प्राधिकार के अंतर्गत लिए जाएं। आवेदनों पर कार्यवहियों में पदाधिकारियों द्वारा हुए विलम्बों से बचने के लिए स्वयं लागू की गई समय सीमा समाप्त होने पर मान ली गई मंजूरी की प्रणाली अपनायी जानी चाहिए। विशिष्ट उदाहरण के तौर पर, भवन परमिटों के अनुमोदन के संबंध में, एक कार्यकलाप जो कि विलम्बों तथा भ्रष्टाचार की संभावना के लिए कुख्यात है, के लिए रजिस्टर्ड वास्तुकार द्वारा स्व-प्रामाणिकता जिसके बाद काउंटर पर अनुमोदनों की प्रणाली को आवश्यक कर देना चाहिए। इसके साथ-साथ दुरूपयोग रोकने के लिए जांच भी की जानी चाहिए।

5.4.2.9 शहरी स्थानीय निकायों द्वारा प्रदत्त विनियामक सेवाओं सहित, विभिन्न सेवाओं की गुणवत्ता को उन्नत करने के आवश्यकता की पहचान करते हुए, भारत सरकार ने नगरपालिकाओं में ई-गवर्नेन्स के लिए 787 करोड़ रुपए के परिव्यय के साथ राष्ट्रीय मिशन मोड परियोजना (एनएमएमपी) की शुरूआत की है, जो पांच वर्षों के दौरान 423 वर्ग-I नगरों को शामिल करेगी (जिन नगरों की जनसंख्या एक लाख से अधिक है, - तीन करोड़ पचास लाख जनसंख्या वाले नगर वर्ष 2008 तक स्वतः शामिल हो जाएंगे)। स्कीम के तहत नगरपालिकाओं की कई सेवाएं जिनमेंः जन्म एवं मृत्यु प्रमाणपत्रों का पंजीकरण तथा

जारी करना, संपत्ति कर का भुगतान, शहरी स्थानीय निकायों के अंतर्गत आने वाले उपयोगी बिल एवं उपयोगिताओं का प्रबंधन, जल आपूर्ति, शिकायत एवं सुझाव, भवन योजना अनुमोदन, परियोजनाओं का प्रापण तथा मानीटरिंग, ई-प्रापण, परियोजना वार्ड-कार्य, स्वास्थ्य संबंधी कार्यक्रम, लाइसेन्स, ठोस अपशिष्ट पदार्थ प्रबंधन, लेखाकरण प्रणालियां, वैयक्तिक सूचना प्रणाली, सूचना का अधिकार अधिनियम के कार्यान्यवन सहित शिकायत प्रबंधन, पावती तथा संकल्प मानीटरिंग की अभिकल्पना की गई है। यह एक स्वागत योग्य पहल है जिसे समयबद्ध तरीके से कार्यान्वित किए जाने की आवश्यकता है।

5.4.2.10 सिफारिशें :

(क) शहरी स्थानीय निकायों से संबंधित सभी विनियामक प्रावधानों के अद्यतन तथा सरलीकरण के लिए एक समयबद्ध कार्यक्रम को अनिवार्य बनाया जाना चाहिए। प्रत्येक राज्य सरकार को चाहिए कि वह एक कार्य दल का गठन करे जो स्थानीय शासनों में कार्यविधि की जांच करे और उसको सरल बनाने के लिए सुझाव दे सकता है कि क्या कदम उठाए जा सकते हैं तथा स्थानीय शासनों के क्षेत्रीय कार्यालयों में वस्तुनिष्ठता ला सकता है। शहर के नगर निगम स्वयं ही ऐसे प्रयोग कर सकते हैं।

(ख) शहरों में सभी सेवा प्रदायकों को "एक स्थानीय सेवा केन्द्रों" को स्थापित करते हुए एक स्थान पर लाया जाना चाहिए। इसे सभी शहरों में दो वर्षों में पूरा किया जा सकता है। कॉल सेन्टर्स, इलेक्ट्रानिक किओस्क, वेब आधारित सेवाओं तथा आधुनिक तकनीक के अन्य उपकरणों तथा तरीकों का उपयोग सभी शहरी स्थानीय निकायों द्वारा किया जाना चाहिए ताकि नागरिकों को सेवाएं देते समय गति, पारदर्शिता तथा उत्तरदायित्व लाया जा सके।

(ग) सभी शहरी स्थानीय निकायों में नागरिकों के घोषणापत्रों को लाइसेन्स तथा परमिट जैसी विनियामक सेवाओं से संबंधित अनुमोदनों के लिए समय सीमा का विशेष रूप से उल्लेख करना चाहिए और इस समय-सीमा का ईमानदारी से पालन किया जाना चाहिए। घोषणापत्र में अनुपालन न किए जाने की स्थिति में नागरिकों को उपलब्ध राहत का भी विशेष रूप से उल्लेख होना चाहिए।

(घ) भवन बनाने के लिए परमिटों को जारी करने के लिए सभी शहरी स्थानीय निकायों शहरी स्थानीय निकायों में, तत्काल प्रभाव से पंजीकृत वास्तुकारों द्वारा स्व-प्रामाणिकता की प्रणाली की शुरूआत की जानी चाहिए, आरंभ में निजी आवासीय ईकाइयां बनाने से इसकी शुरूआत होनी चाहिए।

5.4.3 अवसंरचना सेवाएं

5.4.3.1 प्रत्युत्तरदायी संस्थात्मक ढ़ांचे का सृजन

5.4.3.1.1 शहरी अवसंरचना में सामान्यतया वह सब शामिल लेता है जिन्हें "सुविधाएं" बताया जा सकता है, जैसे कि (क) पेयजल, (ख) सफाई व्यवस्था तथा निकासी, (ग) ठोस अपशिष्ट प्रबंधन तथा (घ) शहरी परिवहन प्रबंधन। आर्थिक विकास के साथ, नागरिक इन सेवाओं की बेहतर पहुंच तथा इन सेवाओं के मानकों में सुधार की मांग करते हैं। इन सेवाओं की व्यवस्था की दिशा में सरकार का आधारभूत दृष्टिकोण होना चाहिएः (क) इन सेवाओं के प्रबंधन हेतु जवाबदेह तथा प्रतिसंवेदी संस्थात्मक ढांचा बनाना; (ख) ऐसी सेवाओं पर आने वाली लागत की पूरी वसूली; (ग) इन सुविधाओं के लिए बेंचमार्क मानदण्डों को तैयार करना; तथा (घ) इस प्रयास में निष्पक्षता की आवश्यकता।

5.4.3.1.2 शहरों में मूलभूत सुविधाओं के प्रावधान की विशिष्टता अभिकरणों की बहुलता है। चूंकि संविधान के तहत नगर प्रशासन राज्य का विषय है, राज्य सरकारें शहरी स्थानीय निकायों की विनियामक तथा वित्तीय नीतियों को नियंत्रित करती है। बारहवीं सूची में जिन कार्यों को स्थानीय सरकारों के सुपुर्द नहीं किया गया है, वे विभागों और अर्ध सरकारी संगठनों के जरिए राज्य सरकार के अंतर्गत है। यद्यपि कुछ राज्यों ने शक्तियों तथा कार्यों को स्थानीय सरकारों के सुपुर्द कर दिया है, कई राज्यों ने परास्थानिकों को जरिए कुछ सेवाओं की व्यवस्था हेतु दायित्व तथा प्राधिकार अपने पास ही रखे हैं। 1960 तथा 1970 के दशकों में ऐसे परास्थानिकों के खासी बढ़ोतरी इस उम्मीद में हुई कि वे विभिन्न सेवाओं तथा उपयोगिताओं की व्यवस्था करने में तकनीकी सामर्थ्य देंगे। यद्यपि इसके लिए बहस अधिक क्षमता और पेशेवर रूख की है, यह संरचना इन अधिकारियों की जवाबदेही को स्थानीय सरकारों की दिशा की बजाय उच्च अधिकारियों की ओर संकेत करती है। नागरिकों तथा उनके प्रतिनिधियों में यह सामर्थ्य नहीं है कि वे परास्थानिकों के कार्मिकों को उनके निष्पादन के लिए जवाबदेह ठहरा सकें, जिससे नागरिक की स्थानीय अधिकारियों और निर्वाचित प्रतिनिधियों को जिम्मेवार ठहराने का सामर्थ्य

सीमित हो जाता है। इसकी वजह से कम से कम कुछ स्थानीय निकायों में जो कुछ सामर्थ्य पुष्ट हुआ था वह भी क्षीण हुआ है।

5.4.3.1.3. इस संदर्भ में, शहरी स्थानीय निकायों तथा राज्य सरकार के विभागों/परास्थानिकों के बीच जिम्मेदारियो तथा जवाबदेही के आबंटन का सीमा-रेखांकन स्पष्ट रूप से करना होगा। एक हद तक बड़े राज्य सरकार अभिकरण के पास अंतिम जिम्मेदारी तथा स्वामित्व हो सकता है, कम से कम उन सेवाओं और उपयोगिताओं का जिनकी मौजूदगी शहरी स्थानीय निकायों के न्यायाधिकार क्षेत्र से बाहर है। लेकिन जहां कहीं भी, नागरिक कार्यकलाप की प्रबंधकीय तथा तकनीकी "हदों" का सीमा-रेखांकन जिस हद तक संभव हो, उसका दायित्व एक स्थानीय निकाय को अभिचिन्हित किया जाना संभव बनाना चाहिए।

5.4.3.1.4 अन्य शब्दों में, शहरी स्थानीय निकाय के न्यायाधिकार क्षेत्र के भीतर एक विशिष्ट उपयोगिता के "निचले स्तर के कार्यकलाप" आदर्शतः शहरी स्थानीय निकाय के हो कार्यकलाप होने चाहिए। महानगर के निगम में, उदाहरण के तौर पर जल का संवितरण मुख्यतः स्थानीय निकाय की जिम्मेदारी होनी चाहिए। इस कार्य को स्वयं स्थानीय निकाय द्वारा किया जा सकता है अथवा जल आपूर्ति बोर्ड जैसे अभिकरण के माध्यम से करवा सकती है। ऐसे मामलों में, जल आपूर्ति बोर्ड का प्रमुख जल आपूर्ति से संबंधित सभी कार्यकलापों के लिए महापौर के प्रति जवाबदेह होना चाहिए। अन्य शब्दों में, परास्थानिकों के पदाधिकारियों को नगर परिषद[61] को जवाबदेह होना है।

5.4.3.1.5 सिफारिशें :

(क) स्थानीय सरकारों को अपने न्यायाधिकार क्षेत्र में नागरिक सुविधाएं प्रदान करने के लिए जिम्मेदार होना चाहिए।

(ख) एक विशिष्ट राज्य उपयोगिता की सभी निचले स्तर की क्रियाकलापों के संबंध में, जैसे ही वह शहरी स्थानीय निकाय के भौगोलिक तथा प्रशासनिक दायरे में आएंगे सरकारी जनोपयोगी सेवाएं/परास्थानिकों शहरी स्थानीय निकायों को जवाबदेह हो जाने चाहिए।

5.4.3.2 जलापूर्ति

5.4.3.2.1 वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार, 53.69 मिलियन शहरी घरों में से केवल 36.86 मिलियन घरों में नल के द्वारा जल स्रोत उपलब्ध था। शहरी निर्धनों की एक बहुत बड़ी प्रतिशतता को

61 यहां परिषद शब्द का स्थूल प्रयोग उस परिषद को शामिल करने के लिए किया गया है जो चाहे किसी भी नाम से किसी शहरी निकाय का नियंत्रण करेगा। इस प्रकार शब्द का प्रयोग सामान्य अर्थ में किया जाता है।

स्वच्छ जल उपलब्ध नहीं है। त्वरित शहरी जल आपूर्ति स्कीम के सरकारी कार्यक्रम ने, दिनांक 31.3.2006 की यथास्थिति 695 करोड़ रुपए में 612 स्कीमों को सहायता दी है। वर्ष 2021[62] तक स्वच्छ जल आपूर्ति तथा स्वच्छता सेवाओं के अंतर्गत शहरी जनसंख्या का 100 प्रतिशत शामिल करने के लिए केन्द्रीय लोक स्वास्थ्य अभियांत्रिकी (सीपीएचईईओ) द्वारा किए गए 1,72,905 करोड़ रुपए के मूल्यांकन की तुलना में यह पूर्णतया अपर्याप्त है। निर्धनों हेतु शहरी मूलभूत सेवाएं कार्यक्रम (यूबीएसपी) के लिए सदी के बदलने पर किया गया बेंचमार्क अनुमान दर्शाता है कि गंदी और निर्धन बस्तियों में बेहद कम जल आपूर्ति के साथ नगरपालिका क्षेत्रों में महत्वपूर्ण विभिन्नता है। (झुग्गी-झोपड़ी को अक्सर 25 एलपीसीडी से भी कम जलापूर्ति)।[63] जरूरी एमडीजी मानदण्डों को पाने के लिए प्राथमिकता के तौर पर कम से कम स्वच्छ जल आपूर्ति के लिए पर्याप्त निधियां प्रदान की जानी चाहिए।

5.4.3.2.2. <u>जल आपूर्ति के संस्थान</u> : जल आपूर्ति तथा स्वच्छता सेवाओं के संबंध में भारत में शहरी स्थानीय निकायों में मोटे तौर पर तीन सांस्थानिक ढांचे देखे जा सकते हैं। पहले वे शहरी स्थानीय निकाय हैं जहां पूरी कार्यप्रणाली राज्य सरकार के विभाग अथवा परास्थानिक के पास है; दूसरे वे जहां शहरी स्थानीय निकायों स्वयं सारे कार्यकलाप को संभालते हैं तथा तीसरे, जैसा कुछ बड़े नगरों में होता है, जहां नगर के लिए जल आपूर्ति और स्वच्छता बोर्ड विशिष्ट रूप से गठित किए गए हैं। सांस्थानिक ढांचा चाहे जो कोई भी हो, संतोषजनक सेवा नहीं दे पाने में निजी क्षेत्र की असफलता की जिम्मेवारी लोक एकाधिकार, संगठनात्मक कार्य अक्षमता, ज्यादा रिसाव, निवारक रखरखाव की कमी, लापता जल के रूप में तकनीकी खामियों तथा साथ ही साथ कर्मचारियों की अधिक संख्या और स्वायत्तता की कमी पर ठहराई जाती है।

5.4.3.2.3 नगरपालिका निकाय का प्रमुख कार्य जल आपूर्ति का प्रबंधन करना होना चाहिए। पैराग्राफ 5.4.3.1.5 में आयोग ने सिफारिश की है कि विशिष्ट जनोपयोगी सेवा के निचले स्तर के सभी कार्यकलापों के संबंध में, जैसे ही वे कार्यकलाप शहरी स्थानीय निकास के बौगोलिक तथा प्रशासनिक दायरे में प्रवेश करते हैं, सरकारी जनोपयोगी सेवा/परास्थानिक शहरी स्थानीय निकाय के जवाबदेह बन जाने चाहिए। वे अध्ययन जिन्होनें दिल्ली और चेन्नई में बड़े जल बोर्डों की तुलना कोलकाता और मुम्बई के महानगर निगमों के साथ की है, उनसे ये निश्चित निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि निगम के जल आपूर्ति विभाग की तुलना में बोर्ड अथवा निगमित संरचना उच्चतर स्तर की स्वायत्तता तथा तीव्र निर्णय लेना अनिवार्य रूप से सुनिश्चित करते हैं। तथापि, यह मानना पड़ेगा कि सामान्यतः, मुम्बई जैसे

62 आंकड़े मुख्यतः शहरी विकास मंत्रालय की वेबसाइट और विश्व बैंक की रिपोर्ट भारत जलापूर्ति और स्वच्छताः अवसंरचना और सेवा के बीच अंतर कम करना से लिए गए हैं।

63 शहरी शासन तथा प्रबंधन : भारतीय पहलें संपादक पी.एस.एन. राव, आईआईपीए, नई दिल्ली में मुकेश पी. माथुर का बुनियादी शहरी अवसंरचना और सेवाओं पर मानदंड और मानक, पृष्ठ 268 देखें।

बहुत बड़े निगमों से अन्य नगर निगमों की तुलना में जल आपूर्ति बोर्ड वित्तीय रूप से अधिक स्वायत्त हैं तथा उच्च स्तर की तकनीकी क्षमताओं का विकास किया है। अतः, इन जिम्मेदारियों का परास्थानिकों से शहरी स्थानीय निकायों को अंतरण को समुचित तरीके से शहरी स्थानीय निकायों की क्षमताओं में बढ़ोतरी करने के साथ चरणबद्ध तरीके से करना होगा। इस प्रकार यद्यपि विकास से वितरण तक जल आपूर्ति के समग्र विस्तार का प्रभार सबसे बड़े निगमों को निश्चित रूप से लेना चाहिए, तथापि स्रोत विकास दायित्व को परास्थानिक अभिकरण पर छोड़ते हुए, अधिकतर स्थानीय निकायों के लिए यही सबसे अधिक व्यवहार्य व्यवस्था प्रतीत होती है कि अपने प्रादेशिक न्यायाधिकार क्षेत्र के भीतर संवितरण नेटवर्कों के प्रबंधन के लिए दायित्वों का अन्तरण चरनबद्ध तरीके से करें।

5.4.3.2.4 <u>प्रशुल्क</u> : एक समवर्गी परन्तु समान रूप से महत्वपूर्ण मुद्दा लागतों/प्रशुल्कों की वसूली का है। वास्तविक लागतों पर ही उपभोक्ताओं को आपूर्ति करने में स्थानीय सरकारों की हिचक समझ में आती है - इसके फलस्वरूप हालांकि अक्सर बहुत अधिक महंगी शुल्क संरचना होती है। बहुत से नगरों में, इतना पर्याप्त राजस्व भी नहीं हो पाता कि उससे प्रचालन की लागतें पूरी हो पाएं। कम प्रशुल्कों के अलावा, लागत और राजस्व के बीच अंतर का कारण प्रचालन कार्यअक्षमता तथा चोरी भी है।

5.4.3.2.5 जल आपूर्ति के राजस्व तथा लागत के बीच के अंतर के कारण नगरपालिका निकाय गुणवत्ता में सुधार लाने अथवा उसके रखरखाव पर भी किसी प्रकार के पर्याप्त निवेश करने से बचते हैं। परिणामस्वरूप, जल की गुणवत्ता बिगड़ती है। जल की गुणवत्ता में गिरावट का असर सबसे अधिक गरीबों पर पड़ता है, क्योंकि आर्थिक रूप से बेहतर लोग पेयजल आपूर्ति के अन्य सुरक्षित उपायों जैसे बोतलबंद पानी, निस्यंदन (फिल्टरेशन) आदि का सहारा ले लेते हैं।

5.4.3.2.6 आयोग ने पैराग्राफ 3.5.2.18(ज) में सिफारिश की है कि राज्य वित्त आयोगों को स्थानीय निकायों को वित्तीय स्थिति का सम्यक विश्लेषण करना चाहिए तथा उनकी कार्यप्रणाली में सुधारों के लिए ठोस सिफारिशें करनी चाहिए। इसमें स्थानीय शासनों की जल आपूर्ति प्रणालियों का विस्तृत विश्लेषण भी अनिवार्य रूप से शामिल किया जाना चाहिए। राज्य वित्त आयोगों को प्रशुल्कों के नियतन तथा उनकी आवधिक समीक्षा के लिए सिद्धांत निर्धारित करने चाहिए। कम से कम इन सेवाओं के प्रचालन की लागत पूरी तरह से वसूल हो जाए, निहित दृष्टिकोण यही होना चाहिए।

5.4.3.2.7 जल आपूर्ति स्कीमों को पर्यावरण की दृष्टि से वहनीय होना होगा। शहरी जनसंख्या में बेहिसाब वृद्धि के साथ, पारम्परिक जल स्रोत आवश्यकताओं से निपटने के लिए नाकाफी है। परिणामस्वरूप,

नए स्रोतों को विकसित करना होगा, परन्तु इससे जल की लागत बढ़ जाती है। स्थानीय निकायों के लिए आवश्यक है कि अवसंरचना विकास योजनाएं तैयार करे जिसे सीडीपी के साथ एकीकृत होना चाहिए। शहरी जल आपूर्ति प्रणालियों पर पड़ने वाले दबाव में कटौती लाने के लिए, जल पैदावार (वाटर-हार्वेस्टिंग) उपायो को अपनाने के द्वारा तथा अपेय प्रयोजनों हेतु गन्दे जल के पुनःचक्रण के द्वारा मांग में रोक लगाई जा सकती है। नगरपालिका उप-निकायों को शुरूआत में ऐसे प्रयोगों को अपनाने के लिए प्रोत्साहन देना चाहिए तथा उत्तरोत्तर इनको सभी भवनों के लिए अनिवार्य कर देना चाहिए।

5.4.3.2.8 सिफारिशें :

(क) शहरी स्थानीय निकायों को अपने प्रादेशिक न्यायाधिकार क्षेत्र में जल आपूर्ति तथा संवितरण की जिम्मेदारी दी जानी चाहिए चाहे अपने स्वयं के स्त्रोत अथवा पैरास्टेटलों तथा अन्य सेवा प्रदायकों के साथ सहायता व्यवस्थाओं पर आधारित हो।

(ख) महानगरीय निगमों को विकास से वितरण तक समग्र जल आपूर्ति कार्यक्रम के लिए जिम्मेदारी दी जा सकती है। अन्य शहरी स्थानीय निकायों के लिए यही सबसे अधिक व्यवहार्य व्यवस्था प्रतीत होती है कि स्त्रोत विकास के दायित्व को परास्थानिक अभिकरण पर छोड़ते हुए अपने प्रादेशिक न्यायाधिकार क्षेत्र के भीतर संवितरण नेटवर्कों के प्रबंधन के लिए दायित्वों का अन्तरण चरणबद्ध तरीके से करें।

(ग) राज्य वित्त आयोगों को इष्टतम प्रशुल्क संरचना पर पहुंचने के लिए स्थानीय सरकारों के विभिन्न वर्गों के लिए उपयुक्त आनुमानिक पैरामीटरों को विकसित करने का कार्य सौंपा जा सकता है।

(घ) नगरपालिका निकायों को चोरी में कटौती, कर्मचारियों की कुशलता में सुधार तथा तकनीक का उपयोग करने के माध्यम से प्रचालन कुशलताओं को बढ़ाने पर ध्यान केन्द्रित करना होगा।

(ड.) नगरपालिका निकायों को एक समय-सीमा के भीतर सभी जल कनेक्शनों पर मीटर लगाने चाहिए। अनुक्रम से मीटर प्रणाली लगाने से चोरी की पहचान करने में सहायता मिल सकती है। सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग के माध्यम से जल प्रभारों के भुगतान को परेशानी मुक्त बनाया जाना चाहिए। जहां तक संभव हो सभी जल कनेक्शनों को मीटरबद्ध किया जाना चाहिए, तथा यदि जरूरी हो तो लक्षित सब्सिडी को अति निर्धन वर्गों को दिया जाना चाहिए।

(च) जल आपूर्ति हेतु अवसंरचना विकास योजनाओं को सीडीपी के साथ एकीकृत करना चाहिए।

(छ) जल आपूर्ति के उपायों को अपनाने तथा अपेय प्रयोजनों के लिए अशुद्ध जल के पुनश्चक्रीयकरण के लिए नगरपालिका उप-नियमों को ऐसा करने वालों को प्रोत्साहन देना चाहिए। बड़े नगरों में, अपेय जल (पुनःचक्रित संसाधित जल) का उपयोग उद्योगों के लिए किया जाना चाहिए।

5.4.3.3. मल-जल प्रबंधन

5.4.3.3.1 ग्रामीण क्षेत्रों के विपरीत, जहां पांच व्यक्तियों में से करीब केवल एक व्यक्ति के पास शौचालय है, शहरों में यह सुविधा चार में से तीन के पास उपलब्ध है। हालांकि, मल-जल व्यवस्था कनेक्शनों में शामिल जनसंख्या 28 प्रतिशत के करीब, अत्यधिक कम है। विश्व बैंक क्षेत्र अनुमानों के अनुसार, हैदराबाद में 90 प्रतिशत, चेन्नई में 83 प्रतिशत तथा बेंगलुरू में 78 प्रतिशत कवरेज का तुलना में दिल्ली में 52 प्रतिशत तथा मुम्बई में 56 प्रतिशत कवरेज बहुत कम है। 62 प्रतिशत[64] कवरेज के साथ कोलकाता भी बहुत बेहतर स्थिति में नहीं है।

5.4.3.3.2 हमारे शहरों में घटिया स्तर की स्वच्छता के कई कारण हैं। इनमें जागरूकता तथा समुचित साफ-सफाई और स्वास्थ्य-विज्ञान की आवश्यकता को महत्व देने की कमी तथा इसके साथ नगरपालिका की वित्तीय स्थिति की निराशाजनक परिस्थिति के कारण अपर्याप्त सार्वजनिक निवेश शामिल हैं। राष्ट्रीय शहरीकरण आयोग का मानना था कि, सिर्फ इसलिए, मल-जल प्रबंधन की दिशा में "असंकलित दृष्टिकोण" अपनाना चाहिए। उस आयोग के अनुसार, *"इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि कोई मुख्य मल-जल प्रबंधन संबंधी परियोजना हाथ में न ली जाए, परन्तु वैकल्पिक प्रणालियों को स्वीकृति देने को भी तैयार रहना चाहिए जो सस्ती हों और भारतीय परिस्थितियों के लिहाज से उचित हों।"*

बाक्स 5.13 : यमुना में प्रदूषण

अकेले दिल्ली लगभग 3,296 एमएलडी (मिलियन लीटर प्रतिदिन) कचरा नालों के जरिए यमुना में बहाती है। भारत के दूसरे वर्ग के सभी शहर आपस में मिलकर जितना कचरा डालें ये उससे भी कहीं अधिक है। कम परिवार्षिक जल प्रवाह तथा यमुना में कचरे की अत्यधिक मात्रा डाले जाने के कारण इसे देश की सबसे अधिक प्रदूषित नदियों में से एक का संदिग्ध विभेदीकरण प्राप्त हुआ है। दिल्ली में तीव्र गति से हुए शहरीकरण ने मल-जल प्रबंधन प्रणाली पर और अधिक दबाव संयोजित किया है। बड़े सीवरों की घटिया स्थिति, कचरा शोधन की कम क्षमता तथा दिल्ली के मल-अत्यवस्थित क्षेत्र जोकि जनसंख्या के करीब 50% हैं, में स्वच्छता सुविधाओं की कमी दिल्ली में लगातार प्रदूषित होती यमुना के लिए जिम्मेदार है। वजीराबाद तथा ओखला के बीच 22 कि.मी. लम्बी यमुना में न्यूनतम परिवार्षिक ताजे जल प्रवाह की कमी के कारण यह समस्या संयोजित हो जाती है।

स्रोत : यमुना कार्य योजना, राष्ट्रीय नदी संरक्षण निदेशालय, पर्यावरण एवं वन मंत्रालय http://yap.nic.in/yamuna_in_delhi.asp

64 विश्व बैंक : भारत जल आपूर्ति तथा स्वच्छता-अवसंरचना और सेवा के बीच के अंतर को समाप्त करना, बैकग्राउन्ड पेपर, जनवरी, 2006

5.4.3.3.3 मल-जल प्रबंधन समस्या के दो पहलू है। पहला यह कि शहरों के ज्यादातर हिस्से भूमिगत मल-जल प्रबंधन प्रणालियों द्वारा शामिल नहीं है, गन्दगी अपना रास्ता बनाते हुए नालों, प्राकृतिक जल धाराओं और अन्ततः बड़ी नदियों में पहुंच जाती है। समस्या और भी बढ़ जाती है जब नदियां प्रमुख शहरों के नजदीक से गुजरती हैं। दूसरे यह कि, भूमिगत प्रणाली के द्वारा ले जाई गई गन्दगी अन्ततः प्राकृतिक स्रोतों में छोड़नी होती है, लेकिन समुचित रूप से शोधित करने के बाद। अधिकतर शहरों में शोधित करने वाले संयंत्रों की क्षमता गन्दगी के प्रवाह से कहीं कम होती है और बहुत से शहरों में तो जल का शोधन होता ही नहीं है।

5.4.3.3.4 शोधन सुविधाओं के साथ मल-जल प्रबंधन प्रणालियां पूंजीं गहन होती हैं। नए खर्चों को अनुमोदन देते समय, इस बात को सुनिश्चित कर लेना चाहीए कि आन्तरिक मल-जल प्रबंधन प्रणालियों के लिए पर्याप्त प्रावधान किए जाएं और वे लागू हों। स्थानीय निकाय संपत्ति कर अथवा विकासात्मक प्रभारों पर उप-कर भी लगा सकते हैं, जिससे मौजूदा मल-जल प्रबंधन प्रणालियों का विस्तार तथा उनकी क्षमता में वृद्धि करने के लिए स्रोतों को बढ़ाया जा सके। मल-जल प्रबंधन के लिए अतिरिक्त स्रोतों का सृजन करने के लिए स्थानीय सरकारों को प्रोत्साहित करने हेतु, संघ तथा राज्य सरकारों द्वारा समतुल्य अनुदान प्रदान किए जा सकते हैं।

5.4.3.3.5 सामान्यतः मल-जल प्रबंधन सुविधा के लिए स्थानीय निकायों द्वारा बहुत कम अथवा कोई प्रभार नहीं लगाया जाता। इस दृष्टिकोण में बदलाव आना ही चाहिए। आयोग सिफारिश करता है कि सभी नगरनिगमों में अलग से प्रयोक्ता प्रभार की शुरूआत की जानी चाहिए, जल प्रभारों से भिन्न स्वच्छता और मल-जल के लिए न्यूनतम प्रभार के रूप में शुरूआत करनी चाहिए। यह आवश्यक है कि इस तरह से प्राप्त इन निधियों को मल-जल प्रबंधन प्रणाली के प्रचालन और रखरखाव में पुनः लगाए जाने की आवश्यकता पर बल दिया जाए।

5.4.3.3.6 यह बताने की आवश्यकता नहीं कि झुग्गी-झोपड़ियों में स्वच्छता संबंधी स्थिति कहीं अधिक खराब है। झुग्गी-झोपड़ी वाले क्षेत्रों में इन सेवाओं के संबंध में स्थिति सारणी 5.11 में दर्शाई गई है।

5.4.3.3.7 आयोग ने नोट किया कि अधिसूचित झुग्गी-झोपड़ी बस्तियों की ओर झुकाव होते हुए बस्तियों के भीतर ही जल तथा स्वच्छता के प्रावधान को लेकर बहुत विषमता है। शौचालयों के मामले में अधिसूचित गंदी बस्तियों में 17 प्रतिशत लोगों के पास शौचालय नहीं है, जबकि गैर-अनुसूचित गंदी

बस्तियों के मामले में 51 प्रतिशत लोगों के शौचालय नहीं हैं। कुछ राज्यों में तो परिस्थिति बेहद खराब है। ये चिंताजनक बात है, क्योंकि मानव को अधोगति से बचाने के कुछ बुनियादी कदम क्षेत्रों की अधिसूचना पर आधारित नहीं हो सकते।

5.4.3.3.8 कई गैर-सरकारी संगठन (एनजीओ) तथा नागरिक सोसाइटी दलों ने "भुगतान और प्रयोग शौचालय" खास तौर पर झुग्गी-झोपड़ी बस्तियों में स्थापित किए हैं। गंदी बस्तियों क्षेत्रों में स्वच्छता सेवाओं के सह-उत्पादन[65] का सफल प्रयास किया गया है। इस अवधारणा में बिल्कुल निचले स्तर पर सी.बी.ओ. (समुदाय आधारित संगठन) को स्थापित करना, आईईसी कार्यकलापों को चलाना, लाभान्वितों से शुरूआती पूंजीगत लागत की महत्वपूर्ण प्रतिशतता एकत्र करने के बाद एकत्रित शौचालय ब्लॉक का निर्माण शामिल है। नगरनिगम सरकारों द्वारा समुचित प्रोत्साहन राशि देते हुए ऐसे प्रयासों को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। गंदी बस्तियों के क्षेत्रों में प्राथमिकता के आधार पर नगरनिगम निकायों द्वारा मल-जल प्रबंधन की सुविधाएं देनी होंगी।

5.4.3.3.9 सिफारिशें :

(क) **स्वास्थ्य-विज्ञान तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य का मसला होते हुए, स्वच्छता को सभी शहरी इलाकों में प्राथमिकता और बल दिया जाना आवश्यक है। सभी शहरों में, पर्याप्त अवसंरचना निर्धारित करने के लिए अग्रिम कार्रवाई की जानी चाहिए ताकि सेवाओं की कमी से बचा जा सके।**

(ख) **प्रत्येक नगरनिगम निकाय को गंदी बस्तियों के क्षेत्रों में मल-जल प्रबंधन सुविधाएं देने के लिए समयबद्ध कार्यक्रम तैयार करना चाहिए। वार्षिक बजट में उपयुक्त आबंटन के माध्यम से इसको कार्रवाई में लाया जाना चाहिए। स्थानीय निकाय संपत्ति कर अथवा विकासात्मक प्रभारों पर उपकर लगा सकते हैं ताकि मौजूदा मल-जल प्रबंधन प्रणालियों के विस्तार तथा उनकी क्षमता में बढ़ोतरी के लिए धन स्त्रोतों की उगाही कर सके। मल-जल प्रबंधन के लिए अतिरिक्त संसाधनों के सृजन हेतु स्थानीय सरकारों को प्रोत्साहित करने के लिए, संघ तथा राज्य सरकारों द्वारा समतुल्य अनुदान दिए जा सकते हैं।**

(ग) **नगरनिगम निकायों को चाहिए कि समुदाय प्रतिभागिता तथा सेवाओं के सह-उत्पादन को प्रोत्साहित करे। लोगों के बीच जागरूकता लाकर इसको बढ़ावा दिया जाना चाहिए।**

65 सह-उत्पादन से आशय है कि नागरिक या सेवा पाने वाले उपभोक्ता ने स्वयं आपस में मिलकर इन सेवाओं के उत्पादन के लिए अंशदान किया।

सारणी 5.11 गंदी बस्तियों में रहने वाले शहरी लोगों के लिए जल तथा स्वच्छता सुविधाओं की उपलब्धता (प्रतिशत) (2002)

	निम्न में निवास कर रहे परिवारों की प्रतिशतता		जल तक पहुंच के तरीके (प्रतिशत)						भूमत मल-जल निकासी के साथ प्रतिशत		जल-निकासी रहित प्रतिशत		शौचालय विहीन लोगों का प्रतिशत	
	एनएस	एनएनएस		एनएस			एनएनएस		एनएस	एनएनएस	एनएस	एनएनएस	एनएस	एनएनएस
		प्रतिशत नल	प्रतिशत ट्यूबवेल	प्रतिशत अन्य	प्रतिशत नल	प्रतिशत ट्यूबवेल	प्रतिशत अन्य							
जम्मू व कश्मीर	59.6	40.4	100	0	0	98	2	0	0	0	100	100	61	76
पंजाब	75.6	24.4	43	57	0	0	100	0	34	0	0	95	48	95
दिल्ली	20.5	79.5	100	0	0	71	29	0	0	3	31	24	31	52
राजस्थान	2 2	97.8	100	0	0	27	0	73	0	0	67	98	33	98
उत्तर प्रदेश	50.6	49.4	34	67	0	59	41	0	35	11	1	71	1	51
बिहार	37.8	62.2	0	100	0	0	100	0	0	0	34	75	34	100
पश्चिम बंगाल	52.1	47.9	89	11	0	72	18	10	63	23	0	39	0	30
उड़ीसा	14.2	85.8	100	0	0	57	44	0	0	0	0	90	100	100
छत्तीसगढ़	46.9	53.1	31	69	0	71	25	4	0	0	0	25	69	100
मध्य प्रदेश	65.7	34.3	68	20	12	75	25	0	24	0	31	38	12	5
गुजरात	38.7	61.3	33	2	65	74	26	0	83	7	2	73	6	69
महाराष्ट्रा	74.7	25.3	95	3	2	91	3	6	34	27	10	23	18	20
आंन्ध्रा प्रदेश	85.1	14.9	87	2	11	46	55	0	12	0	21	*66*	10	68
कर्नाटका	65.6	34.4	89	11	0	77	16	7	23	24	36	24	*66*	53
तमिल नाडु	53.5	46.5	85	0	15	93	3	4	57	11	16	44	15	68
पांडुचेरी	29.0	71.0	100	0	0	97	3	0	0	7	0	10	29	93
योग	**65.1**	**34.9**	**84**	**10**	**6**	**71**	**22**	**7**	**30**	**15**	**15**	**44**	**17**	**51**

टिप्पणियां : 1. एनएस-अधिसूचित झुग्गी-झोपड़ी; एनएनएस-गैर अधिसूचित झुग्गी-झोपड़ी

2. एनएसएस आंकड़ों के अनुसार, झुग्गी-झोपड़ी घटिया तरीके से बनी कोठरियों के झुंड का एक संकुचित बन्दोबस्त होता है, जिसमें अधिकतर अस्थायी प्रकृति का तथा आमतौर पर अपर्याप्त स्वच्छता संबंधी एवं पेयजल सुविधाओं के साथ अस्वच्छ परिस्थितियों में जनसंकुल होता है। ऐसा क्षेत्र "गैर-अधिसूचित झुग्गी-झोपड़ी" माना जाता है यदि उस क्षेत्र में कम से कम 20 घर के सदस्य रहते हों। "अधिसूचित झुग्गी-झोपड़ी" वे क्षेत्र होते हैं जिन्हें शहरी स्थानीय निकायों अथवा विकास प्राधिकरणों द्वारा झुग्गी-झोपड़ी के तौर पर अधिसूचित किया गया है। इधर-उधर छितरे हुए बन्दोवस्त को इस सर्वेक्षण में छोड़ दिया गया है। स्रोतः एनएसएसओ (2003ए), भारत अवसंरचना रिपोर्ट, 2006 में रिपोर्ट किया गया।

(घ) सभी नगरनिगमों में अलग से प्रयोक्ता प्रभार की शुरूआत की जानी चाहिए, जल प्रभारों से भिन्न स्वच्छता और मल-जल व्यवस्था के लिए न्यूनतम प्रभार के रूप में शुरूआत की जानी चाहिए। इष्टतम प्रयोक्ता प्रभारों पर पहुंचने के लिए स्थानीय सरकारों के विभिन्न वर्गों के लिए उचित आनुमानिक पैरामीटरों के विकास का कार्य राज्य वित्त आयोगों को सौंपे जा सकते हैं।

5.4.3.4 ठोस अपशिष्ट प्रबंधन

5.4.3.4.1 शहरी स्वच्छता को ठोस अपशिष्ट प्रबंधन से करीब से जोड़ा जाता है। वर्ष 2000 में शहरी भारत में 33 मिलियन टन से अधिक अपशिष्ट सृजित होने का अनुमान था और इसके वर्ष 2010 तक तथा पुनः वर्ष 2020[66] तक दुगुने हो जाने की उम्मीद है। अपशिष्ट एकत्रण तथा उसका निपटान सभी नगरनिगम निकायों का वैधानिक कार्य है। बेशक नगर-निगम निकायों में कार्यरत आधे से अधिक कर्मचारी इसी काम में व्यस्त हैं। कर्मचारियों का इतना बड़ा कर्मि-मण्डल गलियों की साफ-सफाई, कूड़े का एकत्रण, कूड़े का परिवहन तथा उसको फेंकना जैसे काम करता है। इसके अलावा, अनौपचारिक क्षेत्र में काफी बड़ी संख्या में कार्मिक (कूड़ा बीनने वाले) भी कूड़ें के कुछ घटकों के पुनःचक्रण में कार्यरत है। कई नगर-निगम निकायों ने कूड़ा एकत्रण के लिए आउटसोर्सिंग की शुरूआत भी कर दी है। इसके अलावा, नागरिक समाज संगठन भी कुछ नगरनिगम निकायों के साथ जुड़े हुए हैं। आज हमारे शहरों में ठोस अपशिष्ट के पर्याप्त तथा प्रभावी प्रबंधन हेतु वर्धित जागरूकता की आवश्यकता है। वर्ष 1994 में सूरत में हैजे जैसी गंभीर सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याओं ने अपशिष्ट प्रबंधन, जो स्वच्छ पर्यावरण का तुलनात्मक रूप से कम खर्चीला पहलू है, की उपेक्षा से होने वाले खतरों की ओर ध्यान आकर्षित किया है।

5.4.3.4.2 तथापि, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन हेतु इतने बड़े पैमाने पर कार्मिकों की तैनाती के बावजूद, परिणाम संतोषजनक नहीं है। एक ठेठ शहर में, "सार्वजनिक कूड़ादान" कूड़ा निपटान का बहुत ही जाना पहचाना तरीका है। इस तरीके में कई खामियां हैं। सभी परिवार तथा अन्य वाणिज्यिक इकाइयां कूड़ा कूड़ेदान में नहीं डालती हैं। इसलिए कूड़ा एकत्र होता है उसे अलग-अलग विभाजन नहीं किया जाता। इस मिलेजुले कूड़े को नगर-निगम के वाहनों द्वारा नगर के बाहरी इलाकों में ले जाया जाता है और खुले मैदान में छोड़ दिया जाता है। बहुत कम नगर-निगम निकाय बढ़िया तकनीक वाली कूड़ा निपटान तकनीकों को अपनाते हैं। पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने नगर-निगम ठोस अपशिष्ट (प्रबंधन और रखरखाव) नियमावली, 2000 जारी की है। ये नियम ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं को शामिल करते हैं।

66 विश्व बैंक : भारत में नगर-निगम ठोस अपशिष्ट प्रबंधन में सुधार लाना : रुपरेखा तथा चुनौतियां

5.4.3.4.3 ठोस अपशिष्ट प्रबंधन की मौजूदा प्रणाली की कमियां है : (i) नगर-निगम निकायों की व्यावसायिक तथा प्रबंधकीय क्षमताएं सीमित हैं और ये छोटे शहरों के मामले में अधिक सुस्पष्ट हैं; (ii) कूड़ा निपटान के लिए कोई प्रभार नहीं लगाया जाता, न ही कूड़ा बनना कम करने अथवा पुनः चक्रण के लिए किसी प्रकार का प्रोत्साहन दिया जाता है; (iii) इस कार्यकलाप के लिए अलग से कोई लागत निर्धारण नहीं किया जाता; (iv) प्लास्टिक थैलियों तथा सामानों का अन्धाधुन्ध प्रयोग; (v) आधुनिक तकनीक का विरलता से सहारा लेना; (vi) स्रोत पर ही कूड़े को अलग-अलग किए जाने पर बल नहीं दिया जाता।

5.4.3.4.4 अपशिष्ट प्रबंधन के तीन मूल घटक हैं : (क) एकत्रण (ख) निपटान के अलग-अलग प्रकार के लिए विभाजन तथा (ग) निपटान। पहले के लिए सामुदायिक भागीदारी तथा निजीकरण उपयुक्त है तथा इसे क्षेत्रीय सभाओं और स्थानीय एनजीओ/सीबीओ के कार्यकलापों का भाग बनाया जाना आवश्यक है जिसके लिए ये प्रभार लगा सकते हैं। कूड़ा एकत्रण की बहूत सारी समुदाय आधारित प्रणालियों का प्रयोग अलग-अलग शहरों में किया गया है। इसका विस्तार किए जाने की आवश्यकता है। दूसरे घटक के लिए निपटान के अलग-अलग प्रकार के लिए कई वर्गों में विभाजन करने की आवश्यकता है। बदकिस्मती से, निपटान का हमारा तरीका मुख्य रूप से अन्धाधुन्ध ढेर लगाने का है। यह अत्यंत आवश्यक है कि अवक्रमणता (नष्ट होने की स्थिति) के अनुसार पारिवारिक अपशिष्ट के विभाजन के लिए एक नागरिक प्राधिकरणों पर भार कम होगा। तीसरा घटक प्रभावी निपटान का है, जिसे स्वयं स्थानीय निकायों अथवा निजी क्षेत्र की भागीदारी क्षेत्रों में से किसी एक के द्वारा भी किया जा सकता है। नगर-निगम ठोस अपशिष्ट (प्रबंधन एवं रखरखाव) नियमावली, 2000 में ठोस अपशिष्ट को निपटाने के तरीके निर्धारित हैं। किसी भी कार्य के लिए आउटसोर्सिंग से पहले यह महत्वपूर्ण है कि ऐसे संविदाओं के प्रबंधन के लिए नगरनिगम निकाय क्षमता का विकास करें।

5.4.3.4.5 <u>अपशिष्ट का वाणिज्यिक उपयोग</u> *:* कूड़े के वाणिज्यिक उपयोग का दायरा इस नागरिक सेवा का अहम पहलू है। ऊर्जा सृजन, कूड़ा खाद का ढेर लगाने अथवा अन्य अभिनव प्रयोगों से ऐसा किया जा सकता है। स्थानीय खपत के लिए अपशिष्ट को ऊर्जा में परिवर्तित करने से एक शहर के वित्त का एक भाग लाया जा सकता है। भारत अवसंरचना रिपोर्ट 2006 के अनुसार शहरी तथा नगर-निगम अपशिष्ट से लगभग 1500 मेगाबाट विद्युत तथा देश में औद्योगिक अपशिष्टों से लगभग 1000 मेगावाट विद्युत सृजित करने की क्षमता है, जबकि अपशिष्ट से ऊर्जा परियोनाओं की क्षमता अभी 25 मेगावाट है। निपटान के अन्य तरीकों जैसे वनस्पति-खाद से भी राजस्व सृजित होता है। वैज्ञानिक ठोस अपशिष्ट

प्रबंधन ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती की ओर ले जाएगा, तथा राजस्व का एक स्रोत भी हो सकता है।

5.4.3.5 अपमार्जन

5.5.3.5.1 हाथों से अपमार्जन करना एक घृणित कार्य है। यह तथ्य कि यह मोटे तौर पर जाति आधारित है इसे विशिष्ट रूप से धृणित और धिनौना बनाती है। क्योंकि स्थानीय सरकार तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा स्वच्छता सातवीं अनुसूची की सूची-II (राज्य सूची) में उल्लिखित विषय हैं, संविधान के अनुच्छेद 252(1) के अनुसरण में,आन्ध्र प्रदेश, गौवा, कर्नाटक, महाराष्ट्र, त्रिपुरा तथा पश्चिम बंगाल राज्यों के विधानमंडलों के सभी सदनों ने संकल्प पारित किए ताकि संघ सरकार हस्त अपमार्जकों को रोजगार तथा सूखे शौचालय (प्रतिबंध) अधिनियम, 1993 (1993 की संख्या 46)[67] लागू कर सके। लेकिन, यह अधिनियम जनवरी 1997 में ही अधिसूचित हो पाया।[68] आज भी इस अधिनियम को सभी राज्यों ने नहीं अपनाया है। यह अधिनियम धारा 3(1) किसी भी व्यक्ति को हाथों से मानव विष्ठा उठाने के काम में लगाने अथवा रोजगार देने अथवा सूखी (बिना फ्लश वाले) शौचालय का निर्माण अथवा ऐसे शौचालय रखने के लिए प्रतिबंधित करता है। इस अधिनियम में प्रदत विधायी ढांचे के अतिरिक्त, संघ सरकार ने इस समस्या पर दोतरफा कार्यनीति अपनायी हैः पहली, एकीकृत कम लागत स्वच्छता स्कीम (आईएलसीएसएस) जो वर्ष 1980-81 से प्रचालित है, के अंतर्गत कम लागत की स्वच्छ इकाइयों के जरिए सूखे शौचालयों का विकल्प दिया है तथा दूसरी, अपमानजनकों तथा उन पर निर्भरों की स्वतंत्रता एवं पुनर्वास की राष्ट्रीय स्कीम (एनएसएलआरएस) जो वर्ष 1991-92 से प्रचालित है के अंतर्गत वैकल्पिक व्यवसायों में प्रशिषण तथा पुनर्वास प्रदान करते हुए। आईएलसीएसएस मामले में, यद्यपि, वर्ष 2002-07 के दौरान 150 करोड़ रुपए का बजट आबंटन था, संशोधित अनुमान घटकर 74.60 करोड़ रुपए रह गया तथा वास्तविक खर्च केवल 61.60 करोड़ रुपए हुआ।[69] इसके अलावा, यद्यपि वर्ष 2006-07 के अंत तक कुल 6 लाख सूखे शौचालयों को परिवर्तित करने का अनुमान था, इस आंकड़ें का स्रोत त्रुटिहीन नहीं है तथा कुछ मामलों में 1989 एनएसएसओ रिपोर्ट[70] पर आधारित है। इसी प्रकार, एनएसएलआरएस के मामले में, वर्ष 2004-05 तक 747.11 करोड़ रुपए की राशि जारी की गई थी तथा 1,72,681 अपमार्जकों को प्रशिक्षण दिया गया तथा वर्ष 2003-04 तक पुनर्वास कराने में 4,43,925 लोगों की सहायता की गई। वर्ष 2005-06 तथा 2006-07[71] की वार्षिक योजनाओं के लिए कोई निधि आबंटित नहीं की गई।

67 स्रोत : http://www.hrw.org/reports/1999/india/india994-19.htm से उद्धत विधान का आमुख

68 स्रोत : हस्त अपमार्जन के उन्मूलन पर समीक्षा बैठक, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, मार्च 2007 http://nhrc.nic.in/disparchiveasp?fno=1396

69 स्रोत : पैरा 13.5, वार्षिक रिपोर्ट 2006-07, आवास एवं शहरी गरीबी उन्मूलन मंत्रालय

70 स्रोत : पैरा 13.4, तत्रैव

71 स्रोत : http://www.mhupa.gov.in/programs/ups/nsdp/NSLRS.htm 29.08.2007 को उद्धत

5.4.3.5.2 इतना ही नहीं है कि देश में हस्त अपमार्जकों की संख्या पर भरोसेमंद आंकड़ों की कमी है, सकेन्द्रित ध्यान दिए जाने की भी कमी है। चूंकि स्कीमें (सूखे शौचालय को परिवर्तित करने के लिए मांग आधारित है और राज्य केन्द्रिक हैं, कार्यक्षेत्र स्तर पर सक्रिय रूचि में कमी के चलते इस पर कार्यान्वयन सुस्त पड़ गया है। वर्ष 2002 के अपने स्वतंत्रता दिवस संबोधन में प्रधानमंत्री द्वारा की गई घोषणा के बाद, योजना आयोग ने वर्ष 2007 तक हस्त अपमार्जन के संपूर्ण उन्मूलन हेतु एक राष्ट्रीय कार्य योजना तैयार की है। यह कार्ययोजना उन मूलभूत मुद्दों पर भी बल देता है जिसे बताया जाना आवश्यक है, नामतः हस्त अपमार्जकों की पहचान करना, राज्यों द्वारा विधिक ढांचे को अपनाना तथा कार्यान्वयन को प्रोत्साहित करना। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने भी हस्त अपमार्जन के उन्मूलन पर मार्च 2007 में अपनी समीक्षा बैठक में इसी तरह के दृष्टिकोण की प्रस्तावना की है।[72] आयोग यह पक्के तौर पर मानता है कि राष्ट्रीय शहरी नवीकरण तथा हस्त अपमार्जन एक साथ न तो चलने चाहिए और न ही चल सकते हैं। राज्य सरकारों द्वारा छः महीनों के भीतर हस्त अपमार्जकों की पहचान तथा मौजूदा सूखे शौचालयों की संख्या का अनुमान लगाने के लिए व्यापक सर्वेक्षण कराए जाने की आवश्यकता है। इसके बाद, एक वर्ष की समय-सीमा के अंदर इस धिनौने काम का पता लगा कर मिटाने के लिए अलग से अभिचिन्हित निधियों को आबंटित किया जाना चाहिए। राज्य वार्षिक योजना के साथ केन्द्रीय सहायता को मिला देना चाहिए। जवाहरलाल नेहरू शहरी नवीकरण मिशन (जेएनएनयूआरएम) के अंतर्गत आबंटित निधियों को भी इसके साथ जोड़ दिया जाना चाहिए।

5.4.3.5.3 सिफारिशें :

(क) **एक लाख से अधिक की जनसंख्या वाले सभी शहरों और नगरों में कचरे के एकत्रण और निपटान के लिए सरकारी-निजी भागीदारी परियोजनाओं को शुरूआत करने की संभावनाओं को खोजा जा सकता है। तथापि, इससे पहले ऐसी संविदाओं के प्रबंधन हेतु नगर-निगम निकायों का क्षमता में विकास करना चाहिए।**

(ख) **कचरे के आखिरी निपटान के तरीके के आधार पर निश्चित वर्गों में कचरे के विभाजन के लिए नगर-निगम उप-नियम/नियम होने चाहिए।**

(ग) **अधिक मात्रा में ठोस अपशिष्ट सृजित करने वाली इकाइयों पर विशेष ठोस अपशिष्ट प्रबंधन प्रभार लगाया जाना चाहिए।**

72 स्रोत : http://.nic.in/disparchive.asp?fno=1396, 29.08.2007 को उद्धत

(घ) राज्य सरकारों द्वारा छः महीनों के भीतर हस्त अपमार्जकों की पहचान तथा मौजूदा सूखे शौचालयों की संख्या का अनुमान लगाने के लिए व्यापक सर्वेक्षण कराए जाने चाहिए।

(ड.) इस सर्वेक्षण के बाद, एक वर्ष की समय-सीमा के भीतर हस्त अपमार्जन के उन्मूलन के प्रयोजनार्थ पर्याप्त निधियों को आबंटित किया जाना चाहिए।

(च) हस्त अपमार्जन के उन्मूलन के लिए राज्य वार्षिक योजना के साथ केन्द्रीय सहायता को जोड़ देना चाहिए। जेएनएनयूआरएम के अन्तर्गत आबंटित निधियों को भी इसके साथ जोड़ दिया जाना चाहिए।

5.4.3.6 विद्युत संगठन तथा नगरनिगम निकाय

5.4.3.6.1 विद्युत संगठन के पर्यवेक्षण अथवा प्रचालन में शहरी स्थानीय निकायों की भूमिका प्रायः नहीं हुआ करती है। मुम्बई एक अपवाद है, जहां प्रमुख विद्युत वितरण संगठन (बेस्ट) नगरनिगम के पास है। भारत का विद्युत क्षेत्र पिछले एक दशक से बड़े स्तर के पुनर्गठन के दौर से गुजर रहा है। इस पुनर्गठन के मुख्य फलकों में नए विद्युत कानूनों को लागू करना, जनोपयोगी सुविधाओं का विस्तार, विनियामक प्राधिकरणों का गठन आदि शामिल हैं। विद्युत क्षेत्र में सुधारों पर मुख्य मंत्रियों/विद्युत मंत्रियों की वर्ष 2001 में हुए सम्मेलन में यह संकल्प लिया गया कि निम्नलिखित में से किसी एक अथवा सभी के माध्यम से 2-3 सालों में वितरण में वाणिज्यिक क्षमता हासिल करनी ही होगी :

- पूरे उत्तरदायित्व के साथ लाभ केन्द्रों का सृजन
- जहां कहीं आवश्यक हो, स्थानीय वितरण को पंचायतों/स्थानीय निकायों/फ्रैन्चाइजियों/उपभोकता एसोसिएशनों को सौंप देना।
- वितरण आदि का निजीकरण।

5.4.3.6.2 इन प्रयासों के बावजूद, विकेन्द्रीकृत विद्युत वितरण संगठनों की स्थापना करने में बहुत अधिक प्रगति नहीं हुई है। स्थानीय वितरण संगठनों के कई फायदे हैं: वे स्थानीय परिस्थितियों तथा समस्याओं के साथ अधिक लचीलेपन के साथ घुलमिल सकते हैं, निर्णय लेने वाले प्राधिकारी उपभोक्ताओं के करीब आते हैं जिससे नागरिकों को ऐसे संगठनों के साथ अपनेपन की भावना जुड़ती है, और इससे अन्य नागरिक सुविधाओं जैसे जल आपूर्ति, सड़कों को प्रकाशित करना, स्वच्छता आदि के साथ तालमेल

बैठाया जा सकता है। एक विकल्प हो सकता है कि विद्युत वितरण को नगरनिगम निकायों को सौंप दिया जाए; तथापि, नगरनिगम निकायों की मौजूदा संगठनात्मक तथा तकनीकी क्षमताओं के साथ, ऐसा हो पाना संभव नहीं लगता। अतः पूर्वापेक्षा के तौर पर नगर-निगम निकायों की क्षमता में वृद्धि करने की आवश्यकता है, और तब वे अपने न्यायाधिकार क्षेत्र के अंदर लघु प्रबंधनीय क्षेत्रों से शुरूआत करते हुए चरणबद्ध तरीके से विद्युत वितरण का कार्य अपने हाथ में ले सकते हैं।

5.4.3.6.3 जल आपूर्ति तथा दूरसंचार सरीखे अन्य नेटवर्कों के साथ-साथ वितरण नेटवर्क की उचित आयोजना में नगरनिगम निकाय मुख्य भूमिका भी निभा सकते हैं। इन सभी नेटवर्कों के लिए नगरनिगम निकायों द्वारा सामान्य मार्गों का नियोजन किया जा सकता है तथा इन मार्गों के प्रयोक्ताओं पर प्रभार भी लगाए जा सकते हैं। उप-नियमों को बनाते समय विद्युत संरक्षण संबंधी विशिष्ट बातों को सम्मिलित कर लेने से स्थानीय निकाय विद्युत संरक्षण प्रयासों में मदद कर सकते हैं।

5.4.3.6.4 सिफारिशें :

(क) **अपने क्षेत्रों में विद्युत वितरण की जिम्मेदारी लेने के लिए नगरनिगम निकायों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। तथापि, यह सब इन संगठनों की क्षमता का निर्माण पर्याप्त रूप से करने के बाद किया जाना चाहिए।**

(ख) **उप-नियमों को बनाने वाले नगर-निगम को विद्युत संरक्षण उपायों को सम्मिलित करना चाहिए।**

(ग) **विद्युत तथा अन्य संगठनों के वितरण नेटवर्कों के लिए नगरनिगम निकायों को चाहिए कि वे लेआउट योजनाओं का समन्वय करें।**

5.4.4 मानव विकास हेतु सेवाएं

5.4.4.1 शिक्षा

5.4.4.1.1 भारत की शिक्षा प्रणाली विश्व की सबसे बड़ी प्रणालियों में से एक है। फिर भी, एक बड़ी संख्या में बच्चे या तो स्कूल से दूर ही रहते है या फिर स्कूल से प्राथमिक शिक्षा भी ग्रहण किए बिना अलग हो जाते हैं। वर्ष 1950-51 तथा 2004-05 के बीच, प्राथमिक स्कूलों की संख्या क्रमशः 209,671 से 767, 520 तक तिगुनी हो गई, जिसमें से 90.2 प्रतिशत का प्रबंध सरकार अथवा स्थानीय निकायों[73]

73 स्रोत : "स्कूल शैक्षणिक सांख्यिकी 2004-05; (30 सितम्बर, 2004 की यथास्थिति); मानव संसाधन विकास मंत्रालय, 2007

द्वारा किया जाता था। परन्तु जैसे-जैसे शिक्षा का स्तर बढ़ता गया निजी स्कूलों की भूमिका तेजी से बढ़ी। माध्यमिक/ उच्च शिक्षा में निजी स्कूलों (सहायता प्राप्त और गैर-सहायता प्राप्त दोनों) की प्रतिशतता प्राथमिक शिक्षा में 9.79 की तुलना में 58.95 प्रतिशत है।

5.4.4.1.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1992 ने ध्यान देने योग्य तीन क्षेत्रों को दर्शाया है:

(i) सार्वभौमिक पहुंच के साथ नामांकन;

(ii) 14 वर्ष तक की उम्र के बच्चों का सार्वभौमिक प्रतिधारण; तथा

(iii) शिक्षा की गुणवत्ता में पर्याप्त सुधार ताकि सभी बच्चे अनिवार्य स्तर की शिक्षा पा सकें।

"सर्व शिक्षा अभियान" एक अग्रणी स्कीम है जो इन्हीं उद्देश्यों को पाने का प्रयत्न करती है। मध्याहन भोजन स्कीम भी "सर्व शिक्षा अभियान" की अनुपूरक स्कीम है।

चित्र 5.4 : वर्ष 2004-05 के दौरान प्रबंधन के अनुसार प्राथमिक स्कूल

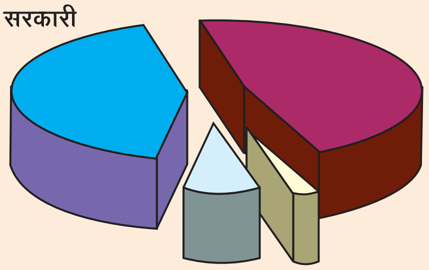

(ख) वर्ष 2004-05 के दौरान प्रबंधन के अनुसार माध्यमिक/उच्च माध्यमिक स्कूल

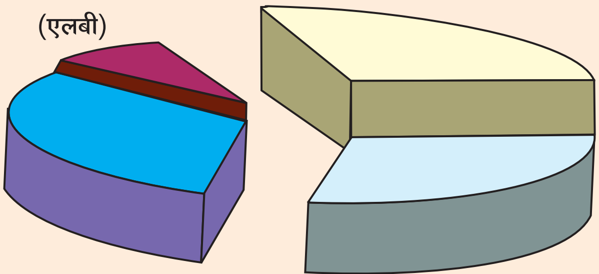

स्रोत : चुनिंदा शैक्षणिक सांख्यिकी 2004-05 (30 सितम्बर, 2004 की यथास्थिति) मानव संसाधन विकास मंत्रालय, 2007

5.4.4.1.3 एनसीईआरटी द्वारा किया गया 7वां अखिल भारतीय स्कूली शिक्षा सर्वेक्षण दर्शाता है कि छठे तथा सातवें सर्वेक्षणों (क्रमशः 1993 तथा 2002) के बीच शहरी स्कूलों की संख्या में ठोस बढ़ोतरी हुई है। यद्यपि शहरी और ग्रामीण स्कूलों के लिए विभाजित आंकड़ें नहीं है, स्कूलों की संख्या में बढ़ोतरी का तरीका यह भी दर्शाता है कि छठे तथा सातवें सर्वेक्षणों के बीच सरकारी स्कूलों में 2.6 प्रतिशत वृद्धि हुई, जबकि स्थानीय निकायों में यह वृद्धि 0.4 प्रतिशत थी। दिलचस्प बात है कि 1990 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में स्थानीय निकाय स्कूलों की संख्या में वास्तव में गिरावट हुई थी, जो संभावित है क्योंकि ऐसे कई सारे संस्थानों का राज्य सरकारों द्वारा अधिग्रहण कर लिया गया था। संयोगवश, कई सहायता प्राप्त निजी

स्कूल भी गिरावट पर थे, शायद उन्हीं कारणों की वजह से। लेकिन महत्वपूर्ण बात है कि जहां स्कूली स्तर की शिक्षा स्थानीय निकायों के पास होनी चाहिए, 1993 तथा 2001 के बीच बने नए स्कूलों में 71 प्रतिशत सरकारी स्कूल थे तथा केवल 10 प्रतिशत स्कूलों की स्थापना स्थानीय निकायों द्वारा की गई थी।

5.4.4.1.4 आम लोगों के लिए स्कूल सरकार अथवा स्थानीय निकायों द्वारा चलाए जा रहे हैं, इस बात पर ध्यान दिए बिना, सबसे बड़ी चुनौती बढ़िया शिक्षा देने की है। अध्ययनों के अनुसार, अधिक प्रतिशतता में स्कूल जाने वाले शहरी निर्धन बच्चे पढ़ भी मुश्किल से पाते हैं।[74] शिक्षा केवल स्कूलों की संख्या पर ही नहीं बल्कि शिक्षण की गुणवत्ता समेत स्कूलों द्वारा उपलब्ध कराई जा रही सुविधाओं पर भी निर्भर है। एनसीईआरटी के आंकड़ें दर्शाते हैं कि ब्लैकबोर्ड, फर्नीचर तथा मनोरंजन जैसी मूलभूत सुविधाएँ तथा इसकी तरह शौचालय सुविधाएँ, विशेषतः बालिकाओं के लिए, सरकारी एजेन्सियों द्वारा चालित अधिकतर स्कूलों में अपर्याप्त थी। हालांकि दिलचस्प बात है कि नगरनिगम स्कूलों की तुलना में यह समस्या सरकारी स्कूलों में अधिक थी। यह आवश्यक है कि सभी स्कूलों के कार्यात्मक रूप से आत्मनिर्भर बनाया जाए, कम से कम मूलभूत सुविधाओं में तथा कक्षा संबंधी आवश्यकताएं सभी शहरी स्कूलों में अगले दो वर्षों में उपलब्ध कराई जाएं।

5.4.4.1.5 सर्वशिक्षा अभियान का उद्देश्य है कि सबको 2010 तक संतोषजनक गुणवत्ता की प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराई जाए। सभी नगरनिगम स्कूलों के प्रयासों में यह घटक शामिल होना चाहिए। इस तरह के प्रयासों को जारी रखा जाना अनिवार्य है। बेहतर शिक्षकों की भर्ती के भी प्रयास करने होंगे तथा बेहतर शिक्षक साथ जुड़े इसके लिए स्कूलों के माहौल को और अधिक अनुकूल बनाना पड़ेगा। चूंकि उपयुक्त वेतन देना शहरी स्थानीय निकायों के लिए मुश्किल है, नगर-निगमों के लिए बढ़ती हुई जरुरत होनी चाहिए, विशेषतः बड़े नगर-निगमों के लिए, कि गैर सरकारी संगठनों तथा वैयक्तिक स्वयंसेवकों को खोजे। सेवा प्रदान करने में सुधार हेतु हमारे सामाजिक क्षेत्र में स्वैच्छिक सेवा के तत्व की पहल करना निःसन्देह उपयोगी रहेगा।

5.4.4.1.6. सार्वजनिक रूप से वित्तपोषित स्कूलों में बढ़िया शिक्षा सुनिश्चित करने के लिए हितधारकों का सशक्तिकरण समान रूप से महत्वपूर्ण है तथा विकासात्मक हितधारकों की सुरक्षा करना जो संवेदनशील है, गरीब है तथा जो अपनी बात नहीं रख पाते। असली चुनौती ऐसी सुपुर्दगी प्रणाली बनाने की है जो विविध जरूरतों का मालूमात करा सके तथा जिसके जरिए अत्यधिक गरीब भी अपनी बात रख

74 स्रोत :उत्तर तथा पश्चिम भारत के शहरी गरीब बच्चों में शिक्षा के स्तर का गैर-सरकारी संगठन, "प्रथम" द्वारा किए गए अध्ययन से पाया गया है कि मुम्बई-पुणे को छोड़कर शहरी सरकारी स्कूलों में वे बच्चे जो शब्दों को बमुश्किल पढ़ पाते हैं उनकी प्रतिशत्ता करीब 40% है। http://172.14.235.104/search?q-cache:i6bFQz_ZRfUJ:www.pratham.org/documents/ dipstick.survey.doc

सकें। इस मुद्दे को संबोधित करने का सबसे बढ़िया तरीका है कि आवासीय स्तर पर सामुदायिक संगठनों जैसे कि महिला संगठनों, स्वयंसेवी दलों तथा हितधारकों के साथ स्थानीय स्तर पर भागीदारी को विकसित किया जाए। शिक्षा के क्षेत्र में सशक्त स्कूल प्रबंधन समिति तथा माता-पिता द्वारा खुद को सम्मिलित करके इसे प्राप्त किया जा सकता है।

5.4.4.1.7 भरोसेमंद सेवा सुपुर्दगी प्रणाली तैयार करने के लिए आवश्यक है कि सेवा प्रदायकों का रोजगार बनाए रखने वाली प्रणाली से हटकर ऐसी प्रणाली की ओर मुड़ा जाए जो नागरिकों को सेवा की गारंटी दे। ऐसी नई प्रणाली में जवाबदेही स्थानीय शासनों तथा स्थानीय संस्थानों/सोसाइटियों/प्रबंधन समितियों को होनी चाहिए, जो आपसी संवाद के लिए मान-सम्मान, लचीला वित्तपोषण, अनुवीक्षण मानक, मानव संसाधनों के विनियोजन में नवीनता तथा सभी स्तरों पर क्षमता वृद्धि पर आधारित है।

5.4.2.2 सार्वजनिक स्वास्थ्य

5.4.2.2.1 स्वतंत्रता-पश्चात युग में स्वास्थ्य क्षेत्र में भारत की उपलब्धियां कुछ मापनों में उल्लेखनीय है। दीर्घायु 1947 में 32 वर्ष से दोगुनी होकर 2004 में 66 वर्ष हो गई है; शिशु मृत्यु दर (आईएमआर) 58[75] पर गिर गई है; मलेरिया को 20 लाख मामलों पर रोक लिया गया है; चेचक तथा गिनी-कृमि का पूरी तरह उन्मूलन हो चुका है तथा कुष्टरोग और पोलियो समाप्त[76] होने के करीब है। हालांकि, कुपोषण के स्तर तथा जच्चा-बच्चा मृत्यु दर पड़ोसी देशों से भी अधिक है, जो गंभीर चिंता का विषय है। स्वास्थ्य क्षेत्र में निवेश वांछनीय स्तर से बेहद कम है **(सारणी 5.12 देखें)।**

सारणी 5.12 स्वास्थ्य क्षेत्र : अन्य देशों की तुलना में भारत

संकेतक	भारत	चीन	सं.रा.अ.	श्रीलंका	थाइलैंड
शिशु मृत्यु दर (आईएमआर)/ 1000 जीवित जन्म	68	<30	2	8	15
5 वर्ष से नीचे मृत्यु दर/1000 जीवित जन्म	87	37	8	15	26
पूरी तरह से टीकाकरण युक्त (%)	67	84	93	99	94
कुशल परिचारक द्वारा जन्म	43	97	99	97	94

75 स्रोत : एस आर एस बुलेटिन - अक्तूबर, 2006 भारत के महापंजीयक
76 स्रोत : राष्ट्रीय मेक्रोइकोनामिक्स तथा स्वास्थ्य आयोग की रिपोर्ट (स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, 2005)

जीडीपी की % के रूप में स्वास्थ्य संबंधी व्यय	4.8	5.8	14.6	3.7	4.4
कुल व्यय में सरकार का भाग (%)	21.3	33.7	44.9	48.7	69.7
कुल सरकारी व्यय की तुलना में सरकारी स्वास्थ्य व्यय (%)	4.4	10	23.1	6	17.1
अंतराष्ट्रीय डॉलरों में प्रति व्यक्ति खर्च	96	261	5274	131	321

स्रोत : राष्ट्रीय मेक्रोइकोनॉमिक्स तथा स्वास्थ्य आयोग रिपोर्ट (स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, 2005)

5.4.2.2.2 शहरी क्षेत्रों में औषधालयों तथा अस्पतालों की प्रतिशतता वर्ष 1998 में उपलब्ध कुल सुविधाओं का क्रमशः 46 प्रतिशत तथा 67 प्रतिशत थी, जिसमें एक तिहाई से भी जनसंख्या शामिल होती है। तथापि, शहरी सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता सामान्यतः बेहद खराब है। शायद इससे पता चल जाता है कि हमारे देश में क्यों करीब 80% लोग निजी स्वास्थ्य सुविधाओं[77] को लेते हैं।

सारणी 5.13 : प्रति 100,000 की जनसंख्या पर शहरी अस्पतालों, बिस्तरों एवं औषधालयों की संख्या

वर्ष	अस्पताल	औषधालय	पलंग
1981	3.12	261.56	3.23
1991	3.50	241.04	7.24
2001	3.60	178.79	3.60

स्रोत : केन्द्रीय स्वास्थ्य आसूचना ब्यूरो, भारत की स्वास्थ्य सूचना, http://www.cehat.org/flib.html से पुनः प्राप्त

5.4.4.2.3 भारत अवसंरचना रिपोर्ट के अनुसार, 2006 के अनुसार शहरी स्वास्थ्य की अवसंरचना पर आंकड़ें स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा एकत्र नहीं किए जाते। शहरी क्षेत्रों में सार्वजनिक अस्पताल, औषधालय तथा क्लिनिक सामान्यतः प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा तथा सूचना के प्रचार-प्रसार करने की बजाय दवाईयों के रोगनाशक पहलुओं पर ध्यान अधिक केंद्रित करते हैं। इसके फलस्वरूप निजी स्वास्थ्य सेवा शहरी जनसंख्या हेतु आवश्यकता अंतर मिटाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही हैं।

77 स्रोत : "सार्वजनिक अस्पतालों में सेवा के घटिया स्तर का असर महंगे अस्पतालों की स्वास्थ्य सेवा की ओर तीव्र रूख से देखा जाता है। वर्ष 1986-87 लोगों का सार्वजनिक अस्पतालों में जाने का आंकड़ा 50 प्रतिशत था। तथापि, 1995-96 तक यह आंकड़ा 25 प्रतिशत से थोड़ा अधिक और गिर गया हैः भारत अवसंरचना रिपोर्ट 2006 http://www.3inetwork.org/reports/IIR2006/The%20Infra.pdf

शहरी क्षेत्रों में निजी स्वास्थ्य सेवा की ओर रूख करने की प्रवृत्ति को नगर प्राधिकरणों द्वारा अवसर के रूप में देखे जाने की आवश्यकता है। इससे उनको अवसर मिलता है कि नैदानिक सेवाओं से अलग सार्वजनिक स्वास्थ्य पर, तथा स्वास्थ्य संबंधी रोगनाशक पहलुओं पर ही नहीं रोकथाम पर भी ध्यान सकेन्द्रित करें।

5.4.4.2.4 शहरी क्षेत्रों में सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रबंधन हेतु मौजूदा व्यवस्थाओं में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा की कमी एक आधारभूत खामी है। शहरी गरीबों की स्थिति ग्रामीण निर्धनों से अधिक बढ़कर है क्योंकि शहरों में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं की भारी कमी है। नगरनिगम औषधालय, जिनकी संख्या सीमित है, सुविधाओं का विस्तार शहरी निर्धनों तक नहीं करते हैं, जोकि प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र ग्रामीण क्षेत्रों में करते हैं।

5.4.4.2.5 सार्वजनिक स्वास्थ्य, प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा प्रणालियों, पोषक आहार, सुरक्षित पेयजल, तथा साफ-सफाई और स्वास्थ्य् संबंधी शिक्षा पर निर्भर है। अतः आयोग मानता है कि इन सेवाओं का अलग-अलग होते हुए भी मिलान होना उतना ही अहम है जितना शहरी क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा का उन्नयन। इसलिए प्रत्येक स्थानीय शासन में सार्वजनिक स्वास्थ्य को असरकारक बनाने के लिए एक कार्य दल होना चाहिए जो सभी सेवाओं को उपलब्ध कराने के लिए उत्तरदायी हो, जिसमें राज्य सरकार तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में अन्य अभिकरणों के सदस्य शामिल हों।

5.4.4.2.6 हितधारकों की भागीदारी तथा स्थानीय समुदायों को जवाबदेह भरोसेमंद सेवा सुपुर्दगी प्रणालियां तैयार करने की आवश्यकता के बारे में पैराग्राफ 5.4.4.1.6 में बताए गए बिन्दु स्वास्थ्य क्षेत्र में समान रूप से लागू होते हैं। स्कूलों तथा अस्पतालों को प्रदर्शन में सुधार लाने के लिए अधिक वित्तीय स्रोतों की आवश्यकता होती है, परन्तु गारंटीशुदा सेवा परिणाम देने के लिए संस्थात्मक स्वायतता तथा लचीलेपन की भी आवश्यकता होती है। संस्था के प्रमुख की भूमिका को विकेंद्रीकरण के ढांचे में सुदृढ़ किया जाना होगा, जो स्थानीय समुदायों के प्रति जबावदेही की अनुमति देता है। उस ढांचे, जो कतिपय न्यूनतम सेवा सुपुर्दगी मानक की गारंटी देता है, के भीतर स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने में लचीलेपन के लिए भी गैर-जबावदेह राज्य स्तर भर्ती से जबावदेह स्थानीय शासन और स्थानीय संस्था स्तर पर भर्ती के अंतरण की अपेक्षा होती है।

5.4.4.2.7 वृहत अर्थशास्त्र और स्वास्थ्य पर राष्ट्रीय आयोग (स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, 2005) को शक्तियों की सुपुर्दगी और स्वास्थ्य क्षेत्र पर निम्नलिखित कहना है :

"भारत में स्वास्थ्य क्षेत्र में, विकेंद्रीकरण को केंद्र द्वारा राज्यों को, राज्यों द्वारा जिलों को और जिलों से बहुस्तरीय स्थानीय निकायों को प्राधिकार और शक्ति की सुपुर्दगी के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना होगा। प्राधिकार की ऐसी सुपुर्दगी केवल केरल में हुई हैं, जिसने स्थानीय निकायों द्वारा क्रमबद्ध रूप से

अधिशासन के लिए क्षमता निर्माण में समय और संसाधनों का निवेश किया है। नेतृत्वशीलता और अधिशासन का अर्थ योजना बनाने, बजट बनाने, कार्यान्वयन करने, प्रबंध करने, मॉनीटर करने, समीक्षा करने और लिए गए निर्णय हेतु उत्तरदायित्व लेने का सामर्थ्य है।

स्वास्थ्य क्षेत्र में शक्तियों की सुपुर्दगी, हालांकि, आसान नहीं रहा है, यहां तक कि केरल में भी पंचायत स्तर पर तकनीकी मार्गदर्शन की कमी, कार्यों, कर्त्तव्यों, जिम्मेदारियों स्वास्थ्य कर्मियों के परिणामों को स्पष्ट रूप से निर्धारित करने वाली सुविधाओं की कमी तथा हस्तक्षेपों जिन पर ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है, प्राथमिकताओं की गैर-हाजिरी इसका कारण है। दवाई की अलग-अलग पद्धतियों के बीच संघटन, उच्च शिक्षा प्राप्त चिकित्सक, तथा स्थानीय सरकार के पदाधिकारियों, के बीच संगतता की समस्याएं, दोहरा नियंत्रण, स्वास्थ्य बजटों की देखरेख करने वाले निकायों की बहुलता अन्य कारण हैं, जिन्होनें मामलों को जटिल बना दिया है। चूंकि, इन मुद्दों को सुलझाया नहीं गया था, राजकोषीय सुपुर्दगी ने वास्तव में वांछित असर नहीं डाला था। इन कारकों के कारण, बदलाव के अभिकर्ताओं के रूप में अथवा सामाजिक संघटन में स्थानीय निकायों की उपयोगिता बेहद मामूली और उत्साहहीन रही है।

यद्यपि, 73 वें एवं 74 वें संशोधन स्वास्थ्य में शासन की लोकतांत्रिक प्रणाली प्रोत्साहित करने का अवसर अवश्य प्रदान करते हैं, परन्तु इस पर कार्यान्वयन सुस्त रहा है। यह तथ्य है कि कार्यात्मक प्रतिनिधित्व की तुलना में, राजकोषीय सुपुर्दगी ज्यादा अहम हैं; यह अभिकर्त्ता के रूप में सार्वजनिक कार्यों को करने के लिए केवल निधियां जारी किए जाने से अधिक है। इसमें व्यय संबंधी निर्णय लिया जाना तथा उत्तरदायित्व, और इसी तरह राजस्व उत्तरदायित्व या सेवा सुपुर्दगी हेतु समुदाय के प्रति जवाबदेही सम्मिलित है।

इन सिद्धान्तों को लागू करने का अर्थ होगा कि सरकार के विभागीय पदानुक्रम; उपयोग तथा रिर्पोटिंग के लिए उन कार्यों और प्रणालियों के वित्तीय निहितार्थों; तथा अंत में, उन कर्त्तव्यों के निर्वाह के लिए जिम्मेदार पदाधिकारियों पर प्राधिकार, शक्तियों, अथवा उनके पास नियंत्रण जैसी भावना की तुलना में विभिन्न स्तरों पर स्थानीय निकायों द्वारा किए जाने वाले कर्त्तव्यों एवं कार्यों और प्रणालियों के वित्तीय निहितार्थों; तथा अंत में, उन कर्त्तव्यों के निर्वाह के लिए जिम्मेदार पदाधिकारियों पर प्राधिकार, शक्तियों, अथवा उनके पास नियंत्रण जैसी भावना की तुलना में विभिन्न स्तरों पर स्थानीय निकायों द्वारा किए जाने वाले कर्त्तव्यों एवं कार्यों का साफ स्पष्ट वर्णन। ऐसी प्रणालीगत दृष्टिकोण के बिना, केवल स्वास्थ्य संबंधी कार्यकलापों में "शामिल" किए जाने वाले स्थानीय निर्वाचित प्रतिनिधियों की "स्थिति निर्धारण" न्यूनतम उपयोगिता का होगा।

5.4.4.2.8 आयोग राष्ट्रीय वृहत अर्थशास्त्र तथा स्वास्थ्य आयोग के दृष्टिकोण से सहमत है। आयोग ने इस रिपोर्ट के अलग-अलग अध्यायों में स्थानीय निकायों के कार्यों तथा कर्त्तव्यों का साफ-स्पष्ट वर्णन करने की महत्ता को रेखांकित किया है।

5.4.4.2.9 आयोग का विचार है कि स्थानीय शासनों द्वारा दी जाने वाली सभी सेवाओं के लिए निष्पादन संसूचकों के एक सेट का विकास किए जाने की आवश्यकता है। निष्पादन संसूचकों के मौजूद सेट जहां कहीं भी मौजूद हैं, सेवा दिए जाने संबंधी सभी अहम पहलुओं का अनुवीक्षण करने के लिए पर्याप्त नहीं है। इन संसूचकों में सेवा की गुणवत्ता तथा विश्वसनीयता पर बल दिया जाना चाहिए। सेवाओं की गुणवत्ता सुधारने के लिए जिला, राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर पर नगरनिगम की समस्त सेवाओं के बारे में एक भरोसेमंद डाटाबेस का रखरखाव एक महत्वपूर्ण पहलू है। इससे इन सेवाओं का अनुवीक्षण करने में तथा महत्वपूर्ण नीतिगत निर्णय लेने में मदद भी होगी।

5.4.4.3 सिफारिशें :

(क) शिक्षा तथा स्वास्थ्य के अहम सेवा प्रदायक क्षेत्रों में दिए जाने वाले बल को केन्द्रीयकृत नियंत्रण से विकेन्द्रीकृत कार्यवाही की तरफ, राज्य विभाग की जवाबदेही को स्थानीय समुदायों की तरफ ले जाने तथा रोजगार गारंटी को सेवा गारंटी की तरफ स्थानांतरित किए जाने की आवश्यकता है।

(ख) सभी शहरों स्कूलों में मूलभूत सुविधाओं तथा कक्षा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए यह जरूरी है कि आगामी दो वर्षों के अंदर सभी स्कूलों को कार्यात्मक रूप से आत्मनिर्भर बना दिया जाए।

(ग) नगरनिगमों को, विशेषतः बड़े नगरनिगमों को स्कूल चलाने में सहायता पाने के लिए गैर-सरकारी संगठनों, निगमित क्षेत्र तथा निजी स्वयंसेवकों की मदद खोजना चाहिए। बेशक, सेवा सुपुर्दगी में सुधार लाने के लिए हमारे सामाजिक क्षेत्र में स्वयंसेवा के तत्व की पहल उपयोगी सिद्ध होगी।

(घ) शहरी क्षेत्रों में निजी स्वास्थ्य सेवा की ओर रूख करने की प्रवृत्ति को नगर प्राधिकरणों द्वारा नैदानिक सेवाओं से अलग सार्वजनिक स्वास्थ्य पर, तथा स्वास्थ्य संबंधी रोगनाशक पहलुओं पर ही नहीं रोकथाम पर भी ध्यान सकेन्द्रित करने के अवसर के रूप में देखे जाने की आवश्यकता है।

(ड.) स्कूलों तथा अस्पतालों के लिए संस्थान विशिष्ट मानकों को निर्धारित किया जाना चाहिए तथा सेवा दिए जाने संबंधी निष्पादन को मॉनीटर करने के लिए तीसरी-पार्टी मूल्यांकन कराया

जाना चाहिए। सभी स्तरों पर सेवा परिणामों की गारंटी देने के लिए वेतन सीमा को तोड़ते हुए निष्पादन आधारित प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए तथा इसके लिए नौकरी के स्थायित्व को निष्पादन से जोड़ दिया जाना चाहिए।

(च) **अस्पतालों तथा स्कूलों में भर्ती के कार्य को गैर जवाबदेह राज्य स्तरीय भर्ती पद्धति से हटते हुए, संस्थान/समाज को सौंप देना चाहिए।**

(छ) **स्थानीय निकायों को स्वास्थ्य प्रणालियों, स्वच्छता सुविधाओं तथा पेयजल सुविधाओं के मध्य तालमेल तथा इन सेवाओं के मिलान को सुनिश्चित करना चाहिए। शहरी क्षेत्रों में प्राथमिक स्तर के सार्वजनिक स्वास्थ्य संस्थानों का प्रबंधन शहरी स्थानीय निकायों द्वारा किया जाना चाहिए।**

(ज) **स्थानीय शासनों द्वारा उपलब्ध कराई जा रही सभी सेवाओं के लिए निष्पादन संसूचकों के एक सेट का विकास किए जाने की आवश्यकता है। इस प्रयोजनार्थ संबंधित मंत्रालय को व्यापक अनुदेश निर्धारित करने चाहिए। उसके बाद, राज्य सरकारें इस प्रयोजनार्थ मानदण्ड निर्धारित कर सकती हैं।**

(झ) **संबंधित मंत्रालय को सेवा सुपुर्दगी की विभिन्न प्रणालियों के निष्पादन के बारे में राज्य-वार डाटाबेस रखना चाहिए। इसी प्रकार, सभी नगरनिगम निकायों को शामिल करते हुए राज्य के पास ऐसी सेवाओं का डाटाबेस होना चाहिए।**

5.4.5 शहरी परिवहन प्रबंधन

5.4.5.1 शहरी परिवहन शहरी अवसंरचना का प्रमुख घटक होता है। किसी नगर में शहरी शासन की कुशलता की यह प्रकट अभिव्यक्ति भी होती है। भारत में जैसे-जैसे जीडीपी में शहरी भाग की वृद्धि हुई है, जीडीपी वृद्धि को शहरी क्षेत्रों में परिवहन प्रणालियों से बहुत करीब से जोड़ा जाता है कि कितनी कुशलता से सामान और लोगों का परिवहन होता है। यात्रा मांग कई सारे कारकों पर निर्भर करती है- जनसंख्या वृद्धि तथा आर्थिक विकास इसके मुख्य परिचायक रहे हैं। यातायात मांग में तीव्र वृद्धि की पूर्ति (काफी हद तक) वाहनों की संख्या में वृद्धि के द्वारा की गई है। परन्तु इसी गति से सड़कों का विस्तार नहीं हुआ है। इतना ही नहीं, सार्वजनिक परिवहन वाहनों की वृद्धि की तुलना में निजी वाहनों में कहीं अधिक वृद्धि के साथ वाहनों की संख्या में वृद्धि से काफी विषमता आ गई है। इसकी वजह से भारत के लगभग सभी प्रमुख शहरों में यातायात की भीड़भाड़ हो गई है। यह मुद्दा महानगरों जैसे के बड़े नगरों में ही चिंता का मुख्य विषय नहीं है बल्कि टियर II तथा टियर III शहरों का भी यही हाल है।

5.4.5.2 बड़े शहरों में वाहनों की 15 प्रतिशत से अधिक वृद्धि के चलते सड़क जाम, प्रदूषण तथा सड़क दुर्घटनाओं के कारण शहरी जीवनयापन के स्तर पर बहुत विपरीत प्रभाव पड़ा है। हमारे लगभग सभी शहरों में, बस परिवहन सार्वजनिक परिवहन का इकलौता साधन है। रेल आधारित प्रणालियां, विविध रूपों में कोलकाता, दिल्ली, मुम्बई तथा चेन्नई में स्थापित की गई है। दिल्ली के अलावा, बाकी सभी रेल मंत्रालय द्वारा चलाई जाती है। दिल्ली मेट्रो तथा मुम्बई उपनगरीय रेल प्रणाली के जरिए महत्वपूर्ण संख्या में लोग यात्रा करते हैं और इनके बीच आधुनिक जन पारगमन प्रणाली दिल्ली में एकमात्र उदाहरण है। एक बहुत बड़ी संख्या के टियर-II शहरों के पास संगठित, ठीक तरह से नियोजित सार्वजनिक परिवहन प्रणाली नहीं है, तथा यातायात सेवाएं निजी तथा राज्य स्वामित्व के आपरेटरों के मिले-जुले मेल द्वारा प्रदान की जाती है। औपचारिक सार्वजनिक परिवहन प्रणाली की कमी को पूरा करने के लिए टैक्सियां, तिपहिया वाहन, रिक्शा भी सार्वजनिक परिवहन प्रणाली में अहम भूमिका अदा करते हैं।

5.4.5.3 मुम्बई तथा बेंगलुरु जैसे कुछ नगरों के पास नगर बस सेवा प्रदान करने के लिए अनन्य संगठन हैं। कुछ शहरों में, ये सेवाएं सीधे राज्य के सड़क परिवहन निगम द्वारा चलाई जाती है। सिर्फ महाराष्ट्र और गुजरात के बहुत थोड़े शहरों के पास बस सेवाएं हैं जो स्वयं नगरनिगम द्वारा चलाई जाती है। राज्य स्वामित्व के परिवहन निगम आमतौर पर घाटे में चल रहे हैं तथा वांछित स्तर की क्षमताओं का विस्तार करने के लिए निधियां जुटाने में असमर्थ हैं। संसाधनों की न्यूनता के कारण भी अपनी सेवाओं की गुणवत्ता नहीं सुधार पा रहे हैं।

बाक्स 5.14 : दिल्ली मेट्रो के लाभ

- यात्री समय तथा ईंधन की बचत, वाहनों के पूंजीगत तथा प्रचालन लागत में कटौती, पर्यावरण संबंधी हानि तथा दुर्घटनाओं में कटौती तथा अवसंरचना पर रखरखाव की लागत में कमी के फलस्वरुप शहर को फायदा पहुंचा है।
- इससे निजी वाहनों की संख्या में वृद्धि की गति कम हुई है। गत वर्ष तक, इसने 22697 वाहनों का भार वहन किया तथा वर्ष 2007 के अंत तक इसमें 40,000 तक की वृद्धि पूर्वानुमानित है।
- लोगों द्वारा मेट्रो की ओर रूख के फलस्वरुप, वर्ष 2007 तक 16.6 लाख वाहन कि.मी. की बचत अनुमानित है और इसके फलस्वरुप विभिन्न प्रकार की बचतें जैसे 218 करोड़ रुपए तक सड़क वाहनों की रखरखाव लागत, 172 करोड़ रुपए कीमत की ईंधन बचत तथा सड़कों के रखरखाव की लागत में 288 करोड़ रुपए की बचत।
- मेट्रो के फलस्वरुप, पेट्रोल, डीजल तथा सी.एन.जी. की खपत में कमी आई है तथा वर्ष 2007 तक खपत में बचत का आंकड़ां 57858 टन हो जाने की उम्मीद है।
- हाइड्रोकार्बन्स की कम खपत के फलस्वरुप गैसों का कम उत्सर्जन हुआ। इससे 2007 के अंत तक 2275 टन भार के बराबर कार्वन-मोनोक्साइड (सी.ओ.) हाइड्रोकार्बन्स (एच.सी.), नाइट्रोजन आक्साइड (एनओएक्स) जैसी जहरीली गैसों के उत्सर्जन से बचाव हुआ।
- यात्रा स्थितियों में सुधार हुआ क्योंकि मेट्रो में यात्रा करते हुए एक व्यक्ति शहर में प्रत्येक दिन औसतन 66 मिनट समय की बचत करता है।

स्रोत : केन्द्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान द्वारा अध्ययन

बहुत बड़ी संख्या में ऐसे कारण है जो राज्य स्वामित्व की सार्वजनिक परिवहन निगमों की असंतोषजनक निष्पादन के लिए उत्तरदायी हैं। तदर्थ किराया नीति, कार्मिकों के बीच अनुशासनहीनता, प्रबंधकीय तथा प्रचालनीय अक्षमताएं, अवैज्ञानिक मार्ग आयोजना, कमजोर कार्मिक नीतियां तथा राजनैतिक दखलंदाजी जैसे उनमें से कुछ हैं। बस सेवाओं के पूर्वोपाय में निजी क्षेत्र को शामिल करने का भली प्रकार किया गया कोई भी संरचनात्मक प्रयास होता नहीं दिखता तथा छोटे निजी ऑपरेटरों द्वारा कई शहरों में गैर-जिम्मेदाराना तरीके से असुरक्षित माहौल में भारी संख्या में बसों का चलाना जारी है।

5.4.5.4 इस क्षेत्र की अवसंरचनात्मक समस्याएं इस सच्चाई से और अधिक बढ़ जाती है कि भारत में इस क्षेत्र के लिए राज्य और संघ दोनों स्तरों पर जिम्मेदारी इतनी छितरी हुई है कि असफलताओं के लिए किसी एक को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। संघ सरकार के स्तर पर, वर्ष 1996 तक, शहरी परिवहन की अलग विषय के रुप में कोई पहचान नहीं थी; सरकार के कारोबार आबंटन नियमावली में उल्लिखित नहीं था और इसलिए रेल तथा सड़क परिवहन के लिए उत्तरदायी मंत्रालयों द्वारा बाह्रय कार्य के तौर पर काम चलाया जाता रहा। इस क्षेत्र के बारे में विभ्रम और उपेक्षा की स्थिति राज्य तथा स्थानीय स्तरों पर आगे और चकरा देने वाली है। जबकि कुछ राज्यों में शहरी परिवहन आयोजना के लिए राज्य परिवहन विभाग उत्तरदायी है, अन्य राज्यों में इसका जिम्मा शहरी विकास विभाग अथवा स्थानीय स्व-शासनों से संबद्ध विभाग अथवा नगरनिगम प्रशासन को सौंपा गया है। और प्रचालन स्तर पर, जहां वाहनों के लाइसेंस का कार्य तथा कर एकत्रण के लिए परिवहन विभाग उत्तरदायी है, यातायात नियंत्रण पुलिस तथा सड़क निर्माण एवं रखरखाव राज्य लोक निर्माण विभाग (पी.डब्ल्यू.डी) अथवा नगर-निगम के पास है। कई शहरों में, रेलवे तथा राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण जैसे अभिकरण भी शामिल हैं। शहरी स्थानीय निकायों के लिए, शहरी परिवहन प्रणाली प्राथमिकता का विषय नहीं है। नगर परिवहन की दिशा में खंडित दृष्टिकोण की अन्य खामी परिवहन आयोजना तथा शहरी आयोजना में संघटन का अभाव है।

5.4.5.5 *राष्ट्रीय शहरी परिवहन नीति* : संघ सरकार ने राष्ट्रीय शहरी परिवहन नीति तैयार की है जो इस क्षेत्र में हुई उपेक्षा की कुछ हद तक क्षतिपूर्ति का हल खोजती है। इसके उद्देश्य निम्नलिखित है :

- ➢ भूमि उपयोग तथा परिवहन आयोजना का बेहतर संघटन ताकि नौकरी, शिक्षा आदि की पहुंच में सुधार हो सके;
- ➢ सार्वजनिक परिवहन और बिना मोटर के परिवहन को बढ़ावा देना ताकि निजी मोटर वाहनों पर निर्भरता में कमी हो सके;

- साईकल मार्ग तथा पैदल पथ में निवेशों के लिए संघ सरकार को समर्थन देना;
- जन पारगमन प्रणालियों में निवेशों के लिए संघ सरकार को समर्थन देना;
- सम्मिलित महानगरीय परिवहन प्राधिकरणों के माध्यम से शहरी परिवहन प्रबंधन पर अधिक समन्वित दृष्टिकोण अपनाना;
- राज्य स्तर पर क्षमता विकसित करने के लिए समर्थन देना;
- पार्किंग सुविधाओं की इस तरह से अभिकल्पना जो सार्वजनिक परिवहन तथा बिना मोटर वाले तरीकों के प्रयोग को बढ़ावा दे और इसी क्रम में पार्किंग कॉम्पलेक्सों के निर्माण के लिए वित्तीय समर्थन;
- स्वच्छ ईंधन तथा वाहन तकनीकों को अपनाने के लिए रियायतें देना जिससे मोटर वाहनों की वजह से होने वाला प्रदूषण कम हो सके।

बाक्स 5.15 : बस आधारित सार्वजनिक परिवहन प्रणाली

बस प्रणालियां पहुंचने की विविध जरुरतों की नमनीयता तथा समूचे महानगरीय क्षेत्र में स्थानों की असीमित सीमा के साथ सार्वजनिक परिवहनीयता का बहुमुखी रूप प्रदान करती हैं। बसें शहरी सड़क मार्गों पर भी यात्रा करती हैं, इस प्रकार रेल प्रणालियों के लिए आवश्यक पूंजी लागतों की तुलना में अवसंरचना निवेश काफी कम हो सकता है। परिणामस्वरुप, कई मार्गों पर बस सेवा का कार्यान्वयन लागत-प्रभावी तरीके से हो सकता है। फिर भी, बस सेवा के अंतर्निहित लाभों के बावजूद पारम्परिक शहरी बसें संकुलित गलियों से धीरे-धीरे अपना रास्ता बनाते हुए ज्यादा कुछ राजनैतिक समर्थन हासिल नहीं कर सकी हैं। बस तीव्र पारगमन का सार है कि विभिन्न प्रकार के विलम्बों में कटौती अथवा समाप्त करते हुए बस प्रचालन की गति तथा मुख्य सड़कों पर विश्वसनीयता में सुधार लाया जाए।

क्यूरीटीबा, ब्राजील की बस प्रणाली एक आदर्श बस तीव्र पारगमन (बीआरटी) प्रणाली का सोदाहरण प्रतिपादित करती है, तथा शहर को जीने लायक बनाने में एक बहुत बड़ी भूमिका निभाती है। यहां बसें प्रायः चलती रहती है – कुछ तो अक्सर प्रत्येक 90 सेकेंड में - तथा विश्वसनीयता से, और स्टेशन सुलभ हैं, बढ़िया तरीके से बने है, आरामदायक हैं एवं आकर्षक हैं। फलतः क्यूरीटीबा के पास विश्व का एक बहुत अधिक उपयोग होने वाली, फिर भी कम लागत वाली पारगमन प्रणाली है। यह भूमिगत प्रणाली की कई सारी विशेषताएं - यातायात सिग्नल तथा भीड़-भाड़ से अनवरुद्द वाहनों का आवागमन, बस में चढ़ने से पूर्व किराया लेना, तेजी से यात्रियों को चढ़ाना और उतारना प्रदान करती है - यह भूमि से ऊपर है और दिखाई देती है। क्यूरीटीबा के लगभग 70 प्रतिशत यात्री कार्यालय जाने के लिए बीआरटी का प्रयोग करते हैं, जिसके फलस्वरूप ग्रेटर क्यूरीटीबा के 2.2 मिलियन निवासियों को असंकुलित सड़कें और प्रदूषण-मुक्त वायु मिलती है।

स्रोत : http://urbanhabitat.org/node/344

जैसा कि उपर्युक्त से स्पष्ट है, शहरों में सार्वजनिक परिवहन समस्याओं की तरफ ध्यान आकर्षित करने के लिए बहुमुखी दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

5.4.5.6 *परिवहन मांग का प्रबंधन* : विगत में, संकुलन की समस्या सुलझाने के लिए नजरिया था कि सड़कें चौड़ी कर दी जाएं, नई सड़के बना दी जाएं, तथा फ्लाईओवर आदि निर्मित किए जाएं-मूलतः आपूर्ति पक्ष प्रबंधन पर संकेंद्रित। ये उपाय महत्वपूर्ण हैं लेकिन जब तक इनकी पूर्ति मांग प्रबंधन उपायों

से की न की जाए, सड़कों पर भीड़-भाड़ बढ़ती रहेगी। निजी वाहनो के प्रयोग को राजकोषीय तथा गैर-राजकोषीय न्याययुक्त मिश्रण द्वारा हततोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है। सिंगापुर एक अतिरिक्त कर वाहनों के स्वामित्व तथा वाहनों के उपयोग दोनों पर लगाता है। आयोग का मानना है कि शहरों में संकुलन कर लगाया जा सकता है जब तक निजी वाहन भीड़-भाड़ वाले इलाके में प्रवेश करता है। यद्यपि कार्यान्वयन मुद्दे हैं, सूचना प्रौद्योगिकी के उचित उपयोग से कार्यान्वयन सुसाध्य बनाया जा सकता है। संकुलन कर के अलावा, भीड़-भाड़ वाले इलाकों में केवल सार्वजनिक परिवहन प्रणाली के माध्यम से ही प्रवेश की अनुमति, कुछ क्षेत्रों में सपूर्णतः पैदल यात्रा, अपेक्षित अवसंरचना प्रदान करते हुए लोगों की आवाजाही पैदल तथा साइकल के जरिए सुसाध्य बनाना जैसे सभी उपायों से परिवहन के निजी मोटरयुक्त वाहनों के उपयोग को सीमित करने में मदद मिलेगी।

5.4.5.7 स्थानिक आयोजना यात्रा मांग को सीमित करने का प्रमुख साधन है। आवासीय क्षेत्रों से हटाकर बहुत दूर एक बड़े जोन में कार्य क्षेत्र होने की बजाय समूचे शहर में छोटे-छोटे कार्यक्षेत्रों तथा आवासीय क्षेत्रों का फैलाव, उच्च क्षमता परिवहन कॅारीडोरों की आयोजना तथा उनके साथ वर्धित एफएसई की अनुमति तथा परिवहन अवसंरचना के लिए पर्याप्त जगह देने से यात्रा संबंधी मांगों को कम करना सुसाध्य हो सकेगा।

5.4.5.8 निजी वाहनों के उपयोग के बढ़ते रूझान को ध्यान में रखते हुए दूरदर्शिता के साथ सभी सीडीपी/मास्टर प्लान में विशिष्ट पार्किंग मानदंडों को निर्धारित किया जाना चाहिए। आवासीय, वाणिज्यिक तथा सांस्थानिक निर्माणों के लिए अलग-अलग मानदंड निर्धारित किए जाने चाहिए ताकि ऐसी इकाइयां अपनी पार्किंग आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ हों और उनकी पार्किंग का भार सार्वजनिक सड़कों पर न आ पड़ें जैसा कि आजकल अक्सर होता है। निजी वाहनों के उपयोग तथा सड़क पर पार्किंग को रोकने के लिए शहरों को यथार्थवादी पार्किंग प्रभारों के साथ संपूर्णवादी पार्किंग नीति अपनानी चाहिए। पार्किंग नीति को पार्किंग भाड़े के लिए मानदण्ड निर्धारित करने चाहिए जिसमें पार्किंग के लिए प्रयोग की जाने वाली भूमि की लागत भी पता होनी चाहिए। यह देखा गया है कि शहरी क्षेत्र में मुख्य विकास निर्माण की वजह से सड़कों पर भीड़-भाड़ हो जाती है। जैसा कि पैराग्राफ 5.3.6.8(ख) में सिफारिश की गई है, ऐसे सभी विकासात्मक निर्माण पर "प्रभाव शुल्क" लगाई जानी चाहिए। यही नहीं, यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि इस प्रकार के सभी मुख्य भवन/निर्माण कार्य अपनी लागत से प्रमुख सार्वजनिक सड़कों से समुचित संपर्क स्थापित करें।

5.4.5.9 *शहरों के लिए बहु प्रतिमान एकीकृत परिवहन प्रणाली विकसित करना* : एक सार्वजनिक परिवहन प्रणाली, संपूर्ण रूप से देखा जाए तो निजी वाहनों से अन्य सभी प्रकार के परिवहन से मिलकर बनती है। प्रमुख सार्वजनिक परिवहन के प्रकार हैं - मेट्रो रेल, उत्थापित हल्की रेल, समर्पित कॉरीडोरों पर उच्च क्षमता युक्त बसें, मोनो रेल, सामान्य बसें, मिनी बसें तथा अन्य संयुक्त पारगमन के प्रकार जैसे टैक्सियां और तिपहिया वाहन। कोई भी शहर परिवहन के केवल एक प्रकार पर निर्भर नहीं रह सकता। प्रत्येक प्रकार के अपने लाभ तथा सीमाएं हैं, तथा आदर्श प्रणाली वह होगी जिसमें बहुविध परिवहन प्रकारों का मिश्रण हो। संयुक्त पारगमन प्रकारों की भी सभी शहरों में आवश्यकता होगी क्योंकि वे अपने लचीलेपन तथा लगभग सभी इलाकों में पहुंच जाते हैं।

बॉक्स 5.16 जन पारगमन विकल्प

अभिलक्षण	बस का रास्ता	एलआरटी	मेट्रो	उपनगरीय रेल
वर्तमान एप्लीकेशन्स	लैटिन अमरीकी देशों में 20+वर्षों से व्यापक	यूरोप में विस्तीर्ण 'उच्च' यात्री संख्या के साथ विकासशील देशों में	व्यापक, यूरोप तथा उत्तरी अमरीका में कहीं-कहीं	व्यापक, यूरोप तथा उत्तरी अमरीका में कहीं-कहीं
विभानन	जमीन पर	जमीन पर	अधिकतर उत्थापित/ भूमिगत	जमीन पर
अपेरक्षित जगह	मौजूदा सड़क से 2-4 लेन	मौजूदा सड़क से 2-3 लेन	उत्थापित या भूमि-गत, मौजूदा सड़क पर मामूली असर	
नमनीयता	कार्यान्वयन तथा संचालन दोनों में लचीली, संचालन के लिहाज से उत्तम	सीमित नमनीयता, वित्तीय सदर्भों में खतरनाक	अनमनीय तथा वित्तीय संदर्भों में खतरनाक	अनमनीय
यातायात पर असर	नीति/डिजाइन पर पर निर्भर	नीति/डिजाइन पर निर्भर	संकुलन को कुछ हद तक कम करता है	आवृत्ति बढ़ने पर भीड़-भाड़ बढ़ सकती है

अभिलक्षण	बस का रास्ता	एलआरटी	मेट्रो	उपनगरीय रेल
पीटी संघटन	बस संचालन के साथ मददगार पैरा ट्रंजिट परिवहनों के साथ समस्या	प्रायः मुश्किल	प्रायः मुश्किल	प्रायिक रूप से मौजूद
भारत लागत अमरीकी मिलियन डालर/किमी	1-5	10-30	* 15-30 जमीन पर * 3-75 उत्थापित * 60-180 भूमिगत	
व्यावहारिक क्षमता यात्री/घंटा/दिशा	10-20,000	10-2000? (कोई उदाहरण नहीं)	60,000+	30,000
प्रचालन गति किमी/घंटा	17-20	20? (कोई उदाहरण नहीं)	30-40	40-50 +

स्रोत : विश्व बैंक शहरी परिवहन कार्यनीति समीक्षा - विकाशील देशों में जन तीव्र पारगमन; अंतिम रिपोर्ट जुलाई, 2000।

5.4.5.10 *परिवहन प्रकार चयन करने के लिए दृष्टिकोण* : एक शहर को जन पारगमन प्रकार का निर्णय लेना होता है जिसे वह अपनाना चाहते हैं। उसमें कई जन पारगमन के प्रकार हो सकते हैं परन्तु सामान्यतया एक कॉरीडोर पर एक ही प्रकार होता है। जन पारगमन प्रणाली को चुनने का आधार वहन करने के क्षमता की आवश्यकता तथा आर्थिक सोच-विचार है। सबसे कम शुरूआती लागत उच्च क्षमता बस प्रणाली की है लेकिन उसे सड़क पर जगह चाहिए होती है। हल्का रेल पारगमन (एलआरटी) एट ग्रेड (सतह पर) की क्षमता उच्च क्षमता बस सेवा (एचसीबीएस) से अधिक है, पर्यावरण अनुकूल है परन्तु पूंजीगत रूप से अधिक लागत वाली है तथा जगह की उपलब्धता पर भी निर्भर है। उत्थापित रेल पारगमन प्रणाली सड़क की जगह नहीं लेती, अधिक क्षमता होती है, तथा पर्यावरण अनुकूल है परन्तु एलआरटी (सतह पर) से अधिक महंगी प्रणाली है। मेट्रो प्रणाली, जो भूमिगत तथा उत्थापित रेल का मिश्रण हो सकती है, की क्षमता अधिकतम है लेकिन लागत भी सबसे अधिक है। अन्य कारक जो पारगमन प्रकार के चुनाव पर असर डालते हैं वे है कॉरीडोर में मांग, मार्गधिकार (आरआडब्ल्यू) की उपलब्धता, कॉरीडोर के पास में प्रमुख कार्य स्थानों का विकास, मौजूदा इमारतों की कतार आदि। लेकिन इस पर जोर दिया जाना आवश्यक है कि तकनीकी-आर्थिक विचारण एक विशिष्ट कॉरीडोर हेतु जन पारगमन के प्रकार पर निर्णय लेने के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारक है।

सारणी 5.14 : शहरी परिवहन तरीकों की तकनीकी विशेषता और क्षमता

	विशिष्ताएं			वाल/घंटा/लेन			प्रणाली क्षमता यात्री/घंटा/लेन	
मोड	आने-जाने का अधिकार है?	स्टेशनों के बीच अनुशंसित दूरी, मीटर में	औसत यातायात गतियां**	इष्टतम	अधिकतम	प्रति ईकाई यात्रियों की संख्या	इष्टतम	अधिकतम
बस/ट्रॉली	आने-जाने का कोई अधिकार नहीं	**500**	**10-20**	**20**	**60-90**	**60-90**	**2000**	**7000**
बस तीव्र पारगमन@	विशिष्ट-समर्पित लेन	**500**	**15-25**	**30-60**	**90-120**	**60-90**	**5000**	**10000**
हल्की रेल***	आने-जाने का का आंशिक अधिकार	500	18-25	15	60	150-250	3000-4000	9000-15000
तीव्र पारगमन****	ग्रेड सेपरेटिड	1000	25-35	30	40	300-1500	15000-30000	60000-80000
यात्री रेल$	ग्रेड सेपरेटिड	2000	40-60	20	30	1240-2500	30000-50000	60000-80000

* *समर्पित लेन पर लेन पर उच्च क्षमता बस प्रणाली में, ओवरटेक करने की सुविधा के समय, 20000 की क्षमता संभव है। यह क्षमता और भी बढ़ सकती है यदि प्रत्येक दिशा में दो समर्पित लेन हों।*

** *इसमें यात्री चढ़ाने, उतारने के दौरान तथा यातायात चौराहों पर खर्च हुआ समय शामिल है।*

*** *अमेरिकन सार्वजनिक परिवहन प्राधिकरण (एपीटीए) हल्की रेल को इस प्रकार परिभाषित किया है :*

भारी रेल की तुलना में 'कम मात्रा' यातायात क्षमता के साथ एक विद्युतीय रेल। हल्की रेल बंटी हुई अथवा विशिष्ट आने जाने का अधिकार ऊंची या नीची प्लेटफॉर्म तथा बहु डिब्बा या एकल डिब्बा ट्रेन प्रयोग कर सकती है।"

**** *तीव्र पारगमन प्रणाली रेल आधारित, पूरी तरह ग्रेड सेपरोटिड तथा उच्च आवृत्ति पर संचालित प्रणाली है।*

@ *बस तीव्र पारगमन एक आधुनिक संकल्पना है जहां बसें विशिष्ट समर्पित लेन पर दौड़ती हैं।*

$ *यात्री रेल एक विद्युतीय या डीजल चालित ट्रेन है जो यात्रियों को लाने ले जाने के लिए सामान्यतः नगर केन्द्र तथा इसके उप नगरीय क्षेत्रों के बीच चलती है।*

स्रोत : आंकड़े विभिन्न स्रोतों से लिए गए हैं।

5.4.5.11 *एकीकृत दृष्टिकोण* : सार्वजनिक परिवहन की चुनौतियों से निपटने के लिए अंतर-विभागीय दृष्टिकोण की आवश्यकता होगी ताकि समस्त प्रयास एक-दूसरे के पूरक हों। इसकी प्राप्ति के लिए, यह जरूरी है कि प्रत्येक विशाल नगर में शहरी परिवहन के लिए एक सामूहिक प्लेटफार्म की स्थापना की जाए। यह तभी प्राप्त किया जा सकता है जब समन्वित तथा सशक्त प्रबंधन प्रणाली हो, एक विशेष प्रयोजन वाहन जो निर्माण करेगा और तब चलेगा, अथवा प्रमुख शहर की सभी परिवहन संबंधी आवश्यकताओं को समन्वित करेगा। आयोग सिफारिश करता है कि, राष्ट्रीय नीति के अनुपालन में, प्रत्येक महानगर निगम में, एक महानगर परिवहन प्राधिकरण की स्थापना की जाए, जिसके पास उपयुक्त शक्तियां हो, ताकि शहर की परिवहन प्रणालियों को संघटित और समन्वित किया जा सके। इस प्रकार, एकमात्र प्राधिकरण का चाहे जो नाम अथवा संरचना हो, परिवहन संबंधी सभी कार्यकलापों तथा निर्णय लेने के लिए नगरनिगम के दायरे के भीतर सभी उत्तरदायित्वों तथा प्राधिकारों का भण्डार बनना ही होगा। राष्ट्रीय नीति महानगरीय शहरों में शहरी परिवहन की समन्वित आयोजना के लिए शहरी परिवहन के समन्वित आयोजना के लिए समेकित महानगर परिवहन प्राधिकरण (यूएमटीए) की बात करती है। लेकिन विभिन्न प्रकार के सार्वजनिक परिवहन और उनके संघटन के लिए आम टिकट और किराया प्रणाली की भी आवश्यकता है ताकि वे एक दूसरे के पूरक हों न कि एक दूसरे के प्रतियोगी हों। ऐसा हो सके इसके लिए, यूएमटीए को परिवहन के सभी प्रकारों के विनिमयन करने, प्रत्येक ऑपरेटरों को अव्यावहारिक मार्गों पर वित्तीय सहायता देने के लिए यूएमटीए को वित्तीय शक्तियों तथा संसाधनों की आवश्यकता होगी।

5.4.5.12 जन पारगमन प्रणालियों की शुरूआत की संकल्पना ध्यानपूर्वक की जानी होगी क्योंकि अपेक्षित निवेश बहुत बड़ा है और इसी प्रकार उनका सामाजिक-आर्थिक असर। ऐसी सभी प्रणालियों की आयोजना सतर्कतापूर्वक की जानी चाहिए। इसके लिए परियोजना को संभालने वाले अधिकारियों में उच्च दर्जे की प्रशासनिक और व्यावसायिक सक्षमता की आवश्यकता है। अतः संबंधित अधिकारियों की क्षमता का विकास अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इतना ही नहीं, जन पारगमन प्रणालियों की आयोजना तथा उन पर कार्यान्वयन अकेले नहीं किया जाना चाहिए। एक संपूर्णतावादी नजरिया जरूरी है। एक एकीकृत परिवहन प्रणाली के कई आयाम होते हैं। अपने व्यापक अभिप्राय में इसे अपेक्षा है:[78]

- परिवहन, भूमि उपयोग तथा अन्य सामाजिक तथा आर्थिक नीतियों के बीच सामंजस्य
- परिवहन प्रकारों के बीच एक समान संसाधन आबंटन मानदंड

78 विश्व बैंक शहरी परिवहन रणनीति समीक्षा - विकासशील देशों में जन तीव्र पारगमन अंतिम रिपोर्ट जुलाई 2000

- सभी प्रकारो तथा सेवाओं में एक समान बजटिंग
- गौण बातों समत विवेकपूर्ण मूल्य निर्धारण
- विनियमन की सुसंगत बहुविध प्रणाली
- सेवाओं तथा सुविधाओं की ऐसी डिजाइन जो हर एक की अलग-अलग खूबियों को दर्शाए
- प्रकारों तथा सेवाओं के बीच सरलता से अदला-बदली के लिए सुविधाएं
- सामूहिक किराया तथा टिकट
- जहां व्यावहारिक हो समन्वित समय-सूची
- बहुविध यात्री सूचना

5.4.5.13 राष्ट्रीय नीति के अनुपालन में कुछ राज्यों ने पहले से ही कदम उठा लिए हैं। उदाहरण के तौर पर, कर्नाटक ने मुख्य सचिव अध्यक्ष के रूप में और नगर निगम आयुक्त तथा सदस्यों के रूप में विभाग के विभिन्न प्रमुखों को नियुक्त करके तथा शहर में शहरी परिवहन प्रबंधन पर संकेन्द्रित ध्यान देने के लिए शहरी परिवहन के राज्य निदेशालय के साथ-साथ बंगलौर क्षेत्र के लिए बंगलौर महानगर भू परिवहन प्राधिकरण स्थापित किया है।

5.4.5.14 *सार्वजनिक परिवहन में सरकारी-निजी भागीदारी* : सार्वजनिक परिवहन में निजी क्षेत्र को शामिल करने से पूंजी आने में तो मदद मिलती है, साथ ही प्रबंधकीय कुशलताएं भी आती हैं। सरकारी-निजी भागीदारी के कई प्रकार संभव है। ये हैं "टेन्डरिंग ऑफ रूट" बसों की वेट लीज तथा विशिष्ट सेवाओं की आउटसोर्सिंग। मध्य प्रदेश में इन्दौर ने इस संकल्पना को सफलतापूर्वक प्रचालित किया कि "एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले शहरों के पास एक शहरी बस परिवहन निगम होना चाहिए जिसमें 30 प्रतिशत बसें अपनी हों तथा 70 प्रतिशत बसें निजी ठेकेदारों तथा आपरेटरों से ठेके पर ली गई होनी चाहिए। नगर की शहरी परिवहन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इन्दौर ने स्थानीय निगम तथा स्थानीय विकास प्राधिकरण द्वारा संयुक्त रूप से वित्तपोषित की गई हैं। एक सफल सरकारी-निजी भागीदारी के लिए दोनो पार्टियों के बीच अत्यधिक सावधानीपूर्वक रचित सहमति तथा निजी भागीदार के चयन में संपूर्ण पारदर्शिता तथा वस्तुनिष्ठा पूर्वापेक्षाएं हैं।

5.4.5.15 सिफारिशें :

(क) शहरी परिवहन प्राधिकरण, जिन्हें महानगरीय निगमों में एकीकृत महानगर परिवहन प्राधिकरण कहा जाए, को सार्वजनिक परिवहन के सर्वोच्च प्राथमिकता के साथ समन्वित आयोजना तथा शहरी परिवहन संबंधी समाधानों पर कार्यान्वयन हेतु, एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले नगरों में एक वर्ष के भीतर स्थापित किया जाए।

(ख) यूएमटीए को सभी प्रकार के सार्वजनिक परिवहन का विनियमन करने, प्रत्येक आपरेटर के लिए अनुपूरक मार्गो, तथा किराया तय करने और साथ-साथ सेवा मानकों आदि पर निर्णय लेने की वैधानिक शक्तियां दी जाएं। इसके अतिरिक्त, यूएमटीए/यूटीए को वित्तीय शक्तियां तथा संसाधन उपलब्ध कराए जाने चाहिए ताकि, जहां कहीं आवश्यक हो, अत्यावहारिक मार्गो पर आपरेटरों को वित्तीय सहायता देने अथवा देने की सिफारिश की जा सके।

(ग) सभी शहरी स्थानीय निकायों तथा साथ ही साथ जिला आयोजना समितियों और महानगर आयोजना समितियों जैसे आयोजना निकायों के लिए परिवहन आयोजना के साथ भूमि उपयोग का संघटन अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए।

(घ) शहरों में परिवहन हेतु मांग का प्रबंधन मांग नियंत्रण उपायों को अपनाने से करना चाहिए, तथा:

(i) संकुलन कर लगाना;

(ii) कुछ क्षेत्रों को पैदल पथ के रूप में निर्धारण;

(iii) कुछ क्षेत्रों तक केवल सार्वजनिक परिवहन के जरिए पहुंच पाना आरक्षित करना।

(ङ) शहरों में सार्वजनिक परिवहन सेवाओं को पुनरूज्जीवित करने के लिए जेएनएनयूआरएम के तहत प्राथमिक परियोजनाओं के रूप में लिया जाना चाहिए तथा राजस्व के अन्य स्त्रोतों से संपर्क स्थापित करने के द्वारा किया जाना चाहिए जैसा इन्दौर तथा अन्य शहरों में किया जा चुका है। सार्वजनिक परिवहन के आधुनिकीकरण तथा पुनः परिभाषित करने के लिए सुगठित सरकारी-निजी पहलों को प्रोन्नत करने का लक्ष्य होना चाहिए। इसके साथ ही राज्य स्वामित्व की मौजूदा परिवहन प्रणालियों की कार्यकुशलता में सुधार आवश्यक है।

(च) सार्वजनिक परिवहन प्रणालियों को आमतौर पर बहुविध होना चाहिए। परिवहन के प्रकार आर्थिक व्यावहारिकता पर आधारित होने चाहिए। मेट्रो रेल अथवा हाई कैपेसिटी बस सिस्टम

जैसे उच्च क्षमता युक्त सार्वजनिक परिवहन प्रणालियों को महानगरों की रीढ़ होना चाहिए जिसके पूरक बस प्रणाली जैसे अन्य प्रकार होने चाहिए।

(छ) **नगरों में परिवहन अवसंरचना का निर्माण करते समय, यह सुनिश्चित कर लेना अनिवार्य है कि पैदल यात्रियों, बुजुर्गों, विकलांगो तथा और मोटरयुक्त परिवहन के साधनों को अपनाने वाले अन्य प्रयोगकर्त्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति पर्याप्त रूप से की गई है।**

5.4.6 जेएनएनयूआरएम - एक सुधार प्रक्रिया

5.4.6.1 जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन (जेएनएनयूआरएम) सरकार द्वारा हाथ में लिए गए सबसे बड़े सुधार संबंधी विकास कार्यक्रमों में से एक हैं। इस कार्यक्रम का उद्देश्य (क) शहरी क्षेत्र में सुधारों की शुरूआत तथा (ख) शहरी अवसंरचना तथा सेवाओं में निजी-सरकारी भागीदारी तथा निजी निवेश सुदृढ़ करना।

5.4.6.2 इस मिशन की शुरूआत सरकार द्वारा दिस्मंबर, 2005 में शहरी नवीकरण परियोजनाओं का उत्तरदायित्व मिशन मोड में लेने के लिए वर्ष 2005-06 से आरंभ करके सात साल की अवधि के लिए की गई थी। मिशन 63 चुने हुए शहरों में अवसंरचनात्मक सेवाओं के विकास को शामिल करता है। राज्यों/संघ शासित प्रदेशों को अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता (ए.सी.ए) के रूप में भारत सरकार का 50,000 करोड़ रुपए का प्रस्तावित आबंटन परियोजना के भाग की लागत को पूरा करने की दिशा में महानगरों के लिए 35 प्रतिशत से लेकर पूर्वोत्तर क्षेत्र के राज्यों के लिए 90 प्रतिशत अनुदान के रूप में होगा। वित्तपोषण का समग्र प्रतिमान, शहरी परिवहन परियोजनाओं विलवणीकरण परियोजनाओं आदि को छोड़कर जहां विशेष मानदंड लागू होते हैं, सारणी 5.15 पर दिया गया है।

सारणी 5.15 ने जेएनएनयूआरएम में वित्तपोषण का समग्र प्रतिमान

शहर वर्गीकरण	आधार	केन्द्र सरकार का भाग	राज्य सरकार का भाग	शहरी स्थानीय निकाय द्वारा उगाही गई राशि
क	>4 मिलियन	35%	15%	50%
ख	1 - 4 मिलियन	50%	20%	30%
ग	> 1 मिलियन, परम्परा	80%	10%	10%
घ	पूर्वोत्तर क्षेत्र जम्मू और कश्मीर	90%	10%	0%

5.4.6.3 कार्यक्रम के अंतर्गत कई सारी शर्तें लगाई गई हैं, राज्य तथा शहरी स्थानीय निकाय दोनों स्तर पर शासन संबंधी सुधारों के लिए। संबंधित राज्य सरकारों को विस्तृत परियोजना रिपोर्ट के साथ शहर विकास योजनाएं तैयार करनी होंगी तथा सुधारों के कार्यान्वयन हेतु उद्देशित लक्ष्यों को दर्शाने वाले करार ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने होंगे।

5.4.6.4 जेएनएनयूआरएम के दो उप-मिशन हैं : शहरी अवसंरचना एवं अधिशासन (यूआईजी) तथा शहरी निर्धनों को मूलभूत सेवाएं जोकि दो मंत्रालयों में दो अलग-अलग निदेशालयों में कार्यान्वित किया जा रहा है।

5.4.6.5 इस कार्यक्रंम की शहरी भारत के लिए सबसे बढ़िया उम्मीद के रूप में प्रशंसा की गई है, और इसके शहरी सेवाओं पर पड़ने वाले संभावित असर को अधिक बढ़ा-चढ़ा कर नहीं बताया जा सकता। पहला यह, कि ऐसा पहली बार हुआ है कि शहरी सुधारों तथा अवसंरचना विकास के लिए एकजुट प्रयास का जोर लगाया गया है। इसके अलावा, शहर विकास योजनाओं (सीडीपी(ज)) तथा विस्तृत परियोजना रिपोर्टों (डीपीआर) के कारण विगत में किए गए प्रयासों की तुलना में यह शायद अधिक सुदृढ़ रूप से आवश्यकताओं के निर्धारण की थाह लेता है।

5.4.6.6 कार्यक्रम के कार्यान्वयन को अभी गति मिली है, तथापि, कार्यक्रम के कुछ पहलुओं पर विचार करने की आवश्यकता है। राज्यों से अभी तक प्राप्त प्रस्तावों का शहरी विकास मंत्रालय द्वारा किया गया अध्ययन विचार-विमर्श के लिए दिलचस्प मुद्दे सामने लाता है। पहला पहलु, निस्संदेह, निधियों की आवश्यकता तथा वित्तपोषण का प्रतिमान है। जिन 63 शहरों और नगरों का चयन किया गया है वे कुल शहरी जनसंख्या के केवल 42 प्रतिशत को शामिल करते हैं तथा 50,000 करोड़ रुपए की अतिरिक्त सहायता से 1,25,000 करोड़ रुपए का कार्यक्रम उत्पन्न होने की उम्मीद है। परन्तु इतनी बड़ी राशि भी इन 63 शहरी निकायों की अवसंरचनात्मक जरूरतों के सामने कम पड़ सकती है। जेएनएनयूआरएम का सामान्य सर्वेक्षण दस्तावेज बताता है, "यह अनुमानित है कि सात वर्ष की अवधि के दौरान, शहरी स्थानीय निकायों को 1,20,536 करोड़ रुपए के कुल निवेश की आवश्यकता होगी। इसमें आधारभूत अवसंरचना तथा सेवाओं में निवेश शामिल है, अर्थात् 17,219 करोड़ रुपए वार्षिक वित्तपोषण की आवश्यकता। हालांकि, आशानुरूप, यह घोर न्यून प्राक्कलन निकला। 43 नगरों द्वारा तैयार किए गए सीडीपी के अनुसार, मात्र दो-तिहाई परियोजनाओं की लागत 211,348 करोड़ रुपए राशि के जितनी बड़ी होगी। उसी प्रति व्यक्ति आधार पर, सभी 63 नगरों तथा शहरों के लिए पूर्वानुमानित कुल निवेश आवश्यकता 339,902 करोड़ रुपए है।[79]

79 जेएनएनयूआरएम : पूंजीगत निवेश योजनाओं पर आधारित वित्तीय विश्लेषण और प्रवृत्तियां/तकनीकी कक्ष, जेएनएनयूआरएम मिशन निदेशालय और प्राइसवाटरहाऊस कूपर्स द्वारा संकलित विस्तृत परियोजना रिपोर्ट और निधियों का निर्गमन।

सारणी 5.16 : जेएनएनयूआरएम में क्षेत्र-वार मांग (राज्य द्वारा प्रस्तुत आवश्यकताओं के आधार पर)

(करोड़ रुपए में)

राज्य	नगरो की संख्या	जनसंख्या (लाख में)	शहरी परिवहन	जलापूर्ति	मल जल-निकासी/ स्वच्छता	जल-निकास/ एसडब्ल्यूटी	एमआरटीएस	एसडब्ल्यूएम	अन्य	कुल
महाराष्ट्र	5	239.0 (1)	31,901 (1)	3,729 (2)	4,523 (1)	3,156 (2)	0	718(3)	2695	46,722
आंध्र प्रदेश	3	81.2	8,488	7,186(1)	3,389 (2)	3,733 (1)	8,680 (1)	1,291 (1)	500	33,267
उत्तर प्रदेश	7	100.2 (2)	9,646 (3)	2,714	2,383 (3)	1,771 (3)	0	376	2,802	19,692
कर्नाटका	2	65	11,046(2)	2,843 (3)	1,375	0	170 (3)	870 (2)	228	16,532
गुजरात	4	98.3 (3)	7,030	1,681	1,571	1,068	0	433	1,167	12,950
मध्य प्रदेश	4	46.27	2,024	721	840	365	620 (2)	115	593	5,278
राजस्थान	2	28.31	1,987	1,599	272	132	0	30	787	4,807
तमिलनाडु	2	26.64	3,359	257	325	226	0	109	3	4,279
बिहार	2	20.92	762	190	455	1,538	0	98	530	3,573
असम	1	8.19	841	1,077	306	400	0	*66*	370	3,060
पंजाब	2	24.01	1,374	401	488	280	0	140	41	2,724
उड़ीसा	1	6.58	508	691	496	130	0	25	9	1,859
हरियाणा	1	10.56	438	434	483	256	0	39	35	1,685
मणिपुर	1	2.5	379	236	509	0	0	37	328	1,489
हिमाचल प्रदेश	1	1.45	379	236	509	0	0	37	328	1,489
पश्चिम बंगाल	1	10.67	554	316	174	134	0	30	100	1,308
त्रिपुरा	1	1.9	519	155	309	106	0	5	21	1,115
छत्तीसगढ़	1	7	275	375	132	110	0	61	6	959
नागालैण्ड	1	0.77	404	70	78	220	0	7	24	803
चंडीगढ़ (केन्द्र शासित प्रदेश)	1	8.08	**183**	162	46	27	0	6	0	424
जोड़	43	**787.69**	**82,097**	**25,571**	18,349	13,783	9,470	4456	10,239	163,965

स्रोत : तकनीकी कक्ष, जेएनएनयूआरएम मिशन द्वारा संकलित रिपोर्ट, दिनांक 1.1.2002 को स्थिति।

सारणी 5.17 : जेएनएनयूआरएम में प्रति व्यक्ति निवेश मांग

(प्राप्त परियोजनाओं के आधार पर) (सभी राशियां रू. प्रति व्यक्ति में हैं)

राज्य	नगरो की संख्या	जनसंख्या (लाख में)	शहरी परिवहन	जलापूर्ति	मल निकास/ एस डब्ल्यू डी	स्वच्छता जल	एमआर टीएस	एसडब्ल्यूएम	अन्य	कुल
महाराष्ट्र	5	239	13,344	1,560	1,892	1,320				
आंध्र प्रदेश	3	**81**	10,445	8,843	4,171	4,594	10,682	(1) 1,589	615	40,939
उत्तर प्रदेश	7	100	9,625	2,708	2,378	1,767	-	375	2,796	19,649
कर्नाटका	2	65	16,994	4,374	2,115	-	262	(3) 1338	351	25,434
गुजरात	4	98	7,152	1,710	1,598	1,086	-	440	1,187	13,174
मध्य प्रदेश	4	46	4,374	1,558	1,815	789	1,340	249	1,282	11,407
राजस्थान	2	28	7,019	5,648	961	466	-	106	2,780	16,980
तमिलनाडु	2	27	12,609	965	1,220	848	-	409	11	16,062
बिहार	2	21	3,642	908	2,175	(3) 7,352	-	468	2,533	17,079
असम	1	8	10,269	(2) 13,150	3,736	4,884	-	806	(2) 4,518	37,363
पंजाब	2	24	5,723	1,670	2,032	1,166	-	583	171	11,345
उड़ीसा	1	7	7,720	(3) 10,502	7,538	1,976	-	380	137	28,252
हरियाणा	1	11	4,148	4,110	4,574	2,424	-	369	331	15,956
मणिपुर	1	3	15,160	9,440	(1) 20,360	-	-	(2) 1,480	(1) 13,120	59,560
हिमाचल प्रदेश	1	1	(3) 26, 138	(1) 50,621	13,448	(2) 9,034	-	-	-	(2) 99,241
पश्चिम बंगाल	1	11	5,192	2,962	1,631	1,256	-	281	937	12,259
त्रिपुरा	1	2	(2) 27,316	8,158	(2) 16,263	5,579	-	263	1, 105	(3) 58,684
छत्तीसगढ़	1	7	3,929	5,357	1,886	1,571	-	871	86	13,700
नागालैण्ड	1	**1**	(1) 52,468	9,091	(3) 10,130	(1) 28,571	-	909	(3)3, 117	(1) 104,286
चंडीगढ़ (केन्द्र शासित प्रदेश)	1	**8**	2,265	2,005	569	334	-	*74*	-	5,248
अनुपात	-	-	10423	3,246	2,329	1,750	1,202	566	1,300	20,816

स्रोत : तकनीकी कक्ष, जेएनएनयूआरएम मिशन द्वारा संकलित रिपोर्ट, दिनांक 1.1.2002 को स्थिति।

5.4.6.7 43 नगरों के लिए उपलब्ध सीडीपी के आधार पर 63 नगरों के लिए पूर्वानुमान 28,000 रुपए से कुछ अधिक राशि का औसत प्रति व्यक्ति निवेश प्रस्ताव दर्शाता है। पूर्वानुमानित आंकड़ों के लिहाज से 267,629 करोड़ रुपए शहरी अवसंरचना और शासन पर खर्च किए जाएंगे, 69,896 करोड़ रुपए शहरी निर्धनों के लिए मूलभूत सेवाओं पर तथा सिर्फ 2377 करोड़ रुपए क्षमता निर्माण तथा सांस्थानिक विकास हेतु खर्च किए जाएंगे। शहरी अवसंरचना तथा अधिशासन के लिए अपेक्षित निधियों के अनुपात में से, जोकि 43 नगरों के लिए 163965 करोड़ रुपए है, का कार्यक्रम-वार ब्यौरा सारणी 5.16 में दिया गया है।

5.4.6.8 राज्यों के बीच प्रति व्यक्ति परियोजना लागतें, पूर्ण रूप से तथा विभिन्न अवसंरचना हिस्सों के तहत भीषण रूप से अलग हैं। अहम बात है कि ऐसा लगता है शहरी अवसंरचना के अलग-अलग क्षेत्रों पर अलग-अलग दर्जे का यानि कम अथवा अधिक बल दिया जाता है जैसा कि सारणी 5.17 से देखा जा सकता है। सच है, यह पहले से उपलब्ध सुविधाओं को नहीं दर्शाता है, परन्तु इसकी संभावना बहुत कम है कि जल के लिए एक राज्य की आवश्यकता दूसरे से बहुत अलग होगी। यह देखा जा सकता है कि मात्र तीन राज्यों ने जल निकासी/स्टॉर्म जल निकासी हेतु प्रस्ताव भेजे हैं। महसूस की गई आवश्यकता में "विविधता" कुछ महत्व का मामला है क्योंकि देश का सन्तुलित आर्थिक विकास कुछ हद तक संतुलित शहरी अवसंरचना की उपलब्धता पर निर्भर होगा।

5.4.6.9 यह एक बहस का विषय हो सकता है कि क्यों एक राज्य अन्य राज्यों की तुलना में दोगुने से अधिक प्रति व्यक्ति राशि प्राप्त करे। लेकिन ऐसा हो सकता है, यदि मान लीजिए, एक राज्य में प्रति व्यक्ति स्वच्छ पेयजल आपूर्ति करने की लागत दूसरे राज्य से अधिक है। पर्वतीय राज्यों में लागतें निःसंदेह अधिक होंगी। परन्तु अल्प निधियों के वितरण में संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता अनिवार्य बनी रहेगी। और सबसे पहले, अनिवार्य परमावश्यक प्राथमिकता, मिलेनियम विकासात्मक लक्ष्यों की तर्ज पर, राज्यों द्वारा यह प्रमाणित किया जाना कि पेयजल तथा स्वच्छता संबंधी जरूरतों को पूरा कर लिया गया है। इस प्रकार, यद्यपि थाह लेने का जो नजरिया है वह प्रशंसनीय है, कुछ पहलुओं में, वृहत नीति के रवैये को कार्यान्वित किए जाने की आवश्यकता है।

5.4.6.10 स्वयं राज्यों द्वारा दर्शाई गई दिलचस्पी एक अन्य मुद्दा है। महाराष्ट्र, गुजरात तथा आन्ध्र प्रदेश सरीखे राज्य वित्तपोषण के लिए परियोजनाएं प्रस्तावित करने में अधिक सक्रिय रहते हैं। उन राज्यों के बारे में जो इस विषय पर कुछ सुस्त हैं, प्रश्न उठता है कि क्या इन राज्यों के शहरी स्थानीय निकायों के पास संकल्पना की तथा अपेक्षित दस्तावेजों को भारत सरकार तथा निजी तकनीकी एवं वित्तपोषण

करने वाले अभिकरणों के समक्ष प्रस्तुत करने की पेशेवर क्षमता है। ज्यादातर राज्य तथा शहरी स्थानीय निकाय परियोजना तैयार करने में सहायता पाने के लिए पेशेवर परामर्शदाता कंपनियों की मदद ले रहे हैं, जो शहरी स्थानीय निकास परियोजना प्रस्तावों को पेश/तैयार करने में असमर्थ हैं उन पर विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

5.4.6.11 एक अहम मुद्दा कि कार्यक्रम बेशक अभी अपने शुरूआती दिनों में ही है, स्थानीय निकायों को शक्तियों के प्रत्यायोजन में कुछ खास प्रगति नहीं देखी गई है, जैसा कि इसके अपने सुधार कार्यसूची में अभिप्रेत था।

5.4.6.12 यद्यपि मांग प्रेरित दृष्टिकोण जो जेएनएनयूआरएम को आधार प्रदान करता है, मै काफी कुछ प्रशंसनीय है, यह अति आवश्यक है कि इसकी सीमाबद्धता को भी ध्यान में रखा जाए। एक अध्ययन बताता है कि स्कीम के तहत परियोजनाओं में अधिकतर भाग शहरी परिवहन क्षेत्र से संबंधित है। यह समान रूप से महत्वपूर्ण अन्य क्षेत्रों जैसे स्वच्छता के लिए यह चिंताजनक अड़चने हैं। इसके अलावा, इस बात को ध्यान में रखते हुए कि इस क्षेत्र की भी मिलती-जुलती अड़चने हैं। शहरी स्थानीय निकाय की निवेश लागत के निर्धारित भाग को बढ़ाने के लिए प्रतिबंध शर्त लगाई जाती है। अतः आयोग महसूस करता है कि स्वच्छता जैसे क्षेत्रों के लिए जिनका व्यापक सामाजिक तथा पर्यावरणीय लाभ है, शहरी स्थानीय निकाय के हिस्से की कम आवश्यकता के साथ, परिव्ययों को निर्धारित करने की आवश्यकता है।

5.4.6.13 स्कीम के सफलतापूर्वक कार्यान्वयन के लिए शहरी स्थानीय निकायों के भीतर क्षमता निर्माण विवेचनात्मक है। आयोग का मानना है कि जो शहरी स्थानीय निकाय अभी तक स्कीम में शामिल नहीं किए गए हैं, उन्हें भी क्षमता निर्माण पहलों से लाभ उठाना ही चाहिए क्योंकि इसकी अतिरिक्त लागतें मामूली सी है और इससे होने वाले लाभ बहुत महत्वपूर्ण हैं।

5.4.6.14 सिफारिशें :

(क) **पूर्वानुमानों के आधार पर, शहरी नवीकरण के लिए अपेक्षित कुल निवेश उपलब्ध निधियों से कहीं अधिक है। इस अग्रणी कार्यक्रम - जेएनएनयूआरएम को पर्याप्त रूप से वित्तपोषित करने के लिए सरकार को अर्थोपाय खोजने होंगे।**

(ख) सुधारों के साथ वित्तपोषण से संबद्ध शर्तों को शहरी स्थानीय निकायों तथा भारत सरकार के बीच सम्मत सूचियों के अनुसार बगैर किसी अपवादों अथवा रियायतों के प्रवर्तित किया जाना चाहिए।

(ग) स्वच्छता तथा ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के लिए क्षेत्रीय आबंटन होने चाहिए।

(घ) क्षमता निर्माण के उपायों को केवल चुनिंदा शहरों और नगरों में सीमित नहीं किया जाना चाहिए और इन्हें सभी शहरों/नगरों के लिए उपलब्ध होने चाहिए।

5.4.7 सुधार के महत्वपूर्ण और अत्यावश्यक क्षेत्र - स्थावर संपदा क्षेत्र का विनियमन

5.4.7.1 इस रिपोर्ट के अलग-अलग अध्यायों में, शहरी भूमि प्रबंधन की महत्ता, भूमि रिकार्ड, अधिकारों के समुचित रिकार्ड, शहरी संसाधनों को उगाहने के लिए सार्वजनिक भूमि की प्रभावन क्षमता बताई गई है। इस अध्याय में, पिछले खंड में, शहरों में अवसंरचना के विकास तथा मूलभूत सेवाओं के लिए जेएनएनयूआरएम के अंतर्गत सुधार उपाय प्रस्तावित किए गए हैं। सुधार के लिए एक ऐसा विवेचनात्मक तथा अति महत्वपूर्ण क्षेत्र है जिस पर ध्यान दिए बगैर बाकी सभी क्षेत्र लक्ष्य प्राप्त नहीं करेंगे तथा सच तो यह है कि, हो सकता है कि शून्य पर आ जाएं। इस बात का संबंध स्थावर संपदा क्षेत्र के विनियमन का एक स्वतंत्र विनियामक प्राधिकरण से है। इस क्षेत्र के विनियमन की संपूर्ण कमी शहरों को धारणीय वृद्धि में सबसे अहम रोड़ा है। जमीन की कीमतों में तीव्र वृद्धि, सट्टेवाजी, गैर कानूनी निर्माण, सार्वजनिक भूमियों का अतिक्रमण, "भूमि हड़प", "भू-माफिया" जैसी सारी घटनाएं हर समय खबरों में रहती है। यह भी स्वीकार्य है कि जमीन की रजिस्ट्री, संपत्ति का हस्तांतरण, संविदाएं तथा संबंधित मुद्दे इस प्रसंग में अपने आप में अपर्याप्त हैं, और अलग-अलग प्राधिकरणों द्वारा कार्यान्वित किए जाते हैं और घर के खरीदारों के साथ अनुबंधों में कुछ खास मानदंडों का पालन करने के लिए बिल्डर/डेवलेपर पर कोई जिम्मेदारी नहीं डालते हैं। हालिया वर्षों में, उद्योगों, कम्पनियों, म्युच्युअल फंड में निवेशों के लिए वित्तीय क्षेत्र के लिए सशक्त विनियामक निकायों को स्थापित किए जाने से काफी प्रगति हुई है। स्थावर संपदा (जोकि बेहिसाब तथा हराम की कमाई के निवेश का आजकल एक मुख्य जरिया है) में निवेश के लिए ऐसे ही विधान तथा विनियामक निकायों की स्थापना अत्यधिक जरुरी है। अधिसूचित शहरी तथा शहरीकरण क्षेत्रों में, स्थावर संपदा (जमीन एवं निर्माण) में एक निश्चित राशि (उदाहरणतः 50 लाख रुपए) से अधिक का निवेश करने वाले बिल्डरों/डेवलेपरों को अनुबंध के विशिष्ट मानदंडों के अनुसार ऐसे

क्षेत्रों में रजिस्टर तथा स्वयं को उनसे बांध लेने तथा भूमि तथा निर्माण (आनुवांशिक सेवाओं समेत) पर लागू सभी संगत नियमों एवं विनियमों का अनुपालन जरूरी करना चाहिए। उल्लंघन करने पर सिविल तथा आपराधिक जिम्मेदारी (सार्वजनिक निकाय/घर-खरीदारों को क्षतिपूर्ति की अदायगी सहित) होना चाहिए तथा विनियामक निकायों को आर्थिक दंड, अपंजीकृत करने तथा/अथवा अपराधियों के नाम काली-सूची में डालने और प्रकाशित करने की शक्तियां होनी चाहिए।

5.4.7.2 सिफारिश :

(क) स्थावर संपदा क्षेत्र के विनियमन के लिए पैराग्राफ 5.4.7.1 में बताई गई बातों के आधार पर विधान लाने की तुरंत आवश्यकता है।

5.5 विशाल नगर - महानगर निगम

5.5.1 महानगरों को पुनः तैयार करना

5.5.1.1 वर्ष 1950 में विश्व में केवल एक महानगर था, वह नगर जिसकी जनसंख्या 10 मिलियन से अधिक है, वह न्यूयॉर्क शहर था। वर्ष 2006 में, 21 महानगर थे, जिसमें सूची में[80] भारत के तीन सबसे बड़े नगर मुम्बई तीसरे स्थान पर, दिल्ली छठे तथा कोलकाता सातवें स्थान पर थे। चेन्नई, हैदराबाद तथा बंगलुरू तेजी से उस स्तर पर पहुंच रहे हैं तथा चोटी के 40[81] महानगरों में शामिल हैं। यह आवश्यक है कि इन नगरों की वृद्धि विकास तथा प्रबंधन पर खास तवज्जों दी जाए। पहले और तीसरे विश्व के देशों में एक जैसे, तीव्र गति से हुए शहरीकरण ने कई सामाजिक और आर्थिक समस्याओं, निर्धनता, भुखमरी तथा बेघरबारी अपराध तथा बीमारियां संचारित की हैं। इसके अतिरिक्त, भूमि और संसाधनों के लिए परिणामी मांग ने अनगिनत पर्यावरण संबंधी समस्याओं, जिनमें प्रदूषण, स्वच्छता, जल तथा ऊर्जा के मुद्दे शामिल हैं। नगर की सीमाओं के भीतर 10 मिलियन से अधिक लोगों की कुशलक्षेम का प्रबंध करने के अपने प्रयासों में, बढ़ती हुई जनसंख्या की मांगों की गति से गति मिलाने में स्थानीय नगरनिगमों को दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा है। सरलतापूर्वक कहा जाए तो, अधिक से अधिक लोगों को प्रभावी रूप से सेवा प्रदान करने के लिए बनाए गए कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने की लागत प्रत्येक व्यक्ति के जुड़ने से तीव्रता से बढ़ती है। विश्व की कुछ सबसे धनी आबादी वाले लेकिन घटिया सेवा से युक्त शहरी क्षेत्रों वाले इन नगरों के बेतरतीब विकास के स्थान पर सुव्यवस्थित, सुनियोजित, शहरी विश्व होना चाहिए।

80 http://www.citymayors.com/features/urban-areas1.html
81 -तदैव-

5.5.1.2 भारत के विशालतम नगरों को विशेष प्रशासनिक तथा कानूनी दर्जा दिए जाने की आवश्यकता है। सिंगापुर, दुबई और मोनाको जैसे जाने-माने नगर, जिनका लघु राष्ट्र के रूप में स्थान है, के अलावा इनसे बड़े देशों के अंदर नगर राज्य के उदाहरण हैं। जर्मनी में बर्लिन, ब्रेमन और हैम्बर्ग पारम्परिक उदाहरण हैं। आनुषांगिकता के सिद्धांत के अनुपालन में, कारण बहुत कम है कि राज्य सरकारों को महानगरीय नगर-निगमों के अधिकतर कार्यकलापों पर अपना नियंत्रण बरकरार रखने दिया जाए।

5.5.2 महानगरीय नगर निगम

5.5.2.1 भारत के तीन सबसे बड़े नगर लोगों के समूह हैं जहां प्रत्येक में दस मिलियन से अधिक लोग रहते हैं। यद्यपि शब्द "महानगर" सामान्यतया इस आकार के नगरों के लिए प्रयोग होता है, भारत के कुछ नगर जैसे कि चेन्नई, बंगलुरू तथा हैदराबाद उस आकार से कम के हैं, अपने आप में विशाल हैं तथा घरेलू तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर से आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण है। इन बड़ें समूहों में से प्रत्येक पारम्परिक रूप से शासित होने के लिए बेहद बड़ें और बृहदाकार हैं कि इन्हें महानगर माना जा सकता है।

5.5.2.2 मुम्बई और कोलकाता जैसे नगर जिस राज्य की वे राजधानियां हैं उसके भीतर ही विषम आर्थिक असर डालते हैं तथा संभाले रखते हैं। ये नगर अकेले एक शहरी इकाई में रह रहे लोगों के विशालतम समूहों में से भी एक हैं। इनके कार्यकलाप विशेषीकृत तथा जटिल हैं जो अंतर्राष्ट्रीय सुवास में वृद्धि कर रहे हैं। इनके बढ़ते हुए आर्थिक दबदबे के कारण, इनकी वित्तीय एवं अन्य संसाधनों की जरूरतें, जिन राज्यों का ये औपचारिक तौर पर प्रतिनिधित्व करते हैं, उन राज्यों की क्षमता से कहीं अधिक आगे बढ़ गई हैं, उन राज्यों की क्षमता से कहीं अधिक आगे बढ़ गई है। मुंबई नगर, महाराष्ट्र की राजधानी होने के अलावा भारत की आर्थिक राजधानी भी है।

5.5.2.3 भारत के विशाल नगर हलचल भरे महानगर हैं परन्तु इन शहरों में जीवनयापन की गुणवत्ता निरन्तर गिरती जा रही है। मुंबई में बाढ़ और जल जमाव की हाल की घटनाओं ने इसकी चरमराई अवसंरचना की पोल खोल दी है जबकि वर्ष 2020 तक (25 मिलियन अनुमानित जनसंख्या) मैक्सिको सिटी के बाद विश्व की सबसे अधिक जनसंख्या वाला शहर बनने जा रहा है। शहर में प्रवासियों का लगातार आगमन होता है, जिससे अनौपचारिक क्षेत्रक का स्तर कामकाजी लोगों की संख्या का दो-तिहाई हो जाता है और इससे भूमि और सेवाओं पर और अधिक असर पड़ता है। एक-चौथाई से भी कम

जनसंख्या के पास वास्तव में घर है और घर की कमी इस शहर को विश्व के सबसे अधिक महंगे शहरों में से एक बनाती है। तथापि, मुंबई, एक रिपोर्ट[82] के अनुसार, आज विश्व का दसवां सबसे अहम आर्थिक केन्द्र है। अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक केन्द्र के तौर पर मुंबई को विकसित करने के लिए उपायों को सुझाने के लिए सरकार ने एक उच्च-स्तरीय समिति का गठन किया है। शहर में आर्थिक केन्द्र विकसित करने में गति लाने के लिए आर्थिक नीति में अपेक्षित बदलावों के अतिरिक्त, इसके लिए जरूरी है कि शहर को विश्व-स्तरीय अवसंरचना तथा सुविधाओं से युक्त किया जाए जोकि इस रिपोर्ट में बताए गए सुधार प्रक्रिया से ही संभव है।

बाक्स 5.17 महानगर का योजनाबद्ध विकास

मैसर्स सुंदरम आर्किटेक्ट्स तथा कन्सल्टेंट्स, बंगलुरू द्वारा तैयार

5.5.2.4 दिल्ली पुराने शहर तथा लुटियन्स द्वारा बनाए गए नए शहर तथा स्वतंत्रता के बाद नए विकसित, नियोजित तथा अनियोजित दोनो प्रकार के बड़े इलाकों का मिश्रण है। तीन अलग-अलग निकायों द्वारा प्रशासनिक रूप से नियंत्रित इस शहर के विभिन्न संघटकों के दरम्यान मतभेद बहुत अधिक हैं। कोलकाता, जो शहरी अवनति का पर्याय बन गया था, अब तीव्र आर्थिक वृद्धि के साथ पुनरूज्जीवन का अनुभव कर रहा है और यही आर्थिक वृद्धि इस शहर के पुनरूद्धार की नयी नींव है। अन्य बड़े शहरों जैसे कि चेन्नई, हैदराबाद तथा बंगलुरू के भी अपने-अपने नए एवं पुराने भाग हैं, जहां परम्परा, आधुनिकता, अमीर और गरीब एक साथ रहते है। आयोग का मानना है कि इस रिपोर्ट में की गई कुछ सिफारिशें इन महानगरों की कार्यविधि में निष्पक्षता तथा कार्यकुशलता में सुधार लाने में सहायक होगी।

5.5.2.5 इन फैले हुए महानगरों पर जिन समस्याओं का अतिक्रमण हुआ है, वे सामान्य रूप से निम्नलिखित हैः

(i) असुरक्षित और झिझका हुआ नेतृत्व जिसके फलस्वरूप अदूरदर्शिता तथा घटिया शासन;

(ii) अत्यधिक बड़ा आकार तथा जनसंख्या, जो शासन में स्वयं जटिलताएं लाता है;

(iii) नागरिक सुविधाओं में सुधार लाने में संसाधनों का अभाव;

(iv) पेशेवर रूख में कमी के साथ पारम्परिक नौकरशाही प्रणालियां;

(v) नागरिकों के एक बहुत बड़े वर्ग के बीच निर्धनता तथा वंचनीयता तथा शहर की ओर प्रवासन के कारण पैदा होने वाली खामियों का हल निकालने में जारी असमर्थता

5.5.2.6 बुराईयां जिनसे ये बड़े नगर ग्रस्त हैं उनसे देश में अन्य शहरी तथा शहर के आसपास के क्षेत्र भी प्रभावित हैं परंतु महानगर में स्थिति अधिक विकट है। संपीडित होने की लगातार जारी अप्रतिरोध्य प्रक्रिया अगले कुछ दशकों के दौरान और अधिक बड़े नगरों को सृजित करेगी, तथा सुव्यवस्थित समाधानों के लिए मांग तेजी से बढ़ेगी। राजतैनिक लोकतांत्रिकरण की जरूरतों के अलावा शहर में श्रेष्ठ योग्यताओं के इष्टतम उपयोग तथा इन विशाल नगरों के बेहतर शासन के लिए और अधिक नागरिक सरकार अंतरापृष्ठ की वर्धित आवश्यकता होगी। इन विशाल नगरों के विकास/पुनर्विकास हेतु संघटित संपूर्णतावादी दृष्टिकोण की आवश्यकता होगी। इन नगरों को सामाजिक, आर्थिक तथा पारिस्थितिकीय तौर पर धारणीय होना होगा। इस दिशा में प्रमुख चुनौतियां जनसंख्या स्तरों में स्थिरीकरण, कुशल सार्वजनिक परिवहन नेटवर्क बनाने, विशेष रूप से निर्धनों के लिए आवासीय समस्या को दूर करने तथा ऊर्जा, यातायात, तथा अपशिष्ट एवं जल प्रबंधन हेतु अवसंरचना विकसित करने के लिए पर्यावरण अनुकूल तकनीकों को अपनाने की होंगी।

5.5.2.7 भारत के लिए उपयोगी रहेगा कि सभी नगरों को एक अभिज्ञात महानगरीय क्षेत्र के साथ पांच मिलियन की जनसंख्या वालों को विशाल नगर के रूप में परिभाषित किया जाए। इस रिपोर्ट के संदर्भ में महानगर नगरनिगम के रूप में तथा उसके भविष्य के लिए कम से कम 30 वर्षों की दीर्घावधि के परिदृश्य में योजना बनाई जाए। आयोजना परिदृश्य को व्यापक दूरसंचार तथा प्रचार-प्रसार सुनिश्चित करते हुए सहयोगी आयोजना और सीखने की प्रक्रियाओं के मिश्रण के साथ पर्यावरणीय, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक पहलुओं के संयोजन से संघटित तथा संपूर्णतावादी दृष्टिकोण पर आधारित

होना होगा। विशाल नगर दृष्टिकोण को इन प्रमुख शहरों को पारिस्थितिकीय पुनरूत्पति, राजनैतिक प्रतिभागिता तथा आर्थिक स्थायित्व की तरफ परिवर्तित करने में मदद करनी चाहिए। इन सभी नगरों के लिए, मास्टर प्लान को विकास हेतु पूर्वकल्पित एवं पूर्वनिर्धारित मार्ग के रूप में तैयार करने की आवश्यकता है। स्थानिक आयोजना में हाई रिजोल्यूशन रिमोट सेन्सिंग तथा ठोस आयोजना और भूमि प्रयोग प्रबंधन के उद्देश्य को पाने के लिए आधुनिक अनुरूपण तकनीकों के साथ सतह या उप-सतह के संकल्पना का प्रयोग होना चाहिए। तिस पर भी, चूंकि इन नगरों का विकास साफ-सुथरी जगह पर नहीं होना है बल्कि मौजूदा "जी रहे नगर" के संदर्भ में होना है, वर्तमान दूरसंचार तथा अवसंरचना का पुनर्विकास पहली प्राथमिकता होनी चाहिए।

5.5.2.8 *मौजूदा नगरों का पुनर्विकास* : भूमि विकासकों के लिए नगर के बाहरी सीमा क्षेत्रों में भूमि पाने की सरलता, कमतर लागतें, तथा हरे भरे क्षेत्रों में बड़े आवासीय तथा वाणिज्यिक काम्प्लेक्सों के फलस्वरूप स्केल की किफायत के अर्थ में अत्यधिक लाभ तथा गुंजाइशें है। दूसरी ओर, नगर के अंदर की संपत्तियों - पहले की निर्मित इमारतों के पुनर्विकास की लागत कहीं अधिक है। फिर भी, नगर के लिए, "ब्राउनफील्ड्स रीडेवलपमेंट"[83] उपेक्षित पड़ोस में निवेश को वापस लाने, पर्यावरण साफ करने, मौजूदा अवसंरचना जिस पर पहले से व्यय हो चुका है, का पुनः उपयोग करने, वर्तमान बाजारों तथा कामगारों का उपयोग करने, तथा हमारे शहरी सीमावर्ती इलाकों और कृषि भूमियों पर विकास के दबाव में राहत लाने का राजकोषीय ठोस तरीका है। परिणामस्वरूप, सुदूर सीमा प्रांतों की बजाए नगर में बेहतर विकास को प्रेरित करने के लिए प्रोत्साहन देना अनिवार्य है।

5.5.2.9 सिफारिश :

(क) नगर के भीतर क्षेत्रों के पुनर्विकास के लिए सार्वजनिक निजी भागीदारी परियोजनाओं को एक पारदर्शी एवं प्रोत्साहन और आर्थिक दंड की सुगठित विनियामक शासन-प्रणाली के जरिए प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है।

5.5.3 भारत में 25-30 विश्व-स्तरीय विशाल नगरों को विकसित करना

5.5.3.1 भारत को अगले दशक में समूचे देश में कम से कम 25-30 विश्व स्तर के विशाल शहरों को विकसित करने पर ध्यान संकेन्द्रित करना होगा ताकि देश में सुनियोजित शहरीकरण को बढ़ावा मिल

83 ब्राउनफील्डस डेवलपमेंट का यहां शहर के पुराने इलाकों के पुनर्विकास के अर्थ में प्रयोग किया गया है।

सके। जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन (जेएनएनयूआरएम) ने एक तरीके से, 63 चुनिंदा नगरों में मिशन मोड में शहरी नवीकरण परियोजनाओं को हाथ में लेते हुए इस दिशा में शुरूआत कर दी है। इनमें से 7 नगर इस आधार पर चुने गए हैं कि उनकी जनसंख्या चार मिलियन से ज्यादा है और 28 को इस आधार पर कि उनकी जनसंख्या एक मिलियन से अधिक थी, चुना गया है। इस कार्यक्रम में शहरी क्षेत्र के लिए संसाधन आबंटनों की प्रमात्रा में उछाल शामिल है तथा पहली बार अधिशासन संबंधी सुधारों के लिए संबद्ध निधियां स्पष्ट तौर पर प्रवाहित की गई हैं जिससे लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को बढ़ावा मिल सके।

5.5.3.2 तथापि, ऐसे किसी कार्यक्रम को शून्य सह्यता विनियामक शासन प्रणाली द्वारा समर्थित भी होना होगा, वह जो सभी नागरिक कानूनों को, मुख्य और गौण, निष्पक्ष एवं कठोरतापूर्वक, ताकि हमारे बड़े शहरों में दंडमुक्ति का जो मौजूदा माहौल व्याप्त है उसे समाप्त किया जा सके। "ब्रोकन विन्डो" संलक्षण सार्वजनिक व्यवस्था पर आयोग की रिपोर्ट में एक उदाहरण के रूप में संदर्भित है कि क्यों विधि प्रवर्तन तथा नागरिक संपोषण को एक साथ चलना अनिवार्य है। उस रिपोर्ट में महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय उदाहरणों, विशेषकर सिंगापुर तथा न्यूयार्क का भी हवाला दिया गया है कि कैसे इस लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए विनियामक प्रणालियों को विकसित करने की आवश्यकता है जो इस बात को सुनिश्चित करे कि नागरिक कानूनों और नियमों के सभी उल्लंघनों को बिना चूक दंडित किया जाए, फिर चाहे वह कितने ही गौण हों या कितने गंभीर तथा नागरिकों को ऐसी संस्कृति विकसित करने की आवश्यकता है जो नागरिक गर्व और कानून के प्रति आदर पर निर्मित हो।

5.5.3.3 नागरिक कानूनों की दिशा में शून्य उदारता नीति अपनाने से भवन निर्माण उप-नियमों तथा भूमि उपयोग मानदंडों के व्यापक तथा घोर किस्म के उल्लंघनों, जो दिल्ली में इमारत ढाने के कारण बने, को पहले ही रोकने में मदद मिलेगी। ऐसा हो इसके लिए, विकेन्द्रीकृत आधारित सुधारों, जो जेएनएनयूआरएम के अंतर्गत निधि प्रवाह के लिए निबंधनों को बनाते हैं, के अतिरिक्त, सभी तरह के नागरिक उल्लंघनों के विरूद्ध भारी जनचेतना को आलम्ब प्रदान करने के लिए नगरों को प्रेरित तथा प्रोत्साहित करने पर ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है ताकि हमारे विशाल नगरों में जेएनएनयूआरएम जैसी स्कीम के तहत अवसंरचना विकास का सम्मिश्रण वास्तविक नागरिक नवजीवन के साथ हो जाए।

5.5.3.4 सिफारिशें :

(क) भविष्य में आधुनिक विशाल नगरों के रूप में अंतर्राष्ट्रीय स्तर की सुविधाओं तथा सेवाओं के लक्ष्य को पाने के लिए सरकार को करीब 25-30 नगरों (जिनकी जनसंख्या 1 मिलियन से अधिक हो) पुनः विकसित करने के लिए एक कार्य योजना तैयार करनी चाहिए।

(ख) हमारे नगरों में वास्तविक नागरिक नवजीवन को प्रारंभ करने के लिए नागरिक कानूनों के प्रवर्तन के साथ वास्तविक विकास तथा सामान्य कानून प्रवर्तन का संपूरक होने की जेएनएनयूआरएम सरीखी सुधार संबद्ध पहले एक अवसर हैं। हमारे नगरों में अवसंरचनात्मक विकास के अतिरिक्त, नागरिक उल्लंघनों की दिशा में शून्य उदारता कार्यनीति के साथ ऐसे बड़े पूंजीगत निवेश कार्यक्रमों को शहरी विकास हेतु निरपवाद रूप से जुड़ना चाहिए।

(ग) "सार्वजनिक व्यवस्था" पर जैसा कि आयोग की रिपोर्ट में बताया गया है, विभिन्न प्रकार के नागरिक अपराधों में स्तरों तथा प्रचलनों का अनुवीक्षण करने के लिए स्थानीय निकायों के प्रवर्तन विभागों में आधुनिक तकनीक का प्रयोग करते हुए, "शून्य सहयता कार्यनीति" स्थापित की जा सकती है। इनको फिर प्रोत्साहनों तथा आर्थिक दंड की प्रणाली से जोड़ा जा सकता है जिससे इन विभागों में कार्यरत कार्मिकों को जबावदेह बनाया जा सके। अनुशासन लोगों के मन में बैठाने के लिए तथा छोटे नागरिक उल्लंघनों से बचाने तथा भय दिखाकर रोकने के लिए जो अभी वर्तमान में बहुत हद तक नज़रअंदाज कर दिए जाते हैं, तुरंत जुर्माना तथा अन्य छोटे आर्थिक दंड लगाए जाने चाहिएं।

5.5.4 महानगरीय नगरनिगम के लिए प्राधिकार

5.5.4.1 इन नगरों के प्रबंधन में शामिल मुद्दों की श्रेणी तथा जटिलता को मानते हुए, विभिन्न कार्यकलाप जिस तरह से तथा जिस हद तक उनको बांटे जाएं, ये भी अन्य शहरी इलाकों से भिन्न होंगे। नगर को अवसंरचना प्रदान करने तथा सेवाओं को चलाने के लिए उपयुक्त तथा कुशल संस्थागत कार्यतंत्र खोजने के लिए लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को व्यावसायिकता के साथ सम्मिश्रित करना होगा। जैसा कि नीचे विस्तार से दिया गया है, व्यावसायिक, स्वायत्तशासी प्राधिकरणों या समितियों के जरिए स्थानीय शासन के विभिन्न सतहों में सुसंगत, एकीकृत एवं पूर्वसक्रिय उपायों हेतु संस्थागत प्लेटफार्म

का सृजन करने के द्वारा प्रस्तावित दृष्टिकोण बेहतर अवसंरचना व्यवस्थापन तथा सेवाओं की अधिक कुशलता से सुपुर्दगी की ओर ले जाएगा :

1. महानगर पुलिस प्राधिकरण
2. महानगर परिवहन प्राधिकरण
3. महानगर आयोजना समिति
4. महानगर पर्यावरण प्राधिकरण

5.5.4.2 *महानगर पुलिस प्राधिकरण :* सार्वजनिक व्यवस्था पर अपनी रिपोर्ट में आयोग ने निम्नानुसार सिफारिश की थी :

(क) एक मिलियन से अधिक की जनसंख्या वाले सभी नगरों के पास महानगर पुलिस प्राधिकरण होना चाहिए। इस प्राधिकरण के पास समुदाय पुलिस के नियोजन एवं निरीक्षण की पुलिस-नागरिक अंतरापृष्ठ सुधारने, पुलिस की गुणता सुधारने के उपायों को सुझाने, वार्षिक पुलिस योजनाओं का अनुमोदन तथा ऐसी योजनाओं की कार्यप्रणाली की समीक्षा करने की शक्तियां होनी चाहिएं।

(ख) प्राधिकरणों के पास राज्य सरकार, नगर-निगम के पार्षदों, तथा सरकार द्वारा नियुक्त किए जाने वाले निर्दलीय प्रतिष्ठित व्यक्ति सदस्यों के रूप में नामज़द होने चाहिएं। एक निर्वाचित सदस्य को अध्यक्ष होना चाहिए। इस प्राधिकरण को पुलिस के "प्रचालन संबंधी कार्यकलापों" में अथवा स्थानांतरण और तैनातियों के मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। इस बात को सुनिश्चित करने के लिए, यह शर्त लगाई जानी चाहिए कि किसी भी सदस्य के पास न तो कोई कार्यकारी कार्यकलाप होगा और न ही कोई रिकार्ड जांच सकेंगे अथवा मंगा सकेंगे। ज्यों ही प्रणाली स्थापित होती है, इस प्राधिकरण को चरणबद्ध तरीके से अधिक शक्तियों से सम्पन्न किया जा सकेगा।

5.5.4.3 आयोग इन विचारों को पुनः दोहराएगा। इसके अलावा, छोटे शहरी निकायों के लिए भी जैसा प्रस्तावित किया गया है, नगरनिगम एवं नागरिक कानूनों को लागू करने के लिए एक नगरनिगम पुलिस दल का गठन किया जाना अनिवार्य है।

5.5.4.4 *महानगर परिवहन प्राधिकरण* : जैसाकि पहले ही पैराग्राफ 5.6.7.11 में बताया गया है, महानगर क्षेत्र के लिए शहरी परिवहन समाधानों के समन्वय हेतु एक संयुक्त महानगर परिवहन प्राधिकरण के गठन किए जाने की आवश्यकता है। प्राथमिकता के तौर पर अगले वर्ष के भीतर छः सबसे बड़े नगरों में इन्हें स्थापित किया जाना अनिवार्य है।

5.5.4.5 *महानगर आयोजना समिति* : महानगरों के संबंध में समन्वित शहरी योजना के लिए, संविधान में महानगर आयोजना समितियों (एमपीसी) को स्थापित किए जाने की बात बताई गई है। यद्यपि, संविधान कानूनन, एमपीसी के संयोजन के लिए तथा जिस तरह से ऐसी समितियों की कुर्सियां भरी जाएं, राज्य विधान से प्रावधान बनाने की अपेक्षा रखता है, वह यह भी निर्धारित करता है कि एमपीसी के न्यूनतम दो-तिहाई सदस्य नगरनिगम के निर्वाचित सदस्यों तथा महानगर क्षेत्र की पंचायतों के अध्यक्षों में से चुने जाएंगे। यह पहले ही पैराग्राफ 3.7.9.2 में नोट किया जा चुका है कि संविधान के जनादेश के बावजूद, कोलकाता में एमपीसी का गठन किया गया है जिसमें सिर्फ मुख्यमंत्री अध्यक्ष के रूप में हैं जबकि मुंबई के लिए एमपीसी के गठन का प्रस्ताव उन्नत स्तर पर है। महाराष्ट्र एमपीसी अधिनियम यह शर्त रखता है कि एमपीसी अध्यक्ष की नामज़दगी राज्य सरकार करेगी। आयोग का मानना है कि बड़े नगरों के लिए, कोलकाता उदाहरण का अनुपालन उपयोगी रहेगा और एमपीसी के अध्यक्ष के रूप में मुख्यमंत्री हो। यह ऐसे बड़े नगरों के लिए नगर विकास योजनाओं को तैयार तथा कार्यान्वित करने की प्रक्रिया को अपेक्षित संवेग तथा प्राथमिकता प्रदान करेगा तथा जैसाकि मौजूदा कार्यपद्धति है, सीडीपी/मास्टर प्लान को अनुमोदन के लिए राज्य सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने की आवश्यकता का निराकरण करेगा।

5.5.4.6 *महानगर पर्यावरण प्राधिकरण* : शहरी पर्यावरण के प्रबंधन में नागरिक निकायों ने अभी तक विशिष्ट भूमिका नहीं निभाई है। यद्यपि इस कार्य का शहरी स्थानीय निकायों को संपूर्ण प्रत्यायोजन संभव नहीं है, इस दिशा में प्रयास करना होगा। प्रथमतः नगरों की पर्यावरण लेखापरीक्षा की जानी अनिवार्य है। इस संदर्भ में पर्यावरण लेखापरीक्षा पर्यावरण संबंधी कानूनों के अनुपालन तथा सतत विकास के संदर्भ में शहर के पर्यावरण संरक्षण प्रयासों की उपलब्धियों तथा कमियों का सम्मिलित मूल्यांकन होगी। इसके अलावा, पांच मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले प्रत्येक नगर में राज्य सरकार द्वारा यथा उपयुक्त

प्रत्यायोजित की जाने वाली शक्तियों के साथ प्रथमतः शहरी पर्यावरण प्रबंधन हेतु एक पर्यावरण प्राधिकरण की स्थापना की जा सकती है। कुछ कार्यकलाप समय के साथ लघु निकायों को भी प्रत्यायोजित किए जा सकते हैं। वस्तुतः यद्यपि विनियमों का निर्धारण और समग्र निरीक्षण शक्तियां प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड अथवा अन्य किसी उपयुक्त निकाय के पास ही रहेंगी, यथार्थ में वास्तविक प्रयास, जहां तक व्यवहार्य हो, स्वयं नगरपालिका/नगरनिगम द्वारा हाथ में लिया जाए।

5.5.4.7 सिफारिशें :

(क) आयोग की रिपोर्ट में जैसा कि "सार्वजनिक व्यवस्था" पर सिफारिश की गई है, एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले सभी नगरों में समुदाय पुलिस का निरीक्षण करने, पुलिस-नागरिक अंतरापृष्ठ, पुलिस की गुणता सुधारने के उपायों को सुझाने, वार्षिक पुलिस योजनाओं का अनुमोदन तथा ऐसी योजनाओं की कार्यप्रणाली की समीक्षा करने के लिए महानगर पुलिस प्राधिकरण की स्थापना की जानी चाहिए।

(ख) इस रिपोर्ट के पैराग्राफ 5.4.5.15 में की गई सिफारिश के अनुसार, सार्वजनिक परिवहन को अधिभावी प्राथमिकता के साथ सभी बड़े नगरों में शहरी परिवहन समाधानों की समन्वित योजना तथा कार्यान्वयन के लिए एक संयुक्त महानगर परिवहन प्राधिकरण की स्थापना की जानी चाहिए।

(ग) सभी महानगर नगरनिगमों के लिए, जिन्हें 5 मिलियन से जनसंख्या के साथ नगर के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, ऐसे शहरी समूहों के लिए योजना की प्रक्रिया को अपेक्षित संवेग प्रदान करने की नीयत से अध्यक्ष के तौर पर मुख्यमंत्री के साथ महानगर आयोजना समिति का गठन किया जा सकता है।

(घ) पांच मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले सभी नगरों में, एक महानगर पर्यावरण प्राधिकरण स्थापित किए जाने की आवश्यकता है, जिसको राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड तथा संबंधित प्राधिकरणों से शक्तियां राज्य सरकार द्वारा प्रत्यायोजित की जाएंगी। इसकी शहरी सीमाओं के भीतर शहरी पर्यावरण संबंधी प्रबंधन हेतु पर्याप्त शक्तियों से सम्पन्न किया जाना चाहिए।

5.6 शहरी निर्धनता

5.6.1 सिंहावलोकन

5.6.1.1 निर्धनता हमारे देश की घातक तथा व्यथित कर देने वाली विशिष्टता है तथा शहरी क्षेत्रों में मर्मभेदी रूप से दृष्टिगोचर है। यह कि गरीबी उन्मूलन शहरी स्थानीय निकायों की सर्वोच्च प्राथमिकता होनी चाहिए इस बात पर और अधिक बल नहीं दिया जा सकता। कारण स्पष्ट हैं। पहला यह कि समाज के विकास में विषमता आ जाएगी यदि समाज का एक बड़ा वर्ग दयनीय निर्धनता में जिएगा। दूसरा यह कि यदि शहरी निर्धन अपनी आजीविका के लिए हर रोज लगातार जूझते रहे तो वे स्थानीय निकायों के प्रकार्यों में सार्थक तरीके से भागीदार तथा सहयोग नहीं कर पाएंगे। इसके परिणामस्वरूप, निर्धन लोग शहरी स्थानीय निकायों में अपनी आवाज नहीं रख पाते हैं। तीसरा, शहरी निर्धनों के उत्थान से सभी नागरिक अधिक सार्थक रूप से सामाजिक विकास में योगदान कर सकेंगे। कहने का अर्थ है कि, निर्धनता का मतलब हानि, निर्णय लेने में न्यूनतम भूमिका, अवसंरचना और सेवाओं की कम पहुंच तथा संगत सूचना कटी छंटी संक्षिप्त पहुंच/जैसा कि यूएनईएससीएपी बताता है, शहरी निर्धन व्यक्तिगत रूप से नगरों की शासन प्रणाली पर प्रभाव डालने में सबसे कम योग्य होते हैं।[84] संविधान गरीबी उन्मूलन तथा झुग्गी-झोंपड़ी स्तरोन्नयन में शहरी स्थानीय निकायों की महत्वपूर्ण भूमिका को जानता है। अतः संविधान की बारहवीं अनुसूची की अपनी सूची में "गंदी-बस्ती सुधार तथा स्तरोन्नयन" और "शहरी निर्धनता उन्मूलन" शामिल हैं।

5.6.2 लाभार्थियों की पहचान

5.6.2.1 निर्धनता उन्मूलन के लिए अनिवार्यतः शहरी निर्धनों की पहचान करनी होगी ताकि समुचित कार्यनीति तैयार की जा सके। तकरीबन दो-तिहाई शहरी जनसंख्या छोटे शहरों में रहती है और वर्ष 1993-94 के एक अनुमान के अनुसार 50,000 से नीचे जनसंख्या वाले शहरों की जनसंख्या के 43 प्रतिशत लोग निर्धनता रेखा से नीचे थे, जबकि इसकी तुलना में 1 मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले बड़े शहरी केन्द्रों में केवल 20 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता रेखा से नीचे थी। वर्ष 1997-98 में, ये आंकड़े क्रमशः 47 प्रतिशत तथा 27 प्रतिशत पर और ज्यादा अधिक थे[85]। एनएसएसओ सर्वेक्षण[86] के 55वें दौर से प्राप्त उपभोक्ता व्यय आंकड़ों के आधार पर योजना आयोग ने अनुमान लगया था कि वर्ष 1999-2000 में शहरी क्षेत्रों में 23.62 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता रेखा से नीचे रह रही थी। अपने 61वें दौर

84 यूएनईएससीएपी http://www.unescap.org/pdd/publications/urban-poverty/urban-poverty.asp

85 योजना आयोग-दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007) के लिए शहरी विकास समिति की रिपोर्ट।

86 स्रोत : पैरा 11.1, ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) की रिपोर्ट गंदी बस्तियों पर संकेन्द्रण के साथ शहरी आवास पर कार्यदल, आवास व्यवस्था एवं शहरी गरीबी उपशमन मंत्रालय; http:planningcommission.nic.in/aboutus/committee/wrkgrp11/wg11_housing.pdf

में एनएसएसओ द्वारा जारी किए गए आंकड़ों पर, दोनों एकसमान रिकॉल अवधि (यूआरपी) तथा मिश्रित रिकॉल अवधि (एमआरपी) खपत विभाजनों[87] का उपयोग करते हुए योजना आयोग ने वर्ष 2004-05 में निर्धनता की व्याप्ति का अनुमान लगाया था। यूआरपी खपत विभाजन आंकड़े शहरी क्षेत्रों में 25.7 प्रतिशत गरीबी के अनुपात की बात स्वीकारते हैं, जबकि एमआरपी आंकड़े 21.7 प्रतिशत अनुपात की बात स्वीकारते हैं। एमआरपी आधारित अनुमान की तुलना मोटे तौर पर पहले बताए गए वर्ष 1999-2000 के निर्धनता अनुमान से की जा सकती है, जिसमें मध्यवर्ती अवधि[88] में अनुपात में कुछ गिरावट को दर्शाया गया है। यह भी सच है कि शहरी गंदी बस्तियों की जनसंख्या का 68.8 प्रतिशत 300 वर्ग 1[89] शहरों में रह रहा था। इस प्रकार, वर्तमान में मोटे तौर पर शहरी जनसंख्या का पंचमांश से चतुर्थांश निर्धनता रेखा से नीचे रह रहा है। निर्धनता उन्मूलन के लिए स्कीमों को इस तरह से बनाना होगा कि उनका लाभ अधिक से अधिक लोगों तक पहुंच पाए।

5.6.2.2 निर्धनता उन्मूलन स्कीमों के लिए लाभार्थियों की पहचान करने के लिए वर्तमान में विभिन्न पैरामीटरों का उपयोग किया जा रहा है। इस प्रकार, स्व-रोज़गार तथा मजदूरी रोजगार के जरिए शहरी निर्धनता की समस्या का निवारण करने के लिए भारत सरकार की अग्रणी स्कीम, स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना (एसजेएसआरवाई) लाभार्थियों की पहचान[90] के लिए जटिल सात मानदंड दृष्टिकोण अपनाती है। इसके लिए (i) छत, (ii) फर्श, (iii) जल, (iv) स्वच्छता (v) शिक्षा का स्तर, (vi) रोजगार का प्रकार तथा (vii) घर में बच्चों की स्थिति; के आधार पर अंकों का निर्धारण अपेक्षित है। केरल सरकार के गरीबी उन्मूलन मिशन, कुदुम्बाश्री में, संसूचकों के रूप में नौ अलग-अलग मानदंड शामिल हैं, जिन्हें, प्राप्त फीडबैक के आधार पर वर्ष 2000 में संशोधित किया गया था जिससे निम्नलिखित शामिल किए जा सकें। (i) कोई भूमि नहीं या 5 प्रतिशत से कम भूमि, (ii) कोई घर नहीं/जीर्ण-शीर्ण घर, (iii) कोई स्वच्छ शौचालय नहीं, (iv) 150 मीटर के दायरे में स्वच्छ पेयजल की सुविधा नहीं, (v) महिलाओं द्वारा चलाए जा रहे घर-परिवार/विधवा/तलाकशुदा/परित्यक्ता/बिन ब्याही मां की मौजूदगी, (vi) परिवार में किसी भी नियमित रूप से रोजगार प्राप्त हुए व्यक्ति का न होना, (vii) परिवार में मानसिक/शारीरिक रूप से बीमार/पुरानी बीमारी से ग्रस्त व्यक्ति की मौजूदगी, (viii) रंगीन टी.वी.[91] के बिना परिवार/"ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) की रिपोर्ट गंदी बस्ती पर ध्यान संकेन्द्रण के साथ शहरी आवास पर कार्यदल" (आवास प्रबंधन एवं शहरी गरीबी उपशमन मंत्रालय) गरीबों की पहचान के लिए सर्वांगीण सर्वेक्षण की आवश्यकता पर बल देती है। इस ओर ध्यान दिलाया जाता है कि ऐसा सर्वेक्षण नगर विशेष

87 आंकड़ों का एक सेट खपत की सभी वस्तुओं के लिए 30 दिन की रिकॉल अवधि का उपयोग करते हुए एकसमान संदर्भ अवधि पर आधारित है। अन्य सेट पांच यदाकदा खरीदे जाने वाले अखाद्य पदार्थों, नामतः परिधान, जूता, टिकाऊ सामान, शिक्षा तथा सांस्थानिक चिकित्सीय खर्चों के लिए 365 दिन की रिकॉल अवधि तथा शेष खपत के पदार्थों के लिए 30 दिन की रिकॉल अवधि के संदर्भ हेतु लिए गए हैं। इन दो खपत विभाजनों को क्रमशः एकसमान रिकॉल अवधि (यूआरपी) खपत विभाजन तथा मिश्रित रिकॉल अवधि (एमआरपी) खपत विभाजन नाम दिया गया है।

88 स्रोत : योजना आयोग प्रेस विज्ञप्ति दिनांक 21 मार्च, 2007; http://pib.nic.in/release.asp?:relid=26316

पर आधारित होते हुए उस क्षेत्र में शहरी निर्धनों की विशिष्ट परिस्थितियों के साथ सहसंबंध स्थापित करने वाला होना चाहिए तथा पैरामीटर ऐसे हों जो सामान्य जनता के लिए बोधगम्य हों तथा सर्वेक्षण को संचालित करने से पहले उन प्राचलों को सार्वजनिक कर दिया जाना चाहिए। ये रिपोर्ट यह भी सुझाव देती है कि पहचान हो जाने के बाद, लाभार्थियों को बहुउपयोगी कार्ड[92] जारी किए जा सकते हैं। उपर्युक्त से सहमत होते हुए आयोग महसूस करता है कि लाभार्थियों की पहचान करने वाले पैरामीटर ऐसे होने चाहिएं कि सर्वेक्षण के दौरान विषयपरक और सरल तरीके से उनका पता लगाया जा सके जिसमें स्वयं की इच्छा का तत्व न हो। मूलभूत पैरामीटर को राष्ट्रीय स्तर पर सूचित किया जाना चाहिए। पहचान करने की प्रक्रिया दरवाजे-दरवाजे जाकर सर्वेक्षण करने के आधार पर होनी चाहिए तथा सर्वेक्षण में संबंधित क्षेत्र सभा का कम से कम एक सदस्य शामिल होना चाहिए। इस तरह से पहचान किए शहरी निर्धनों को बहुउपयोगी कार्ड जारी किए जाने चाहिएं। इन कार्डों से लाभार्थियों पर निर्धनता उपशमन कार्यक्रमों के असर का अनुवीक्षण करने तथा आप्रवासन या अन्य तरीकों से शहरी निर्धनों में बढ़ोतरी को मापने में भी मदद मिलेगी।

5.6.2.3 सिफारिश :

(क) **शहरी निर्धनों की पहचान करने वाला सर्वांगीण सर्वेक्षण एक वर्ष के भीतर पूरा कर लिया जाना चाहिए। इस तरह से पहचान के लिए उपयोग होने वाले पैरामीटर सरल और बोधगम्य होने चाहिएं, जिसमें मापन विषयपरक हो तो परंतु उसमें विवेकाधिकार की अनुमति न हो। मूलभूत पैरामीटरों को राष्ट्रीय स्तर पर सूचित किया जाना चाहिए। पहचान की प्रक्रिया पर प्रति घर सर्वेक्षण पर आधारित होनी चाहिए तथा सर्वेक्षण दल में सबंधित क्षेत्र सभा का कम से कम एक सदस्य शामिल होना चाहिए। इस तरह से पहचान किए गए शहरी निर्धनों को बहु-उपयोगी कार्ड जारी किए जाने चाहिएं ताकि वे सभी गरीबी उपशमन कार्यक्रमों के अंतर्गत लाभ अर्जित कर सकें।**

5.6.3. निर्धनता उपशमन के उपाय

5.6.3.1 शहरी निर्धनों का मुख्य कारण बेरोजगारी और कम आय है। अतः, निर्धनता उपशमन कार्यक्रम एक ओर निर्धनों के क्षमता निर्माण तथा दूसरी ओर रोजगार के अवसर प्रदान करके समस्या का हल

89 "धारणीय आजीविका के जरिए शहरी निर्धनता उपशमन" पर राष्ट्रीय सम्मेलन - सीआईआई बैंकग्राऊंड पेपर, 15 फरवरी, 2005
90 स्रोतः http://mhupa.gov.in/pdf/guidelines-scheme/urbanemp-povallev/Swarna%20Jayanti/swarnjayanti.pdf
91 स्रोत : 31.08.2007 को निकाली गई फाइल http://www.kudumbashree.org/Publication/Final%20report.doc
92 पैरा 11.5 http:planning Commission.nic.in/aboutus/committee/wrkgrp11/wg11_housing.pdf

खोजता है। यह कार्यक्रम सेवाओं और सुविधाओं को उपलब्ध कराने के द्वारा उनके जीवन के स्तर में सुधार का भी प्रयास करता हैं।

5.6.3.2 रोजगार

5.6.3.2.1 ग्रामीण तथा शहरी भारत दोनों में उच्च गरीबी के स्तरों के साथ, बेरोजगारी में कटौती योजना निर्माताओं तथा प्रशासकों के लिए प्रमुख मुद्दा बन गया है। यह स्पष्ट रूप से ग्रामीण तथा शहरी विभाजक पर रणनीति तथा विशेष दबाव अपेक्षित है। ग्रामीण से शहरी आप्रवासन के आरंभिक समय में बड़े नगरों की अपेक्षा छोटे शहरों में निर्धनता ज्यादा दिखाई देती है।

बॉक्स 5.18 ग्रामीण विकास एवं स्वरोजगार प्रशिक्षण संस्थान

ग्रामीण युवकों को स्वरोजगारयुक्त होने के अवसर दिलाने के लिए एक स्वैच्छिक संगठन ने प्रशिक्षण संस्थानों को स्थापित करने के लिए केनरा बैंक तथा सिडिकेट बैंक के साथ हाथ मिलाया है ताकि युवकों को उनका अपना ठेकेदारी वाला उद्यम स्थापित करने की दक्षता दिलाई जा सके। पुरूषों तथा महिलाओं के लिए अलग-अलग पाठ्यक्रमों के साथ निःशुल्क आवासीय केन्द्र व्यावहारिक दक्षता में प्रशिक्षण देते हैं जो उद्यम स्थापित करने व चलाने में जरूरी है। चाहे वह प्रशिक्षण बिजली के उपकरण आदि की मरम्मत का हो, लघु डेयरी का अथवा अन्य किसी उद्यम का भूतपूर्व छात्रों को भी प्रबंधन और बहियों के रखरखाव की भी ठोस नींव डाली जाती है। नए उद्यमियों को बैंकों द्वारा ऋण उपलब्ध कराया जाता है तथा कारोबार में स्थिरता आने तक परियोजना संकाय द्वारा मार्गदर्शन किया जाता है। रूडसेट मॉडल ने अपने आपको बहुत अधिक प्रभावी साबित किया है।

(आरयूडीएसईटी (रूडसेट)की वेबसाइट से संकलित)।

5.6.3.2.2 विगत में कई कार्यक्रम, जैसे कि नेहरू रोजगार योजना, निर्धनों के लिए शहरी आधारभूत सेवाएं आदि शहरी क्षेत्रों में निर्धनों के उपशमन हेतु तैयार की गई थीं। नेहरू रोजगार योनजा ने तीन स्कीमों के जरिए शहरी निर्धनों को लक्षित किया : (क) शहरी माइक्रो उद्यमों की स्कीम (एसयूएमई) जिसने उनकी कुशलता को निखारने तथा स्वरोजगार के अवसर स्थापित करने में सहायता दी, (ख) शहरी दिहाड़ी रोजगार स्कीम (एसयूडब्ल्यूई) जिसने निर्धनों के श्रम का उपयोग करते हुए उनको दिहाड़ी मजदूरी के अवसर दिए, तथा (ग) आवास एवं आश्रय स्तरोन्नयन (एसएचएएसयू) जिसने निर्धनों को आवास स्तरोन्नत करने में सहायता दी। शहरी आधारभूत सेवाएं कार्यक्रम का उद्देश्य शहरी निर्धनों की जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए सुविधाजनक माहौल तैयार करना था। वर्तमान में, रोजगार पैदा करने के जरिए शहरी निर्धनता में कमी लाने के लिए केन्द्र सरकार के प्रयास स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना (एसजेएसआरवाई) जिसे दिसम्बर, 1997 में आरंभ किया गया था, पर आधारित है। इसके बाद विभिन्न पूर्व कार्यक्रम जैसे नेहरू रोजगार योजना, जिसकी 1989 में शुरूआत की गई थी, तथा निर्धनों हेतु शहरी मूलभूत सेवाओं के लिए कार्यक्रम के साथ प्रधानमंत्री संचालित शहरी गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम आए। मौजूदा स्कीम केन्द्र तथा राज्यों द्वारा 75 : 25 के अनुपात में वित्तपोषित है और इसके दो घटक हैं : (क) शहरी स्वरोजगार कार्यक्रम, तथा (ख) शहरी दिहाड़ी मजदूरी कार्यक्रम।

5.6.3.2.3 यद्यपि एसजेएसआरवाई हेतु नौवीं योजना का आबंटन 1009 करोड़ रुपए था, संघ सरकार द्वारा वर्ष 1997-98 से 2005-06 तक 978.86 करोड़ रुपए जारी किए गए हैं। मोटे तौर पर वर्ष 2001-02 में 38.31 करोड़ रुपए से लेकर 2005-06 तक 155.88 करोड़ रुपए राशि इस कार्यक्रम पर खर्च की गई थी, इसमें वर्ष 1998-99 में खर्च की गई 158 करोड़ रुपए की राशि शामिल नहीं है जो इस नए कार्यक्रम का पहला पूरा साल था तथा इस नए कार्यक्रम के पास उपयोग करने के लिए पिछले कार्यक्रमों की शेष अव्ययित राशि थी। वित्त वर्ष 2006-07 के दौरान, 250 करोड़ रुपए[93] का आबंटन था। दिसम्बर, 2006 तक माइक्रो उद्यमों को स्थापित करने के लिए सहायता प्रदान किए गए लाभार्थियों की संख्या 7.25 लाख थी तथा 9.80 लाख[94] लोगों को प्रशिक्षित किया गया। शहरी क्षेत्रों में महिला एवं बाल विकास घटक (डीडब्ल्यूसीयूए) के अंतर्गत महिलाओं के केवल 54050 दल थे और इस स्कीम के तहत मात्र 201412 महिलाओं की सहायता की गई थी। इसके अलावा, दिसम्बर, 2006[95] तक केवल 178307 थ्रिफ्ट एंड क्रेडिट सोसायटियां बनाई गई थीं। चूंकि शहरी निर्धनों की संख्या 60 मिलियन से ऊपर है, वित्तपोषण का यह स्तर बिल्कुल अपर्याप्त है। महिलाओं की कम संख्या यह दर्शाती है कि उनकी दक्षता को उन्नत करने तथा लाभकारी रोजगार दिलाने के लिए काफी कुछ किए जाने की आवश्यकता है। यूएनएफपीए विश्व जनसंख्या 2007 की स्थिति के अनुसार - *"चूंकि महिलाएं सामान्यतया सबसे निर्धन होती हैं, महिलाओं के विरूद्ध सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा आर्थिक भेदभाव मिटाना सतत विकास के संदर्भ में निर्धनता उन्मूलन के लिए पूर्वपेक्षा है। ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में, शहर महिलाओं को बेहतर शैक्षणिक सुविधाएं तथा नानाविध रोजगार विकल्प प्रदान करते हैं। जल, स्वच्छता, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा परिवहन व्यवस्था जैसी शहरी सेवाओं की सरल एवं अधिक उपलब्धता से महिलाओं को लाभ पहुंचाना निश्चित है; ये सभी सुविधाएं महिलाओं के पुनः उत्पादन, उत्पादन तथा समुदाय कार्य के तिहरे भार को कम कर सकते हैं तथा ऐसा करते हुए, अपने तथा अपने बच्चों और परिवारों के स्वास्थ्य स्तर में सुधार ला सकते हैं।"*

5.6.3.2.4 ऐसी स्कीमें सामान्यतः प्रतिबंधों जैसे कि छोटी परियोजना विशिष्ट सीमा (उदाहरण एसजेएसआरवाई[96] के मामले में 50,000/-रुपए) तथा अभिनव/विशेष परियोजनाओं[97] हेतु थोड़ी गुंजाइश में बंधी हुई होती हैं। यही नहीं, चूंकि शहरी निर्धन अनौपचारिक क्षेत्र का एक भाग होता है, उन्हें औपचारिक प्रणाली के जरिए धन हासिल करने में दिक्कत होती है। औपचारिक प्रणाली तथा साथ ही गैर-सरकारी संगठनों दोनों के माध्यम से माइक्रो-वित्त, निर्धनों के लिए अति-आवश्यक पूंजी पाने में मदद

93 स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट 2006-07, आवास व्यवस्था एवं शहरी निर्धनता उपशमन मंत्रालय

94 -तदैव-

95 -तदैव-

96 -तदैव-

कर सकता है। "माइक्रो-वित्त" की संकल्पना अनिवार्यतः इस आधार वाक्य पर आधारित होती है कि (क) स्वरोजगार/उद्यम निर्धनता उपशमन का व्यावहारिक वैकल्पिक उपाय है; (ख) पूंजी परिसंपत्तियों/ऋण की पहुंच की कमी मौजूदा तथा संभावित माइक्रो-उद्यमों की राह में प्रतिबंध है; तथा (ग) आय का स्तर कम[98] होने के बावजूद निर्धन बचत करने में सक्षम होते हैं। स्व-सहायता समूह के माध्यम से माइक्रो-वित्त सुविधाओं के उपयोग को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। जिन संस्थाओं तथा गैर-सरकारी संगठनों के कार्य करने का बढ़िया रिकार्ड है उनको माइक्रो-वित्त उपलब्ध कराने तथा जरूरी दक्षता दिलाने हेतु प्रशिक्षण देने के लिए प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। सामूहिक कार्यकलाप पूंजी का बेहतर उपयोग करने में मदद करेंगे तथा आपूर्ति और मांग के बाजार के तत्वों की पूरी सूचना से सांस्थानिक मार्गदर्शन भरपूर रखेंगे। आयोग का यह भी मानना है कि ऊपर पैराग्राफ 5.6.2.3 में वर्णित तरीके से एक बार निर्धनों की पहचान हो जाए, तो मिशन मोड दृष्टिकोण अपनाने के द्वारा शहरी निर्धनता उपशमन के मुद्दे पर विधिवत तथा समयबद्ध ढंग से ध्यान दिया जाना होगा। केरल में कदम्बश्री मॉडल की सफलता एक अच्छा उदाहरण है। निर्धनों की दक्षता का स्तरोन्नयन तथा उनको प्रशिक्षित करने पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए। शहरी स्थानीय निकायों की पर्याप्त पश्चगामी और अग्रगामी संयोजन एवं अभिसरण के साथ अपनी निर्धनता उपशमन स्कीमें भी होनी चाहिएं। मांग और आपूर्ति के तत्वों को ध्यान में रखते हुए परियोजना के प्रकार तथा वित्तपोषण की राशि के संबंध में स्कीमों को पर्याप्त नमनीय होना चाहिए। शहरी निर्धनों को प्रशिक्षित करने के लिए, आरयूडीएसईटीआईज के अनुसार (बॉक्स 5.18 देखें) शहरी क्षेत्रों में स्वरोजगार प्रशिक्षण संस्थानों को दोहराया जा सकता है।

5.6.3.2.5 सिफारिशें :

(क) सर्वेक्षणों के जरिए शहरी निर्धनों की पहचान कर लेने के बाद शहरी निर्धनता का समयबद्ध और विधिवत ढंग से उपशमन करने के लिए मिशन मोड दृष्टिकोण अपनाए जाने की आवश्यकता होगी। निर्धनता उपशमन की अन्य स्कीमों के साथ पश्चगामी और अग्रगामी संयोजन और तालमेल के साथ शहरी स्थानीय निकायों की अपनी निर्धनता उपशमन स्कीमें भी हो सकती है।

(ख) शहरी निर्धनता उपशमन स्कीमों का जोर दक्षताओं के स्तरोन्नयन तथा प्रशिक्षित करने पर होना चाहिए। आरयूडीएसईटीआईज की तर्ज पर स्वरोजगार के लिए शहरी निर्धनों को प्रशिक्षण देने के लिए प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किए जा सकते हैं। ये संस्थान दिहाड़ी मजदूरी संबंधी दक्षताओं को विकसित करने में भी सहायता कर सकते हैं।

97 स्रोत : पैरा 11.3, 11वीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) की रिपोर्ट, गंदी बस्तियों पर ध्यान संकेन्द्रण के साथ शहरी आवास व्यवस्था पर कार्यदल, आवास एवं शहरी गरीबी उपशमन मंत्रालय; http:plann?ng comm?ss?on.n?c.?n/ aboutus/comm?ttee/workgrp11/ wg11_hous?ng.pdf

98 स्रोत : http://planningcommmmission.gov.in/aboutus/committee/strgrp/stg_udsc.pdf , पैरा 10.4

(ग) माइक्रो-उद्यमों की स्थापना के मामले में, परियोजनाओं के चयन तथा वित्तीय सहायता प्रदान करने में शहरी निर्धनता उपशमन स्कीमों को लचीला होना होगा।

(घ) माइक्रो-वित्त के लाभों को अधिकाधिक करने के लिए स्व-सहायता समूहों को गठित करने को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। बेहतर कार्य के रिकार्ड वाली संस्थाओं तथा गैर-सरकारी संगठनों को माइक्रो वित्त उपलब्ध कराने के लिए स्व-सहायता समूहों को उन्नत करना चाहिए।

5.6.3.3 साक्षरता

5.6.3.3.1 हमारे शहरी क्षेत्रों में निरक्षरों की संख्या समूची शहरी जनसंख्या की लगभग एक-चौथाई है। वर्ष 2001 की जनगणना आंकड़ों के अनुसार, 81 प्रतिशत गैर-स्लम साक्षरता, जिसमें 87.2 प्रतिशत पुरूष तथा 74.2 प्रतिशत महिलाएं साक्षर हैं, की तुलना में 80.7 प्रतिशत पुरूष तथा मात्र 64.4 प्रतिशत महिला साक्षरता के साथ स्लम में 73.1 प्रतिशत साक्षरता है। एक-तिहाई शहरी स्लम महिलाओं ने लिखना और पढ़ना नहीं सीखा है। वर्ष 2005 की तीसरी तिमाही में किए गए आईएमआरबी अध्ययन के अनुसार, देश में स्कूल से बाहर कुल 134 लाख बच्चों में से शहरी क्षेत्रों में लगभग 21 लाख बच्चे (पात्र जनसंख्या का 4.34%) स्कूल से बाहर थे।

5.6.3.3.2 शहरी निर्धनों के लिए शैक्षणिक सुविधाएं आमतौर पर असंतोषजनक हैं क्योंकि शहरी निर्धन स्लम में एकत्रित हैं जहां जगह की बेहद कमी है। जैसे पहले बताया गया है, स्वच्छता, जल आपूर्ति, बिजली आपूर्ति जैसी नागरिक सेवाएं भी इन क्षेत्रों में खराब हैं। अधिकतर घरों के पास जमीन की समुचित हकदारी नहीं है और स्कूलों जैसी सार्वजनिक सुविधाओं के निर्माण के लिए मुश्किल से ही कोई जगह है। कम पारिवारिक आय भी इनके बच्चों को स्कूल जाने से वंचित करती है। यही नहीं, विविध प्रकार की आबादी जिनमें कुछ वंचित वर्ग जैसे बाल श्रमिक, कूड़ा बीनने वाले, फुटपाथ पर रहने वाले, आप्रवासी आदि भी हैं जो समस्या को और अधिक बढ़ा देते हैं। उन क्षेत्रों में समस्याएं और भी विकट हैं जिनकी पहचान स्लम के तौर पर नहीं है। ऐसे इलाकों में किसी तरह की नागरिक सुविधाएं देने में नगर प्राधिकरण हिचकिचाते हैं।

5.6.3.3.3 अतः, आयोग महसूस करता है कि निर्धन शहरी क्षेत्रों में केवल शिक्षा प्रदान करने से काम नहीं चलेगा बल्कि सामाजिक-आर्थिक विकास तथा शिक्षा के बीच मिलाप करना होगा। ये मिलाप स्थानीय

निकायों द्वारा लाया जा सकता है। नगरपालिका निकायों को सुनिश्चित करना चाहिए कि ऐसे क्षेत्रों में तत्काल आधारभूत सेवाएं उपलब्ध कराई जाएं तथा यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि स्कूलों को स्थापित करने के लिए पर्याप्त जगह प्रदान की गई है। शिक्षा योजना एक नगर की विकास योजना का अनिवार्य भाग होना चाहिए। भीड़भाड़ वाले इलाकों में, पालियो में स्कूलों का संचालन, समुदाय भवनों में स्कूलों का संचालन, निःशुल्क परिवहन उपलब्ध कराना, अवकाश आदि के दिनों में स्कूलों का संचालन जैसे अभिनव दृष्टिकोण अपनाए जाने चाहिएं। "शिक्षा" के संबंध में अन्य मुद्दों पर इस रिपोर्ट के पैराग्राफ 5.4.4.1 में परिचर्चा की गई है।

5.6.3.3.4 सिफारिश :

(क) शिक्षा योजना नगर की विकास योजना का अभिन्न भाग होना चाहिए।

5.6.3.4 स्वास्थ्य एवं पोषाहार

5.6.3.4.1 अनुमान दर्शाते हैं कि पीड़ा बताने वाले सभी शहरी निर्धनों के 13 प्रतिशत लोगों को इलाज प्राप्त नहीं होता है। समुचित चिकित्सा सेवा[99] प्राप्त करने में निर्धनता मुख्य अवरोध है। "शहरी स्वास्थ्य देखभाल की रणनीतियां" पर एनएचआरएम को सलाह देने के लिए स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के कार्यदल की रिपोर्ट, अन्य बातों के साथ-साथ, दर्शाती है कि पांच वर्ष से कम आयु के बच्चों के संबंध में शिशु और नवजात शिशु मृत्यु दर राष्ट्रीय और राज्य औसतों की तुलना में शहरी निर्धनों के बीच काफी अधिक है। लगभग 60 प्रतिशत प्रसूतियां झुग्गी-झोंपड़ी माहौल में "घर" में होती है तथा आधे से ज्यादा शहरी गरीब बच्चे कमवजनी और/अथवा अविकसित है। शहरी निर्धनों की स्थिति अधिकाधिक सुधारने के लिए आयोग महसूस करता है कि शहरी स्थानीय निकायों को प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा केन्द्रों को अपनाने की संकल्पना करनी चाहिए जिस प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में किया जा रहा है। इन केन्द्रों को स्लम क्षेत्रों में अधिमानता देना चाहिए जहां शहरी निर्धन बहुतायत में होते हैं तथा आईएमआर और एमएमआर में कमी लाने पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए समुदाय आधारित सहायक स्वास्थ्य कार्मिकों को शामिल करना चाहिए। "स्वास्थ्य एवं पोषाहार" से संबंधित प्रमुख मुद्दों पर इस रिपोर्ट के पैराग्राफ 5.4.4.2 में परिचर्चा की गई है।

बॉक्स 5.19 : स्वास्थ्य एवं स्वच्छता

निर्धन लोग अस्वास्थ्यकर माहौल में रहते हैं। साफ-सफाई की कमी, स्वच्छ पेयजल की कमी, भीड़भाड़ तथा रहने और कार्य करने के माहौल में वायुसंचार भली प्रकार न होने तथा वायु और औद्योगिक प्रदूषण से स्वास्थ्य संबंधी खतरे पैदा होते हैं। अपर्याप्त खुराक स्लम निवासियों की रोग प्रतिकारक शक्ति को घटाती है, खासकर इसलिए कि वे लगातार रोगमूलक सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति में जीते हैं।

स्रोत : *यूएनएफपीए विश्व जनसंख्या 2007 की स्थिति*

99 "लगभग 72 प्रतिशत शहरी अमीर आरोप लगाते हैं कि उनकी जो बीमारियां गंभीर नहीं हैं वे उनका ईलाज नहीं ले पाते हैं, जबकि इसी कारण से 48 प्रतिशत शहरी गरीब इत्तफाक रखते हैं। सुविधाओं की कमी को भी शहरी गरीबों को नहीं मिल पाए ईलाज के महत्वपूर्ण कारण के रूप में नहीं दर्शाया जाता है। आश्चर्य नहीं कि किसी प्रकार का इलाज नहीं पाने वाला हर तीसरा गरीब अपना इलाज नहीं हो पाने के कारण का आरोप निधियों की कमी पर मढ़ता है। अमीरों के मामले में यह संख्या दस में से एक है।" भारत अवसंरचना रिपोर्ट, 2006

5.6.3.4.2 सिफारिश :

(क) शहरी स्थानीय निकायों को शहरी निर्धनों, विशेषकर महिलाओं तथा बच्चों को स्वास्थ्य और चिकित्सीय सुविधाएं प्रदान करने के लिए सहायक स्वास्थ्य कार्मिकों की मदद से "प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा" की संकल्पना को अपनाना चाहिए। इन सुविधाओं का प्रबंध विशेष तौर पर स्लम क्षेत्रों में रह रही आबादी के लिए करना चाहिए।

5.6.3.5 शहरी क्षेत्रों में गंदी बस्तियां

5.6.3.5.1 वर्ष 2002[100] में किया गया शहरी गंदी बस्तियों पर एनएसएसओ सर्वेक्षण दर्शाता है कि लगभग 9 मिलियन परिवार, जो शहरी परिवारों का करीब 14% हैं, गंदी बस्तियों का निवासी हैं। वर्ष 1993 के दौरान एनएसएसओ द्वारा गंदी बस्तियों के पहले किए गए राष्ट्रव्यापी सर्वेक्षण के अनुसार अनुमानतः शहरी गंदी बस्तियों की कुल संख्या 56311 है जिसमें से 36% अपने-अपने स्थानीय निकायों द्वारा अधिसूचित किए गए थे। वर्ष 2002 के सर्वेक्षण में 52,000 गंदी बस्तियों की संख्या अनुमानित है, जो स्थिति दस वर्ष पहले थी उसमें कटौती। 2002 के अध्ययन में लगभग 51 प्रतिशत गंदी बस्तियों को अधिसूचित किया गया था, लेकिन उसमें 65 प्रतिशत आबादी शामिल हुई। महत्वपूर्ण बात यह है कि गंदी बस्ती के लगभग 11 प्रतिशत घरों में पेयजल, शौचालयों या बिजली की कोई सुविधा नहीं थी।

5.6.3.5.2 गंदी बस्तियों के निवासियों की आबादी एक अच्छी परोक्षी है, किन्तु शहरी निर्धनता का एक सटीक संसूचक नहीं है। कुछ, जिनकी कमाई 1 अमरीकी डालर प्रतिदिन से अधिक हो सकती है – गरीबी और भूख का मिलेनियम विकास लक्ष्य मानदंड, जैसा कि पहले बताया गया है, बेहतर, वहन करने योग्यता आवास की इच्छा से गंदी बस्ति में ही रह रहे होंगे। कई शहरी गंदी बस्तियों में टेलीविजन एंटीना दर्शाते हैं कि इन टेलीविजन सेटों के मालिक संभवतः बीपीएल व्यक्ति नहीं हैं। रिपोर्ट के मुताबिक धारावी में महीने के लिहाज से आय 300 रुपए से 3,00,000 रुपए महीना[101] है। अहम बात है कि यद्यपि गरीबी रेखा से नीचे कुल शहरी जनसंख्या 1987-88 में 75.2 मिलियन से गिरकर 1999-2000 में 67.1 मिलियन हो गई है तथा उसी अवधि में निर्धनता अनुपात 38.2 प्रतिशत से 23.6 प्रतिशत हो गया है, समग्र शहरी गंदी बस्तियों की जनसंख्या 1981 में 26 मिलियन से बढ़कर वर्ष 1991 में 46.2 मिलियन और उसके बाद वर्ष 2001 में 61.8 मिलियन हो गई है। मुंबई मल निकासी निपटान परियोजना के लिए किए गए एक ताजे सर्वेक्षण ने पाया कि शहर में 42 प्रतिशत गंदी बस्तियों के निवासियों के पास 10 वर्ग मीटर से भी कम जगह है तथा केवल 9 प्रतिशत के पास 20 स्केयर मीटर से ज्यादा जगह है। गंदी बस्तियों

100 प्रतिदर्श में 360 अधिसूचित और 332 अनधिसूचित गंदी बस्तियां शामिल की गई थीं।

101 धाराबी : अव्यूक्रॉम बिलो, गुड गवर्नेन्स इंडिया पत्रिका, खंड 2 सं0 1 जनवरी-फरवरी, 2005 जोकि, अध्यक्ष, राष्ट्रीय स्लम निवासी परिसंघ, मुंबई, शीला पटेल, निदेशक, क्षेत्रीय संसाधन केन्द्रों के उन्नयन हेतु सोसायटी (एसपीएआरसी), मुंबई , सुंदर बुरा, सलाहकार, क्षेत्रीय संसाधन केन्द्रों के उन्नयन हेतु सोसायटी (एसपीएआरसी), मुंबई।

में लगभग आधे से ज्यादा परिवार साझी खड़ी पाइपों से अपना पानी लेते हैं तथा मात्र 5 प्रतिशत के पास पानी अपने नलों के जरिए सीधे घरों तक पहुंचता है। शहर की साफ-सफाई संबंधी परिस्थिति तो और भी चिन्ताजनक थी : शहर की गंदी बस्तियों के 73 प्रतिशत जिनमें 3.86 मिलियन निवासी बसते हैं - सिर्फ सार्वजनिक शौचालयों पर निर्भर हैं। यही नहीं, अत्यधिक उपयोग और खराब रखरखाव ने सार्वजनिक शौचालयों को स्वास्थ्य के लिए खतरा बना दिया है, खास कर उन क्षेत्रों में जहां प्रयोगकर्ता अपरिभाषित थे। गंदी बस्तियों की आबादी के एक प्रतिशत से भी कम लोगों की पहुंच निजी शौचालयों अथवा निजी अभिकरणों या गैर-सरकारी संगठनों[102] द्वारा निर्मित प्रति-प्रयोग भुगतान शौचालयों तक है।

बॉक्स 5.20 : गंदी बस्तियों के निवासियों का स्व-सथाने पुनर्वास-तेहखंड परियोजना

दक्षिण दिल्ली के तेहखंड क्षेत्र में, दिल्ली विकास प्राधिकरण (डीडीए) ने एक अनूठी स्लम पुनर्वास परियोजना में सरकारी-निजी भागीदारी आधार पर प्रतिभागिता के लिए निजी भवन निर्माताओं से वर्ष 2006 में बोलियां आमंत्रित कीं। परियोजना उन स्लम निवासियों के पुनर्वास हेतु 3,500 (ईडब्ल्यूएस) घरों का निर्माण करने के लिए थी जो परियोजना स्थल के एक हिस्से पर बसे हुए थे। उनको निर्धारित कवरित क्षेत्र तथा विशेष विवरणों के साथ पुनर्वास आवासीय इकाइयां दी जाएंगी तथा प्रीमियम वर्ग के अधिकतम 750 घरों को (निःशुल्क बिक्री घर) 14.3 हेक्टेयर के कुल परियोजना क्षेत्र पर, निर्धारित मानदंडों के अनुसार अन्य कई सुविधाओं हेतु परियोजना स्थल के विकास के साथ-साथ बनाने की अनुमति दी जाएगी। परियोजना के भागीदार होने का आरक्षित मूल्य 204.4 करोड़ रुपए नियत किया गया था। स्लम निवासियों के लिए 3500 इकाइयों वाले पुनर्वास आवासीय घटक हेतु पांच मंजिली ब्लॉक में न्यूनतम 28 वर्ग मीटर क्षेत्र प्रति इकाई निर्धारित किया गया था। स्लम निवासियों को आवास के स्वीकार्य मानकों वाले घर मिलें, यह सुनिश्चित करने के लिए ईडब्ल्यूएस इकाइयों के लिए भी न्यूनतम विशिष्ट विवरण निर्धारित किए गए थे। इसके अतिरिक्त, भवन निर्माताओं द्वारा अनुपालन के लिए प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा स्थल, समुदाय केन्द्र, धार्मिक स्थल तथा पुलिस स्टेशन तथा साथ में उद्यान एवं सुविधा स्टोर सहित सांस्थानिक सुविधाओं का ले-आउट में विशेष रूप से प्रावधान किया गया था। ईडब्ल्यूएस आवास व्यवस्था को परस्पर आर्थिक सहायता देने के लिए; भवन निर्माताओं को अधिकतम कुल निर्मित क्षेत्र 80,000 वर्ग मीटर और अधिकतम भूमि कवरेज 15,000 वर्ग मीटर के साथ निःशुल्क बिक्री हेतु अधिकतम 750 प्रीमियम वर्ग के फ्लैट्स का निर्माण करने की अनुमति दी गई थी। निःशुल्क बिक्री आवासीय क्षेत्र के लिए भी स्कूल, उद्यान आदि सांस्थानिक सुविधाओं के लिए ले-आउट दिया गया था। भवन निर्माता से कॉम्प्लेक्स के भीतर विद्युतीय सब-स्टेशन तथा पेयजल आपूर्ति समेत अन्य सर्विस लाइनों सहित सभी अवसंरचना सुविधाएं दी जाने की अपेक्षा की गई थी।

5.6.3.5.3 स्लम निवासियों को कई "शहरी अर्थदंडों "[103] को भुगतना पड़ता है। अनिवार्य सेवाओं - स्वास्थ्य, स्वच्छता, शिक्षा पर इतना अधिक भार है कि ये उपलब्ध भी होती हैं तो गरीबों की पहुंच से दूर होती हैं। आवासीय व्यवस्था के हालात भी बहुत खराब हैं क्योंकि भूमि हकदारियों में गड़बड़ियां पुनर्विकास को मुश्किल बना देती हैं। सीमावर्ती जमीनों पर झुग्गी-झोंपड़ियों की अवस्थिति उन्हें हादसों के प्रति सुभेद्य बना देती हैं, जो जब होते हैं तो बहुत लोग मरते हैं क्योंकि वहां जनसंख्या बहुत घनी होती है। निर्धनता की वजह से बच्चे, खासकर लड़कियां स्कूल नहीं जा पातीं क्योंकि उन्हें कमाने के लिए जाना होता है। विपरीत परिस्थितियों के साथ बेरोजगारी की ऊंची दर तथा कमजोर

102 संयुक्त राष्ट्र (यूएन) पर्यावास विश्व नगरों की स्थिति 2006/7
103 संयुक्त राष्ट्र (यूएन) पर्यावास विश्व नगरों की स्थिति 2006/7

शासन, अक्सर इन गंदी बस्तियों को अपराधियों को फलने-फूलने की आधारभूमि बना देती है। इन समस्त "जुर्मानों" के अलावा, ये गंदी बस्तियां शहर की आर्थिक वृद्धि में योगदान करती हैं, क्योंकि लगभग सभी तरह के कार्यों के लिए यहां से श्रमिक सस्ते में मिल जाते हैं।

5.6.3.5.4 जैसाकि यूएनएफपीए रिपोर्ट - विश्व जनसंख्या 2007 की स्थिति में बताया गया है - बेदखली और भेदमूलक तरीकों से निर्धनों को शहर से बाहर खदेड़ देना कोई इलाज नहीं है। शहरी निर्धनों को शहरी समाज के तांते में धुल-मिलकर एक होने में मदद करना ही गरीबी के बढ़ते हुए शहरीकरण का एकमात्र ठोस समाधान है। रिपोर्ट में कुछ गलत अवधारणाएं सामने आई हैं - (i) मुख्यतः ग्रामीण-शहरी आप्रवासी शहरी निर्धनता के लिए जिम्मेदार हैं; (ii) निर्धन आर्थिक स्थिति को शक्तिहीन बनाते हैं; तथा (iii) बेहतर रहेगा यदि आप्रवासी ग्रामीण क्षेत्रों में ही रहें। सच तो यह है कि ग्रामीण शहरी आप्रवास को नियंत्रित करने के प्रयासों से न केवल निजी अधिकारों का हनन होता है अपितु समग्र विकास भी अवरूद्ध होता है। इस रिपोर्ट से यह ठीक ही निष्कर्ष निकलता है कि पर्याप्त घरों की कमी शहरी निर्धनता की जड़ है तथा इस क्षेत्र में बेहतर नीतियां बनाने से ही लोगों के जीवन में सुधार लाया जा सकता है।

5.6.3.5.5 *गंदी बस्ती विकास* : अभी हाल ही तक गंदी बस्ती विकास से संबंधित दो स्कीमें आवास प्रबंधन एवं शहरी निर्धनता उपशमन मंत्रालय में मौजूद थीं। पहली थी राष्ट्रीय गंदी बस्ती विकास कार्यक्रम (अब चालू नहीं), दूसरी बाल्मिकी अम्बेडकर आवास योजना (वैम्बे) वैम्बे तथा समाप्त एनएसडीपी, दिसम्बर, 2005 में जेएनएनयूआरएम के साथ शुरू की गई नई स्कीम, एकीकृत आवासीय एवं गंदी बस्ती विकास कार्यक्रम (आईएचएसडीपी) में सन्निविष्ट कर ली गई हैं।

5.6.8.5.6 अगस्त, 1996 में शुरू किए गए राष्ट्रीय गंदी बस्ती विकास कार्यक्रम (एनएसडीपी) के तहत शहरी गंदी बस्तियों के विकास हेतु राज्यों/संघ शासित प्रदेशों को अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता (एसीए) प्रदान की गई थी। सामुदायिक अवसंरचना तथा स्कूल-पूर्व शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा, वयस्क शिक्षा, मातृत्व, टीकाकरण सहित शिशु स्वास्थ्य और प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा आदि जैसी सामाजिक सुविधाओं में सुधार लाने के अलावा, जल आपूर्ति, स्टार्म वाटर ड्रेन्स, सामुदायिक स्नान, मौजूदा सड़कों को चौड़ा करना और फुटपाथ बनाना, मल-जल निकासी, सामुदायिक शौचालयों, गलियों में बिजली की रोशनी आदि वास्तविक सुविधाएं प्रदान करने के द्वारा शहरी स्कीमों का स्तरोन्नयन करना इस कार्यक्रम का उद्देश्य था।

5.6.3.5.7 वर्ष 2005-06 में एनएसडीपी को समाप्त किया गया था, इस कार्यक्रम के अंतर्गत राज्यों तथा संघ शासित क्षेत्रों को कुल 3089.63 करोड़ रुपए की राशि जारी की गई थी। रिपोर्टों के अनुसार, 2496.18 करोड़ रुपए की राशि दी गई है तथा इस कार्यक्रम से कथित रूप से लगभग 4.58 करोड़ गंदी बस्तियों के निवासियों को लाभ पहुंचा है। आईएचएसडीपी के अंतर्गत दिसम्बर, 2006 तक, 101 परियोजनाएं अनुमोदित हुई थीं और 408.52 करोड़ रुपए की केन्द्रीय सहायता जारी की गई थी[104]।

5.6.3.5.8 वाल्मिकी अम्बेडकर आवास योजना (वैम्बे) की शुरूआत वर्ष 2001 में निर्धनता रेखा से नीचे जी रहे शहरी गंदी बस्तियों के निवासियों को पर्याप्त ठिकाना देने के लिए की गई थी। गंदी बस्तियों के निवासियों के लिए विशेष रूप से बनी अपनी तरह की यह पहली स्कीम थी, जिसमें 50 प्रतिशत भारत सरकार की थी; शेष 50 प्रतिशत की हुडको और कहीं से भी राज्य सरकार द्वारा व्यवस्था की जानी थी, इसमें घरों/सामुदायिक शौचालयों दोनों के लिए लागत सीमा निर्धारित की गई थी। इस स्कीम में प्रस्तावों को राज्य सरकारों के नोडल अभिकरणों द्वारा हुडको को प्रस्तुत किया जाना अपेक्षित था, जो बाद में, संसाधित करके अपनी संस्तुतियों के साथ इस मंत्रालय को भेजता। वर्ष 2005-06 का आर्थिक सर्वेक्षण टिप्पणी करता है कि *"इसकी शुरूआत से लेकर 31 दिसम्बर, 2005 तक इस स्कीम के अंतर्गत 4,11,478 मकानों तथा 64,247 शौचालयों के निर्माण/स्तरोन्नयन के लिए 866.16 करोड़ रुपए केन्द्रीय सब्सिडी के तौर पर जारी किए गए थे। वर्ष 2005-06 के लिए दिसम्बर, वर्ष 2005 तक, 249 करोड़ रुपए के अस्थायी केन्द्रीय आबंटन में से 60,335 मकानों तथा 381 शौचालयों को शामिल करते हुए 96.4 करोड़ रुपए की राशि जारी की गई थी।"* ये संख्याएं, खासकर शौचालयों की, अफसोसजनक हालात बयान करती हैं, क्योंकि राष्ट्रीय अपेक्षाओं की तुलना में उपलब्धियां बहुत थोड़ी हैं।

5.6.3.5.9 शहरी निर्धनों के लिए आवास प्रबंधन हेतु किया गया कुल आबंटन पूरी तरह से अपर्याप्त है तथा शहरी निर्धनों के लिए मकानों की कमी को पूरा करने के लिए इसमें काफी वृद्धि की जानी अनिवार्य है। वर्तमान स्कीम की सरकार को समीक्षा करनी चाहिए तथा निर्धनों के लिए आवासीय प्रबंध की दिशा की ओर बढ़ना चाहिए, जिसके लिए गंदी बस्तियों को सुधारने पर पूरा ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। अलग-अलग झुग्गी पर खर्च करने की बजाय ये आवश्यक होगा कि गंदी बस्तियों के समूचे क्षेत्र में सुधार लाया जाए। मुख्य दृष्टिकोण को एक संयुक्त कार्यक्रम में ढाले जाने की आवश्यकता है। अगर यह मानकर चला जाए कि गंदी बस्तियों में निजी तौर पर संपत्ति की कोई हकदारी नहीं है, तो प्राधिकरणों के पास इस बात की गुंजाइश है कि समूचे क्षेत्र को शामिल करते हुए सरलता से एक संघटित, सामाजिक रूप से समाविष्ट कॉलोनी तैयार कर सकें। एक अनिवार्य सहूलियत के रूप में अस्थायी आवास की आवश्यकता पर बेशक विचार किया जाना है।

104 स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट 2006-07, आवास एवं शहरी निर्धनता उपशमन मंत्रालय, पृष्ठ 13

5.6.3.5.10 भारत के बड़े नगरों में बेशक सभी शहरी क्षेत्रों में, स्थावर संपदा के दामों में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। इससे सरकार तथा शहरी प्राधिकरणों के लिए निजी भवन निर्माताओं को शामिल करने के अवसर का सृजन होता है कि वे गंदी बस्तियों के निवासियों को आवास उपलब्ध कराएं और भूमि के एक भाग को अपने लाभ हेतु बॉक्स 5.18 में जैसा कि दर्शाया गया है, प्रयोग करें, जिस प्रकार धारावी में प्रयास किया जा रहा है।

5.6.3.5.11 आयोग ने इस जटिल मुद्दे पर काफी विचार किया तथा यह सिफारिश करता है कि गंदी बस्तियों के विकास नीतियों अथवा विशिष्ट स्कीमों को तैयार करते समय निम्नलिखित सुझावों को ध्यान में रखा जा सकता है :

(क) गंदी बस्तियों के पुनर्विकास के लिए सभी परियोजनाओं को गंदी बस्तियों के निवासियों और उनके प्रतिनिधियों के साथ पर्याप्त खुलासे तथा चर्चा के बाद ही अंतिम रूप दिया जाना अनिवार्य हो। इसका मतलब यह नहीं कि निवासियों की सभी मांगों को स्वीकार लिया जाए। आयोग "दोनों ओर" की संकुचित अथवा निहित स्वार्थों की संभावना के बारे में जानता है तथा यह भी कि नगर के बड़े मुद्दे जैसे कि पर्यावरण प्रबंधन अथवा यातायात जरूरतों का भी निराकरण किया जाना अनिवार्य है। फिर भी लाभार्थियों की महसूस की जाने वाली आवश्यकताओं को नोट किया जाना चाहिए और उनकी हर बात को सिरे से नकारने के दृष्टिकोण को नहीं अपनाना चाहिए।

(ख) लाभार्थियों को जितना संभव हो उतना अधिक जमीनी क्षेत्र प्रदान किया जा सकता है। इसमें संयुक्त अथवा इकलौते परिवार की भी निजता की जरूरतों का भी ख्याल रखा जाना अनिवार्य है। प्रति आवासीय इकाई के क्षेत्र का विस्तार बहु-मंजिल आवासीय व्यवस्था से किया जा सकता है, अन्य सुविधाओं और हरियाली के एकमात्र प्रयोजन के लिए जितनी संभव हो सके उतनी जगह बचाकर रखने के लिए यदि आवश्यक हो तो मौजूदा एफएसआई मानदंडों में छूट दी जा सकती है। गंदी बस्ती/निर्धन आवासीय पुनर्निर्माण पर चार मंजिलों की मौजूदा सीमा की भी समीक्षा किए जाने की आवश्यकता है।

(ग) लाभ आधारित विकास हेतु भूमि की केवल छोटी सी प्रतिशतता का ही प्रस्ताव किया जा सकता है तथा आवश्यकता की सभी सार्वजनिक जगहों का स्कीम में निर्माण किया जाना

अनिवार्य है। उपलब्ध कराई जाने वाली सुविधाओं में संपूर्ण स्वच्छता, पर्याप्त जल आपूर्ति, तथा स्थान, अवस्थिति, आबादी और मौजूद सुविधाओं से नजदीकी जैसे कारकों पर निर्भर होते हुए; स्कूल, क्रेच, पुस्तकालय, औषधालय, सांस्कृतिक कार्यकलाप केन्द्र, परिवहन शेल्टर तथा संगत नागरिक कार्यालय।

(घ) आवासीय इकाई की लागत राशि की लघु प्रतिशतता लाभार्थी से वसूली जा सकती है। पुनर्निर्माण के लाभ भी होते हैं तथा उनसे जुड़ी लागतों का कुछ हद तक गंदी बस्ती के निवासी द्वारा भुगतान किया जाना अनिवार्य है, यदि वह उन लाभों का उपयोग करने की इच्छा रखता है।

5.6.3.6 शहरी निर्धन हेतु भूमि उपयोग आरक्षण

5.6.3.6.1 वर्तमान गंदी बस्तियों के पुनःरेखन तथा पुनर्विकास के अलावा, इस बात की उम्मीद रखनी होगी कि और अधिक आप्रवास तथा जनसंख्या वृद्धि और अधिक स्लमों को सृजित कर सकती है। इससे बचने के लिए, तथा निर्धनों हेतु आवासीय स्टॉक को सुधारने के लिए, शहरी निर्धनों के लिए प्रत्येक शहर और नगर में भूमि के कुछ प्रतिशत को अभिचिन्हित तथा आरक्षित रखे जाने की आवश्यकता है। इसको स्थानिक नियोजन प्रक्रिया का भाग होना तथा साथ ही निजी भवन निर्माताओं पर लागू होना अनिवार्य है। यदि एक विशिष्ट निर्माण निर्धनों हेतु आवास आबंटित नहीं कर सकता, तो भवन निर्माता को, अपनी लागत पर, प्राधिकरणों को स्वीकार्य अन्य किसी उपयुक्त स्थान में उचित आवासीय व्यवस्था प्रदान करना अनिवार्य है। प्रस्तावित राष्ट्रीय शहरी आवासीय व्यवस्था तथा पर्यावास नीति 2007 में, नई सार्वजनिक/निजी आवासीय कॉलोनियों समेत सभी स्तरों पर वहन करने योग्य दरों पर आर्थिक रूप से कमजोर तथा कम आय वाले समूह के लिए भूमि का एक भाग अभिचिन्हित करने का प्रावधान है। आर्थिक रूप से कमजोर तथा कम आय वाले समूह[105] के लिए 20-25 प्रतिशत आवासीय इकाइयों को समायोजित करने के लिए भूमि क्षेत्र 10-15 प्रतिशत हो सकता है। इस प्रकार, तदर्थ कार्यवाही से बचने के लिए इस संबंध में नीति एवं नियमों को स्पष्ट रूप से निर्धारित करना अनिवार्य है।

5.6.3.6.2 *पटरी पर रहने वालों के लिए आश्रय* : पटरी पर बसने वालों की स्थिति गंदी बस्ती में रहने वालों से भी बदतर होती है और निर्धनों के लिए आवासीय आयोजना करते समय अक्सर उनकी अनदेखी होती है। आयोग इसके विस्तार में नहीं जाना चाहता, परंतु गंदी बस्ती के निवासियों हेतु आवासीय

105 यह राज्य मंत्री (स्वतंत्र प्रभार) आवास एवं शहरी निर्धनता उपशमन मंत्रालय द्वारा 26 अप्रैल, 2007 को राज्य सभा सांसद श्रीमती सुप्रिया सुले द्वारा पूछे गए प्रश्न के उत्तर में कहा गया था (स्रोत : http://pib.nic.in/release/release.asp?relid=27157)

व्यवस्था के साथ-साथ सभी कार्यक्रमों के एक हिस्से में पटरी पर रहने वालों के लिए आवास व्यवस्था शामिल की जानी अनिवार्य है। तात्कालिक आवश्यकता रात्रि आश्रय स्थल के निर्माण करने की है, जिन्हें राज्य सरकारों और नागरिक निकायों द्वारा बनाया जा सकता है, और इनको संचालन के लिए गैर-सरकारी संगठनों को सौंपा जा सकता है। सभी नगरों में विस्तृत कार्यक्रम बनाए जाने की आवश्यकता है, बड़े नगरों जिनके पास कार्यान्वयन के लिए महानगरीय तथा नगरनिगम होते हैं, से शुरूआत की जा सकती है।

5.6.3.6.3 सिफारिशें :

(क) गंदी बस्ती के क्षेत्रों का संपूर्ण पुनर्विकास करना होगा। पुनर्विकास करते समय, यह सुनिश्चित करना चाहिए कि स्कूलों, स्वास्थ्य केन्द्रों, साफ-सफाई आदि के लिए पर्याप्त प्रावधान किया गया है।

(ख) गंदी बस्ती के पुनर्विकास के लिए, नीति अथवा विशिष्ट स्कीम बनाते समय पैरा 5.6.3.5.11 में सुझाए गए दृष्टिकोण पर विचार किया जा सकता है।

(ग) यह आवश्यक है कि शहरी निर्धनों के लिए प्रत्येक शहर तथा नगर में भूमि परियोजना की कुछ प्रतिशतता अभिचिन्हित और आरक्षित की जाए। यदि निर्माण में निर्धनों के लिए आवासीय आबंटन नहीं किया जा सकता हो, तो भवन निर्माण को, अपनी लागत पर, प्राधिकरणों को स्वीकार्य अन्य किसी उपयुक्त स्थान पर उचित आवास व्यवस्था प्रदान करना अनिवार्य है।

(घ) रात्रि आश्रयस्थलों के प्रावधान के लिए सभी नगरों में एक विस्तृत कार्यक्रम बनाए जाने की आवश्यकता है, बड़े नगरों जिनके पास कार्यान्वयन के लिए महानगरीय तथा नगरनिगम होते हैं, से शुरूआत की जा सकती है।

5.7 शहरी आयोजना

5.7.1 शहरी आयोजना में विशिष्ट मुद्दे

5.7.1.1 भारत में शहरीकरण प्रक्रिया की बात करें तो चिन्ता का मुख्य विषय यह सच्चाई है कि देश में तेजी से बढ़ते हुए नगरों में, शहरीकरण ने भद्दे शहरी अव्यवस्थित फैलाव का रूप ले लिया है, जिसमें

गंदी बस्तियां तथा अनधिकृत कॉलोनियां शामिल हैं, जो ग्रामीण क्षेत्रों से नौकरियों की तलाश में नगरों में आते हैं और सुनियोजित विन्यास तथा अधिकृत कॉलोनियों में रहना वहन नहीं कर सकते, उन आप्रवासियों को शुरूआती स्तर की आवास व्यवस्था प्रदान करता है। *"आजकल नगरों का ज्यादातर भाग मुख्य धारा की योजना से बिल्कुल अछूता है। दिल्ली और मुंबई की आधे से ज्यादा जनसंख्या अनधिकृत क्षेत्रों में रहती है[106] ।"*

5.7.1.2 अमीर तथा गरीब के लिए आवासीय तथा अवसंरचना सेवाओं दोनों के प्रावधानों की बात आती है तो मांग और आपूर्ति पक्ष का ख्याल रखने के लिए शहरीकरण की अव्यवस्थित प्रक्रिया को कैसे नियंत्रित और नियोजित किया जाए, यह एक प्रमुख चुनौती है।

5.7.1.3 वर्ष 1988 में अपनी रिपोर्ट में राष्ट्रीय शहरीकरण आयोग ने निम्नलिखित जोरदार टिप्पणी कीः

> *"आज कई सारे कारक हैं जो नगर को वांछित दिशा में विकसित होने से रोकते हैं। पहला तो कानूनों, नियमों तथा विनियमों का पुलिंदा जो प्रोत्साहित करने के बजाय रोकता है। अहमदाबाद में कुछ अनधिकृत कॉलोनियां हैं क्योंकि आवासीय नक्शे को विकसित करने के लिए शहर आयोजना स्कीमों के प्रावधानों के अनुसार भूमि मालिकों को नक्शा अनुमोदित कराने के लिए, जहां कहीं भी योजना मानदंडों में ऐसा अपेक्षित हो, न्यायसंगत आधार पर भूमि विनिमय करना होगा। दिल्ली और मुंबई की तकरीबन आधे से ज्यादा आबादी अनधिकृत कॉलोनियों में रहती हैं क्योंकि योजना प्रणाली जमीन मालिकों को अपनी जमीन विकसित कर देने के प्रतिकूल है और इसलिए जब जमीन की मांग आपूर्ति को पीछे छोड़ देती है, लोग अनधिकृत तरीके से निर्माण करते हैं। प्रतिबंध लगाने वाले कानून चाहे आयोजना से संबंधित हों अथवा अनुचित सामाजिक विधान से उभरे हों, आयोग सिफारिश करता है कि इन कानूनों को समाप्त कर देना चाहिए, ताकि नई जमीनें मांग के अनुरूप आनुपातिक दरों पर बाजार में आ सकें।"*

5.7.1.4 आयोग ने आगे कहा

> *"शहर और नगर दोनों में प्रशासन को पेशेवर बनाने के लिए आयोग ने विमर्शी स्कंध (जो नीति बनाएगा और यह नीति दिशानिर्देशों के समनुरूप हो इस बात को सुनिश्चित करने के लिए सामान्यतया कार्यान्वयन पर निगरानी रखेगा) तथा कार्यपालक स्कंध (जो नीति ढांचे के भीतर पूर्ण*

106 शहरी अवसंरचना हेतु नियोजन - भारत अवसंरचना रिपोर्ट, 2006 में ऑलिवर टाउटेन तथा एस गोपीप्रसाद

स्वायत्तता और शक्तियों का उपभोग करेगा) के बीच शक्तियों तथा कार्यों के स्पष्ट वर्गीकरण की सिफारिश की है। आयुक्त और स्थायी समिति के बीच मौजूदा विवाद को उदाहरण के लिए, संपूर्ण प्रशासनिक तथा कार्यकारी मुद्दों को स्थायी समिति के दायरे से बाहर करके समाप्त करने का प्रयत्न किया गया है। एक बार शहरी प्रशासन इन पद्धतियों पर पुनः व्यवस्थित हो जाए, कार्यात्मक अभिकरणों तथा विकास प्राधिकरणों को, जिन्हें स्थानीय सरकारों में आमेलित किया जा सकेगा बनाए रखना जरूरी नहीं रहेगा। इस प्रकार उनके तथा स्थानीय निकायों के बीच विवाद की गुंजाइश समाप्त हो जाएगी। एकमात्र अपवाद क्षेत्रीय योजना प्राधिकरण होंगे जो उन क्षेत्रों को शामिल कर सकते हैं जिनमें कई सारे शहर और नगर शामिल हैं। लेकिन वहां भी, क्षेत्रीय प्राधिकरण में प्रत्येक स्थानीय निकाय को बराबरी का प्रतिनिधित्व देने के द्वारा प्रवर निकाय द्वारा प्राधिकारों को थोपने की बजाए आम सहमति के जरिए प्रचालन सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाएगा।"

5.7.1.5 एक नगर में जिस तरीके से जगह को व्यवस्थित और प्रयोग किया जाता है वह उसकी आर्थिक स्थिति पर्यावरण तथा निष्पक्षता का वास्तविक परिचायक होता है। शहरी जगह की आयोजना जितनी बेहतर होगी, प्रशासन तथा शासन उतना अधिक आसानी से होगा। स्वभावतः, संपूर्णतावादी दृष्टिकोण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। फरवरी, 2006 में गोवा में आयोजित भारत शहरी स्थान सम्मेलन ने अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित सिफारिश की :

"हम अपने नगरों के लिए नए प्रतिमान की हिमायत करते हैं। उसकी नहीं जो जोन बनाने और भूमि प्रयोग के रूप में आयोजना का निकटदर्शी रवैया अपनाएगा, अपितु उस विकास योजना की जो सार्वजनिक शासन के, संपर्क स्थापित करने की आवश्यकता से, शहरी विस्तार की पर्यावरणीय कीमत से, घटते संसाधनों तथा गायब होती पारिस्थितिक विभिन्नता पर होने वाले असर से, जल, विद्युत एवं अवसंरचना की आवश्यकताओं के मुद्दों से सूचित होगा। आयोजना से जो सामाजिक आवास व्यवस्था को सुनिश्चित करता है, जो समुदायों के बनाने के लिए प्रोत्साहित करता है, वह जो हमें सार्वजनिक स्थान देगा जो आमंत्रित करने वाला है, जो रेहड़ी वालों को अपनी आजीविका कमाने की अनुमति देगा तथा कीमती सेवा प्रदान करेगा और फिर भी अनुचित अथवा असुविधाजनक नहीं होगी। जो नए उद्योगों एवं कारोबार के लिए जगह निर्धारित करेगा ताकि वो पनप सके परंतु बदलते हुए आर्थिक परिवेश के लिए नमनीयता का निर्माण करेगा। जो एक ऐसे नगर का सपना दिखाएगा तथा उस दिशा में काम करेगा जिसको हर नागरिक अपना सकेगा।"

5.7.1.6 भारत में, 1901 से 2001 के बीच, शहरी जनसंख्या 25 मिलियन से 285 मिलियन तक ग्यारह गुना से अधिक बढ़ी; परंतु शहरी केन्द्रों की संख्या में केवल दोगुना इजाफा हुआ। भारत में प्रति व्यक्ति भूमि की समग्र उपलब्धता 1901 में प्रति व्यक्ति 1.28 हेक्टेयर से 2001 में 0.32 हेक्टेयर तक निरंतर गिरती चली गई। प्रत्येक शहरी व्यवस्थापन व्यक्तियों की औसत संख्या आज 71,800 है और पचास वर्षों[107] में दुगुने होने की संभावना है।

5.7.2 शहर एव ग्राम आयोजना अधिनियम

5.7.2.1 भारत में स्वतंत्रता बाद व्यापक विकास योजनाएं (मास्टर प्लान) बनाने की प्रणाली यूनाइटेड किंगडम के शहर एवं ग्राम योजना अधिनियम, 1947 से ली गई है। उस विधान के बाद हरे-भरे क्षेत्र बनाने पर 1955 में प्रशासनिक अनुदेश आए, और 1990 के अधिनियम के द्वारा अद्यतन हुए। यद्यपि भारत में नगर सुधार न्यास 19वीं सदी से मौजूद थे, लेकिन केवल 1948 में सुधार न्यासों के सम्मेलन में प्रस्तावित किया गया कि 10,000 से अधिक आबादी वाले सभी शहरों का अपना मास्टर प्लान होना चाहिए तथा न्यासों की सभी स्कीमें इन मास्टर प्लानों की कार्यप्रणाली के तहत आनी चाहिएं। शहरी विकास मंत्रालय के अंतर्गत शहर एवं ग्राम विकास आयोजना संगठन (टीसीपीओ) द्वारा तैयार किए गए, वर्ष 1960 का आदर्श शहर एवं ग्राम नियोजन कानून विभिन्न राज्य स्तरीय अधिनियमों की ओर ले गया, जिसने 1960 के दशक की शुरूआती अवधि में शहरी आयोजना में कुछ गति लाने के लिए आधार तैयार किया। तीसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान, शहर एवं ग्राम आयोजना विभागों को स्थापित करने के लिए केन्द्र सरकार ने राज्यों को पूरा वित्तपोषण किया, इन विभागों ने मास्टर प्लान तैयार करने की प्रक्रिया शुरू की। टीसीपीओ द्वारा 1995 में किए गए सर्वेक्षण के अनुसार, विभिन्न संगत विधानों जैसे कि टीसीपी अधिनियमों, सीआईटी अधिनियमों, नगर विकास अधिनियम जो उस समय के दौरान मौजूद थे, के अंतर्गत तैयार की गई योजनाओं की संख्या 879 थी और साथ में 319 योजनाएं तैयार की जा रही थीं। राज्य स्तर पर शहरी आयोजना अपने-अपने राज्य के शहर आयोजना अधिनियमों तथा अन्य विकास अधिनियमों द्वारा शासित किया जाता है। राज्य के शहर एवं ग्राम आयोजना विभाग एक रूप में अथवा अन्य रूप में देश के लगभग सभी राज्यों तथा संघ शासित क्षेत्रों में स्थापित किए गए हैं। हालांकि शहर आयोजना विभागों की भूमिका और उनके कार्य सब मिलाकर एक राज्य तथा दूसरे राज्य में भिन्न हो सकते हैं, मास्टर प्लानों/विकास प्लानों, क्षेत्रीय प्लानों शहर आयोजना स्कीमों, जोनल प्लानों, विकास स्कीम, क्षेत्रीय स्कीमों को तैयार करना, केन्द्रीय एवं राज्य स्तर की स्कीमों का कार्यान्वयन, विकास

107 स्रोत : शहरी स्थानीय निकाय तथा विकेन्द्रीकृत शहरी आयोजना,, रिबेरो।

नियंत्रण तथा योजना संबंधी अनुमति प्राप्त करना उनके प्रमुख कार्य हैं। आदर्श टीसीपी कानून के पास (क) शहरी क्षेत्रों के लिए व्यापक राज्य स्तरीय मास्टर प्लानों को तैयार करने के लिए, (ख) स्थानीय आयोजना प्राधिकरणों द्वारा योजना बनाने के लिए सलाह देने और आयोजना समन्वित करने के लिए बोर्ड का गठन, तथा (ग) मास्टर प्लानों को कार्यान्वित तथा लागू करने के प्रावधान हैं। इस आदर्श कानून को 1985 में आदर्श क्षेत्रीय तथा शहर आयोजना एवं विकास कानून के रूप में संशोधित किया गया था, जिसमें आयोजना तथा योजना कार्यान्वयन कार्य को उसी अभिकरण को सौंपना प्रस्तावित किया गया था जिसका स्वरूप आयोजना और विकास प्राधिकरण का हो। इसमें वर्ष 1991 में फिर संशोधन किया गया था। अधिकतर राज्यों ने शहर एवं ग्राम आयोजना कानूनों को लागू कर लिया है। कुछ नगरों में, शहरी विकास राज्य विकास प्राधिकरण अधिनियम (अधिनियमों) द्वारा शासित होता है।

5.7.2.2 "शहर आयोजना" का वास्तविक अभिप्रायः है कि नागरिकों को आवश्यक नागरिक सुविधाएं प्रदान करने के लिए उपलब्ध संसाधनों के इष्टतम उपयोग के साथ नगर के भावी विकास के लिए योजना बनाना। इस तरह से शहर आयोजना एक संपूर्णतावादी संकल्पना है। लेकिन अधिकतर नगरों में, आज भी शहर आयोजना क्षेत्रीय विनियमों की तैयारी के साथ ही समाप्त हो जाती है। इन विनियमों का प्रवर्तन संतोषजनक नहीं रहा है और बहुत से मामलों में स्थानीय निकायों तथा अन्य प्राधिकरणों और तो और नागरिकों ने भी इन विनियमों का उल्लंघन किया है। नगरों के भावी विकास हेतु शहरी आयोजना को एक अहम साधन के रूप में स्थापित करने की आवश्यकता है।

5.7.2.3 इस बात पर बल दिए जाने की आवश्यकता है कि शहरी आयोजना की परिकल्पना तीन स्तरों पर की जा सकती है, बड़े शहरी तथा शहरीकरण क्षेत्र हेतु व्यापक परिदृश्य योजना (प्रायः मास्टर प्लान कहा जाता है) के स्तर पर, उस क्षेत्र के अंदर ही आंचलिक योजनाओं के स्तर पर (जहां भूमि प्रयोग प्रतिमानों का वास्तविक विस्तृत ब्यौरा दिया जाता है) तथा नक्शा स्तर पर (जहां पड़ोस पर ध्यान केन्द्रित होता है तथा अवसंरचना सेवा नेटवर्कों के साथ संयोजन सुस्पष्ट हो जाता है)। 74वें संशोधन के संदर्भ में, निष्कर्ष इस प्रकार है कि जिला आयोजना समितियों तथा महानगर आयोजना समितियों को क्षेत्रीय स्तरों (मास्टर प्लान तथा आंचलिक प्लान के लिए योजनाएं तैयार करने का कार्य करना है जबकि नक्शे की योजनाएं स्थानीय निकायों) (पंचायत और नगरपालिकाएं/नगरनिगमों) द्वारा तैयार की जानी हैं। आयोग ने पहले ही अध्याय 3.7 में स्पष्ट कर दिया है कि देश में शहरी क्षेत्रों के लिए (और ग्रामीण शहरी वर्गीकरण को समाप्त करने के लिए) शहरी आयोजना समितियां तथा महानगर आयोजना समितियों एकमात्र आयोजना प्राधिकरण होने चाहिएं।

5.7.2.4 मास्टर प्लान के अनुसार भूमि विकास की तथा योजनाओं में निर्धारित पैरामीटरों के विनियमन और प्रवर्तन की प्रक्रिया शहरी क्षेत्रों के लिए आयोजना प्रक्रिया के साथ इस तरह से जुड़ी है कि इसका समाधान हो पाना असंभव है। जहां तक शहरीकरण हेतु अथवा सरल शब्दों में कहें तो, जमीन का उपयोग कृषि से हटकर विभिन्न शहरी उपयोगों (आवासीय, वाणिज्यिक, सांस्थानिक); के लिए भूमि विकास का संबंध है, भारतीय शहरों में प्रयोग होने वाले मॉडलों की रेंज में शहरी उपयोग (उदाहरणार्थ दिल्ली विकास प्राधिकरण) हेतु भूमि के अधिग्रहण, आयोजना, विकास और व्यवस्था के लिए निजी अभिकरण का संपूर्ण एकाधिकार से यादृच्छिक, बमुश्किल विनियमित निजी क्षेत्र द्वारा संचालित वृद्धि (कई शहरों में) तक तथा बीच का मार्ग जिसमें सार्वजनिक प्राधिकरण (डीएज एवं आवासीय बोर्ड) भूमि विकास करते हैं परंतु निजी अभिकरणों को भी, विनियमों के अंतर्गत, नक्शों को विशेषकर आवास हेतु (हरियाणा आवास विकास प्राधिकरण, बेंगलुरू विकास प्राधिकरण आदि) विकसित करने की अनुमति मिलती हैं। उद्योगों द्वारा स्थापित शहरों, मुख्यतः सार्वजनिक क्षेत्र में, के भी उदाहरण हैं तथा एक मूलतः भिन्न मॉडल पुणे के नजदीक, मगरपट्टा में उस समय के किसानों द्वारा विकसित निजी शहर का है। जमीन इकट्ठा करने के लिए शहरी नियोजन तथा विकास के भाग के रूप में विभिन्न नीतिगत कार्यतंत्र लागू हैं। आवास आरक्षण (एआर) तथा विकास अधिकारों का सुपुर्दगी (टीडीआर) भूमि अधिग्रहण/भूमि जुटाने की समस्याओं का कुछ हद तक निवारण के लिए नए नीति उपाय हैं। भूमि अधिग्रहण अधिनियम के कार्यतंत्र के अंतर्गत बड़े पैमाने पर भूमि अधिग्रहण, विकास ओर व्यवस्था, हरियाणा शहरी क्षेत्र विकास एवं विनियमन अधिनियम, 1975 के तहत भूमि खरीद का परक्रामण किया गया तथा आवासीय इकाइयों के विकास और निर्माण हेतु अनुज्ञप्ति आधार पर निजी भवन निर्माताओं को भूमि उपलब्ध कराने के लिए उत्तर प्रदेश सरकार की विकास प्राधिकरण को सशक्त करने का संयुक्त क्षेत्रीय दृष्टिकोण भूमि जुटाने ओर विकास हेतु पालन की जाने वाली कुछ अन्य तकनीकें हैं। इसके अतिरिक्त, जानकार मालिकों की भूमि का एक इकाई के रूप में नियोजन अभिकरणों द्वारा पूलिंग के लिए शहर आयोजना स्कीमें 20वी सदी के आरंभ से ही प्रचलित एक अहम पूलिंग तकनीक है। इस तकनीक के अंतर्गत, जहां भूमि मालिक नगर आयोजना प्रक्रिया में भागीदार बन जाते हैं, उस मामले में भूमि का सामूहिक पूल में हिस्सेदारी के द्वारा समायोजन किया जाता है, जो कई राज्यों में नगर मास्टर प्लानों के कार्यान्वयन में सहायता करता है।

5.7.2.5 अनुभव यह भी बताता है कि भूमि विकास प्रक्रिया पर सार्वजनिक क्षेत्र का एकाधिकार आवासीय भंडार तथा अन्य शहरी जगहों के न्यून प्रबंधन तथा अधिक विनियमन की ओर ले जाता है, जबकि आपूर्ति

मांग की गड़बड़ियां काला-बाजारी तथा भ्रष्टाचार की ओर ले जाती हैं। आदर्शतः एक नगर के आयोजना प्राधिकरण के पास अपने नागरिकों के लिए वास्तविक तथा सामाजिक अवसंरचना सृजित करने के लिए आर्थिक संसाधन के रूप में भूमि का उपयोग कराने तथा सार्वजनिक निवेशों तथा सरकारी- निजी भागीदारी परियोजनाओं के मिश्रण के माध्यम से इसके पुराने तथा नष्ट हो रहे भागों का पुनर्विकास करने का सामर्थ्य होना चाहिए। इसके अलावा, विकास प्राधिकरणों के भूमि भंडारों तथा भूमि उपयोग पर नियंत्रण का तंगहाल स्थानीय निकायों के लिए अच्छा खासा राजस्व जुटाने के लिए उपयोग किया जा सकता है।

बॉक्स 5.21 : मुंबई बाढ़ — कारण

26 जुलाई मुंबई में 944 मि.मि. वर्षा की साक्षी बनी, ऐसा नगर जो भारी मॉनसून का आदी है जिसने उस दिन 1058 जिन्दगियों को लील लिया तथा 451 अन्य वर्षा से संबंधित मौतें हुईं।

1. यद्यपि वर्ष 2005 में अप्रत्याशित वर्षा मुंबई बाढ़ का मुख्य कारण था, क्षेत्र का नाजुक पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी की संपूर्ण उपेक्षा करते हुए बेतरतीब शहरी विकास उस समस्या को बढ़ाने वाले मुख्य कारक थे, जैसाकि :
   - स्थावर संपदा विकासात्मक कार्यों के लिए 900 हरेभरे प्लाटों को अनारक्षित करना।
   - बांद्रा-कुर्ला कॉम्प्लेक्स विकसित करने के लिए माहिम क्रीक में 730 एकड़ की कच्छ वनस्पति बरसाती भूमि का भराव कर दिया गया।
   - बीएमसी की ओर से जताई गई आपत्तियों के बावजूद वेस्टर्न एक्सप्रेस वे को चौड़ा कर दिया गया, उसके द्वारा जल निकास प्रणाली पर गंभीर समझौता करना पड़ा।
   - हवाई अड्डे की हवाई पट्टी का विस्तार करने के लिए मीठी नदी का रास्ता मोड दिया गया।
   - क्षेत्र की वहन कर सकने की क्षमता पर विचार किए बगैर ट्रांसरेबल डेवलपमेंट अधिकार अन्धाधुंध दे दिया गया।
2. ठोस अपशिष्ट पदार्थों से नालियां भर जाने से जल निकासी प्रणाली ठप्प पड़ गई थी।
3. आपदा प्रबंधन योजना को अद्यतन नहीं किया गया था।
4. आयोजना प्रक्रिया में समुदायों को शामिल नहीं किया गया था

(स्रोत : राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान)

5.7.2.6 निजी अभिकरण जो अन्य सभी प्रकार के स्थावर संपदा विकास में सरकारी-निजी भागीदारी को प्रोत्साहित करते हुए प्रमुख नगर स्तरीय शहरी अवसंरचना तथा सुविधाओं के विकास के साथ ईडब्ल्यूएस के लिए आवास व्यवस्था के प्रावधान पर ध्यान संकेन्द्रित करता है, वह जब हमारे नगरों में शहरीकरण प्रक्रिया की बात आती है तो सुनहरी इरादा रखता प्रतीत होता है। सभी सार्वजनिक क्षेत्र की आवासीय परियोजनाओं में इस बात को सुनिश्चित करने का प्रयास करना चाहिए कि आवास व्यवस्था में भी उन्हीं सिद्धांतों का अनुपालन होना चाहिए जिनका अनुपालन सिंगापुर आवासीय बोर्ड द्वारा किया गया है।

5.7.2.7 *नगरों में आपदा प्रबंधन :* प्राकृतिक आपदाओं की अधिकता हो गई है तथा इनका असर बहुत बड़ी आबादी पर होता है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूएनईपी) रिपोर्ट बताती है कि वर्ष 1980 तथा 2000 के बीच विश्व की जनसंख्या की कुल आबादी का 75 प्रतिशत प्राकृतिक आपदा से ग्रस्त क्षेत्रों में रहे थे। गंदी बस्ती के क्षेत्रों में रहने वाले निर्धन लोग आपदाओं से अधिक असुरक्षित हैं क्योंकि इनमें से अधिकतर गंदी बस्तियां निचली तराई वाले इलाकों में अथवा जलधारा के साथ-साथ अथवा ढलानों में अवस्थित हैं।

बॉक्स 5.22 : बेंगलुरू में भूमि अतिक्रमण

जिस जमीन को सार्वजनिक उपयोगिताओं के लिए उद्यानों, खेल के मैदानों, सड़कों तथा नागरिक सुविधाओं के लिए अभिचिन्हित किया जाना चाहिए उसको निर्माण स्थलों में तब्दील कर दिया गया, जो कानून का घोर उल्लंघन था, जिसमें स्थानीय निकायों ने प्रमोटरों को गुप्त रूप से सहयोग दिया।

बनेरघट्टा राष्ट्रीय उद्यान के अंतर्गत वन भूमि के बड़े हिस्से पर अतिक्रमण किया गया था, परंतु संबंधित अधिकारी इसको रोकने में असफल रहे। इससे कब्जा करने वालों को नोटिसों के विरूद्ध स्टे आर्डर प्राप्त करने में सहायता मिली और विभाग उस हिस्से को खाली करा सकने में असफल रहा और अतिचारियों ने अपना कब्जा बनाए रखा।

झील विकास प्राधिकरण जो बैंगलोर नगर में 24 झीलों का संरक्षण करने के लिए गठित किया गया था, में कामकाज की खस्ता स्थिति के बारे में समिति ने आरोप लगाया है कि प्राधिकरण का मुख्य कार्यपालक अधिकारी अतिचारियों को बाहर निकानले में असफल रहा था। विभिन्न स्थानीय शहरी निकाय टैंक बेड्स का अतिक्रमण करने वाले निजी लैंड डेवलेपरों के खिलाफ कार्रवाई करने में असफल रहे थे। आश्चर्यजनक रूप से, रिपोर्ट कहती है कि शहर एवं ग्राम आयोजना अधिनियम की धारा 15 के तहत बहुमंजलीय इमारतों के निर्माण हेतु प्रारंभण प्रमाणपत्र जारी कर दिए गए थे।

इसके जैसा ही मामला कर्नाटक राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का था, और उनको दंड दिलवाने में असफल रही थी, जिन्होंने झीलों में गंदे पानी को बहाया तथा अपने अपार्टमेंट्स के भीतर जिन्होंने गंदे पानी को शोधित करने का संयंत्र नहीं लगाया उनको नोटिस जारी नहीं किए थे।

स्रोत : दि हिन्दू 2 फरवरी, 2007

5.7.2.8 आपदा प्रबंधन में नियोजन प्रमुख भूमिका निभाता है। आकाशीय नियोजन को प्राकृतिक भौगोलिक तथा भूगर्भीय प्राचलों का ध्यान रखना चाहिए। उदाहरणार्थ, आकाशीय नियोजन को क्षेत्र की प्राकृतिक निकासी प्रणाली को ध्यान में रखना चाहिए,क्योंकि बाढ़ की स्थिति में इसमें कोई भी अवरोध प्रमुख विध्वंस का कारण बन सकता है। आपदा रोधी इमारतों/घरों का निर्माण आपदाओं के विपरीत प्रभावों को कम करने में सहायता करेगा।

5.7.2.9 आयोग ने अपनी तीसरी रिपोर्ट - संकट प्रबंधन में उपयुक्त योजना उपायों के जरिए आपदा संबंधित हानियों से बचाव तथा संबंधित तैयारियों के मुद्दों पर विस्तार से चर्चा की है। आयोग शहरी आयोजना की प्रक्रिया में आपदा विशिष्ट मुद्दों को जोड़ने की अनिवार्य आवश्यकता को दोहराना चाहता है। नेशनल बिल्डिंग कोड (एनबीसी) निःशुल्क उपलब्ध कराने तथा स्थानीय भवन निर्माण उप-नियम आदि पर पर्चे और पुस्तिकाएं तैयार करने के बारे में सिफारिशों पर विशेष ध्यान आमंत्रित किया है। नगरपालिका

भवन निर्माण उप-नियमों को एनबीसी अनुवर्ती बनाना एक त्वरित आवश्यकता है। आपदा बचाव का एक पहलू जिस पर शहरी आयोजना की प्रक्रिया के अंतर्गत और अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है, वह प्राकृतिक जल धाराओं तथा शहरी क्षेत्र के आसपास में जल स्रोतों तथा घाटियों का समुचित ध्यान जैसे पहलुओं की आपेक्षिक उपेक्षा है। शहर नियोजन की वर्तमान प्रक्रियाओं को उचित तरीके से अद्यतन करने की आवश्यकता है ताकि शहरी नवीकरण, विस्तार और शहरीकरण के जल विज्ञान संबंधी निहितार्थों का और अधिक ध्यान रखा जा सके।

5.7.2.10 केवल अच्छी स्थानिक योनजाएं बनाना ही काफी नहीं है। इन योजनाओं चाहे जिस किसी रूप में ये मौजूद हों, के प्रवर्तन में बहुत कुछ किया जाना वांछनीय है। जोनिंग विनियम कितनी ही बार - प्राधिकरणों द्वारा भूमि उपयोग के परिवर्तन को अनुमति देने अथवा विनियमों में छूट देने के साथ उल्लंघनीय नहीं रह जाते। प्रायः ऐसे "परिवर्तन" योग्यता पर आधारित नहीं होते। जोनिंग विनियमों का उल्लंघन हमारे नगरों में आम है। आयोग का मानना है कि एक बार नगर विकास योजना (सीडीपी) को अंतिम रूप दिए जाने पर, किसी भी प्राधिकरण के पास किसी प्रकार की रियायत या माफी देने का विवेकाधिकार नहीं होना चाहिए। सीडीपी के पास तीस वर्षों का परिदृश्य होना चाहिए जिसे प्रतिभागिता तथा पारदर्शी प्रक्रिया के माध्यम से हर दस वर्षों में संशोधित किया जाए।

5.7.2.11 नगरों में जमीन के दामों में बढ़ोतरी के साथ सार्वजनिक भूमि पर अतिक्रमण का प्रचलन बहुत आम है। ऐसी जमीनों में जल स्रोत, प्राकृतिक जल धारा आदि शामिल हैं। इस तरह के अतिक्रमण क्षेत्र की पारिस्थितिकी को भी खतरा पहुंचाते हैं तथा किसी संकट अथवा आपदा के दौरान समस्याओं को बढ़ा देते हैं। ऐसे अतिक्रमणों को हटाने के लिए नगरपालिका प्राधिकारियों को विशेष अभियान चलाना चाहिए, जिनके न्यायाधिकार क्षेत्र में ऐसे अतिक्रमण होते हैं उन अधिकारियों पर जिम्मेदारी नियत की जानी चाहिए।

5.7.2.12 सिफारिशें :

(क) एक बार अनुमोदित होने पर नगर विकास योजना (सीडीपी) तथा जोनिंग विनियमों को दस वर्षों के लिए लागू रहना चाहिए। सामान्यतया किसी भी प्राधिकरण के पास सीडीपी में बदलाव करने की कोई शक्ति नहीं होनी चाहिए।

(ख) **नगरों में शहरी आयोजना सही मामलों में एक संपूर्णतावादी प्रक्रिया बने इसको सुनिश्चित करने के लिए अवसंरचना योजनाओं को नगर विकास योजना (सीडीपी) का अभिन्न अंग बनाना चाहिए।**

(ग) **भवन निर्माण विनियमों को लागू करने की मौजूदा प्रणाली में संशोधन की आवश्यकता है। संरचनाओं के मूल्यांकन तथा इमारतों को सुरक्षित प्रमाणित करने के लिए लाइसेंसिंग वास्तुकारों तथा संरचनात्मक अभियंताओं द्वारा इस प्रणाली को पेशेवर बनाने की आवश्यकता है। भवन निर्माण संबंधी उप-नियमों तथा जोनिंग विनियमों को लागू करने वाले स्थानीय निकायों की इकाइयों को मजबूत करने की आवश्यकता है[108] ।**

(घ) **स्थानिक आयोजना में आपदा बचाव प्रबंधन को प्रमुख स्थान दिया जाना अनिवार्य है। इस संबंध में शहरी विकास मंत्रालय द्वारा विशिष्ट दिशानिर्देश तैयार किए जाने की आवश्यकता है। इन दिशानिर्देशों को शामिल करते हुए इन्हें जोनिंग विनियमों तथा भवन निर्माण संबंधी उप-नियमों में बताया जाना चाहिए।**

बॉक्स 5.23 : एक छोटी जगह में समाविष्ट वृद्धि

विशेष आर्थिक क्षेत्र अथवा भूमि अधिग्रहण तनाव से लबालब संकल्पना बने थे, उनसे बहुत पहले 1993 में पुणे के हदपसर उपनगर से किसानों के एक प्रतिनिधिमंडल ने नगर के नगरपालिका आयुक्त को एक संघटित नगर क्षेत्र का प्रस्ताव पेश किया था। दो वर्षों तक इस पर कार्य चलता रहा था तथा महाराष्ट्र क्षेत्रीय शहर आयोजना अधिनियम, 1966 में निर्धारित सभी नागरिक जरूरतों और सुख-सुविधाओं के लिए विशेषज्ञों - वास्तुकारों, भू-दृश्य निर्माणकर्ताओं, सिविल अभियंताओं की सहायता से अत्यधिक सावधानीपूर्वक रूपरेखा तैयार की गई थी ......1995 में, प्रस्तावित नगर क्षेत्र के लिए कृषि भूमि ने आवासीय जोन की प्रास्थिति हासिल की, और प्रस्ताव को मुंबई तथा राज्य सरकार के पास ले जाया गया। चार वर्षों तथा कुछ संशोधनों के उपरांत मगरपट्टा नगर के मास्टर प्लान को राजपत्र में अधिसूचित कर दिया गया था ....।

मगरपट्टा नगर 400 एकड़ में फैली उर्वर कृषि भूमि है, जो पीढ़ियों से 122 किसानों की मिल्कियत है। उनके द्वारा मिलजुलकर बनाई लिमिटेड कंपनी, ...भूमि स्वामित्व के अनुपात में उनके शेयर, के माध्यम से अपने स्वामित्व की भूमि को उन्होंने नगर क्षेत्र के रूप में वृद्धि करते देखा है।

मगरपट्टा नगर क्षेत्र विकास एवं निर्माण कंपनी लिमिटेड (एमटीडीसीसी) विभिन्न कारोबारों, वाणिज्यिक उद्यमों तथा आवासीय संपत्तियों के लिए भूमि विकसित करती है.........अपने भूमि खंडों के लिए एक बार भुगतान पाने के असदृश, शेयरधारकों का एक भाग वह है जो कंपनी उनकी संपत्तियां उनसे बाजार मूल्यांकन के आधार पर खरीद कर उनको देगी तथा दूसरा भाग उस भूखंड को विकसित करके देगी। इस प्रकार दो तरफा लाभ उनको प्राप्त होगा; जब कभी कंपनी नगर क्षेत्र के भीतर परियोजना विकसित करने का निर्माण लेती है तब अपने-अपने भूखंडों की बिक्री से तथा परियोजना पूरी होने पर - उदाहरणार्थ, एक आवासीय ब्लॉक - परियोजना की लागत को काटकर उसकी बिक्री से प्राप्त होने वाला राजस्व, दोनों ही प्राप्तियां उनकी संपत्तियों के अनुपात में ....उद्यम भी स्वयं को प्रेरित करने वाला है क्योंकि इसने अवसर के मार्ग खोले हैं। दूसरी पीढ़ी के कई शेयरधारकों ने निर्माण, भूदृश्य निर्माण, पत्थर उत्खनन हेतु अपनी खुद की कंपनियां चालू की हैं।

स्रोत : दि हिन्दू बिजनस लाइन, 8 जून, 2007

108 "संकट प्रबंधन - निराशा से आशा की ओर" शीर्षक की आयोग की तीसरी रिपोर्ट का पैरा 5.7.2.3.13.ङ

(ङ) आपदा रोधक इमारतों के लिए भारतीय मानक ब्यूरो (बीआईएस) द्वारा निर्धारित मानकों को सार्वजनिक क्षेत्र में निःशुल्क उपलब्ध कराया जाना चाहिए। अनुपालन[109] प्रोत्साहित करने के लिए इन मानकों को संबंधित सरकारी अभिकरणों की वेबसाइटों पर डाला जाना चाहिए।

5.7.3 शहरोपांत क्षेत्र

5.7.3.1 शहरोपांत वह शब्द है जो अधिकतर आम तौर पर बड़े शहरी क्षेत्रों के बाह्यांचलों, अधिक सटीकता से कहे तो उन क्षेत्रों के लिए प्रयोग किया जाता है जो शहरी न्यायाधिकार क्षेत्र से तो बाहर हैं लेकिन शहरीकरण की प्रक्रिया के अंदर हैं और शहरी क्षेत्रों की कुछ विशिष्टताएं लिए हुए हैं। इस तरह के क्षेत्र आंशिक रूप से भीतरी ग्रामीण इलाकों से अंतर्गमन से सृजित होते हैं, परंतु उनसे भी जो नगरों से बाहर निकलना चाहते हैं - कुछ भीड़भाड़ वाले इलाकों से ज्यादा बड़े घरों अथवा नए उद्योगों की ओर स्थान बदलना चाहते हैं तथा कुछ महंगे शहरी जीवन से दूर जाना चाहते हैं। शहरीकरण की इस प्रक्रिया में रिहायशी स्थानों, जीवनचर्याओं तथा सुविधाओं का अक्सर बेतरतीब जंगल उग जाता है। शहरी और ग्रामीण मिलाप के प्रबंधन में अपरिहार्य परेशानियां हैं। यहां पर (क) भूमि उपयोग परिवर्तन कृषि से आवासीय अथवा औद्योगिक, (ख) जल तथा वानिकी जैसे प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग में परिवर्तन, (ग) प्रदूषण तथा अपशिष्ट प्रबंधन के नए प्रकार, (घ) आधारभूत संरचना का सृजन, तथा (ङ) नए सांस्कृतिक लोकाचार का प्रबंधन करने जैसे मुद्दे है। विशिष्ट रूप से, नगर से सटे हुए गांव नगर का विस्तार बन जाते हैं, लेकिन मानदंडों के बगैर, फिर भी भले ही अपर्याप्त हैं, नागरिक जीवनचर्या और अवसंरचना के लिए नगर में निर्धारित किए जा रहे हैं। शहरोपांत क्षेत्रों को शामिल करते हुए महानगर आयोजना समिति की उपयुक्त आयोजना प्रक्रिया अनिवार्य है।

5.7.3.2 इसके अलावा, बेढंगे अव्यवस्थित प्रसार को नियंत्रित करने में समर्थ होने के लिए, इस बात की अनुमति देना, बेशक सुनिश्चित करना आवश्यक है कि मौजूदा नगर क्षेत्र पर लागू योजना संबंधी कानून नगर के भावी क्षेत्रों पर भी लागू हों। ऐसा नहीं हो सकता कि भूमि के निश्चित प्रकार के उपयोग हेतु ग्राम पंचायत अनुमति दे जो जब नगर क्षेत्र में शामिल किया जाए तो नगर के भूमि उपयोग के विरूद्ध जाए। कम से कम महानगर क्षेत्रों के लिए ज्यादा बड़े क्षेत्रों की आयोजना बनाते समय शहरोपांत क्षेत्रों की समस्याओं पर ध्यान देना अनिवार्य होना चाहिए। महानगर आयोजना समिति क्षेत्र में सम्मिलित करने तथा नगर और शहरोपांत क्षेत्रों देनों में सामूहिक भूमि उपयोग और अवसंरचना आयोजना और एक समान विनियमों के लागू होने के साथ ज्यादा बड़े नगरों की आयोजना प्रक्रिया में शहरोपांत क्षेत्रों को शामिल

109 पैरा 5.7.2.3.13.च; -तदैव-

करना संभव होगा। यह अत्यावश्यक है कि शहरोपांत पंचायतों में सीमित दूरदृष्टि तथा भूमि उपयोग वाले भूमि नियमों का सेट नगरों के भावी विकास के लिए समस्या न खड़ी करे। सभी क्षेत्रीय आयोजना इस तरह से कार्यान्वित की जानी चाहिए जिससे सुनिश्चित हो कि शहरी भूमि उपयोग संबंधी आयोजना तथा मंजूरी देने के बीच कोई अंतराल न हो।

5.7.3.3 अंत में, जब शहरोपांत क्षेत्रों सहित समूचे महानगरीय क्षेत्र के लिए महानगर आयोजना समिति द्वारा तैयार की गई योजना के विनियमन तथा प्रवर्तन की बात आती है, यह लाजमी है कि ऐसा प्रवर्तन एक अकेले अभिकरण अर्थात संबंधित स्थानीय निकाय (नगरपालिका, नगरनिगम या ग्राम पंचायत) द्वारा ही किया जाए क्योंकि ऐसा करने की सांविधिक शक्तियां उनके पास पहले से हैं और क्योंकि भवन निर्माण उप-नियमों आदि को लागू करने के संबंध में यह उनकी जिम्मेदारियों के साथ जुड़ा हुआ है।

5.7.4 नगरों के बजाय कॉरीडोरों पर ध्यान केन्द्रित करती क्षेत्रीय आयोजना

5.7.4.1 परिवहन बाजारों के उदारीकरण और समस्वरता के साथ कॉरीडोरों के विकास के साथ कुशल अवसंरचना आज आर्थिक वृद्धि के लिए पूर्वापेक्षा है। यह अब अधिक से अधिक स्वीकार किया जाने लगा है कि गतिहीन नगर विशिष्ट प्रक्रियाओं तथा दस्तावेजों को आर्थिक कॉरीडोरों तथा परिवहन नोड्स पर आधारित गतिशील क्षेत्रीय आयोजना से प्रतिस्थापित किया जाना होगा। कॉरीडोर संकल्पना रूपरेखा आधारित इस तरह की भूमि आयोजना है, जो रहने वालों के लिए गुणता वाला जीवन, प्रकृति हेतु पर्यावास तथा डेवलपर्स और निवेशकों के लिए ज्यादा जल्दी जुड़ाव यानि संपर्क तथा लाभ के साथ सरल परिवहनीयता प्रदान करती है। कॉरीडोर में भूमि के इष्टतम उपयोग के संबंध में परिवहन, आवास व्यवस्था, जनोपयोगी सेवाएं तथा उद्योग आदि शामिल हैं। कॉरीडोर आधारित विकास शहरी क्षेत्रों की भीड़भाड़ कम करने में, मुख्य परिवहन प्रणाली तक पहुंच सुधारने में तथा संतुलित शहरीकरण तथा विकास प्रोत्साहित करने में मदद कर सकता है। मुंबई-दिल्ली औद्योगिक कॉरीडोर सरकार की हालिया पहल इस सच्चाई की सामयिक पहचान है जिसमें शहरोपांत क्षेत्रों में बढ़ते हुए तथा बढ़े हुए महानगर क्षेत्रों (ईएमआर) को शामिल करते हुए क्षेत्रीय विकास कॉरीडोर पर नियोजन केन्द्रित करना है। कॉरीडोर संकल्पना के आधार पर परियोजनाओं की पहल के साथ भी कई राज्यों ने बढ़त ले ली है जिसमें हैदराबाद ज्ञान कॉरीडोर तथा बैंगलौर -मैसूर अवसंरचना शामिल हैं दोनों ही जो ज्ञान आधारित उद्योगों तथा निर्धारित मुख्य मार्ग के साथ-साथ महत्वपूर्ण लिंक सड़कों पर विद्युत, जल, मल निकास, सार्वजनिक परिवहन आदि जैसी आधारभूत संरचनाओं सहित आवासीय नगर क्षेत्र विकसित करने पर संकेन्द्रित हैं।

5.7.4.2 शहरी क्षेत्रों के लिए एक ही आयोजना प्राधिकरण (डीपीसी/एमपीसी) सुनिश्चित करने, भूमि विकास में सरकारी-निजी भागीदारी प्रोत्साहित तथा संबंधित स्थानीय निकायों के माध्यम से योजना को सख्ती से लागू करने के लिए तथा संसाधन के रूप में भूमि का उपयोग कराने के लिए शहरी आयोजना की प्रक्रिया के संबंध में आयोग की सिफारिशों को पहले के अध्यायों में बताया जा चुका है।

5.7.5 विकास क्षेत्र

5.7.5.1 देश के कई शहरी क्षेत्रों में, नवीन ओखला औद्योगिक विकास प्राधिकरण (नोएडा) तथा दिल्ली प्रमुख उदाहरण रहे हैं, सुनियोजित विकास सुनिश्चित करने के लिए अकेले योजना प्राधिकरण के रूप में विकास प्राधिकरण स्थापित किए गए थे तथा भूमि विकसित करने के संबंध में उनको साथ ही साथ एकाधिकार शक्तियां भी दे दी गई थीं। इस नीति के तहत जमीन के बड़े-बड़े भू-भाग "विकास क्षेत्र" घोषित किए जा रहे हैं, जिसमें आयोजना और विकास कार्यों को विकास प्राधिकरणों की अनन्य जिम्मेदारियां बनाया गया है। यह अध्याय 3 में पहले ही उल्लिखित किया गया है कि 74वें संवैधानिक संशोधन के अनुसरण में महानगर आयोजना समितियों तथा जिला आयोजना समितियों की स्थापना के साथ महानगर/शहरी क्षेत्रों के सुनियोजित विकास का खाका तैयार करने का कार्य अनन्य रूप से सिर्फ एमपीसीज/डीपीसीज का कार्य सुरक्षित रहेगा तथा विकास प्राधिकरण एमपीसी/डीपीसी के तकनीकी सहायक बनेंगे। एकाधिपत्य स्थावर संपदा के डेवलेपर के रूप में उनकी भूमिका भी सरकारी-निजी भागीदारी पर अधिक ध्यान केन्द्रित करने के साथ काफी बदल जाएगी।

5.7.5.2 इसके अतिरिक्त, सेटेलाइट शहरों समेत जहां कहीं भी नगर क्षेत्र विकास प्राधिकरणों द्वारा स्थापित किए गए हैं, इन सुनियोजित कॉलोनियों का विकास प्राधिकरणों से संबंधित नगरपालिका निकायों को न्यायाधिकार के सुपुर्दगी की संपूर्णतः स्पष्ट समय-सारणी सुनिश्चित करनी होगी। आयोग यह जानता है कि यद्यपि दिल्ली में, दिल्ली विकास प्राधिकरण (डीडीए) द्वारा विकसित कॉलोनियों के एक बार पूरी तरह विकसित हो जाने के बाद न्यायाधिकार को दिल्ली के नगरनिगम को अंतरित कर दिया जाता है; ऐसा सुपुर्दगी विकास प्राधिकारियों के न्यायाधिकार के तहत आने वाले कथित "विकास क्षेत्र" के अन्य मामलों में दशकों तक नहीं किया जाता है। इस प्रकार, गुड़गांव, नोएडा तथा इस जैसे दूसरे नगरों में निवासियों से संपत्ति कर एकत्र नहीं होता है और कॉलोनियों का विकास प्राधिकरणों के न्यायाधिकार में रहना दशकों तक जारी रहता है, जिससे आखिरकार राजस्व की हानि होती है और घटिया सेवाएं मिलती हैं।

5.7.5.3 सिफारिश :

(क) विकास प्राधिकरणों के अंतर्गत विकसित समस्त नगर क्षेत्रों तथा सेटेलाइट शहरों के संबंध में, यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि विकास प्रक्रिया के पूरा होते ही नगर क्षेत्र के न्यायाधिकार को स्थानीय निकायों को अंतरित कर दिया जाना चाहिए।

5.7.6 निजी नगर क्षेत्र

5.7.6.1 सुनियोजित नगर क्षेत्र तथा द्वारयुक्त मुहल्ले पूरे विश्व में मौजूद हैं। वर्ष 1965 में सभी अमरीकी नागरिकों के एक प्रतिशत से भी कम निजी मुहल्लों में रहते थे। वर्ष 2005 में, यह 18 प्रतिशत तक बढ़ा जिसमें 55 मिलियन लोग शामिल हुए जो विभिन्न प्रकार के मकानमालिकों की एसोसिएशनों में रहे थे। लगभग 100,000 निजी तौर पर विकसित तथा मुख्यतः निजी तौर पर संचालित मुहल्ले हैं, कुछ बहुत छोटे, अन्य कुछ हजारों एकड़ में फैले हुए[110] ।

5.7.6.2 *निजी कॉलोनियों तथा द्वारयुक्त नगर :* पिछले कुछ वर्षों में "निजी नगर" शब्द का प्रयोग आमतौर पर बढ़ने लगा है। ये वास्तव में निजी कॉलोनियां, अथवा जैसाकि इनको अक्सर कहा जाता है "द्वारयुक्त नगर" हैं, और सभी नगरपालिका कार्यों में व्यस्त हैं परंतु उनके पास नगरपालिका प्राधिकार नहीं हैं।

5.7.6.3 *निजी नगर :* भारत में निजी नगर का अच्छा उदाहरण जमशेदपुर है, जिसकी नींव सर जमशेद एन. टाटा द्वारा डाली गई थी, जो एक औद्योगिक नगर क्षेत्र में शुरू हुआ था लेकिन 1.6 मिलियन लोगों के बड़े नगर में विकसित हुआ है।[111] नगर, निजी तौर पर निर्मित और "स्वामित्व" है, टिस्को (टाटा लौह एवं इस्पात कंपनी) तथा बाद में अन्य टाटा कंपनियों के कर्मचारियों के निवास स्थान के रूप में उभरा है, परंतु अब बहुआयामी नगर के रूप में सामने आया है। अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, टाटा स्टील की पूर्ण स्वामित्व की समनुषंगी जमशेदपुर उपयोगिता एवं सेवा कंपनी (जुस्को) बनी, जो टाटा समूह के अनुसार, "नगर क्षेत्र को व्यापक म्युनिसिपल तथा संबद्ध सेवाओं को प्रदान करने के लिए निजी क्षेत्र में पहला निगम है। इन सेवाओं में शहर नियोजन तथा निर्माण, नगरपालिका ठोस अपशिष्ट प्रबंधन, सार्वजनिक स्वास्थ्य, जल एवं मल-जल प्रबंधन, विद्युत संवितरण, फ्लीट प्रबंधन, शिक्षा एवं मेजबानी सम्मिलित हैं[112] ।

110 पश्चआधुनिक द्वैतवाद की दुनिया में स्थानीय शासन-रॉबर्ट एच. नेलसन तथा निजी नगर : जे. ब्रॉयन फिलिप्स; स्वशासन हेतु समर्थन; http://www. the advocates.org

111 जमशेदपुर में बहुत सा शुरूआती नागरिक कार्य प्रकृतिवादी नेराल्ड डुरेल तथा उपन्यासकार लॉरेन्स डुरेल के पिता लॉरेन्स सैम्युअल डुरेल द्वारा किया गया था।

112 टाटा समूह वेब पृष्ठों से।

5.7.6.4 दिल्ली/नोएडा/गुड़गांव, बंगलोर, हैदराबाद में नई पॉश निजी आवासीय कॉलोनियां तथा वे जिनकी विशेष आर्थिक क्षेत्रों (एसईजेड) में उभरने की संभावना है, यथार्थ में "निजी नगरों" की दिशा में अग्रसर नहीं हैं। वे बहुत छोटी हैं तथा केवल निजी अथवा द्वारयुक्त कॉलोनियां हैं। सेवाओं और उपयोगिताओं के थोक में प्राप्त होने के अतिरिक्त, उनका स्थानीय नागरिक रखरखाव निर्माणकर्ता द्वारा ही किया जाता है। ये "नगर क्षेत्र" बढ़ रही शहरीकरण प्रक्रिया में अपरिहार्य भाग हैं तथा उस आवश्यकता को पूरा करते हैं जो सार्वजनिक संस्थान प्रदान करने में असमर्थ हैं। तथापि, यह आवश्यक है कि बृहत क्षेत्रीय शहरी आयोजना प्रक्रिया के व्यापक पैरामीटरों के भीतर ही इन कॉलोनियों की स्थापना की अनुमति दी जाए जहां विकास योजनाएं अनिवार्यतः स्पष्ट रूप से निजी विस्तार की गुंजाइश को दर्शाएं तथा जल, मल निकास आदि की उपलब्धता के साथ संघटित हों। जमीन का एक हिस्सा निर्धनों के आवास के लिए अभिचिन्हित करना अनिवार्य है, जो किसी भी सूरत में, "नगर क्षेत्र" को विभिन्न सेवाएं उपलब्ध कराएगा। भूमिगत जल के बहुत तेजी से समाप्त होते सार्वजनिक संसाधन के साथ, ऐसे नगर क्षेत्र जो शहरी धनवानों के लिए ही प्रबंध करते हैं, उनको सावधानी से मंजूरी देनी चाहिए। सबसे महत्वपूर्ण, द्वारयुक्त नगर क्षेत्रों को उचित रूप से संबंधित स्थानीय निकाय के न्यायाधिकार में तथा उनके नियमों एवं कानूनों के अधीनस्थ रखना चाहिए।

5.7.6.5 सिफारिशें :

(क) निजी नगर क्षेत्रों तथा द्वारयुक्त मुहल्लों को संबंधित स्थानीय निकाय के न्यायाधिकार के तहत तथा उसके कानूनों, नियमों एवं उप-नियमों के अधीन रखना चाहिए। तथापि, उनके अपने उपक्षेत्र के भीतर आधारभूत संरचना तथा सेवाओं के प्रावधान के लिए तथा/अथवा करों और प्रभारों के एकत्रण के लिए उनके पास स्वायत्तता होनी चाहिए (पैराग्राफ 5.7.7.2)।

(ख) बृहत क्षेत्रीय शहरी आयोजना प्रक्रिया के व्यापक पैरामीटरों के भीतर ही इन निजी, द्वारयुक्त कॉलोनियों की स्थापना को अनुमति दी जाए जहां विकास योजनाएं अनिवार्यतः स्पष्ट रूप से निजी विस्तार की गुंजाइश को दर्शाएं, कम लागत वाले आवास बनाया जाना अनिवार्य बनाने का प्रावधान बनाए तथा आधारभूत सेवाओं की उपलब्धता उन विकास योजनाओं के साथ संघटित हों।

5.7.7 विशेष आर्थिक क्षेत्र (एसईजेड)

5.7.7.1 विशेष आर्थिक क्षेत्र अधिनियम, 2005 दिनांक 10 फरवरी, 2006 से प्रभावी हुआ। नई एसईजेड नीति की घोषणा होने से ही भारत देश के अलग-अलग भागों में विशेष आर्थिक क्षेत्र स्थापित करने की इच्छा रखने वाले निर्माणकर्ताओं की भीड़ का साक्षी है। एसईजेड से संबंधित कई नीति तथा पुनर्वास संबंधी मुद्दे हैं जिनका संघ और राज्य सरकारों द्वारा निराकरण किया जा रहा है। परंतु शासन का एक मसला जिसे सुलझाया जाना जरूरी है, वह है एसईजेड तथा स्थानीय सरकारों के बीच का संपर्क/स्पष्ट रूप से, संवैधानिक रूप से निर्वाचित सरकारों के न्यायाधिकार से बाहर देश के भीतर कोई भी हिस्सा मौजूद नहीं हो सकता। इसलिए, एसईजेड को स्थानीय शासनों से संबंधित कानूनों और नियमों के अनुरूप होना अनिवार्य है। स्थानीय शासनों में केवल उनकी कार्यात्मक स्वायत्तता सुनिश्चित करना; एसईजेड का संघटन, एक प्रमुख चुनौती है।

5.7.7.2 आंध्र प्रदेश में, वर्ष 1996 में, औद्योगिक अवसंरचना निगम ने व्यवहार्य तथा सफल मॉडल तैयार किया। स्थानीय उद्यमियों को औद्योगिक संपत्तियों का प्रबंधन सौंपा गया था, तथा क्षेत्र में इकाइयों/प्लॉटों से सेवा प्रभारों (करों) को उगाहने का प्राधिकार दिया गया था। स्थानीय शासन तथा औद्योगिक एस्टेट के बीच एक सहमति हुई थी, जिसमें उगाहे गए करों के 30 प्रतिशत को नगरपालिका को अंतरित किया जाना था। इसके परिणामस्वरूप, औद्योगिक नगर क्षेत्र ने नगरपालिका की सहायता की जबकि बदले में सेवाओं की गुणता और स्थानीय स्वायत्तता को सुरक्षित रखा गया। ऐसा दृष्टिकोण एसईजेड के लिए आदर्श होगा।

5.7.7.3 आयोग का विचार है कि एसईजेड में स्थानीय नागरिक कानूनों को लागू कने के संबंध में स्थानीय निकायों के पास पूरा न्यायाधिकार होना चाहिए। एसईजेड अपने क्षेत्रों में आधारभूत संरचना तथा नागरिक सेवाएं देने में सक्षम हो सके, इसके लिए उनको कुछ अंश में स्वायत्तता देना वांछनीय है। एसईजेड क्षेत्रों से स्थानीय निकायों द्वारा उगाहे गए करों को एसईजेड प्रबंधन के साथ उनके द्वारा प्रदान की गई नागरिक सुविधाओं के बदले में बांटा जा सकता है। इस प्रकार की व्यवस्था से, एसईजेड की स्वायत्तता सुरक्षित होगी, स्थानीय सरकारों का प्राधिकार बिना राजस्व अपचय के बचा रहेगा तथा अपेक्षित अतिरिक्त अवसंरचना निर्माण के लिए स्थानीय शासन के राजस्व में वृद्धि के लिए संसाधन जुटाए जाएंगे।

5.7.7.4 सिफारिशें :

(क) निजी नगर क्षेत्रों में जैसा होता है, एसईजेड में स्थानीय नागरिक कानूनों को लागू करने के संबंध में संबंधित स्थानीय निकायों के पास पूरा न्यायाधिकार होना चाहिए।

(ख) एसईजेड क्षेत्र में आधारभूत संरचना तथा सुविधाओं के प्रावधान हेतु एसईजेड को स्वायत्तता दी जा सकती है। एसईजेड क्षेत्र में उगाहे गए संसाधनों को बांटने के लिए एक फार्मूला तैयार किए जाने की आवश्यकता है।

5.8 शहरी स्थानीय निकाय तथा राज्य सरकार

5.8.1 राज्यों में शहरी स्थानीय निकायों को शासित करने वाले यथा प्रचलित कानून में इन निकायों के ऊपर सरकारी नियंत्रण के संबंध में उपायों को निर्धारित करने वाले विभिन्न प्रावधान शामिल हैं। ऐसे नियंत्रण निम्नलिखित रूप में हैं :

(i) प्रमुख परियोजनाओं के लिए राज्य सरकार का अनुमोदन प्राप्त करने की आवश्यकता।

(ii) दस्तावेजों को प्रस्तुत करने की राज्य सरकार की शक्ति।

(iii) शहरी स्थानीय निकायों के कार्यालयों अथवा कार्यों की जांच करने की राज्य सरकार की शक्ति।

(iv) शहरी स्थानीय निकायों को निदेश जारी करने की राज्य सरकार की शक्ति।

(v) शहरी स्थानीय निकायों द्वारा पारित किसी भी संकल्प (संकल्पों) को आस्थगित या रद्द करने की राज्य सरकार की शक्ति।

(vi) शहरी स्थानीय निकायों को भंग अथवा उसका स्थान लेने की राज्य सरकार की शक्ति।

5.8.2 इस प्रकार की शक्तियों का प्रयोग राज्य सरकार के जिलाधीश, नगरनिगम आयुक्त तथा अन्य अधिकारियों के माध्यम से किया जाएगा। अभिप्रायः समझाने के लिए तमिलनाडु जिला नगरपालिका अधिनियम, 1920; कोलकाता नगर निगम अधिनियम, 1980 तथा पंजाब नगर निगम अधिनियम, 1976 में से उद्धरण **अनुबंध-v(2)** में दिए गए हैं।

5.8.3 आयोग का विचार है कि चूंकि स्थानीय निकाय (दोनों शहरी तथा ग्रामीण) शासन की तीसरी कड़ी हैं, जो क्षेत्र उसको निर्धारित किए गए हैं उनकी उनके पास पूर्ण स्वायत्तता होनी चाहिए। इसके

साथ, यह सुनिश्चित करना भी राज्य सरकार की जिम्मेदारी होनी चाहिए कि स्थानीय सरकारें अपने कामकाज कानून के अनुसार करें। परंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि राज्य सरकार स्थानीय सरकारों के रोजमर्रा के कामकाज में नियंत्रण करें। इस प्रकार, स्थानीय सरकारों की कार्यात्मक स्वायत्तता तथा कानून के तहत राज्य सरकार की समुचित शासन सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी के बीच एक संतुलन बनाना होगा। किसी संकल्प को स्थगित अथवा निरस्त तथा विशेष परिस्थितियों के तहत, स्थानीय निकाय को भंग अथवा उसका स्थान लेने जैसे मदों तक ही राज्य सरकार की शक्तियों को सीमित रखा जाना चाहिए। लेकिन ऐसी शक्तियों का प्रयोग भी कभी-कभार तथा स्थानीय निकाय के माध्यस्थम से रिपोर्ट प्राप्त करने पर ही करना चाहिए। आयोग ने पहले ही इस रिपोर्ट के पैरा 3.8.4 में जिलों के समूह के लिए स्थानीय निकाय के माध्यस्थम की नियुक्ति की सिफारिश की है। इसने यह भी सिफारिश की है कि जहां जिलों के समूह के दायरे में महानगर भी आता है तो उस महानगर के लिए स्थानीय निकाय माध्यस्थम अलग से होना चाहिए। शहरी स्थानीय निकायों द्वारा पारित संकल्पों के मामले में, जिन्हें संबंधित राज्य सरकार अपने कार्यसीमा से परे मानती है अथवा जहां राज्य सरकार का मत है कि प्रशासनिक तंत्र पूरी तरह बिगड़ जाने अथवा वित्तीय दिवालियापन अथवा संस्थापित भ्रष्टाचार आदि होने के आधार पर शहरी स्थानीय निकायों को भंग अथवा उसका स्थान ले लेने की आवश्यकता है, तो उस राज्य सरकार को जांच के लिए संबंधित स्थानीय निकाय माध्यस्थम के समक्ष दस्तावेज प्रस्तुत करने चाहिएं। माध्यस्थम को मामले पर अपनी रिपोर्ट राज्य के राज्यपाल को प्रस्तुत करनी चाहिए। इसके अलावा, यदि राज्य सरकार के पास कोई रिकार्ड है या उसके पास पर्याप्त कारण हैं, जो यह दर्शाते हैं कि किसी शहरी स्थानीय निकाय अथवा उसके निर्वाचित प्रतिनिधि के विरूद्ध जांच के लिए कार्रवाई शुरू की जानी चाहिए, तो ऐसे मामलों में भी माध्यस्थम के सामने दस्तावेज पेश किए जाने चाहिएं। इन मामलों में भी माध्यस्थम को अपनी रिपोर्ट निर्धारित समय के भीतर राज्यपाल को भेजनी चाहिए।

5.8.4 सिफारिशें :

(क) नगरपालिका सरकारों के पास उनको सौंपे गए कार्यों/कार्यकलापों को करने की पूर्ण स्वायत्तता होनी चाहिए।

(ख) यदि राज्य सरकार को लगता है कि ऐसी परिस्थितियां है कि शहरी स्थानीय निकायों द्वारा पारित किसी संकल्प को स्थगित या निरस्त करना अथवा उन निकायों को ही भंग करना या

उनका स्थान लेना आवश्यक हो गया है, तो उस राज्य सरकार को संबंधित स्थानीय निकाय माध्यस्थम को मामले को संदर्भित किए बिना इस प्रकार का कदम नहीं उठाना चाहिए तथा माध्यस्थम द्वारा यथा संस्तुत कार्रवाई करनी चाहिए।

(ग) यदि, किसी भी समय, राज्य सरकार के पास रिकार्ड हैं अथवा शहरी स्थानीय निकायों या उसके निर्वाचित प्रतिनिधियों के विरूद्ध कार्रवाई शुरू करने के पर्याप्त कारण हैं, तो उन रिकार्ड को जांच के लिए स्थानीय निकाय संबंधित माध्यस्थम के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए।

निष्कर्ष

लोकतांत्रिक अधिशासन तथा नागरिक संप्रभुता हमारे संविधान के स्तंभ हैं। लोकतंत्र फलता-फूलता है और नागरिकों को अच्छे अधिशासन का फल तभी प्राप्त होता है जब अधिकतर निर्णय जनता को ध्यान में रख कर लिए जाते हैं। इस प्रकार की जन-केन्द्रित शासन प्रक्रिया न केवल हमारी राजतैनिक प्रणाली की भागीदारी और वैधता को बढ़ाती है, अपितु सेवाओं की सुपुर्दगी में अधिक प्रभावोत्पादकता तथा उत्तरदायी शासन सुनिश्चित करती है। लोकतंत्र तभी परिपक्व होता है जब वोट और लोगों के बीच का जुड़ाव पक्की तरह नागरिकों के मन में बैठ जाता है। लोग कर अदा करने के लिए तभी राजी होंगे जब इलाके में बेहतर सेवाओं के लिए कर राशि का इस तरह से उपयोग हो कि करदाता जहां सार्वजनिक राशि का उपयोग हो रहा हो उसकी सराहना करे। जब तक प्रत्येक स्तर पर प्राधिकरण अपनी जिम्मेदारियों को नहीं समझते, हम अन्यत्र स्थितियों की दुष्क्रियात्मक प्रणालियों द्वारा संचालित होते रहेंगे, तथा नागरिकों का हमारी लोकतांत्रिक प्रक्रिया से मोहभंग होना जारी रहेगा। यह रिपोर्ट तथा आयोग की सिफारिशें लोकतंत्र, वैधता तथा प्रभावोत्पादकता के इस स्पष्ट तथा असंदिग्ध तर्क पर आधारित है।

स्थानीय शासनों को सशक्त करते समय तीन मूलभूत मुद्दों का निराकरण किया जाना आवश्यक है। पहला, लोकतांत्रिक संस्थानों को ध्यानपूर्वक परिपोषण, प्रचुर धैर्य तथा संस्थागत रूपरेखाओं की आवश्यकता है जो लाभों में वृद्धि करे और सतत स्व-संशुद्धि को सुनिश्चित करे। दूसरा, शक्तियों का सुपुर्दगी किसी भी रूप में कष्टकारक तथा मुश्किल होता है। स्थानीय शासन स्वतंत्रता के 60 साल बाद अब जाकर अपनी जड़ें जमा रही हैं। दशकों के दौरान ज्यों-ज्यों राज्य सरकारों ने अपने आप को स्थापित किया है, यह सामान्य प्रवृत्ति है कि वे अपना प्रभुत्व बनाए रखना चाहती हैं, तथा स्थानीय शासनों के सशक्तिकरण का विरोध करती हैं। शक्तियों का विसर्जन कभी आसान नहीं होता, और असाधारण तरीके से विरोध होता है। अतः जबकि स्थानीय शासन अधिक मजबूत तथा अधिक अनुनादी हो रहे हैं, राज्यों को नई एवं अहम भूमिका को तलाशने देना चाहिए। कुछ अंशों में, संघ सरकार ने पिछले दो दशकों के दौरान राज्यों के संबंध में इस प्रकार की भूमिका खोज ली है। राजनैतिक, आर्थिक तथा विधिक परिवर्तनों ने राज्यों की तुलना में संघ की भूमिका को पूरी तरह से बदल दिया है, और फिर भी यद्यपि केन्द्र के नियंत्रण में गिरावट हुई है, इसके नेतृत्व और समन्वय की भूमिका पहले से भी ज्यादा अहम है। स्थानीय

शासनों की तुलना में राज्यों की भूमिका में ऐसा बदलाव गंभीर है। तीसरा, स्थानीय शासनों के सशक्तिकरण को निरंतरता तथा जबावदेही सुनिश्चित करना अनिवार्य है। मौजूदा संस्थाओं का थोक विलोपन तथा मौजूदा प्रक्रियाओं को रातों-रात नकारा नहीं जा सकता। ध्यानपूर्वक परिवर्तन तथा वर्तमान व्यवस्थाओं के सामर्थ्यों का उपयोग महत्वपूर्ण है। समान रूप से, शक्तियों के विकेन्द्रीकरण से अधिक प्रभावोत्पादकता तथा उत्तरदायित्व की ओर बढ़ना चाहिए, न सिर्फ विकेन्द्रीकृत भ्रष्टाचार एवं उत्पीड़न।

आयोग ने अपनी सिफारिशें करते समय इन सभी सोच-विचारों को संतुलित करने का प्रयत्न किया है। समस्त लोकतांत्रिक परिवर्तन निरंतरता तथा बदलाव पर आधारित हैं। हमें विश्वास है कि भारत मौलिक शासन संबंधी परिवर्तनों के लिए तैयार है, तथा सशक्त, जन-केन्द्रित, जबावदेह स्थानीय शासन इस परिवर्तन के केन्द्र में हैं। हम विश्वस्त हैं कि अगले दशक के भीतर भारतीय लोकतंत्र उस हद तक परिपक्व हो जाएगा कि लोगों की जिन्दगियों को प्रभावित करने वाले अधिकतर निर्णय हितधारकों के समूहों तथा स्थानीय शासनों में निहायत जमीनी स्तर पर लिए जाएंगे; कार्यों के सामुदायिक प्रबंधन में नागरिकों की प्रत्यक्ष और प्रभावी भूमिका होगी; और सेवा सुपुर्दगी तथा रोजमर्रा का शासन प्रभावी, न्यायसंगत तथा पारदर्शी होगा। यह रिपोर्ट इस सोच को व्यावहारिक आकार देती है, तथा आयोग की सिफारिशों को इस सोच की खोज में संपूर्णतावादी रूप से देखा जाना चाहिए।

सिफारिशों का सारांश

1. (पैरा 3.1.1.12) सहायता का सिद्धान्त

   क. अनुच्छेद 243 छ निम्न प्रकार संशोधित किया जाना चाहिए :

   "इस संविधान के उपबंधो के अधीन राज्य विधानमंडल कानून द्वारा समुचित स्तर पर ऐसी शक्तियों तथा प्राधिकार पंचायत को सुपुर्द करेगा जो कि सभी प्रकार के कार्यों के संबंध में स्व-शासन की संस्थाओं के रूप में कार्य करने के लिए उन्हें समर्थ बनाने हेतु आवश्यक है, जिन्हें ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के संबंध में कार्यों सहित स्थानीय स्तर पर निष्पादित किया जा सकता है।"

   ख. शहरी स्थानीय निकायों के सशक्तिकरण के लिए अनुच्छेद 243ब में इसी प्रकार संशोधन किया जाना चाहिए।

2. (पैरा 3.1.2.4) स्थानीय निकायों की अभिव्यक्ति का सुदृढ़ीकरण।

   क. संसद प्रत्येक राज्य में स्थानीय शासन द्वारा निर्वाचित सदस्यों को शामिल करते हुए विधान परिषद के गठन हेतु कानून बना सकती है।

3. (पैरा 3.1.3.11) स्थानीय निकायों की संरचना

   क. अनुच्छेद 243 ख (1) पठन हेतु निम्न प्रकार संशोधित किया जाना चाहिए:

   "प्रत्येक राज्य में, जैसा कि राज्य विधायिका कानून द्वारा प्रबंध कर सकती है, इस भाग के उपबंधों के अनुसार उचित स्तर पर इनका गठन किया जाएगा।"

   ख. अल्प सुविधा प्राप्त करने वाले वर्गों तथा महिलाओं का पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए सीटों के आरक्षण के संबंध में संवैधानिक उपबंधों (अनुच्छेद 243 (घ) को वर्तमान स्वरूप में ही रखना आवश्यक है।

   ग. संसद सदस्यों तथा राज्य विधानमंडलों के सदस्यों को स्थानीय निकायों का सदस्य नहीं बनना चाहिए।

घ. अनुच्छेद 243ग (1) को प्रतिधारित किया जाना चाहिए।

ड. अनुच्छेद 243ग (2 एवं 3) को निरसित कर उसकी जगह अनुच्छेद 243ग (2) को निम्नानुसार प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए।

243ग (2) इस भाग के उपबंधों के अधीन राज्य विधानमंडल कानून बनाकर पंचायतों की संरचना तथा चुनाव प्रक्रिया के संबंध में इस शर्त पर उपबंध कर सकता है कि किसी श्रेणी में अध्यक्ष अथवा सदस्यों के दो पदों में से किसी एक पद पर प्रत्यक्ष रूप से चुनाव कराया जाएगा।

बशर्ते कि, किसी श्रेणी में सदस्यों के प्रत्यक्ष चुनावों के मामलें में किसी भी स्तर पर एक पंचायत के भू-भागीय क्षेत्र की जनसंख्या तथा ऐसी पंचायत में चुनाव द्वारा भरी जाने वाली सीटों की संख्या के बीच अनुपात, जहाँ तक व्यवहार्य हो सके, पूरे राज्य में समान होगा। प्रत्येक पंचायत क्षेत्र को भी भू-भागीय चुनाव क्षेत्रों में इस ढंग से बांटा जाएगा कि प्रत्येक चुनाव क्षेत्र की जनसंख्या तथा इसको आंवटित सीटों की संख्या का अनुपात जहां तक व्यवहार्य हो, पूरे पंचायत क्षेत्र में समान होगा।

च. प्रत्येक जिले में एक जिला परिषद होगी जिसमें शहरों एवं ग्रामीण क्षेत्र दोनों का प्रतिनिधित्व होगा।

छ. 243ख (2) को निम्न प्रकार प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए:

"प्रत्येक जिले में सभी शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र दोनों के प्रतिनिधित्व के साथ एक जिला परिषद् का गठन किया जाएगा तथा वह संविधान के अनुच्छेदों 243छ और 243ब के उपबंधों के अनुसार शक्तियों एवं कार्यों का उपयोग करेगी।"

4. (पैरा 3.2.1.12) चुनाव प्रक्रिया

क. परिसीमन एवं निर्वाचन क्षेत्रों के आरक्षण का कार्य राज्य निर्वाचन आयोगों को सौंपा जाना चाहिए।

ख. सभी राज्यों में स्थानीय शासन कानून राज्य निर्वाचन आयोगों द्वारा नामों में बगैर किसी बदलाव के स्थानीय सरकारों के लिए विधान सभा निर्वाचन सूचियों के अंगीकरण हेतु उपलब्ध कराया जाना चाहिए। इस प्रकार की प्रक्रिया को प्रभावी बनाने के लिए यह

सुनिश्चित करना आवश्यक है कि भारत के निर्वाचन आयोग द्वारा मतदाता पंजीकरण एवं निर्वाचन सूचियां के भौगोलिक सहवर्तिता पर आधारित है। उसी प्रकार स्थानीय निकायों के चुनावों हेतु निर्वाचन मंडलों को प्रखण्ड निर्माण दृष्टिकोण का अनुपालन करना चाहिए।

ग. मतदाता पंजीकरण नियम, 1960 में सघन भौगोलिक इकाई के रूप में 'भाग' को परिभाषित करने के लिए संशोधन किया जाना चाहिए।

घ. जनगणना आंकड़ों तथा मतदाता सूची के बीच अभिसारिता प्राप्त करने के लिए किसी 'भाग' की सीमाएं तथा 'परिगणन खण्ड' को मिलना चाहिए।

ड. सीटों के आरक्षण को नीचे उल्लिखित दो सिद्धांतों में से किसी एक का अनुपालन करना चाहिए:

(i) एकल-सदस्य चुनाव क्षेत्र के मामले में चक्र प्रत्येक 5 वर्षों की कम से कम 2 अवधियों के लिए हो सकता है ताकि नेतृत्व के लंबे समय तक चलने तथा चुनाव क्षेत्रों के पोषण की सम्भावना बनी रहे।

(ii) एकल सदस्य चुनाव क्षेत्रों की बजाय चुनाव, सीटों के आरक्षण को सुनिश्चित करते हुए नामांकन पद्धति द्वारा बहुसदस्यीय चुनाव क्षेत्रों के आधार पर कराए जा सकते हैं इससे चक्रण की आवश्यकता से बचा जा सकेगा तथा इससे आरक्षित श्रेणी के लिए सीटों के आवंटन की गारंटी हो जाएगी।

च. जिले तथा महानगरीय आयोजना समितियों के निर्वाचित सदस्यों के लिए चुनाव संचालित करने का कार्य राज्य निर्वाचन आयोग को सौंप देना चाहिए।

5. (पैरा 3.2.2.6) राज्य निर्वाचन आयोग का गठन

क. राज्य निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति एक अधिशासी मंडल, जिसमें मुख्य मंत्री, राज्य विधान सभा अध्यक्ष तथा विधान सभा में विपक्ष के नेता शामिल होते है, की सिफारिश पर राज्यपाल द्वारा की जानी चाहिए।

ख. भारत के निर्वाचन आयोग तथा राज्य निर्वाचन आयोगों को समन्वय, एक-दूसरे के अनुभवों से सीखने एवं संसाधनों की सहभागिता के लिए एक समान मंच पर लाने हेतु एक संस्थात्मक कार्यतंत्र सृजित किया जाना चाहिए।

6. (पैरा 3.2.3.4) वैधानिक निकायों में प्रतिनिधित्व में शहरी ग्रामीण असंतुलन को दुरुस्त करना

क. तेजी से बढ़ते हुए शहरीकरण को ध्यान में रखते हुए शहरी एवं ग्रामीण जनसंख्या के बीच निर्वाचकीय असंतुलन को दूर करने के लिए प्रत्येक जनगणना के बाद राज्य के अन्दर लोकसभा एवं विधान सभा दोनों के लिए भू-भागीय निर्वाचन के समायोजन का कार्य पूरा करना चाहिए। संविधान के अनुच्छेद 81, 82, 170, 330 एवं 332 में संशोधन की आवश्यकता है।

7. (पैरा 3.3.1.7) शक्तियों एवं उत्तरदायित्वों की सुपुर्दगी

क. कानून के प्रत्येक विषय के संबंध में स्थानीय शासन के प्रत्येक स्तर पर कार्यों का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए। यह एकबारगी कार्य नहीं है तथा स्थानीय रूप से संगत सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रमों, संगठनों के पुनर्गठन तथा विषय से संबंधित कानून बनाते समय इसे लगातार रूप से किया जाना होगा।

ख. कानून संबंधी प्रत्येक विषयवस्तु, जिसके कार्यात्मक संघटक है तथा जिन पर स्थानीय स्तर पर बेहतर ढंग से ध्यान दिया जाता है, को ऐसे स्तरों पर या तो कानून अथवा अधीनस्थ विधान में उपयुक्त सुपुर्दगी के लिए प्रावधान होना चाहिए। सभी संगत, केन्द्रीय एवं राज्य कानूनों की तुरंत समीक्षा की जानी होगी तथा उनमें उचित संशोधन किया जाना होगा।

ग. नए कानूनों के मामलों में यह उचित होगा कि 'स्थानीय शासन ज्ञापन' (वित्तीय ज्ञापन तथा अधीनस्थ विधान ज्ञापन के सदृश्य) शामिल किया जाए, जिसमें यह उल्लेख होना चाहिए कि किए जाने वाले किसी भी कार्य में स्थानीय सरकार शामिल है यदि हां तो क्या इसकी कानून में व्यवस्था की गई है या नहीं।

घ. शहरी स्थानीय निकायों के मामलों में, बारहवीं अनुसूची में शामिल कार्यों के अतिरिक्त निम्नलिखित कार्य शहरी स्थानीय निकायों को सुपुर्द किया जाना चाहिए:

➢ स्कूल शिक्षा
➢ जन-स्वास्थ्य, इसमें सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र/क्षेत्र अस्पताल शामिल हैं।
➢ यातायात प्रबंधन एवं नागरिक नीति निर्धारण कार्यकलाप।
➢ शहरी पर्यावरण प्रबंधन एवं विरासत, और
➢ पंजीकरण सहित भूमि प्रबंधन।

ये तथापि, केवल व्याख्यात्मक अतिरिक्त कार्य है तथा संबंधित राज्यों द्वारा शहरी स्थानीय निकायों को ऐसे कार्यों की सुपुर्दगी की जा सकती है।

8. (पैरा 3.4.20) स्थानीय निकायों के लिए कानूनी ढांचा

क. भारत सरकार को स्थानीय सरकारों के लिए कानूनी ढांचे का मसौदा बनाकर उसे संसद के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए। कानूनी ढांचे के लिए राज्य को स्वीकार्य दक्षिणी अफ्रीकी अधिनियम की तर्ज पर संविधान के अनुच्छेद 252 के अधीन एक अधिनियम बनाया जा सकता है। इस कानून में निम्नलिखित के आधार पर स्थानीय सरकारों तथा समुदायों को शक्तियों, उत्तरदायित्वों तथा कार्यों की सुपुर्दगी के विस्तृत सिद्धान्तों का वर्णन होना चाहिए।

- **नियंत्रण का सिद्धांत**
- **लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण**
- **कार्यों का रेखांकन**
- **सही अर्थों में सुपुर्दगी**
- **अभिसारिता**
- **नागरिक केन्द्रिकता**

9. (पैरा 3.5.2.18) राज्य वित्त आयोग (एसएफसी)

क. यह आयोजन पैरा 3.5.2.8 में यथा सूचीबद्ध राज्य वित्त आयोग के कार्यों के संबंध में बारहवें वित्त आयोग के विचारों का समर्थन करता है और उसकी पुनरावृत्ति करता है।

ख. संविधान का अनुच्छेद 243झ (1) संशोधित किया जाना चाहिए। जिसमें "प्रत्येक पांचवें वर्ष" शब्द के बाद "जितना जल्दी हो सके" वाक्यांश शामिल किया जाना चाहिए।

ग. प्रत्येक राज्य को अधिनियम के माध्यम से राज्य वित्त आयोग के सदस्य नियुक्त किए जाने वाले योग्य व्यक्तियों की शैक्षणिक योग्यता निर्धारित करनी चाहिए।

घ. राज्य वित्त आयोगों को निधियों की सुपुर्दगी एवं वितरण के लिए उद्देश्यपरक एवं पारदर्शी मानदंड बनाना चाहिए। मानदंडों में पिछड़ेपन हेतु क्षेत्रवार सूचकांक शामिल किया जाना चाहिए। राज्य वित्त आयोगों को नागरिकों की आशा के अनुरूप नागरिक सुविधाओं के स्तर/गुणवत्ता के साथ निधियों की सुपुर्दगी की जानी चाहिए। इससे तब एक प्रभावी मूल्यांकन का आधार बनाया जा सकता है।

ड. राज्य वित्त आयोग की सिफारिशों पर कृत कार्रवाई रिपोर्ट प्रस्तुतिकरण के 6 माह के अन्दर संबंधित राज्य विधान सभा के समक्ष आवश्यक रूप से प्रस्तुत की जानी चाहिए तथा इसके बाद एक परिशिष्ट के माध्यम से सुपुर्दगी के संबंध में एक वार्षिक विवरण और प्रत्येक स्थानीय निकायों को दिया गया अनुदान तथा अन्य सिफारिशों के कार्यान्वयन की जानकारी राज्य बजट दस्तावेज में दी जानी चाहिए।

च. राज्यों से तीन स्तरीय सरकारों को सुपुर्दगी में सुधार लाने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए केन्द्र से राज्यों को सुपुर्दगी में प्रोत्साहन राशि का समावेश किया जा सकता है।

छ. बारहवें वित्त आयोग द्वारा की गयी सिफारिश के अनुसार समान प्ररूप अपनाए जाने चाहिए तथा राज्य वित्त आयोगों द्वारा प्रयोग हेतु वार्षिक लेखा एवं अन्य आंकड़ों को संकलित एवं अद्यतन किया जाना चाहिए।

ज. राज्य वित्त आयोगों को स्थानीय निकायों की वित्तीय स्थिति का सम्पूर्ण विश्लेषण करना चाहिए तथा उनके कार्यों में सुधार हेतु ठोस सिफारिश करनी चाहिए। छोटे स्थानीय निकायों के मामलों में सिफारिशें और अधिक विशिष्ट होनी चाहिए। राज्य वित्त आयोग के पास उपलब्ध ऐतिहासिक आंकडे होने तथा आंकड़ा सग्रहण में क्षमता बढ़ने के साथ राज्य वित्त आयोग आवश्यक विस्तृत विश्लेषण करने की स्थिति में हो जाएगा। बड़ी शहरी बस्तियाँ की विशेष रूप से महानगरों के लिए, विशेष आवश्यकताओं पर राज्य वित्त आयोग द्वारा विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए।

झ. राज्य वित्त आयोग को स्थानीय निकायों के कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए मानक स्थापित करना चाहिए।

ञ. यह आवश्यक है कि एक कार्यतंत्र बनाया जाए, जिससे राज्य वित्त आयोगों की सभी सिफारिशों के कार्यान्वयन की समीक्षा की जा सके। यह आवश्यक समझा गया तो स्थानीय निकायों को राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों के कार्यान्वयन की सहमति पर सशर्त निधियों की सुपुर्दगी की जा सकती है।

10. (पैरा 3.6.16) स्व-अधिशासन के लिए क्षमता निर्माण

क. ग्रामीण एवं शहरी स्थानीय स्व-अधिशासित संस्थाओं में क्षमता निर्माण प्रयास उक्त निकायों चाहे वे निर्वाचित हो अथवा नियुक्त के साथ संबंद्ध व्यक्तियों की व्यावसायिक तथा कौशल

उन्नयन के साथ-साथ संगठनात्मक निर्माण आवश्यकताओं की भी देखरेख करनी चाहिए। संबद्ध पंचायत तथा नगरपालिका विधान तथा उनके अधीन निर्मित नियमपुस्तिकाओं में इस संबंध में स्पष्ट प्रावधान किया जाना चाहिए।महिला सदस्यों के लिए विशेष क्षमता निर्माण कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए।

ख. राज्य सरकारों को, जहां तक सम्भव हो सके, स्थानीय निकायों को उचित दिशानिर्देशों तथा सहायता के माध्यम से सार्वजनिक अथवा निजी अभिकरणों को विशिष्ट कार्य सौंपने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। बाह्य स्त्रोतों से कार्यकलाप कराने की जांच तथा उनको दिए गए कार्यकलापों की अनदेखी की जांच के लिए आंतरिक क्षमताओं का विकास किया जाना चाहिए।उसी प्रकार राज्य सरकार द्वारा स्थानीय निकायों में राजकोषीय अनुशासन तथा सत्यनिष्ठा सुधारने के लिए पारदर्शी एवं निष्पक्ष प्रापण कार्यविधियाँ अपनाए जाने की आवश्यकता है।

ग. व्यापक एवं पूर्ण प्रशिक्षण के लिए विभिन्न विषयों से संबंधित विशिष्ट प्रशिक्षण संस्थानों से विशेषज्ञता एवं संसाधनों की आवश्यकता है। यह वित्तीय प्रबंधन, ग्रामीण विकास, आपदा प्रबंधन एवं सामान्य प्रबंधन जैसे विभिन्न विषयों के साथ संबंधित संस्थानों के नेटवर्किंग द्वारा बेहतर ढंग से प्राप्त किया जा सकता है। इसे राज्य सरकारों में नॉडल अभिकरणों द्वारा सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

घ. क्षमता निर्माण की सहायता के रूप में इस तरह के निकायों के निर्धारित कर्त्तव्यों तथा उत्तरदायित्वों के निष्पादन के संदर्भ में विषय अध्ययन के प्रलेखीकरण, बेहतर व्यावहारिक अनुभवों और मूल्यांकन के लिए ग्रामीण एवं शहरी विकास हेतु राज्य योजनाओं के अधीन उचित योजना बनाने की आवश्यकता है।

ङ. निर्वाचित प्रतिनिधियों तथा कार्मिकों का प्रशिक्षण एक सतत कार्यकलाप माना जाना चाहिए।राज्य वित्त आयोगों द्वारा सिफारिश करते समय प्रशिक्षण पर आवश्यक व्यय को भी ध्यान में रखा जा सकता है।

च. जनता की बेहतर भलाई के लिए शैक्षिक अनुसंधान दीर्घावधिक कार्यनीतिक संस्थागत क्षमता निर्माण में एक निश्चित भूमिका अदा करता है। भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद् जैसे संगठनों को स्थानीय निकायों के कार्यों के विभिन्न पहलुओं पर सैद्धांतिक, अनुप्रयुक्त एवं कार्रवाई अनुसंधान के लिए निधि उपलब्ध् कराने हेतु प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

छ. स्थानीय निकायों द्वारा संघ/समूह द्वारा कुशल एवं विशेषज्ञों (जैसे कि इंजीनियर, योजनाकार इत्यादि) का एक संघ (पूल) बनाया जा सकता है। स्थानीय निकायों द्वारा इस सामान्य पूल का मूल्यांकन तब किया जा सकता है जब विशिष्ट कार्यों के लिए इसकी आवश्यकता हो।

11. (पैरा 3.7.5.6) विकेन्द्रीकृत आयोजना

क. ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व के साथ सभी जिलों में एक जिला परिषद् का गठन किया जाना चाहिए। इसे संविधान के अनुच्छेदों 243छ और 243ब के अनुसार शक्तियों एवं कार्यों के प्रयोग का अधिकार होना चाहिए। उस परिस्थिति में जिला आयोजना समितियाँ या तो अस्तित्व में ही नहीं रहेगी अथवा ज्यादा से ज्यादा जिला परिषद् की एक सलाहकार शाखा के रूप में कार्य करेगी। इसको सुगम बनाने के लिए संविधान का अनुच्छेद 243 संशोधित किया जाना चाहिए।

ख. इस अवधि में तथा वर्तमान संवैधानिक योजना के अनुसार स्थानीय निकायों के चुनाव पूरे होने के तीन महीनों के अन्दर सभी राज्यों में जिला आयोजना समिति का गठन किया जाना चाहिए तथा यह जिले के लिए एकमात्र योजना निकाय होनी चाहिए। जिला आयोजना समितियों को आयोजना कार्यलय द्वारा सहायता प्रदान की जानी चाहिए जिसमें एक पूर्णकालिक जिला आयोजना अधिकारी होना चाहिए।

ग. शहरी जिलों के लिए जहाँ पर नगरीय योजना कार्य विकास प्राधिकरणों द्वारा किए जा रहे हैं, उक्त प्राधिकरण जिला आयोजना समिति की तकनीका/आयोजना की शाखा तथा अंततः जिला परिषद् की शाखा होनी चाहिए।

घ. योजनाओं की तैयारी के लिए स्थानीय निकायों को सहायता उपलब्ध कराने हेतु प्रत्येक जिले में एक समर्पित केन्द्र की स्थापना की जानी चाहिए। सरकार के विभिन्न स्तरों के बीच सूचना के दोतरफा प्रवाह को भी सुनिश्चित किया जा सकता है।

ड. जिले के लिए योजना की तैयारी से संबंधित योजना आयोग द्वारा जारी दिशानिर्देशों तथा जिला स्तर पर योजना प्रक्रिया के संबंध में विशेषज्ञ समूह की सिफारिशों को सख्ती से कार्यान्वित करना चाहिए।

च. प्रत्येक राज्य सरकार को स्थानीय स्तर पर योजना की भागीदारी की कार्य प्रणाली विकसित करनी चाहिए तथा विकेन्द्रीकृत योजना की शासन प्रणाली को संस्था का रूप देने के लिए आवश्यक इस प्रकार की सहायता उपलब्ध करानी चाहिए।

छ. राज्य समय सीमा निर्धारित करते हुए एक योजना कैलेंडर तैयार कर सकते हैं, जिसके अन्दर प्रत्येक स्थानीय निकाय को अपनी योजना को अंतिम रूप देना है तथा जिलों के लिए सम्पूर्ण योजना की तैयारी में सहायता करने हेतु इसे अगले उच्चतर स्तर पर भेज देना चाहिए।

ज. राज्य आयोजना बोर्डों को यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि उनके द्वारा तैयार राज्य योजना जिला योजनाओं के साथ एकीकृत कर दी जाए। राज्यों के लिए यह आवश्यक कर देना चाहिए कि वे स्थानीय निकायों की योजनाओं को समेकित करने के पश्चात ही अपनी विकास योजनाएं तैयार करें। इस प्रक्रिया के सांस्थानिकीकरण के लिए राष्ट्रीय योजना आयोग को पहल करनी होगी।

(पैरा 3.7.6.2.4)

क. बाहरी क्षेत्रों के लिए योजना के कार्य को स्थानीय निकायों तथा योजना समितियों के बीच स्पष्ट रूप से बांटना होगा। स्थानीय निकाय शुरूआती स्तर पर ही योजना बनाने के लिए जिम्मेदार होने चाहिए। जिला आयोजना समिति/जिला परिषदें जब गठित की जाए और महानगर आयोजना समिति आंचलिक तथा क्षेत्रीय योजनाएं बनाने के लिए जिम्मेदार होनी चाहिए। जन परामर्श का स्तर प्रत्येक स्तर पर बढ़ाना चाहिए।

ख. महानगरीय क्षेत्रों (विस्तारित महानगर क्षेत्र) के लिए, शहर में बदलने की सम्भावना वाले पूरे क्षेत्र का राज्य सरकार द्वारा मूल्यांकन किया जाना चाहिए तथा उसके लिए गठित महानगर आयोजना समिति ऐसे क्षेत्रों के लिए जिला आयोजना समिति मान ली जाएगी। इस प्रकार के क्षेत्र में समानता एक से अधिक जिलों को शामिल किया जाएगा। उक्त जिलों के लिए जिला आयोजना समिति का गठन नहीं करना चाहिए (अथवा उनका अधिकार क्षेत्र संबंधित राजस्व जिले के ग्रामीण भाग तक सीमित किया जा सकता है)। महानगर आयोजना समिति को आसपास के शहरी क्षेत्र को शामिल करते हुए सम्पूर्ण महानगर क्षेत्र के लिए मास्टर प्लान/ सामुदायिक विकास कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करने के लिए कहना चाहिए।

ग. विकास प्राधिकरणों के योजना विभागों को जिला आयोजना समिति और महानगर आयोजना समिति के साथ मिला देना चाहिए, जो कि मास्टर प्लान तथा आंचलिक योजना तैयार करेंगे।

घ. महानगर आयोजना समिति द्वारा तैयार मास्टर प्लान सामुदायिक विकास कार्यक्रम के प्रवर्तन एवं विनियमन का कार्य संबंधित विस्तारित महानगर क्षेत्रों में पड़ने वाले सभी स्थानीय निकायों का विशिष्ट सांविधिक उत्तरदायित्व होना चाहिए।

ङ. शहरी प्रयोग के लिए भूमि के विकास, जहाँ पर यह विद्यमान है, में विकास प्राधिकरणों की एकाधिकार भूमिका को समाप्त कर देना चाहिए। तथापि, सरकारी अभिकरण गरीबों के लिए निम्न लागत वाले घरों के साथ-साथ कठिन नगर स्तरीय ढांचे के विकास में निरंतर महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इस उद्देश्य के लिए विकास प्राधिकरणों के अभियांत्रिकी एवं भूमि प्रबंधन विभागों को संबंधित नगर पालिका/निगम के साथ मिला देना चाहिए।

12. (पैरा 3.8.6) जिम्मेवारी एवं पारदर्शिता

क. लेखापरीक्षा समितियाँ स्थानीय निकायों में शामिल सभी व्यक्तियों की वित्तीय जानकारी की सत्यनिष्ठा, वित्तीय नियंत्रण की पर्याप्तता, लागू कानूनों तथा नैतिक आचरण के अनुपालन के संबंध में गलती जानने के लिए जिला स्तर पर राज्य सरकारों द्वारा गठित की जा सकती हैं। इन समितियों को स्वतंत्रता, सभी सूचनाओं की जानकारी, तकनीकी विशेषज्ञों के साथ संप्रेषण योग्यता तथा जनता के प्रति जवाबदेही होनी चाहिए। महानगर निगमों के लिए अलग लेखापरीक्षा समितियाँ गठित की जानी चाहिए। एक बार जिला परिषदों के अस्तित्व में आ जाने के बाद जिला परिषद् की एक विशेष समिति जिले के अन्दर लेखापरीक्षा रिपोर्ट तथा अन्य वित्तीय विवरणों की जांच कर सकती है। इस प्रकार की समिति को वित्तीय चूकों के लिए जिम्मेदारी तय करने के लिए की अधिकृत किया जा सकती है। जिला परिषद की अपनी लेखापरीक्षा रिपोर्ट के संबंध में विधान परिषद् की एक विशेष समिति समान कार्य को निभा सकती है।

ख. स्थानीय निकायों के लिए राज्य विधान सभा की एक अलग स्थायी समिति होनी चाहिए। यह समिति लोक लेखा समिति के समान कार्य कर सकती है।

ग. नीचे सुझाव दिए गए अनुरूप एक स्थानीय निकाय माध्यस्थम का गठन किया जाना चाहिए। संबंधित राज्य पंचायत अधिनियम तथा शहरी स्थानीय निकाय अधिनियम स्थानीय निकाय माध्यस्थम से संबंधित प्रावधान को शामिल करते हुए संशोधित किया जाना चाहिए।

(i) स्थानीय निकायों को पदाधिकारियों, निर्वाचित सदस्यों तथा कर्मचारियों दोनों के विरुद्ध भ्रष्टाचार तथा कुशासन की शिकायतों पर गौर करने के लिए जिलों के समूह हेतु स्थानीय निकाय माध्यस्थम का गठन होना चाहिए। इसके लिए संबंधित राज्य विधान सभा में 'सरकारी कर्मचारी' शब्दों को उचित रूप से परिभाषित किया जाना चाहिए।

(ii) राज्य के मुख्य मंत्री, राज्य विधान सभा अध्यक्ष तथा राज्य विधान सभा में विपक्ष के नेता को शामिल करके बनायी गयी समिति द्वारा नियुक्त स्थानीय निकाय माध्यस्थम एकल सदस्यीय निकाय होना चाहिए। माध्यस्थम का चयन सम्पूर्ण सत्यनिष्ठा के प्रतिष्ठित व्यक्तियों की सूची में से करना चाहिए तथा वह कोई कार्यरत सरकारी अधिकारी नहीं होना चाहिए।

(iii) माध्यस्थम को मामलों की जांच करने तथा कार्रवाई करने के लिए सक्षम प्राधिकारियों को रिपोर्ट प्रस्तुत करने का प्राधिकार होना चाहिए। सामान्य रूप से स्थानीय निकायों तथा इसके निर्वाचित पदाधिकारियों के विरूद्ध शिकायतों एवं भ्रष्टाचार संबंधी परिवेदनाओं एवं कुप्रशासन के मामले में स्थानीय निकाय माध्यस्थम को अपनी रिपोर्ट लोकायुक्त को भेजनी चाहिए जो अपनी सिफारिशों के साथ इसे राज्य के राज्यपाल को प्रेषित करेगा। माध्यस्थम की सिफारिशों से असहमत होने के मामले में उसका कारण सार्वजनिक स्थल पर प्रदर्शित करना चाहिए।

(iv) महानगर निगमों के मामलों में एक अलग माध्यस्थम का गठन करना चाहिए।

(v) माध्यस्थम को शिकायतों की जांच का कार्य निर्धारित समयसीमा के अंदर पूर्ण करना है।

घ. उक्त स्थानीय निकायों के कानून द्वारा प्रचालित चुनावों के उल्लंघन से संबंधित शिकायतों एवं परिवेदनाओं के मामले में सदस्यता निलम्बित/अयोग्य ठहरायी जा सकती है, जांच करने का प्राधिकार राज्य निर्वाचन आयोग के पास होना चाहिए, जो अपनी सिफारिशें आवश्यक रूप से राज्य के राज्यपाल को भेजेगा।

ड. स्थानीय निकायों के नियंत्रणाधीन कर्मचारियों के पदानुक्रम में नागरिकों को सुविधाएं पहुंचाने के लिए निम्नतम समुचित कर्मचारी को कार्यों का अधिकार सौंपा जाना चाहिए।

च. प्रत्येक स्थानीय निकाय के पास नागरिकों की शिकायतों को सुनने तथा उनके प्रत्युत्तर के लिए निर्धारित मानकों के साथ शिकायतों को दूर करने के लिए विभागीय साधन होने चाहिए।

छ. सुदृढ़ सामाजिक लेखापरीक्षा मानदंड स्थापित करने के लिए प्रत्येक राज्य सरकार जमीनी स्तर पर योजना" पर विशेषज्ञ समूह की रिपोर्ट के पैरा 5.9.5 में सुझाए गए कार्रवाई बिन्दुओं के कार्यान्वयन के लिए तुरन्त कदम उठाने चाहिए।

ज. यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 के अन्तर्गत साथ-साथ प्रकटीकरण उस अधिनियम की धारा 4(1) में दिए गए 17 मदों तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए लेकिन अन्य मामले, जिनमें जनता का हित शामिल है, भी इसमें शामिल किए जाने चाहिए।

झ. प्रत्येक राज्य द्वारा चिन्हित निष्पादन संकेतकों के आधार पर संदर्भिका पद्धति विकसित करने के लिए एक उचित कार्यविधि स्वीकार की जा सकती है। इस संबंध में स्वतंत्र पेशेवर मूल्यांकनकर्त्ताओं की सहायता भी ली जा सकती है।

ञ. स्थानीय निकायों के कार्यनिष्पादन के निर्धारण हेतु मूल्यांकन साधन निर्मित करने चाहिए जहाँ पर नागरिक मूल्यांकन के बारे में अपनी बात कह सकें। स्थानीय निकायों के निष्पादन के संबंध में प्रतिपुष्टि प्रक्रिया शामिल करने हेतु '"नागरिक रिपोर्ट कार्ड" जैसे साधनों की शुरूआत की जा सकती है।

13. (पैरा 3.9.22) लेखाकारण और लेखापरीक्षा)

क. राष्ट्रीय नगरपालिका लेखा नियमपुस्तिका में दिए गए अनुसार शहरी स्थानीय निकायों के लिए लेखाकरण प्रणाली राज्य सरकार द्वारा अपनाई जानी चाहिए।

ख. शहरी स्थानीय निकायों का वित्तीय विवरण एवं तुलन पत्र की लेखापरीक्षा कम्पनी अधिनियम, 1956 के अधीन सरकारी कम्पनियों की लेखापरीक्षा हेतु निर्धारित तरीकों से इस अन्तर के साथ की जाएगी कि स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा के मामले में नियंत्रक एवं महालेखा

परीक्षक को पार्टर्ड लेखाकारों की नामावली तैयार करने के लिए दिशानिर्देश निर्धारित करना चाहिए और इन दिशानिर्देशों के भीतर राज्य सरकारों द्वारा चयन किया जा सकता है। लेखापरीक्षा स्थानीय निधि लेखापरीक्षा द्वारा की जाएगी अथवा अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन करने के लिए नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा करायी गयी लेखापरीक्षा इस प्रकार की लेखापरीक्षा के अतिरिक्त होगी।

ग. पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों के लेखे के रखरखाव और लेखापरीक्षा पर तकनीकी दिशानिर्देश एवं पर्यवेक्षण उपलब्ध कराने के संबंध में भारत के नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक और राज्य सरकारों के बीच विद्यमान व्यवस्था को राज्य के कानूनों द्वारा नियंत्रित स्थानीय निकायों में प्रावधान करते हुए सांस्थनिकीकृत करना चाहिए।

घ. यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि पंचायतों के लिए लेखापरीक्षा तथा लेखाकरण मानक तथा प्ररुप इस तरीके से तैयार करने चाहिए जो कि पंचायती राज संस्थाओं के निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए आसान एवं बोधगम्य हो।

ड. निदेशक, स्थानीय निधि लेखापरीक्षा अथवा स्थानीय निकायों के लेखे की लेखापरीक्षा के लिए जिम्मेदार अन्य अभिकरण की स्वतंत्रता को राज्य प्रशासन के कार्यों के स्वतत्र बनाकर सांस्थानिकीकृत किया जाना चाहिए। इस संस्था का प्रमुख राज्य सरकार द्वारा नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा जांच की गयी नामावली में से नियुक्त किया जाना चाहिए।

च. स्थानीय निकायों को वित्त आयोग अनुदान स्थानीय निकायों के लेखे की लेखापरीक्षा पर नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक के तकनीकी पर्यवेक्षण के संबंध में व्यवस्था की स्वीकार्यता की शर्त पर जारी किया जा सकता है।

छ. स्थानीय निकायों की लेखापरीक्षा रिपोर्ट राज्य विधान मंडल के समक्ष प्रस्तुत की जानी चाहिए तथा उक्त रिपोर्ट पर लोक लेखा समिति की तर्ज पर राज्य विधानमंडल की एक पृथक समिति द्वारा विचार-विमर्श किया जाना चाहिए।

ज. लेखापरीक्षा संचालित करने के लिए डीएलएफए/नामोंदिष्ट प्राधिकरण अथवा नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक की संबद्ध सूचना रिकार्ड तक पहुंच स्थानीय निकायों को नियंत्रित करने वाले राज्य कानूनों में उचित प्रावधान शामिल करके सुनिश्चित करनी चाहिए।

झ. प्रत्येक राज्य को सुनिश्ति कर लेना चाहिए कि स्थानीय निकायों के पास लेखाकरण एवं लेखापरीक्षण के मानकों के समान पर्याप्त क्षमता होनी चाहिए।

ञ. परिणामी लेखापरीक्षा की प्रणाली की धीरे-धीरे शुरूआत की जानी चाहिए। इस उद्देश्य के लिए सरकारी योजना के संबंध में निष्पादन के मुख्य संकेतकों को अग्रिम रूप से तय तथा घोषित करने की आवश्यकता है।

ट. संस्थागत लेखापरीक्षा व्यवस्था करने के लिए स्थानीय निकायों में विवेकपूर्ण वित्तीय प्रबंधन पद्धतियों की स्वीकार्यता एवं अनुवीक्षण को पूर्ण करने के लिए स्थानीय निकायों के राजकोषीय उत्तरदायित्व पर एक समुचित कानून बनाकर राज्य सरकारों द्वारा इसे सांस्थानिकीकृत किया जाना चाहिए।

14. (पैरा 3.10.1.2) सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी

क. एकल स्थल सेवा के माध्यम से प्रक्रिया सरलीकरण, पारदर्शिता एवं जिम्मेवारी बढ़ाने तथा सेवाओं की सुपुर्दगी के लिए स्थानीय शासन द्वारा सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाना चाहिए।

15. (पैरा 3.10.2.8) अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी

क. सूचना आधार सृजित करने एवं सेवाएं प्रदान करने के लिए स्थानीय निकायों द्वारा अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाना चाहिए।

ख. स्थानीय शासन विभिन्न वेब एवं उपग्रह आधारित सेवाएं प्रदान कराने के लिए एकल स्थल सेवा केन्द्र होना चाहिए। तथापि, इसके लिए स्थानीय शासन में क्षमता निर्माण की आवश्यकता होगी।

16. (पैरा 4.1.3.5) ग्राम पंचायत का आकार

क. राज्यों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि जहां तक सम्भव हो सके ग्राम पंचायतें उचित आकार की होनी चाहिए, जिससे उनको स्वशासन की जीवनक्षम इकाई बनाया जा सके तथा इससे उनके प्रभावी लोकप्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जा सके। इस कार्य में स्थानीय भौगोलिक एवं जनसांख्यिकीय स्थितियों को ध्यान में रखने की आवश्यकता होगी।

17. (पैरा 4.1.4.4) वार्ड सभा-इसकी आवश्यकता

क. जहाँ पर बड़ी ग्राम पंचायतें हैं, राज्यों को वार्ड सभाओं के गठन के लिए कदम उठाने चाहिए, जोकि इस प्रकार की पंचायतें कुछ अधिकार तथा कार्य, जो कि उनको सौंपे जाएंगे, ग्राम सभा के तथा कुछ कार्य ग्राम पंचायत के प्रयोग में लाएंगे।

18. (पैरा 4.1.5.4) पंचायती राज संस्थाओं में कार्मिक प्रबंधन

क. पंचायतों को कार्मिकों को नियुक्त करने तथा राज्य सरकार द्वारा निर्धारित ऐसे कानूनों एवं मानकों के अधीन उनकी सेवाओं को विनियमित करने का अधिकार होना चाहिए। इस पद्धति का चलन तीन वर्षों से आगे नहीं बढ़ाया जाना चाहिए। तब तक पंचायतें, निश्चित अवधि के लिए राज्य सरकार के विभागों/अधिकरणों से कर्मचारियों को प्रतिनियुक्ति पर ले सकती है।

ख. कर्मचारियों के पंचायती राज संस्था स्वामित्व की योजना को कार्यान्वित करने के क्रम में अगले एक वर्ष में सभी राज्यों में कर्मचारी तैनात करने के प्रतिमानों तथा पद्धति की पंचायती राज संस्था कर्मचारी तैनात करने की शून्य आधारित दृष्टिकोण के साथ एक विस्तृत समीक्षा की जा सकती है। विशेष रूप से जिला पंचायतों को इस प्रक्रिया के साथ संबद्ध करना चाहिए।

19. (पैरा 4.1.6.8) पंचायती राज संस्थाएं और राज्य सरकार

क. उच्च स्तर पर अथवा अन्य किसी राज्य प्राधिकरण द्वारा पंचायत के बजट अनुमोदन के संबंध में कुछ राज्य अधिनियमों के प्रावधानों को समाप्त कर देना चाहिए।

ख. राज्य सरकारों की पंचायती राज संस्थाओं द्वारा पारित किसी प्रस्ताव को निलम्बित अथवा निरस्त करने अथवा पद के दुरुपयोग, भ्रष्टाचार इत्यादि के आधार पर निर्वाचित प्रतिनिधि के विरूद्ध कार्यवाही करना अथवा पंचायतों को बर्खास्त/विघटित करने का अधिकार नहीं होना चाहिए। ऐसे मामलों में जांच तथा सिफारिशी कार्रवाई करने का अधिकार स्थानीय माध्यस्थम के पास होना चाहिए, जो अपनी रिपोर्ट लोकायुक्त के माध्यम से राज्यपाल को भेजेगा।

ग. चुनाव अनियमिताओं तथा अन्य चुनाव संबंधी शिकायतों के लिए जांच प्राधिकरण राज्य चुनाव आयोग होना चाहिए, जो अपनी सिफारिशें राज्यपाल को भेजेगा।

घ. यदि किसी अवसर पर राज्य सरकार यह महसूस करती है कि ऊपर 'ख' में उल्लिखित एक या अधिक कारणों से पंचायतों अथवा उनके निर्वाचित प्रतिनिधियों के विरूद्ध तुरन्त कार्रवाई करने की आवश्यकता है तो उसे तुरन्त जांच हेतु माध्यस्थम के समक्ष रिकार्ड प्रस्तुत करना चाहिए। ऐसे सभी मामलों में माध्यस्थम अपनी रिपोर्ट एक निर्धारित समय सीमा के भीतर लोकायुक्त के माध्यम से राज्यपाल को भेजेगा।

ड. स्थानीय माध्यस्थम/लोकायुक्त द्वारा की गयी सिफारिशों के साथ असहमति के सभी मामलों में इसके कारण सार्वजनिक किए जाने की आवश्यकता है।

20. (पैरा 4.1.7.08) पराश्रितों की स्थिति

क. पराश्रितों को पंचायती राज संस्थाओं के प्राधिकार को चुनौती देने की अनुमति नहीं देनी चाहिए।

ख. जिला ग्रामीण विकास अभिकरण की निरंतरता की आवश्यकता नहीं है। केरल, कनार्टक और पश्चिम बंगाल द्वारा उठाए गए कदमों का अनुसरण करते हुए अन्य राज्यों में भी जिला ग्रामीण विकास अधिकरण को संबंधित जिला पंचायतों (जिला परिषदों) के साथ विलय कर देना चाहिए। इसी प्रकार की कार्रवाई जिला जल और सफाई समितियों के बारे में की जानी चाहिए।

ग. जिला स्वास्थ्य समिति एवं एफएफडीए को पंचायती संस्थाओं के साथ एक सुव्यवस्थित संबंध हेतु पुनर्गठित किया जाना चाहिए।

घ. केन्द्र एक राज्य सरकारों को सामान्यतः पंचायती राज संस्थाओं के अलावा कोई विशेष समिति का गठन नहीं करना चाहिए। तथापि, यदि व्यावसायिक अथवा तकनीकी आवश्यकताओं के कारण इस प्रकार की विशेष समितियां गठित करना आवश्यक है और यदि उनकी गतिविधियां ग्यारहवीं अनुसूची में दी गयी गतिविधियों के साथ मेल खाती है या तो उन्हें पंचायतों के समग्र पर्यवेक्षण और दिशानिर्देशों के अधीन कार्य करना चाहिए अथवा पंचायत के संबंधित स्तर के साथ सलाह करके पंचायती राज संस्थाओं के साथ उनके संबंधों की जानकारी करनी चाहिए।

ड. समुदाय स्तरीय निकायों को उच्चतर स्तरों पर निर्णय द्वारा सृजित नहीं करना चाहिए। यदि आवश्यक समझा जाए तो उनके सृजन की शुरुआत निचले स्तर से की जानी चाहिए तथा वे पंचायती राज संस्थाओं के प्रति जवाबदेह होने चाहिए।

21. (पैरा 4.2.3.10) कार्यकलाप मानचित्रण

क. राज्यों को ग्यारहवीं अनुसूची में उल्लिखित सभी मामलों के संबंध में एक विस्तृत कार्यकलाप मानचित्रण का उत्तरदायित्व लेना चाहिए। इस प्रक्रिया में विषयों के सभी पहलुओं अर्थात् योजना बनाना, बजट बनाना तथा वित्त संबधी प्रावधान शामिल किए जाने चाहिए। राज्य सरकार को इस कार्य को एक वर्ष के भीतर पूरा करने के लिए एक कार्य दल का गठन करना चाहिए।

ख. केन्द्र सरकार को भी केन्द्र प्रायोजित स्कीमों के संबंध में इसी प्रकार की कार्रवाई करने की आवश्यकता होगी।

22. (पैरा 4.2.4.2) पंचायतों को विनियामक कार्यों की सुपुर्दगी

क. ग्रामीण नीति निर्धारण, भवन निर्माण नियमावली प्रवर्तन, जन्म, मृत्यु, जाति एवं निवास प्रमाण पत्र जारी करना, मतदाता पहचान पत्र जारी करना, तौल एवं माप से संबंधित विनियमों का प्रवर्तन जैसे कुछ विनियामक कार्य है जो कि पंचायतों को सौंपे जाने चाहिए। पंचायतों को छोटी अक्षय निधियों तथा धर्मादा संस्थानों के प्रबन्धन के लिए सशक्त किया जा सकता है। इसे धर्मादा संस्थानों से संबंधित कानूनों में उचित संशोधन द्वारा किया जा सकता है।

ख. पंचायतों द्वारा निष्पादित विनियामक कार्यों को नियमित आधार पर अभिज्ञात एवं सुपुर्द करना चाहिए।

23. (पैरा 4.3.5.3) पंचायतों द्वारा संसाधन निर्माण

क. स्थानीय शासन के राजस्व आधार को विस्तृत तथा गहन करने के संबंध में विस्तृत प्रक्रिया शुरू करने की आवश्यकता है। इस प्रक्रिया द्वारा संसाधन गतिशीलता के चार बड़े पहलुओं अर्थात् (i) कराधान हेतु सम्भावना (ii) वास्तविक कर दरों का निर्धारण (iii) कर आधार को बढ़ाना और (iv) कर संग्रहण में सुधार, को एक साथ देखना होगा। सरकार इसे तेरहवें वित्त आयोग के विचारार्थ एक विषय के रूप में शामिल कर सकती है।

ख. ग्राम पंचायतों के अधिकार क्षेत्र में सभी सार्वजनिक सम्पत्ति संसाधनों को राजस्व सृजन के लिए चिहिन्त, सूचीबद्ध तथा उत्पादक बनाना चाहिए।

ग. राज्य सरकारों को कानून द्वारा पंचायतों के कर संबंधी अधिकार क्षेत्र को बढ़ाना चाहिए साथ ही साथ पंचायतों के लिए इस कर क्षेत्र में कर लगाना आवश्यक बना देना चाहिए।

घ. उच्च स्तर पर स्थानीय निकायों को सुदृढ़ वित्तीय आधार एवं जीवनक्षमता पर परिवहन, जलपूर्ति एवं विद्युत वितरण जैसी सार्वजनिक सेवाओं को चलाने/प्रावधान के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

ड. विस्तारित कर क्षेत्र में अन्य बातों के साथ पशुओं, रेस्टोरेंट, बड़ी दुकानों, होटलों, साइबर कैफे तथा पर्यटक बसों इत्यादि के पंजीकरण पर करों को शामिल किया जा सकता है।

च. उक्त करों तथा उपस्करों के लिए दरों के समूहों के निर्धारण हेतु राज्य सरकारों की भूमिका सीमित होनी चाहिए।

छ. पंचायती राज संस्थाओं को राज्य सरकार द्वारा खनिज पदार्थों से संग्रहित रॉयल्टी में से पर्याप्त हिस्सा देना चाहिए। इस पहलू पर राज्य वित्तीय आयोगों द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को अनुदान की सिफारिश करते समय विचार करना चाहिए।

ज. राज्य सरकारों को खनन गतिविधियों से रॉयल्टी पर उपकर संग्रहण हेतु पंचायती राज संस्थाओं को सशक्त बनाने पर विचार करना चाहिए। इसके अतिरिक्त उनको इस प्रकार के कार्यकलापों (खानों/खनिजों/संयंत्रों) पर अतिरिक्त, विशेष अधिभार लगाने तथा संग्रह करने का भी अधिकार देना चाहिए।

झ. अपने संसाधनों को बढ़ाने के लिए राज्यों एवं पंचायती राज संस्थाओं द्वारा शुरू किए गए सुधारों को इस प्रकार के उपायों के लिए केन्द्रीय वित्त आयोग तथा राज्य वित्त आयोग के साथ जोड़कर पुरस्कृत करना चाहिए। राज्य विशेष प्रोत्साहन राशि के द्वारा बेहतर कार्य निष्पादन करने वाली पंचायती राज संस्थाओं को पुरस्कृत किया जा सकता है।

ञ. पंचायती राज संस्थाओं को दिए गए कर क्षेत्र में ग्राम पंचायतों को ही कराधान के ऊपर प्राथमिक अधिकार होना चाहिए। तथापि, जहाँ पर इस प्रकार के कराधान पर अन्तःपंचायत विस्तार है, उच्च स्तर पर स्थानीय शासन, माध्यमिक पंचायत और जिला परिषद् संस्थाओं को एक निश्चित सीमा तक समवर्ती अधिकार दिए जा सकते है। जब कोई कर/शुल्क उच्च स्तर पर लगाए जाते हैं तो इस प्रकार के करों का संग्रहण संबंधित ग्राम पंचायतों द्वारा किया जाना चाहिए।

24. (पैरा 4.3.7.5) पंचायतों को निधि का हस्तानांतरण

क. विशिष्ट रूप से सहबद्ध को छोड़कर, केन्द्र प्रायोजित योजनाएं तथा राज्यों के विशिष्ट प्रयोजन कार्यक्रम पंचायती राज संस्थाओं को अन्य सभी आवंटन अव्यवस्थित (अनाबद्ध) निधि के रूप में होने चाहिए। आवंटन आदेशों में विस्तृत उद्देश्यों तथा प्रत्याशित परिणामों का संक्षिप्त विवरण होना चाहिए।

ख. राज्य सरकारों को राज्य और जिला क्षेत्र बजटों की पृथक प्रणाली परवर्ती द्वारा जिला-तार आवंटन इंगित करते हुए सम्मिलित करते हेतु वित्तीय कारोबार के अपने नियमों को संशोधित करना चाहिए।

ग. राज्य के बजट में पृथक पंचायत क्षेत्र होना चाहिए।

घ. राज्य सरकारों को निधियों को तीव्र हस्तांतरण के लिए पंचायती राज मंत्रालय द्वारा तैयार "पंचायतों को निधि का हस्तांतरण" पर सॉफ्टवेयर का प्रयोग करना चाहिए।

ङ. राज्य सरकारों द्वारा पंचायतों को निधि इस ढंग से जारी करनी चाहिए कि उक्त संख्याओं का उस वर्ष के दौरान आवंटन के प्रयोग के लिए पर्याप्त समय मिल सके। निधि को समान रूप से अंतराली किस्तों के रूप में जारी किया जा सकता है। इसे दो किस्तों में जारी किया जा सकता है, पहला वित्तीय वर्ष के शुरूआत में तथा दूसरा उस वर्ष के सितम्बर के अंत में जारी किया जा सकता है।

25. (पैरा 4.3.8.2) पंचाययती राज संस्थाएं तथा ऋण तक पहुंच

क. अपनी ढांचागत आवश्यकताओं के लिए पंचायतों को बैंको, वित्तीय संस्थाओं से उधार लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। राज्य सरकार की भूमिका केवल उधार की सीमा नियत करने तक ही सीमित रहनी चाहिए।

26. (पैरा 4.3.9.5) स्थानीय क्षेत्र विकास स्कीमें

क. ग्रामीण क्षेत्रों में सभी जन विकास स्कीमों के लिए निधि का प्रवाह केवल पंचायतों के माध्यम से होना चाहिए। स्थानीय क्षेत्र विकास प्राधिकरणों, क्षेत्रीय विकास मंडलों तथा समान कार्यों वाले अन्य संगठनों को तुरन्त बंद कर देना चाहिए तथा उनके कार्य एवं परिसम्पत्तियों को पंचायत के उचित स्तर को स्थानांतिरत कर देना चाहिए।

ख. जैसा कि आयोग द्वारा "अधिशासन में सदाचार" पर अपनी रिपोर्ट में आयोग ने बार-बार दोहराया है कि एमपीएसएडी और एमएलएएलडी की योजनाओं को समाप्त कर देना चाहिए।

27. (पैरा 4.4.7) ग्रामीण विकास

क. आयोग इस रिपोर्ट के अनुबंध-IV (2) पर दिए गए जमीनी स्तर की आयोजना पर विशेष समूह के विचारों का समर्थन करते समय सिफारिश करता है कि केन्द्र प्रायोजित स्कीमों के कार्यान्वयन में क्षेत्रीय/अधिकार क्षेत्रीय/कार्यात्मक अभिसारिता होनी चाहिए।

ख. उक्त योजनाओं से पंचायती राज संस्थाओं की केन्द्रियता की सुनिश्चितता करनी चाहिए यदि उनका ग्यारह अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों पर कार्य करना है।

(i) ऐसी सभी स्कीमों में ग्राम/वार्ड सभा को कार्यान्वयन, अनुक्षण तथा कार्यक्रमों की लेखापरीक्षा के लिए सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण निर्धारक सहभागी निकाय के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।

(ii) ग्यारहवीं अनुसूची के अधीन कार्यों की देखरेख करने तथा विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यारत कार्यक्रम समितियों को संबंधित पंचायतों तथा उनके स्थायी निकायों के साथ सम्मिलित करने की आवश्यकता है। व्यापक भूमिकाओं वाले कुछ अन्यों को पंचयातों के सुव्यवस्थित संबंध रखने के लिए पुनर्गठित करने की आवश्यकता है सकती है।

(iii) कार्यक्रमों में जहाँ पर कार्यकलाप क्षेत्रीय स्तर पर फैली है और निवास (जनसंख्या) पंचायत/वार्ड स्तर से नीचे है, उक्त गतिविधियों को सहायता प्रदान करने के लिए एक लघु स्थानीय केन्द्र समिलित का गठन किया जाना चाहिए। यह केन्द्र समिति ग्राम सभा/वार्ड सभा को नियमित जानकारी उपलब्ध कराने के लिए जिम्मेदार केवल विचार-विमर्श समिति होनी चाहिए तथा यह इसके प्रति जवाब देही होगी।

ग. कार्यक्रम स्वीकृत करने वाले मंत्रालय के कार्यान्वयन लचीलेपन के लिए जगह रखते हुए केवल विस्तृत दिशानिर्देश जारी करने चाहिए ताकि पंचायतों की सक्रिय भागीदारी के माध्यम से स्थानीय प्रासंगिकता को सुनिश्चित किया जा सके।

घ. सभी केन्द्र प्रयोजित कार्यक्रमों के उचित रूप से सीमांकित लक्ष्य होने चाहिए तथा दी गयी समय सीमा के भीतर उनके सामाजिक-आर्थिक प्रभाव के मूल्यांकन की कार्यतंत्र होना चाहिए। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) को उचित रूप से सुदृढ़ करना चाहिए तथा यह कार्य सौंप देना चाहिए।

28. (पैरा 4.4.8.6) सूचना, शिक्षा और संचार-आईसी

क. संचार के विभिन्न माध्यमों जैसे कि प्रिंट मीडिया, विजुअल मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, लोक कला एवं नाटकों इत्यादि का प्रयोग करके सूचना के प्रसारण तथा पंचायती राज के बारे में जागरूकता फैलाने के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि सहक्रियाओं और उच्चतम बिंदुओं तक पहुंचने के लिए दृष्टिकोण में अभिसारिता हो।

ख. इस गतिविधि के प्रभावशाली ढंग से कार्यान्वयन हेतु केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय को केन्द्रीय पंचायती राज मंत्रालय, ग्रामीण विकास मंत्रालय तथा कृषि मंत्रालय और अन्य संबंधित मंत्रालयों के साथ सलाह करके एक कार्यतंत्र तैयार करना चाहिए।

ग. ग्रामीण प्रसारण आकाशवाणी की एक पूर्ण विकसित स्वतंत्र गतिविधि होनी चाहिए। ग्रामीण प्रसारण इकाइयां जिले में स्थापित होनी चाहिए तथा प्रसारण मुख्य रूप से जिले में प्रचलित स्थानीय भाषा में होना चाहिए। ये कार्यक्रम पंचायती राज संस्थाओं, ग्रामीण विकास, कृषि, सूचना के अधिकार तथा जन स्वास्थ्य से जुड़ा कोई एक मामला, स्वच्छता, शिक्षा इत्यादि जैसे मामलों पर केन्द्रित होने चाहिए।

29. (पैरा 4.5.4) सेवा सुपुर्दगी में पंचायती कानून

क. संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची के अनुसार प्राथमिक शिक्षा के स्थानीय स्तर कार्यकलाप, रोग विरोधी और प्रोत्साहक स्वास्थ्य देखभाल, जलापूर्ति स्वच्छता, पर्यावरण उन्नयन तथा पोषण को पंचायती राज-संस्थाओं की समुचित श्रेणी को तुंत स्थान्तरित कर देना चाहिए।

ख. राज्य सरकारों को एक उच्च-स्तरीय सेवा सुपुर्दगी नीति की रूपरेखा का मसौदा तैयार करने की आवश्यकता है, जिसके अन्दर प्रत्येक विभाग सेवा सुपुर्दगी योजनाओं को तैयार करने के लिए विस्तृत दिशानिर्देशों की रूपरेखा तैयार कर सकता है।

30. (पैरा 4.5.5.6) ग्राम स्तर पर संसाधन केन्द्र

क. स्थानीय संसाधन निर्माण और स्थानीय सूचना आधार के सृजन के लिए गांव एवं मध्यवर्ती पंचायत स्तरों पर सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी एवं अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी आधारित संसाधन केन्द्रों की सथापना के लिए कदम उठाया जाना चाहिए।

ख. ये संसाधन केन्द्र स्थानीय पारम्परिक ज्ञान एवं विरासत के प्रलेखन के लिए भी प्रयोग में लाए जाने चाहिए।

ग. कृषि एवं पशुपालन कार्यों, कम्प्यूटर अनुप्रयोग, वाणिज्यिक खेती तथा मृदा एवं जल प्रबंधन पर केन्द्रित करते हुए वर्तमान स्कूल पश्च सामान्य शिक्षा को कौशल एवं प्रौद्योगिकी आधारित पद्धति में बदलकर स्थानीय स्तर पर क्षमता निर्माण के प्रयास किये जाने चाहिए।

31. (पैरा 4.6.1.2.3) पांचवीं अनुसूची क्षेत्रों में स्थानीय शासन

क. केन्द्रीय एवं राज्य विधानों जो पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम के प्रावधानों का अतिक्रमण करते हैं, को तुरंत संशोधित करने की आवश्यकता है ताकि उनको अधिनियम के अनुरूप लाया जा सके।

ख. यदि कोई राज्य पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम के प्रावधानों को कार्यान्वित करने में उदासीनता प्रकट करता है, भारत सरकार संविधान की पांचवीं अनुसूची के भाग क के परन्तुक 3 के अधीन प्रदत्त शक्तियों के अनुसार विशिष्ट दिशानिर्देश जारी करने पर विचार कर सकती है।

32. (पैरा 4.6.1.4.4) पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम का प्रभावी कार्यान्वयन

क. संविधान की पांचवी अनुसूची के भाग क (3) में यथा निर्दिष्ट प्रत्येक राज्य के राज्यपाल से प्राप्त नियमित वार्षिक रिपोर्टों को उचित महत्त्व दिया जाना चाहिए। इस प्रकार की रिपोर्ट तुरंत प्रकाशित तथा सार्वजनिक कर देनी चाहिए।

ख. यह सुनिश्चित करने के लिए ग्राम सभा की बैठकों में महिलाओं को हाशिए पर न रख दिया जाए, पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम नियमों तथा दिशानिर्देशों में एक प्रावधान होना चाहिए कि किसी ग्राम सभा की बैठक का कोरम तब ही स्वीकार होगा जबकि उपस्थित सदस्यों में से कम से कम 33 प्रतिशत महिलाएं हों।

ग. प्रत्येक राज्य की पांचवी अनुसूची क्षेत्रों में प्रशासनिक तंत्र के सुदृढीकरण की देखभाल के लिए एक समूह का गठन करना चाहिए। इस समूह को (i) विशेष प्रशासनिक व्यवस्थाओं (ii) तंगहाली वेतन के प्रावधान (iii) अन्य प्रोत्साहन राशियां और (iv) आवास एवं शिक्षा

में वरीयता उपाय जैसे मामलों की देखरेख करने की आवश्यकता होगी। इस संबंध में सभी व्यय संविधान के अनुच्छेद 275 के अधीन प्रभारित व्यय के रूप में माने जाने चाहिए।

33. (पैरा 4.6.1.5.3) जनजातीय उप-योजना का प्रभावी कार्यान्वयन

क. पिछले प्रयासों की अपर्याप्तता को ध्यान में रखते हुए राज्य सरकारों को अपनी जनजातीय उप-योजना तैयार करने के लिए एक विशेष योजना इकाई (व्यावसायिक तथा तकनीकी योग्यता प्राप्त कार्मिकों को शामिल करके) का गठन करना चाहिए।

ख. जनजातीय उप-योजना के अन्तर्गत आवंटन का एक निश्चित भाग पूर्वोत्तर राज्यों के लिए सृजित संसाधनों के गैर-व्यपगमनीय केन्द्रीय सामूहिक निधि की पद्धति पर गैर-व्यपगमनीय बनाया जाना चाहिए। इस निधि से खर्च की जांच हेतु जनजातीय मामलों के मंत्रालय में एक विशेष प्रकोष्ठ की स्थापना की जा सकती है।

ग. सरकार पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम के अन्तर्गत शामिल राज्यों के संबंध में प्रत्येक वर्ष एक प्रभावी मूल्यांकन रिपोर्ट तैयार करने पर विचार कर सकती है। यह कार्य किसी राष्ट्रीय स्तर के संस्थान को सौंपा जा सकता है जिसने पूर्व में इस प्रकार का कार्य किया हो। उदाहरण के लिए राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक अनुसंधान परिषद, राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन अथवा अन्य कोई उपयुक्त अभिकरण। यह अभिकरण पूर्ण निर्धारित सूचकांकों पर राज्यों की निष्पादन श्रेणी निर्धारित करेगा।

34. (पैरा 5.1.4) शहरीकरण एवं विकास

क. तेजी से बढ़ते शहरीकरण बड़े शहरों सहित तथा देश में और अधिक संतुलित एवं प्रभावी शहरीकरण के लिए उपाय सुझाने हेतु सरकार द्वारा शहरीकरण पर एक नए राष्ट्रीय आयोग का गठन किया जाना चाहिए।

35. (पैरा 5.2.2.4) प्रस्तावित बुनियादी ढांचा वार्ड समितियां एवं क्षेत्र सभाएँ

क. सरकार को उनकी परिभाषा में स्पष्टता को बढ़ाने हेतु पूरे देश में शहरी निकायों के समान वर्गीकरण की स्वीकार्यता पर विचार किया जा सकता है, ताकि योजनाबद्ध प्रक्रिया एवं निधि के वितरण में सहायता मिल सके। सारिणी 5.6 में दिए गऐ प्रस्तावित तर्ज पर एक वर्गीकरण को स्वीकार किया जा सकता है।

ख. कस्बा पंचायतों को छोड़कर शहरी स्थानीय सरकारों में प्रशासन की तीन श्रेणियाँ होनी चाहिए, जहाँ पर मध्य स्तर की आवश्यकता नहीं होगी। तीन स्तर निम्नानुसार होने चाहिए:

(i) नगरपालिका परिषद/नगरनिगम (जिस किसी भी नाम से इसे बुलाया जाता है)

(ii) वार्ड समितियाँ, और

(iii) क्षेत्र समितियाँ अथवा सभाएँ

ग. सभी नागरिकों को शामिल करते हुए प्रत्येक 5 वर्षों में प्रत्येक क्षेत्र सभा में एक अथवा दो (अथवा अधिक) प्रतिनिधियों की एक छोटी समिति का चुनाव होना चाहिए। प्रतिनिधियों की समिति एक व्यक्ति का चुनाव करेगी जो क्षेत्र सभा की बैठकों की अध्यक्षता करेगा तथा संबद्ध वार्ड समिति में क्षेत्र सभा का प्रतिनिधित्व होगा। राज्य, कानून द्वारा इस तरह के चुनावों के लिए प्रक्रिया और अन्य मद निर्धारित कर सकता है;

घ. वार्ड समितियाँ प्रत्येक वार्ड/सभासदीय क्षेत्र में स्थापित की जानी चाहिए। एक वार्ड समिति में एक से अधिक वार्ड की वर्तमान पद्धति को समाप्त करने की आवश्यकता है।

ड. वार्ड समितियों को विधिसम्मत कार्य दिए जाने की आवश्यकता है जो कि उनके स्तर पर निपटाये जा सकते हैं। उक्त कार्यों में गलियों में प्रकाश व्यवस्था, साफ-सफाई, जलापूर्ति, जल निकास, सड़क रख-रखाव, स्कूल भवनों का रख-रखाव, स्थानीय अस्पतालों/औषधालयों का रख-रखाव, स्थानीय बाजार, पार्क, खेल के मैदान इत्यादि शामिल है;

च. वार्ड समितियों को सौंपे गए कार्यों हेतु आवंटित निधियाँ वार्ड समितियों को एक साथ स्थानांतरित करनी चाहिए। इसको सौंपे गए कार्यों के संबंध में वार्ड समितियों द्वारा प्रस्तावित बजट को समग्र नगर निगम बजट तैयार करते समय ध्यान में रखना चाहिए;

छ. वार्ड समितियों की बैठकों के बारे में अधिक से अधिक नागरिकों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए व्यापक रूप में प्रचार होना चाहिए;

ज. वार्ड समितियों को इलाके के आधार पर संग्रहीत सम्पत्ति करों में से हिस्सा दिया जाना चाहिए;

झ. स्तरों के बीच कार्यों के जिम्मेदारियों का आवंटन स्पष्ट रूप से तय किया जाना चाहिए। ऐसा करते समय सहायता के सिद्धांत का अनुकरण करना चाहिए। विस्तृत रूप से क्षेत्र सभा को ग्राम सभा के समान ही कार्य निष्पादित करने चाहिए जैसे कि विकास कार्यों को प्राथमिकता तथा विभिन्न योजनाओं के अधीन लाभार्थियों को पहचानना ; और

ञ. पंचायती राज संस्थाओं के लिए अपनायी गयी समान गतिनिधि निर्माण की एक प्रक्रिया एक वर्ष के अन्दर सभी शहरी स्थानीय निकायों के लिए शुरू की जानी चाहिए।

36. (पैरा 5.2.3.2) बड़े शहरों के लिए क्षेत्रीय प्रणाली

क. उनको प्रत्यायोजित सभी प्रशासनिक अधिकारों के साथ महानगर निगमों तथा नगर नियमों में क्षेत्रीय कार्यालयों का गठन किया जा सकता है तथा ये सेवाओं एवं सुविधाओं के संबंध में लोगों के लिए मुख्य सम्पर्क बिन्दु हो सकते हैं। प्रत्येक 5 लाख (या कम) के लिए एक क्षेत्र पर विचार किया जा सकता है। इसी प्रकार के क्षेत्रीय कार्यालय अगले तीन वर्षों में अन्य बड़े शहरों में भी स्थापित किए जाने चाहिए।

37. (पैरा 5.2.4.3) महापौर/अध्यक्ष का कार्यालय

क. शहरी स्थानीय शासन में नगर परिषदों की अध्यक्षता के कार्य एवं प्रशासकीय प्राधिकारों के उपयोग का कार्य एक ही अधिकारी अर्थात् अध्यक्ष अथवा महापौर के पास संयुक्त रूप से होना चाहिए।

ख. अध्यक्ष/महापौर पूरे शहर में चुनाव के माध्यम से लोकप्रिय अधिदेश द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुना जाना चाहिए।

ग. अध्यक्ष/महापौर नगर निकाय का मुख्य कार्यपालक अधिकारी होगा। कार्यकारी अधिकार उस अधिकारी के पास होने चाहिए।

घ. निर्वाचित परिषद् को बजट अनुमोदन और विनियम एवं नीतियां बनाने जैसे कार्य करने चाहिए।

ङ. नगर निगमों एवं महानगरों में महापौर को महापौर परिषद् की नियुक्ति करनी चाहिए। परिषद के सदस्यों का चुनाव महापौर द्वारा निर्वाचित सभासदों में से किया जाना चाहिए। महापौर परिषद् निर्वाचित सभासदों अथवा 15, जो भी अधिक हो, की कुल संख्या के 10 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। परिषद्, महापौर द्वारा अपने समग्र नियंत्रण एवं निर्देशन में उनको सौंपे गए कार्यों के बारे में कार्यकारी अधिकारों का प्रयोग करेगी।

38. (पैरा 5.2.5.4) शहरी स्थानीय शासन की प्रबंधन संरचना

क. महापौर नगर निकाय का मुख्य कार्यपालक होना चाहिए जबकि अन्य को उन्हें सौंपे गए कार्यों का निष्पादन करना चाहिए।

ख. आयुक्त एवं अन्य कर्मचारियों के चयन एवं नियुक्ति की जिम्मेदारी दो वर्षों की अवधि के भीतर महानगर निगमों के दी जा सकती है। अन्य निकायों के लिए यह कार्य तीन वर्षों में पूर्ण किया जा सकता है। तथापि राज्य कानून द्वारा इस प्रकार की नियुक्ति की प्रक्रिया एवं शर्तों को निर्धारित कर सकता है। राज्य सरकार से आयुक्त/मुख्य अधिकारी लिए जाते रहने की अवधि के लिए चयन राज्य सरकार द्वारा भेजी गयी नामावली में से महापौर द्वारा किया जाना चाहिए।

ग. नगरपालिका प्रशासन निदेशालय जहां पर वे विद्यमान हैं, समाप्त कर देने चाहिए। यदि नगरपालिका कर्मचारियों का राज्यव्यापी संवर्ग है तो उनमें कोई नयी नियुक्ति नहीं की जानी चाहिए तथा कर्मचारियों को एक निर्धारित प्रक्रिया के माध्यम से नगर निकायों में समामेलित कर देना चाहिए।

39. (पैरा 5.3.3.8) सम्पत्ति कर सुधार

क. राज्य सरकारों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि सभी स्थानीय निकायों को एक समयबद्ध तरीके से सम्पत्ति के निर्धारण के लिए "इकाई क्षेत्र विधि" अथवा "पूंजी मूल्य विधि" को अपनाना चाहिए।

ख. सम्पत्ति कर से छूट की श्रेणियों की समीक्षा तथा इसको कम किए जाने की आवश्यकता है।

ग. यह सुनिश्चित करने के लिए कि अनधिकृत निर्माण कर जाल से न बच पाए राज्य कानूनों में यह प्रावधान होना चाहिए कि किसी भी सम्पत्ति पर करारोपण अपने आप में स्वामित्व का कोई अधिकार प्रदान नहीं करेगा, यदि सम्पत्ति किसी कानून अथवा विनियम का उल्लंघन करके बनायी हुई पायी गयी।

घ. निर्धारण प्राधिकरण एवं सम्पत्ति स्वामी के बीच टकराव से बचने के लिए सभी सम्पत्तियों के लिए कर विवरण को सार्वजनिक स्थल पर लगाया जाना चाहिए।

ड. राज्य कानून में नगर प्राधिकरणों से संबंधित सम्पत्तियां जो पट्टे पर दी गयी हैं, पर कर कब्जाधारी द्वारा दिए जाने का भी प्रावधान होना चाहिए।

च. कानून में केन्द्र एवं राज्य सरकारों से संबंधित सम्पतियों पर सेवा प्रभार लगाने की व्यवस्था होनी चाहिए। यह सेवा प्रभार उपलब्ध कराए जाने वाली विभिन्न सेवाओं जैसे कि ठोस अपशिष्ट प्रबंधन, सफाई, सड़कों का रख-रखाव, गलियों में प्रकाश व्यवस्था तथा आम नागरिक सुविधाओं के बदले होना चाहिए।

छ. मुख्य कार्यकारी अधिकारी के प्रत्यक्ष्य रूप से नियंत्रणाधीन एक अलग स्कंध द्वारा सम्पत्तियों तथा उन पर लगाए गए करों का आवधिक वास्तविक सत्यापन किया जाना चाहिए।

ज. सभी नगर क्षेत्रों के लिए जीआईएस पद्धति का प्रयोग करके सभी सम्पत्तियों का एक कम्प्यूटरीकृत आंकड़ा आधार तैयार करना चाहिए।

झ. निर्धारण के यादृच्छिक रूप से चयनित मामले सरकारी लेखापरीक्षकों द्वारा परीक्षित किए जाने चाहिए, जैसा कि केन्द्रीय करों के मामलों में नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक द्वारा किया जाता है।

40. (पैरा 5.3.4.2) चुंगी

क. चुंगी को समाप्त कर देना चाहिए, लेकिन राज्यों को इस प्रकार की समाप्ति के कारण हुई राजस्व हानि की भरपाई करने के लिए साधन विकसित करने चाहिए।

41. (पैरा 5.3.5.2) अन्य कर

क. सभी करों को प्रशासित करते समय निम्नलिखित सिद्धांतों का अनुपालन करना चाहिए:

(i) करों को निर्धारित करने का तरीका पूर्ण रूप से पारदर्शी एवं वस्तुपरक होना चाहिए;

(ii) जहाँ तक सम्भव हो सके, सभी करारोपण करदाता द्वारा स्वयं की घोषणा पर आधारित होने चाहिए लेकिन इसके साथ करदाता द्वारा तथ्यों की जालसाजी अथवा अधिक्रमण के मामले में कठोर दंड की व्यवस्था भी होनी है;

(iii) कर संग्रहण की लागत और उसका अनुपालन न्यूनतम बिन्दु तक कम कर देना चाहिए;

(iv) सभी करों की जांच एवं संग्रहण के लिए मुख्य कार्यपालक के अधीन एक स्वतंत्र इकाई होनी चाहिए; और

(v) कर निर्धारण अधिकारियों के आदेशों के विरूद्ध अपील का अधिकार एक निष्पक्ष अर्ध- न्यायिक प्राधिकरण के पास होना चाहिए।

ख. व्यवसाय कर पर ऊपरी सीमा बढ़ाने के लिए अनुच्छेद 276 (2) संशोधित किया जा सकता है तथा इस सीमा की समीक्षा आवधिक रूप से की जानी चाहिए।

42. (पैरा 5.3.6.8) कर-भिन्न राजस्व

क. नगरपालिकाओं के अनुदानों का एक महत्त्वपूर्ण भाग संसाधन जुटाने के उनके स्वयं के प्रयासों के साथ जोड़ देना चाहिए।

ख. शहर में सभी बड़े विकास के लिए एक प्रभावी अध्ययन किया जाना चाहिए। जहाँ कहीं न्यायसंगत हो इस प्रकार की परियोजनाओं के संबंध में एक संकुलन प्रभार और/अथवा बेहतरी लेवी उगाही की जा सकती है।

ग. नागरिक कानूनों के उल्लंघन के लिए दंड लगाने का अधिकार नगरपालिका प्राधिकारियों को दिया जाना चाहिए। संबद्ध कानून में उपयुक्त संशोधन किया जा सकता है।

घ. नागरिक अपराधों के लिए निर्धारित दंडों को बढ़ाए जाने की आवश्यकता है। दंड की राशि कानून के अधीन विनियमित होनी चाहिए ताकि इसकी कानून में संशोधन की आवश्यकता के बिना आवधिक रूप से समीक्षा की जा सके।

43. (पैरा 5.3.7.7) उधार लेना

क. राज्य में विभिन्न नगर निकायों के लिए अधारी की सीमा राज्य वित्त आयोग की संस्तुति पर निर्धारित की जा सकती है।

ख. नगर निकायों को सरकारी प्रतिभूति के बिना उधार लेने हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए। तथापि, छोटी नगरपालिकाओं के लिए राज्य सरकार द्वारा संघीय वित्तीय कार्यविधि निर्धारित की जानी चाहिए।

ग. कानूनी मामलों की देखरेख तथा उत्तरदायी उधारी की वित्तीय आवश्यकताओं के लिए नगरपालिकाओं की क्षमता को बढ़ाया जाना चाहिए।

44. (पैरा 5.3.8.7) संसाधन के रूप में भूमि को बढ़ाया जाना

क. नगर निकायों को अपनी सम्पत्तियों के आवधिक नवीनतम आंकड़े रखने चाहिए। इस उद्देश्य के लिए जीआईएस जैसे सूचना प्रौद्योगिकी साधनों का प्रयोग करना चाहिए। यह आंकड़े सार्वजनिक होने चाहिएं।

ख. विकास प्राधिकरणों के साथ-साथ नगरपालिकाओं के पास उपलब्ध भूमि बैंको के नगरपालिकाओं के संसाधन सृजन के लिए लाभदायक बनाया जाना चाहिए। तथापि, इस प्रकार के संसाधनों

का प्रयोग विशेष रूप से वित्तीय ढांचे तथा पूंजीगत व्यय के लिए किया जाना चाहिए न कि आवर्ती लागतों को पूरा करने के लिए।

ग. जब तक कि विकास प्राधिकरणों का शहरी स्थानीय निकायों के साथ विलय नहीं कर दिया जाता, भूमि की बिक्री से इस प्रकार के अभिकरणों द्वारा प्राप्त राजस्व का एक अनुपात अर्थात् 25 प्रतिशत नगरपालिकाओं को उनकी वित्तीय ढांचागत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

घ. संबंधित नगर कानूनों में यह उपलब्ध होना चाहिए कि नगर निकायों की कोई भी निर्मित सम्पत्ति प्रतिस्पर्धात्मक प्रक्रिया अपनाए बगैर किराए/पट्टे पर नहीं दिया जाएगा। इस प्रकार की पट्टा अवधि 5 वर्षों से अधिक नहीं होगी।

45. (पैरा 5.4.2.10) विनियामक सेवाएँ

क. शहरी स्थानीय निकायों से संबंधित सभी विनियामक प्रावधानों के अद्यतनीकरण तथा सरलीकरण हेतु एक समयबद्ध कार्यक्रम बनाना आवश्यक होना चाहिए। प्रत्येक राज्य सरकार को स्थानीय शासन में प्रक्रिया की जांच एवं सरलीकरण के सुझाव हेतु एक कार्य दल का सृजन करना चाहिए। यह कार्य दल स्थानीय शासन के क्षेत्रीय कार्यालयों में स्वनिर्णय को कम करने तथा वस्तुपरकता लाने के लिए उठाए जाने वाले कदमों के बारे में सुझाव देगा। शहरी नगर निगम इस प्रकार के कार्य स्वयं कर सकते हैं।

ख. शहरों में सभी सेवा प्रदाताओं को "एक रोधन सेवा केन्द्रों" की स्थापना द्वारा एक छतरी के नीचे लाया जाना चाहिए। इसे सभी शहरों मं दो वर्षों के अन्दर पूरा किया जा सकता है। नागरिकों को सेवाओं के वितरण में तेजी, पारदर्शिता एवं जवाबदेही लाने के लिए सभी शहरी स्थानीय निकायों द्वारा कॉल सेंटरों, इलेक्ट्रॉनिक दुकानों, वेब आधारित सेवाओं और आधुनिक तकनीक के अन्य साधनों का प्रयोग करना चाहिए।

ग. सभी शहरी स्थानीय निकायों में नागरिक चार्टरों में लाइसेंस तथा परमिट जैसी विनियामक सेवाओं से संबंधित अनुमोदन के लिए समय सीमा निर्धारित की जानी चाहिए तथा उनका ईमानदारी के पालन किया जाना चाहिए। अननुपालन की स्थिति में नागरिकों के लिए उपलब्ध राहत के बारे में चार्टर मं विशेष उल्लेख करना चाहिए।

घ. वैयक्तिक रिहायसी इकाइयों के लिए शुरूआत करके सभी शहरी स्थानीय निकायों में भवन परमिट जारी करने के लिए पंजीकृत वास्तुविदों द्वारा एक स्व-प्रमाणीकरण पद्धति लागू की जानी चाहिए।

46. (पैरा 5.4.3.1.5) प्रत्युत्तरदायी संस्थात्मक ढांचे का सृजन

क. स्थानीय सरकारों को अपने अधिकार क्षेत्र में नागरिक सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए उत्तरदायी होना चाहिए।

ख. एक विशिष्ट राज्य उपयोगिता की सभी अनुप्रवाही गतिविधियों के संबंध में जैसे ही एक शहरी स्थानीय निकाय की भौगोलिक एवं प्रशासनिक सीमा के अन्दर प्रवेश करती है तो सरकारी संगठन/पराराजकीय अभिकरण शहरी स्थानीय निकायों के लिए जवाबदेह होने चाहिए।

47. (पैरा 5.4.3.2.8) जलापूर्ति

क. शहरी स्थानीय निकायों को उनके भू-भागीय अधिकार क्षेत्र में जलापूर्ति तथा वितरण की जिम्मेदारी दी जानी चाहिए, चाहे यह उनके अपने संसाधन अथवा अन्य द्वारा की गयी व्यवस्था एवं अन्य सेवादाताओं पर आधारित हो।

ख. महानगर निगमों को विकास से लेकर वितरण तक की समस्त जलापूर्ति की जिम्मेदारी दी जा सकती है। अन्य शहरी स्थानीय निकायों के लिए जबकि संसाधन विकास का कार्य पैरास्टेटल अभिकरणों पर छोड़ दिया जाए, उनके भू-भागीय अधिकार क्षेत्र में वितरण नेटवर्क के प्रबंधन की जिम्मेदारी चरणबद्ध ढंग से हस्तान्तरित करना सबसे ज्यादा व्यावहारिक दृष्टिकोण प्रतीत होगा।

ग. राज्य वित्त आयोग को अनुकूल प्रशुल्क ढांचा स्थापित करने के लिए स्थानीय प्रशासन को विभिन्न वर्गों के लिए उपयुक्त आदर्श मानदंडों के विकास का कार्य सौंपा जा सकता है।

घ. नगर निकायों को चोरी में कभी लाकर, कर्मचारी की कार्य क्षमता को बढ़ाकर तथा तकनीकी का प्रयोग करके परिचालन क्षमताओं को बढ़ाने पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

ड. स्थानीय निकायों को एक निश्चित समय सीमा के अन्दर पानी के सभी कनेक्शनों में मीटर लगाना चाहिए। मीटर लगाने की पद्धति तंत्र द्वारा चोरी पहचानने में मदद मिल सकती है।

जल प्रभार का भुगतान सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से बगैर किसी रूकावट के किया जाना चाहिए। जहां तक सम्भव हो सके सभी कनेक्शनों में मीटर लगाना चाहिए तथा यदि आवश्यक हो तो निर्धनतम वर्गों को वर्गवार छूट प्रदान की जानी चाहिए।

च. जलापूर्ति के लिए ढांचागत विकास योजनाएँ सीडीपी के साथ एकीकृत की जानी चाहिए।

छ. नगरीय नियमावली में जल संभरण उपायों को अपनाने तथा गैर पीने योग्य पानी के लिए गंदे जल के पुनःचक्रण हेतु प्रोत्साहन राशि दी जानी चाहि। बड़े शहरों में गैर-पीने योग्य जल (पुनःचक्रित शोधित जल) उद्योगों के प्रयोग में लाना चाहिए।

48. (पैरा 5.4.3.3.9) मल-जल प्रबंधन

क. सफाई व्यवस्था जो कि स्वास्थ्य सिद्धांत एवं जन स्वास्थ्य से जुड़ा मामला है, पर सभी शहरी क्षेत्रों में उचित प्राथमिकता एवं जोर दिया जाना चाहिए। सभी कस्बों में सेवाओं की अपर्याप्तता से बचाव के लिए पर्याप्त ढांचागत सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु अग्रिम रूप से कार्रवाई की जानी चाहिए।

ख. प्रत्येक नगरीय निकाय को गंदी बस्ती क्षेत्रों में मल-जल निकास सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु समयबद्ध कार्यक्रम तैयार करना चाहिए। इसे वार्षिक बजट में उचित आवंटन द्वारा कार्यान्वित किया जाना चाहिए। स्थानीय निकाय विद्यमान मल-जल व्यवस्था के विस्तार एवं क्षमता बढ़ाने हेतु संसाधनों को बढ़ाने के लिए सम्पत्ति कर अथवा विकास प्रभारों पर उपकर लगाया जा सकता है। मल-जल प्रबंधन हेतु अतिरिक्त संसाधनों के सृजन के लिए स्थानीय शासन को प्रोत्साहित करने के लिए संघ एवं राज्य सरकारों द्वारा समकक्ष अनुदान भी उपलब्ध कराया जा सकता है।

ग. सामुदायिक सहभागिता एवं सेवाओं की सह-उत्पादकता को नगरीय निकायों द्वारा प्रोत्साहित किया जा सकता है। इसे जागरूकता पैदा करके बढ़ाया जा सकता है।

घ. सभी नगर निकायों में सफाई एवं जल-मल सुविधाओं हेतु, जल प्रभारों से इतर एक न्यूनतम कर के रूप में एक अलग उपभोग प्रभार की शुरूआत करनी चाहिए। राज्य वित्त आयोग को अनुकूल प्रशुल्क ढांचा स्थापित करने के लिए स्थानीय शासन के विभिन्न वर्गों के लिए उपयुक्त आदर्श मानदंडों के विकास का कार्य सौंपा जा सकता है।

49. (पैरा 5.4.3.5.3) ठोस अपशिष्ट प्रबंधन एवं सफाई

क. एक लाख से ऊपर जनसंख्या वाले सभी कस्बों एवं शहरों में कूड़ा-कर्कट के एकत्रण एवं निपटाने हेतु सरकारी एवं गैर-सरकारी भागीदारी परियोजनाओं की शुरूआत करने की सम्भावनाओं की तलाश की जा सकती है। तथापि स्थानीय निकायों की क्षमता के विकास द्वारा इस प्रकार की संविदाओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

ख. नगरीय नियमावली/नियमों में अपशिष्ट को उसके अंतिम निपटान के तरीके के आधार पर निश्चित श्रेणियों में पृथक करने की व्यवस्था होनी चाहिए।

ग. अत्यधिक मात्रा में कूड़ा-कर्कट सृजित करने वाली इकाइयों पर विशेष कूड़ा-कर्कट प्रबंधन प्रभार लगाया जाना चाहिए।

घ. राज्य सरकारों द्वारा 6 माह के अन्दर झाडू लगाने वालों तथा विद्यमान शुष्क शौचघरों की संख्या के बारे में एक गहन सर्वेक्षण कराया जाना चाहिए।

ड. सर्वेक्षण के बाद, एक साल के अन्दर हाथ से सफाई की समाप्ति के लिए पर्याप्त धनराशि का आवंटन किया जाना चाहिए।

च. राज्य वार्षिक योजना के लिए प्राप्त केन्द्रीय सहायता को हाथ से सफाई के उन्मूलन के साथ जोड़ा जाना चाहिए। जेएनएनयूआरएम के अधीन आवंटित राशि को भी इससे जोड़ा जाना चाहिए।

50. (पैरा 5.4.3.6.4) विद्युत संगठन एवं नगरीय निकाय

क. नगरीय निकायों को उनके क्षेत्र में विद्युत वितरण की जिम्मेदारियों को ग्रहण करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। ऐसा तथापि, उक्त संगठनों में पर्याप्त क्षमता विकास के बाद ही किया जाना चाहिए।

ख. नगरपालिका भवन उप-नियमों में विद्युत संरक्षण उपायों को शामिल किया जाना चाहिए।

ग. नगरीय निकायों को विद्युत के विवरण नेटवर्क एवं अन्य संगठनों के समन्वय की रूपरेखा बनानी चाहिए।

51. (पैरा 5.4.4.3) मानव विकास के लिए सेवाएँ

क. शिक्षा एवं स्वास्थ्य के महत्वपूर्ण सेवा सुपुर्दगी क्षेत्रों में केन्द्रीय नियंत्रण से विकेन्द्रीकृत कार्यवाही, राज्य सरकारों की जवाबदेही से स्थानीय समुदायों की जवाबदेही तथा रोजगार गारंअी से सेवा गारंटी में परिवर्तन पर जोर देने की आवश्यकता है।

ख. यह आवश्यक है कि सभी स्कूलों को क्रियात्मक रूप से आत्मनिर्भर बनाना है तथा अगले दो वर्षों में सभी शहरी स्कूलों में आधारभूत सुविधाएं एवं कक्षा आवश्यकताएँ उपलब्ध करानी है।

ग. नगरपालिकओं, विशेषकर बड़ी को एक स्कूल चलाने की सहायता हेतु गैर-सरकारी संगठनों, नैगम क्षेत्रों तथा वैयक्तिक स्वयंसेवकों की सहायता लेनी चाहिए। वास्तव में सेवा सुपुर्दगी को बेहतर बनाने के लिए हमारे सामाजिक क्षेत्र में स्वयंसेवकों की सेवाओं की शुरूआत लाभदायक साबित होगी।

घ. निजी स्वास्थ्य सेवाओं की तरफ शहरी लोगों के बढ़ते रूझान को नगरीय प्राधिकरणों द्वारा नैदानिक सेवाओं से भिन्न जन स्वास्थ्य पर ध्यान केन्द्रित करते हुए इसे एक अवसर के रूप में देखा जाना चाहिए।

ड. स्कूलों तथा अस्पतालों के लिए संस्थागत विशिष्ट मानक निर्धारित किए जाने चाहिए तथा सेवा सुपुर्दगी निष्पादन की जांच तृतीय पक्ष निर्धारण द्वारा की जानी चाहिए। वेतन सीमाओं को समाप्त करके गारंटी सेवा परिणामों तथा निष्पादन को सेवाओं के स्थायित्व से जोड़ते हुए सभी स्तरों पर निष्पादन स्तरीय प्रोत्साहन राशि निर्धारित की जानी चाहिए।

च. अस्पतालों एवं स्कूलों के लिए गैर-जवाबदेही राज्य-स्तरीय भर्ती प्रक्रिया से हटकर संस्था/समितियों में भर्ती की जानी चाहिए।

छ. स्थानीय निकायों को स्वास्थ्य पद्धति, सफाई सुविधा तथा पीने के पानी की सुविधाओं के बीच अभिसरण सुनिश्चित करना चाहिए। शहरी क्षेत्रों में प्राथमिक स्तर जन स्वास्थ्य संस्थाओं को शहरी स्थानीय निकायों द्वारा संचालित किया जाना चाहिए।

ज. स्थानीय शासन द्वारा उपलब्ध करायी जाने वाली सभी सेवाओं के लिए निष्पादन संकेतकों की व्यवस्था विकसित करने की आवश्यकता है। संबंधित मंत्रालय को इस उद्देश्य के लिए विस्तृत दिशानिर्देश तैयार करने चाहिए। इसके पश्चात इस उद्देश्य के लिए राज्य सरकारें मानक निर्धारित कर सकती हैं।

झ. संबंधित मंत्रालय को विभिन्न सेवा सुपुर्दगी पद्धतियों के निष्पादन के बारे में राज्यवार आंकड़ों का रख-रखाव करना चाहिए। उसी प्रकार सभी नगरीय निकायों को शामिल करते हुए इस प्रकार की सेवाओं के लिए राज्य को भी डाटाबेस रखना चाहिए।

52. (पैरा **5.4.5.15**) शहरी परिवहन प्रबंधन

क. शहरी परिवहन प्राधिकरण जिसे महानगर निगमों में एकीकृत महानगर परिवहन प्राधिकरण के नाम से पुकारा जाएगा जन परिवहन की अतिव्याप्तता को देखते हुए शहरी परिवहन समाधान की समन्वित योजना और कार्यान्वयन के लिए एक साल के अन्दर **10** लाख से अधिक जनसंख्या वाले शहरों से स्थापित किया जाना चाहिए।

ख. एकीकृत महानगर परिवहन प्राधिकरणों/शहरी परिवहन प्राधिकरणों को जन परिवहन की सभी प्रणालियों को नियंत्रित करने, प्रत्येक ऑपरेटर के लिए उचित परिवहन मार्गों का निर्धारण करने तथा सेवा मानकों के साथ-साथ किराया इत्यादि निर्धारित करने के लिए विधिक शक्तियां प्रदान की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त एकीकृत महानगर परिवहन प्राधिकरणों/शहरी परिवहन प्राधिकरणों को अक्षम मार्गों पर प्रचालकों को जहां कहीं आवश्यक हो, वित्तीय सहायता देने अथवा सिफारिश करने के लिए वित्तीय शक्तियां और संसाधन प्रदान करने चाहिए।

ग. परिवहन योजना के साथ योजना निकायों जैसे कि महानगर जिला आयोजना समिति और महानगर आयोजना-समिति के साथ-साथ सभी शहरी स्थानीय निकायों के लिए भूमि प्रयोग के एकीकरण को आवश्यक बनाया जाना चाहिए।

घ. शहरों में परिवहन की मांग को निम्नलिखित मांग नियंत्रण उपायों को अपनाकर नियंत्रित किया जाना चाहिए।

(i) संकुलन लेती का अधिरोपण

(ii) निश्चित क्षेत्रों का पैदल यात्रियों के लिए निर्धारण

(iii) जन परिवहन के माध्यम से केवल निश्चित क्षेत्रों में पहुंच का आरक्षण।

ङ. शहरों में जन परिवहन सेवाओं के पुनर्बलन को जेएनएनयूआरएम के अन्तर्गत प्राथमिकता वाली परियोजनाओं तथा राजस्व के अन्य संसाधनों को जुटाकर, जैसा कि इंदौर एवं अन्य शहरों में किया गया है, पूरा करना चाहिए। जन परिवहन के आधुनिकीकरण एवं पुर्नभाषित करने के लिए सुगठित सार्वजनिक निजी पहल को बढ़ावा देने का उद्देश्य होना चाहिए। उसी समय सरकार की स्वामित्व वाली विद्यमान परिवहन प्रणाली की कार्यक्षमता को उन्नत करने की आवश्यकता है।

च. जन परिवहन प्रणाली सामान्यतः बहुरूपी होनी चाहिए। प्रणाली आर्थिक क्षमता पर आधारित होनी चाहिए। महानगरों में मेट्रो रेल अथवा उच्च क्षमता वाली बस प्रणाली जो कि बस पद्धति जैसी अन्य प्रणालियों द्वारा जुड़ी होगी, जन परिवहन प्रणाली की रीढ़ होगी।

छ. शहरों में परिवहन ढांचे का निर्माण करते समय यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि पैदल यात्रियों, बुजुर्गों, विक्लांगों तथा परिवहन के अन्य साधनों का प्रयोग करने वालों की आवश्यकताओं का पर्याप्त ध्यान रखा गया है।

53. (पैरा 5.4.6.14) जेएनएनयूआरएम एक सुधार प्रक्रिया

क. परिकल्पनाओं के आधार पर शहरी पुनरूद्धार के लिए आवश्यक कुल निवेश उपलब्ध राशि से कहीं अधिक प्रतीत होता है। सरकार को इस मुख्य कार्यक्रम जेएनएनयूआरएम को पर्याप्त राशि उपलब्ध कराने के लिए राजस्व साधनों को जुटाना चाहिए।

ख. शहरी स्थानीय निकायों तथा भारत सरकार के बीच सहमत अनुसूची के अनुसार बिना किसी अपवाद अथवा छूट के धन प्रवाह के साथ प्रतिबद्धताओं से जुड़े सुधारों पर जोर दिया जाना चाहिए।

ग. स्वच्छता एवं कूड़ा-कर्कट प्रबंधन के लिए क्षेत्रवार आवंटन होना चाहिए।

घ. क्षमता निर्माण उपाय केवल चुनिंदा कस्बों तक ही सीमित नहीं रहने चाहिए तथा सभी शहरों/कस्बों के लिए उपलब्ध होने चाहिए।

54. (पैरा 5.4.7.2) सुधार का एक महत्त्वपूर्ण एवं अत्यावश्यक क्षेत्र-स्थावर संपदा

क. पैरा 5.4.7.1 में उल्लिखित अनुसार स्थावर संपदा क्षेत्र को विनियमित करने के लिए कानून बनाने की तुरंत आवश्यकता है।

55. (पैरा 5.5.2.9) महानगरों का पुनःनिर्माण

क. प्रोत्साहन राशियों तथा शास्तियों के पारदर्शी एवं सुगठित विनियमाक शासन प्रणाली के माध्यम से आंतरिक शहरी क्षेत्रों के विकास के लिए सरकारी-निजी भागीदारी को बढ़ावा देने की आवश्यकता है।

56. (पैरा 5.5.3.4) भारत में 25-30 विश्व-स्तरीय महानगरों का विकास करना

क. सरकार को लगभग 25-30 शहरों (जिनकी जनसंख्या 10 लाख से अधिक हो) के पुनःविकास की एक योजना बनानी चाहिए, जो कि भविष्य के आधुनिक महानगरों के रूप में अंतर्राष्ट्रीय स्तर की सुविधाओं तथा सेवाओं को प्राप्त कर सके।

ख. जेएनएनयूआरएम जैसी सुधार से जुड़ी पहल हमारे शहरों में वास्तविक नागरिक पुनरुत्थान में प्रवेशक के क्रम में नागरिक कानूनों एवं सामान्य कानून प्रवर्तन के साथ भौतिक विकास संपूरक का एक अवसर है। हमारे शहरों में ढांचागत विकास के अतिरिक्त शहरी विकास के लिए इतने बड़े पूंजीगत निवेश कार्यक्रम को नागरिक उल्लंघनों की तरह शून्य सहनशीलता कार्यनीति के साथ आवश्यक रूप से जोड़ा जाना चाहिए।

ग. जन व्यवस्था पर आयोग की रिपोर्ट में उल्लिखित अनुसार नागरिक अपराधों के विभिन्न किस्म के स्तर तथा रूझान की जांच के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रयोग द्वारा स्थानीय निकायों के प्रवर्तन विभागों में "शून्य संहनशीलता कार्यनीति" को संस्थागत रूप दिया जा सकता है। उनको उक्त विभागों में कार्यरत कार्मिकों की जवाबदेही तय करके प्रोत्साहन शासित पद्धति से जोड़ा जा सकता है। नागरिक अनुशासन द्वारा तथा भय दिखाकर एवं लघु नागरिक उल्लंघनों को रोकने के लिए घटना स्थल पर ही दंड तथा अन्य छोटी शक्तियों का प्रयोग किया जाना चाहिए, जिनकी वर्तमान में बड़े स्तर पर उपेक्षा की जा रही है।

57. (पैरा 5.5.4.7) महानगर निगमों के लिए प्राधिकरण

क. जन व्यवस्था पर आयोग की रिपोर्ट में उल्लिखित अनुसार सामुदायिक नीति की देखभाल करने, पुलिस, नागरिक परस्पर-क्रिया को बेहतर बनाने, नीतियों की गुणवत्ता को बेहतर बनाने हेतु सुझाव देने, वार्षिक कार्यनीति को अनुमोदित करने तथा इस प्रकार की योजनाओं के कार्यान्वयन की समीक्षा करने के लिए 10 लाख से अधिक जनसंख्या वाले सभी शहरों में एक महानगर पुलिस प्राधिकरण की स्थापना की जानी चाहिए।

ख. इस रिपोर्ट के पैरा 5.4.5.15 में संस्तुत अनुसार जन परिवहन में अधिक भीड़भाड की समस्या को प्राथमिकता देते हुए शहरी परिवहन समस्या निवारण कार्यान्वयन एवं योजना के समन्वय हेतु सभी महानगरों में एक एकीकृत महानगर परिवहन प्राधिकरण की स्थापना की जानी चाहिए।

ग. सभी महानगर निगमों, जहां पर शहरों की जनसंख्या 50 लाख से अधिक हो, हेतु इस प्रकार के शहरी समूहों के लिए योजना की प्रक्रिया को आवश्यक बल प्रदान करने हेतु मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में एमपीसी का गठन किया जा सकता हे।

घ. 50 लाख से अधिक जनसंख्या वाले सभी शहरों में एक महानगर पर्यावरण प्राधिकरण स्थापित करने की आवश्यकता है जिनके पास राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड तथा संबंधित प्राधिकरणों से राज्य सरकार द्वारा प्रत्यायोजित अधिकार हों। इसके पास शहरी सीमाओं के अन्दर शहरी पर्यावरण प्रबंधन के लिए पर्याप्त न्यायिक अधिकार हों।

58. (पैरा 5.6.2.3) लाभार्थियों की पहचान

क. शहरी निर्धनों को पहचानने के लिए एक साल के अन्दर एक व्यापक सर्वेक्षण किया जाना चाहिए। इस प्रकार की पहचान के लिए प्रयोग में लाए जाने वाले मानदंड साधारण एवं आसानी से समझे जाने योग्य होने चाहिए तथा स्वविवेक का प्रयोग किए बगैर वस्तुनिष्ठ परिणाम की स्वीकृति दी जानी चाहिए। बुनियादी मानदंडों को राष्ट्रीय स्तर पर स्थान दिया जाना चाहिए। संबंधित क्षेत्रीय सभा के कम से कम एक व्यक्ति को सर्वेक्षण दल में शामिल करके घर-घर जाकर सर्वेक्षण द्वारा पहचान की जानी चाहिए। इस प्रकार से पहचाने गए शहरी निर्धनों के सभी निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम के अधीन लाभ पहुंचाने के लिए बहु-उपयोगी पहचान पत्र जारी किए जा सकते हैं।

59. (पैरा 5.6.3.2.5) निर्धनता उन्मूलन के उपाय रोजगार

क. सर्वेक्षण द्वारा शहरी निर्धनों की पहचान के पश्चात समयबद्ध तथा योजनाबद्ध ढंग से निर्धनता उन्मूलन हेतु एक उद्देश्यपरक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता होगी। शहरी स्थानीय निकायों के पास अन्य निर्धनता उन्मूलन योजनाओं के साथ पर्याप्त पश्चगामी और अग्रगामी संयोजन अभिसारिता द्वारा स्वयं की निर्धनता उन्मूलन योजनाएं भी होनी चाहिए।

ख. शहरी निर्धनता उन्मूलन योजनाओं का केन्द्र बिन्दु कौशल एवं प्रशिक्षण उन्नयन होना चाहिए। स्व-रोजगार के लिए शहरी निर्धनों को प्रशिक्षण देने हेतु आरयूडीएसईटीआई की तर्ज पर प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना की जा सकती है। उक्त संस्थान मजदूरी रोजगार संबंधी कौशल विकसित करने में भी सहायता कर सकते हैं।

ग. सूक्ष्म उद्यमों को स्थापित करने के मामले में शहरी निर्धनता उन्मूलन स्कीमें परियोजनाओं का चयन करने तथा वित्तीय सहायता प्रदान करने में लचीली होनी चाहिए।

घ. लघु वित्त के लाभ को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए स्व-सहायता समूहों के गठन को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है। लघु वित्त के उपयोग के लिए स्व-सहायता समूहों को बढ़ावा देने हेतु अच्छी पृष्ठभूमि वाली संस्थाओं तथा गैर-सरकारी संगठनों को प्रोत्साहित करना चाहिए।

60. (पैरा 5.6.3.3.4) निर्धनता उन्मूलन हेतु उपाय-साक्षरता

क. शिक्षण योजना शहरी विकास योजना का एक अभिन्न अंग होना चाहिए।

61. (पैरा 5.6.3.4.2) गरीबी उन्मूलन के उपाय-स्वास्थ्य एवं पोषण

क. शहरी स्थानीय निकायों को सहायक स्वास्थ्य कर्मियों की सहायता से शहरी निर्धनों विशेष रूप से औरतों एवं बच्चों के लिए स्वास्थ्य एवं चिकित्सय सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु प्राथमिक स्वास्थ्य परिचर्या की अवधारणा को स्वीकार करना चाहिए। उक्त सुविधाएं विशेष रूप से गंदी बस्तियों में रहने वाले लोगों के लिए होनी चाहिए।

62. (पैरा 5.6.3.6.3) शहरी क्षेत्रों में गंदी बस्तियाँ और गरीबों के लिए भूमि प्रयोग आरक्षण

क. गंदी बस्तियों का पूर्ण पुनःविकास करना है। पुनःविकास करते समय यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि स्कूलों, स्वास्थ्य केन्द्रों, सफाई इत्यादि का उचित प्रावधान किया गया है।

ख. गंदी बस्तियों के पुनःविकास हेतु जब नीति अथवा विशिष्ट योजनाएँ बनायी जाए तो पैरा 5.6.3.5.11 में सुझाए गए दृष्टिकोण पर विचार किया जा सकता है।

ग. यह आवश्यक है कि शहरी निर्धनों हेतु प्रत्येक कस्बे एवं शहर में भूमि परियोजनाओं के लिए निश्चित प्रतिशतता को चिहिन्त तथा आरक्षित रखना चाहिए। यदि किसी निर्माण में निर्धनों के लिए मकानों का आवंटन नहीं किया जा सकता तो प्रवर्त्तक के लिए यह आवश्यक है कि वह स्वयं की लागत पर प्राधिकरणों को स्वीकार्य किसी अन्य उचित स्थान पर उपयुक्त मकान उपलब्ध कराए।

घ. महानगरों एवं नगर निगमों जैसे बड़े शहरों से शुरू करके सभी बड़े शहरों में रैन बसेरों के प्रावधान हेतु कार्यान्वयन के लिए एक विस्तृत कार्यक्रम बनाने की आवश्यकता है।

63. (पैरा 5.7.2.12) शहरी एवं ग्राम आयोजना अधिनियम

क. एक बार अनुमोदित शहरी विकास योजना एवं मंडलीय विनियमन दस वर्षों के लिए प्रभावी रहने चाहिए। किसी भी प्राधिकरण को सामान्यतः शहरी विकास योजना में बदलाव करने का अधिकार नहीं है।

ख. यह सुनिश्चित करने के लिए शहरों में शहरी योजना वास्तव में एक संपूर्ण कार्य बन जाए ढांचागत योजनाएं, शहरी विकास योजना का एक अभिन्न अंग बनाई जानी चाहिए।

ग. भवन निर्माण विनियमनों के प्रवर्तन की विद्यमान पद्धति को संशोधित करने की आवश्यकता है। इसका ढांचा के मूल्यांकन तथा सुरक्षित भवनों के प्रमाणीकरण के लिए लाईसेंसधारी वास्तुविदों तथा ढांचागत अभियंताओं द्वारा व्यावसायीकरण किया जाना चाहिए। भवन निर्माण नियमावली के प्रवर्तन की देखभाल करने वाले स्थानीय निकायों की इकाइयों तथा मंडलीय विनियमनों को भी सुदृढ़ करने की आवश्यकता है।

घ. स्थानीय योजना में आपदा प्रबंधन के निवारण का महत्त्वपूर्ण स्थान होना चाहिए। शहरी विकास मंत्रालय द्वारा विशिष्ट दिशानिर्देश बनाने की आवश्यकता है। मंडलीय विनियमनों तथा भवन निर्माण नियमावली में शामिल करते हुए उन पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

ङ. भारतीय मानक ब्यूरो द्वारा आपदा प्रतिरोधक भवनों के लिए निर्धारित मानक निःशुल्क जनता के लिए उपलब्ध होना चाहिए। उनके अनुपालन को बढ़ावा देने हेतु उन्हें संबंधित सरकारी अभिकरण की वेबसाइट पर प्रदर्शित किया जाना चाहिए।

64. (पैरा 5.7.5.3) विकास क्षेत्र

क. विकास प्राधिकरण के अधीन विकसित की गयी सभी उपनगरीय बस्तियों एवं छोटे नगरों के संबंध में यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि जैसे ही विकास प्रक्रिया पूरी हो जाएगी नगरों का अधिकार स्थानीय निकायों को हस्तांतरित कर दिया जाएगा।

65. (पैरा 5.7.6.5) निजी टाउनशिप

क. निजी उपनगरों एवं फाटकदार कॉलोनियों के अन्दर रहने वाले समुदायों को उनके नियमों, कानूनों एवं नियमावलियों के अधीन संबंधित स्थानीय निकाय के अधिकार क्षेत्र में रखा जाना चाहिए। तथापि वे अपनी प्रसीमाओं के अन्दर ढांचागत एवं सेवाओं के प्रावधानों और/अथवा करों एवं प्रभारों के संग्रहण के लिए स्वायत्तता बनाए रख सकते हैं। (पैरा 5.7.7.2)

ख. निजी फाटक के अन्दर बनने वाली कालोनियों की स्थापना की अनुमति केवल वृहत् शहरी योजना प्रक्रिया के विस्तृत मानदंडों के अन्दर ही दी जानी चाहिए, जहाँ पर विकास कार्यों के लिए निम्न लागत भवनों के हेतु निजी विस्तार के लिए आवश्यक प्रावधान करते हुए स्थान का स्पष्ट रूप से उल्लेख करना चाहिए तथा इसे ढांचागत सेवाओं की उपलब्धता के साथ जोड़ देना चाहिए।

66. (पैरा **5.7.7.4**) विशेष आर्थिक क्षेत्र

क. निजी उपनगरों के मामले में संविधान स्थानीय निकायों को विशेष आर्थिक क्षेत्रों में स्थानीय नागरिक कानूनों के प्रवर्तन के संबंध में पूर्ण अधिकार होना चाहिए।

ख. विशेष आर्थिक क्षेत्रों को अपने क्षेत्रों में ढांचागत तथा सुविधाओं के प्रावधान के लिए स्वायत्तता दी जा सकती है। विशेष आर्थिक क्षेत्रों में सृजित संसाधनों के बंटवारे के लिए एक फार्मूला विकसित करने की आवश्यकता है।

67. (पैरा **5.8.4**) शहरी स्थानीय निकाय एवं राज्य सरकार

क. निकाय सरकारों को उनके द्वारा विकसित कार्यों/गतिविधियों पर पूर्ण स्वायन्तता होनी चाहिए।

ख. यदि राज्य सरकार यह महसूस करती है कि ऐसी परिस्थितियां हैं कि शहरी स्थानीय निकायों द्वारा पारित किसी प्रस्ताव को निलम्बित अथवा निरस्त करने अथवा उनको भंग करने अथवा विस्थापित करना आवश्यक हो गया तो ऐसा तब तक नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि मामले को संबंधित स्थानीय निकाय माध्यस्थम को संदर्मित न किया गया हो तथा माध्यस्थम ने इस प्रकार की कार्रवाई के लिए सिफारिश कर दी हो।

ग. यदि किसी समय राज्य सरकार के पास शहरी स्थानीय निकायों अथवा इसके निर्वाचित प्रतिनिधियों के विरूद्ध कार्रवाई शुरू करने के लिए रिकार्ड अथवा पर्याप्त कारण है तो उसे संबंधित स्थानीय निकाय माध्यस्थम के समक्ष जांच हेतु रिकार्ड प्रस्तुत करना चाहिए।

अनुबंध-I (1)

दिनांक 1 मार्च, 2007 को आईएसएस, नई दिल्ली में आयोजित ग्रामीण अधिशासन में विकेन्द्रीकरण पर राष्ट्रीय सभा में श्री. वीरप्पा मोइली, अध्यक्ष, द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग का भाषण

मैं सामाजिक विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली के सहयोग से प्रशासनिक सुधार आयोग द्वारा स्थानीय शासन और देश में पंचायती राज प्रणाली के सुधारों के प्रति दृष्टिकोणों पर चर्चा के लिए आयोजित राष्ट्रीय सभा में भाग लेने के लिए आज यहाँ उपस्थित होकर हर्ष का अनुभव कर रहा हूँ।

आज व्यापक रूप से माना जाता है कि जब कानून और व्यवस्था बताए रखने जैसे विनियामक कार्यों की बात आती है तब जहाँ इसका पक्ष मजबूत है वहीं जिला प्रशासन की औपनिवेशिक प्रथा या बपौती स्वतंत्रता पश्चात भारत में विकासात्मक कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए एक प्रत्युत्तरदायी और पारदर्शी एजेंसी के रूप में स्वयं को पुनर्गठित करने में असमर्थ रही है। इसलिए विचार यह है कि 'जमीनी स्तर के लोकतंत्र' के शुभारंभ के लिए सरकार के तीसरे स्तर द्वारा मौजूदा ढांचे के पूर्णरूपेण प्रतिस्थापन की अपेक्षा है ताकि स्थानीय स्तर पर विकास और नागरिक कार्यों का निर्वहन "सरकार के इस तृतीय स्तर" द्वारा किया जा सके। यह विचारधारा पंचायतों के लिए पर्याप्त वित्तीय संसाधन द्वारा समर्थित "विशिष्ट कार्यात्मक अधिकार क्षेत्रठ की व्यवस्था करने हेतु सरकार के तीसरे स्तर के लिए संविधान में पृथक "स्थानीय सूची" की भी मांग करती है। आगे यह वर्णन किया जाता है कि इन संस्थाओं को अपने संबंधित अधिकार क्षेत्र में न केवल स्वायत्तशासी होना चाहिए बल्कि केन्द्रीय और राज्य स्तर पर सरकार के प्रथम और द्वितीय स्तरों के साथ उनके संबंध भी प्रत्येक स्तर द्वारा अन्यों की स्वायत्तता का सम्मान करते हुए एक सहकारी परिसंघ के रूप में होना चाहिए। इसका उल्लेख स्थानीय निकायों को कार्यों और संसाधनों की सुपुर्दगी के संपूर्ण मुद्दे के प्रति एक अतिवादी दृष्टिकोण के रूप में किया जा सकता है।

अन्य न्यूनतमवादी दृष्टिकोण विपरीत स्थिति ग्रहण करता है अर्थात कि विकास, धर्मादा और संस्कृति में अत्यधिक क्षेत्रीय विषमताओं के साथ एक विशाल देश में विनियामक और विकासात्मक भूमिकाओं की व्यापक किस्मों का सफलतापूर्वक निवर्हन करने में समर्थ पंचायती राज संस्था की धारणा एक व्यावहारिक की बजाय एक अव्यावहारिक विचार है। अधिकतम लोगों की अधिकतम भलाई सुनिश्चित करने के लिए मितव्ययिता के पैमाने तथा साथ ही तकनीकी और सांस्थानिक क्षमताओं, जिन्हें सरकार के निचले स्तर

अनुबंध-I (1) जारी

पर असंगठित नहीं किया जा सकता हो, जैसे कारकों पर ध्यान दिया जाना होगा और इसलिए केवल प्राथमिक शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य परिचर्या, सफाई, निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम के कार्यान्वयन आदि जैसे कतिपय नागरिक कार्यों को सफलतापूर्वक पंचायती राज संस्थाओं को सुपुर्द किया जा सकता है।

औपनिवेशिक पश्चात युग में एशिया और अफ्रीका में विभिन्न देशों के भिन्न-भिन्न अनुभवों को देखते हुए लोकतंत्र और विकास का संपूर्ण मुद्दा अत्यधिक शैक्षणिक वाद-विवाद का विषय रहा है। सिंगापुर के समान "निर्देशित लोकतंत्र" और इसके द्वारा नगर शासन के विकास संबंधी स्थिति में लाए गए परिवर्तन और जिसकी एक-दलीय शासन के माध्यम से चीन में बड़े पैमाने पर पुनरावृत्ति की गई है, यह दर्शाता प्रतीत होता है कि विकासात्मक लक्ष्यों पर कभी-कभी संस्थात्मक ढांचे में अधिक तीव्रता से ध्यान दिया जा सकता है, जिसमें निर्णय लेना कर्कश लोकतंत्र के दैनिक खींचातान और दबावों के अधीन नहीं होता है। तथापि, अन्य लोगों ने तर्क दिया है कि मानव अधिकारों के लिए सम्मान के मुद्दे के अतिरिक्त विकास के लोकतांत्रिक मार्ग में अन्तर्निहित लाभ है और यह चीन जहाँ सत्तर के दशक में भी अकाल के कारण व्यापक पैमाने पर मृत्यु की सूचना प्राप्त हो रही थी, की तुलना में स्वतंत्रता पश्चात् युग में अकाल के कारण बड़े पैमाने पर मृत्यु रोकने के लिए भारत की सफलता इंगित करता है।

मौजूदा जिला प्रशासन राज्य की प्रकृति में मूलभूत परिवर्तन को ध्यान में नहीं रखता है। केन्द्र और राज्य मुख्यालयों में लोकतांत्रिक प्रणाली और अपारदर्शी गैर-जिम्मेदारी और अप्रत्युत्तरदायी जिला प्रशासन के बीच द्विभाजन भारतीय राज्य व्यवस्था और अधिशासन प्रणाली में एक अनसुलझी समस्या बनी हुई है। यह कहा जाता है कि "केन्द्रीय और राज्य स्तरों पर लोकतंत्र" है और सभी निम्न स्तरों पर केवल नौकरशाही है।

विश्व के अधिकांश भागों में स्थानीय शासन की भूमिका नागरिक सेवाओं की सुपुर्दगी तक सीमित रहती है। संशोधन पश्चात् पंचायतें पहले की तरह एक ढांचे, जिसे "उन्मुक्त कार्यात्मक अधिकार क्षेत्र" कहा जा सकता है, के भीतर कार्यरत हैं।

फिर भी भारत ने अपने विकासात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए लोकतंत्र का मार्ग चुना है और इस पर स्थिर रूप से टिका हुआ है। भारत ने लोकतंत्र और विकास को परस्पर विशिष्ट पसंद के रूप में कभी नहीं देखा है। जहां तक स्थानीय स्तर की पंचायती संस्थाओं को कार्यों की सुपुर्दगी के मुद्दे का संबंध है, यहाँ भी हमें सहायता के मान्यताप्राप्त सिद्धांतों के आधार पर "मध्यमार्ग" का अनुपालन करना चाहिए।

अनुबंध-I (1) जारी

इसे संविधान (ग्यारहवीं अनुसूची के अधीन) उल्लिखित विषयों की सूची के आधार पर और इन प्रत्येक विषयों, जिन्हें भली प्रकार पंचायती राज संस्थाओं के विभिन्न स्तरों में स्थानीय निकायों को स्थानान्तरित किया जा सकता है, के संबंध में कार्यालयों के मानचित्रण द्वारा व्यावहारिक तरीके से किया जाना होगा। कार्यकलापों का ऐसा निरुपण मितव्ययिता के पैमाने, कार्यकलाप निष्पादित करने के लिए उपलब्ध क्षमता, उस कार्यकलाप से संबंधित बहिर्मुखता आदि जैसे उद्देश्यपरक मानदंडों पर आधारित होना होगा। इन कार्यकलापों को एक बार निरुपित करने पर इन्हें इन कार्यकलापों के लिए उत्तरदायी कर्मचारियों और सहवर्ती संसाधनों के साथ ऐसे कार्यकलापों को कार्याविंत करने में उन्हें समर्थ बनाने के लिए संबंधित स्थानीय निकायों को स्थानान्तरित किया जाना चाहिए।

नागरिक कार्यों, बुनियादी शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य, स्थानीय सड़कें और ग्रामीण अवसंरचना तथा निर्धनता उन्मूलन स्कीमों के कार्यान्वयन को शामिल करते हुए स्थानीय स्तर की पंचायती राज संस्थाओं के मुख्य कार्यों में पंचायती राज संस्थाओं का स्वायत्तशासी कार्यात्मक अधिकार क्षेत्र, जिसके लिए एक प्रभावी और जिम्मेदारीपूर्ण तरीके से इन कार्यों को पूरा करने के लिए समुचित तकनीकी, वित्तीय और मानव संसाधन से सज्जित किया जाना चाहिए, शामिल होना चाहिए। क्या कार्यों के इस सेट को अंततः संविधान में प्रविष्ट की जाने वाली पृथक 'स्थानीय सूची' होनी चाहिए या नहीं, इस राष्ट्रीय सभा द्वारा विचार किया जाना है, यद्यपि संविधान का विस्तृत पुनःलेखन ऐसा विषय है, जिस पर कुछ शर्ते हो सकती है।

अनुच्छेद 243यग के अनुसार, संविधान का भाग IX पांचवी और छठी अनुसूचियों में शामिल क्षेत्रों पर लागू नहीं है। पांचवीं अनुसूची असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों को छोड़कर अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन और नियंत्रण की व्यवस्था करती है। छठी अनुसूची असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों में जनजातीय क्षेत्रों के प्रशासन के लिए प्रावधान निर्दिष्ट करती है। तथापि, संसद कानून द्वारा भाग IX के प्रावधानों का विस्तार इन अनुसूचित क्षेत्रों और जनजातीय क्षेत्रों तक कर सकती है। [अनुच्छेद 243 यग (3)]। तदनुसार, संसद ने पाँचवीं अनुसूची के अधीन क्षेत्रों तक भाग IX के प्रावधानों का विस्तार करते हुए "पंचायतों का प्रावधान (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम 1996' अधिनियमित किया है। तथापि, यह अधिदेशित किया गया है कि राज्य का विधानमंडल ऐसा कोई कानून नहीं बनाएगा, जो प्रथागत कानून, समुदाय के सामाजिक, धार्मिक और पारम्परिक

अनुबंध-I (1) जारी

पद्धतियों के असंगत हो। परन्तु छठी अनुसूची में शामिल क्षेत्रों तक भाग IX के प्रावधानों का विस्तार करने के लिए कोई कानून पारित नहीं किया गया है। 200 जिलों में से 63 जिले पाँचवीं अनुसूची के क्षेत्रों और 6 जिले छठी अनुसूची के क्षेत्रों में हैं। "पंचायतों का प्रावधान (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम में यथा संकल्पित ग्राम सभाओं को मूल क्षेत्राधिकार सौंपने के लिए मॉडल दिशानिर्देशों के विकास की जांच "जमीनी स्तर पर आयोजना पर विशेषज्ञ समूह" द्वारा की गई थी। रिपोर्ट में यह विशेष उल्लेख किया गया है कि ग्राम सभाओं और पंचायतों को सांविधिक रूप से सुपुर्द की गई शक्तियाँ विधियों और पदाधिकारियों के समवर्ती स्थानान्तरण से मेल नहीं खाती, जिसके परिणामस्वरूप पंचायत अप्रभावी हो गए है। इस अद्वितीय क्षेत्र की समस्याओं से निपटने और लोगों की लोकतांत्रिक परम्पराओं और सांस्कृतिक विविधता को संरक्षित करने के लिए संविधान के निर्माताओं ने जनजातीय स्व-शासन के लिखत की धारणा बनाई है। यह संविधान की छठी अनुसूची में सम्मिलित है।

मध्यस्थ और स्थानीय स्तर के पारम्परिक राजनीतिक संगठनों के माध्यम से राजनीतिक शक्तियाँ सुपुर्द करने के लिए सावधानीपूर्वक उपाय किए जाने चाहिए, बशर्ते कि आधुनिक विश्व में पूरी की जाने वाली उनकी पारम्परिक कार्यपद्धतियाँ उनके समकालीन समाज में किसी भी वर्ग को न्यायसंगत लोकतांत्रिक अधिकार नहीं नकारती हैं। ऐसी शक्तियाँ सुपुर्द करने के लिए किए गए राज्यवार उपायों के ब्यौरों पर प्रत्येक समुदाय के पारम्परिक नेताओं, संबंधित समुदायों के मत निर्माताओं और इन्हीं समूहों से राज्य और राष्ट्रीय स्तर के नेताओं की उचित प्रातिनिधिक बैठक में सावधानीपूर्वक विचार किया जाना होगा। जल्दबाजी में किए गए निर्णयों का अप्रत्याशित और दुर्भाग्यपूर्ण गंभीर अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ सकता है, जो स्थिति को और जटिल और खराब बना सकता है। प्रारंभ में छठी अनुसूची के अधीन और ग्यारहवीं अनुसूची में उल्लिखित विषयों को स्वायत्तशासी जिला परिषदों (एडीसी) को सौंपा जा सकता है। छठी अनुसूची में अन्तःनिर्मित सुरक्षोपायों की प्रणाली अल्पसंख्यकों और लघु अल्पसंख्यक समूहों के लिए उन्हें अधिक उत्तरदायित्वों तथा अवसरों से शक्ति प्रदान करते समय बनाई रखी और सुदृढ़कृत की जानी चाहिए। उदाहरणार्थ यह राज्य सरकारों के माध्यम से सभी निधियाँ भेजने की बजाय आयोजना व्यय के लिए केन्द्रीय निधिकरण की प्रक्रिया के माध्यम से किया जा सकता है। पूर्वोत्तर परिषद प्रस्तावित परिवर्तनों पर जन शिक्षा की प्रक्रिया विकसित करते हुए यहाँ एक केन्द्रीय भूमिका निभ सकती है, जो समुदायों को उनकी परम्पराओं के संरक्षण के बारे में आश्वस्त करेगा और लिंग प्रतिनिधित्व भी सामने लाएगा तथा अन्य मानवजातीय समूहों को भी मुखर बताएगा।

अनुबंध-I (1) जारी

अधिशासन का पारम्परिक रूप वर्तमान असंतुष्टि के कारण स्व-अधिशासन से संबंद्ध होना चाहिए। तथापि, लिंग न्याय और वयस्क मताधिकार जैसे सकारात्मक लोकतांत्रिक अवयवों को अधिक व्यापक आधार वाला बनाने तथा परिवर्तनशील विश्व से निपटने में दक्ष करने के लिए इन संस्थाओं में निर्मित किया जाना चाहिए।

संघ सरकार के विभिन्न विभागों से केन्द्रीय निधिपोषित परियाजनाओं का कार्यान्वयन स्वायत्तशासी जिला परिषदों को सौंपा जाना चाहिए और भारत के नियंत्रक और महा लेखापरीक्षक द्वारा सख्त लेखापरीक्षा से ग्राम परिषदों को पुनरुज्जीवित किया जाना चाहिए।

सभी राज्यों ने संविधि के माध्यम से नहीं बल्कि नियमों अथवा कार्यकारी आदेशों के रूप में प्रत्यायोजित विधान द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को कार्य सौंपना पसंद किया है। पंचायतों को कार्य सौंपने का कार्य राज्य विधानमंडलों को दिया गया था, परन्तु उसे राज्य सरकारों द्वारा अनधिकार ग्रहण कर लिया गया प्रतीत होता है। संविधान ने पंचायतों को विशिष्ट कार्यों का सेट सौंपने की गारंटी नहीं दी है। (ग्यारहवीं अनुसूची केवल एक सांकेतिक सूची है)। इसलिए उनके द्वारा अधिशासन की प्रणाली में निभाई जाने वाली प्रत्याशित भूमिका की किस्म प्रणाली की नीतियों, जो किसी राज्य की सरकार का नियंत्रण करती है, पर निर्भर करती है। दूसरे शब्दों में पहले की तरह पंचायतों के साशक्तिकरण का मुद्दा अभी भी राज्य सरकारों की कृपा पर है। पंचायतों के प्रत्येक स्तर के लिए एक विशिष्ट कार्यात्मक क्षेत्राधिकार अथवा कार्रवाई का स्वतंत्र क्षेत्र होना चाहिए। कार्यकलापों का एक सीमाक्षेत्र होना चाहिए, जहाँ राज्य सरकार और पंचायतें बराबर भागीदारों के रूप में कार्य करेंगी। ऐसा सीमाक्षेत्र भी हो सकता है, जहाँ पंचायत संस्थाएं राज्य अथवा संघ सरकार की स्कीमों अथवा कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए एजेसियों के रूप में कार्य करेगी। इन तीन सीमाक्षेत्रों में पहले दो का प्रभुत्व होना चाहिए। एजेंसी के कार्यों को कार्रवाई के अन्य दो सीमा क्षेत्रों से बढ़ने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए क्योंकि परवर्ती सीमाक्षेत्र में स्थानीय सरकारी संस्थाओं को स्वायत्तता मिलेगी। प्रत्येक स्तर पर पंचायत स्थानीय सरकार की एक संस्था है। इसलिए, उच्चतर स्तर की पंचायत और निम्नतर स्तर की पंचायत के बीच श्रेणीबद्ध संबंध नहीं हो सकता। पंचायती राज संस्थाओं और राज्य सरकार के बीच भी सिद्धांततः श्रेणीबद्ध संबंध नहीं हो सकता।

अनुबंध-I (1) जारी

क्या पंचायत को विनियामक कार्य की कतिपय किस्में भी सुपुर्द की जा सकती है या नहीं इस पर भी इस सभा द्वारा विचार किया जाना चाहिए। आदर्श रूप से जन्म और मृत्यु पंजीकरण, उप-नियम, सामुदायिक नीतिनिर्धारण और यहाँ तक कि स्थानीय स्तर के न्यायालय निर्मित करने जैसे विनियामक कार्यो की कतिपय किस्मों को पंचायती राज संस्थाओं के अधिकार क्षेत्र के अधीन लाने के लिए विचार किया जा सकता है।

सुपुर्दगी या संपूर्ण दृष्टिकोण खुल्लमखुल्ला आदर्शवादी दृष्टिकोण की बजाय गति और सरलता के दोहरे मानदंडों के साथ निर्मित किया जाना होगा। इस संबंध में तथ्य यह है कि वर्षों से संस्थात्मक और तकनीकी क्षमता तथा साथ ही विभागीय जागीर का कतिपय स्तर राज्य के स्तरों पर निर्मित किया गया है और इन्हें विसंगति करना तथा राज्य से स्थानीय स्तरों तक विकेन्द्रीकृत करना एक कठिनाईपूर्ण प्रक्रिया नहीं है और इसे माना जाना होगा। मुख्य कार्यों का ध्यानकेन्द्रित कार्यान्वयन क्षमता निर्मित करना और इन संस्थाओं को सौंपे गए कार्य पूरे करने के लिए इन पर विश्वास करना भी सुनिश्चित करेगा। इसके साथ ही उन कार्यों, जिन्हें स्थानीय स्तर की संस्थाओं को सुपुर्द किया जाता है, के लिए जिम्मेदारी डालना अनिवार्य होगा क्योंकि यह लगभग अपरिहार्य है कि कार्यों के विकेन्द्रीकरण के साथ प्रारंभिक चरण में "भ्रष्टाचार का विकेन्द्रीकरण" शामिल होगा। चूककर्ताओं और संस्थाओं के विरूद्ध कार्रवाई करने के लिए पूर्ण प्राधिकार के साथ एक सांविधिक माध्यस्थम के द्वारा सरकारी अधिकारियों अथवा राज्य सरकारों द्वारा जिम्मेदारी सुनिश्चित करने, सख्त वार्षिक लेखापरीक्षा सुनिश्चित करने, ग्राम पंचायतों को अधिकार देने, सामाजिक लेखापरीक्षा के लिए ढांचा प्रदान करने और पंचायतों की अनदेखी का प्रतिस्थापन करने पर विचार करने की आवश्यकता होगी।

ऐसे पांच महत्त्वपूर्ण मुद्दे हैं जिनपर विस्तृत रुप से इस राष्ट्रीय सभा द्वारा ध्यान देने का अनुरोध करना चाहूंगा।

पहला, हमें यह ध्यान में रखना होगा कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण स्थानीय विकास की गति तेज करने और निर्धनता कम करने के लिए राज्य की क्षमता में अत्यधिक वृद्धि कर सकता है, परन्तु केवल तभी जब इसे प्रभावी रूप से तैयार किया जाता है। पंचायती राज संस्थाओं को राजकोषीय स्वायत्तता सहित पर्याप्त स्तायत्तता तथा साथ ही सरकार से पर्याप्त समर्थन और सुरक्षा दिया जाना भी आवश्यक है। इसके अतिरिक्त पंचायती राज संस्थाओं के सेवा प्रदान की जाने वाली आबादी के सभी वर्गों द्वारा कार्यक्रमों

अनुबंध-I (1) जारी

और नीतियों को तैयार करने और उनके अनुवीक्षण में भागीदारी का उच्च स्तर सुनिश्चित करने के लिए कार्यतंत्र की आवश्यकता है। क्या मौजूदा पंचायती राज संस्थाएं इन्हें करने के लिए तैयार की गई है?

दूसरा, पंचायती राज संस्थाओं को अपने कार्यकलापों की योजना बनाने के लिए राजकोषीय स्वायत्तता की आवश्यकता है। परन्तु स्थानीय रूप से जुटाया गया राजस्व पंचायती राज संस्थाओं के बजट का प्रायः छोटा हिस्सा होता है, जो स्थानीय रूप से तैयार की गई नीतियों की सततता को खतरा पहुंचाते हुए स्वामित्व को कमजोर करता है। उदाहरणार्थ, इस समय पंचायती राज संस्थाएं अपने राजस्व व्यय के हिस्से के रूप में औसतन मात्र 9.26% के राजस्व का स्वामित्व रखती हैं और वे अपने कार्यकरण के लिए संपूर्ण रूप से राज्य/केन्द्रीय अनुदानों पर निर्भर है। इन संस्थाओं को वित्तीय दृष्टिकोण से सुदृढ़ करने के लिए राज्य और स्थानीय निकायों के बीच राजकोषीय संबंध हेतु सांस्थानिक आधार प्रदान करने के लिए प्रत्येक पांच वर्षों में राज्य वित्त आयोगों की स्थापना सुनिश्चित करनी होगी। यह भी समान रूप से महत्त्वपूर्ण है कि जहां पंचायती राज संस्थाओं को पर्याप्त बजट आधार की आवश्यकता है वहीं उन्हें जिम्मेवार बनाने के लिए सख्त बजटीय नियंत्रण लागू करना भी अनिवार्य है। स्थानीय निकायों को स्वयं न केवल राजस्व की मौजूदा प्रक्रिया का पर्याप्त प्रयोग करते हुए बल्कि प्रयोक्ता प्रभारों सहित कर और कर-भिन्न दोनों राजस्व के अतिरिक्त संसाधन जुटाते हुए भी उत्तरदायी राजकोषीय व्यवहार के प्रति निर्भरता प्रवण मनःस्थिति से अपने को मुक्त करने की आवश्यकता होगी।

तीसरा महत्त्वपूर्ण मुद्दा पंचायती राज संस्थाओं में प्रशासनिक और प्रबंधकीय दक्षताओं के सुदृढ़ीकरण की आवश्यकताओं से संबद्ध है। सफल लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के अध्ययन प्रशासनिक क्षमता सृजित करने का महत्त्व इंगित करते हैं। लगभग सभी पंचायती राज संस्थाओं में बड़े पैमाने पर विकेन्द्रीकरण के लिए प्रशासनिक क्षमता का अभाव है और उन्हें लेखाकरण, लोक प्रशासन, वित्तीय प्रबंधन, जन संचार और सामुदायिक संबंधों में प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है। मुझे जल्दी से यह भी कहने दें कि अगर पंचायती राज संस्थाओं में सुदृढ़ प्रशासनिक क्षमता और जिम्मेवारी का कार्यतंत्र होगा तो यह भ्रष्टाचार की संभावना कम कर सकता है। अगर वे ऐसा नहीं करते तो इससे भ्रष्टाचार में वृद्धि हो सकती है जैसा कि मध्य एशिया, दक्षिण कॉकासस और बाल्टिक में अनुभव रहा है।

चौथा मुद्दा पंचायती राज संस्थाओं का विशिष्ट वर्ग द्वारा कब्जा है। वित्तीय सत्यनिष्ठा का अनुतीक्षण करने और शक्तिशाली विशिष्ट वर्ग द्वारा पंचायती राज संस्थाओं का कब्जा हतोत्साहित करने के लिए

अनुबंध-I (1) जारी

सुरक्षोपाय किए जाने की आवश्यकता है। असमान शक्ति संरचना, जो अधिकांश भारतीय गांवों की विशिष्ट विशेषता है, को देखते हुए हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया निर्धनों और सीमांतिकों को हानि पहुंचाने के लिए ग्रामीण भारत में समृद्ध और शक्तिशालियों के निहित स्वार्थों की सहायता के लिए नहीं हो।

अंत में परन्तु कमतर नहीं, पंचायती राज संस्थाओं को स्थानीय स्तर पर और स्थानीय परिप्रेक्ष्य में सामाजिक विखण्डन और विवाद का समाधान करने में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए। मेरे ख्याल से यह पंचायती राज संस्थाओं की सफलता का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण निर्धारक हैं। जब तक पंचायती राज संस्थाएं अन्तःसमूह प्रतिद्वन्द्विता में बीच-बचाव करने और विविध प्रतिस्पर्धी समूहों में परस्पर कटु संबंधों को पाटने के लिए मंच प्रदान नहीं करती तब तक इन विभेदों से प्रत्येक को निर्धनता के प्रति सुभेद्य बनाते हुए समाज और अर्थव्यवस्था को अलग-अलग खण्डित करते हुए विवाद उत्पन्न हो सकता है। अधिशासन में खराबी और विवाद समाधान की संस्थाएं सामाजिक अशांति और अधिक विवादों के लिए दशाएं सृजित करती हैं। कार्यकरण समाज सृजित करने के लिए हमारे लिए पंचायती राज संस्थाओं का विवाद की मध्यस्थता करने वाली संस्थाएं बनना आवश्यक है, जो मुझे महसूस होता है हमारी पंचायती राज संस्थाएं नहीं रही है। इसलिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि, पंचायती राज संस्थाओं को स्थानीय स्तर पर और स्थानीय परिप्रेक्ष्य में विवाद समाधान की संस्थाएं बनाने के लिए क्या किया जा सकता है।

राज्य तथा साथ ही पंचायतों के विभिन्न स्तरों के बीच विशिष्ट कार्यकलापों का आवंटन करते हुए एक सुचित्रित कार्यकलाप मानचित्रण करना प्रस्तावित सुधारों का प्रारंभिक बिन्दु होना चाहिए। स्पष्ट उत्तरदायित्व और जिम्मेवारी के साथ प्रत्येक स्तर को निधियाँ और पदाधिकारी सौंपा जाना आवश्यक है।

पंचायती राज संस्थाओं को अनुदान मुक्त होना चाहिए ताकि पंचायती राज संस्थाएं स्वयं अपनी प्राथमिकताओं का निर्णय ले सकें।

ग्राम/वार्ड सभा से प्रारंभ करते हुए विकेन्द्रीकृत आयोजना को सख्ती से लागू किया जाना होगा और राज्य योजनाओं को अनुमोदन देते समय योजना आयोग को यह अवश्य सत्यापित करना चाहिए कि क्या राज्य योजनाओं ने उपयुक्त स्थानों पर पंचायत की योजनाओं को सम्मिलित किया है या नहीं।

अनुबंध-I (1) जारी

पंचायतों को सौंपे गए विषयों के संबंध में स्कीमें कार्यान्वित करने के लिए वित्तीय प्रावधान करते समय यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि आवंटित निधियाँ संबंधित राज्य विभागों, जिनकी भूमिका कार्यान्वयन के अनुवीक्षण और मूल्यांकन तक सीमित की जानी चाहिए, के माध्यम से दिए बिना राज्य कोष से संबंधित पंचायत को सीधे प्राप्त होती हैं।

संघ और राज्य सरकारें उनके द्वारा अनुमोदित की जाने वाली परियोजनाओं के लिए निधिकरण एजेंसियों के रूप में कार्य कर सकती है, परन्तु उनकी भूमिकाएँ किसी अन्य निधिकरण एजेंसी के समान होनी चाहिए। वे यह सुनिश्चित करने के लिए कि अनुमोदित परियोजनाओं में निर्धारित उद्देश्यों की पूर्णतः प्राप्ति हो गई है, आवधिक रूप से परियोजनाओं का मूल्यांकन और अनुवीक्षण कर सकती है।

उन कार्यकलापों, जिन्हें पंचायती राज संस्थाओं को सौंपा जाता है, से संबंधित केन्द्रीय मंत्रालयों और राज्य विभागों का आगामी पांच वर्षों में जानबूझकर आकार छोटा किया जाना चाहिए। किसी भी तरह इन मंत्रालयों में अतिरिक्त कर्मचारियों की स्वीकृति देना तत्काल रोक दी जानी चाहिए। राज्य सरकारों द्वारा अंतिम स्तर पर क्षेत्रीय कर्मचारियों की आगे भर्ती नहीं होगी। इसे स्वयं स्थानीय सरकारों पर छोड़ दिया जाना चाहिए।

पंचायतों के पदाधिकारियों-निर्वाचित प्रतिनिधियों और अधिकारियों को अपनी भूमिकाएँ प्रभावी रूप से निभाने में समर्थ बनाने के लिए उनके क्षमता निर्माण को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

पंचायतें बेहतर कार्यनिष्पादन के लिए समर्थकारी वातावरण सृजित करने हेतु लाभार्थियों के साथ सेवा प्रदायकों की परस्पर कार्रवाई की व्यवस्था भी कर सकती है। कई राज्यों में देखी गई असामान्य विशेषता यह तथ्य है कि लाभों की वास्तविक सुपुर्दगी के लिए उत्तरदायी सेवा प्रदायक पंचायती राज संस्थाओं के प्रति पूर्णतः जिम्मेवार नहीं है। इन अधिकारियों और पंचायतों के बीच एकमात्र संबंध यह है कि वे पंचायतों की संबंधित उप-समितियों के पदेन सदस्य है और इसलिए वे उप-समितियों की बैठकों में भाग लेने के लिए बाध्य हैं।

73वें संवैधानिक संशोधन के पूर्व ग्रामीण क्षेत्रों में क्षेत्रीय लाभ सुपुर्द करने के लिए कई संरचनाएं और निकायों का अस्तित्व रहा है। प्रभुत्व की एकता, व्यावसायिक अखण्डता, प्रचालनात्मक क्षमता और क्षेत्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति के अनुमानित हित में प्रत्येक क्षेत्र में विभाग, बोर्ड, प्राधिकरण और निगम स्थानीय स्तर

अनुबंध-I (1) जारी

तक स्वयं अपने ऊर्ध्वाकार पदानुक्रम सृजित करते हुए बड़ी संख्या में विकसित हुए। ये संस्थाएं नई प्रणाली में एकीकृत हुए बिना यहां तक कि संवैधानिक संशोधन के बाद भी मौजूद हैं। इन समानान्तर संरचनाओं का विलोप करने अथवा उन्हें संगत क्षेत्रीय विधानों के संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थाओं के संबंधित स्तर के अधीन लाने के लिए एक जागरूक निर्णय लिया जाना होगा।

न तो राष्ट्रीय योजना आयोग और न ही राज्य योजना बोर्ड संवैधानिक निकाय है। उस परिप्रेक्ष्य में जिला आयोजना समिति को संवैधानिक संगठन बनाना कुछ हद तक असंगत है। दूसरे, एक विकासात्मक राष्ट्र में आयोजना किसी भी स्तर पर सरकार का अनिवार्य कार्य है। अगर आयोजना का कार्य करने के लिए किसी समिति की आवश्यकता है तो संबंधित सरकार स्वयं उसका गठन कर सकती है। विकासात्मक आयोजना का कार्य करने के लिए अधिशासन की संरचनाओं से स्वतंत्र किसी पृथक प्राधिकरण का सृजन करने का कोई तर्क नहीं है। तीसरे संविधान की विकेन्द्रीकरण स्कीम में जिला आयोजना समिति एकमात्र निकाय हैं, जहाँ कुल सदस्यों के कम से कम पांचवें हिस्से को नामित किया जा सकता है। कोई भी नामित सदस्य जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष भी हो सकता है। नामांकन संकीर्ण राजनीतिक विचारों पर सदस्यों को शामिल करने के लिए राज्य की शासक पार्टी को उपलब्ध एक सुविधाजनक साधन है। कुछ राज्यों ने समिति के प्रमुख के रूप में मंत्री को नामित करने की स्वतंत्रता ली है, और इस प्रकार जिला आयोजना समिति को एक शक्ति केन्द्र के रूप में परिवर्तित कर दिया है, जो निर्वाचित स्थानीय निकायों से अधिक शक्तिशाली है। चौथे जिला आयोजना समिति पंचायत नगरपालिका प्रणाली में एकमात्र समिति है और इन दोनों को बीच कोई सुव्यवस्थित संपर्क नहीं है। अंत में जिला आयोजना समिति की वैधता संदेहास्पद है क्योंकि इसकी कोई जिम्मेवारी नहीं है। अंशतः अप्रत्यक्ष निर्वाचन और अंशतः नामांकन द्वारा गठित होने के कारण यह प्रत्यक्ष न तो लोगों के प्रति जिम्मेवार हैं और न ही पंचायती राज संस्था-नगरपालिका प्रणाली के प्रति इसके विरूद्ध इन सभी विपरीत स्थितियों के साथ अपने वर्तमान स्वरूप में जिला आयोजना समिति लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की परियोजना में शायद ही कोई योगदान दे रही है। इस पर चर्चा किए जाने की आवश्यकता है।

जिला सरकार के रूप में जिला पंचायत

इस शब्द के वास्तविक और सही अर्थ में केवल ग्राम पंचायत और नगरपालिका स्थानीय सरकार के रूप में माने जाने के योग्य होते हैं। यह भी महत्त्वपूर्ण है कि कर लगाने की शक्ति, जो सरकारी प्राधिकार का

अनुबंध-I (1) जारी

एक संकेतक है, सभी स्थानीय निकायों में इन दो निकायों को प्राप्त है। दूसरी ओर, पारम्परिक रूप से जिला हमारे देश के प्रशासन की एक अनिवार्य इकाई रही है। इसलिए अगर स्थानीय प्रशासन का लोकतंत्रीकरण लक्ष्य है तो जिला स्तर पर एक प्रातिनिधिक निकाय मौजूद रहना होगा।

- स्थानीय सरकार का जिला स्तर ग्रामीण और शहरी दोनों आबादी का प्रतिनिधित्व कर सकता है।
- ग्रामीण और शहरी दोनों आबादी के लिए जिला स्तर पर एकल प्रातिनिधिक निकाय का निर्वाचन सुविधाजनक बताते हुए अनुच्छेद 243 (घ) को संशोधित किया जाना आवश्यक है।
- अनुच्छेद 243यघ का विलोप किया जाए क्योंकि ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हुए जिला स्तर के साथ अपने वर्तमान स्वरूप में जिला पंचायत परिषद् निरर्थक रहेगी।

ग्राम प्रचायत के न्यूनतम आकार का निर्धारण करने के लिए विचार किए जाने वाले कारक ये हो सकते हैं- (क) स्थानीय संसाधन सृजन की क्षमताएँ (ख) सेवा सुपुर्दगी के लिए अनिवार्य कर्मचारियों के अनुरक्षण की सततता, (ग) मुख्य कार्यों के लिए आयोजना की इकाई के रूप में उपयुक्तता (घ) भौगोलिक संबद्धता (ड.) गाम पंचायत क्षेत्र में पठारी दशा और संचार सुविधा। यह आवश्यक है कि राज्यों, जहाँ छोटी आकार वाली ग्राम पंचायतें (मान लें गैर पर्वतीय क्षेत्र में 6000 से कम जनसंख्या) होती है, को उपरोल्लिखित कारकों पर विचार करने के बाद उन्हें पुनर्गठित करने के लिए विस्तृत कार्य करना चाहिए। अधिक बड़ी आकार वाली ग्राम पंचायतों को भी समस्याएँ होती हैं क्योंकि सामान्यतः ग्राम पंचायत की जनसंख्या 15,000 से अधिक नहीं होनी चाहिए, जब तक निवास स्थान की पद्धति अन्यथा मांग न करें। बड़ी ग्राम पंचायतों से लोकप्रिय भागीदारी में समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। यहाँ भागीदारी को प्रोत्साहन देने के लिए ग्राम सभा की बजाय वार्ड सभा पर बल दिया जाना चाहिए। उपयुक्त समाधान खोजा जाना होगा।

भारत के संविधान में 73वें संशोधन के बाद जैसा दिखाई देता है निदर्शनात्मक अंतरण में यह चर्चा किए जाने की आवश्यकता है कि क्या जिला समाहर्ता/उपायुक्त के पद, जो संशोधन के अधीन अपेक्षित लोकतांत्रिक प्रकृति को नकारात्मक कर देंगे, को बनाए रखने की कोई संभावना रह गई या नहीं। यह भी चर्चा की जानी चाहिए कि क्या जिलाधीश/समाहर्ता की भूमिका जिला परिषदों के मुख्य कार्यकारी अधिकारियों को जिला परिषद् के मुख्य कार्यकारी अधिकारी के रूप में निर्वहन किए जाने वाले कर्त्तव्यों के अतिरिक्त राज्य सरकार से प्रत्यायोजित शक्ति के रूप में सौंपी जा सकती है या नहीं।

अनुबंध-I (1) जारी

राज्य सरकार की शक्तियाँ नियंत्रित करना

पर्यवेक्षण और नियंत्रण की कुछ पारम्परिक विधियाँ निम्नानुसार हैं:

- बजट की स्वीकृति की शक्ति
- संकल्पों और आदेशों के निलम्बन और रद्द करने की शक्तियाँ
- अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और सदस्यों के निलम्बन और कार्यमुक्ति की शक्तियाँ
- पंचायती राज संस्थाओं के निलम्बन और प्रतिस्थापन की शक्तियाँ।

राज्य सरकार के हाथों में अत्यधिक निग्रह साधन पंचायतों के अध्यक्ष अथवा उपाध्यक्ष और सदस्यों को भी निलम्बिन और कार्यमुक्त करने की शक्ति है।

कार्यपालिका द्वारा स्वयं अपने निर्णय के आधार पर किसी निर्वाचित व्यक्ति को हटाने का विचार ही औपनिवेशिक प्रथा का अवशेष है जिसे अभी तक नहीं छोड़ा गया है।

राज्य पंचायत अधिनियमों में समरूप उपबंध होने चाहिए कि किसी भी निर्वाचित व्यक्ति को केवल दो आधार पर हटाया जा सकता है-(क) पदाधिकारियों के विरूद्ध निर्वाचित सदस्यों द्वारा पारित "अविश्वास" प्रस्ताव और (ख) किसी अयोग्यता खण्ड के अधीन होने पर।

पंचायती राज संस्थाओं के नियंत्रण के लिए राज्य सरकार के हाथों में सबसे मजबूत निग्रहपूर्ण शक्ति निर्वाचित स्थानीय निकाय को प्रतिस्थापित करने की शक्ति है।

इसके तत्काल बाद इसे मामले को किसी स्वतंत्र न्यायाधिकरण अथवा माध्यस्थम को भेजना चाहिए।

पंचायतों की जिम्मेवारी और पारदर्शिता

ये हैं-(क) किसके लिए जिम्मेवारी (ख) किसके प्रति जिम्मेवारी और (ग) संस्था की जिम्मेवारी सुनिश्चित करने के साधन।

इस प्रकार पंचायती राज संस्थाओं की जिम्मेवारी के संघटकों को तैयार करने में निम्नलिखित पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है-

- संसाधनों के प्रयोग में सत्यनिष्ठा और सरकारी अधिकारियों/प्रतिनिधियों की किराया मांगने की प्रवृत्तियों को रोकना।

अनुबंध-I (1) जारी

- सरकारी कार्य करने में कानून के नियमों का पालन करना।
- सही और उचित तरीके से अधिकारियों और राजनीतिक कार्यपालकों की प्रशासनिक शक्तियों का प्रयोग।
- लोगों की अत्यावश्यकताओं के प्रति पंचायती राज संस्थाओं की प्रत्युत्तरदायिता।
- क्षमता और प्रभावोत्पादकता के रूप में पंचायती राज संस्थाओं का कार्यनिष्पादन।

ऐसे कई तरीके हो सकते हैं जिनके द्वारा पंचायतों की जिम्मेवारी उर्ध्वमुखी और अधोमुखी दोनों सुनिश्चित की जा सकती है।

ग्रामीण अधिशासन की प्रणाली में कमजोर कड़ियों में से एक मानव संसाधन के क्षेत्र में रही है। महाराष्ट्र को जिला पंचायतों की "जिला सेवा" (तकनीकी और सामान्य) सृजित करने की विशिष्टता प्राप्त है। ग्रामीण अधिशासन में मानव संसाधन की प्रणाली तैयार करने के लिए इसका सावधानीपूर्वक अध्ययन करना आवश्यक है।

संसाधन जुटाना एक अन्य पहलू है जिस पर उचित रूप से ध्यान नहीं दिया गया है। पंचायती राज संस्थाओं की राजकोषीय शक्तियाँ (क) कुछ कर लगाने और संग्रहित करने (ख) राज्य सरकार द्वारा लगाए और संग्रहित किए गए कतिपय करों को उन्हें देकर और (ग) कर-भिन्न राजस्व के स्रोतों का विस्तार करके उन्हें अधिकार प्रदान करते हुए सुदृढ़ की जा सकती है। कर-भिन्न राजस्व विभिन्न स्रोतों-(i) मार्ग कर और विभिन्न किस्मों के शुल्क (ii) विभिन्न प्रयोक्ता प्रभार और (ii) लाभकारी परिसंपत्तियों से अभिलाभ से एकत्रित किया जा सकता है।

वास्तव में अधिकांश राज्य सरकारें अभी तक इस संबंध में युक्तिसंगत और सुसंगत नीतियाँ अपनाने में विफल रही है। संसाधनों के अन्तःसरकारी स्थानान्तरण के विषय में शामिल सुधार संबंधी मुख्य मुद्दे निम्नलिखित प्रतीत होते हैंः

- देश की अधिकांश पंचायतें व्यवस्था की गई निधियों या तो स्कीम संबंधी निधियों अथवा विशिष्ट प्रयोजन अनुदानों से प्रचालनरत है। स्कीम संबंधी निधियों से संबद्ध कार्यकलाप एजेंसी संबंधित कार्य हैं। पंचायती राज संस्थाओं के पास उन्हें सौंपे गए कार्यकलाप करने के

अनुबंध-I (1) जारी

लिए बहुत कम निधियाँ उपलब्ध होती हैं। इसलिए व्यवस्था नहीं की गई (अनाबद्ध) निधिकरण की मात्रा पंचायती राज संस्थाओं को अपने मुख्य कार्यों के निवर्हन में समर्थ बनाने और व्यापकता तथा गुणवत्ता दोनों के रूप में बुनियादी सेवाओं की सुपुर्दगी सुधारने के लिए बढ़ाई जानी होगी।

- स्थानीय निकायों को निधियाँ आवंटित करने में कोई भविष्यसूचकता और सुसंगतता नहीं है। राज्य सरकारों को पंचायती राज संस्थाओं के विभिन्न स्तरों को विशिष्ट प्रयोजन और अनाबद्ध अनुदान आवंटित करने के लिए सिद्धांतों और सूत्रों को परिभाषित करने हेतु विधान तैयार करना चाहिए। निधिकरण के सिद्धांतों का कार्यकलापों की सुपुर्दगी के साथ प्रत्यक्ष संबंध होना चाहिए।
- प्रत्येक स्थानीय निकाय को आवंटन इंगित करते हुए प्रत्येक राज्य सरकार के बजटों में स्थानीय निकाय का संघटक होना चाहिए।
- राज्य सरकारें राज्य वित्त आयोगों की रिपोर्टों पर विचार करने अथवा उनकी सिफारिशें कार्यान्वित करने में गंभीरता प्रदर्शित नहीं करती। निश्चित समय सीमा के भीतर राज्य वित्त आयोग की सिफारिशों पर विचार करने और उसके कार्यान्वयन के संबंध में विशेष रूप से राज्य सरकारों का उत्तरदायित्व परिभाषित करते हुए विधान होने चाहिए।
- अधिकांश मामलें में, राज्य वित्त आयोगों और केन्द्रीय वित्त आयोग द्वारा ली गई अवधियाँ मेल नहीं खाती। यह स्थानीय निकायों को हस्तान्तरण के लिए विभिन्न राज्यों के संसाधनों की आवश्यकताएँ निर्धारित करने में केन्द्रीय वित्त आयोग के लिए कठिनाईयाँ उत्पन्न करती हैं। दोनों अवधियों को तुल्यकालिक करना आवश्यक है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अनुच्छेद 243 झ में यथा संकल्पित न केवल "प्रत्येक पांचवें वर्ष की समाप्ति पर" बल्कि पहले भी राज्य वित्त आयोगों की स्थापना करने के लिए राज्य सरकारों को अधिकार देना आवश्यक है। तदनुसार, "प्रत्येक पांचवें वर्ष की समाप्ति पर" शब्दों के बाद 'अथवा जैसा राज्यपाल आवश्यक समझे पहले' शब्दों को प्रविष्ट करते हुए इस अनुच्छेद को संशोधित किया जा सकता है। संशोधन अनुच्छेद 243झ को अनुच्छेद 280 के समनुरूप कर देगा।

सभी राज्य वित्त आयोगों की रिपोर्टों की गुणवत्ता अच्छी नहीं है। न तो वे अन्तर्राज्यीय तुलना संभव करते हुए समान आधार शामिल करती हैं। यह आवश्यक है कि प्रत्येक केन्द्रीय वित्त आयोग भावी राज्य वित्त आयोगों द्वारा अनुपालन किए जाने वाले दिशानिर्देश देते हैं।

ईमानदारीपूर्वक, मैं इस राष्ट्रीय सभा के विचार-विमर्श से अत्यधिक अच्छे परिणामों की आशा करता हूं। मैं आशा करता हूं कि इस सभा की सहायता के माध्यम से प्रशासनिक सुधार आयोग न केवल भारत में स्थानीय शासन के मुद्दे पर एक प्रबुद्ध चर्चा का शुभारंभ करने में समर्थ होगा बल्कि इसकी कार्यवाहियों से कुछ व्यावहारिक सरल और अर्थपूर्ण सुझाव प्राप्त करने की स्थिति में भी होगा, जो भारत के ग्रामीण परिदृश्य में विकास को समृद्ध बनाने में सहायता कर सकता है। मैं इस सभा की चर्चा के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ देता हूं।

अनुबन्ध-I (2)

ग्रामीण अधिशासन में विकेन्द्रीकरण पर राष्ट्रीय सभा

1 और 2 मार्च, 2007

प्रतिभागियों की सूची

भारत सरकार

1. श्री बी. एन. युगांधर, सदस्य, योजना आयोग।
2. श्रीमती मीनाक्षी दत्त घोष, सचिव, पंचायती राज मंत्रालय।
3. श्री बी. के. सिन्हा, अपर सचिव, पंचायती राज मंत्रालय।
4. श्री टी. आर. रघुनंदन, संयुक्त सचिव, पंचायती राज मंत्रालय।
5. श्री जे. के. महापात्र, संयुक्त सचिव, ग्रामीण विकास मंत्रालय।

राज्य सरकारें

6. श्री एन. शिवसैलम, प्रबंध निदेशक, केएसबीसीएल, कर्नाटक।
7. श्री एम. सैमुएल, प्रधान सचिव, आन्ध्र प्रदेश।
8. श्री सुनील कुमार गुप्ता, भा. प्र. से. आयुक्त और विशेष सचिव, पश्चिम बंगाल सरकार।
9. श्री प्रदीप भार्गव, अपर मुख्य सचिव, पंचायती राज और ग्रामीण विकास, मध्य प्रदेश सरकार।
10. श्री के. एस. वत्स, सचिव, ग्रामीण विकास विभाग, महाराष्ट्र।
11. डॉ. जे. जी. आयंगर, आयुक्त और सचिव, ग्रामीण विकास, त्रिपुरा।

सामाजिक विज्ञान संस्थान

12. डॉ. जॉर्ज मैथ्यू
13. प्रोफेसर एम. ए. ओम्मेन
14. श्री बी.डी. घोष

अनुबंध-I (2) जारी

15. श्री सी. एन. एस. नायर
16. डॉ. जैकब जॉन
17. डॉ. ए. एन. राय
18. प्रोफेसर बी. एस. बाविस्कर
19. श्री डी. एन. गुप्ता
20. प्रोफेसर पार्थ नाथ मुखर्जी
21. प्रो. के. सी. सीरारामकृष्णन, भा. प्र. से. (सेवानिवृत्त)
22. डॉ. एस. एस. मीनाक्षीसुन्दरम, भा. प्र. से. (सेवानिवृत्त)

विशेषज्ञ/कार्यकर्त्ता

23. डॉ. विनोद के. जयरथ, हैदराबाद
24. प्रोफेसर अभिजीत दत्ता, कोलकाता
25. श्री अशोक सरकार कोलकत्ता
26. डॉ. महिपाल, नीलोखेड़ी
27. डॉ. एस. के. सिंह, राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान (एनआईआरडी) हैदराबाद
28. डॉ. एन. शिवन्ना, सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन संस्थान (आईएसईसी) बंगलौर
29. डॉ. जॉय एलेमॉन, कैप डेक, तिरूअनंतपुरम
30. श्री शादाब मंसूरी, ग्रामीणवाद और हकदारी केन्द्र (आरएलईके) देहरादून
31. सुश्री सारिका सलूजा, आरएलईके, देहरादून
32. श्री विनय आचार्य, उन्नति, अहमदाबाद
33. श्री राकेश हूजा, भा. प्र. से., जयपुर
34. डॉ. आर. पी. बालन, ग्रामीण और औद्योगिक विकास अनुसंधान केन्द्र (सीआरआरआईडी), चंडीगढ़
35. श्री मनोज राय, एशिया में भागीदारिता अनुसंधान (पीआरआईए)

36. प्रोफेसर बी.बी मोहंती, पांडिचेरी विश्वविद्यालय, पांडिचेरी
37. प्रोफेसर पीटर डी सूजा, दिल्ली
38. डॉ. गिरीश कुमार, दिल्ली
39. डॉ. ओ. पी. माथुर, राष्ट्रीय लोक वित्त और नीति संस्थान (एनआईपीएफपी) नई दिल्ली
40. श्री अनिल कुमार गुप्ता, भारतीय प्रबंध संस्थान, अहमदाबाद

प्रशासनिक सुधार आयोग

41. श्री एम. वीरप्पा मोइली, अध्यक्ष, प्रशासनिक सुधार आयोग
42. श्री वी. रामचंद्रन, सदस्य, प्रशासनिक सुधार आयोग
43. डॉ. ए. पी. मुखर्जी, सदस्य, प्रशासनिक सुधार आयोग
44. श्रीमती विनीता राय, सदस्य-सचिव, प्रशासनिक सुधार आयोग
45. श्री अभिजीत सेनगुप्ता, प्रधान सलाहकार, प्रशासनिक सुधार आयोग

अनुबंध-I (3)

ग्रामीण अधिशासन में विकेन्द्रीकरण पर राष्ट्रीय सभा

1 और 2 मार्च, 2007

कार्य समूह द्वारा की गई सिफारिशें

ग्रामीण अधिशासन से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर विचार-विमर्श करने के लिए सभा में आए प्रतिभागियों को पांच समूहों में विभजित किया गया था। संबंधित समूहों की मुद्दे-वार सिफारिशें निम्नानुसार हैंः

I. संवैधानिक मुद्दे, निर्वाचन और कार्यों की सुपुर्दगी

- आर्थिक सहायता महत्त्वपूर्ण है। विषयों/कार्यों/कार्यकलापों का हस्तान्तरण अनिवार्य होना चाहिए और इसका स्पष्ट रूप से संबंधित राज्य अधिनियमों में उल्लेख किया जाए।
- अनुच्छेद 243छ के उपबंधों के अधीन ग्राम पंचायत/प्रखण्ड/जिला स्तर के लिए कार्यकलापों की स्पष्ट रूप से एक पृथक सूची होनी चाहिए।
- मध्यस्थ और जिला स्तर पंचायत की पर्यवेक्षीय/अनुवीक्षणीय भूमिका और ग्राम स्तर पंचायतों के लिए योजना होनी चाहिए।
- कुशतला विकास और व्यावसायिक विकास के लिए राज्य-स्तर विभागों को पुनःप्रशिक्षित और पुनःउन्मुखीकृत किया जाए।
- 3-स्तरीय वर्तमान पंचायत राज संस्थाओं की संरचना बड़ी है और इन्हें कम शक्तियाँ प्राप्त हैं।
- ग्राम पंचायत और जिला स्तरों से निर्वाचित प्रतिनिधियों से मध्यस्थ स्तर गठित किया जाना चाहिए। प्रखण्ड को एक प्रशासनिक इकाई बना रहना चाहिए।
- छोटे राज्यों में प्रखण्ड स्तर/जिला स्तर पंचायत रखने के लिए विकल्प संबंधित राज्य पर छोड़ दिया जाना चाहिए।
- जनगणना/राजस्व ग्राम और ग्राम पंचायत की भौगोलिक सीमा सह-समापन वाली होनी चाहिए और राजस्व ग्राम को व्यवहार्यता और मितव्ययिता के दृष्टिगत अधिक ग्राम पंचायत होने के लिए विभाजित नहीं किया जाना चाहिए।
- प्रखण्ड को राजस्व तालुक के साथ सह-समापक होना चाहिए।

अनुबंध-I (3) जारी

- जिला परिषद/जिला पंचायत/जिला परिषद जैसे एकल जिला-स्तरीय निकाय की लम्बी अवधि से प्रतीक्षा है।
- जिला परिषद के पास शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों के लिए उत्तरदायित्व होना चाहिए और उसे अनुच्छेद 243यघ के अधीन जिला पंचायत परिषद के रूप में भी कार्य करना चाहिए।
- अंतरिम व्यवस्था के रूप में अध्यक्ष, जिला परिषद को जिला पंचायत परिषद का अध्यक्ष होना चाहिए और मुख्य अधिकारी, जिला परिषद को तत्काल जिला पंचायत परिषद का सचिव बनाया जाना चाहिए।
- जिला परिषद को शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों की योजना बनाने का क्षेत्राधिकार होना चाहिए।
- बड़े राज्यों में विधान परिषद 1935 भारत अधिनियम के उपबंधों का विस्तार है।
- 73वें और 74वें संशोधन के बाद पहले के स्वरूप में विधान परिषद की कोई संगतता नहीं हैं
- तीन-स्तरीय पंचायती राज संस्थाओं और राज्य विधान सभा के बीच सुव्यवस्थित संपर्क होने के लिए तीन-स्तरीय पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों से अलग-अलग निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा चुने जाने वाले स्थानीय प्राधिकारियों की एक विधान परिषद होगी। दूसरे खण्ड को स्थानीय सरकार की परिषद के रूप में नामोदिष्ट किया जाना चाहिए।
- राज्य निर्वाचन आयुक्त (एसईसी) को विधायकों/सांसदों के लिए भी चुनाव कराना चाहिए।
- भारत के निर्वाचन आयुक्त को राज्य निर्वाचन आयुक्त के चयन में शामिल किया जाना चाहिए।
- राज्य निर्वाचन आयुक्त के चयन की प्रक्रिया को सांस्थानिकीकृत किया जाना चाहिए। राज्य निर्वाचन आयुक्त और मुख्य चुनाव आयुक्त (सीईओ) एक ही होना चाहिए।
- विधायकों/सांसदों के निर्वाचन के लिए राज्य निर्वाचन आयुक्त भारत के निर्वाचन आयुक्त के अधीक्षणाधीन और नियंत्रणाधीन होगा।
- पंचायतों के गठन का निर्णय पृथक परिसीमन आयोग द्वारा किया जाएगा।
- पदाधिकारियों का कार्यकाल निर्वाचित निकाय की अवधि के साथ सह-समापन योग्य होगा।

अनुबंध-I (3) जारी

- ग्राम पंचायत स्तर पर प्रत्यक्षतः/अप्रत्यक्षतः प्रधान और प्रखण्ड/जिला स्तर पर अप्रत्यक्षतः अध्यक्ष का निर्वाचन राज्य सरकार के विवेक पर छोड़ दिया जाना चाहिए।
- एक कार्यकाल का आरक्षण अपर्याप्त है और यह सदस्यता के लिए न्यूनतम दो कार्यकाल का होना चाहिए परन्तु पदाधिकारियों के लिए नहीं।

II. पंचायती राज संस्थाएं, राज्य और समुदाय की संस्थाएं/नागरिक संगठन

- किसी प्रशासनिक प्राधिकारी द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि को हटाने की कोई वैधता नहीं हैं।
- अगर आपराधिक मामले के आधार पर हटाए जाने का प्रश्न हैं तो न्यायालय की सामान्य कार्यविधि का अनुपालन किया जा सकता है।
- पंचायती राज संस्थाओं के सदस्यों को नहीं हटाया जाना चाहिए।
- अध्यक्ष अथवा उपाध्यक्ष को अविश्वास प्रस्ताव द्वारा हटाया जा सकता है।
- अगर पंचायतें अकार्यात्मक हों तो उन्हें स्थानीय निकाय के माध्यस्थम की रिपोर्ट के आधार पर भंग किया जा सकता है। ऐसे मामले में इनके भंग होने के बाद छः महीने के भीतर चुनाव कराया जाना चाहिए।
- जिला पंचायत को जिला परिषद में विकसित नहीं करना चाहिए। इसे विकास के विधिवत क्रम में होने देना चाहिए।
- ऐतिहासिक रूप से, विकास की भूमिका जिला समाहर्ता (डीसी)/जिलाधीश (डीएम) के पास बहुत देर से आई और अब पंचायत जैसी एजेंसियां अस्तित्व में आ गई हैं, शक्तियाँ उन्हें दी जानी चाहिए।
- जिला समाहर्ता/जिलाधीश कानून और व्यवस्था, चुनाव, राजस्व संग्रहण से संबद्ध हो सकते हैं। वे जिला आयोजना समिति (डीपीसी) के सचिव भी हो सकते हैं। जिला परिषद के अध्यक्ष को जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष होना चाहिए और जिला परिषद के लिए पृथक सचिव होना चाहिए।
- जिला समाहर्ता चुनाव, राजस्व तथा कानून और व्यवस्था के लिए स्वतंत्र रूप से कार्य करता है और पंचायत से संबद्ध कार्य के लिए उसे उसका अधीनस्थ होना चाहिए। जिला समाहर्ताओं के पास जो शक्तियाँ है उन्हें अब संपूर्ण संरचना सहित जिला परिषद को अंतरित की जानी चाहिए।

अनुबंध-I (3) जारी

- पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम के अधीन दिए गए अनुसार ग्राम सभा की शक्तियाँ, विशेषकर निम्नलिखित शक्तियाँ सभी राज्यों के अधिनियम में अपनाई जा सकती हैः
  - योजना और बजट बनाने की शक्ति
  - लाभार्थियों का चयन करने और इनकी सूची को अंतिम रूप देने की शक्ति
  - प्राकृतिक संसाधनों का स्वामित्व
  - सामाजिक लेखापरीक्षा
  - उपयोगिता प्रमाणपत्र
  - निषेध लागू करना
- खान और खनिज अधिनियम, भूमि अधिग्रहण, वन अधिनियम और पर्यावरण संरक्षण अधिनियम आदि जैसे विभिन्न मौजूदा विनियमों की पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम के साथ अनुरूपता लाने के लिए समीक्षा किए जाने की आवश्यकता है।
- महिलाओं का प्रतिनिधित्व प्राप्त करने के लिए, ग्राम-सभा के कोरम में एक-तिहाई महिलाएँ होनी चाहिए। ग्राम सभा के एक भाग के रूप में पृथक महिला सभा गठित किया जाना चाहिए।
- केन्द्र प्रायोजित स्कीमों के लिए धनराशि संबंधित प्राप्तकर्त्ता चाहे वह ग्राम पंचायत, जिला परिषद अथवा प्रखण्ड पंचायत हो, को सीधे मिलनी चाहिए। पंचायतों के विभिन्न स्तरों के बीच सुव्यवस्थित संपर्को का अनुपालन करते हुए अनुवीक्षण किया जा सकता है।
- डीआरडीए जैसी समानान्तर संस्थाओं का कार्य के रूप में जिला परिषद के साथ विलय किया जाना चाहिए और वास्तविक संयोजन भी महत्त्वपूर्ण है।
- जिला पंचायत नागरिक समाज और जनता के प्रतिनिधियों के साथ मिलकर जिला समन्वय समिति होनी चाहिए।
- अध्यक्ष/उपाध्यक्ष जिला परिषद और नागरिक समाज से होने चाहिए - यह सहक्रिया उत्पन्न करेगा, कार्यों को दोहराने से बचाएगा और जिम्मेदारी भी सुरक्षित करेगा।

अनुबंध-I (3) जारी

- नागरिकों के सशक्तिकरण के लिए निम्नलिखित उपाय अनिवार्य है-
  - ग्राम सभा का सशक्ति करण
  - वार्ड समितियों को लाभर्थियों के चयन की शक्ति होनी चाहिए
  - नागरिक चार्टर
  - बेहतर शिकायत निवारण प्रणाली
  - सामाजिक लेखापरीक्षा
  - जन सुनवाई और पंचायत जमाबंदी
  - सूचना के अधिकार को प्रभावी रूप से लागू करना
  - स्कीम विशिष्ट लाभार्थी समिति
  - नागरिक मंच का सांस्थानिकीकरण

III. पंचायत की वित्त व्यवस्थाएँ

- कार्यकलाप मानचित्रण और विभिन्न बजट शीर्षों में समतुल्य निधिकरण के बीच बेमेलता है।
- इस समय केवल सात राज्यों (राजस्थान, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, केरल, कर्नाटक, गुजरात और महाराष्ट्र) के पास पंचायती राज संस्थाओं के लिए बजट की व्यवस्था है। इसका शेष राज्यों में भी विस्तार किया जाना चाहिए।
- केन्द्र-प्रायोजित स्कीमों के लिए निधिकरण, जो इस समय 72,000 करोड़ रुपए हैं, केन्द्रीय वित्त आयोग के माध्यम से भेजा जा सकता है, जो इसके बाद राज्य वित्त आयोगों के माध्यम से इसे स्थानीय निकायों को दे सकते हैं।
- अन्तर्राज्यीय अंतरणों के लिए उपयुक्त मानदण्ड तैयार किए जाते हैं।
- केन्द्र सरकार को भी राजकाषीय विकेन्द्रीकरण की स्कीम में लाया जाना है।
- ग्राम पंचायत का आकार व्यवहार्य होना चाहिए।
- जिला परिषद और आईपी संयुक्त रूप से व्यावसायिक और संपत्ति कर का निर्धारण कर सकते हैं जबकि ग्राम पंचायत उनका संग्रहण कर सकती है।

अनुबंध-I (3) जारी

- संघ, राज्य और समवर्ती सूची के अतिरिक्त स्थानीय निकायों के लिए कर की मदों की चौथी सूची तैयार करना आवश्यक है। चौथी सूची में संपत्ति कर, व्यवसाय कर, मनोरंजन कर और भू-राजस्व पर उप-कर शामिल होना चाहिए।
- यह तथ्य देखते हुए कि राजस्थान जैसी कतिपय राज्य सरकारों ने संपत्ति कर छोड़ दिया है, इस किस्म की अनिवार्य सूची आवश्यक प्रतीत होती है।
- कई व्यर्थ के कर जो पच्चीस से अधिक है, छोड़े जा सकते हैं।
- चूंकि स्थानीय निकायों के पास चुंगी तथा मनोरंजन कर नहीं रहेगा इसलिए सामग्रियों और सेवाओं से प्राप्त राजस्व की भागीदारी वर्ष 2010 से आगे तक स्थानीय निकायों के साथ की जानी चाहिए।
- पंचायती राज संस्थाओं को अपनी परिसंपत्तियों का क्षमतापूर्वक उपयोग करने के लिए अपने उद्यमिता कौशल का प्रयोग करने हेतु प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- अपनी परिसंपत्तियों के आधार पर प्रत्येक पंचायती राज संस्था को उधार लेने की अनुमति दी जा सकती है। बाजार उधार को राजकोषीय जिम्मेवारी और उत्तरदायित्व के साथ जोड़ा जाए।
- जबकि संविधान में केन्द्रीय वित्त आयोग की भाषा का समान रूप से राज्य वित्त आयाग के लिए भी प्रयोग किया गया है, वहीं यह खेदजनक है कि राज्य वित्त आयोग अनिवार्य रूप से नौकरशाहों (विशेषकर स्थानीय प्रशासन और वित्त विभाग से) और राजनीतिक राजभक्तों की सेवा के लिए गठित किए जाते हैं।
- यह इंगित करना समान रूप से महत्त्वपूर्ण है कि राज्य वित्त आयोग की सिफारिशों ने जनता के बीच अथवा समीक्षा को आकर्षित नहीं किया है।
- पंचायती राज मंत्रालय का विस्तार नगरपालिकाओं और नगरनिगमों को शामिल करते हुए स्थानीय शासन मंत्रालय के रूप में किए जाने की आवश्यकता है।

IV. विकेन्दीकृत आयोजना

- विकेन्द्रीकृत आयोजना के सांस्थानिकीकरण की संवैधानिक स्कीम को पूरा नहीं किया गया है। इसके कारणों में से एक यह है कि कई राज्य अधिनियमों में पंचायतों, विशेषकर ग्राम

अनुबंध-I (3) जारी

पंचायतों और आईपी को आयोजना कार्य करने के लिए अधिकार नहीं दिया गया है। स्पष्टतः संविधान में दिए गए बल के अनुसार पंचायतों के सभी स्तर के लिए यह कार्य अनिवार्य कार्य बनाने के लिए ऐसे अधिनियमों को संशोधित किया जाना चाहिए।

- यहाँ तक कि उन राज्यों, जहाँ ऐसे कार्य संविधि द्वारा अनिवार्य बनाए जाते हैं, पंचायतें यह कार्य गंभीरपूर्वक नहीं करती है। इसके कई कारण हैं-

    (i) पहला, अधिकांश राज्यों में कार्यों की सुपुर्दगी नहीं की गई है। वास्तव में शक्तियों, कार्यों अथवा कार्यकलापों के प्रत्यायोजन के यथा विरोधी सुपुर्दगी की संकल्पना यहाँ तक कि आज भी स्पष्ट नहीं है। ऐसी सुपुर्दगी किए जाने तक आयोजना की बात करना व्यर्थ है। यह समझना आवश्यक है कि पंचायतों के लिए प्रत्यायोजित कार्य की प्रणाली में आयोजना उस एजेंसी का कार्यकलाप हो जाता है, जो किसी निचले निकाय को ऐसे कार्य प्रत्यायोजित करती है। अगर पंचायतों को कार्य के स्वायत्तशासी क्षेत्राधिकार को नकारा जाता है तो यह प्रत्याशा नहीं की जा सकती कि पंचायती राज संस्थाएँ सामान्य कारण से प्रभावी रूप से आयोजना कार्य करेगी कि वह एजेंसी, जो योजना बताती है, के पास उसे कार्यान्वित करने का कोई प्राधिकार नहीं होता है। इसलिए, कार्यों का प्रत्यायोजन विकेन्द्रीकृत आयोजना के प्रारंभ हो सकने के पहले होना चाहिए।

    (ii) अगर कार्यात्मक सुपुर्दगी की कमी एक बाधा है तो दूसरी बाधा अव्यवस्थित (अनाबद्ध) निधियों की है। यह पंचायत की वित्त व्यवस्था को इस तरीके से पुनर्गठित करने की मांग करती है कि पंचायत निकायों के पास उपयोग के लिए पर्याप्त अनाबद्ध निधियाँ हों। जमीनी स्तर पर आयोजना वास्तविकता नहीं बनाई जा सकती अगर पंयायतों के पास उपयोग के लिए स्कीम की ही संचित निधि हो। यह एक कठोर वास्तविकता है, जिसे उचित रूप से नहीं माना गया है।

- इससे भी अधिक यह माना जाना चाहिए कि अभी हाल तक राष्ट्रीय योजना आयोग ने स्थानीय शासन स्तर की आयोजना तथा राज्य योजनाओं के साथ स्थानीय योजनाओं को एकीकृत करने में बहुत अधिक दिलचस्पी नहीं दिखाई थी। राज्य योजना बोर्डो (एसपीबी) में केरल जैसे के उल्लेखनीय अपवाद सहित अन्य किसी ने भी स्थानीय योजनाएँ तैयार करने

अनुबंध-I (3) जारी

के लिए व्यवहार्य ढांचा बनाने की कोई इच्छा नहीं दर्शाई। यह एक अत्यधिक बड़ी चूक रही है। जिला आयोजना प्रक्रिया प्रारंभ करने और उसे राज्य की ग्यारहवीं योजना की तैयारी का अभिन्न हिस्सा बनाने के लिए योजना आयोग का हाल का अनुदेश किसी भी महत्त्वपूर्ण प्रभाव के लिए बहुत विलम्ब से आया। योजना आयोग द्वारा बल दिए गए ढांचे में ग्राम पंचायत अथवा आईपी स्तरों पर आयोजना कार्यतंत्र के ब्यौरों की चर्चा नहीं की गई। इन कमियों को राज्य योजना बोर्डो द्वारा पूरा किया जाना चाहिए था परंतु राज्य योजना बोर्ड मोटे तौर पर इसे करने में विफल रहे। जैसा अभी मामला है, पंचायत स्तर की योजनाएँ तैयार करने की सुव्यवस्थित कार्य योग्य विधियाँ अभी भी मौजूद नहीं हैं।

- इन परिस्थितियों में, योजना आयोग को स्थानीय आयोजना प्रक्रिया के सांस्थानिकीकरण के संबंध में आगे पहल करनी होगी। जिला योजनाओं में एकीकृत स्थानीय योजनाओं के आधार पर राज्यों की ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजनाएँ तैयार करने के इसके आशय की पूर्ति की गई प्रतीत नहीं होती। यह अब सुनिश्चित करने का प्रयास कर सकता है कि कम से कम राज्यों की भावी वार्षिक योजनाएँ स्थानीय योजनाओं पर आधारित हों। इसके साथ ही आयोग को संबंधित राज्य योजना विभागों को इस मामले में पहल करने के लिए प्रेरित करना होगा ताकि वे पंचायती राज संस्थाओं/जिला आयोजना समितियों को जानकारी और ज्ञान का समर्थन प्रदान करते हुए एक उत्प्रेरक एजेंट बन सकें। राष्ट्रीय योजना आयोग और राज्य योजना बोर्ड दोनों में स्थानीय आयोजना कार्य की रूपरेखा तैयार करने और जिला स्तर तथा तालुका/प्रखण्ड स्तर पर सांस्थानिक समर्थन प्रदान करने के लिए समर्पित कक्ष सृजित किए जा सकते हैं।
- कई केन्द्र प्रायोजित स्कीमों में स्वास्थ्य योजनाएँ और शैक्षणिक योजनाएँ जैसी क्षेत्रक योजनाएँ तैयार करने के लिए प्रावधान किए जाते है। कई मामलों में ये योजना आयोग का कृपादान है। चूंकि स्थानीय योजनाओं को क्षेत्रकों को शामिल करते हुए प्रवृत्ति में संपूर्ण होना होता है इसलिए ऐसी योजनाओं पर स्थानीय योजनाओं की उप-योजनाओं के रूप में विचार किया जाना चाहिए। परंतु केन्द्र प्रायोजित स्कीमों की प्रवृत्ति स्थानीय विकास के प्रति संपूर्ण दृष्टिकोण लेने की आवश्यकता का त्याग करते हुए संक्षिप्त रूपरेखा वाली होती है और एकमात्र क्षेत्रक योजनाएँ तैयार करना प्रोत्साहित करती है। योजना आयोग को केन्द्र प्रायोजित स्कीमों की तैयारी के इस पहलू पर गौर करना होगा।

अनुबंध-I (3) जारी

- जिला योजनाओं के बारे में भ्रम हैं। भ्रम का एक सेट उसकी प्रकृति से संबंधित है। क्या यह पंचायती राज संस्थाओं और नगरपालिका योजनाओं का संग्रहण है? अथवा यह कुछ और अधिक है? वह बातें क्या हैं जिन पर पंचायतों अथवा नगरपालिकाओं के लघु स्तरों पर ध्यान नहीं दिया जा सकता, परन्तु समस्याओं और मुद्दों का उचित अनुमान लगाने के लिए वृहद दृष्टिकोण की अपेक्षा होती है। भ्रम का दूसरा सेट अधिकार क्षेत्र और आयोजना से संबंधित है। क्या उनमें केवल वे कार्य शामिल होंगे, जिन्हें स्थानीय निकायों को सुपुर्द किया गया है? अथवा उन्हें उन कार्यकलापों से भी संबद्ध होना चाहिए जो सरकार के अन्य स्तरों के क्षेत्राधिकार के अधीन है परन्तु जिनका अर्थव्यवस्था, समाज अथवा जिले के वास्तविक वातावरण पर प्रभाव पड़ता है। यह एक अधिक बड़ा मुद्दा है और यह प्रश्न उठाता है कि क्या स्थानीय लोकतांत्रिक संस्थाओं का 'एकपक्षीय रूप से स्थानीय क्षेत्र पर प्रभाव डालने वाले कतिपय निर्णयों पर वर्चस्व होगा या नहीं। औद्योगीकरण अथवा अवसंरचनात्मक विकास के लिए भूमि अधिग्रहण के मुद्दे पर पश्चिम बंगाल और अन्यत्र हाल के विवादों ने मुद्दे सामने लाए हैं। अगर राज्य अथवा केन्द्र सरकार द्वारा प्रारंभ की जाने वाली किसी विकास परियोजना का बेघर करने, आजीविका की हानि अथवा खाद्य असुरक्षा जमीनी स्तर पर लोगों के लिए जीवन-निर्वाह के वातावरण की अवतति की समस्याएँ उत्पन्न करने का प्रभाव होता है तो क्या स्थानीय लोगों को उनसे परामर्श लेने का अधिकार नहीं होना चाहिए? जिला योजनाओं की प्रकृति के बारे में इन भ्रमों का समाधान करना आवश्यक है।
- विकासात्मक आयोजना के किसी कार्य में ज्ञान अथवा जानकारी संबंधी निविष्टि एक महत्त्वपूर्ण अवयव है। ज्ञान के आधार का विशेषकर जमीनी स्तर पर कैसे विस्तार किया जाए यह विकेन्द्रीकृत आयोजना प्रक्रिया के समक्ष एक समस्या है और इसलिए इससे निपटा जाना होगा। बहु-स्तरीय आयोजना की प्रणाली में, प्रत्येक स्तर पर ज्ञान संबंधी निविष्टियाँ प्रदान करना ध्यान दी जाने वाली समस्या है। इस समस्या से निपटने के लिए अभिन्न परिवर्तनों की आवश्यकता है। ग्यारहवीं योजना के दौरान पंचायती राज संस्थाओं और जिला स्तर पर शहरी स्थानीय निकायों के लिए ज्ञान-समर्थन केन्द्र स्थापित करते हुए शुभारंभ किया जा सकता है। इसका बारहवीं योजना में तालुका/प्रखंडो में विस्तार किया जा सकता है।

अनुबंध-I (3) जारी

- इन मुद्दों से नजदीकी रूप से संबद्ध ऊपर से नीचे तक और नीचे से ऊपर तक सूचना और वार्तालाप के प्रवाह की प्रक्रिया विकसित करने की आवश्यकता है। ऐसी प्रक्रिया अभी मौजूद नहीं है। विचारों की जानकारी का प्रवाह अभी तक एकपक्षीय प्रक्रिया है, यह ऊपर से नीचे तक आती हैं परन्तु नीचे से ऊपर तक नहीं। जिला और तालुका/प्रखण्ड स्तरों पर आयोजना के लिए ज्ञान समर्थन केन्द्र इस कमी पर ध्यान देंगे।
- विकेन्द्रीकृत आयोजना का बड़ा भाग आयोजना प्रक्रिया में समुदाय की भागीदारी है। इस तथ्य पर विचार करना आवश्यक है कि हम एक असमानतावादी सामाजिक ढांचे में स्थानीय लोकतंत्र प्रारंभ करने का प्रयास कर रहे हैं। ऐसा ढांचा अनिवार्य रूप से शक्ति की विषमता उत्पन्न करता है जिसका परिणाम अंततः लोकतांत्रिक संस्थाओं का विशिष्ट वर्ग द्वारा कब्जा करना होता है। अगर स्थानीय स्तर की भागीदारिता आयोजना से सम्मिलित परिणाम अभिप्रेत है तो पंचायतों के विशिष्ट वर्ग के कब्जे की इस संभावना को मानना आवश्यक है। इस तथ्य को मानने के बाद भी कि लोकतंत्र में दीर्घावधि में इस विपथन का ध्यान रखने के लिए अन्तःनिर्मित सुधारात्मक कार्यतंत्र है, शक्तियों के दुरूपयोग और लोकतांत्रिक पद्धतियों का उल्लंघन रोकने के लिए अल्पावधि में पर्याप्त सुरक्षोपाय संस्थापित करना आवश्यक है। सदस्यों के निर्वाचन की समानुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली लागू करने में, विभिन्न किस्मों के सुरक्षोपाय यथा, पारदर्शी लाभार्थी चयन मानदंड आदि, भलीभांति जिम्मेवारी लेने का कार्यतंत्र कुछ महत्त्वपूर्ण अवयव हैं, जिनपर स्थानीय शासन की संस्थाओं के सुदृढ़ीकरण के साथ-साथ ध्यान में रखा जाना होगा।
- जिला आयोजना समिति अभी तक अधिकांश राज्यों में प्रभावी संस्था के रूप में उभरने में विफल रही है। इसके साथ कई समस्याएँ जुड़ी हैं। एक बड़ी समस्या है कि यह केवल आयोजना निकाय है जबकि पंचायती राज संस्थाएं और नगरपालिकाएँ निष्पादक निकाय हैं। निष्पादक कार्य से आयोजना को इस प्रकार अलग करना भलाई से अधिक नुकसान पहुंचा रहा है। जिला आयोजना समिति द्वारा पूरी की जाने वाली प्रस्तावित भूमिकाओं में से एक साझा विकासात्मक ढांचा तैयार करने के प्रयोजनार्थ किसी एक जिले में ग्रामीण शहरी एकीकरण है। उपर्युक्त के परिप्रेक्ष्य में हम सुझाव देते हैं कि दीर्घावधि में हमारी कल्पनादृष्टि जिला सरकार (शासन) सृजित करने की होनी चाहिए। अल्पावधि में हमें ग्रामीण और शहरी

अनुबंध-I (3) जारी

दोनों क्षेत्रों को शामिल करने के लिए जिला परिषद की भूमिका का विस्तार करने के रूप में सोचना चाहिए। उस मामले में, इसके सही अर्थ में जिला परिषद होगी और यह जिला आयोजना समिति द्वारा अभी सामना की जा रही कई समस्याओं का समाधान करेगी।

V. पंचायत कार्मिकों का प्रबंधन, उनकी क्षमता वृद्धि और पंचायती राज संस्थाओं में जिम्मेवारी और पारदर्शिता

- कार्मिकों की आवश्यकता निम्नलिखित कारकों पर निर्भर करेगी-
  - कार्यों की सुपुर्दगी
  - पंचायत का आकार
  - संसाधनों (आंतरिक और बाह्य) की उपलब्धता
  - समुचित योग्यता सहित कार्मिकों की उपलब्धता
  - तीन स्तरों के बीच सुव्यवस्थित संबंध
    - (i) संरचनात्मक संबंध
    - (ii) पर्यवेक्षण और नियंत्रण कार्यतंत्र
- राज्य-स्तरीय तकनीकी और प्रशासनिक संवर्ग की आवश्यकता है। विशिष्ट तकनीकी संवर्ग पंचायती राज संस्थाओं का सौंपे गए कार्यों पर निर्भर करेंगे। इन संवर्गों के सदस्यों को अध्यस्थ जिला स्तर पंचायती राज संस्थाओं अथवा राज्य-स्तरीय निदेशालय में तैनात किया जा सकता है।
- कार्मिकों को जब भी कमी पूरा करना अपेक्षित हो राज्य सरकार के विभाग से प्रतिनियुक्ति पर लिया जा सकता है।
- पंचायत कार्मिकों के प्रबंधन के सभी पहलुओं पर पंचायत निदेशालय द्वारा कार्रवाई करनी चाहिए।
- राज्य-स्तरीय संवर्गो के लिए राज्य लोक सेवा आयोगों द्वारा भर्ती की जा सकती है।
- सचिवालीय सहायता के लिए आवश्यकता और भर्ती नियमों के अनुसार संबंधित पंचायती राज संस्थाओं द्वारा नियुक्ति की जानी चाहिए। पंचायत निदेशालय भर्ती नियमों को अंतिम रूप दे सकता है और उनके कार्यान्वयन पर नजर रख सकता है।

अनुबंध-I (3) जारी

- पंचायत के दीर्घावधिक बोझ को कम करने के लिए पंचायती राज संस्थाओं को जितना संभव हो गृह सज्जा कार्य, नागरिक सेवाएं, कर संग्रहण आदि जैसे कार्य और सेवाएँ बाहरी स्रोतों से कराना चाहिए।
- सभी कार्मिक मध्यस्थ/जिला पंचायत के मुख्य कार्यकारी अधिकारी के प्रति और मुख्य कार्यकारी अधिकारी संबंधित पंचायती राज संस्था के प्रमुख के प्रति जवाबदेह होगा।
- सभी ग्राम पंचायतों में दिन-प्रतिदिन के कार्य में सहायता करने के लिए कम से कम एक पूर्णकालिक कर्मचारी होना चाहिए। अगर अपेक्षित हो ग्राम पंचायत का मौजूदा आकार उसकी वित्तीय व्यवहार्यता के दृष्टिगत पुनः बढ़ाया-घटाया जा सकता है।
- निर्वाचित प्रतिनिधियों और पंचायतों के कार्मिकों दोनों के लिए क्षमता निर्माण अनिवार्य है। तथापि, यह एक अनवरत प्रक्रिया है इसलिए आवधिक रूप से उन्मुखीकरण कार्यक्रम आयोजित किए जाने होंगे।
- भौतिक अवसंरचना और संकाय कार्मिकों दोनों के रूप में राज्य के स्वामित्व वाले मौजूदा प्रशिक्षण संस्थानों के सुदृढ़ीकरण की आवश्यकता है। यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि प्रशिक्षण संस्थानों को प्रचालनात्मक बने रहने के लिए पर्याप्त रूप से निधियाँ दी जाती हैं।
- निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए क्षमता निर्माण हेतु निम्नलिखित उपायों का सुझाव दिया जाता हैः

    1. पंचायत के गठन के तत्काल बाद 6 महीने से 1 वर्ष के भीतर सभी निर्वाचित प्रतिनिधियों को एक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
    2. प्रशिक्षण निरंतर प्रक्रिया के तरीके से होनी चाहिए और इस प्रयोजनार्थ संस्थाओं के एक नेटवर्क की पहचान की जानी होगी जिनमें सभी स्तरों पर गैर-सरकारी संगठन, नागरिक समाज, संगठन आदि शामिल हो सकते हैं।
    3. मॉड्यूल, सामग्रियों के विकास आदि के रूप में समरूपता, समन्वय और प्रशिक्षण की आवश्यकता के लिए "एनआईआरडी" जैसे राष्ट्रीय स्तर के शीर्ष प्रशिक्षण संस्थान को उत्तरदायित्व दिया जाना चाहिए।

अनुबंध-I (3) जारी

4. प्रारंभिक प्रशिक्षण के बाद, निर्वाचित पदाधिकारियों को राज्य/केन्द्र के विभिन्न विकासात्मक कार्यक्रमों से परिचित कराना चाहिए और प्रतिनिधियों की कतिपय विशेष श्रेणी के लिए विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए।
5. निर्वाचित प्रतिनिधियों को विकास तथा स्थानीय अधिशासन के मुद्दों के लिए विभिन्न कार्यनीतियाँ मन में बैठाने के लिए परिचय दौरे के रूप में राज्य में और उसके बाहर विभिन्न अभिनव और सर्वोत्तम पद्धतियों से भी परिचित कराया जा सकता है।

- पंचायत कार्मिकों के मामले में क्षमता निर्माण उपाय निम्नलिखित हो सकते हैः
    1. पंचायत कार्मिकों को उनकी भर्ती के बाद व्यापक आधारिक पाठ्यक्रम कराया जाना चाहिए।
    2. उन्हें अपनी उत्पादकता और कार्यनिष्पादन बढ़ाने में समर्थ बनाने के लिए वर्ष में कम से कम एक बार पुनःउन्मुख भी किया जाना चाहिए।
    3. पंचायत के कुछ कार्मिकों को विभिन्न विषयों पर विशेष प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
    4. पंचायत के पदाधिकारियों को प्रशिक्षण पूरा होने के बाद परीक्षा भी देनी चाहिए और उसके बाद उनके कार्यनिष्पादन का पद पर बने रहने/पदोन्नति के लिए अनुवीक्षण किया जाना चाहिए।
    5. पंयायत के कर्मचारियों को विकासात्मक और स्थानीय अधिशासन के मुद्दे के लिए विभिन्न कार्यनीतियाँ मन में बैठाने हेतु राज्य में और उससे बाहर परिचय दौरे के रूप में विभिन्न अभिनत और सर्वोत्तम पद्धतियों से भी अवगत कराया जा सकता है।
- जिम्मेवारी और पारदर्शिता अच्छे अधिशासन के अनिवार्य तत्त्व हैं, जिनको पंचायत प्रणाली में मुख्य रूप से प्रदर्शित करना होगा।
- सभी पंचायती राज संस्थाओं के लिए स्वतंत्र लेखापरीक्षा की आवश्यकता है। स्थानीय निधि लेखापरीक्षा जैसे मौजूदा विभागों को यह कार्य करने के लिए सुदृढ़ किया जाना आवश्यक है।
- उपरोल्लिखित स्वतंत्र लेखापरीक्षा के अतिरिक्त पंचायत विभाग/पंचायत निदेशालय के नियंत्रणाधीन नियमित अंतराल की लेखापरीक्षा किए जाने की आवश्यकता है।

- सामाजिक लेखापरीक्षा कार्यतंत्र होना चाहिए और इस संबंध में निम्नलिखित उपाय आवश्यक होंगेः
    - ग्राम सभा की नियमित अंतराल पर बैठकें बुलाना अनिवार्य किया जाना चाहिए। इन बैठकों में ग्राम पंचायतों के निर्वाचित प्रतिनिधिगण और उसके कर्मचारियों को उसके कार्यकलापों का विस्तृत रिकार्ड और लेखा-जोखा ग्राम सभा के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए।
    - सरकार अथवा गाँव में पंचायती राज संस्थाओं द्वारा किए जा रहे सामाजिक/विकास कार्यक्रमों के बारे में ग्रामीणों को अवगत कराने के लिए ग्राम स्तर पर नियमित आईईसी अभियान आयोजित किया जाना चाहिए।
    - सामाजिक/विकासात्मक कार्यक्रमों के बारे में सूचना सरकारी भवनों और निर्माण कार्यस्थलों के सूचना बोर्ड पर प्रदर्शित की जानी चाहिए।
    - राज्य पंचायत राज का अधिनियम संशोधित किया जाए और ग्राम सभा के सदस्यों को ग्राम पंचायत के निर्वाचित प्रतिनिधियों को दुबारा बुलाने का अधिकार दिया जाए।
    - राज्य सरकार/पंचायती राज संस्था को सूचना का अधिकार अधिनियम के उपबंधों का सख्त अनुपालन सुनिश्चित करना चाहिए।
    - संस्थात्मक लेखापरीक्षा/आंतरिक लेखापरीक्षा की रिपोर्ट और उस पर पंचायती राज संस्था का उत्तर ग्राम सभा में प्रस्तुत किया जाना और उस पर चर्चा की जानी चाहिए।
    - स्थानीय गैर-सरकारी संगठनों और समुदाय-आधारित संगठनों को भी सामाजिक लेखापरीक्षा में शामिल किया जाना चाहिए। इन संस्थाओं का लाभदायक रूप से प्रयोग कार्यक्रमों और सामाजिक लेखापरीक्षा के सभी संघटकों के प्रति जागरूकता बढ़ाने के लिए किया जा सकता है।

अनुबंध-I (4)

ग्रामीण अधिशासन में विकेन्द्रीकरण पर प्रश्नावली

I. अधिशासन प्रणाली में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका

वर्ष 1993 में संसद द्वारा पारित पंचायती राज पर संवैधानिक संशोधन को अब चौदह वर्ष से अधिक हो गए हैं। फिर भी, देश की समग्र अधिशासन प्रणाली में पंचायतों द्वारा निभाई जाने वाली भूमिका के बारे में काफी अस्पष्टता है। संशोधन के कमजोर अनुपालन में राज्यों ने आधे-अधूरे मन से पंचायती राज अधिनियम अधिनियमित किया और ग्रामीण स्तर की संस्थाएँ सृजित की हैं, जिन्हें मोटे तौर पर कहे जाने पर जिला स्तर पर मौजूदा प्रशासनिक पदानुकृम पर अध्यारोपित किया गया है। राज्य सरकार के सामान्य विभागों की क्षेत्र संस्थापनाओं और जिला समाहर्ता/उपायुक्त के नियंत्रणाधीन उप-प्रमण्डल अधिकारी/ तहसीलदार/प्रखण्ड विकास अधिकारी के कार्यालयों जैसे कार्यालय यथावत बने रहते है और प्रतीकात्मक ध्यान देते तथा ग्रामीण विकास की स्कीमों में छोटी भूमिकाएँ निभाते हुए निर्वाचित पंचायती राज संस्थाओं के साथ पूर्ववत सरकार के विनियामक, विकासात्मक और अवशिष्ट कार्य करना जारी रखते हैं।

73वें संशोधन पर पुनः गौर करने पर, जो संविधान के अनुच्छेद 40 में सन्निहित राज्य नीति के मुख्य निर्देशक सिद्धांतों में से एक है 'राज्य पंचायतों को संगठित करने और उनमें ऐसी शक्तियाँ और प्राधिकार, जो उन्हें स्व-शासन की इकाईयों के रूप में कार्य करने में समर्थ बनाएगा, निहित करेंगे"; इस उपाय के पीछे भावना स्थानीय स्तर पर स्व-शासन की प्रभावी संस्थाएँ संस्थापित करना है। अनुच्छेद 243 (छ) व्यापक रूप से इन निकायों को (क) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएँ तेयार करने (ख) ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध मामलों के संबंध में उपर्युक्त के लिए स्कीमों के कार्यान्वयन के संबंध में शक्तियों और उत्तरदायित्वों की सुपुर्दगी प्राप्त करने का अधिकार प्रदान करता है। अन्तर्निहित आवश्यकता यह है कि स्थानीय स्तर पर राज्य सरकार की एजेंसियों द्वारा अभी निष्पादित किए जा रहे अधिकांश कार्यों/कार्यकलापों को उनसे वापस लिया और कार्यात्मक स्वायत्तता तथा उन कार्यालयों का निर्वहन करने के लिए पर्याप्त संसाधनों के साथ पंचायतों को सौंपा जाना होगा। परन्तु, अधिकांश राज्यों में यह नहीं हुआ है। प्रायः पंचायतों को राज्य सरकार की क्षेत्र मशीनरी के एक और विस्तार के रूप में देखने की प्रवृत्ति है। इस संबंध में जिन प्रश्नों पर ध्यान देना अपेक्षित है, वे निम्नानुसार हैं-

II. सरकार के तीसरे स्तर के रूप में पंचायत

(क) क्या हम उन कार्यों और कार्यकलापों की पहचान कर सकते हैं, जो विशिष्ट रूप से पंचायती राज संस्थाओं का अधिकार क्षेत्र है?

अनुबंध-I (4) जारी

(ख) कार्यकलापों के वे कौन क्षेत्र हैं, जहाँ राज्य सरकार और पंचायत को बराबर के भागीदारों (सहयोगी क्षेत्राधिकार) के रूप में कार्य करना चाहिए?

(ग) क्या राज्य की कुछ स्कीमों अथवा केन्द्र प्रायोजित स्कीमों या सरकार के अन्य कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए इन संस्थाओं को राज्य सरकार की एजेंसियों के रुप में भी कार्य करना चाहिए? (उदाहरणार्थ, केंद्र-प्रायोजित निर्धनता उन्मूलन स्कीम का निष्पादन)।

(घ) स्थानीय सरकार के रूप में पंचायती राज संस्थाओं के उभरने में समर्थ बताने के लिए अन्य क्या कार्यकलाप अपेक्षित हैं?

(ड.) (ख और ग) तथा (घ) के बीच सापेक्षिक महत्त्व क्या होना चाहिए?

(च) क्या पंचायतों के विभिन्न स्तरों के बीच और/अथवा पंचायतों तथा राज्य/संघ सरकार के बीच कोई श्रेणीबद्धता संबंध होना चाहिए?

(छ) विकेन्द्रीकरण के क्या लक्ष्य हैं? प्रभावी सेवा सुपुर्दगी, विकास के लाभों का उचित वितरण, जिम्मेवारी, भागीदारिता आयोजना में लोगों की भागीदारी अथवा ये सभी?

(ज) हम क्या परिणाम की प्रत्याशा करते हैं जब हम एक असमानतावादी सामाजिक संरचना पर पंचयाती राज संस्थाएँ निर्मित करते हैं?

III. संवैधानिक मुद्दे

(क) पंचायती राज संस्थाओं के कार्यों का प्रत्यायोजन अनुच्छेद 243छ और ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के अनुसार किया जाना चाहिए। "राज्य का विधानमंडल कानून द्वारा पंचायतों को ऐसी शक्तियाँ और प्राधिकार प्रदान कर सकता है, जो उन्हें स्व-शासन की संस्था के रूप में कार्य करने में समर्थ बनाने के लिए आवश्यक हो......" क्या आप इस दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं कि अनुच्छेद 243छ का कथन संपूर्ण विषयवस्तु में राज्य सरकार के पास पर्याप्त गुंजाइश छोड़ता है?

(ख) क्या विकेन्द्रीकरण के मुद्दे को बेहतर ढंग से पूरा किया जाएगा अगर इस समय मौजूद संघ, राज्य और समवर्ती सूची के साथ सातवीं अनुसूची में ही स्थानीय कार्यों की तीसरी सूची हो?

अनुबंध-I (4) जारी

(ग) इस समय, ग्यारहवीं अनुसूची में 29 विषय अभिज्ञान किए गए हैं, जिन्हें राज्य सरकारों द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को हस्तांतरित किया जा सकता है। पिछले 14 वर्षों में प्राप्त अनुभव के आधार पर क्या आप इस दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं कि इस अनुसूची में संशोधन की आवश्यकता है और अगर हाँ तो वे अतिरिक्त विषय क्या हैं, जिन्हें इस सूची में शामिल करने के लिए लक्षित किया जा सकता है?

(घ) कई राज्यों ने कार्यकारी अनुदेशों के माध्यम से ग्यारहवीं अनुसूची के अधीन आने वाले कार्यों को वैसे का वैसा हस्तान्तरित किया है। क्या आप महसूस करते हैं कि विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया को बेहतर ढंग से पूरा किया जा सकता है अगर कार्यो को किसी अधिनियम या विधान द्वारा हस्तान्तरित किया जाता है?

(ङ.) अनुच्छेद 243 ख के अनुसार सभी राज्यों को आवश्यक रूप से ग्राम, मध्यस्थ और जिला स्तरों पर पंचायती राज संस्थाओं के तीन स्तरों का गठन करना होगा। क्या यह लाभप्रद होगा अगर इस प्रावधान में कुछ लचीलापन प्रदान किया जाता है और राज्य अपने पृथक निर्धारण के अनुसार उसे एक/दो/तीन स्तरीय प्रणाली बनाने के लिए स्वतंत्र हैं?

(च) क्या केवल ग्रामीण क्षेत्रों के लिए जिला परिषद रखने की कोई आवश्यकता है, अथवा क्या हमारे पास एकल संघीय निकाय के रूप में ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों के लिए निर्वाचित जिला परिषद होनी चाहिए?

IV. पांचवीं और छठी अनुसूची (अनुच्छेद 244) के क्षेत्रों से संबद्ध मुद्दे

(क) छठी अनुसूची तथा साथ ही पूर्वोत्तर राज्यों में विशिष्ट राज्य अधिनियमनों दोनों के अधीन बड़ी संख्या में स्तायत्तशासी परिषदों के अस्तित्व के दृष्टिगत हम उन क्षेत्रों में प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण कैसे सुनिश्चित करेंगे?

(ख) इस तथ्य के दृष्टिगत कि कई क्षेत्रों में राज्य पंचायती राज अधिनियम के अधीन निर्वाचित पंचायती राज की संस्थाएं भी हैं, उनके कार्यों को संगत/एकीकृत किया और 73वें/74वें संशोधन में यथासंकल्पित प्रभावी विकेन्द्रीकरण कैसे प्राप्त किया जाए?

अनुबंध-I (4) जारी

(ग) पंचायती राज (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम, 1996 संविधान के भाग IX (पंचायत) का विस्तार पांचवी अनुसूची के क्षेत्रों में करता है। इसमें 9 राज्य (i) आन्ध्र प्रदेश, (ii) गुजरात (iii) महाराष्ट्र (iv) मध्यप्रदेश (v) उड़ीसा (vi) राजस्थान (vii) हिमाचल प्रदेश (viii) झारखंड और (ix) छत्तीसगढ़ शामिल हैं। यह अधिनियम अनिवार्य कार्यकारी कार्यों के प्रत्यायोजन और क्षेत्र में अधिकांश कार्यकलापों में अनिवार्य परामर्श और सिफारिशें प्राप्त करने की आवश्यकता के माध्यम से ग्राम सभाओं और पंचायतों को अधिकार प्रदान करता है।

(i) प्रभावी विकेन्द्रीकरण के हित में आपकी राय में इस संबंध में राज्यों द्वारा जारी किए जाने वाले मॉडल दिशानिर्देशों के अवयव क्या हो सकते हैं?

(ii) क्या आप सोचते हैं कि इस अधिनियमन के उपबंधों के उल्लंघन से निपटने के लिए केन्द्रीय स्तर पर एक मंच स्थापित करने का मामला बनता है?

(iii) क्या संविधान की पांचवीं अनुसूची में यथा प्रदत्त अनुसूचित क्षेत्रों के संबंध में राज्यपाल से नियमित रिपोर्ट प्राप्त करने और उसे सार्वजनिक अधिकार क्षेत्र में प्रस्तुत करने पर बल देना उपयुक्त होगा?

(iv) यद्यपि महिलाएँ इन क्षेत्रों के संपूर्ण सामाजिक-आर्थिक जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है परन्तु जनजातीय परिषदों में पुरुषों का प्रभुत्त्व है। क्या पंचायती राज (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम के नियमों और दिशानिर्देशों में उपबंध लागू करना वांछनीय होगा कि किसी ग्राम सभा के लिए 33 प्रतिशत सदस्यता महिलाओं की होनी चाहिए?

(v) वे राज्य कानून क्या है, जिन्हें पंचायती राज (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम के उपबंधों के साथ तत्काल संगत बनाया जाना आवश्यक है?

(vi) वे केन्द्रीय कानून क्या है, जिन्हें पंचायती राज (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम के साथ संगत किया जाना आवश्यक है?

(vii) क्या राज्य-स्तरीय विभागों की जनजातीय उप-योजना को भी कार्यकलाप मानचित्रण कार्य का अनुपालन करना चाहिए, जो जनजातीय उप-योजना कार्यक्रमों के लिए पंचायतों के प्रत्येक स्तर को उत्तरदायित्व सौंपते हैं?

अनुबंध-I (4) जारी

V. पंचायतों का क्षेत्राधिकार

जब स्वतंत्रता-पूर्व दिनों में स्थानीय स्व-शासन लागू किया गया था तब स्थानीय निकाय स्थानीय सड़कों, सड़कों की प्रकाश व्यवस्था, पेय जलापूर्ति, सफाई, महामारी नियंत्रण आदि जैसे नागरिक कार्यों के प्रभारी थे। अधिकांश देशों में नागरिक कार्य स्थानीय शासन का एकमात्र कार्य रहता है। परन्तु, भारत में बलवंत राय मेहता रिपोर्ट (1957) के दिनों से ही पंचायतों की परिकल्पना एक विकास एजेंसी के रूप में की गई है। यहाँ तक कि यद्यपि अशोक मेहता समिति ने देश के अधिशासन में अपना उचित स्थान रखने की योग्यता सहित राजनीतिक संस्थाओं के रूप में उन संस्थाओं को मान्यता देने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया फिर भी उसने विकास की सीमा के बाहर उनकी भूमिका की कल्पना नहीं की। 73वें संवैधानिक संशोधन ने विकास की भूमिका का आगे विस्तार किया है और संस्थाओं की संकल्पना आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए राज्य के एक अनिवार्य अंग के रूप में की। इसके साथ ही, संविधान पंचायत को 'स्व-शासन की संस्था' के रूप में भी परिभाषित करता है। अगर ऐसा है तो यह आवश्यक है कि इसे केवल एक विकास एजेंसी के रूप में ही देखा जाना चाहिए। चूंकि अनुच्छेद 243छ को प्रतिबंधित और मुक्त दोनों अर्थ में कार्यान्वित किया जा सकता है इसलिए विचारार्थ निम्नलिखित मुद्दे उठाए जा सकते हैं:

(क) पंचायती राज संस्थाओं के अधिकार क्षेत्र के लिए ग्यारहवीं अनुसूची में वर्णित कार्यों के अतिरिक्त क्या ऐसे मामलों में उन्हें कुछ विनियामक कार्य दिए जाने चाहिए, उदाहरणार्थ (i) लाइसेंस प्रदान करना (ii) कुछ विनियामक कानूनों के उपबंध लागू करना (iii) पुलिस के कार्य/स्थानीय अपराध नियंत्रण।

(ख) क्या पंचायतों को न्यायिक कार्य दिया जाना चाहिए?

(ग) क्या कराधान, प्राकृतिक संसाधनों के प्रयोग आदि के मामले में उन्हें कुछ विधायी कार्य दिया जा सकता है?

VI. कार्यों की सुपुर्दगी

अधिकांश राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं को कार्य सौंपने की दशा में बहुत कुछ किया जाना वांछित है। मुख्य मुद्दे जो अधिकांश राज्यों में निपटाना शेष रह गए हैं, का उल्लेख नीचे किया गया है:

(क) यह तथ्य देखते हुए कि पंचायतें स्वायत्तशासी संस्थाएँ हैं, उनके कार्यों को "अनिवार्य" और "विवेकाधीन" में विभाजित करना आवश्यक है, जैसा कुछ राज्य अधिनियमों ने किया है?

अनुबंध-I (4) जारी

(ख) जब समान विषय (जैसे प्राथमिक शिक्षा अथवा प्राथमिक स्वास्थ्य या सड़क आदि) पर उच्चतर स्तर के शासन और पंचायतों द्वारा ध्यान दिया जाता है तब व्यापक कार्यात्मक क्षेत्र के भीतर परवर्ती की विशिष्ट भूमिका परिभाषित करने की आवश्यकता है। इसे सुनिश्चित करने के लिए यह सुझाव दिया गया है कि किसी विशिष्ट विषय के भीतर प्रत्येक कार्यकलापों को पहले अभिज्ञात किया जाना चाहिए और उसके बाद यह विचार किया जा सकता है कि कौन कार्यकलाप पंचायती राज संस्थाओं के किस स्तर को हस्तान्तरित किया जाना चाहिए। यहाँ शामिल मुद्दे निम्नानुसार हैंः

- क्या कार्यकलापों को मौजूदा आयोजना और आयोजना-भिन्न स्कीमों अथवा राज्य सरकार के अन्य कार्यकलापों जैसा कुछ राज्यों में किया गया है, से अभिज्ञात किया जाना चाहिए? क्या हम कुछ अन्य साधनों के माध्यम से कार्यकलापों को पहचान सकते हैं, उदाहरणार्थ किसी विकास क्षेत्रक के सहमत्य लक्ष्यों से पश्चगामी कार्य करते हुए? किसी कार्यकलाप को सुपुर्द करने के बाद क्या पंचायतों को वह कार्यकलाप निष्पादित करने के साधन तैयार करने की स्वतंत्रता दी जानी चाहिए? जब कोई कार्यकलाप पंचायत को हस्तान्तरित किया जाता है तब क्या उसे यह निर्धारित करने का अधिकार होना चाहिए कि क्या उससे संबद्ध राज्य सरकार की किसी विशेष स्कीम को समाप्त अथवा संशोधित किया जाना चाहिए या नहीं?
- विभिन्न राज्यों में कार्यकलाप मानचित्रण पर अधिकांश कार्य अनिवार्यतः नौकरशाही का कार्य रह गया है। क्या राज्य सरकारों द्वारा सुपुर्दगी की स्कीम तैयार करने के पूर्व नागरिक समाज के साथ गहन परामर्श किया जाना चाहिए या नहीं।

(ग) पंचायतों के विभिन्न स्तरों को कार्य/कार्यकलाप सौंपने के लिए मानदंड हो सकते हैं। इस संबंध में सामान्य सिद्धांत निःसंदेह सहायता का सिद्धांत है। परन्तु अवास्तविक निर्धारण द्वारा इस सिद्धांत को लागू करना सदैव संभव नहीं है। यह निर्धारित करने के लिए कि अधिशासन के किस स्तर पर बेहतर किया जा सकता है, कुछ उद्देश्यपरक मानदंडों पर विचार किया जाना होगा। कुछ संगत मानदंड मितव्ययिता, किसी कार्यकलाप के निष्पादन के लिए आवश्यक प्रबंधकीय अथवा तकनीकी क्षमता, क्षेत्र, जिसे कतिपय कार्यकलाप से लाभ होगा,

अनुबंध-I (4) जारी

पंचायतों में लाभों का अंतरण, किसी कार्यकलाप की पृथक इकाई का आकार और उन्हें तैयार करने, कार्यान्वित करने और अनुवीक्षण करने के लिए सूचना संबंधी आवश्यकताएँ कार्यकलापों को कार्यान्वित करने में समुदाय की भागीदारी आदि है। क्या इनके अतिरिक्त कुछ और मानदंड होने चाहिए?

(घ) क्या किसी कार्यकलाप की सुपुर्दगी के साथ सुपुर्द कार्यकलापों से संबद्ध राज्य सरकार के कर्मचारियों को निर्वाचित प्राधिकारी के प्रति पूर्णतः उत्तरदायी रहने और अनुशासनिक नियंत्रणाधीन रहने की शर्ताधीन पंचायती राज संस्थाओं के उपयुक्त स्तरों में पदस्थापित किया जाना चाहिए?

(ड.) क्या आप सोचते हैं कि छोटे-छोटे अपराधों पर मुकद्दमा चलाने के लिए ग्राम पंचायत स्तर पर न्याय पंचायत के सृजन की आवश्यकता है? उन्हें सौंपे जाने वाले मामलों की किस्में क्या हो सकती हैं?

(च) क्या राज्य पंचायत अधिनियमों में पंचायतों के लिए निर्धारित कार्यकलापों की सांविधिक अनुसूची से कोई कार्यकलाप कार्यकारी आदेश द्वारा वापस लेने अथवा संशोधित करने के लिए राज्य सरकारों को अधिकार देते हुए कोई प्रावधान विहित है?

(छ) क्या प्रत्येक राज्य को ग्यारहवीं अनुसूची के सभी 29 विषयों को कम से कम निकट भविष्य में पंचायती राज संस्थाओं को सौंपने के लिए रूपरेखा तैयार करनी चाहिए ताकि संविधान के अधीन उन्हें सौंपे गए सभी क्षेत्रों में ग्राम स्तर योजनाएँ तैयार करना सुविधाजनक बनाया जा सके?

VII. पंचायतों के मुख्य कार्य

(क) राज्य सरकार की कितनी शक्तियों और प्राधिकार को स्थानीय परिषदों को सुपुर्द किया जाना चाहिए, यह संबंधित राज्य विधानमंडल/सरकारों द्वारा निर्धारित किया जाएगा। इसलिए, विकेन्द्रीकरण की रूपरेखा राज्य-दर राज्य भिन्न-भिन्न होगी और पंचायतों के पास विभिन्न प्रकार के कार्यात्मक क्षेत्राधिकार होंगे। परन्तु यह संभवतः आवश्यक है कि कतिपय मुख्य कार्यकलाप होने चाहिए जिन्हें सभी राज्यों की पंचायत प्रणालियों के लिए साझा होना

अनुबंध-I (4) जारी

चाहिए। इन कार्यकलापों को ग्यारहवीं अनुसूची में उल्लिखित विषयों और राज्य सरकारों द्वारा ध्यान दिए जाने वाले अन्य विषयों परन्तु उस अनुसूची में अउल्लिखित विषयों में से चुना जा सकता है। उन कतिपय महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों, जिनमें सभी राज्यों की पंचायत प्रणालियों को महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए, को अभिज्ञात करने के लिए क्या राष्ट्रीय सर्वसम्मति प्राप्त करना आवश्यक नहीं है?

(ख) कतिपय विकासात्मक विषय है, जहाँ पंचायतों की पर्याप्त भागीदारी न केवल संभव बल्कि सक्षम सेवा सुपुर्दगी और उन कार्यक्रमों पर लोगों का नियंत्रण रखने, जिनका लक्ष्य उनका विकास और कल्याण है, के दृष्टिकोण से भी अनिवार्य है। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विषय, जहाँ विकेन्द्रीकरण का तर्क बहुत मजबूत है, निम्नलिखित हैः बुनियादी शिक्षा, वयस्क और अनौपचारिक शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य परिचर्या, पेयजल, सफाई, महिला और बाल विकास, नागरिक सेवाएँ, सड़कें और ग्रामीण अवसंरचना, जिसमें ग्रामीण विद्युतीकरण शामिल हो सकता है। नागरिक सेवाओं को छोड़कर उनमें से सभी का उल्लेख ग्यारहवीं अनुसूची में किया गया है। एक विषय जिसका उल्लेख विशेष रूप से ग्यारहवीं अनुसूची में नहीं किया गया है, प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन है। पंचायतों, विशेषकर ग्राम पंचायतों को प्राकृतिक संसाधनों के इष्टतम परन्तु सतत् उपयोग के संबंध में पर्याप्त उत्तरदायित्व लेना होता है। वास्तव में इसे पंचायत की योजनाओं का ध्यानकेन्द्रित पहलू बनना चाहिए। उपर्युक्त विषयों के अतिरिक्त संघ सरकार के दो निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम है, जहाँ पंचायतों की भूमिका को भलीभांति माना गया है। एनआरईजीएस नामक निर्धनता उन्मूलन की सर्वाधिक महत्त्वाकांक्षी केन्द्र-प्रायोजित स्कीम पंचायती राज संस्थाओं को महत्त्वपूर्ण भूमिका सौंपती है। एसजीआरवाई नामक निर्धनता उन्मूलन की अन्य मुख्य केन्द्र-प्रायोजित स्कीम जो उन जिलों, जहाँ एनआरईजीएस प्रचालनरत नहीं है, में लागू हैं, भी पंचायती राज संस्थाओं को ऐसी ही समान भूमिका सौंपती है। इन आजीविका की स्कीमों के अतिरिक्त निर्धनता उन्मूलन का एक अन्य महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम हैं। यह सार्वजनिक वितरण प्रणाली है। भुखमरी से होने वाली मृत्यु जो समय-समय पर कई राज्यों में अत्यधिक निर्धनता के कई क्षेत्रों में होती रहती है, स्पष्ट रूप से हमारे देश में लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली का महत्त्व दर्शाती है। चूंकि स्थानीय शासन की लक्ष्य निर्धारण क्षमता उच्चतर स्तर पर शासन से बहुत श्रेष्ठ है इसलिए यह वर्णन करता है कि पंचायतों का जमीनी स्तर पर

अनुबंध-I (4) जारी

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लक्षित कार्य करने में पर्याप्त उत्तरदायित्व होना चाहिए। इसलिए संघ सरकार की सभी ग्रामीण आजीविका स्कीमें और लक्षित सार्वजनिक वितरण स्कीम पंचायतों के मुख्य कार्यात्मक क्षेत्राधिकार का भी हिस्सा बन सकती है।

(ग) क्या यह सर्वसम्मति हो सकती है कि (क) सभी राज्यों की पंचायती राज प्रणालियों के लिए साझा मुख्य कार्यात्मक क्षेत्र होना चाहिए और कि (ख) ऐसे क्षेत्र में निम्नलिखित शामिल होना चाहिए?

- बुनियादी शिक्षा, वयस्क और अनौपचारिक शिक्षा
- प्राथमिक स्वास्थ्य परिचर्या, पेयजल और सफाई
- महिला और बाल विकास
- सड़कें, पुलिया, पुल
- ग्रामीण अवसंरचना, जिसमें उत्पादक क्षेत्रों में आर्थिक कार्यकलाप सुधारने के लिए ग्रामीण विद्युतीकरण शामिल हो सकता है।
- प्राकृतिक संसाधन प्रबंध
- निर्धनों के लिए आजीविका : (क) निर्धनता उन्मूलन स्कीमों का कार्यान्वयन और (ख) लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली
- नागरिक सुविधाएँ

(घ) उन प्रत्येक मुख्य कार्यों के अधीन कार्यकलापों, जिन्हें पंचायती राज संस्थाओं के विभिन्न स्तरों को सुपुर्द किया जा सकता है और वे वह सीमाक्षेत्र बन सकते हैं, जहाँ वे उच्चतर स्तर के शासन द्वारा दिए गए विस्तृत दिशानिर्देशों के ढांचे के भीतर स्वतंत्र रूप से कार्य कर सकते हैं, को अभिज्ञात करने के लिए क्या उपाय किए जाने चाहिए?

(ड.) अगर पंचायती राज संस्थाओं को जलापूर्ति, सफाई, विद्युत, प्राथमिक स्वास्थ्य परिचर्या और प्राथमिक शिक्षा जैसी बुनियादी सेवाओं की सुपुर्दगी के संबंध में भविष्य में अधिक अर्थपूर्ण भूमिका निभानी है तो सेवाओं की विश्वसनीय और सक्षम सुपुर्दगी और उनका समान वितरण सुनिश्चित करने के लिए किस किस्म की सहायता और अनुवीक्षण प्रणाली विकसित की जानी चाहिए?

अनुबंध-I (4) जारी

VIII. संस्थाओं का हस्तांतरण

(क) सेवाओं की सुपुर्दगी के लिए स्थानीय स्तर की संस्थाओं का प्रबंधन केन्द्रीय रूप से लाइन विभागों द्वारा किया जाता है। इसके लिए निम्नलिखित का उल्लेख किया जा सकता है-

- प्राथमिक विद्यालय
- विद्यार्थियों के छात्रावास सहित माध्यमिक विद्यालय
- साक्षरता केन्द्र
- सार्वजनिक पुस्तकालय
- प्राथमिक स्वास्थ्य परिचर्या के लिए उप-केन्द्र
- प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र
- प्रखण्ड स्वास्थ्य केन्द्र
- पशु चिकित्सा केन्द्र
- आंगनवाड़ी केन्द्र

सहायता के सिद्धांत का अनुपालन करते हुए क्या इन संस्थाओं को उनसे संबद्ध कर्मचारियों के साथ पंचायतों के उपयुक्त स्तरों के नियंत्रणाधीन नहीं रखा जाना चाहिए?

IX. पंचायती राज संस्थाओं पर राज्य सरकार की नियंत्रणकारी शक्तियाँ

(क) क्या राज्य सरकार अथवा उसके द्वारा निर्धारित किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा निर्वाचित पदाधिकारियों को निलम्बित करने के लिए राज्य अधिनियम में कोई उपबंध होना चाहिए?

(ख) क्या किसी निर्वाचित सदस्य अथवा किसी निर्वाचित पदाधिकारी को हटाने का आधार केवल (i) निर्वाचित सदस्यों के "अविश्वास" और (ii) किसी "अयोग्यता" खण्ड के अधीन होने तक प्रतिबंधित होना चाहिए? क्या परवर्ती के मामले में माध्यस्थम अथवा राज्य सरकार आयोग जैसे किसी तटस्थ प्राधिकारी द्वारा यह निर्धारित करने के लिए कि क्या कोई "अयोग्यता" के अधीन हुआ है। अर्ध-न्यायिक जांच करना वांछनीय होगा?

(ग) क्या किसी पंचायत को भंग करने की शक्ति का प्रयोग विरले मामलों में किया जाना चाहिए? ऐसी शक्ति के प्रयोग के पूर्व क्या आप सोचते हैं कि किसी स्वतंत्र प्राधिकारी द्वारा अर्ध-न्यायिक जांच करना अनिवार्य होना चाहिए?

अनुबंध-I (4) जारी

X. संस्थात्मक मुद्दे

(क) विभिन्न राज्यों में ग्राम पंचायतों का आकार व्यापक रूप से भिन्न-भिन्न होता है। (अरूणाचल प्रदेश में ग्राम पंचायत की जनसंख्या मात्र 300 है, जबकि केरल के औसत ग्राम पंचायत में 25000 की जनसंख्या है)। ग्राम पंचायत, जिसकी जनसंख्या कम है, में लोगों की भागीदारी की अधिक संभावना होगी, परन्तु ग्राम पंचायत वित्तीय रूप से व्यवहार्य नहीं होगी। दूसरी ओर बड़ी ग्राम पंचायत में वित्तीय व्यवहार्यता हो सकती है, परन्तु यह लोगों को भागीदारी के कम अवसर प्रदान करेगी। लोगों की भागीदारी के लिए अवसर प्रदान करने और पंचायत की वित्तीय व्यवहार्यता का उचित संयोजन सुनिश्चित करने के लिए क्या ग्राम पंचायतों की न्यूनतम और अधिकतम जनसंख्या की शर्त होनी चाहिए?

(ख) कुछ राज्यों की ग्राम सभा (उदाहरणार्थ मध्य प्रदेश की ग्राम स्वराज स्कीम) अथवा वार्ड सभा (उदाहरणार्थ पश्चिम बंगाल) की समितियों को कार्यकारी शक्तियाँ देने की प्रवृत्ति है। क्या ग्राम पंचायत के नीचे कोई कार्यकारी प्राधिकारी सृजित करना उचित है?

(ग) क्या हमें संविधान के अधीन सीटों के आरक्षण के लिए निर्धारित चक्रानुक्रम नीति जारी रखनी चाहिए? अगर हाँ तो ऐसे चक्रानुक्रम के लिए वांछनीय न्यूनतम अवधि क्या होनी चाहिए?

(घ) क्या हम पंचायती राज संस्थाओं की चुनाव प्रक्रिया में आरक्षण के परिप्रेक्ष्य में नेतृत्वशीलता विकास के लिए वैकल्पिक सतत् मॉडल प्राप्त कर सकते हैं?

(ड.) एक ऐसा दृष्टिकोण है कि संसद सदस्यों और (कई राज्यों में) विधान सभा के सदस्यों के लिए स्थानीय क्षेत्र विकास निधि का लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रणाली के अधीन औचित्य नहीं दिया जा सकता। क्या आप इससे सहमत हैं?

(च) अगर पंचायती राज संस्थाओं को कार्यों और संसाधनों की पर्याप्त सुपुर्दगी के माध्यम से उचित रूप से अधिकार दिया गया है; क्या डीआरडीए, एफईडीए, जिला स्वास्थ्य सोसाइटी आदि जैसी एजेंसियों की कोई आवश्यकता होगी? अगर नहीं, तो इन एजेंसियों और पंचायती राज संस्थाओं के बीच क्या संबंध होना चाहिए?

(छ) वे राज्य अधिनियम/नियम क्या है, जिनकी पंचायती राज संस्थाओं को उनके लिए निर्धारित क्षेत्रों में अधिकार देने हेतु समीक्षा किया जाना आवश्यक है? क्या इसे करने के लिए प्रत्येक

अनुबंध-I (4) जारी

राज्य सरकार के लिए एक समय सीमा होनी चाहिए? क्या संघ सरकार को इस प्रक्रिया के कार्यान्वयन का अनुवीक्षण करना चाहिए?

(ज) एक संयुक्त विकास योजना तैयार करने और सेवाओं की प्रभावी सुपुर्दगी के लिए जिला/शहरी स्तर पर पंचायती राज संस्थाओं/शहरी स्थानीय निकायों के एकीकरण हेतु क्या कार्यतंत्र हो सकता है?

(झ) इस समय जिला स्तर पर प्रशासन का कार्य सामान्य रूप से (क) कार्यकारी दण्डनायकगण (ख) भूमि प्रशासन (ग) आपदा प्रबंधन (घ) निर्वाचन प्राधिकारी (ड.) जन सेवाओं/नागरिक आपूर्ति के सुविधादाता (च) कल्याण प्रशासन (छ) संवर्ग प्रबंधन कार्य (ज) शिकायत/सतर्कता अधिकारी में वर्गीकृत किया जा सकता है। पंचायतों और नगरपालिकाओं को अधिकार दिए जाने पर जिला समाहर्ता की क्या भूमिका होनी चाहिए? उभरती हुई पंचायती राज संस्था/शहरी स्थानीय निकाय के ढांचे के अधीन जिला स्तर पर मौजूदा नौकरशाही संरचना के लिए किस किस्म की भूमिका संकल्पित की जानी चाहिए?

(ञ) पंचायती राज संस्थाओं में लिंग समानता/अधिकारिता प्राप्त करने के लिए क्या उपाय करने आवश्यक है? क्या आप सोचते हैं कि पंचायत संस्थाओं में महिलाओं के आरक्षण के लिए राज्य पंचायती राज अधिनियमों में उपबंध उन्हें स्थानीय शासन में बराबर की भागीदारी देने के लिए पर्याप्त हैं? इस दिशा में पर्याप्त परिणाम प्राप्त करने के लिए अन्य क्या सकारात्मक संवैधानिक, संरचनात्मक और संस्थात्मक उपाय आवश्यक हैं?

XI. चुनाव

(क) क्या पंचायतों के विभिन्न स्तरों के निर्वाचन क्षेत्रों की सीमा समाप्त करने और चक्रानुक्रम सहित निर्वाचन क्षेत्रों के आरक्षण का कार्य राज्य निर्वाचन आयोग के पूर्ण नियंत्रण और पर्यवेक्षण के अधीन किया जाना चाहिए? इसी प्रकार क्या यह उचित होगा अगर चुनाव परिणामों के प्रकाशन, पदाधिकारियों के चुनाव, पदाधिकारियों के चुनाव के बारे में विवाद निपटाने आदि जैसे चुनावी अधिकार जैसा कई राज्यों में प्रचलित है, सरकारी अधिकारियों की बजाय राज्य निर्वाचन आयोग को दिया जाए?

(ख) प्रत्येक राज्य में मुख्य चुनाव अधिकारी होता है, जो राज्य विधानमंडल और लोकसभा के लिए चुनाव कराता है, जबकि राज्य चुनाव आयुक्त स्थानीय निकायों के चुनाव के संबंध में ऐसी ही समान भूमिका निभाता है। क्या इन दोनों पदों के विलय करने का मामला बनता है। साझा

अनुबंध-I (4) जारी

मतदाता सूची की तैयारी तथा साथ ही चुनाव सामग्रियों और अन्य संसाधनों के इष्टतम उपयोग की प्राप्ति सुनिश्चित करने की दृष्टि से क्या मुख्य चुनाव आयुक्त का पद समाप्त करना और उसके कार्यकलापों को राज्य निर्वाचन आयोग को सौंपना लाभप्रद होगा?

(ग) विभिन्न स्तरों पर अध्यक्ष के चुनाव, चक्रानुक्रमिक नीति, निर्वाचन आयोग की शक्तियों जैसे पिछले 10 वर्षों के अनुभव के दृष्टिगत पंचायती राज विधान में संभावित संशोधन क्या हैं?

(घ) अनुच्छेद 243ग(5)(ख) के अधीन मध्यस्थ अथवा जिला स्तर पर पंचायत के अध्यक्ष का चुनाव उसके निर्वाचित सदस्यों में से किया जाएगा परन्तु अनुच्छेद 243ग(5)(क) के अधीन ग्राम स्तर पंचायत का अध्यक्ष ऐसे तरीकों से निर्वाचित किया जाएगा जैसा राज्य विधानमंडल कानून द्वारा प्रदान करे। क्या आप सोचते हैं कि अनुच्छेद 243ग(5)(ख) के उपबंधों को सभी स्तरों पर पंचायती राज संस्थाओं के अध्यक्ष पद पर लागू होना चाहिए और 243ग(5)(क) समाप्त कर दिया जाना चाहिए?

(ड.) क्या विभिन्न स्तर पर पंचायती राज संस्थाओं की संरचना में परिवर्तन आवश्यक हैं?

(च) क्या पंचायती राज संस्थाओं के सभी तीन स्तरों की पृथक प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली होनी चाहिए?

XII. पंचायती राज संस्थाएं और केन्द्र प्रायोजित/केन्द्रीय क्षेत्र की स्कीमें

इस समय, राज्य एजेंसियों के माध्यम से संघ सरकार के मंत्रालयों द्वारा देश में बड़ी संख्या में केन्द्र प्रायोजित स्कीमें कार्यान्वित की जा रही हैं। इनमें से लगभग 8 मुख्य कार्यक्रमों में लगभग 65-70% तक का अधिकांश निवेश किया गया है। ये मुख्य कार्यक्रम हैं, एनआरईजीएस, एसएसए, एनआरएचएम, आईसीडीएस, मध्यान्ह भोजन, पेय जल मिशन, आईएवाई और पीएमजीएसवाई। इन कार्यक्रमों को एक साथ मिलाकर लगभग 50,000 करोड़ रुप्ए का आवंटन किया गया है। केन्द्रीय मंत्रालयों द्वारा पंचायती राज संस्थाओं की सामान्य भागीदारी रहित अथवा सहित ऐसी स्कीमों के लिए पृथक सुपुर्दगी कार्यतंत्र तैयार करने की प्रवृत्ति है। इसमें से एनआरएचएम और एनआरईजीएस अपवाद हैं। विशेषकर परवर्ती कार्यक्रम एक उल्लेखनीय उदाहरण हैं, जिसने कार्यक्रम सुपुर्दगी संरचना को ग्राम सभा सहित पंचायती राज प्रणाली में बिल्कुल सही बैठने के लिए अनुरूप बनाया है। अन्य केन्द्र-प्रायोजित स्कीमों के संबंध में निम्नलिखित मुद्दों पर ध्यान दिया जाना आवश्यक हैः

(क) चूंकि केन्द्र-प्रायोजित स्कीमों द्वारा प्रहस्तन किए जाने वाले लगभग सभी विषयों को संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में स्थान प्राप्त है, क्या आप सोचते हैं कि यह अनिवार्य है कि केन्द्र

अनुबंध-I (4) जारी

प्रायोजित स्कीमों के कार्यान्वयन में पंचायतों की संरचनात्मक भागीदारी सुनिश्चित की जाए? (यहाँ एक चेतावनी दी जाती हैः किसी स्कीम के अधीन गठित समितियों में पंचायत प्रतिनिधियों का शामिल होना पंचायत की संस्थाओं की भागीदारी नहीं होती)।

(ख) सामान्य रूप से केन्द्र-प्रायोजित स्कीमों में कार्यक्रममूलक समितियों का गठन निर्धारित करने की प्रवृत्ति होती हैं, जो राज्य और स्थानीय शासन की स्थायी संरचना से बाहर होते हैं। आईसीडीएस और एसएसए जैसे कुछ मामलों में समिति की संरचना ग्राम अथवा पड़ोस के स्तर तक नीचे जाती है। ये समितियाँ हैं, (1) स्थायी संस्थात्मक संरचना और प्रक्रियाओं के बाहर और (2) स्थायी संरचनाओं के साथ उनका संबंध स्पष्ट नहीं है। हितधारक एजेंसियों और नागरिक समाज के संगठनों को पंचायतों के साथ कैसे एकीकृत किया जाए अथवा क्या उन्हें एक-दूसरे के सामंजस्य से कार्य करना चाहिए या क्या किसी एक को 'बाहरी' समितियों से बिल्कुल बचना चाहिए और इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में केवल स्थायी संरचनाओं का प्रयोग करना चाहिए?

(ग) अधिकांश कार्यक्रम जमीनी स्तर से संदर्शी योजनाएँ और वार्षिक योजनाएँ विकसित करने की ओर अभिमुख होते हैं। यहाँ पुनः आयोजना की सामान्य संस्थात्मक प्रक्रियाओं के साथ संपर्क का अभाव हैं, प्रत्येक कार्यक्रममूलक योजना को पृथक प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है। क्या आप सोचते हैं कि यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि कार्यक्रममूलक आयोजना संविधान के अनुच्छेद 243छ में संकल्पित आयोजना प्रक्रिया का अभिन्न भाग होती है।

(घ) अधिकांश केन्द्र-प्रायोजित स्कीमों का निधि प्रवाह पंचायतों से अलग-अलग निकल जाता है। एनआरईजीएस और एनआरएचएम उल्लेखनीय अपवाद है। यह कैसे कार्य करेगा अगर निधियों को पंचायतों के माध्यम से प्रवाहित किया जाता है?

XIII. पंचायती राज संस्थाओं/शहरी स्थानीय निकायों की परिषद के रूप में विधान परिषद

संविधान का अनुच्छेद 171 विधान परिषदों के गठन की व्यवस्था करता है। अधिशासन के संवैधानिक रूप से अधिदेशित तीसरे स्तर के रूप में पंचायती राज संस्थाओं के प्रादुर्भाव से क्या यह उपयुक्त होगा अगर विधान परिषद पंचायती राज संस्थाओं/स्थानीय शासन की परिषद बन जाती है। एक बार जब ऐसी परिषद

अनुबंध-I (4) जारी

इन प्रतिनिधियों द्वारा निर्वाचित हो जाती है तब यह पंचायती राज संस्थाओं/शहरी स्थानीय निकायों का हित संरक्षण करेगी। क्या आप सोचते हैं कि विधान परिषद की संरचना में ऐसा सुधार आवश्यक है? इस निकाय की संभावित वैकल्पिक संरचना क्या हो सकती है?

XIV. पंचायतों और नागरिक/हितधारक समूहों/समुदाय आधारित संगठनों/अन्य नागरिक समाज निकायों के बीच संबंध

(क) गैर-सरकारी संगठन और स्व-सहायता समूह, प्रयोक्ता समूह, महिला मंडल आदि जैसे हितधारक समूह/समुदाय -आधारित संगठन बड़ी संख्या में गाँवों में कार्यरत हैं। प्रायः ये संगठन राज्य/संघ सरकार के विभिन्न कार्यक्रमों/स्कीमों के कार्यान्वयन में शामिल होते हैं। उनके और पंचायती राज संस्थाओं के बीच किस प्रकार का संबंध होना चाहिए?

(ख) ऐसे हितधारक समूहों/संगठनों और पंचायतों के बीच समन्वयकारी कार्यतंत्र को सांस्थानिकीकृत करने के लिए क्या उपाय किए जाने चाहिए?

(ग) क्या यह उपयुक्त होगा अगर उन निकायों से ग्राम सभा/मध्यस्थ पंचायत की बैठकों में भाग लेने और क्षेत्र में अपने चालू कार्यकलापों से सदस्यों को अवगत कराने के लिए कहा जाए? क्या उन्हें पंयायतों अथवा उनकी स्थायी समितियों के विशेष आमंत्रिती के रूप में सहयोजित किया जा सकता है। क्या आप सोचते हैं कि यह अनुपूरकता का वातावरण सृजित करेगा? ऐसी परस्पर क्रिया के लिए क्या रूपात्मकताएँ हो सकती हैं?

(घ) क्या आप सोचते हैं हितधारकों/समुदाय-आधारित संगठन समूहों और पंचायती राज संस्थाओं के बीच ऐसे समन्वय से क्षेत्र में विभिन्न विकास कार्यक्रमों का अभिसरण होगा?

इनमें क्या जटिलताएँ हैं अगर ऐसे संगठन स्थानीय शासन की समग्र छत्रछाया में कार्य करते हैं?

XV. नागरिकों की अधिकारिता

(क) वे कौन क्षेत्र हैं, जिनमें नागरिकों को हितधारकों के रूप में प्रत्यक्षतः अधिकार दिए जा सकते हैं?

(ख) राज्य में सरकारी प्रभुत्व और नागरिकों की अधीनस्थता की दीर्घकालीन परम्परा के कारण हमारी प्रणाली में लोगों की पहल को विधिवत महत्त्व अथवा प्रोत्साहन नहीं दिया गया है। क्या आप कुछ संवैधानिक और संस्थात्मक उपायों का सुझाव देगें, जो ऐसी पहलों को प्रोत्साहन देगें और अंततः नागरिकों का सशक्तिकरण करेंगे?

अनुबंध-I (4) जारी

(ग) सहकारी समितियाँ और लघुवित्तः ये दो ऐसे क्षेत्र हैं, जिन्हें ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक पुनरूत्थान के लिए शक्तिशाली साधन के रूप में माना गया है। उनमें नव जीवन का संचार करने के लिए आवश्यक संवैधानिक/कानूनी/अन्य उपाय क्या हैं? इस परिप्रेक्ष्य में संविधान के अनुच्छेद 19 को संशोधित करने की कोई आवश्यकता है?

XVI. पंचायतें और उनकी वित्त व्यवस्थाः सुपुर्दगी और आंतरिक संसाधन

पंचायती राज संस्थाओं के सशक्तिकरण के कार्य में चिन्ता के मुख्य क्षेत्रों में से एक पंचायत की वित्त व्यवस्था की संकटपूर्ण दशा है। अभी तक अधिकांश राज्यों के पास अपने द्वारा गठित राज्य वित्त आयोगों की कम से कम दो रिपोर्टें हैं।

(क) राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों द्वारा स्थानीय वित्त व्यवस्था की सुदृढ़ प्रणाली की आधारशिला रखना, बुनियादी सेवाओं के संबंध में क्षेत्रीय संतुलन का संवर्धन करना और इस प्रकार प्रभावी विकेन्द्रीकरण की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम होना प्रत्याशित है। आप कैसे सोचते हैं कि राज्य सरकारों को इन रिपोर्टों पर कार्य करने के लिए कहा जा सकता है? आप किस प्रकार प्रतिक्रिया करेंगे अगर स्थानीय निकायों के लिए केन्द्रीय वित्त आयोग के अनुदानों का हस्तान्तरण और अन्य सुपुर्दगी पंचायती राज संस्थाओं को सुपुर्दगी के संबंध में की गई उपलब्धियों के शर्ताधीन की जाए?

(ख) राज्य सरकारें मोटे तौर पर पंचायती राज संस्थाओं को निधियों के आवंटन पर निश्चित नीतियाँ अपनाने में विफल रही हैं। क्या ऐसी सुपुर्दगियों के लिए एक निश्चित फार्मूला स्पष्ट करते हुए इस संबंध में विधान बनाना राज्यों के लिए अनिवार्य बनाया जाना चाहिए?

(ग) राज्य वित्त आयोग के महत्त्वपूर्ण कार्यों में से एक राज्य सरकार और स्थानीय निकायों के कार्यात्मक अधिकार क्षेत्र को ध्यान में रखते हुए विभाज्य पूल का आकार निर्धारित करना है। ये मुद्दे हैंः (i) क्या विभाज्य पूल में राजस्व अथवा कर और कर-विभिन्न दोनों राजस्व की भागीदारी शामिल होनी चाहिए? (ii) क्या केन्द्रीय राजस्व की सुपुर्दगी शामिल की जानी चाहिए? (iii) क्या स्थानीय निकायों का केन्द्रीय निधि पर दावा है?

अनुबंध-I (4) जारी

(घ) राज्य वित्त आयोगों और केन्द्रीय वित्त आयोग द्वारा शामिल अवधियों को तुल्यकालिक बनाने के लिए अनुच्छेद 243झ(1) को अनुच्छेद 280 के अनुरूप लाने हेतु "प्रत्येक पांचवें वर्ष की समाप्ति पर" शब्दों के बाद "अथवा ऐसे पहले जैसा राज्यपाल आवश्यक समझें" शब्दों को प्रविष्ट करके संशोधित करना आवश्यक है। ऐसी तुल्यकालिकता राज्य वित्त आयोग की रिपोर्ट को केन्द्रीय आयोग द्वारा शामिल अवधि के संगत बनाने के लिए आवश्यक मानी जाती है। आपका क्या विचार है?

(ड.) पंचायती राज संस्थाओं द्वारा स्वयं अपने संसाधनों से जुटाए गए संसाधनों की स्थिति अधिकांश राज्यों में असंतोषजनक है। ग्राम पंचायत पंचायती राज संस्थाओं में एकमात्र संस्था है, जिसे राजस्व जुटाने की शक्तियाँ प्राप्त हैं। क्या आप इस विचार का समर्थन करते हैं कि मध्यस्थ और जिला पंचायतों को भी राजस्व जुटाने की शक्तियाँ होनी चाहिए? क्या पंचायतों को निधियों का राज्य हस्तांतरण स्थानीय संसाधन सृजित करने में स्थानीय निकायों के कार्यनिष्पादन पर शर्ताधीन/प्रोत्साहनबद्ध (किसी पुरस्कार स्कीम अथवा समतुल्य निधियाँ प्रदान करने के माध्यम से) किया जाना चाहिए?

(च) (i) भूमि और भवन (ii) मनोरंजन कर (iii) गैर-मोटरयुक्त वाहनों पर वाहन कर (iv) विज्ञापन और होर्डिंग कर (v) तीर्थ शुल्क (vi) बाजार शुल्क (vii) पशु पंजीकरण शुल्क (viii) पार्किंग शुल्क (ix) चरागाह शुल्क पर राजस्व जुटाने की सौंपी जा चुकी शक्तियों के अतिरिक्त पंचायती राज संस्थाओं को अन्य कराधान के कौन क्षेत्र सौंपे जा सकते हैं।

(छ) क्या आप सोचते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े उद्योगों जैसे लाभप्रद कर स्रोतों में कर रियायत देने (पंचायतों से परामर्श किए बिना) के लिए राज्य सरकार की शक्ति का कोई औचित्य है?

(ज) करों के अनुमान अथवा संग्रहण में पंचायत के पदाधिकारियों की कमजोरी के दृष्टिगत, आप उनके क्षमता निर्माण के लिए किन उपायों का सुझाव देंगे?

(झ) पंचायती राज संस्थाओं के बढ़ते हुए महत्त्व के दृष्टिगत क्या निरंतर रूप से आंकड़ा संग्रहित करने और उन्हें जब भी गठित हो राज्य वित्त आयोग को उपलब्ध कराने के लिए राज्य मुख्यालय में स्थायी राज्य वित्त आयोग कक्ष सृजित करने की आवश्यकता है?

अनुबंध-I (4) जारी

(ञ) 12वें वित्त आयोग ने वर्ष 2005-2010 के लिए पंचायतों को ब्लॉक अनुदान के रूप में 20,000 करोड़ रुपए (केन्द्रीय हस्तांतरण का मात्र 4 प्रतिशत) की सिफारिश की है। यह 11वें वित्त आयोग की सिफारिशों की तुलना में 8,000 करोड़ रुपए की वृद्धि है। वर्ष 2002-2003 में स्थानीय निकाय स्तर पर किया गया व्यय सकल घरेलू उत्पाद का मात्र लगभग 1.8% था और यह कुल सरकारी व्यय का लगभग 5% था। 12वें वित्त आयोग ने इन हस्तांतरणों की सिफारिश जलापूर्ति और सफाई के प्रयोग के लिए की थी। क्या अनुदान की यह मात्रा पर्याप्त है? दूसरे, क्या ऐसे हस्तांतरण को शर्तविहीन करना अथवा विशिष्ट प्रयोजन हस्तांतरणों की वर्तमान प्रणाली जारी रखना उपयोगी होगा?

(ट) केन्द्रीय स्कीमों के लिए निधियों के हस्तांतरण का तरीका क्या हो सकता है? क्या इसे राज्यों की समेकित निधियों के माध्यम से दिया जाना चाहिए अथवा पंचायती राज संस्थाओं को सीधे दिया जाना चाहिए?

(ठ) ऐसे हस्तांतरणों को राज्यों की अर्थोपाय समस्याओं से बचाने के लिए संभावित उपाय क्या हो सकते हैं?

(ड) पंचायती राज संस्थाओं के संसाधन आधार को बढ़ाने/ सुधारने के लिए आप किन अन्य उपायों का सुझाव देंगे?

(ढ) क्या पंचायती राज संस्थाओं के लेखाकरण और लेखापरीक्षण पर एक आधारिक मानक रखने की आवश्यकता है?

(ण) बहु हस्तांतरण की बजाय क्या निर्धनता-रोधी निधि, जल सुरक्षा निधि, जन स्वास्थ्य निधि, परिवार कल्याण और बाल विकास निधि, आवासन निधि और ग्रामीण संपर्क निधि जैसे ब्लॉक निधियों में आवंटनों का परस्पर क्षेत्रीय अभिसरण होना चाहिए?

(त) क्या राज्य को सार्वजनिक अधिकार-क्षेत्र अथवा अन्यथा ऐसे हस्तांतरणों का व्यापक प्रचार करना चाहिए?

(थ) पंचायतों को सौंपे गए कार्यकलापों के आधार पर क्या प्रत्येक राज्य सरकार को ऐसे आवंटनों पर बल देने के लिए पंचायत क्षेत्र का मद सृजित करना चाहिए?

अनुबंध-I (4) जारी

(द) इसी प्रकार, क्या आप संघ सरकार के मंत्रालयों की ओर से ऐसी ही कार्रवाई करने का सुझाव देते हैं?

(ध) क्या जटिलताएं हैं अगर पंचायतों को आवंटित और हस्तांतरित निधियों को अव्यपगत बनाया जाता है?

(न) क्या किसी परियोजना के लिए तकनीकी/प्रशासनिक स्वीकृति प्रस्तुत करने के लिए पदानुक्रमीय कार्यविधि समाप्त कर दी जानी चाहिए? इस परिप्रेक्ष्य में किस वैकल्पिक मॉडल का प्रयोग किया जा सकता है?

(प) क्या आप सहमत हैं कि पंचायती राज संस्थाओं को राजकोषीय हस्तांतरणों की समयावधि और आवधिकता और निधियां जारी करने के लिए पूर्व शर्त पर ब्यौरे सहित एक राजकोषीय उत्तरदायित्व प्रणाली की अपेक्षा है?

XVII पंचायत कार्मिकों के लिए प्रशासनिक सुधार

1. कार्मिक प्रबंध

(क) पंचायतों के लिए प्रभावी रूप से उनके समनुदेशित क्षेत्रों में कार्य का निर्वहन करने हेतु क्या मानव संसाधन नीति होनी चाहिए? क्या जिला और राज्य दोनों स्तरों पर पंचायतों के लिए विशेष रूप से निर्धारित संवर्ग होने चाहिएं? अगर हां, तो उसकी क्या जटिलताएं हैं?

(ख) पंचायती राज संस्थाओं के कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए सर्वोत्तम तरीका क्या होना चाहिए? क्या कर्मचारी ठेके पर अथवा स्थायी आधार पर होने चाहिए?

(ग) पंचायती राज संस्थाओं के स्थायी कर्मचारियों के लिए जीवनवृत्ति विकास कैसे सुनिश्चित किया जाएगा?

(घ) क्या पंचायतों की कार्मिक नीति को पश्चवर्ती तथा साथ ही अन्तःपंचायत आवागमन की अनुमति देनी चाहिए। क्या कुछ स्तर पर संवर्गो का अभिसरण होना चाहिए?

(ङ) पंचायत के अध्यक्ष और मुख्य कार्यकारी के बीच आदर्श रूप से क्या संबंध होना चाहिए? क्या मुख्य कार्यकारी अधिकारी की नियुक्ति केवल भारतीय प्रशासनिक सेवा तक सीमित होनी चाहिए? विकल्प क्या हो सकते हैं?

अनुबंध-I (4) जारी

(च) क्या पंचायती राज संस्थाओं को कुछ कार्यकलापों को नागरिक समाज के समूहों से कराने की अनुमति दी जानी चाहिए?

(छ) संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध मामलों पर कार्रवाई करने वाले राज्य सरकार के पदाधिकारियों पर पंचायती राज संस्थाओं का प्रशासनिक नियंत्रण सुनिश्चित करने के लिए क्या उपाय करने आवश्यक हैं?

(ज) कुछ राज्यों ने कतिपय कर्मचारियों अथवा संस्थाओं की सुपुर्दगी के फलस्वरूप संबंधित सरकारी कर्मचारियों की सेवाएं पंचायती राज संस्थाओं को देने में कठिनाई का सामना किया है। इस परिप्रेक्ष्य में, क्या कानून द्वारा राज्य विधानमंडलों को ऐसे उपबंध, जो राज्य सरकारों को अपने कर्मचारी पंचायतों में तैनात करने का अधिकार देंगे, बनाने की अनुमति देते हुए और परवर्ती को ऐसे कर्मचारियों पर प्रशासनिक और कार्यात्मक नियंत्रण की पूर्ण शक्ति का प्रयोग करने में समर्थ बनाने के लिए संविधान में समर्थकारी उपबंध होना चाहिए?

(झ) क्या आप सोचते हैं कि पंचायती राज संस्थाओं के कर्मचारियों के लिए कार्यक्रमों और प्रशिक्षण की निरंतर स्कीम होने की आवश्यकता है? क्या इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों में देश भर की सभी पंचायतों के लिए साझी बुनियादी पाठ्यचर्या होनी चाहिए? इस पाठ्यचर्या की विषयवस्तु क्या हो सकती है?

(ञ) 73वें संशोधन में संकल्पित विकेंद्रीकरण के अभिप्राय में पदानुक्रम के विभिन्न स्तरों पर स्कीमों की तकनीकी संवीक्षा की प्रक्रिया सरल बनाने के लिए आवश्यक क्या उपाय हैं? क्या मानदंड वित्तीय परिव्यय पर आधारित रहना चाहिए और स्कीम की तकनीकी जटिलता पर नहीं?

(ट) तकनीकी संहिताओं को नागरिक-अनुकूल बनाने के लिए पुनःप्रारूपण हेतु क्या उपाय आवश्यक हैं ताकि लोगों और नागरिक समाज के समूहों की भागीदारी और प्रतिभागिता से परियोजनाएं प्रारंभ की जा सकें?

(ठ) इस समय, राज्य लोक निर्माण विभाग और कुछ राज्यों में अन्य तकनीकी विभाग परियोजनाओं को तकनीकी स्वीकृति/संवीक्षा/दिशानिर्देश प्रदान करते हैं, इस प्रणाली को उदार बनाने और पंचायत की परियोजनाओं को तकनीकी सहायता सेवाएं प्रदान करने में निजी तकनीकी निकायों, सेवानिवृत्त तकनीकीविदों और तकनीकी स्कंध वाले नागरिक समाज की संस्थाओं को शामिल करने के लिए क्या उपाय किए जाने की आवश्यकता है?

अनुबंध-I (4) जारी

(ड) क्या विभिन्न विभागों के ग्राम-स्तर कर्मचारियों की उस स्थिति के अनुवीक्षण का कार्य पंचायतों को सौंपा जाना चाहिए?

(ढ़) इस समय, ग्राम पंचायत के श्रेणी "ग" कर्मचारी जिला प्रशासन से होते हैं। कार्य की मात्रा तथा साथ ही उनकी वित्तीय संरचना दोनों के रूप में इस संरचना के धीरे-धीरे सशक्तिकरण के दृष्टिगत क्या इस पद के उपयुक्त योग्यता और अनुभव की आवश्यकता सहित श्रेणी "ख" स्तर अथवा कम से कम वरिष्ठ श्रेणी "ग" स्तर तक उन्नयन करने की आवश्यकता है?

(ण) क्या पंचायती राज संस्थाओं को ऐसे उपक्रम प्रारंभ करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, जहां लोग/हितधारक शेष राशि उपलब्ध कराने वाली सरकार के साथ आंशिक अंशदान करते हैं? क्या ऐसे निर्माण कार्यों में श्रमदान (स्वैच्छिक कार्य) का मौद्रीकरण करना आवश्यक है?

(त) पंचायती राज संस्थाओं की स्थायी समिति के माध्यम से संस्थात्मक अनुवीक्षण के अतिरिक्त, प्रभावी अनुवीक्षण प्रणाली का अन्य रूप क्या हो सकता है।

2. क्षमता वृद्धि

(क) सामान्य भावना है कि राज्य ग्रामीण विकास संस्थान (एसआईआरडी) की सभी राज्यों में विधिवत देखभाल नहीं की जाती है और उचित ध्यान नहीं दिया जाता है। इसके लिए क्या उपाय आवश्यक हैं ताकि एसआईआरडी को पंचायती राज संस्थाओं के निर्वाचित सदस्यों और उनके साथ संबद्ध कर्मचारियों की क्षमता निर्मित करने के लिए पर्याप्त रूप से सुदृढ़ीकृत और पूर्णतः समर्पित बनाया जा सके?

(ख) एसआईआरडी के कार्यों को सक्षम गैर-सरकारी संगठनों/सरकारी और निजी दोनों क्षेत्रों में विश्वविद्यालयों सहित शैक्षणिक संस्थाओं को हस्तांतरित करने/कराने की क्या जटिलताएं हैं?

(ग) यह प्रायः देखा जाता है कि प्रत्येक केन्द्र-प्रायोजित स्कीम के लिए एक नई क्षमता निर्माण व्यवस्था की जाती है, संभवतः इसलिए क्योंकि इस सेवा को निरंतर प्रक्रिया के रूप में नहीं परंतु एक बाह्य, अस्थायी और समयबद्ध निविष्टि के रूप में देखा जाता है। क्या एनआईआरडी, एसआईआरडी और ऐसी अन्य समान संस्थाओं जैसे स्थायी संस्थात्मक व्यवस्थाओं के माध्यम

अनुबंध-I (4) जारी

से विभिन्न केन्द्र-प्रायोजित स्कीमों के पृथक क्षमता निर्माण अवयवों को पंचायती राज संस्थाओं के क्षमता निर्माण की निरंतर प्रक्रिया में समन्वित करना तार्किक होगा?

(घ) क्या पंचायती राज संस्थाओं के क्षमता निर्माण में गैर-सरकारी संगठनों/नागरिक समाज के अन्य समूहों को शामिल किया जाना चाहिए?

(ङ) विशेषकर चक्रानुक्रम प्रणाली के परिप्रेक्ष्य में महिलाओं और समाज के अन्य कमजोर वर्गों में से प्रतिनिधियों के क्षमता निर्माण के लिए क्या विशेष व्यवस्थाएं होनी चाहिए?

(च) क्या आप सोचते हैं कि प्रत्येक सुपुर्दगी पंचायत के स्तर पर एक संयुक्त विस्तार केन्द्र स्थापित करने की आवश्यकता है ताकि उस क्षेत्र में आने वाली सभी पंचायती राज संस्थाओं की प्रशिक्षण संबंधी आवश्यकताएं पूरी हो सकें?

(छ) क्या "इग्नू" जैसी संस्थाओं के माध्यम से पंचायतों में कार्यरत सचिवालीय और तकनीकी कर्मचारियों के लिए औपचारिक प्रमाणपत्र पाठ्यक्रम प्रारंभ करने की आवश्यकता है?

(ज) चूंकि पंचायती राज संस्थाओं के कई निर्वाचित प्रतिनिधि पर्याप्त रूप से अधिशासन के मुद्दों प्रशासनिक तथा साथ ही तकनीकी दोनों पर शिक्षित/प्रशिक्षित नहीं है इसलिए क्या निर्वाचन के तत्काल बाद ऐसे प्रतिनिधियों के लिए एक अल्पकालिक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम होना वांछनीय होगा?

XVII. विकेन्द्रीकृत आयोजना-जमीनी स्तर पर भागीदारी

नीचे के स्तर से आयोजना

अनुच्छेद 243छ के अनुसार आयोजना पंचायतों का एक अनिवार्य कार्य है। फिर भी, केरल को छोड़कर किसी भी राज्य में पंचायत स्तर की आयोजना सांस्थानिकीकृत नहीं की गई है। इसमें शामिल महत्वपूर्ण मुद्दे निम्नानुसार हैं :

(क) कई राज्य अधिनियमों में, विशेषकर ग्राम पंचायतों और मध्यस्थ पंचायतों के स्तर पर आयोजना को पंचायतों का अनिवार्य कार्य नहीं बनाया गया है। क्या यह असंवैधानिक नहीं है? "आयोजना" को पंचायतों के सभी स्तरों का अनिवार्य कार्य बनाने के लिए इन अधिनियमों में क्या संशोधन आवश्यक हैं?

अनुबंध-I (4) जारी

(ख) अधिकांश पंचायतें अन्य बातों के अतिरिक्त अनाबद्ध निधियों की कमी के कारण आयोजना का कार्य नहीं कर सकती। कई राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों के बावजूद अधिकांश राज्य सरकारें आनुमानिक रूप से गंभीर वित्तीय बाधाओं का सामना करने के कारण पंचायती राज संस्थाओं को अनाबद्ध रूप में पर्याप्त निधियां प्रदान करने में विफल रहती हैं।

इस परिस्थिति में, केन्द्रीय वित्त आयोग के अनुदानों सहित विभिन्न स्रोतों से निधियां आहरित करते हुए संसाधनों का पूल सृजित करने और उन्हें पंचायती राज संस्थाओं को संबंधित राज्य आयोजना बोर्डों द्वारा दिए जाने वाले विस्तृत दिशानिर्देशों के अधीन स्थानीय स्तर की विकास योजनाएं तैयार करने में समर्थ बनाने के लिए संघ सरकार की ओर से क्या पहले की जानी आवश्यक हैं?

(ग) (i) क्या योजना आयोग को पंचायत स्तर की आयोजना के सांस्थानिकीकरण और राज्य तथा राष्ट्रीय योजनाओं के साथ पंचायत की योजनाओं के एकीकरण के लिए ढांचा सृजित करने हेतु पहल करनी चाहिए?

(ii) राज्य आयोजना बोर्डों को सक्रिय बनाने के लिए योजना आयोग द्वारा की जा सकने वाली पहलें क्या हैं ताकि वे भागीदारी पंचायत स्तर योजनाएं तैयार करने के लिए पंचायती राज संस्थाओं को निर्देश, सलाह और समर्थन प्रदान करते हुए एक उत्प्रेरक केन्द्र बन सकें।

(घ) योजना आयोग ने पंचायती राज संस्थाओं द्वारा जमीनी स्तर पर आयोजना के कार्यान्वयन पर बल दिया है। योजना आयोग द्वारा क्या विशिष्ट पहलें की जा सकती हैं?

(ङ) पंचायत के विभिन्न स्तरों पर योजनाएं तैयार करने के लिए व्यापक और सही विधि अधिकांश राज्यों द्वारा विकसित नहीं की गई है। इसे सुनिश्चित करने के लिए क्या किया जा सकता है?

2. जिला आयोजना समिति की भूमिका

जिला आयोजना समितियां प्रभावी संस्थाओं के रूप में उभरने में विफल रही हैं। कुछ राज्यों ने जिला आयोजना समिति गठित नहीं की है। कुछ राज्यों ने इसे पंचायती राज संस्थाओं से अधिक शक्तिशाली

अनुबंध-I (4) जारी

बनाने का प्रयास किया। अधिकांश राज्यों में वे कार्यरत नहीं हैं। इसके अतिरिक्त, "जिला योजना" की संकल्पना ने अभी तक ठोस आकार नहीं लिया है। जिला आयोजना समिति और "जिला योजना" से संबंधित कई मुद्दे हैं, जिनपर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

(क) अनुच्छेद 243छ और 243ब के अधीन सभी तीन स्तरों की पंचायतें और नगरपालिकाएं अपने क्षेत्रों के लिए योजनाएं तैयार करेंगी। ये योजनाएं प्रारूप योजनाएं नहीं हैं परंतु अंतिम और कार्रवाई करने योग्य योजनाएं हैं। परंतु अनुच्छेद 243यघ के अधीन जिला आयोजना समिति द्वारा तैयार की जाने वाली जिला योजनाएं प्रारूप योजनाएं हैं। इस विसंगति को कैसे दूर किया और अनुच्छेद 243ग/243ब का अनुच्छेद 243यघ के साथ कैसे सामंजस्य स्थापित किया जाए?

(ख) अनुच्छेद 243यघ जिला आयोजना समिति को दो कार्य देता है नामतः पंचायत और नगरपालिका योजनाओं को एकीकृत करना और एक समेकित जिला योजना तैयार करना। इसका यह अर्थ होता है कि जिला योजनाएं स्थानीय निकायों की पृथक योजनाओं को समेकित करने से आगे जाती है। इसके द्वारा उन कतिपय मुद्दों पर ध्यान देना प्रत्याशित है, जो प्रत्येक पंचायत और नगरपालिकाओं की क्षमता से बाहर हैं। क्या ये बातें अनुच्छेद 243यघ के खंड (3) के उप-खंड (ग) तक प्रतिबंधित हैं, नामतः ग्रामीण शहरी एकीकरण, पर्यावरणीय संरक्षण, प्राकृतिक संसाधनों और वित्तीय अथवा अन्य किस्म के संसाधनों का संतुलित और सतत प्रयोग? क्या जिला योजनाओं की व्यापकता बड़ी होनी चाहिए, उदाहरणार्थ, स्थानीय निकायों को नहीं सौंपे गए विषयों/कार्यकलापों पर विभिन्न लाइन विभागों के कार्यक्रमों को शामिल करना? क्या एक मिश्रित विकास योजना की तैयारी और उनके क्षेत्रों में सेवाओं की प्रभावी सुपुर्दगी के लिए जिला/शहरी स्तर पर पंचायती राज संस्थाओं/शहरी स्थानीय निकायों के एकीकरण के लिए वैकल्पिक मॉडल का सुझाव देना संभव है?

(ग) जिला आयोजना समिति की वैधता-जिला स्तर पर शीर्ष निर्वाचित पंचायती राज संस्था के रूप में जिला परिषद के अस्तित्व के दृष्टिगत क्या अनुच्छेद 243यघ के अधीन जिला के लिए प्रारूप योजना तैयार करने हेतु एक पृथक संवैधानिक निकाय, जिला आयोजना समिति

अनुबंध-I (4) जारी

सृजित करने की आवश्यकता है? आपकी राय में जिला आयोजना समिति को यह विशेष संवैधानिक मान्यता देने का औचित्य क्या देती है, जब न तो राष्ट्रीय योजना आयोग और न ही राज्य योजना बोर्डों ने यह स्तर दिया है?

(घ) क्या आप इस विचार में वजन पाते हैं कि अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित और नामित सदस्यों के निकाय पंचायती राज संस्था-नगरपालिका प्रणाली से बाहर की एकमात्र समिति होने के कारण जिला आयोजना समिति की या तो स्थानीय निकाय अथवा स्थानीय लोगों के प्रति कोई जिम्मेवारी नहीं होगी?

(ङ) जिला पंचायत की भूमिका का विस्तार करना - 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन के अधीन संकल्पित लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के समग्र पैटर्न को देखते हुए, क्या आप सोचते हैं कि जिला आयोजना समिति को दिया गया कार्य स्वयं जिला पंचायत द्वारा निष्पादित किया जा सकता है? उस मामले में, क्या जिला पंचायत शहरी क्षेत्रों सहित संपूर्ण जिले के लिए सरकार होगी? संपूर्ण जिले के लिए जिला योजना तैयार करने का कार्य तब इस निकाय को दिया जा सकता है और जिला आयोजना समिति जैसे पृथक संवैधानिक निकाय की आवश्यकता नहीं है। इसमें क्या जटिलताएं हैं? ऐसे बड़ी/अधिकार प्राप्त जिला पंचायत (पंचायती राज संस्थाओं/शहरी स्थानीय निकायों दोनों का ध्यान रखते हुए) सृजित करने के लिए आवश्यक संवैधानिक संशोधन और संस्थात्मक व्यवस्थाएं क्या हैं?

(च) अगर उपर्युक्त स्वीकार किया जाता है तो क्या जिला आयोजना समिति को प्रतिस्थापित करने के लिए अधिकारियों/तकनीकी विशेषज्ञों/विद्वानों के एक सलाहकार निकाय की आवश्यकता है, जो जिला योजना तैयार करने अथवा स्थानीय स्तर पर आयोजना कार्य में समन्वय करने या अन्य बातों, अन्तः पंचायत स्तर पर स्कीमों/परियोजनाओं की अतिव्याप्ति और पुनरावृत्ति से बचने के अतिरिक्त स्थानीय योजनाओं की जांच करने के लिए जिला पंचायत को सलाह देगा।

(छ) जब जिला स्तर पंचायत ग्रामीण और शहरी दोनों जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती है तब इसे जिला शासन बनना होता है, जिस मामले में जिला शासन का मुख्य कार्यकारी अधिकारी

अनुबंध-I (4) जारी

स्वतः जिला स्तर पर मुख्य पदाधिकारी बन जाता है। मुख्य कार्यकारी अधिकारी के पद के साथ समाहर्ता/उपायुक्त के पद का विलय करने की क्या संभावित जटिलताएं होंगी?

XVIII. पंचायती राज संस्था में जिम्मेवारी और पारदर्शिता

(क) राज्य पंचायत अधिनियमों में पारदर्शिता की गारंटियां सम्मिलित करने के लिए किन विशिष्ट उपायों की अपेक्षा है?

(ख) पारदर्शिता और सूचना के स्वैच्छिक प्रकटन के लिए पंचायतों को जिम्मेवार ठहराने के लिए आप किस किस्म के प्रशासनिक/लेखाकरण ढांचे का सुझाव देंगे?

(ग) क्या आप यह सोचते हैं कि पंचायती राज संस्थाओं की लेखापरीक्षा केवल स्थानीय लेखा निदेशक अथवा राज्य नियंत्रक और महा लेखापरीक्षा इकाई के सामंजस्य से की जानी आवश्यक है?

(घ) पंचायतों के प्रत्येक स्तर पर पंचायती राज संस्थाओं के लेखे के कम्प्यूटरीकरण के लिए क्या उपाय किए जाने आवश्यक हैं?

(ङ) क्या पंचायती राज संस्थाओं के अधिकारियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम की निरंतर स्कीम होना आवश्यक है? क्या इस प्रशिक्षण में देश भर के लिए साझा बुनियादी पाठ्यचर्या होनी चाहिए? इस साझा पाठ्यचर्चा की विस्तृत विषयवस्तु क्या हो सकती है?

(च) प्रत्येक पंचायती राज संस्था में नागरिक चार्टर लागू करने से संबंधित आपके क्या सुझाव हैं?

(छ) सामाजिक लेखापरीक्षा को सांस्थानिकीकृत कैसे किया जाए?

(ज) मालिकाना मुद्दों के अतिरिक्त, यह आवश्यक है कि पंचायती राज संस्थाओं को उनके द्वारा नागरिकों को प्रदान की जाने वाली सार्वजनिक वस्तुओं और सेवाओं की क्षमता और प्रभावोत्पादकता के रूप में देखा जाना चाहिए। इस परिप्रेक्ष्य में क्या यह सुझाव देना उपयुक्त होगा कि सांविधिक लेखापरीक्षक भी कतिपय कार्यनिष्पादन संकेतकों, जिन्हें मात्रात्मक रूप से मापा जा सकता है, की तुलना में प्रत्येक पंचायती राज संस्था का मूल्यांकन करें?

(झ) क्या पंचायतों की अधोमुखी जिम्मेदारी, जैसा पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम के अधीन किया गया है ग्राम सभा/वार्ड सभा को विशिष्ट कार्य और शक्तियां सौंपी जानी चाहिएं?

(ञ) क्या किसी पंचायत क्षेत्र के भीतर कार्यरत गैर-सरकारी संगठनों/समुदाय-आधारित संगठनों को अपने कार्यकलापों के बारे में ग्राम सभा और पंचायत को सूचित करना चाहिए? इसके लिए क्या रूपात्मकताएं होंगी?

(ट) प्रशासनिक सुधार आयोग ने "अधिशासन में नीति" पर अपनी रिपोर्ट में स्थानीय निकायों में माध्यस्थम के सृजन की दृढ़तापूर्वक सिफारिश की है। इसे सर्वोत्तम रूप से कैसे तुल्यकालिक/आयोजित किया जा सकता है? माध्यस्थम के रूप में नियुक्ति के लिए पैरामीटर/योग्यताएं।

अनुबंध-I (5)

दिनांक 20 सितम्बर, 2006 को आईआईएम, बंगलौर में आयोजित शहरी अधिशासन पर राष्ट्रीय सभा में श्री एम. वीरप्पा मोइली अध्यक्ष, द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग का भाषण

मैं आप सभी के साथ प्रशासनिक सुधार आयोग और जनगृह द्वारा संयुक्त रूप से शहरी अधिशासन पर आयोजित इस राष्ट्रीय सभा में उपस्थित होकर प्रसन्न हूं। हम यहां भारतीय प्रबंध संस्थान में इस राष्ट्रीय सभा में आज और कल जिन बातों पर चर्चा कर रहे हैं वह मेरी समझ से अत्यधिक राष्ट्रीय महत्व का विषय है। जैसा आप सभी जानते हैं, शहरीकरण और शहरों की अभूतपूर्व वृद्धि आधुनिक विश्व में सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों में से एक है। प्राकृतिक वातावरण पर मानव के प्रयासों के अधिरोपण द्वारा अक्षरशः शहरों को निर्मित किया जाता है और शहरीकरण अनिवार्य रूप से गांवों और छोटी बस्तियों से जनसंख्या का शहरों और नगरों में पुनः वितरण है। तथापि, जनसंख्या एक बार शहरी स्तर का दावा करने के लिए उच्चतम सीमा पार कर जाती है तो यह निर्धारित करने में कि क्या किसी शहर का विकास होगा या नाश होगा, कई कारक भूमिका निभाते हैं - पृष्ठ प्रदेश की भलाई अथवा सुधार, कच्ची सामग्रियों की उपलब्धता, औद्योगिक उद्यम, प्राकृतिक आपदाएं, सार्वजनिक सेवाओं और अवसंरचना की दशा तथा इसी प्रकार अन्य कई।

दुर्भाग्यवश, भारत अपने प्राकृतिक संसाधनों से इष्टतम आर्थिक लाभ प्राप्त करने में समर्थ नहीं रहा है और न तो यह उसके उत्पाद्य भाग को पुनरूज्जीवित और पुनरूत्थानशील बनाने में सफल रहा है। बढ़ती हुई जनसंख्या और आर्थिक दबावों से वनाच्छादित क्षेत्र में गिरावट आई है। हमारी आर्थिक संरचना इस प्रकार तैयार की गई है कि वन संसाधनों की मांग उसकी पुनरूत्पादन क्षमता से बहुत अधिक हो गई है।

औद्योगीकरण और शहरीकरण के बीच संबंध प्रत्येक दिन सुदृढ़ होता जा रहा है। निर्मित स्थान के लिए तीव्र मांग रही है, जिसने आयोजना और निर्माण के विनियमनों, जिन्हें पर्यावरणीय अवक्रमण को रोकने के विशिष्ट लक्ष्य से बनाया जाता है, को मात कर दिया है। बढ़ते हुए औद्योगिक कार्यकलाप, व्यापारिक अवसर, जनसंख्या वृद्धि और ग्रामीण क्षेत्रों से विस्थापन अभूतपूर्व पैमाने पर भारतीय नगरों का विस्तार कर रहे हैं।

अनुबंध-I (5) जारी

विशेष आर्थिक क्षेत्र

विशेष आर्थिक क्षेत्र अधिनियम, 2005 विशेष आर्थिक क्षेत्रों में कराधान, सीमाशुल्क, श्रम आदि सहित विभिन्न क्षेत्रों में निजी भागीदारी और बाधा-मुक्त विनियामक प्रणाली के माध्यम से विश्व-स्तरीय अवसंरचना का सृजन समर्थ बनाने के लिए बनाया गया है।

निस्संदेह, यह संकल्पना विश्व-स्तरीय अवसंरचना सृजित करने और कई राज्यों को कई शंघाई का सपना दिखाने जा रही है।

विकास का पीछा प्रवर्त्तकों द्वारा भी किया जाता है यथा, मंगलौर में ओएनजीसी की परियोजना की घोषणा के बाद न केवल देश में बल्कि संपूर्ण विश्व भर में भी प्रवर्त्तकों ने भूमि के अधिग्रहण के लिए आना और निवेश करना प्रारंभ कर दिया।

सीडीपी, जो वर्ष 2002 में समाप्त हुई, को अभी भी कर्नाटक सरकार से अनुमोदन मिलना है। ऐसा अन्य कई नगरों के संबंध में भी हो सकता है। जब तक शहरी आयोजना विकास का पूर्वानुमान करते हुए योजनाबद्ध नहीं की जाती तब तक यह पूर्णतः अनियंत्रित हो सकता है और इससे शहरी अव्यवस्था उत्पन्न हो सकती है।

अवसंरचना और विकास की अधिकता को उपयुक्त रूप से सरणीबद्ध, योजनाबद्ध और निष्पादित किया जाना होगा, अन्यथा केवल इससे ही शहरी विस्तार की बड़ी समस्या उत्पन्न हो सकती है।

शहरी अधिशासन का विषय और अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है जब हम शहरी निर्धनता की सीमा और मात्रा पर विचार करते हैं। भारत में निर्धनता दशकों से कई चर्चाओं और नीतियों का केन्द्र बिन्दु रही है। ये अधिकांश ध्यानकेन्द्रण ग्रामीण निर्धनता के मुद्दों पर रहे हैं परंतु शहरी निर्धनता का आकार और वृद्धि अधिदेशित करती है कि इस क्षेत्र को हमारे नीति-निर्माताओं द्वारा समान रूप से ध्यान प्राप्त होता है। बड़े शहरों का विकास छोटे शहरों की अपेक्षा तेजी से हो रहा है। भारत के बड़े शहरों में देश में गंदी बस्तियों के निवासियों की अधिकतम प्रतिशतता है। शहरी निर्धनता की बात करते समय हमें कई प्रश्नों पर विचार करने की आवश्यकता है। पहला "अधिकारिता" दृष्टिकोण बनाम "सुपुर्दगी" दृष्टिकोण पर कार्रवाई करने का महत्व, जो लाभार्थियों को परिवर्तन की प्रक्रिया में मात्र प्राप्तकर्ता मानता है भागीदार नहीं। दूसरा, हमें अपने कार्यक्रमों की डिजाइन में शहरी निर्धनता की अर्थव्यवस्था समझने की आवश्यकता है। तीसरा, हमें ग्रामीण निर्धनता के अनुरूप शहरी निर्धनता को प्राथमिकता प्रदान करनी होगी। राष्ट्रीय शहरीकरण

अनुबंध-I (5) जारी

आयोग ने सिफारिश की थी कि सरकार ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में निर्धनता पर ध्यान देने के लिए एकीकृत दृष्टिकोण अपनाए। यह इसलिए था क्योंकि ग्रामीण और शहरी अर्थव्यवस्थाएं परस्पर निर्भर हैं और किसी एक क्षेत्र में विफलता से दूसरे क्षेत्र में विफलता होगी। वर्ष-दर-वर्ष लागू की जा रही सरकार द्वारा प्रायोजित शहरी निर्धनता उन्मूलन पहलों की संख्या नीति-निर्माताओं के लिए महत्व में शहरी निर्धनता की धीरे-धीरे वृद्धि दर्शाते हुए बढ़ी है। जहां दृष्टिकोण में परिवर्तन एक सुधार है, जो शहरी निर्धनता की बढ़ती हुई अत्यावश्यकता दर्शाता है,शहरी निर्धनता के लिए निधिकरण इस समस्या की गंभीरता को देखते हुए बहुत कम है। मैं आशा करता हूं कि राष्ट्रीय सभा इन पहलुओं पर विस्तार से चर्चा करेगी और उचित प्रशामकों का सुझाव देगी।

55वें राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (एनएसएस-1999-2000) के अनुसार शहरी क्षेत्रों के लिए निर्धनता रेखा प्रति व्यक्ति प्रतिमाह 854.96 रुपए (19.02 अमरीकी डालर) थी। इस परिभाषा के अनुसार 26.11% भारतीय निर्धनता रेखा से नीचे आते हैं। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार 42.83% शहरी जनसंख्या निर्धनता रेखा से नीचे थी।

गंदी बस्तियों के बारे में अपरिहार्य प्रत्युत्तर होगा। पहली बार वर्ष 2001 की जनगणना ने गंदी बस्तियों और 607 नगरों/शहरों (50,000 से अधिक जनसंख्या) पर आंकड़े संग्रहित और ऐसे आंकड़े सूचित किए। भारत की जनसंख्या का चार प्रतिशत, इन शहरों/नगरों की जनसंख्या का 22 प्रतिशत, महाराष्ट्र की जनसंख्या का 32 प्रतिशत, मुंबई की जनसंख्या का 49 प्रतिशत (अन्य महानगरों के आंकड़े थोड़े कम हैं) गंदी बस्तियों में रहता है।

वर्ष 2001 की जनगणना में, 37% शहरी परिवारों के पास रहने के लिए केवल एक कमरा था और यह प्रतिशतता लगभग 5 व्यक्तियों के औसत आकार के परिवार के लिए 65% तक बढ़ गई। केवल आधे रिहायशों में जल की चालू आपूर्ति थी और 26% में शौचालय नहीं थे (मुंबई में 53%)। इसके अतिरिक्त 23% शहरी जनसंख्या गंदी बस्तियों-इधर-उधर बिखरी बस्तियों और झोपड़ियों में रहती है और यह प्रतिशतता बड़ी नगरपालिकाओं में और भी अधिक है : चेन्नई की जनसंख्या की तिहाई और मुंबई की जनसंख्या की आधी। गंदी बस्तियों के आकार और स्थायित्व के प्रत्युत्तर में सरकारी प्राधिकारियों ने विभिन्न किस्म के उपायों का आश्रय लिया है जैसे पुनःअवस्थापन सहित तोड़-फोड़, बुनियादी सेवाओं का प्रावधान, स्वस्थाने पुनर्वास आदि, तथापि ये समस्या की जड़ का निपटारा नहीं करते।

अनुबंध-I (5) जारी

वर्ष 1992 में 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधनों के अधिनियमन ने स्थानीय निकायों को संवैधानिक स्तर समनुदेशित करते हुए देश में राजकोषीय संघवाद और विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में नया आयाम जोड़ा है। संशोधन ने अन्य बातों के अतिरिक्त, राज्य विधानमंडल की शक्तियों और प्राधिकार के धीरे-धीरे शहरी स्थानीय निकायों को हस्तांतरण की व्यवस्था की ताकि वे स्व-शासन की संस्था के रूप में कार्य कर सकें : संविधान की बारहवीं अनुसूची के अधीन शहरी स्थानीय निकायों के उत्तदायित्वों का स्पष्ट सीमांकन और नगरपालिका वित्त के लिए अवसरों का पता लगाने तथा राज्यों से शहरी स्थानीय निकायों को संसाधन की सुपुर्दगी के लिए मानदंडों की सिफारिश करने हेतु केन्द्रीय वित्त आयोग के अनुरूप राज्य वित्त आयोगों का गठन।

इन उपबंधों ने, यद्यपि इन्हें पूर्णतः कार्यान्वित नहीं किया, एक लोकतांत्रिक शासन की संरचना के ढांचे के भीतर कार्यात्मक और वित्तीय स्वायत्तता प्रदान की और शहरी स्थानीय निकायों को अपने नागरिकों के प्रति प्रत्यक्षः जिम्मेवार बनाया। परंतु राज्य सरकार और शहरी स्थानीय निकायों के बीच शक्तियों, कार्यों और वित्त का सही सीमांकन राज्य सरकारों द्वारा उनके अनुरूपता विधानों और उनमें परवर्ती संशोधनों के माध्यम से निर्धारित किया जाना शेष रह गया।

जब हम कारणों की खोज करते हैं तब मुझे अमर्त्य सेन द्वारा अपने पुराने शिक्षक जोन रॉबिन्सन द्वारा हमारे देश के बारे में यह उक्ति का उद्धरण याद आता है कि "जहां भी आप भारत के बारे में सही रूप से कह सकते हैं वहां विपरीत भी सत्य है।" इस प्रकार, चंडीगढ़ के समान बड़े प्रारंभिक निवेश से केन्द्रीय रूप से प्रशासित नगर शहरी आयोजना का एक मॉडल है, परंतु इसकी सफलता आगे नहीं बढ़ाई जा सकी और अन्यत्र उसकी पुनरावृत्ति नहीं की जा सकी। दूसरी ओर, शहरी आयोजना में बड़ी प्रारंभिक सफलता के बाद दिल्ली अब एजेंसियों की बहुतायतता जिनमें से न्यायपालिका अब एक हिस्सा बन गई है, के बोझ और अनियंत्रित वाणिज्यीकरण के साथ व्यापक जनसांख्यिकीय दबाव सहित समस्या-प्रवण हो गई है। सर्वाधिक दुर्भाग्यपूर्ण पहलू यह है कि अब लगभग कोई छोटे और मझोले नगर नहीं हैं, जिन्हें जीवनयापन के उच्च स्तर की प्रतिष्ठा सहित मॉडल नगरों के रूप में माना जा सकता हो।

संघीय ढांचे में व्यय और राजस्व विकेन्द्रीकरण का संपूर्ण मिलान अकल्पनीय है। इसलिए, स्थानीय वित्त-करों का मिश्रण, प्रयोक्ता प्रभार और हस्तांतरण की उपयुक्त संरचना यह सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण है कि शहरी स्थानीय निकायों की उन्हें सुपुर्द किए जा रहे कार्यों को देखते हुए उनके योग्य वित्तीय संसाधनों तक पहुंच हो सके।

अनुबंध-I (5) जारी

दुर्भाग्यवश, 74वें संवैधानिक संशोधन के चौदह वर्ष पश्चात शहरी स्थानीय निकाय सभी मोर्चों पर स्वयं को वित्तीय रूप से गंभीर स्थिति में पाते हैं - इनके पास राजस्व कर और कर-भिन्न स्रोतों, हस्तांतरण तथा साथ ही अनुदानों के माध्यम से आता है। इसके परिणामस्वरूप, शहरी स्थानीय निकाय की वित्त व्यवस्था संकटग्रस्त है। इसके नगरपालिकाओं के लिए गंभीर परिणाम हुए हैं कि वे किस प्रकार अपनी अत्यावश्यक पूंजी निवेशों का वित्तपोषण करें और क्या अपने राजस्व व्यय के दायित्वों का वहन अकेले ही करें? इसलिए देश में नगरपालिका की वित्त व्यवस्था की दशा सुधारने के लिए कार्रवाई किया जाना आवश्यक है।

यह अनुमान है कि सात वर्षों की अवधि में शहरी स्थानीय निकायों को 17219 करोड़ रुपए की वार्षिक निधिकरण की आवश्यकता अंतर्निहित करते हुए बुनियादी अवसंरचना और सेवाओं के उन्नयन के लिए 120536 करोड़ रुपए के कुल निवेश की अपेक्षा होगी।

शहरीकरण नीतियां कृत्रिम अभाव उत्पन्न कर रही हैं

वर्ष 2006(अथवा 2007) मानव सभ्यता के इतिहास में महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी समय विश्व की शहरी जनसंख्या पहली बार विश्व की ग्रामीण जनसंख्या से अधिक हो जाएगी। निस्संदेह, शहरीकरण का स्तर उच्च आय वाले देशों में 80 प्रतिशत से लेकर निम्न आय वाले देशों में 30 प्रतिशत की सीमा में व्यापक रूप से भिन्न-भिन्न होता है। शहरीकरण आर्थिक विकास से सह-संबंधित है और भारत के 28 प्रतिशत के शहरीकरण का आंकड़ा वैश्विक मानकों से अभी भी कम है, यद्यपि, शहरी क्या है इस बारे में देश भर में परिभाषाओं की कुछ समस्याएं हैं।

भारत के शहरीकरण का आंकड़ा न केवल कम है बल्कि यह अन्य कई देशों की अपेक्षा धीमी दर से बढ़ रहा है। उदाहरणार्थ, वर्ष 1990 और 2003 के बीच, भारत 2.5 प्रतिशत की वार्षिक औसत दर पर शहरीकृत हुआ। यह दर निम्न आय वाले देशों के लिए 3.3 प्रतिशत और उप-सहारा अफ्रीका के लिए 4.6 प्रतिशत थी। शहरीकरण और विकास के बीच सह-संबंध भी स्पष्ट है अगर कोई अंतर्राज्यीय आंकड़ों पर विचार करता है। तमिलनाडु, महाराष्ट्र और गुजरात शहरीकरण के क्रम में शीर्ष पर हैं और बिहार 10.47 प्रतिशत के आंकड़े सहित निचले स्तर पर है। वर्ष 2025 के आसपास पूर्वानुमान दर्शाते हैं कि भारत की 40 प्रतिशत जनसंख्या शहरी हो जाएगी, जिसमें तमिलनाडु में 75 प्रतिशत, महाराष्ट्र में 60 प्रतिशत और गुजरात तथा पंजाब में 50 प्रतिशत से अधिक शहरी जनसंख्या होगी। तमिलनाडु को वर्ष

अनुबंध-I (5) जारी

2007 में 50 प्रतिशत की सीमा पार कर लेनी चाहिए। वर्ष 2025 में, कर्नाटक और हरियाणा भी मोटे तौर पर शहरी हो जाएंगे तथा उत्तरांचल, आन्ध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल अथवा केरल से भी अधिक शहरी हो जाएगा।

हमारी 320 मिलियन की शहरी जनसंख्या विश्व में दूसरी सबसे बड़ी है। शहरी क्षेत्र का राष्ट्र के सकल घरेलू उत्पाद में 50% से अधिक का असमानुपातिक हिस्सा है और यह हिस्सा भी वर्ष 2011 तक बढ़कर 65% होना प्रत्याशित है। इस प्रकार, जहां पुराना ठप्पा अभी भी नया है वहीं एक ऐसे देश जो फार्मास्यूटिकल, दूरसंचार तथा बाहरी स्रोत की संगणन सेवाओं में विश्व में अग्रणी है और जो अधिकांशतः अपने शहरी केन्द्रों द्वारा चालित 7% प्रतिवर्ष से अधिक की दर पर विकास कर रहा है, की गतिशील शहरी वास्तविकता नहीं छिपाई जा सकती।

मैं शहरी आयोजना के बारे में कुछ कहना चाहता हूं। भारत के शहरीकृत होते रहने और इसके अधिकतर प्रतिशत नागरिकों के ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों में विस्थापित होने के कारण, शहरों के मौजूदा संसाधनों का प्रबंध करने तथा विकास के लिए प्रभावी रूप से आयोजना के प्रति जागरूक और अनुशासित दृष्टिकोण उसकी बढ़ती हुई जनसंख्या की भलाई के लिए महत्वपूर्ण होगा। इस प्रकार, एक सुस्पष्ट और कार्यान्वित शहरी योजना सुदृढ़ जीवन-निर्वाह के वातावरण, जो आर्थिक अवसरों और सार्वजनिक सेवाओं तक सतत पहुंच प्रदान करता है और ऐसी स्थिति, जहां भारत के नागरिकों की बढ़ती हुई संख्या अपने आसपास के वातावरण के प्रति किसी स्वामित्व अथवा गौरव की भावना के बिना शहरी क्षेत्रों में असंयोजित अस्तित्व के लिए एक ससंजक ग्रामीण ढांचे का आदान-प्रदान कर रहे हैं, के बीच अंतर करेगी। मैं आशा करता हूं कि यह राष्ट्रीय सभा शहरी आयोजना के इन आयामों पर विस्तारपूर्वक चर्चा करेगी और समाधानों का सुझाव देगी।

मुझे अब परिधीय-शहरी क्षेत्रों के बारे में कुछ कहने दें। परिधीय-शहरी क्षेत्र शहरीकरण का कुरूप चेहरा दर्शाते हैं। ये क्षेत्र सभी विद्यमान समस्याओं सहित शहरी सतह की सफाई और चिकनाहट के नीचे भ्रंश रेखा प्रदर्शित करते हैं। ये गंदी बस्तियों की कानूनी स्थिति के बिना विशाल गंदी बस्तियां हैं; यह वह स्थान है, जहां निर्धन दुरूह स्थितियों में और जल, बिजली और स्वास्थ्य परिचर्या जैसी सार्वजनिक सेवाओं के लाभ के बिना निवास करते हैं। मैं राष्ट्रीय सभा से परिधीय-शहरी क्षेत्रों की समस्याओं और संभावनाओं पर कुछ समय व्यतीत करने और सुधार के उपायों का सुझाव देने का अनुरोध करूंगा।

अनुबंध-I (5) जारी

शहरी वातावरण का अत्यधिक महत्व है। औद्योगीकरण शहरी आभास का मुख्य आधार रहा है। भारत जैसे विकासशील देशों में अवसंरचना और आयोजना के रूप में आधुनिकीकरण के बिना तीव्र शहरीकरण हो रहा है। शहरीकरण से संबंधित समस्याओं अर्थात संकुलन, प्रदूषण, गंदी बस्तियों का बसना और अपर्याप्त सेवाओं और सुविधाओं के बारे में चिन्ता बढ़ रही है। शहरीकरण की दर न केवल प्राकृतिक वातावरण बल्कि मानव-निर्मित वातावरण के लिए भी खतरा उत्पन्न कर रही है। शहरी आयोजना का उद्देश्य न केवल आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति बल्कि बेहतर किस्म के वातावरण की प्राप्ति भी होना चाहिए।

आइए, मैं आपको एक उदाहरण देता हूं। जब नगर निर्मित किए जाते हैं, सपाट क्षेत्रों में सड़कों और भवनों का निर्माण किया जाता है। परंतु शहरों के बढ़ने के साथ ही आसपास की पहाड़ियों को समतल किया जाता है और निर्माण समर्थ बनाने के लिए निचले क्षेत्रों में भराव किया जाता है। यह भूमि की प्राकृतिक विशेषता में बाधा डालता है। भूमि का ढलान, विशेषकर जल के प्रवाह के संबंध में बहुत महत्वपूर्ण पहलू है। वर्षा का जल ऊंची ढलानों से ढलान के नीचे जल ग्रहण क्षेत्रों में प्रवाहित होता है और ये निचले क्षेत्र झील, तालाब आदि बन जाते हैं। ढलानों का अंधाधुन्ध समतलीकरण और दलदली क्षेत्र के समीप निचले क्षेत्रों का भराव जल स्रोतों में वर्षा जल के प्रभाव को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है, जिससे जल की कमी, मृदा क्षरण, जल स्रोतों और जल निकासी नालियों में गाद जमने जैसी समस्या होती है जो बाढ़ आने का कारण बनते हैं। आयोजना अधिकारियों और नागरिकों में अव्यवस्थित शहरीकरण के खतरों के बारे में जागरूकता की कमी इस समस्या को और गंभीर बना देती है। मुंबई में हाल ही में आई बाढ़ इसका एक उदाहरण है, जो स्थिति की गंभीरता का उल्लेख करता है। मैं इस राष्ट्रीय सभा का ध्यान ऐसे गंभीर पर्यावरणीय मुद्दों की ओर आकृष्ट करना चाहूंगा और प्रतिभागियों से उन तरीकों का प्रस्ताव करने का अनुरोध करूंगा, जिनसे पर्यावरण की गुणवत्ता बनाई रखी जा सके तथा साथ ही उसमें वृद्धि भी की जा सके।

शहरी यातायात और परिवहन महानगरों ओर अन्य दो-स्तरीय नगरों को अवरूद्ध करने वाले महत्वपूर्ण मुद्दे हैं। कई सार्वजनिक परिवहन के तरीके मेट्रो रेल, दैनिक यात्री रेल, उच्च क्षमता वाली बस प्रणाली (एचसीबीएस), विद्युत ट्रॉली बस (ईटीबी), लाइट रेल ट्रांजिट (एलआरटी) और मोनो रेल हैं। मेट्रो/दैनिक यात्री रेल उच्च क्षमता वाले साधन हैं।

अनुबंध-I (5) जारी

राष्ट्रीय सभी को विशेषकर लागत-लाभ अनुपात और उपयुक्त मापन के संदर्भ में साधनों के चुनाव के लिए मानदंडों के बारे में चर्चा करना आवश्यक है। जहां भी सर्कुलर रेलवे मौजूद है, वहां शहरी परिवहन के संपर्क पर विचार किया जा सकता है। सर्कुलर रेलवे की उपलब्धता के संबंध में उत्थापित रेल मार्ग प्रणाली एक विकल्प है।

जन तीव्र परिवहन प्रणाली पर कार्य करते समय 25 वर्षों की कल्पनादृष्टि सहित मेट्रो लाइनों की डिजाइन बनाने पर विचार किया जाना होगा।

भारत का ऐसा कोई भाग नहीं है, जहां शहरी भूमि और आवासन की प्राकृतिक कमी होनी चाहिए। ये केन्द्र, राज्य और नगरपालिका सभी एक साथ मिलाकर सरकारी नीतियों के कारण कृत्रिम कमियां हैं। अगर कोई शहरी भूमि हदबंदी, किराया नियंत्रण और किराएदारी, अवास्तविक मास्टर योजना और मास्टर योजना बनने पर भूमि परिवर्तन पर प्रतिबंध, उच्च स्टाम्प शुल्क, कम संपत्ति कर, अवास्तविक भवन प्रतिबंध और बाजार में नहीं आने वाले सरकार के स्वामित्वाधीन बड़े क्षेत्र की भूमि पर विधान हटा दे तो कृत्रिम कमियां समाप्त हो जाएंगी। परंतु इसी प्रकार भ्रष्टाचार भी समाप्त हो जाएगा, जो विवेकाधिकार बने रहने का मुख्य कारण है। हम जानते हैं कि ये अवास्तविक विनियमन लागू किए जाने के लिए नहीं हैं। कोई भी किसी को उनके माध्यम से गलत कार्य करा सकता है जब तक उच्च न्यायालय यथास्थिति को बदलने के लिए हस्तक्षेप नहीं करता। जब एक बार न्यायालय हस्तक्षेप करता है तब दिल्ली नगरनिगम ने हमसे कहा है कि दिल्ली के 3.2 मिलियन भवनों के 70 से 80 प्रतिशत ने बड़े अथवा छोटे कानूनी उल्लंघन किए हैं, दिल्ली की 3000 कालोनियों में से 1600 कालोनियां गैर-कानूनी हैं और 18,299 भवनों को गिराया जाना है। चूंकि इन पर प्रायः कर और बिजली बिल का भुगतान किया गया है इसलिए अनुमानतः दिल्ली नगर निगम और अन्य सरकारी अधिकारी इन गैर-कानूनी बातों के बारे में अवगत हैं। कृत्रिम कमियों से कीमतें बढ़नी चाहिए केवल इस बात को छोड़कर कि ऐसी ऊंची कीमतें स्वयं को घूंस के माध्यम से व्यक्त करती हैं। यह भी एक किस्म का ठेका है, केवल इस बात को छोड़कर कि ऐसे ठेके कानूनी रूप से बाध्यकारी नहीं हैं।

शहरी अधिशासन के मुद्दे/संकेतक

1. उपभोक्ता की संतुष्टि (सर्वेक्षण/शिकायतें)
2. नगरपालिका सेवाओं के लिए ठेकों/निविदाओं हेतु कार्यविधियों की उन्मुक्तता

अनुबंध-I (5) जारी

3. कर प्रणाली में समानता
4. स्थानीय-शासन निधिकरण के स्रोत (कर, प्रयोक्ता प्रभार, उधार लेना, केन्द्र सरकार, अंतर्राष्ट्रीय सहायता)
5. सेवाओं द्वारा सेवा की गई जनसंख्या की प्रतिशतता
6. नीति चक्र के चरणों तक जनता की पहुंच
7. कानून लागू करने में न्यायसंगतता
8. परामर्श प्रक्रिया में अपवर्जित समूहों को सम्मिलित करना
9. कार्यविधियों और विनियमनों तथा उत्तरदायित्वों की स्पष्टता
10. मौजूदा भागीदारी प्रक्रियाएं
11. प्रचार माध्यम की स्वतंत्रता और स्थानीय प्रचार माध्यम का अस्तित्व
12. वित्तीय संसाधनों की स्वायत्तता।

अंततः, वर्तमान सरकार की पहलों के बारे में कुछ बातें कहना चाहूंगा। "जेएनएनयूआरएम", जिसका शुभारंभ दिसम्बर, 2005 मं किया गया था, भारत में शहरी जीवन की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए एक सराहनीय पहल है। यह एक सात-वर्षीय मिशन है। "जेएनएनयूआरएम" का उद्देश्य आर्थिक रूप से उत्पादक, सक्षम, समान और प्रत्युत्तरदायी नगरों का सृजन करना है। "जेएनएनयूआरएम" का दृष्टिकोण अनिवार्यतः तीन दिशाओं में है। पहला, "जेएनएनयूआरएम" के अधीन चयनित नगरों को एक नगर विकास योजना तैयार करना होगा, जो अगले तीन दशकों के लिए नगर के लिए कल्पनादृष्टि विवरण होगा। दूसरा, संबंधित नगर को कल्पनादृष्टि विवरण के अनुसार विस्तृत परियोजना रिपोर्ट तैयार करनी होगी, जो उसकी वित्तीय आवश्यकताएं निर्धारित करेगी। तीसरा, शहरी सुधारों के कार्यान्वयन के लिए एक समय-सीमा निर्दिष्ट की जानी होगी। "जेएनएनयूआरएम" के अधीन परियोजना सहायता के बल देने वाले क्षेत्रों की सीमा ठोस अपशिष्ट प्रबंधन से शहरी निर्धनों के लिए बुनियादी सेवाओं तक होगी। पूर्ण रूप से "जेएनएनयूअरएम" एक उल्लेखनीय राष्ट्रीय पहल है, जिसमें संपूर्ण सुधार, वित्तीय प्रोत्साहन और सख्त समीक्षा प्रक्रिया शामिल है।

अनुबंध-I (5) जारी

शहरी अधिशासन की विशिष्टता सततता, सहायता, समानता, क्षमता, पारदर्शिता और जिम्मेवारी, नागरिक संबद्धता और नागरिकता तथा सुरक्षा के सिद्धांतों द्वारा परिलक्षित होती है।

- ➢ शहरी विकास के सभी आयामों में सततता
- ➢ समीपतम उपयुक्त स्तर तक प्राधिकार और संसाधनों की सहायता
- ➢ निर्णय लेने की प्रक्रिया और शहरी जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं तक पहुंच में समानता
- ➢ सार्वजनिक सेवाओं की सुपुर्दगी और स्थानीय आर्थिक विकास के संवर्धन में क्षमता
- ➢ निर्णयकर्ताओं और सभी हितधारकों की पारदर्शिता और जिम्मेवारी
- ➢ नागरिक संबद्धता और नागरिकता
- ➢ व्यक्तियों और उनके जीवन-निर्वाह के वातावरण की सुरक्षा

भागीदारिता बजट को एक ऐसे "कार्यतंत्र, जिसके माध्यम से जनसंख्या उपलब्ध सभी अथवा आंशिक सरकारी संसाधनों के गंतव्य पर निर्णय लेती है अथवा निर्णयों में अंशदान करती है", के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

परंतु अभी भी पर्याप्त मुद्‌दे हैं, जिन्हें जेएनएनयूआरएम में व्यापक रूप से शामिल नहीं किया गया है और ये ऐसे मुद्‌दे हैं जिनपर हमारी इस राष्ट्रीय सभा को ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। मैं उनमें से कम से कम पांच का उल्लेख करना चाहूंगा :

1. नगरपालिकाओं की समग्र वित्तीय स्थिति में सुधार
2. पर्यावरणीय मुद्दे
3. शहरी निर्धनता के मुद्दे
4. क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण
5. शहरी लोकतंत्र

अनुबंध-I (5) जारी

ऐसे कतिपय सामान्य प्रश्न हैं जिन्हें आज और कल हमारी चर्चाओं के निर्देशन के लिए हमें स्वयं से पूछना है।

1. 74वें संशोधन के पारित होने से एक दशक से अधिक के बाद यह महत्वपूर्ण है कि चर्चा इस आकलन से प्रारंभ होती है कि इस पथ विभंजक निर्देशक और नीति को कितनी भली प्रकार कार्यान्वित किया गया है। अभी तक किन सकारात्मक बातों को प्राप्त किया गया है? समस्या और विफलता के क्षेत्र क्या हैं, जिनपर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है? हमें क्या पाठ सीखना चाहिए और प्रशासनिक सुधार के लिए उनकी जटिलताएं क्या हैं?

2. इन प्रदर्शनों और समीक्षाओं/निर्धारणों द्वारा प्रदर्शित मुद्दे क्या हैं? अगर बुनियादी समस्याओं की उत्पत्ति राजनीतिक प्रणाली और परिप्रेक्ष्य में है तो क्या आयोग द्वारा उनपर विचार किया जाना चाहिए? अथवा क्या आयोग को दूसरे अथवा तीसरे क्रम के तकनीकी अथवा कार्यविधिक मुद्दों तक ही सीमित रहना चाहिए?

3. शहरी स्थानीय निकायों की बुनियादी सेवाओं के बारे में नागरिकों से प्राप्त पृष्ठभूमि संबंधी जानकारी द्वारा किन किस्मों की समस्याओं का विशेष उल्लेख किया जाना है? वे हमारे द्वारा ध्यान दिए जाने वाले सुधार के क्षेत्रों पर हमें क्या सुराग देते हैं?

4. नगरों में आर्थिक कारकों की पृष्ठभूमि संबंधी जानकारी हमें शहरी स्थानीय निकायों के विनियामक कार्यनिष्पादन के कार्यकरण के बारे में क्या कहती है? उनके अनुभव के आधार पर आयोजना, आंचलीकरण और अवसरंचना में कमजोर बिन्दु क्या हैं जिनपर हमें ध्यान देना चाहिए?

5. पिछले कुछ दशकों में कई देशों में शहरी अधिशासन में बड़े सुधार हुए हैं? उनसे हम क्या पाठ और सर्वोत्तम पद्धतियां सीख और अपना सकते हैं? अथवा क्या हमें अपने अनुभवों और डेस्क अध्ययनों पर ही स्वयं को सीमित रखना चाहिए?

दिसम्बर, 2005 में प्रारंभ किया गया सबसे हाल का मुख्य कार्यक्रम जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन (जेएनएनयूआरएम), जो बड़े शहरों (1 मिलियन से अधिक जनसंख्या) को लक्षित करता है इन अर्थों में लीक से हटकर है कि यह कई सुधारों को लागू करने (आधुनिक नगरपालिका लेखाकरण

प्रणालियों, ई-गवर्नेंस साधनों के प्रयोग, जीआईएस का प्रयोग करते हुए संपत्ति कर के सुधार, प्रयोक्ता प्रभारों के यौक्तिकीकरण और निर्धनों के लिए बुनियादी सेवाओं के प्रावधान पर ध्यान केन्द्रित करते हुए) और नगर विकास योजनाओं की तैयारी, नगरपालिकाओं को भविष्य में स्वयं को पूर्वानुमानित करने और नगरों की आर्थिक उत्पादकता और क्षमता सुधारने के लिए प्रोत्साहित करते हुए और इसके साथ ही यह सुनिश्चित करते हुए कि वे अपने नगरों को समान और सम्मिलित बनाने का प्रयास कर रहे है, पर निर्भर वित्तीय संसाधन तक पहुंचता है। इस मिशन के दो उप-मिशन हैं, एक शहरी अवसंरचना और अधिशासन के लिए तथा दूसरा शहरी निर्धनों को बुनियादी सेवाओं क लिए। यह मिशन अधिशासन, कानूनों, प्रणालियों और कार्यविधियों में सुधार के मुद्दों पर ध्यान देता है ताकि उन्हें हमारे शहरों और नगरों की समकालीन आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जा सके। इसका ध्यानकेन्द्रण दोमुखी हैं अर्थात सुधरी हुई शहरी अवसंरचना और हमारे शहरी केन्द्रों के अधिशासन की प्रणालियों में सुधार के माध्यम से प्राप्त की जाने वाली सुधरी हुई सार्वजनिक सेवाएं।

यह पहल किस सीमा तक कार्य करेगी, क्या इसे विशाल क्षेत्रीय भिन्नताएं, जो हमारे देश की विशेषता है, देखते हुए और सही करने तथा लचीलेपन की अपेक्षा है, क्या यह सरल कार्यान्वयन के लिए थोड़ा जटिल है, ये सभी अति सूक्ष्म बाते हैं, जिनपर विशेषज्ञों की यह सभा मुझे विश्वास है प्रकाश डाल सकती है। मैं आशा करता हूं कि यह संगोष्ठी नए विचार और आगे के लिए सुनियोजित दृष्टिकोण प्रस्तुत करेगी ताकि हमारे नगरों के समान विकास और सुधरा हुआ जीवन स्तर एक वास्तविकता बन सके।

मैं विश्वास करता हूं कि यह राष्ट्रीय सभा इन मुद्दों पर चर्चा करने के लिए कुछ समय व्यतीत करेगी और उचित सुझाव प्रस्तुत करेगी। मैं इस राष्ट्रीय सभा के लिए उनके प्रयास में सफलता की कामना करता हूं।

एम. वीरप्पा मोइली

अनुबंध-I (6)

दिनांक 20 और 21 सितम्बर, 2006 को आईआईएम बंगलौर में आयोजित शहरी अधिशासन की राष्ट्रीय सभा

प्रतिभागियों की सूची

भारत सरकार

1. श्री अभिजीत सेनगुप्ता, सचिव, भारत सरकार
2. प्रोफेसर एम.गोविंदराव, राष्ट्रीय लोक वित्त एवं नीति संस्थान
3. श्री एम. राजामणि, संयुक्त सचिव, शहरी विकास मंत्रालय
4. श्री पी.के. मोहंती, संयुक्त सचिव, आवास और शहरी निर्धनता उन्मूलन मंत्रालय
5. श्री आर.एन. घोष, प्रधान निदेशक, नियंत्रक और महा लेखापरीक्षक
6. श्री के.पी. कृष्णन, संयुक्त सचिव, वित्त मंत्रालय

राज्य सरकार

7. श्री गौरव गुप्ता, विशेष आयुक्त, बंगलौर महानगरपालिका (बीएमपी)
8. श्री संजय जाजू, नगरनिगम आयुक्त, हैदराबाद
9. श्री विनय कोहली, अध्यक्ष, मेघालय विद्युत विनियामक आयोग
10. श्री जावेद अख्तर, प्रबंध निदेशक, कर्नाटक शहरी अवसरंचना विकास वित्त निगम (केयूआईडीएफसी)
11. श्रीमती लक्ष्मी वेंकटाचलम, प्रधान सचिव, कर्नाटक सरकार
12. श्री के. जयराज, आयुक्त, बीएमपी
13. श्री वसंत राव, उपायुक्त, बीएमपी
14. श्री ए. रवीन्द्र, उपाध्यक्ष, राज्य आयोजना बोर्ड, कर्नाटक
15. श्री एम. के. शंकरलिंगे गौडा, आयुक्त, बंगलौर विकास प्राधिकरण
16. श्री मलय श्रीवास्तव, सचिव शहरी विकास, मध्य प्रदेश सरकार

अनुबंध-I (6) जारी

17. श्री एन.सी मुनियप्पा, अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, बंगलौर जलापूर्ति और मल-जल निकासी बोर्ड (बीडब्ल्यूएसएसबी)
18. श्री पी.बी. रामामूर्ति, अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, कर्नाटक शहरी जलापूर्ति और मल-जल निकासी बोर्ड
19. श्री पी. वेंकटरम्मा शेट्टी, मुख्य अभियंता, केयूडब्ल्यूएसएसबी
20. श्री पी. मणिवन्नन, आयुक्त, हुबली धारवाड़ नगरपालिका
21. श्री आनंद सिंह, परियोजना निदेशक, केरल सरकार
22. श्री पी.आर. बाविस्कर, मुख्य कार्यकारी अधिकारी, कोलकाता महानगर विकास प्राधिकरण
23. श्री एम.एन. रेड्डी, अपर आयुक्त, यातायात, बंगलौर पुलिस
24. श्री उपेन्द्र त्रिपाठी, प्रबंध निदेशक, बंगलौर महानगर परिवहन निगम (बीएमटीसी)
25. श्री अशोक दलवई, आयुक्त, उड़ीसा सरकार
26. श्री राजीव शर्मा, महानिदेशक, सुअधिशासन केन्द्र, हैदराबाद
27. श्री के.एन. खावरे, संयुक्त सचिव, महाराष्ट्र सरकार
28. श्री आनंद मोहन, परियोजना निदेशक, शहरी विकास, राजस्थान सरकार

अन्य

29. श्री के.सी. शिवरामकृष्णन ,भारतीय प्रशासनिक सेवा (सेवानिवृत्त)
30. श्री एन.पी. सिंह, भारतीय प्रशासनिक सेवा (सेवानिवृत्त)
31. श्रीमती शीला पटेल, क्षेत्र संसाधन केन्द्र संवर्धन सोसायटी, मुंबई
32. डा0 सैमुएल पॉल, लोक कार्य केन्द्र, बंगलौर
33. डा0 एन. शेषगिरी, संस्थापक महानिदेशक, एनआईसी
34. श्री ई.एफ.एन. रिबेरियो, शहरी कार्य के विशेषज्ञ
35. प्रोफेसर गीता सेन, आईआईएम, बंगलौर

36. श्री अश्विन महेश, गवर्नमेंट फाउंडेशन
37. श्री सतीश कुमार, निदेशक, दिल्ली मेट्रो
38. श्रीमती कात्यायिनी क्षमाराज, "सिविक", बंगलौर
39. श्रीमती मंगला नागराज, "सिविक"
40. श्रीमती शमीम बेगम, मेयर, नांदेड़
41. श्री श्रीनिवास चारी वेदाला, निदेशक, भारतीय प्रशासनिक स्टाफ कालेज
42. श्री विनय सिन्हा, वास्तुविद
43. श्री गुल्फर सेजाइरिली, एशियाई विकास बैंक (एडीबी)
44. श्री आर.एस. मुरली, प्रबंध निदेशक, एनसीआर कंसल्टेंट्स लिमिटेड
45. श्री एस.आर. रामानुजम, निदेशक, शहरी पद्धति, क्राइसिल
46. श्री अशोक श्रीवास्तव, एडीबी
47. श्री क्रिस हेमन्स, विश्व बैंक
48. श्री समीर कुमार, मेयर, मुजफ्फरपुर
49. श्री धर्मराज, वास्तुविद, एम्पायर
50. श्री आर. सुन्दरम, वास्तुविद

प्रशासनिक सुधार आयोग

51. श्री एम. वीरप्पा मोइली, अध्यक्ष, प्रशासनिक सुधार आयोग
52. श्री वी. रामचंद्रन, सदस्य, प्रशासनिक सुधार आयोग
53. डा0 ए.पी. मुखर्जी, सदस्य, प्रशासनिक सुधार आयोग
54. श्रीमती विनीता राय, सदस्य-सचिव, प्रशासनिक सुधार आयोग

अनुबंध-I (7)

दिनांक 20 और 21 सितम्बर, 2006 को आईआईएम, बंगलौर में आयोजित शहरी अधिशासन पर राष्ट्रीय सभा

कार्य दल की सिफारिशें

राष्ट्रीय सभा में प्रतिभागितयों को शहरी अधिशासन से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर चर्चा करने के लिए छः समूहों में विभाजित किया गया था। संबंधित समूहों की मुद्दे-वार सिफारिशें निम्नानुसार हैं :

I. समग्र शहरी अधिशासन : ढांचा और क्षमता निर्माण

- संविधान की बारहवीं अनुसूची में स्थानीय शासन को कार्यों की सुपुर्दगी कार्यों, पदाधिकारियों और निधियों पर स्पष्ट समनुदेशन से की जानी चाहिए।
- मुख्य नगरपालिका सेवाएं शहरी स्थानीय निकायों के पास रहनी चाहिए।
- स्थानीय शासन के प्रति सेवा सुपुर्दगी एजेंसियों की जिम्मेवारी सुनिश्चित की जानी चाहिए।
- विभिन्न सेवा सुपुर्दगी एजेंसियों के बीच सुनिर्धारित समन्वय कार्यतंत्र होना चाहिए।
- निर्वाचित प्रतिनिधियों को उनके कार्यों के स्पष्ट सीमांकन सहित अपने चुनाव क्षेत्र के प्रति जिम्मेवार होना चाहिए।
- वार्ड स्तर से नीचे उपयुक्त संरचना में नागरिकों की भागीदारी बेहतर सेवा सुपुर्दगी के लिए मुख्य अवयव है।
- महानगर आयोजना समिति/जिला आयोजना समिति के माध्यम से क्षेत्रीय मंच स्थापित किया जाना चाहिए। वर्तमान विकास प्राधिकरण महानगर आयोजना समिति/जिला आयोजना समिति के लिए सचिवालय के रूप में कार्य कर सकते हैं।
- आयोजना सुविधाजनक बनाने और उसके द्वारा सेवा सुपुर्दगी सुधारने के लिए सूचना प्रबंध के लिए सम्मिलित प्रौद्योगिकी महत्वपूर्ण है।
- इन संस्थाओं को व्यावसायीकृत करने के लक्ष्य से वर्तमान प्रौद्योगिकियों और प्रवृत्तियों का सामना करने के लिए शहरी स्थानीय निकायों में प्रशासकों और कार्मिकों में उपयुक्त क्षमता निर्मित की जानी चाहिए।

अनुबंध-I (7) जारी

- शहरी स्थानीय निकायों को कार्मिकों की भर्ती और उचित प्रोत्साहन तथा दंड के साथ उनके कार्यनिष्पादन को मापने के लिए स्वायत्तता होनी चाहिए।

II. नगरपालिका वित्त-व्यवस्था

- इस क्षेत्र में मुख्य चुनौतियां हैं (i) उन मुख्य कार्यों का निर्णय लेना, जिनके लिए समतुल्य वित्त की अपेक्षा है, (ii) पूंजीगत व्यय के निधिकरण के लिए वित्त के नए स्रोतों को अभिज्ञात करना, और (iii) स्थानीय स्तर के राजस्व सुधारों को प्रोत्साहित करना।
- तदनुसार, इस प्रयोजनार्थ अपेक्षित मुख्य परिवर्तन हैं (i) स्थानीय निकायों के कार्यों का यौक्तिकीकरण, (ii) सेवा सुपुर्दगी सुधारने के लिए प्रौद्योगिकी एकीकरण, (iii) भागीदारिता का दृष्टिकोण अपनाना, और (iv) क्षमता निर्माण।
- मॉडल नगरपालिका कानून में यथा अनुशंसित शहरी स्थानीय निकायों में वित्त व्यवस्था और सेवा स्तरों की प्रकटन पद्धति का अनुपालन किया जाना चाहिए।
- जलापूर्ति और मल-जल निकासी, सड़क, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन, भूमि संबद्ध मुद्दे और जन स्वास्थ्य तथा पर्यावरण (अनुवीक्षण, निवारक उपाय) शहरी स्थानीय निकायों के मुख्य कार्य होने चाहिएं।
- मोटर वाहन कर, व्यावसायिक कर, मनोरंजन कर, प्रवेश कर और अन्य किसी स्थानीय रूप से संगत कर जैसे राजस्व के मौजूदा स्रोतों के अतिरिक्त, मूल्य वर्धित कर पर अधिभार और सेवा कर के हिस्से को इन स्थानीय निकायों के लिए राजस्व का अतिरिक्त स्रोत माना जा सकता है।
- नए स्रोतों को राज्य स्तर पर संग्रहित किया जाना चाहिए; तथापि, प्रत्येक स्थानीय निकाय अपने क्षेत्र में संग्रहित हिस्से के लिए हकदार है। ऐसे संग्रहण का अधिकांश स्थानीय निकायों को हस्तांतरित किया जाना चाहिए।
- इस प्रकार संग्रहित अल्प परंतु महत्वपूर्ण भाग का प्रयोग राज्य में विभिन्न स्थानीय निकायों के बीच समतुल्यीकरण के लिए किया जाना चाहिए।

अनुबंध-I (7) जारी

- जब एक बार स्थानीय निकायों के लिए कराधान के अधिकार क्षेत्र का निर्णय कर लिया जाता है तब राज्य को उन्हें मॉडल नगरपालिका कानून में यथा संकल्पित उसके कार्यान्वयन के लिए पूर्ण स्वतंत्रता देनी चाहिए।
- नगरपालिका संपत्तियों के नवीकरण और संशोधन में मुकदमेबाजी से निपटने के लिए एक फास्ट ट्रैक कार्यतंत्र प्रदान किया जाना चाहिए। इन संपत्तियों का मूल्यांकन पूंजी मूल्य प्रणाली से संबद्ध किया जाना चाहिए ताकि स्थानीय निकायों द्वारा बाजार मूल्य पूर्णतः प्राप्त किया जा सके। एककालिक बिक्री की बजाए संपत्तियों से आवर्ती राजस्व सुनिश्चित करने के उपाय किए जाने चाहिएं।
- संपत्ति कर लगाने और संग्रहण में सुधार लाने की आवश्यकता है। सरल और विवेकाधिकार-मुक्त कर प्रणाली के लिए स्व-निर्धारण की प्रणाली अपनाई जानी चाहिए। छूट को धीरे-धीरे समाप्त किया जाना चाहिए और सरकारी संपत्तियों से भी समतुल्य कर संग्रहित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। आवधिक संशोधन सांविधिक रूप से लागू किया जाना चाहिए। प्रौद्योगिकी (एमआईएस और जीआईएस) का प्रयोग प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- स्थानीय निकायों को उचित प्रयोक्ता प्रभार कार्यतंत्र कार्यान्वित करने के लिए स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। स्थानीय राजकोषीय उत्तरदायित्व अधिनियम (कर्नाटक अधिनियम) का प्रयोग करें और स्थानीय निकायों को सही स्तर निर्धारित करने दें।
- स्थानीय स्तर पर राजस्व संग्रहण प्रयासों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। राज्य हस्तांतरणों के भाग को स्थानीय स्तर पर संग्रहण कार्यनिष्पादन (राजस्व प्रोत्साहन अनुदान) से संबद्ध किया जाना चाहिए।
- नगरपालिका द्वारा उधार लेना निम्नलिखित कार्यतंत्र सहित प्रोत्साहित किया जाना चाहिए :
  - क्रेडिट रेटिंग के लिए प्रणाली
  - उधार लेने की सीमाओं के लिए दिशानिर्देश
  - चूक से निपटने के लिए राज्य-स्तर कार्यतंत्र

अनुबंध-I (7) जारी

- ये सभी सुधार निम्नलिखित सहित सुदृढ़ वित्तीय प्रबंध पर होने चाहिएं :
  - प्रोद्भवन आधारित दोहरी प्रविष्टि लेखाकरण सुधार
  - स्वतंत्र, आंतरिक और बाह्य लेखापरीक्षा
  - सांविधिक लेखापरीक्षा समानान्तर में होनी चाहिए
- निजी-सरकारी भागीदारी बढ़ाई जानी चाहिए। निम्नलिखित सहित परियोजना कार्यान्वयन और अनुरक्षण के लिए विशेष प्रयोजन साधन (एसपीवी)
  - वह स्पष्टता कि विशेष प्रयोजन साधन के पास क्या निहित किया जाएगा और स्थानीय निकाय के पास क्या रहेगा
  - व्यावसायिक प्रचालन और प्रबंध
  - स्थानीय निकाय द्वारा देखरेख (बोर्ड की भागीदारी के माध्यम से)
  - मुख्य सेवाओं में निजी-सरकारी भागीदारी अधिकतम करना
  - सार्वभौमिक सेवा दायित्व सुनिश्चित करना
  - निजी-सरकारी भागीदारी के बारे में काल्पनिक बातों को समाप्त करने के लिए जागरूकता उत्पन्न करना
- निजी-सरकारी भागीदारी के लिए एक संरचित कार्यतंत्र (कानून और विनियमन सहित) अपनाया जाना चाहिए।
- शहरी स्थानीय निकायों का बजटीय कार्य परिणामोन्मुखी और प्रभावोन्मुखी होना चाहिए।
- निधि आवंटन वार्ड विकास सूचकांक पर आधारित होना चाहिए।

III. शहरी सेवाएं और पर्यावरणीय मुद्दे

(क) शहरी निर्धनता

- यद्यपि अधिकांश निर्धन लोग गंदी बस्तियों में रहते हैं फिर भी हमें केवल गंदी बस्तियों में ही निर्धनता उन्मूलन हसतक्षेप संबद्ध करते हुए निर्धनों को अलग-थलग करने के विरूद्ध सुरक्षा करनी चाहिए।

अनुबंध-I (7) जारी

- सामान्य आवश्यकता जल और सफाई तथा अन्य बुनियादी सेवाएं हैं, परंतु इसे प्रत्येक समुदाय में और अधिक सुदृढ़ होना महत्वपूर्ण है।
- बुनियादी न्यूनतम की सहायता दी जा सकती है। अन्य राय यह भी व्यक्त की गई थी कि बुनियादी न्यूनतम निःशुल्क होना चाहिए।
- शहरी निर्धनों के लिए भूमि अन्य सुधारों के पूर्व पहली प्राथमिकता है और निश्चित भूमि अवधि नीति आवश्यक है।
- अतिक्रमण निर्धनों और धनवान दोनों द्वारा है और उनके स्थिरीकृत होने के पूर्व इनपर स्थानीय निकायों और बार्ड सभा तथा उप-वार्ड समितियों द्वारा ध्यान रखा जाना चाहिए।
- वार्ड समितियों द्वारा निर्धनों की भागीदारी सुनिश्चित करना।
- अगर कार्यक्रमों और नीतियों का काफी और समतुल्य विस्तार किया जाता है तो हम इस समस्या का समाधान कर सकते हैं।

(ख) सेवाएं और उपयोगिताएं

- विभिन्न शहरी स्थानीय निकायों के लिए विभिन्न मॉडल परंतु एक समन्वयकारी और लागू करने के प्राधिकार सहित।
- विशिष्ट एजेंसियों की कल्पना स्वीकार की गई थी परंतु इनका प्रयोग परिप्रेक्ष्य के अनुसार किया जाना आवश्यक है।
- शहरी स्थानीय निकाय की संरचना से संबद्ध, आयोजना में भागीदारी, कार्यान्वयन और लागू करना तथा ग्राहक संस्कृति मन में बैठाना।

(ग) जलापूर्ति और सफाई

- आंतरायिक, खराब किस्म, असमान और खराब मूल्यनिर्धारित सेवाएं शहरी जलापूर्ति से संबंधित चिन्ता के मुख्य क्षेत्र हैं।
- गुणवत्तापूर्ण सूचना, बेहतर प्रबंधन, स्पष्ट जिम्मेवारी, सततता, स्पष्ट कार्यनिष्पादन संकेतक इस क्षेत्र में सुधारों के लिए साधन हैं।
- उपर्युक्त पर ध्यान दिए जाने के साथ चौबीस घंटे की जलापूर्ति अपेक्षित है।

अनुबंध-I (7) जारी

- यथार्थ मूल्यनिर्धारण और निर्धनों को परस्पर आर्थिक सहायता के समर्थन सहित जैसा प्रयोग करें वैसा भुगतान करें के आधार पर बेहतर मांग प्रबंधन आवश्यक है।
- विश्वास योग्य विनियमन आवश्यक है।

(घ) ठोस अपशिष्ट प्रबंधन

- व्यापकता, क्षमता और अपशिष्ट की उपयोगिता की कमी।
- सामान्यतः निस्सारियों के लिए कोई समाधान नहीं।
- निर्धनों के लिए सुरक्षोपाय और मॉडल सहित निजी-सरकारी भागीदारी के लिए अच्छी संभावना।

(ङ) जन स्वास्थ्य

- शहरी स्थानीय निकायों के लिए निवारक और राज्य के लिए नैदानिक सेवाएं।
- इस क्षेत्र में निर्वाचित प्रतिनिधियों तथा मुश्किल से नागरिक समाज से कोई भागीदारी की जाती है।

IV. शहरी आयोजना, निर्धनता और गंदी बस्तियां

- आयोजना के तीन स्तर : राष्ट्रीय आयोजना के लिए शीर्ष स्तर, क्षेत्रीय स्तर और संवैधानिक अधिदेश को पूरा करने के लिए अंततः नगर समूह स्तर।
- आयोजना मशीनरी को निम्नलिखित उपायों के साथ दिलचस्पी रखने वाले निजी संगठनों के लिए मुक्त किया जा सकता है :
  - निर्धारित योग्यता
  - वर्णित क्षेत्रों और मदों के लिए आयोजना बनाई जाए
  - नियत पारिश्रमिक और समय-सीमा
- स्थानीय आवश्यकताएं अभिव्यक्त करने और शहरी स्थानीय निकायों द्वारा कार्यकलाप सुनिश्चित करने के लिए वार्ड समितियों को मंच प्रदान करने हेतु कार्यतंत्र गठित किया जाना चाहिए।

अनुबंध-I (7) जारी

- मध्यस्थ स्तर के आयोजना प्राधिकारियों को अंतः नगरीय और परिधीय-शहरी आवश्यकताओं को ध्यान में रखना है।
- जिला आयोजना समितियों/महानगर आयोजना समितियों को योग्य विशेषज्ञों की पहले से मौजूद सूची से विशेषज्ञों को शामिल करना है।
- शहरी समूहों और परिधीय-शहरी क्षेत्रों के बीच परस्पर-निर्भरता का विशेष समूह द्वारा अनुवीक्षण किया जाना है।
- शहरी योजना के निम्नलिखित अनिवार्य घटक हैं :
  - शहरी क्षेत्र की भौगोलिक परिसंपत्तियों का निर्धारण-एक यथार्थ जीआईएस तैयार करना।
  - आर्थिक और गुणवत्तापूर्ण जीवन निर्वाह के लिए अंचल निर्धारित करना।
  - इष्टतम यातायात प्रवाह पैटर्न
  - अपशिष्ट निपटान माध्यम और क्षेत्र
  - पुनरूद्धार किए गए आवास व्यवस्था के लिए क्षेत्रों को पुनः विकसित करना।
- भूमि के रिकार्ड की विश्वसनीयता निर्धारित की जानी चाहिए और उसे जनता के लिए मुक्त रखा जाना चाहिए।
- जन सभा और भूमि संबद्ध सूचना का रख-रखाव - मानचित्र, भूमि-प्रयोग, भूमि रिकार्ड/स्वामित्व, संदर्शी योजना आदि प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- भूमि प्रयोग पैटर्न में केवल अपीलीय उच्चतर निकाय-अगर आवश्यक हो सार्वजनिक सुनवाई प्रक्रिया के माध्यम से परिवर्तन की अनुमति दी जानी चाहिए।
- किसी शहरी क्षेत्र में न्यूनतम जीवन स्तर जीने के लिए मानक निर्धारित किए जाने चाहिएं। न्यूनतम निर्धारित मानक की तुलना में कमियों का नियमित अंतरालों पर सर्वेक्षण और निर्धारण किया जाना चाहिए।
- आवास, शिक्षा, चिकित्सा और मनोरंजनात्मक स्थान के लिए प्रावधान सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

अनुबंध-I (7) जारी

- भूमि के हस्तांतरण और पंजीकरण पर एक विशेष उपकर लगाया जाना चाहिए, जिसका प्रयोग विशेष रूप से कमजोर वर्ग में पुनर्वास/सुविधाओं के उन्नयन के लिए किया जा सकता है।
- उन नैगम निकायों, जो शहरी निर्धनता उन्मूलन के लिए कार्य करते हैं, को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।
- वर्षा जल कृषि, हरित क्षेत्र संरक्षण और उन्नयन, उत्सर्जन नियंत्रण, ऊर्जा क्षमता, आपदा और सुरक्षा विशेषताएं तथा मानव-निर्मित अथवा प्राकृतिक स्रोतों से खतरों को समाप्त करना पर्यावरण से संबंधित महत्वपूर्ण पहलू हैं।

V. शहरी परिवहन आयोजना और यातायात प्रबंध

- अन्य अधिकांश क्षेत्रों के समान, शहरी परिवहन के क्षेत्र में भी उपचार से बेहतर निवारण है। पहले अवसंरचना प्रदान करें और तब उसकी उपलब्धता के अनुसार वृद्धि विनियमित करें।
- शहरी परिवहन क्षेत्र में केवल आपूर्ति पक्ष का समाधान ही पर्याप्त नहीं होगा। यात्रा मांग प्रबंधन की भी अपेक्षा है।
- हमारे अधिकांश महानगरों में शहरी परिवहन के क्षेत्र में अव्यवस्था शहरी आयोजना की कमी और उसे अप्रभावी रूप से लागू करने का परिणाम है।
- शहरी क्षेत्रों में उच्च गुणवत्ता वाला परिवहन नागरिकों के जीवन स्तर में वृद्धि करता है, विकास के लिए आर्थिक निवेश आकर्षित करने में सहायता करता है और नगरों को प्रतिस्पर्धी तीक्ष्णता प्रदान करता है।
- शहरी विकास मंत्रालय, भारत सरकार ने अप्रैल, 2006 में एक **राष्ट्रीय शहरी परिवहन नीति** तैयार की है। इस नीति का मुख्य उद्देश्य बढ़ते हुए शहरी क्षेत्र के लिए परिवहन के सुरक्षित, वहनीय, आरामदायक, तीव्र, विश्वसनीय और सतत साधनों का प्रावधान सुनिश्चित करना है। इसे अन्यों के अतिरिक्त निम्नलिखित द्वारा प्राप्त किया जाना है :
  - शहरी परिवहन को एक परिणामी आवश्यकता मानने की बजाए शहरी आयोजना के चरण पर एक महत्वपूर्ण पैरामीटर के रूप में शामिल करना।
  - बहु-मॉडल सार्वजनिक परिवहन प्रणालियों की स्थापना पर ध्यानकेन्द्रण।

अनुबंध-I (7) जारी

- परिवहन प्रणालियों की आयोजना और प्रबंधन में वर्धित समन्वय के लिए संस्थात्मक कार्यतंत्र का प्रावधान।
- यातायात प्रबंधन में अभिज्ञ परिवहन प्रणालियों का शुभारंभ।
- स्वच्छ प्रौद्योगिकियों के प्रयोग का संवर्धन और प्रदूषण स्तर में कमी।
- सुधरी हुई सड़क सुरक्षा सुनिश्चित करना।
- संसाधन के रूप में भूमि का पता लगाकर शहरी परिवहन अवसंरचना के लिए वित्तीय साधन जुटाना।

- सार्वजनिक परिवहन प्रणाली को सतत बनाए रखने के लिए सार्वजनिक परिवहन प्रणालियों को भ्रष्टाचार और चोरी से मुक्त करना तथा उन्हें नियमित अंतरालों पर अथवा कम से कम जब भी ईंधन के मूल्य बढ़ाए जाते हैं, किराए को संशोधित करने में सक्षम बनाना वांछनीय है। सभी नीतियों में निजी की तुलना में सार्वजनिक परिवहन को अधिमानता दी जानी चाहिए।

(क) शहरी परिवहन की समस्याओं के मुख्य कारण

- भारत में परिवहन आयोजना में विशेषज्ञता का अपर्याप्त प्रयोग
- नगरों में परिवहन की मांग कम करने पर भूमि प्रयोग आयोजना के प्रभाव का अनुमान नहीं लगाया जाता है।
- आयोजना के अभाव में नगरों की अव्यवस्थित वृद्धि
- मास्टर योजनाओं की तुलना में वास्तविक विकास की अननुरूपता
- सड़कों की अपर्याप्त वहन क्षमता को नहीं माना जाता
- नए विकास का परिवहन प्रभाव विश्लेषण बिरले ही किया जाता है
- बहुमंजिले और वाणिज्यिक भवनों को निर्माण लाइसेंस अव्यवस्थित रूप से दिया जाना
- संपूर्ण रूप से त्रुटिपूर्ण पार्किंग मानदंड
- वाहनों की सड़कों पर पार्किंग
- पैदल यात्रियों के फुटपाथ और साइकिल के मार्ग उपलब्ध नहीं है
- शहरी परिवहन पर संस्थात्मक ध्यानकेन्द्रण की कमी आदि।

अनुबंध-I (7) जारी

(ख) महानगरीय परिवहन समस्याओं से निपटने के उपाय

(i) शहरी रूप और खाका (लेआउट)

- नगरों में परिवहन की मांग उसके रूप, खाके (लेआउट), भूमि प्रयोग पैटर्न तथा जनसंख्या द्वारा अत्यधिक प्रभावित होती है।
- रेखीय नगर (मुंबई) अन्यों की तुलना में अधिक मार्ग-अनुकूल होते है।
- ऐसे नगरों की लंबाई के साथ यातायात की मांग का प्रबंधन बस/रेल परिवहन प्रणालियों के माध्यम से और चौड़ाई में बस, व्यक्तिगत परिवहन, साइकिल आदि द्वारा किया जा सकता है।

(ii) भूमि प्रयोग नीति : यात्रा की मांग कम करने के साधन

- रिहायशी खाके (लेआउट) (किराए के आवास) से कार्यस्थल और शिक्षा केन्द्रों की समीपता परिवहन की मांग काफी कम करेगी।
- ऊपरी तल पर रिहायशी आवास और भूतल/प्रथम तल पर कार्यालय/दुकानों को संयोजित करते हुए बहुमंजिले भवनों में मिश्रित भूमि प्रयोग भी परिवहन की मांग कम कर सकता है।
- उप-शहरी रेलवे स्टेशनों और मुख्य बस टर्मिनलों के ऊपर हवाई स्थलों का विकास।
- बहु-नाभिकीय शहरी रूपों के आधार पर नगरों का विकास।
- बढ़ते हुए नगरों के लिए नए मुख्य मार्ग की सड़कों की योजना बनाते समय स्थानीय यातायात और साइकिल चालकों की मांग पूरी करने तथा सड़कों को भविष्य में चौड़ा करने के लिए स्थान आरक्षित रखने के लिए सर्विस सड़क और साइकिल मार्ग अत्यंत आवश्यक है।
- मेगा नगरों के लिए भविष्य में निर्मित किए जाने वाले विशिष्ट बस मार्ग और रेल परिवहन के लिए भूतल सतह पर मार्गाधिकार के आरक्षण में भविष्य में भारी राशि की बचत करने की संभावना है।

अनुबंध-I (7) जारी

(iii) शहरी परिवहन को समवर्ती सूची में रखना

'शहरी परिवहन' को हमारे संविधान की सातवीं अनुसूची के तीन विधायी सूची में किसी एक में भी स्थान प्राप्त नहीं है। शहरी परिवहन को "समवर्ती सूची" में रखने से संघ सरकार निम्नलिखित में समर्थ होगी :

(क) महानगरों में अन्य साधनों के अतिरिक्त रेलवे, सड़क और जल परिवहन को शामिल करते हुए व्यापक बहु-मॉडल शहरी परिवहन अधिनियम अधिनियमित करना, और

(ख) एकीकृत किराया संरचना तैयार करते हुए और विभिन्न साधनों के लिए साझा टिकट काटने के उपकरण प्रदान करते हुए अंतःमॉडल अंतरण के लिए व्यवस्था करके, शहरी परिवहन परियोजनाओं के वित्तपोषण के लिए कराधान और अन्यथा संसाधन जुटाकर एकीकृत आयोजना और शहरी परिवहन के सभी साधनों के समन्वय के लिए ऐसे नगरों में संयुक्त महानगर परिवहन प्राधिकरणों (यूएमटीए) की स्थापना करना। भूमि प्रयोग-परिवहन एकीकरण, परिवहन प्रणाली से उत्पन्न हो रहे पर्यावरणीय प्रदूषण के नियंत्रण और ऊर्जा संरक्षण आदि जैसे अन्य कार्य भी प्रस्तावित विधान के माध्यम से "यूएमटीए" को सौंपे जा सकते हैं।

(iv) अपेक्षित संगठनात्मक और संस्थात्मक परिवर्तन

- राष्ट्रीय स्तर पर महानगरीय परिवहन मुद्दों की सुधरी हुई आयोजना और समन्वय के लिए केन्द्रीय शहरी विकास मंत्रालय के अधीन परिवहन योजनाविदों, परिवहन अर्थशास्त्रियों और अन्य विशेषज्ञों द्वारा नियंत्रित एक पृथक शहरी परिवहन विभाग का सृजन।
- प्रत्येक 5 लाख अथवा अधिक की जनसंख्या सहित कम से कम 10 श्रेणी-I अथवा 2 श्रेणी-2 नगरों वाले राज्यों में राज्य शहरी परिवहन निदेशालय का सृजन। ये निदेशालय राज्य में सभी श्रेणी-I नगरों में यातायात और परिवहन आयोजना का कार्य करेंगे तथा संघ सरकार के साथ महानगरों के लिए अपनी योजनाओं का समन्वय करेंगे।
- देश में एक मिलियन से अधिक (प्रारंभ में 2 मिलियन से अधिक) वाले सभी नगरों में केंद्रीय कानून द्वारा यूएमटीए की स्थापना।
- शहरी जन मार्ग निगमों (यूएमटीसी) जैसे नैगम साधनों के माध्यम से जन परिवहन प्रणालियां प्रचालित करना।
- सभी नगर निगमों में यातायात इंजीनियरी कक्ष स्थापित करना।

अनुबंध-I (7) जारी

- सभी नगरों में इंजीनियरों विभागों के लिए नगरपालिका पुलिस बल का सृजन :
  - नगर यातायात को विनियमित करना (राज्य पुलिस के बदले)
  - सड़कों पर अतिक्रमण रोकना
  - पार्किंग विनियमन और नगर में मोटरयुक्त पार्किंग ; और
  - अनधिकृत निर्माण को नियंत्रित करने/तोडकर गिराने तथा अतिक्रमित भूमि की वापसी लेने में नगरपालिका निकाय के इंजीनियरी विभाग की सहायता करना।

(v) महानगरीय परिवहन समस्याओं से निपटने के लिए दीर्घावधिक उपाय

1. शहरी बस

- ट्रक के चेसिस पर भारत में निर्मित मौजूदा नगरीय बसें शहरी परिवहन के उपयुक्त नहीं हैं। इन्हें "शहरी बस" से प्रतिस्थापित किया जाना आवश्यक है, जिनमें निम्नलिखित विशेषता है :
  - तल की निम्नतर ऊंचाई
  - चौड़े दरवाजे
  - हल्की बॉडी
  - पावर स्टियरिंग सहित चालक के लिए बेहतर सुविधाएं; और
  - कम गति पर कम ईंधन की खपत करने वाला सक्षम ईंजन।
- विशिष्ट ग्रेड पृथक्कृत बस मार्ग से शहरी बस 15000-25000 पीपीएचपीडी की प्रणाली क्षमता प्रदान कर सकती है, जो मध्यम आकार के नगरों में व्यस्त मार्गों पर संभावित यातायात भार है।

2. मोनो-रेल

- मोनो-रेल की 10000-15000 पीपीएचपीडी की प्रणाली क्षमता होती है।
- यद्यपि, भारतीय दशाओं में मोनो-रेल की यथार्थ लागत नहीं निकाली गई है, फिर भी एक सामान्य लागत अनुमान प्रति किलोमीटर 100 करोड़ रुपए का आंकड़ा दर्शाता है।
- मोनो-रेल उपयुक्त यातायात दशाओं के अधीन हमारे कुछ महानगरों में कतिपय मार्गों के लिए अथवा मौजूदा मेट्रो लाइनों की फीडर प्रणालियों के लिए उपयुक्त हो सकती है।

अनुबंध-I (7) जारी

3. लाइट रेल मार्ग (एलआरटी) प्रणाली

- पचास के दशक के मध्य में विकसित लाइट रेल प्रणाली पारम्परिक ट्राम कार और आधुनिक मेट्रो के बीच एक संश्लेषण है और सामान्यतया 30000 से 45000 पीपीएचपीडी के बीच प्रणाली क्षमता प्रदान कर सकती है।
- इस प्रणाली में सर्वाधिक रूप से पृथक्कृत अथवा विशिष्ट ट्रैक पर चालित केवल 8-10 टन धुरी (एक्सल) भार के साथ हल्के वजन के वाहनों की छोटी रेल का प्रचालन शामिल है।
- एलआरटी भारत में 10-30 लाख के बीच की जनसंख्या वाले नगरों में कुछ गलियारों (मार्गों) पर विद्यमान यातायात की दशाओं के उपयुक्त होगा।

4. बस तीव्र मार्ग (बीआरटी) प्रणाली

- बीआरटी प्रणाली की मुख्य विशेषताएं, जो इसे सामान्य बस सेवा से अलग करती है, निम्नानुसार हैं :
  - बस के पृथक्कृत लेन
  - पूर्वदत्त/स्वचालित टिकट देने की प्रणाली
  - घिरे हुए बंद मेट्रो के समान स्टेशन
  - प्लेटफार्म की सतह से चढ़ना
  - ट्रंक और फीडर प्रणाली सहित मार्ग पुनर्गठन
  - गुणवत्तापूर्ण सेवा संविदाकरण
  - उच्च गुणवत्ता वाली बस सेवा की ब्रांडिंग और विपणन
  - बीआरटी बसें उच्च गति और उच्च आवृत्ति पर चल सकती हैं
  - "बोगोटा" नगर में बीआरटी बसें 20,000 पीपीएचपीडी से अधिक का वहन कर रही हैं
  - भारत में अहमदाबाद नगर चयनित मार्गों (मार्च, 2006) पर शीघ्र ही बीआरटी बसें प्रारंभ करने की योजना बना रहा है।

अनुबंध-I (7) जारी

5. जन तीव्र मार्ग (एमआरटी) प्रणाली

- >45000 पीपीएचपीडी भार सहित यातायात गलियारे के लिए, उप-नगरीय ईएमयू अथवा उत्थापित या भूमिगत मेट्रो वाली उच्च क्षमता की रेलवे प्रणाली सर्वाधिक प्रभावी समाधन होगी।
- भारत में "ग्रेड पर", उत्थापित और भूमिगत मेट्रो प्रणालियों की वर्तमान मूल्य पर समग्र लागत 1:3.5:10 के समानुपात में अनुमानित की गई है। उत्थापित और भूमिगत दोनों प्रणालियां उच्च लागत (यद्यपि सक्षम) समाधान हैं, जिसे ऐसी प्रणालियों के निर्माण के लिए "ग्रेड पर" विशिष्ट गलियारे की उपलब्धता के अभाव में स्वीकार किया जाना चाहिए।
- उपर्युक्त से यह भी पता चलता है कि तीव्र गति से बढ़ते हुए महानगरों के लिए भावी मेट्रो प्रणाली हेतु भूतल स्तर पर गलियारों का आरक्षण भूमिगत अथवा उत्थापित निर्माण की आवश्यकता से बचते हुए ऐसी प्रणालियां निर्मित करने पर भावी पीढ़ियों को होने वाली अत्यधिक लागत में बचत करेगा।
- बहुत कम पूंजी लागत से "ग्रेड पर" मेट्रो प्रणालियां अनुकूल यातायात दशाओं के अधीन वाणिज्यिक रूप से व्यवहार्य होना संभावित हैं यहां तक कि जहां उत्थापित अथवा भूमिगत प्रणालियां ऐसा होने में विफल होती हैं।
- विद्युत कर्षण और विशिष्ट ट्रैक पर चलने वाली एमआरटी प्रणालियां गैर-प्रदूषणकारी, उच्च गति वाली है और इसमें उच्च प्रणाली क्षमता (2 मिनट की गति प्राप्ति सहित 72,000 पीपीएचपीडी तक) होती है। तथापि, उत्थापित मेट्रो से ध्वनि प्रदूषण होता है और ये वास्तुविदिक रूप से बहुत ठीक नहीं होता।

(vi) शहरी स्थानीय निकायों में ई-गवर्नेंस

- *नागरिक की पहचान* : शहरी नागरिकों के पास सरकारी सेवाएं प्राप्त करने के लिए एक पहचान संख्या (आईडी) होनी चाहिए जैसा पहचान के लिए प्रयुक्त (एमएनआईसी) कार्यक्रम होता है। इसे अखिल भारतीय आधार पर योजनाबद्ध किए जा रहे अन्य बहु-प्रयोजनीय राष्ट्रीय पहचान कार्ड के अभिमुख होना चाहिए।

अनुबंध-I (7) जारी

- क्षमता निर्माण के लिए नीति, सुविधा, पुनःसंरचना प्रणाली, संगठन विकास, प्रशिक्षण और ज्ञान प्रबंधन के क्षेत्रों को शामिल करने हेतु सभी हितधारकों पर बल देना अपेक्षित है। समुचित क्षमता के बिना अच्छा शहरी प्रबंधन अप्राप्य है। इसलिए, समय श्रृंखला, मौजूदा और पूर्वानुमानित क्षमताओं और उनके उपयोग के वास्तविक अनुभव पर एक व्यापक आंकड़ा आधार के सृजन के लिए उच्च प्राथमिकता देना अनिवार्य है। इसकी विशिष्टता व्यापक क्षेत्र प्ररूपों, गहन आंकड़ों, समयबद्धता की आवश्यकता, परितुलन, वर्तमान और पूर्वानुमानित क्षमता की कमियों पर सूचना सहित विश्लेषण और सूचना के प्रचार द्वारा परिलक्षित होती है। इसके अतिरिक्त, ऐसी कमियों के आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक प्रभाव के कारण एक कम्प्यूटर नेटवर्क आधारित दृष्टिकोण की दृढ़तापूर्वक सिफारिश की जाती है।
- परियोजनाएं, जहां प्रभावोत्पादकता की महत्वपूर्ण सीमा बढ़ जानी है वहां वृद्धिकारी दृष्टिकोण की बजाए अल्पतम संभव समय में परियोजना को प्रभावोत्पादकता की सीमा से ऊपर लाने के लिए मात्रात्मक उछाल का दृष्टिकोण लिया जाना होगा। ऐसा करने में परियोजना को वैश्विक मानकों की तुलना में बेंचमार्क करना अनिवार्य है।
- *प्रणाली विश्लेषण* : कोई भी अनुप्रयोग प्रारंभ करने के पूर्व संबंधित विभागों के शीर्ष प्रबंधन को शामिल करते हुए प्रणाली विश्लेषण के लिए पर्याप्त समय देना और प्रयास करना महत्वपूर्ण है।
- परियोजना के प्रारंभ से ही नागरिकों को प्रभारित करने के आधार पर सरकार की नागरिकों की परियोजनाओं की परस्पर क्रिया की प्रकृति को भली प्रकार तैयार किया जाना चाहिए। यह सेवा की गुणवत्ता और किस्म को निरंतर रूप से सुधारने के लिए परियोजना प्राधिकारियों को नागरिकों की पृष्ठभूमि जानकारी समर्थ बनाएगा क्योंकि यह सेवा को एक राजस्व अर्जन उपक्रम बनाता है। तथापि, प्रारंभिक चरणों के दौरान, आर्थिक सहायता पूर्णतः अथवा अंशतः की सीमा शामिल सेवा की प्रकृति और सेवा किए जा रहे नागरिकों के वर्ग से संबद्ध की जानी चाहिए।
- *सरकार से नागरिकों को सेवा सुपुर्दगी* : देश में कार्यान्वित कई ई-गवर्नेंस परियोजनाओं में सेवाओं की सुपुर्दगी की निजी-सरकारी भागीदारी के मॉडल प्रभावी हैं बशर्ते कि एस/डब्ल्यू/

अनुबंध-I (7) जारी

प्रणाली ऐसे संगठन द्वारा तैयार की जाती है, जो सेवा की निरंतरता प्रदान कर सके। चूंकि निजी-सरकारी भागीदारी मॉडल पर बहुत बाध्यकारी सेवाएं सुपुर्द की जानी प्रस्तावित हैं इसलिए यह संकल्पित है कि निजी-सरकारी भागीदारी मॉडल न केवल वाणिज्यिक रूप से व्यवहार्य होगा बल्कि जनता का दबाव और जनता की प्रत्याशाएं अपनी निरंतरता भी सुनिश्चित करेगी। जहां निजी एजेंसी सेवा की निरंतरता प्रदान करने में असमर्थ है वहां निजी एजेंसी द्वारा परियोजना पूरी किए जाने के बाद राष्ट्रीय सूचना केन्द्र (एनआईसी); उन्नत संगणन विकास केन्द्र (सीडैक), नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ स्मार्ट गवर्नेंस (एनआईएसजी) जैसे सरकारी क्षेत्र में संगठन और राज्य-स्तरीय संगठनों को निरंतरता सुनिश्चित करने के लिए संकट रोधी/परिवर्ती संगठनों के रूप में लाया जा सकता है। अधिमान्य निजी-सरकारी भागीदारी मॉडल बीओओ (निर्मित करें, स्वामित्व लें, प्रचालन करें) हैं, जो दीर्घावधिक संविदा आधार पर होगा। कई निजी-सरकारी भागीदारी परियोजनाओं, जहां पश्च सिरा एस/डब्ल्यू की जटिलताएं हैं , वहां प्रारंभिक चरण पर संकटरोधी संगठनों को लाना बेहतर है। ऐसे करार को राज्य के भीतर और बाहर विभिन्न वातावरण वाले शहरी निकायों में जानकारी के हस्तांतरण पर बल देना चाहिए।

- निजी सरकारी भागीदारी मॉडल में, जहां भी निजी-सरकारी भागीदारी के प्रचालक का कार्यकाल नियत है, वहां एनआईसी अथवा अन्य किसी संगठन को संकटरोधी के रूप में निरंतरता सुनिश्चित करने के लिए शामिल करते हुए निजी-सरकारी भागीदारी के प्रचालक को सक्रिय रूप से सॉफ्टवेयर विकसित कराना चाहिए। अच्छा सेवा स्तर करार (एसएलए) तैयार और लागू किया जाना होगा।
- छोटे और मध्यम नगरों के लिए शहरी अवसंरचना विकास स्कीम (यूआईडीएसएसएमटी) दिशानिर्देश, 2005 और शहरी विकास मंत्रालय द्वारा जारी परवर्ती संशोधनों को युक्तिसंगत तरीके से कार्यान्वित किया जा सकता है, अगर ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना की समय-सीमा के साथ समवर्ती रूप से दिशानिर्देशों, अनुरूपता और पृष्ठभूमि संबंधी जानकारी सहित ई-गवर्नेंस कार्यनीतियां तीव्र गति से कार्यान्वित की जाएं। शहरी भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) आधारित ई-गवर्नेंस का शहरी विकास मंत्रालय द्वारा न केवल राज्य सरकारों को निधियां जारी करने की पूर्व-शर्त के रूप में बल्कि ई-गवर्नेंस लागू करने में विभिन्न

अनुबंध-I (7) जारी

मानदंडों को पूरा करने के आधार पर प्रोत्साहन अनुदान देने की प्रणाली रखकर भी संवर्धन किया जाना चाहिए।

- शहरी ई-गवर्नेंस की क्षमता को जीआईएस और ई-गवर्नेंस के अन्य मुख्य साधनों पर शहरी विकास इंजीनियर और नगर योजनाविदों के बड़े पैमाने पर प्रशिक्षण की अपेक्षा होगी।
- प्रशासनिक प्रयोजनों तथा साथ ही नागरिकों को सूचित करने के लिए प्रयुक्त इलेक्ट्रॉनिक आंकड़े साझा मंच पर एक सह-संबद्ध डाटाबेस में रखे जाने चाहिएं।
- शहरी निर्धनों को बुनियादी सेवाओं (बीएसयूपी) पर परियोजना का कार्यान्वयन "जेएनएनयूआरएम" द्वारा समन्वित किया जा रहा है। ई-गवर्नेंस को शीघ्र शामिल करने से "जेएनएनयूआरएम" द्वारा बीएसयूपी परियोजना के कार्यान्वयन की क्षमता बढ़ेगी।
- इस दिशा में, "जेएनएनयूआरएम" परियोजना के लिए प्ररूप, डाटाबेस और मध्यवर्ती संघटकों के मानकीकरण पर विचार कर सकता है और इन मानकीकृत प्ररूपों और सॉफ्टवेयर के अधिकतम संभव सीमा तक अनुरूप बनने के लिए राज्य सरकार को प्रोत्साहित कर सकता है।
- ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान एक "ई-सिटी प्लेटफार्म" तैयार करने की दीर्घावधिक आवश्यकता है, जिसपर मानकीकरण और परस्पर-प्रचालनीयता सहित ई-गवर्नेंस प्रणालियां निर्मित की जा सकती हैं।
- निम्नलिखित आंकड़ा एकीकरण तकनीक "ई-सिटी प्लेटफार्म" के विकास के साथ सहवर्ती होगी : गेटवे, डाटा-वेयरहाऊस, फेडरेटेड डाटाबेस और मेडिएटर/रैपर प्रणालियां।
- "गरुड़" (अर्थात, राष्ट्रीय ग्रिड संगणन पहल) सभी हितधारकों को एकल स्थल प्रणाली प्रदान करते हुए शहरी ई-गवर्नेंस कार्यों को समर्थन प्रदान करेगी। इसके लिए, "जेएनएनयूआरएम" द्वारा और "गरुड़" परियोजना द्वारा अभिज्ञात कुछ प्रातिनिधिक नगर और शहरी "जेएनएनयूआरएम" के "गरुड़" परियोजना द्वारा बढ़ावा दी जाने वाली सीमा तक अनुरूप होंगे, और परवर्ती पूर्ववर्ती को समानुपातिक वित्तीय अंशदान करने पर विचार करेगी।
- भारतीय दूरसंचार विनियामक प्राधिकरण (टीआरएआई) दूरसंचार कंपनियों और सेलूलर आपरेटरों को नागरिकों तक शहरी ई-गवर्नेंस के लाभ पहुंचाने में समर्थ बनाने हेतु सेलूलर

टेलीफोन के अल्प संदेश प्रेषण सेवाओं (एसएमएस) की इस समय व्यवहार्य विशेषताओं का उपयोग करते हुए विनियामक और संवर्धनात्मक मानदंड निर्धारित करेगा।

- वीडियो-ओवर-डाटा, वॉयस-ओवर डाटा और स्ट्रीमिंग टेक्नोलॉजी के साथ ब्रॉड बैंड ग्रिड नेटवर्क पर हाल ही में प्रारंभ की गई कियोस्क की टेक्नोलॉजी द्वारा "ई-ऑफिस" की उभरती हुए संकल्पना से शहरी ई-गवर्नेंस लाभ प्राप्त कर सकता है ताकि शाखाएं जो केवल सूचना का प्रहस्तन करती हैं, को जनता की पूछताछ और लेन-देनों का निपटारा करने के लिए दूरस्थ मानवशक्ति रहित कार्यालय और पूरक कॉल-सेंटर आधारित प्रचालन बनाया जा सके।
- शहरी ई-गवर्नेंस में अनुसंधान और विकास के कुछ व्यावहारिक क्षेत्र अनिवार्य हैं। अनुभव ने दर्शाया है कि निम्नलिखित क्षेत्रों में तत्काल परियोजनाएं प्रारंभ की जानी चाहिए :
    - ➢ विशेषकर वेब से संबद्ध वेबसाइट की गोपनीयता/सुरक्षा
    - ➢ गुणवत्ता उन्नयन के लिए नागरिकों को पृष्ठभूमि संबंधी जानकारी समर्थ बनाने तथा साथ ही प्रबंधन, प्रौद्योगिकी, ज्ञान आधार और क्रमबद्ध सुधारों के रूप में अंशदान करने की इच्छा रखने वालों के लिए भी नगरपालिका/राज्य सरकार की वेबसाइट के माध्यम से नागरिकों की भागीदारी
    - ➢ प्रयुक्तता और विषयवस्तु की डिजाइन और प्रबंधन
    - ➢ मध्यवर्ती और कार्यनीतियों तथा सेवाओं की परस्पर-प्रचालनीयता का विकास
    - ➢ ई-गवर्नेंस के प्रत्यक्षतः संगत ग्रिड नेटवर्किंग; इटरनेंट-II आदि जैसी संचार प्रणालियां
- ई-गवर्नेंस को सुविधाजनक बनाने के लिए मॉडल नगरपालिका कानूनों और विनियमनों का एक सेट विकसित और सभी राज्यों को उपलब्ध किया जाना चाहिए।

अनुबंध-I (8)

शहरी अधिशासन पर प्रश्नावली
(I) शहरी अधिशासन एवं सेवाएं

1. समग्र शहरी अधिशासन ढांचा

1. संस्थात्मक ढांचा

1.1.1 74वें संवैधानिक संशोधन अपेक्षा करता है कि बारहवीं अनुसची के अनुसार 18 विषय शहरी स्थानीय निकायों को स्थानांतरित किए जा सकते हैं अब तक, यह देखा जा सकता है कि अभी भी बहुत से कार्य राज्य सरकारों, सरकार से सहायता प्राप्त निकायों इत्यादि द्वारा देखे जा रहे हैं। कार्यों के पूर्ण विकेन्द्रीकरण की सीमा के बारे में आपके क्या विचार हैं? 74वें संवैधानिक संशोधन के कार्यान्वयन से राज्य सरकारें किन चुनौतियों का सामना कर रही हैं? उनको कैसे दूर किया जा सकता है?

1.1.2 73वें संवैधानिक संशोधन में पंचायती राज संस्थाओं के 29 कार्यो को स्थानांतरित करने की परिकल्पना की गई है। इसमें वे कार्य शामिल है जिनका शहरी स्थानीय निकायों के लिए बारहवीं अनुसूची में उल्लेख नहीं किया गया है। कुछ राज्यों ने अतिरिक्त कार्य शहरी स्थानीय निकायों को स्थानांतरित कर दिए है (उदाहरण के लिए महाराष्ट्र में शिक्षा) क्या आप यह समझते हैं कि बारहवीं अनुसूची में दिए गए कार्यों की सूची को विस्तारित किया जाना चाहिए ताकि शहरी स्थानीय निकायों को और अधिक अधिकार मिल सकें? इस स्थानांतरण को करने में क्या चुनौतियां है, ताकि सभी कार्यों, निधियों तथा कर्मचारियों को स्थानांतरित किया जा सके।

1.1.3 विशेष प्रयोजन साधनों तथा सरकार से सहायता प्राप्त निकायों, जिनका सृजन किया गया है, स्थानीय सरकारों को स्थानांतरित किए जाने वाले सभी कार्यों के अभिगमन के लिए विश्वसनीय और व्यावहारिक मध्यवर्ती प्रक्रिया के रूप में आप क्या संस्थागत उपायों का सुझाव देंगे? इस पारगमन को अधिकार प्रदान करने हेतु राज्य सरकारों को क्या विशिष्ट कदम उठाने चाहिए?

1.1.4 बारहवीं अनुसूची में दर्ज कार्यों के अतिरिक्त लोक प्रशासन के बहुत से ऐसे क्षेत्र हैं जो अभी भी शहरी स्थानीय निकायों की परिधि से बाहर हैं। यातायात पुलिस, नगरनिगम संहिताओं का प्रवर्तन, प्रतिबंधित न्यायिक कार्य इत्यादि इसके उदाहरण

अनुबंध-I (8) जारी

हैं। आपके विचार में उनमें से नगरपालिकाओं द्वारा किन चुनौतियों का सामना किया जा रहा है? उक्त मामलों पर ध्यान देने के लिए किन उपायों को सृजित करने हेतु आप क्या सुझाव देंगे? उनको राज्य सरकारों द्वारा किस ढंग से स्थापित किया जा सकता है जिससे कि विद्यमान संस्थात्मक संरचनाओं को मान्यता मिल सके?

1.2 विकेन्द्रीयकृत आयोजना

1.2.1 74वें संवैधानिक संशोधन जिला आयोजना समिति तथा महानगर आयोजना समिति जैसे क्षेत्रीय योजना मंचों के सृजन की संकल्पना करता है, जो अपने अधिकार क्षेत्रों में शहरी एवं ग्रामीण स्थानीय शासन दोनों को एकीकृत कर सकते हैं। इन क्षेत्रीय ढांचों का कार्य अन्तःक्षेत्राधिकारिक मामलों को जोड़ना था जो कि विभिन्न स्थानीय शासनों तथा शहरी एवं ग्रामीण शासनों के बीच उपजे थे। अभी तक बहुत ही कम स्थापित किए गए हैं तथा उनमें से कुछ अभी भी अभीष्ट तरीके से चल रहे हैं। 74वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम में यथा अभिप्रेत जिला आयोजना समितियों एवं महानगर आयोजना समितियों के कार्यान्वयन में राज्य सरकारों को किन चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है? इन चुनौतियों का सामना कैसे किया जा सकता है?

1.3 प्रशासन

1.3.1 सर्वोत्तम पद्धतियां क्या हैं, जिनको अपनाया जा सकता है? भ्रष्टाचार को कम करने, प्रक्रिया पुनर्निर्माण लाइसेंस इत्यादि कार्यों को बाहय स्रोतों को सौंपना आदि?

1.3.2 शहरी अधिशासन से संबंधित कानूनों के प्रवर्तन की कमजोर स्थिति-प्रवर्तन को कैसे प्रभावशाली बनाया जाए?

1.3.3 ई-गवर्नेंस की शुरूआत के लिए किन प्रशासनिक बदलावों की अपेक्षा है?

2. विशिष्ट उप-विषय

2.1 शहरी निर्धनता

2.1.1 शहरी निर्धनता के बीच लाभार्थियों को पहचानने का क्या तरीका होना चाहिए? केरल जैसे राज्यों में निर्धनता रेखा से नीचे की पहचान के परम्परागत तरीके को एक-

अनुबंध-I (8) जारी

निर्धनता सूचकांक द्वारा बदल दिया गया है, जिससे भेदभाव के मामलों को ज्यादा आसानी से पहचाना जा सकता है।

2.1.2 शहरी निर्धनों को पहचानने की क्या चुनौतियां हैं, यह मानते हुए कि गंदी बस्तियों में रहने वाले सभी निर्धन नहीं हैं तथा सभी निर्धन गंदी बस्तियों में नहीं रहते हैं?

2.1.3 शहरी निर्धनों को किन सेवाओं की आवश्यकता है? उनकी सुपुर्दगी करने की क्या चुनौतियां हैं?

2.1.4 जन सेवाओं का, जब उन्हें शहरी निर्धनों को प्रदान किया जाता है, मूल्यनिर्धारण किस प्रकार किया जाना चाहिए? किस प्रकार की जांच पद्धति का सृजन करना चाहिए ताकि निधियों का सही प्रयोजनों के लिए प्रयोग किया जा सके तथा उससे वांछित परिणाम मिल सकें?

2.1.5 नगरपालिकाओं द्वारा गंदी बस्तियों के समूहों का प्रबंध किस प्रकार किया जाना चाहिए, विशेष रूप से ऐसे मामलों में जहां पर सरकारी अथवा निजी संपत्तियों के अतिक्रमण के उदाहरण हैं? नगरपालिकाओं और राज्य सरकारों को किन विश्वसनीय कार्यान्वित किए जाने योग्य दीर्घावधिक उपायों को सुनिश्चित करना चाहिए कि निर्धनों के लिए पर्याप्त निम्न आय वाले मकान उपलब्ध कराए जा सके तथा इनकी सुपुर्दगी की क्या विधि होनी चाहिए? इन उपायों के विकास में समुदाय, सरकार तथा बाजार की क्या भूमिका होनी चाहिए?

2.1.6 निर्धनों को उनके जीवन स्तर को प्रभावित करने वाले विभिन्न मुद्दों के बारे में निर्णय लेने में किस प्रकार भागीदार बनाया जा सकता है? इसे नगरपालिकाओं के निर्णय लेने में किस प्रकार एकीकृत किया जा सकता है?

2.1.7 निर्धन तथा धनी हितधारकों को शहर में किस प्रकार एक दूसरे के साथ, पूरी तरह से जोड़कर रखा जाना चाहिए? उक्त समूहों के बीच परम्परागत प्रतिकूलात्मक स्थितियों को विशेषकर, कार्यान्वयन करने योग्य तरीके से किस प्रकार कम किया जा सकता है?

अनुबंध-I (8) जारी

2.2 सेवाएं एवं उपयोगिताएं

2.2.1 सामान्य

2.1.1.1 कुछ शहरों में, कुछ नगरीय सेवाएं (जैसे कि पेयजल) विशिष्ट एजेंसियों द्वारा उपलब्ध करायी जाती हैं, जो कि शहरी स्थानीय निकायों के नियंत्रण से बाहर हैं। इसी प्रकार, स्वास्थ्य एवं शिक्षा जैसी सुविधाएं शहरी स्थानीय निकायों के साथ-साथ राज्य सरकार द्वारा भी उपलब्ध करायी जाती है। क्या ऐसा हो सकता है कि इन सभी सेवाओं के लिए शहरी स्थानीय निकायों को जिम्मेदार बनाया जा सके?

2.2.1.2 विभिन्न उपयोगिताओं के उचित प्रबंधन में हितधारकों को कैसे शामिल किया जा सकता है?

2.2.1.3 सामान्यतया, विभिन्न सेवाओं की गुणवत्ता संतोषजनक नहीं हैं। क्या ऐसे कोई सफल नमूने हैं जिन्होंने सेवा की गुणवत्ता के उन्नयन के लिए कार्य किया है?

2.2.2 जलापूर्ति एवं सफाई प्रबंध

2.2.2.1 भारत में शहरी जल स्रोतों की खोज करने में चुनौतियों का किस प्रकार सामना किया जा सकता है, जो ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में समान हो?

2.2.2.2 जल के जटिल जन सौजन्य को ध्यान में रखते हुए जलापूर्ति के स्रोत एवं परिवहन के लिए क्या संस्थात्मक कार्यतंत्र होना चाहिए? इस व्यवस्था में संघीय सरकारी ढांचे के विभिन्न स्तरों की क्या भूमिका होनी चाहिए?

2.2.2.3 नगरपालिकाओं द्वारा अपने क्षेत्रों में जल वितरण में सामना की जा रही क्या चुनौतियां हैं? इन चुनौतियों के विश्वसनीय समाधान क्या है?

2.2.2.4 क्या भारतीय शहरों तथा भारतीय नागरिकों को 24 घंटे जलापूर्ति की आवश्यकता है? जलापूर्ति प्रबंधन के इस तरीके की क्या लाभ-हानि हैं? यदि भविष्य में वास्तव में इसकी आवश्यकता है तो वर्तमान प्रणाली में किन बदलावों की आवश्यकता है?

अनुबंध-I (8) जारी

2.2.2.5 पूंजीगत एवं राजस्व व्यय दोनों में जलापूर्ति एवं सफाई प्रबंध की क्या आर्थिक व्यवस्था है? इसे कैसे वित्तपोषित किया जाना चाहिए? इसका कितना हिस्सा प्रयोक्ताओं से प्रभार के रूप में लिया जाना चाहिए? इन व्यवस्थाओं में निर्धनों को जलापूर्ति के पहुंच के बारे में कैसे आश्वस्त किया जा सकता है? इस प्रकार की व्यवस्थाओं के विश्वसनीय उदाहरण क्या हैं जिन्हें भारत में अपनाया जा सकता है?

2.2.3 ठोस अपशिष्ट प्रबंधन (एसडब्ल्यूएम)

2.2.3.1 भारतीय नगरपालिकाओं द्वारा ठोस अपशिष्ट प्रबंधन में किस प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है?

2.2.3.2 ठोस अपशिष्ट प्रबंधन में अन्तःक्षेत्राधिकारीय मुद्दे विशेष रूप से ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के बीच क्या हैं उनपर कैसे ध्यान दिया जा सकता है?

2.2.3.3 ठोस अपशिष्ट प्रबंधन में समुदाय आधारित प्रयास कितने विश्वसनीय हैं? वृह्द नगरपालिका ठोस अपशिष्ट प्रबंधन प्रक्रिया में उन्हें किस प्रकार ऐसे ढंग से शामिल किया जा सकता है, जो मापनीय तथा पुनरावृत्तीय हों।

2.2.4 जन-स्वास्थ्य

2.2.4.1 हमारे शहरों में जन स्वास्थ्य की क्या चुनौतियां हैं? जन स्वास्थ्य प्रबंधन में नगरपालिकाओं द्वारा वर्तमान में क्या भूमिका निभायी जा रही है? पूरे देश में यह किस प्रकार भिन्न-भिन्न है?

2.2.4.2 क्या नगरपालिकाएं जन स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियों को स्वयं हल कर सकती हैं? सरकार में तथा निजी प्रदायकों दोनों के पास किस प्रकार के संस्थात्मक व्यवस्थाओं को स्थापित करने की आवश्यकता है?

2.2.4.3 जन स्वास्थ्य प्रबंधन में स्वास्थ्य बीमा की क्या भूमिका हो सकती है? नगरपालिकाओं द्वारा स्वास्थ्य बीमा के संबंध में क्या उपाय किए जा सकते हैं? बीमा प्रशासन की जटिलताओं को देखते हुए उनका किस प्रकार विश्वसनीय रूप से प्रबंधन किया जा सकता है?

अनुबंध-I (8) जारी

2.2.4.4 जन स्वास्थ्य प्रबंधन अन्य जन सेवा सुपुर्दगी के मुद्दों से किस प्रकार संबद्ध है? नगरपालिकाओं द्वारा सामना किए जा रहे क्षमता संबंधी बाधाओं को देखेत हुए उनका एक एकीकृत ढंग से किस प्रकार प्रबंधन किया जा सकता है?

2.2.4.5 जन स्वास्थ्य प्रबंधन में समुदाय क्या भूमिका अदा करते हैं? हमारी नगरपालिकाओं द्वारा सामना किए जा रहे जनता संबंधी विभिन्न मुद्दों में समुदाय को शामिल करने के लिए किस प्रकार इस ढंग से एक एकीकृत मंच उपलब्ध करा सकते हैं, जो कि प्रत्येक सेवा के लिए समुदायों को अलग-अलग मानने की बजाए नगरपालिकाओं के समग्र राजनीतिक ढांचे के साथ जुड़ा हो।

(II) नगरपालिका वित्तीय संसाधन, प्रयोगकर्ता प्रभार, निजी-सरकारी भागीदारी

1. नगरपालिका वित्तीय संसाधन-कर

1.1 स्वयं अपने स्रोत के वित्तीय संसाधन-कर

1.1.1 क्या और अधिक करारोपण हेतु शहरी स्थानीय निकायों को सशक्त करने की आवश्यकता है? कौन से विषय करारोपण हेतु संघीय/राज्य सरकारों से शहरी स्थानीय निकायों को स्थानांतरित किए जा सकते हैं?

1.1.2 शहरी स्थानीय निकायों के लिए राजस्व का मुख्य स्रोत संपत्ति कर है (जहां पर चुंगी समाप्त कर दी गई है? इस कर के प्रशासन में क्या सुधार किए जा सकते हैं?

1.1.3 विज्ञापन कर, मनोरंजन कर आदि जैसे अन्य करों में क्या सुधार किए जा सकते है?

1.1.4 कर प्रबंधन की सर्वोत्तम पद्धतियां क्या हैं, जिनकी पुनरावृत्ति की जा सकती है।

1.1.5 नगरपालिकाओं द्वारा अपने वित्तीय संसाधनों को अधिकतम बनाने में आपके विचार से कितना अच्छा कार्य किया जा रहा है?

1.1.6 क्या नगरपालिकाओं के पास वित्तीय प्रबंधन के लिए स्वयं के निधियों के अतिरिक्त संसाधन होने चाहिए?

1.1.7 क्या केन्द्रीय/राज्य करों में नगरपालिकाओं का हिस्सा होना चाहिए?

अनुबंध-I (8) जारी

1.2 स्वयं अपने स्त्रोत के वित्तीय संसाधन-कर-भिन्न

1.2.1 नगरपालिका संपत्तियों से सामान्यतया आय की दर बहुत ही कम होती है। नगरपालिका संपत्तियों से आय में सुधार हेतु क्या विधिक एवं प्रशासनिक उपाय किए जा सकते हैं?

1.2.2 शहरी स्थानीय निकायों की सामान्यतया मुख्य जगहों पर अपनी भूमि होती है। शहरी स्थानीय निकायों के वित्तीय संसाधनों को बढ़ाने हेतु इसे किस प्रकार उन्नत किया जा सकता है?

1.2.3 क्या ठोस अपशिष्ट प्रबंधन सड़क प्रकाश व्यवस्था आदि जैसी गतिविधियों के लिए विशेष उपकर लगाने का कोई मामला है?

1.3 हस्तांतरण

1.3.1 कृपया राज्य वित्त आयोगों के कार्यकरण पर अपनी टिप्पणी दीजिए?

1.3.2 क्या राज्य वित्त आयोगों के कार्यकरण में कोई सर्वोत्तम पद्धतियां हैं, जिनकी पुनरावृत्ति की जा सकती है?

1.3.3 क्या राज्य वित्तीय आयोग की सिफारिश अवधि को केन्द्रीय वित्त आयोग के साथ जोड़ने हेतु अनिवार्य बनाया जाना चाहिए?

1.3.4 राज्यों तथा स्थानीय शासनों के बीच क्या उर्ध्वाकार और क्षितिजाकार तथा ग्रामीण एवं शहरी स्थानीय शासनों के बीच क्या क्षितिजाकार हस्तांतरण सूत्र होना चाहिए?

1.4 अनुदान

1.4.1 अपने कार्यकलापों के लिए अनुदान निधिकरण पर नगरपालिकाओं की निर्भरता पर आपके क्या विचार हैं?

1.4.2 क्या कोई ऐसे विशिष्ट क्षेत्र हैं, जहां आप समझते हैं कि अनुदान निधिकरण स्वीकार्य है और ऐसे क्षेत्र जहां पर यह आवश्यक नहीं है?

1.4.3 क्या नगरपालिकाओं को पूंजीगत व्यय के लिए अनुदान निधिकरण उपलब्ध होना चाहिए? यदि हां, तो किन परिस्थितियों में?

अनुबंध-I (8) जारी

1.4.4 क्या नगरपालिकाओं को राजस्व व्यय हेतु अनुदान निधिकरण उपलब्ध होना चाहिए? यदि हां, तो किन परिस्थितियों में?

1.4.5 नगरपालिकाओं को अनुदान सहायता के लिए राज्य/केन्द्र का क्या दायित्व होना चाहिए?

1.5 पूंजीगत बाजार तक पहुंच

1.5.1 क्या आप महसूस करते हैं कि अपनी पूंजीगत परियोजनाओं के निधिकरण के लिए नगरपालिकाओं के लिए ऋण/पूंजी बाजार तक पहुंचना उपयुक्त है?

1.5.2 क्या कोई ऐसी शर्त/बाधा होनी चाहिए, जो नगरपालिकाओं पर उनके ऋण बाजार तक पहुंचने में रखी जा सकती है?

1.5.3 नगरपालिकाओं की साख दर पर आपके क्या विचार हैं? यदि आप महसूस करते हैं कि यह आवश्यक है तो उसे किए जाने के लिए आप कैसे प्रस्ताव करेंगे?

1.6 समग्र

1.6.1 नगरपालिकाओं के वित्तीय स्रोतों का, अपने संसाधनों, हस्तांतरण और अनुदान तथा ऋण के बीच क्या सुदृढ़ मिश्रण होना चाहिए?

1.6.2 नगरपालिकाओं के लिए किस प्रकार अनिवार्य बनाया जा सकता है कि वे निर्धनों के अनुकूल कार्यक्रमों पर अपने वार्षिक बजटीय संसाधनों की पर्याप्त राशि व्यय करना कैसे अनिवार्य बनाया जा सकता है?

1.7 नगरपालिका वित्तीय प्रबंधन

1.7.1 नगरपालिकाओं को दोहरी-प्रविष्टि लेखाकरण के कार्यान्वयन में किन चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है? इन्हें कैसे दूर किया जा सकता है?

1.7.2 क्या नगरपालिकाओं की लेखापरीक्षा राज्य सरकार निकाय, नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक अथवा किसी स्वतंत्र लेखापरीक्षा फर्म द्वारा करायी जानी चाहिए? प्रत्येक विकल्प के क्या सापेक्षिक गुण एवं दोष है?

अनुबंध-I (8) जारी

1.7.3 अब नगरपालिकाओं को "जेएनएनयूआरएम" प्रकटीकरण कानून के अधीन तिमाही वित्तीय विवरण एवं वार्षिक लेखापरीक्षित विवरण प्रदान करना अपेक्षित है। इस कानून को कार्यान्वित करने के लिए नगरपालिकाओं को किस सहायता की आवश्यकता है?

1.7.4 नगरपालिकाओं को विभिन्न नगरपालिका सेवाओं के लिए अपने सेवा स्तरों को भी प्रकाशित करने की अपेक्षा होती है, तथा प्रकटीकरण कानून के अधीन किस प्रकार वे इन प्रत्येक सेवाओं के लिए मुद्रा का मूल्य कैसे प्रदान कर रहे हैं। विभिन्न सेवाओं के लिए इन सेवाओं का बेंचमार्क क्या होना चाहिए? सभी नगरपालिकाओं के अनुपालन के लिए इन मानकों को किस प्रकार निर्धारित करना चाहिए? इन मानकों को किसे निर्धारित करना चाहिए?

1.7.5 बजट तथा लेखाकरण कार्यकलापों के समंजन कई चुनौतियां हैं। क्या आप उनमें से कुछ चुनौतियों तथा समाधानों का वर्णन कर सकते हैं, जो इन समस्याओं के लिए अपनाए जा सकते हैं?

1.7.6 नगरपालिकाओं के लेखों तथा वित्तीय व्यवस्था के प्रबंधन में सहायता के लिए तकनीक का प्रयोग किस प्रकार किया जाना चाहिए? इसको किस प्रकार बगैर किसी एकमात्र पहल के एक संपूर्ण नगरपालिका ई-गवर्नेंस कार्यक्रम के साथ एकीकृत किया जा सकता है?

1.7.7 नगरपालिका कार्यक्रमों की विकेंद्रीकृत आयोजना, प्राथमिकताकरण तथा बजट बनाने में नागरिकों, गैर-सरकारी संगठनों तथा बाहरी हितधारकों की क्या भूमिका हो सकती है? इस मोर्चे पर ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों के बीच क्या समानताएं एवं भिन्नताएं हैं?

1.8 नगरपालिका वित्त और क्षेत्रीय आयोजना

1.8.1 किस प्रकार विकेन्द्रीकृत आयोजना प्रक्रियाएं जो जिला आयोजना समितियों तथा महानगर आयोजना समितियों में संकल्पित की गई है, को नगरपालिका की बजटीय एवं वित्तीय प्रक्रिया में एकीकृत किया जा सकता है?

अनुबंध-I (8) जारी

1.8.2 यह देखते हुए कि ग्रामीण विकेन्द्रीकृत आयोजना तथा बजट के लिए स्पष्ट दिशानिर्देश हैं, क्या उनको शहरी आयोजना एवं बजट के लिए उपयुक्त रूप से संशोधित तथा लागू किया जा सकता है? किन बदलावों की आवश्यकता होगी? जिला/महानगर स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण योजनाओं को किस प्रकार एकीकृत किया जा सकता है?

2. प्रयोक्ता प्रभार एवं सरकारी-निजी भागीदारी

2.1 जन सेवा की किन मदों को "स्थानीय जन हित" के रूप में श्रेणीकृत किया जा सकता है?

2.2 उक्त स्थानीय जन सुविधाओं की सुपुर्दगी में नगरपालिका शासन को किस प्रकार की चुनौतियां का सामना करना पड़ रहा है?

2.3 इन स्थानीय जन सुविधाओं में निजी प्रावधान होने के क्या लाभ-हानि है? उक्त चुनौतियां किस प्रकार सेवाओं में भिन्न-भिन्न हैं?

2.4 क्या सेवाओं के निजी प्रावधानों की अवधारणा को भारत में अपनाया जाना चाहिए? यदि हां, तो किन सेवाओं में तथा किन विशिष्ट ढांचागत परिस्थितियों में? इन व्यवस्थाओं से किस प्रकार सुनिश्चित किया जा सकता है कि निर्धनों को सेवाओं की सुपुर्दगी समान रूप से होगी? ये व्यवस्थाएं कैसे सुनिश्चित करेंगी कि सेवाओं में कोई भी एकाधिकार संबंधी तथा अल्प-बिक्रेताधिकार संबंधी मूल्यनिर्धारण नहीं होगा?

2.5 क्या जन सेवाओं के लिए "प्रयोक्ता प्रभारों" की प्रणाली होनी चाहिए? प्रयोक्ता प्रभारों पर विचार करते समय क्या आर्थिक प्रयोजन होने चाहिए? उनको कैसे तथा किस सेवा के लिए संरचित किया जाना चाहिए?

2.6 जन सेवाओं में, जो भारत के लिए प्रासंगिक है, सरकारी-निजी भागीदारी के क्या उदाहरण हैं - चाहे भारत के अंदर हो अथवा भारत के बाहर हो? उनसे क्या सबक लिया जा सकता है?

2.7 इस प्रकार की नई व्यवस्थाओं का हिस्सा होने के कारण समुदाय एवं स्थानीय प्रयोक्ता समूह क्या भूमिका निभा सकता है? इनको नगरपालिकाओं के वृह्द निर्णय लेने की प्रक्रिया में किस प्रकार एकीकृत किया जा सकता है?

अनुबंध-I (8) जारी

(III) शहरी लोकतंत्र और क्षमता निर्माण

1. संवैधानिक एवं कानूनी मुद्दे

1.1 क्या स्थानीय निकायों को सौंपे गए कार्यों को संघ, राज्य और समवर्ती सूचियों के समान एक पृथक सूची में शामिल करना चाहिए?

1.2 क्या शहरी स्थानीय निकायों को सौंपे गए कार्यों को विस्तारित करने का कोई मामला है?

1.3 क्या राज्य विधानमंडल में ऊपरी सदन स्थानीय शासन की परिषद होनी चाहिए?

1.4 क्या ग्रामीण एवं शहरी स्थानीय निकायों से प्रतिनिधित्व के साथ एक जिला स्तरीय शासन होना चाहिए?

1.5 स्थानीय शासनों में निर्वाचन क्षेत्रों के सीमा समापन की शक्तियां राज्य सरकारों अथवा राज्य निर्वाचन आयोगों में से किसके पास होनी चाहिए?

1.6 वार्ड समितियों के गठन का तरीका? क्या इसके कुछ मानदंड होने चाहिएं?

1.7 शहरी स्थानीय निकायों को क्या अतिरिक्त विनियामक कार्य सौंपे जा सकते हैं? क्या यातायात नियंत्रण, छोटे अपराधों को नियंत्रित करने आदि का कार्य शहरी स्थानीय शासनों के अधीन लाया जाना चाहिए?

1.8 संघीय तथा राज्य कानूनों (निर्दशनात्मक) में क्या संशोधन की आवश्यकता है, जिससे स्थानीय निकायों को उनको स्थानांतरित किए गए कार्यों के लिए सक्षम बनाया जा सके?

1.9 क्या कुछ राज्य नगरपालिका कानूनों में ऐसे प्रावधान है, जिन्हें "सर्वश्रेष्ठ पद्धति" के रूप में अन्य राज्यों द्वारा अपनाया किया जा सकता है?

2. शहरी लोकतंत्र

2.1 नगरपालिका स्तर पर निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा सामना किए जा रहे क्षमता संबंधी मुद्दे क्या हैं? इन्हें कैसे दूर किया जा सकता है?

2.2 शहरी मतदाता सूचियों से संबधित क्या चुनौतिया हैं? देश में बढ़ते हुए शहरीकरण को देखते हुए इन मतदाता सूचियों का न्यूनतम गलती के साथ किस प्रकार रख-रखाव किया जा

अनुबंध-I (8) जारी

सकता है? मतदाता सूचियों की अखंडता को बनाए रखने के लिए मतदाता स्वयं क्या विशिष्ट भूमिका निभा सकते हैं?

2.3 जनगणना प्रभाग वार्डों के साथ सह समाप्य नहीं है, जिसके परिणामस्वरुप जनसंख्या के बारे में वार्ड-वार आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं? इन परिस्थितियों के अधीन सीटों के आरक्षण को किस प्रकार सुनिश्चित किया जाए?

2.4 क्या राज्य निर्वाचन आयोगों को और अधिक सशक्त करने की आवश्यकता है? किन बदलावों का सुझाव दिया गया है?

2.5 नगरपालिका चुनावों में शहरी मतदाताओं की उपस्थिति पर क्या आंकड़े उपलब्ध हैं? उक्त आंकड़ों से क्या निष्कर्ष तथा शिक्षा ली जा सकती है?

2.6 ग्रामीण विकेन्द्रीकरण में स्थापित की जा रही विस्तृत प्रक्रिया को देखते हुए, ग्राम सभाओं को दी जा रही भागीदारी एवं जवाबदेही के लिए पर्याप्त भूमिका के साथ, शहरी मतदाताओं के लिए भागीदारी हेतु क्या जगह होनी चाहिए? इस भूमिका को किस प्रकार नगरपालिका ढांचे में एकीकृत किया जा सकता है, जैसाकि वार्ड समितियों तथा नगरपालिका परिषदों के 74वें संवैधानिक संशोधन के अधीन अपेक्षा की गई है?

2.7 ग्रामीण और शहरी लोकतांत्रिक संरचनाओं के बीच ऐसी भिन्न पद्धतियों के साथ स्थानीय लोकतंत्र के विस्तृत विषय में शहरी लोकतंत्र के मुद्दों को किस प्रकार देखा जा सकता है? विशेषकर जिला आयोजना समिति और महानगर आयोजना समिति जैसे साझा क्षेत्रीय मंचों की स्थापना करने की आवश्यकता को देखते हुए इन संरचनाओं में क्या परिवर्तन लाए जा सकते हैं?

3. क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण

3.1 शहरी अधिशासन के संदर्भ में "क्षमता निर्माण एवं प्रशिक्षण" शब्दों को किस प्रकार परिभाषित किया जाना चाहिए?

3.2 ऐसे कौन हितधारक हैं, जिनके लिए ऐसे क्षमता निर्माण एवं प्रशिक्षण की अपेक्षा है? वे कौन क्षेत्र हैं, जहां इन हस्तक्षेपों की अपेक्षा है?

अनुबंध-I (8) जारी

3.3 इस तरह की क्षमता निर्माण एवं प्रशिक्षण प्रक्रियाओं को किस प्रकार आयोजित किया जाना चाहिए? इस संबंध में सरकार की क्या भूमिका होनी चाहिए? इस प्रक्रिया में अन्य कौन भागीदार हो सकते हैं? सरकार तथा उक्त हिस्सेदारों के बीच क्या व्यवस्थ होनी चाहिए?

3.4 हम किस प्रकार जानेगें कि क्षमता निर्माण एवं प्रशिक्षण प्रक्रियाएं प्रभावी हैं? उक्त प्रक्रियाओं को किस प्रकार मापा जा सकता है?

3.5 निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा सामना किए जा रहे क्षमता मामलों से किस प्रकार निबटा जा सकता है?

3.6 यूएलबी की प्रबंधकीय क्षमता को किस प्रकार बढ़ाया जा सकता है? क्या पेशेवर प्रबंधकों को शामिल करके मदद मिलेगी? पेशेवर प्रबंधकों को किस प्रकार आकर्षित किया जा सकता है?

3.7 क्या नगरपालिका निकायों के लिए कर्मचारियों को अलग संवर्ग रखना सही है? यदि हां, तो क्या संवर्ग नगरपालिका, जिले अथवा राज्य तक ही सीमित रहना चाहिए?

(IV) शहरी आयोजना, पर्यावरण, आर्थिक व्यवस्था

1. शहरी आयोजना

1.1 सामान्य

1.1.1 यह कैसे सुनिश्चित किए गए कि शहर के लिए केवल एक शहरी विकास योजना है, क्योंकि प्राधिकरणों की संख्या बहुत है तथा प्रत्येक स्वयं की क्षेत्रीय योजना बनाते हैं?

1.1.2 शहरी विकास योजनाओं का प्रवर्तन विशेष रूप से असंतोषजनक है, इसमें कैसे सुधार लाया जाए?

1.1.3 क्या सार्वजनिक भूमि के अतिक्रमण को रोकने के लिए किसी विशेष कानून की आवश्यकता है?

1.1.4 शहरी स्थानीय निकायों में आयोजना कार्यतंत्र को मजबूत बनाने के लिए किन उपायों की आवश्यकता है?

अनुबंध-I (8) जारी

1.1.5 उप-नगरीय क्षेत्र शहरी स्थानीय निकायों की भौगोलिक सीमाओं से बाहर हैं लेकिन वे शहरी स्थानीय निकायों की अवसंरचना पर अत्यधिक दबाव डालते हैं। उप-नगरीय क्षेत्र में वृद्धि को किस प्रकार विनियमित किया जा सकता है?

1.1.6 क्या प्रोत्साहन अथवा हतोत्साहित करके वृद्धि को नियमित करने का कोई मामला है? ये प्रोत्साहन/हतोत्साहन क्या होने चाहिएं?

1.1.7 शहरी विकास में निजी क्षेत्र की क्या भूमिका होनी चाहिए?

1.2 भूमि रिकार्ड प्रबंधन

1.2.1 शहरी विकास और आयोजना पर अविश्वसनीय भूमि रिकार्ड का क्या प्रभाव पड़ता है?

1.2.2 शहरी क्षेत्रों में भूमि रिकार्ड प्रबंधन की वर्तमान स्थिति क्या है? राज्य सरकार के राजस्व विभाग से नगरपालिकाओं को भूमि रिकार्ड कार्यों के हस्तांतरण से क्या चुनौतियां उभर कर सामने आई हैं?

1.2.3 जैसा कि देश के विभिन्न राज्यों में अपनाया जा रहा है, पट्टेदारी भूमि तथा पूर्ण स्वामित्व वाली भूमि के बीच क्या विभिन्न जटिलताएं हैं?

1.2.4 कम्प्यूटरीकृत भूमि रिकार्ड परियोजनाओं का क्या महत्व है तथा उसका वास्तविक लाभ क्या है जो कि विभिन्न राज्यों में चल रही हैं, विशेष रूप से जब वे शहरी भूमि के मुद्दों से संबंधित हों?

1.2.5 बहुत से नीति निर्धारक संस्थानों ने देश में भूमि स्वामित्व की गारंटीशुदा पद्धति का समर्थन किया है। भारत के संदर्भ में गारंटीशुदा भूमि स्वामित्व के क्या लाभ-हानि हैं?

1.2.6 विकास अधिकारों के हस्तांतरण (टीडीआर) जैसे नए लिखतों का क्या औचित्य तथा प्रभावोत्पादकता है? बहुत से शहरों ने पहले ही विकास अधिकारों के हस्तांतरण के प्रयोग का प्रयास शुरू कर दिया है, उन शहरों से क्या सीख मिली है? विकास अधिकारों के हस्तांतरण वृह्द आयोजना प्रक्रिया में किस प्रकार प्रभावशाली साधन हो सकते हैं?

अनुबंध-I (8) जारी

1.3 भूमि प्रयोग एवं आंचलीकरण

1.3.1 शहरी क्षेत्रों में अधिकांश आयोजना आंचलीकरण एवं भूमि प्रयोग नीतियों से संबंधित है तथा शहरी विकास के लिए निर्देश दे रही हैं। क्या यह आयोजना के लिए पर्याप्त भूमिका है?

1.3.2 आयोजना के बारे में दो विचारधाराएं हैं : इनमें से पहली क्षेत्रीय स्तर पर है अर्थात ढांचागत योजना, इसे सुपरिभाषित किया जाना चाहिए तथा स्थानीय आयोजना के स्तर पर इसे स्वतंत्र रूप से परिभाषित किया जाना चाहिए, दूसरी विचारधारा है कि इसे क्षेत्रीय एवं स्थानीय आयोजना दोनों स्तरों पर परिभाषित किया जाना चाहिए। अधिमान्य दृष्टिकोण क्या है?

1.3.3 एक बार आयोजना प्रक्रिया पूर्ण हो जाने पर भूमि प्रयोग में बदलाव को किस प्रकार विनियमित एवं नियंत्रित करना चाहिए? क्या भूमि प्रयोग बदलाव को फिर भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए?

1.3.4 भूमि प्रयोग तथा आंचलीकरण में विद्यमान अनियंत्रित उल्लंघनों से विश्वसनीय, व्यवहारिक तथा समान ढंग से किस प्रकार ध्यान दिया जाना चाहिए?

1.3.5 भूमि प्रयोग तथा आंचलीकरण प्रावधानों के प्रवर्तन को किस प्रकार सुनिश्चित किया जा सकता है? इसको समर्थ बनाने के लिए किन संस्थात्मक तथा सांविधिक बदलावों की अपेक्षा है?

1.3.6 लगातार बढ़ते शहरीकरण एवं हमारे विद्यमान शहरी केन्द्रों की वृद्धि को देखते हुए **ब्राऊनफील्ड** एवं **ग्रीनफील्ड** जैसाकि सघनीकरण एवं उर्ध्वाकर वृद्धि में होता है, में बाहरी वृद्धि के लिए क्या तर्क हैं? सार्वजनिक परिवहन विकल्पों, अवसंरचना आदि जैसे विभिन्न संबद्ध मुद्दों पर दोनों रूचियों की क्या जटिलताएं है?

1.3.7 हमारे शहरों में वर्तमान शहरी विकास राष्ट्रीय तथा राज्य राजमार्गों जैसे वृह्द सड़क गलियारों के साथ-साथ हो रहा है। क्या यह वांछनीय अथवा अवांछनीय है? यदि यह यहां तक कि अगर यह अवांछनीय है, तो क्या इस परिणाम को रोकने का कोई विश्वसनीय उपाय है?

अनुबंध-I (8) जारी

1.4 महानगरीय मुद्देः आयोजना प्रक्रियाएं एवं अधिशासन

1.4.1 जिला आयोजना समिति एवं महानगर आयोजना समिति जैसे मंच अपने क्षेत्रों के लिए संरचनात्मक योजनाएं बनाकर आयोजनाओं को एकीकृत करने के लिए अभिप्रेत थे। तथापि, जिला आयोजना समिति एवं महानगर आयोजना समिति पर पिछला रिकार्ड देखने से प्रतीत होता है कि अभी बहुत कुछ होना बाकी है। इन क्षेत्रीय आयोजना मंचों को समर्थ बनाने में राज्य सरकारों को किन मुद्दों का सामना करना पड़ रहा है? उनपर विश्वसनीय रूप से किस प्रकार ध्यान दिया जा सकता है?

1.4.2 प्रभावी आयोजना के लिए किस प्रकार के आंकड़ा स्रोतों की आवश्यकता है, जिनको कि विश्वसनीय रूप से लागू किया जा सके? वर्तमान में ये आंकड़े कहां पर हैं? ऐसे कितने आंकड़े अद्यतन हैं? इस आंकड़े को कैसे आयोजना प्रक्रियाओं में एकीकृत किया जा रहा है?

1.4.3 उपर्युक्त आंकड़े को स्थानिक रूप में किस हद तक संग्रहित और प्रबंधित किया जा सकता है? इस प्रबंधन मं जीआईएस और स्थानिक आंकड़ा प्रणाली जैसी प्रौद्योगिकी क्या भूमिका निभा सकती है? भारत में ऐसी प्रक्रियाओं में किस प्रकार की विशिष्ट सफलताओं को इंगित किया जा सकता है? सफल प्रबंधन को कायम रखने में इन उदाहरणों का पिछला रिकार्ड क्या है?

1.4.4 राष्ट्रीय शहरी सूचना प्रणाली ने स्थानिक आंकड़ा मानकों का निर्धारण किया है। कितनी राज्य सरकारें एवं शहर अपने स्थानिक आंकड़ों का प्रबंधन करने में उक्त मानकों को अपना रहे हैं? इसमें क्या बाधाएं तथा चुनौतियां हैं?

2. पर्यावरणीय मुद्दे तथा प्रबंधन

2.1 हम पर्यावरणीय रूप से संवेदी क्षेत्रों जैसे कि घाटियों, तालाबों, झीलों, वनों आदि के संरक्षण सहित शहरीकरण के लिए बढ़ती हुई भूमि की मांग के साथ किस प्रकार संतुलन स्थापित करते हैं?

2.2 किस प्रकार पर्यावरणीय परिसंपत्तियों (उदाहरण के लिए मास्टर प्लान में हरित पट्टियों) को बचाने के लिए आयोजना एवं नीतिगत निर्णय लिए जा सकते हैं तथा निर्धारक दिशानिर्देश बनाए जा सकते हैं जिनका उल्लंघन किया जा रहा है?

अनुबंध-I (8) जारी

2.3 जल एक कीमती साझा संसाधन है, जिसकी प्रायः कम आपूर्ति होती है। नलकूपों तथा कुओं की अंधाधुंध खुदाई के कारण भूमिगत जल संसाधनों में कमी हो रही है तथा इससे जल संसाधनों में रूकावट आ रही है तथा वे नष्ट हो रहे हैं। क्या वर्षा जल संचयन नियमावली, नलकूपों पर रोक लगाना जल स्रोत्रों के पुनःभरण के मुद्दे पर ध्यान देने के पर्याप्त उपाय है? इस प्रकार के नुकसान को रोकने तथा भूमिगत जल स्तर की पुनःपूर्ति हेतु क्या विशिष्ट अतिरिक्त उपाय किए जा सकते हैं?

2.4 मल-जल संदूषण के कारण नाइट्रेट का उच्च स्तर हमारे शहरों में भूमिगत जल की गुणवत्ता को प्रभावित कर रहा है। इनपर कैसे ध्यान दिया जा सकता है? ये जलापूर्ति, सफाई व्यवस्था, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन, जन स्वास्थ्य इत्यादि की वृह्द संस्थात्मक प्रक्रियाओं से किस प्रकार संबंधित है?

2.5 शहरी पारिस्थितिकी प्रणाली पौधे/पशु/पक्षी जीवन-को इस समय हो रही क्षति कितनी महत्वपूर्ण है? इसपर ध्यान देने के लिए क्या विशिष्ट विश्वसनीय उपाय किए जा सकते हैं?

2.6 शहरी क्षेत्रों में 60% वायु प्रदूषण वाहनों के धुएं के कारण होता है। इसके बारे में क्या किया जा सकता है?

2.7 ध्वनि एवं दृश्यात्मक प्रदूषण के मुद्दे पर शहरी आयोजना एवं प्रवर्तन द्वारा किस प्रकार ध्यान दिया जा सकता है?

2.8 नागरिक एवं समुदाय अपने शहरों में पर्यावरण संबंधी मुद्दों पर ध्यान देने में क्या भूमिका निभा सकते हैं? इस भूमिका को उनकी नगरपालिकाओं की वृह्द नीति निर्धारण प्रक्रिया में किस प्रकार एकीकृत किया जा सकता है?

2.9 यदि पर्यावरण संबंधी मुद्दों पर ध्यान देने के लिए एकीकृत समाधानों की अपेक्षा है तो उनको वर्तमान में उपलब्ध वृह्द संस्थागत साधनों जैसे कि महानगर आयोजना समिति/जिला आयोजना समिति में किस प्रकार अन्तर्निहित किया जा सकता है?

3. शहरी क्षेत्रों में आर्थिक विकास

3.1 यह मानते हुए कि शहर आर्थिक विकास के साधन हैं, इसे सुनिश्चित करने के लिए क्या उपाय किए जा सकते हैं कि यह विकास समान हो तथा समाज के सभी वर्गों के लिए समान

अनुबंध-I (8) जारी

अवसर प्रदान करें? इस प्रकार के परिणामों को वास्तविकता में बदलने के लिए रोजगार, बाजार, ऋण, अवसंरचना तक पहुंच बनाने के रुप में क्या विशिष्ट कार्यान्वित किए जाने योग्य उपायों का सृजन किया जा सकता है?

3.2 आंकड़े क्षेत्र एवं राज्य की समग्र आर्थिक वृद्धि में शहरी क्षेत्रों के योगदान को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं। इन्हें किस प्रकार बनाए रखा जा सकता है ताकि शहरों की अंतर्निहित सुदृढ़ता एवं प्रतिस्पर्धात्मक लाभ को बनाए रखा जा सके?

3.3 भारत में शहरी स्थानीय शासन अपने शहरों की आर्थिक भलाई के लिए कोई भूमिका अदा नहीं करती है। क्या यह एक स्वीकार्य स्थिति है? यदि नहीं, तो इसे किस प्रकार बदलना चाहिए? स्थानीय तथा राज्य सरकारों के बीच संबंध से इसका क्या तात्पर्य है?

3.4 संगठित एवं असंगठित, प्राथमिक, गौण तथा तृतीयक विभिन्न खंडों में हम वर्तमान में शहरी क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधियों पर हम क्या आंकड़े सृजित कर रहे हैं? उक्त आंकड़ा स्रोत कहां रखे गए हैं, वे कितने अद्यतन हैं, तथा वे सरकार में निर्णयकर्ताओं को किस प्रकार उपलब्ध है? उक्त आंकड़े आयोजना प्रक्रियाओं में किस प्रकार एकीकृत किए जा रहे है - उदाहरण के लिए समुचित अवसंरचना का प्रावधान? इसको और अधिक प्रभावी बनाने के लिए किन संस्थात्मक व्यवस्थाओं को करने की आवश्यकता है?

3.5 क्या नगरपालिका क्षेत्राधिकारों में आर्थिक परिणामों को अभिकल्पित किया जा सकता है अथवा उनको वृह्द क्षेत्रों में फैलाया जा सकता है? उदाहरण के लिए, क्या शहर लगातार बढ़ते रहने चाहिए अथवा इसको शहरी केन्द्रों के समूहों में वितरित कर देना चाहिए के बारे में बहस। उनमें से कौन तथा किन परिस्थितियों में अधिक उपयुक्त है। क्या उक्त परिणामों को वास्तव में योजनाबद्ध किया जा सकता है? यदि हां, तो इन वृह्द क्षेत्रीय चुनौतियों पर ध्यान देने के लिए किन संस्थात्मक साधनों का मौजूद होना आवश्यक है?

3.6 राजनीतिक रूप से विधिसम्मत संस्थात्मक साधनों में एकीकृत करने हेतु कोई संस्थात्मक समाधान अथवा ढांचे का किस प्रकार यहां पर सुझाव दिया जा रहा है जो कि वर्तमान में उपलब्ध है तथा जिनको सुदृढ़ करने की आवश्यकता है जैसे कि डीपीसी/जीपीसी?

(V) शहरी परिवहन एवं यातायात

1. एकीकृत परिवहन

1.1 क्या सार्वजनिक परिवहन नगरपालिका का एक कार्य होना चाहिए?

1.2 सार्वजनिक परिवहन प्रणाली को किस प्रकार आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है?

1.3 शहरी विकास की गति को देखते हुए जन पारगमन विकल्प एक आवश्यकता बनते जा रहे हैं। तथापि, मैट्रो रेल से मोनो रेल तक मोनो रेल से बस त्वरित पारगमन प्रणालियों तक पसंद में काफी भिन्नता है, शहर के लिए जिसमें से प्रत्येक की अपनी जटिलताएं हैं जैसे कि वित्तीय, आर्थिक, यात्री आवागमन, पर्यावरणीय आदि। शहरों को सार्वजनिक त्वरित परिवहन प्रणाली के लिए उक्त का चुनाव किस प्रकार करना चाहिए?

1.4 सार्वजनिक त्वरित परिवहन की ये प्रणालियां विद्यमान परिवहन के साधनों, बस, सड़क, पैदल यात्री, साइकिल यात्री, रेल आदि के साथ किस प्रकार एकीकृत की जा सकती हैं, ऐसे ढंग से कि ये विशिष्ट रूप से प्रचालन कार्यप्रणाली, प्रशासन, सरकारी-निजी भागीदारी, किराया प्रणाली आदि जैसे मुद्दों का विस्तृत वर्णन करें।

1.5 इस प्रकार के जटिल बहु-प्रतिरूपी परिवहन परिवेश की आयोजना, कार्यान्वयन तथा प्रबंधन के लिए क्या संस्थात्मक व्यवस्था होनी चाहिए? यह संस्थात्मक कार्यविधि राजनीतिक रूप से किस प्रकार तथा किस स्तर पर जबावेदह होगी? इसे अन्य समन्वय तथा आयोजना मंचों जैसे कि जिला आयोजना समिति/महानगर आयोजना समिति आदि के साथ किस प्रकार एकीकृत कर देना चाहिए?

अनुबंध-IV (1)

कुछ पंचायत राज अधिनियमों के अंतर्गत राज्य सरकार की शक्तियां

बिहार राज्य पंचायत राज अधिनियम, 2006 से उद्धरण

150 - नमूना विनियमन बनाने की सरकार की शक्तियां

151 - जब पंचायत क्षेत्रों की सीमाओं में परिवर्तन किया जाता है तो सरकार को पंचायतों को भंग तथा पुनर्गठित करने की शक्तियां

152 - पंचायतों के कार्यो की जांच

153 - पंचायत कार्यालयों तथा रिकार्ड एवं उसके लेखे का निरीक्षण

154 - सरकार द्वारा संशोधन एवं समीक्षा की शक्तियां

155 - विकास योजनाओं का निरीक्षण

156 - सरकार से निर्देश

157 - अविश्वास प्रस्ताव पर विचार करने के लिए बुलाई गई विशेष बैठकें संचालित करने के संबंध में जिलाधिकारी की शक्तियां - यदि जिलाधिकारी, का स्वयं अथवा किसी स्रोत से प्राप्त सूचना के आधार पर यह मत है कि, जहां तक अविश्वास प्रस्ताव पर विचार करने के लिए कोई विशेष बैठक को संचालित करने से संबंधित प्रावधान का प्रश्न है, कोई अनियमितता अथवा गलती की जा रही है, उसे उस संबंध में अधिनियम के प्रावधानों के अनुपालन के लिए, जैसा आवश्यक समझे, इस प्रकार के दिशानिर्देश जारी करने की शक्ति होगी। वह इस प्रकार की बैठक में किसी अधिकारी को प्रतिनियुक्त भी कर सकता है तथा ऐसे अधिकारी से रिपोर्ट मांग सकता है।

158 - पंचायतों से शक्तियों एवं कार्यों की वापसी - (1) इस अधिनियम के अंतर्गत किसी भी मामले के संबंध में किन्हीं शक्तियों, कार्यों तथा कर्त्तव्यों का पंचायत को हस्तानांतरण होते हुए भी सरकार उसकी तरफ से पंचायत से प्राप्त प्रस्ताव अथवा जहां वह संतुष्ट है कि किसी मामले की प्रकृति में बदलाव आ जाने के कारण, जैसे किसी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के द्वितीयक स्वास्थ्य केन्द्र अथवा अस्पताल में बदलने अथवा एक बीज प्रवर्धक फार्म के कृषि अनुसंधान कार्य में बदलने अथवा किसी सड़क के राजमार्ग का हिस्सा बनने, ऐसे मामले को संबद्ध पंचायत कार्य की सूची से निकाल दिया जाएगा तथा यदि ऐसे मामले के संबंध में पंचायत से शक्तियां, कार्य और कर्त्तव्य वापस करना आवश्यक समझा जाता है तो सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस प्रकार की शक्तियां, कार्य एवं कर्त्तव्य

अनुबंध-IV (1) जारी

अधिसूचना में निर्दिष्ट तारीख से वापस कर लिए जाएंगे तथा कर्मचारियों एवं पंचायत में निहित संपत्ति, अधिकार एवं जिम्मेदारियों, यदि कोई हो, जो कि पंचायत को हस्तांतरित की गई है, जैसा भी मामला हो, पर कब्जा करने सहित मामलों के लिए ऐसे प्रासंगिक एवं परिणामी आदेश, जो भी आवश्यक हो, जारी करेगा (2) सरकार, सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस अधिनियम के तहत पंचायत को सौंपी गई किसी कार्यकलाप कार्यक्रम अथवा योजना में संशोधन अथवा वृद्धि कर सकती है। ऐसी अधिसूचना के जारी होने पर पंचायत की संगत कार्य सूची को तदनुसार संशोधित मान लिया जाएगा।

कर्नाटक पंचायत राज अधिनियम, 1993 से उद्धरण

232. निरीक्षण एवं पर्यवेक्षण की शक्तियां

जिला पंचायत के मामले में कोई अधिकारी, जिसे सरकार द्वारा इस प्रयोजन के लिए विशेष रूप से प्राधिकृत किया गया है, तालुक पंचायत के मामले में मुख्य कार्यकारी अधिकारी तथा ग्राम पंचायत के मामले में कार्यकारी अधिकारी को निम्न अधिकार प्राप्त है :-

(क) किसी जिला पंचायत, तालुक पंचायत अथवा ग्राम पंचायत के कार्यालयों अथवा परिसर के अथवा उनके द्वारा किए गए कार्यों का निरीक्षण तथा इस प्रयोजनार्थ लेखा बहियों, रजिस्टरों और अन्य संबंधित कागजातों का निरीक्षण तथा संबंधित जिला पंचायत, तालुक पंचायत अथवा ग्राम पंचायत इस प्रकार के निरीक्षण के बाद जारी अनुदेशों का पालन करेगी।

(ख) कोई विवरणी, विवरण, लेखा अथवा रिपोर्ट मंगाना जिसे संबंधित जिला पंचायत, तालुका पंचायत अथवा ग्राम पंचायत से प्रस्तुत करना अपेक्षित समझा जाए।

233. तकनीकी पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण

(1) संबंधित विभाग प्रमुख तथा मंडलीय स्तर पर विभागों के प्रभारी अधिकारी (संबंधित योजनाओं अथवा आदेशों, निरीक्षण मं दिए गए तकनीकी एवं वित्तीय मानकों के अनुसार कार्यान्वयन की गुणवत्ता सुनिश्चित करने की दृष्टि से) किसी जिला पंचायत, तालुक पंचायत अथवा ग्राम पंचायत के नियंत्रणाधीन इसमें उस विभाग से संबंधित कार्य अथवा विकास योजनाओं का निरीक्षण कर सकता है तथा इसमें सरकार द्वारा निर्दिष्ट तरीके से ऐसे कार्य अथवा विकास योजनाओं से संबंधित संगत कागजातों का निरीक्षण करना भी शामिल है।

अनुबंध-IV (1) जारी

(2) इस प्रकार के निरीक्षण के सीमाक्षेत्र में सम्भाव्यता, आर्थिक व्यवहार्यता, कार्य की तकनीकी गुणवत्ता तथा किए जा रहे व्यय जैसे तकनीकी पहलू शामिल किए जा सकते हैं।

(3) ऐसे अधिकारी द्वारा निरीक्षण के बाद निरीक्षण टिप्पणी उचित कार्रवाई हेतु मुख्य कार्यकारी अधिकारी, कार्यकारी अधिकारी अथवा सचिव, जैसा भी मामला हो, को उपयुक्त कार्रवाई के लिए अग्रेषित की जाएगी।

(4) संबंधित जिला पंचायत, तालुक पंचायत अथवा ग्राम पंचायत निरीक्षणकर्ता अधिकारी की रिपोर्ट पर ऐसी रिपोर्ट की प्राप्ति की तारीख से तीस दिनों के भीतर अनुवर्ती कार्रवाई करेगी तथा ऐसी कार्रवाई करने में विफलता को अनुच्छेद 268 के प्रयोजनार्थ "कर्त्तव्य पालन में चूक" माना जा सकता है।

234. ग्राम पंचायत तालुक पंचायत और जिला पंचायत के संबंध में सरकार एवं मुख्य कार्यकारी अधिकारी की शक्तियां

(1) तालुक पंचायत अथवा ग्राम पंचायत के संबंध में मुख्य कार्यकारी अधिकारी निम्नलिखित शक्तियों का प्रयोग कर सकता है :-

(क) किसी भी ग्राम पंचायत अथवा तालुक पंचायत की बैठक की कार्यवाही अथवा ग्राम पंचायत अथवा तालुक पंचायत के नियंत्रणाधीन अथवा कब्जे में किसी पुस्तक अथवा दस्तावेज का कोई सार अथवा कोई विवरणी अथवा विवरण या रिपोर्ट की मांग करना;

(ख) किसी ग्राम पंचायत अथवा तालुक पंचायत के लिए आवश्यक किसी आपत्ति पर विचार करने, जैसा उसको किसी भी कार्य को करने के लिए अस्तित्व में रहना प्रतीत होता है जैसाकि ऐसी किसी ग्राम पंचायत अथवा तालुक पंचायत द्वारा किए जाने की संभावना है अथवा किया जा रहा है अथवा ऐसी ग्राम पंचायत अथवा तालुक पंचायत द्वारा किसी भी कार्य को करने के लिए कोई सूचना, जो कि उसके आवश्यक प्रतीत होती है, अथवा ऐसी कोई अवधि जो उसके द्वारा नियत की गई है; की अपेक्षा करना

[(ग) यदि कोई ग्राम पंचायत अथवा तालुक पंचायत अपने किसी कर्त्तव्य को पूरा करने में चूक करती है तो किसी निर्दिष्ट अवधि के भीतर कर्त्तव्यों के निष्पादन की अपेक्षा करना;]

अनुबंध-IV (1) जारी

(2) ग्राम पंचायत अथवा तालुक पंचायत

मुख्य कार्यकारी अधिकारी द्वारा खण्ड (ग) की उप-धारा (1) के अधीन दिए गए आदेश के विरूद्ध आदेश की तारीख से तीस दिनों के भीतर [सरकार] को अपील कर सकती है।

(3) जिला पंचायत के संबंध में [सरकार] निम्नलिखित शक्तियों का प्रयोग कर सकती है :-

(क) किसी जिला पंचायत की कार्यवाही अथवा जिला पंचायत के नियंत्रणाधीन अथवा कब्जे में किसी बही अथवा दस्तावेज का कोई सार अथवा कोई विवरणी अथवा लेखा विवरण अथवा रिपोर्ट मंगाना;

(ख) किसी जिला पंचायत के लिए आवश्यक किसी आपत्ति पर विचार करने, जैसा कि उसको कोई कार्य करने के लिए अस्तित्व में रहना प्रतीत होता है, जैसा ऐसी किसी जिला पंचायत द्वारा किए जाने की संभावना है अथवा किया जा रहा है अथवा ऐसी जिला पंचायत द्वारा किसी भी कार्य को करने के लिए कोई सूचना, जो कि उसको आवश्यक प्रतीत होता है, अथवा ऐसी कोई अवधि जो उसके द्वारा नियत की गई है; (की जा सकेगी) की अपेक्षा करना।

(ग) यदि कोई जिला पंचायत अपने किसी कर्त्तव्य को पूरा करने में चूक जाती है तो किसी निर्दिष्ट अवधि के भीतर कर्त्तव्यों के निष्पादन की की अपेक्षा करना।

235. ग्राम पंचायत, तालुक पंचायत अथवा जिला पंचायत के कर्त्तव्यों में चूक के निष्पादन के लिए सरकार (जिला पंचायत और तालुक पंचायत) की शक्तियां

(1) जब जिला पंचायत, तालुक पंचायत और ग्राम पंचायत के मामले में सरकार को की गई शिकायत पर अथवा अन्यथा सूचित किया जाता है कि किसी जिला पंचायत अथवा तालुक पंचायत या ग्राम पंचायत ने इस अधिनियम द्वारा अथवा उसके अधीन या उस समय लागू किसी कानून द्वारा अथवा उसके अधीन अधिरोपित किसी कर्त्तव्य के निष्पादन में चूक की है और विधिवत जांच के बाद यह संतुष्ट है कि कोई जिला पंचायत, तालुक पंचायत अथवा ग्राम पंचायत ऐसे कर्त्तव्य के निष्पादन में विफल रही है तो यह उस कर्त्तव्य के निष्पादन के लिए एक अवधि नियत कर सकती है:

अनुबंध-IV (1) जारी

बशर्ते कि ऐसी कोई अवधि तब तक नियत नहीं की जाएगी जब तक संबंधित जिला पंचायत, तालुक पंचायत अथवा ग्राम पंचायत को कारण बताने का अवसर दिया गया है कि ऐसा आदेश क्यों नहीं दिया जाएगा।

(2) अपील निम्न प्रकार की जाएगी -

(i) तालुक पंचायत के आदेश के विरूद्ध जिला पंचायत को और

(ii) जिला पंचायत के आदेश के विरूद्ध सरकार को, ऐसे आदेश की तारीख से तीस दिनों के अंदर अपील की जा सकती है

236. सरकार द्वारा ग्राम पंचायत, तालुक पंचायत, जिला पंचायत के कार्यों की जांच

(1) सरकार, रिकार्ड किए जाने वाले कारण के लिए किसी भी समय, किसी ग्राम पंचायत, तालुक पंचायत अथवा जिला पंचायत से संबंधित किसी विशिष्ट मामले में इसके किसी भी अधिकारी द्वारा की जाने वाली जांच के आदेश दे सकती है अथवा कोई मामला जिसके संबंध में इस अधिनियम के अधीन सरकार की स्वीकृति, अनुमोदन सहमति अथवा आदेश आवश्यक है।

(2) इस प्रकार की जांच करने वाले अधिकारी के पास सिविल प्रक्रिया, संहिता 1908 के अधीन जांच करने के उद्देश्य के लिए गवाही लेने तथा गवाह को उपस्थिति के लिए बाध्य करने तथा कागजात प्रस्तुत करने के लिए सिविल न्यायालय के अधिकार प्राप्त होंगे।

(3) मुख्य कार्यकारी अधिकारी, अर्थात कोई व्यक्ति जिसका नाम उसमें दिया गया है, के आवेदन पर सरकार उप-धारा (1) के अधीन की गई जांच के अदालती व्यय के लिए तथा किस पार्टी द्वारा एवं किस निधि से उसका भुगतान किया जाएगा, के आदेश इस प्रकार दे सकती है माना कि यह एक सिविल न्यायालय की डिक्री है।

237. गैर-कानूनी आदेशों अथवा संकल्प के निष्पादन को निलम्बित करने की शक्ति

(1) यदि तालुक पंचायत के अध्यक्ष की राय में ग्राम पंचायत के किसी आदेश अथवा संकल्प, या ग्राम पंचायत के किसी प्राधिकारी अथवा अधिकारी के किसी आदेश का निष्पादन अथवा ग्राम पंचायत द्वारा अथवा उसकी ओर से किसी किए जाने वाले अथवा किए जा रहे कार्य का करना अनुचित, गैर-कानूनी अथवा सही नहीं है या जनता को कठिनाई या क्षति पहुंचाते हो

अनुबंध-IV (1) जारी

अथवा ऐसा करना संभावित हो या शांति भंग होती हो तो वह आदेश द्वारा निष्पादन को निलंबित कर सकता है अथवा उसका करना रोक सकता है।

(2) जब तालुक पंचायत अध्यक्ष उपधारा (1) के अधीन कोई आदेश देता है तो वह ऐसे आदेश तथा उसको किए जाने के कारणों के विवरण की एक प्रति जिला पंचायत अध्यक्ष और उससे प्रभावित ग्राम पंचायत को भेजेगा और जिला पंचायत अध्यक्ष ऐसे आदेश की पुष्टि अथवा निरस्त अथवा निर्देशित कर सकता है कि यह बगैर किसी संशोधन के स्थायी रूप से अथवा ऐसी किसी अवधि के लिए, जिसे वह उचित समझे, लागू रहेगा।

बशर्ते कि उपधारा (1) के अधीन तालुक पंचायत अध्यक्ष द्वारा पारित किसी आदेश में प्रस्तावित आदेश के विरूद्ध संबंधित ग्राम पंचायत को कारण बताने के लिए पर्याप्त अवसर दिए बिना जिला पंचायत अध्यक्ष द्वारा उसकी पुष्टि, संशोधन अथवा परिवर्तन नहीं किया जाएगा।

(3) यदि जिला पंचायत के अध्यक्ष की राय में तालुक पंचायत को किसी आदेश अथवा संकल्प, या तालुक पंचायत के किसी प्राधिकारी अथवा अधिकारी के किसी आदेश का निष्पादन अथवा तालुक पंचायत द्वारा या उसकी ओर से किसी किए जाने वाले अथवा किए जा रहे कार्य का करना अनुचित, गैर-कानूनी अथवा सही नहीं है या जनता के कठिनाई अथवा क्षति पहुंचाते हों अथवा ऐसा करना संभावित हो या शांति भंग होती हो तो वह आदेश द्वारा निष्पादन को निलंबित कर सकता है अथवा उसका करना रोक सकता है।

(4) जब जिला पंचायत अध्यक्ष उपधारा (3) के अधीन कोई आदेश करता है तो वह ऐसे आदेश अथवा उसको किए जाने के कारणों के विवरण के एक प्रति सरकार और उससे प्रभावित तालुक पंचायत को भेजेगा तथा सरकार ऐसे आदेश की पुष्टि अथवा निरस्त अथवा निर्देशित कर सकती है कि यह बगैर किसी संशोधन के स्थायी रूप से अथवा ऐसी किसी अवधि के लिए, जिसे वह उचित समझे, लागू रहेगा।

बशर्ते कि उपधारा (3) के अधीन जिला पंचायत अध्यक्ष द्वारा पारित किसी आदेश में, प्रस्तावित आदेश के विरूद्ध संबंधित ग्राम ग्राम पंचायत को कारण बताने के लिए पर्याप्त अवसर दिए बिना सरकार द्वारा उसकी पुष्टि, संशोधन अथवा परिवर्तन नहीं किया जा सकेगा।

अनुबंध-IV (1) जारी

(5) यदि सरकार की राय है कि जिला पंचायत के किसी आदेश अथवा संकल्प, या जिला पंचायत द्वारा या उसकी ओर से किसी किए जाने वाले अथवा किए जा रहे कार्य का करना अनुचित, गैर-कानूनी अथवा सही नहीं है या जनता को कठिनाई अथवा क्षति पहुंचाते हों अथवा ऐसा करना संभावित हो या शांति भंग होती है तो वह आदेश द्वारा निष्पादन निलंबित कर सकता है अथवा उसका करना रोक सकता है।

(6) जब सरकार उपधारा (5) के अधीन कोई आदेश करती है तो वह ऐसे आदेश अथवा उसको किए जाने के कारणों के विवरण की एक प्रति प्रभावित जिला पंचायत को भेजेगी तथा सरकार ऐसे आदेश की पुष्टि अथवा निरस्त अथवा निदेशित कर सकती है कि किसी संशोधन के बिना स्थायी रूप से अथवा ऐसी किसी अवधि के लिए, जिसे वह उचित समझे, यह लागू रहेगा।

बशर्ते कि इस उप-धारा के अधीन पारित किसी आदेश में सरकार, प्रस्तावित आदेश के विरूद्ध संबंधित जिला पंचायत को कारण बताने के लिए पर्याप्त अवसर दिए बिना उसकी पुष्टि, संशोधन अथवा परिवर्तन नहीं करेगी।

238. सामग्रियों एवं उपकरणों की खरीद

(1) सरकार निम्नलिखित किसी एक अथवा सभी मामलों के लिए सामान्य अथवा विशिष्ट आदेश द्वारा व्यवस्था कर सकती है, नामतः -

(क) किसी जिला पंचायत, तालुक पंचायत अथवा ग्राम पंचायत द्वारा अपेक्षित सामग्री, उपकरण, मशीन एवं अन्य वस्तुएं किस तरीके से खरीदी जाएगी;

(ख) कार्य संविदा एवं आपूर्ति निविदाएं मंगाने तथा उनकी जांच एवं स्वीकार करने का तरीका;

(ग) इस प्रकार के कार्यों तथा विकास योजनाओं का निष्पादन एवं जांच तथा उक्त कार्यों एवं योजनाओं के संबंध में भुगतान किए जाने का तरीका; और

(घ) इस धारा के प्रयोजनार्थ समिति का गठन।

अनुबंध-IV (1) जारी

(2) उप-धारा (1) में उल्लिखित के अतिरिक्त (1) निधि के आहरण, बिलों के प्ररुप व्यय करना, लेखे का रख-रखाव, लेखे का प्रस्तुतीकरण तथा उस प्रकार के अन्य मामलों के संबंध में कार्यान्वयन के नियम जैसा कि सरकारी विभागों में लागू हैं, आवश्यक परिवर्तनों के साथ लागू किए जाएगें।

239. कतिपय मामलों में प्रशासक नियुक्त करने की शक्ति

(1) जब कभी,

(क) इस अधिनियम के अधीन किसी जिला पंचायत अथवा तालुक पंचायत का कोई आम चुनाव अथवा उसके परिणामस्वरूप किसी कार्यवाही को किसी सक्षम न्यायालय अथवा प्राधिकारी द्वारा स्थगित कर दिया गया हो; अथवा

(ख) किसी जिला पंचायत अथवा तालुक पंचायत के सभी सदस्यों अथवा दो-तिहाई से अधिक सदस्यों ने त्यागपत्र दे दिया हो,

सरकार सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा ऐसी अवधि के लिए, जैसा अधिसूचना में उल्लेख किया गया है, एक प्रशासक की नियुक्ति करेगी तथा ऐसी अधिसूचना द्वारा इस प्रकार की नियुक्ति की कुल अवधि घटा अथवा बढ़ा सकती है, ताकि इस प्रकार की नियुक्ति की कुल अवधि 6 माह से अधिक नहीं होगी।

(2) इस अधिनियम में कुछ विहित होते हुए भी, उप-धारा (1) के अधीन किसी प्रशासक की नियुक्ति पर, ऐसी नियुक्ति की अवधि के दौरान जिला पंचायत अथवा तालुक पंचायत तथा उसकी समिति तथा प्रावधानों के कार्यान्वयन के लिए उत्तरदायी ऐसी पंचायत के अध्यक्ष अथवा उपाध्यक्ष इस अधिनियम के अथवा कोई अन्य कानून को इस अधिनियम अथवा किसी अन्य कानून द्वारा सौंपे गए कर्त्तव्यों अथवा कार्यों को निष्पादित एवं पूरा करने के लिए दी गई शक्तियां समाप्त कर दी जाएगी तथा इस प्रकार की सभी शक्तियों का प्रयोग तथा ऐसे सभी तर्कों एवं कार्यों का निष्पादन एवं निर्वहन प्रशासक द्वारा किया जाएगा।

240. पंचायतों की भूमिका निर्दिष्ट करने के लिए सरकार की शक्ति

सरकार, सामान्य अथवा विशेष आदेश द्वारा, अनुसूची-I, II तथा III में उल्लिखित कार्यों से संबंधित कार्यक्रमों, योजनाओं एवं गतिविधियों के संबंध में समय-समय पर ग्राम पंचायत, तालुक पंचायत तथा

जिला पंचायत की भूमिका निर्दिष्ट कर सकती है ताकि ऐसे कार्यक्रमों, योजनाओं एवं कार्यकलापों का उचित समन्वय एवं प्रभावी कार्यान्वयन सुनिश्चित किया जा सके।

असम पंचायत अधिनियम, 1994 के उद्धरण

धारा 27 - "(1) प्रत्येक गांव पंचायत, ऐसे समय तथा ऐसे ढंग से जैसा कि निर्धारित किया जाए, अपनी अनुमानित प्राप्तियों तथा आने वाले वर्ष के संवितरण हेतु प्रत्येक वर्ष एक बजट तैयार करेगी तथा गांव पंचायत के ऊपर क्षेत्राधिकार रखने वाली आंचलिक पंचायत को बजट प्रस्तुत करेगी।

(2) आंचलिक पंचायत निर्धारित समय के भीतर या तो बजट को अनुमोदित कर सकती है अथवा इसके द्वारा निर्देशित इस प्रकार के संशोधन के लिए गांव पंचायत को लौटा सकती है। इस प्रकार के संशोधन के बाद बजट निर्धारित समय-सीमा के अंदर गांव पंचायत के अनुमोदन हेतु पुनः प्रस्तुत किया जाएगा।

(3) जब तक आंचलिक पंचायत द्वारा बजट अनुमोदित नहीं कर दिया जाता तब तक कोई भी व्यय नहीं किया जाएगा यदि आंचलिक पंचायत इस प्रयोजनार्थ निर्धारित समय-सीमा के भीतर अनुमोदन की सूचना देने में असफल हो जाती है तो बजट आंचलिक पंचायत द्वारा अनुमोदित किया गया मान लिया जाएगा।"

धारा 59. आंचलिक पंचायत के बजट के लिए समान प्रावधान

धारा 96 - "(1) प्रत्येक जिला परिषद, निर्धारित की गई समय-सीमा के भीतर, प्रत्येक वर्ष अपनी अनुमानित प्राप्तियों तथा आने वाले वर्ष के लिए वितरण हेतु बजट तैयार करेगी तथा इसे निदेशक, पंचायत तथा ग्रामीण विकास, असम के माध्यम से सरकार को प्रस्तुत करेगी।

(2) सरकार, निर्धारित समय सीमा के भीतर, या तो बजट को अनुमोदित कर सकती है अथवा इसके द्वारा निर्देशित इस प्रकार के संशोधन के लिए जिला परिषद को वापस कर सकती है। इस प्रकार के संशोधन के बाद इसके लिए निर्धारित समय-सीमा के भीतर बजट सरकार के अनुमोदन हेतु पुनः प्रस्तुत किया जाएगा। यदि जिला पंचायत द्वारा प्रस्तुत अथवा पुनः प्रस्तुत करने की तारीख से तीस दिनों के भीतर सरकार का अनुमोदन प्राप्त नहीं होता है तो बजट को सरकार द्वारा अनुमोदित मान लिया जाएगा।"

अनुबंध-IV (2)

केंद्र-प्रायोजित योजनाओं पर जमीनी स्तर पर आयोजना के संबंध में विशेषज्ञ समूह की सिफारिशें

- वर्तमान में, केन्द्रीय राजकोषीय हस्तांतरण अनेक प्रकार से होता है तथा बहुत से नामों से जाना जाता है। उदाहरण के लिए, जबकि अधिकतर केंद्र-प्रायोजित योजनाएं केन्द्रीय सरकार की सेवा (लाइन) मंत्रालयों द्वारा संचालित की जाती है, वहीं अन्य योजनाएं "अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता" के रूप में राज्य योजना पक्ष पर वहन की जाती हैं। निधियां केन्द्रीय नैगम संगठनों के माध्यम से भी संचालित की जाती है जेसे कि केन्द्रीय अनुसूचित जाति एवं जनजाति विकास निगम एवं जनजातीय परिसंघ। यह सिफारिश की जाती है कि सभी केन्द्रीय वित्तपोषित कार्यक्रम एवं योजनाओं को जो राज्य एवं स्थानीय सरकारों के क्षेत्राधिकार में आती है, पूर्व वर्षा की भांति एक समान शब्दावली द्वारा जाना जा सकता है। "केंद्र-प्रायोजित" शब्द साधारण एवं सुस्थापित है तथा इस प्रकार के सभी हस्तांतरणों को उल्लिखित करने के लिए पर्याप्त है।
- संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध प्रत्येक मंत्रालय द्वारा संचालित केंद्र-प्रायोजित योजनाओं से संबंधित मामलों को मंत्रालय की गतिविधियों में, पंचायतों सहित, सरकार के स्तर पर सौंपी गई भूमिकाओं पर कार्यकलाप निर्माण कार्यों का उत्तरदायित्व लेना चाहिए। इस कार्य में सहायता के सिद्धांत का अनुकरण करना चाहिए, जिसके द्वारा कार्यों को उस स्तर पर रखा जाता है, जहां से इसका सर्वोत्तम निष्पादन किया जा सके। केंद्र-प्रायोजित योजनाओं के दिशानिर्देश मंत्रालय द्वारा स्वीकार की गई कार्यकलाप निर्माण के अनुसार पुनः क्रमबद्ध किए जाने की आवश्यकता होगी।
- योजना दिशानिर्देशों में कार्यकलाप निर्माण के आधार पर प्रशासनिक अनुमोदन एवं स्वीकृति की स्पष्ट विधि निर्दिष्ट की जानी चाहिए। इस प्रकार, केंद्र-प्रायोजित योजनाओं के अनुमोदन, प्रशासनिक स्वीकृति, समीक्षा एवं अनुवीक्षण के लिए शक्तियां विभिन्न स्तरों पर, जैसा उचित हो, स्थानीय सरकारों में निहित करने की आवश्यकता होगी। इसमें रूपरेखा तैयार करने की प्रक्रिया शामिल होगी जिससे आयोजना एवं कार्यान्वयन के संबंध में लोकतांत्रिक निर्णय लेना सुनिश्चित किया जा सकेगा।

अनुबंध-IV (2) जारी

- पंचायतों को सहायता देने में लाईन विभागों की भूमिका का वर्णन किया जाना होगा। जबकि पंचायतों को आयोजना एवं योजनाओं के कार्यान्वयन के बारे में स्पष्ट भूमिका दी गई है, लाइन विभागों द्वारा तकनीकी सहायता उपलब्ध कराने की विधियां निर्धारित की जानी होंगी।
- पंचायतों के मुख्य कार्यों से संबंधित प्रत्येक केन्द्रीय मंत्रालय जैसे कि मानव संसाधन विकास मंत्रालय (शिक्षा एवं महिला एवं बाल कल्याण विभाग दोनों) ग्रामीण विकास एवं कृषि द्वारा स्पष्ट विवरण दिया जाना है, ताकि जमीनी स्तर पर सभी लाइन विभाग पंचायत के नियंत्रणाधीन कार्य करें।
- पंचायतों के समान कार्य करने और कार्य निष्पादित करने के लिए उनके साथ प्रतिस्पर्धा करने हेतु विभिन्न योजनाओं के अधीन विभिन्न समानान्तर निकाय बड़ी संख्या में स्थापित किए गए हैं। यह औचित्य कि समानान्तर निकायों को निधियों के प्राप्तकर्ताओं के रूप में मौजूद रहना अपेक्षित है, अब मान्य नहीं रह गया है क्योंकि पंचायतें अनुच्छेद 243ज के अनुसार स्वयं अपनी निधियां धारित करने की हकदार हैं। परंतु यह तर्क दिया जाता है कि उनकी आवश्यकता क्षेत्रीय ध्यानकेंद्रण और लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए है। जिस सीमा तक उन्हें अपरिहार्य माना जाता है, समानान्तर निकायों को पंचायतों की सहायता करने के लिए उनके अधीन लाया जाना होगा।
- केंद्र-प्रायोजित योजनाओं के दिशानिर्देशों में आयोजना विधि संविधान के अनुच्छेद 243यघ में निर्धारित किए गए अनुसार सख्ती से अनुरुप होनी होगी। केंद्र-प्रायोजित योजनाओं के दिशानिर्देशों में निर्धारित एकमात्र आयोजना विधियों का अन्य पहलों से बहुत कम संपर्क होता है और सभी स्तरों पर पंचायतों द्वारा एकीकृत ग्राम योजनाएं तैयार करने में समर्थ बनाने के लिए योजनाओं को संशोधित करना होगा ताकि जिला आयोजना समिति द्वारा जिले की प्रारुप विकास योजना में सरलतापूर्वक समेकन सुनिश्चित किया जा सके।
- केंद्र-प्रायोजित योजनाओं के कार्यान्वयन में लोगों की भागीदारी को अधिक सुदृढ़ करने के प्रयास के भाग के रूप में लाइन विभागों द्वारा कार्यान्वयन की देखरेख करने, पूर्णता प्रमाणित करने, अनुवीक्षण, सृजित परिसंपत्तियों के रख-रखाव, लाभों के वितरण आदि के लिए समितियों अथवा हितधारकों के समूह सृजित करने की प्रवृत्ति रही है। उनका सृजन और

संवर्धन पंचायतों को कार्यो और शक्तियों की सुपुर्दगी से पूर्व होता है। जबकि ऐसे स्वायत्तशासी सामाजिक समूहों का सुदृढ़ीकरण और संवर्धन सामाजिक पूंजी बढ़ाने और लोकतंत्र की जड़े गहरी करने तथा संबंधित हितधारकों की अधिक भागीदारी के लए अपेक्षित है वहीं उन्हें पंचायतों के प्रतिस्थापी के रूप में गठित करने को हतोत्साहित किया जाना होगा। पंचायतें अधिशासन की सीमा और विकास का कार्य निष्पादित करने वाली स्थानीय शासन हैं और वह किसी पंचायत की संपूर्ण जनसंख्या के प्रति जिम्मेवार है। वित्तीय और सामाजिक दोनों जिम्मेवारी के अतिरिक्त, यह महत्त्वपूर्ण है कि इन निकायों को पंचायती राज प्रणाली के सीमा क्षेत्र के भीतर कार्य करने दिया जाए। पंचायतों और इन निकायों को विरोधियों के रूप में कार्य करने की बजाय साझा भलाई के लिए एकसाथ कार्य करना सीखना होगा।

- पंचायत और ऐसे समूहों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध सुनिश्चित करने में ऐसे समूहों की उप-प्रणालियों तथा लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की ओर एक कदम के रूप में संकल्पना करना सर्वोत्तम है। वे या तो स्वयं को पंचायतों की स्थायी समितियों अथवा ग्राम सभा की उप-समितियों के रूप में स्थापित करके, उन्हें नामोदिष्ट विशिष्ट कार्य निष्पादित करते हुए पंचायतों से अपनी शक्तियां और संसाधन ले सकते हैं। दोनों तरह से, डिजाइन के अवयव को ऐसी व्यवस्थाओं की सहक्रिया, सौहार्द, सततता और वित्तीय जिम्मेवारी सुनिश्चित करनी चाहिए।
- सभी सूचना के स्वैच्छिक प्रकटन करने के दायित्व को केंद्र-प्रायोजित योजनाओं के दिशा निर्देशों का अभिन्न भाग बनाया जाना होगा। यह समीक्षा करने के लिए कि क्या ये दायित्व वास्तव में संबंधित पंचायतों द्वारा पूरे किए गए हैं, व्यवस्थाएं भी करना आवश्यक होगा।

अनुबंध-V (1)

शहरी शासनों के कार्यकारी प्रमुखों की नियुक्ति : अंतर्राष्ट्रीय प्रथा

क्रम सं0	शहर/देश	शहरी सरकार के कार्यकारी प्रमुख	नियुक्ति का ढंग
1	न्यूयार्क/संयुक्त राज्य अमरीका	महापौर न्यूयार्क शहर के शासन की कार्यकारी शाखा का प्रमुख होता है	चार वर्ष की अवधि के लिए लोकप्रिय मत द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुना जाता है।[113]
2	लंदन/यूनाइटेड किंगडम	लंदन का महापौर, वृहद लंदन प्राधिकरण का कार्यकारी प्रमुख	लंदन का महापौर वृहद लंदन के मतदाताओं द्वारा चार वर्षों की अवधि के लिए प्रत्यक्ष रूप से चुना जाता है। चुनाव का तरीका संपूरक मत है जहां प्रत्येक मतदाता पहली तथा दूसरी पसंद प्रकट करता है तथा यदि उम्मीदवार को 50% या उससे अधिक पहली पसंद का मत नहीं मिलता है तब विजेता का निर्णय करने के लिए दो उच्चतम रेंक वाले उम्मीदवार को सभी उम्मीदवारों को दूसरे संपूरक मतों को पुनः आवंटित किया जाता है।[114]
3	टोकियो/जापान	टोकियो का गवर्नर, टोकियो महानगर सरकार का कार्यकारी प्रमुख है	गवर्नर नागरिकों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुना जाता है तथा टोकियो महानगर का प्रतिनिधित्व करता है। उसका कार्यकाल चार वर्ष होता है। 23 विशेष वार्ड से संबंधित क्षेत्र में गवर्नर की स्थिति महापौर की होती है।[115]
4	सिडनी/आस्ट्रेलिया	लॉर्ड मेयर सिडनी की शहर परिषद का प्रमुख होता है तथा केन्द्रीय सिडनी आयोजना समिति का अध्यक्ष होता है	सिडनी शहर अधिनियम, 1988 की धारा 23 में उल्लिखित है कि सिडनी का लॉर्ड मेयर मतदाताओं द्वारा चुना जाएगा। धारा 23क में उल्लेख है कि जो व्यक्ति सिडनी शहर के लार्ड मेयर के पद हेतु उम्मीदवार है वह उसी समय सिडनी शहर के सभासद के चुनाव हेतु भी एक उम्मीदवार होना चाहिए। स्थानीय शासन अधिनियम, 1993 की धारा 230 में

113 स्रोत : http://en.wikipedia.org/wiki/Mayor_of_New_York_City
114 स्रोत : http://www.citymayors.com/government/uk_government.html
115 स्रोत : http://www.metro.tokyo.jp/ENGLISH/PROFILE/overview08.htm
116 स्रोत : http://www.austlii.edu.au/au/legis/nsw/consol_act/cosa1988179/s23.html

क्रम सं0	शहर/देश	शहरी सरकार के कार्यकारी प्रमुख	नियुक्ति का ढंग
			दिया गया है कि मतदाताओं द्वारा निर्वाचित मेयर का कार्यकाल 4 वर्ष की अवधि के लिए होता है।[117]
5	शंघाई/चीन	महापौर शंघाई नगर शासन	सीपीसी केन्द्रीय समिति द्वारा नियुक्त किया जाता है।[118]
6	पेरिस/फ्रांस	पेरिस शहर परिषद का महापौर	मेयर का चुनाव नगर परिषद द्वारा किया जाता है। मेयर चुने जाने के लिए किसी उम्मीदवार को पहले अथवा दूसरे चक्र में डाले गए मतों का स्पष्ट बहुमत मिलना चाहिए। यदि दो चक्र के बाद कोई उम्मीदवार इसे प्राप्त नहीं करता है तब तीसरा चक्र होता है तथा सर्वाधिक मतों वाले उम्मीदवार को चुन लिया जाता है।[119] चुनाव प्रत्येक 6 वर्षों में कराए जाते हैं।
7	जोहांसबर्ग/दक्षिण अफ्रीका गणराज्य	कार्यकारी महापौर जोहांसबर्ग शहर	परिषद अपने सदस्यों में से बहुमत द्वारा कार्यकारी महापौर का चुनाव करती है। यदि किसी को बहुमत प्राप्त नहीं होते हैं, सबसे कम मत पाने वाले उम्मीदवार को बाहर कर दिया जाता है तथा आगे मत डाले जाते है। यह प्रक्रिया तब तक दोहरायी जाती है जब तक किसी उम्मीदवार को बहुत मत नहीं मिल जाते (नगर अवस्थापना अधिनियम, 1998 की /धारा 55 एवं अनुसूची 3)।[120]

117 स्रोत : http://www.austlii.edu.au/au/legis/nsw/consol_act/lga1993182/s230.html
118 स्रोत : http://news.xinhuanet.com/english/2006-09/26/content_5140777.htm
119 स्रोत : http://www.diplomatie.gouv.fr/en/article-imprim.php3?id_article=8746
120 स्रोत : http://www.info.gov.za/gazette/acts/1998/a117-98.pdf

अनुबंध-V (2)

कुछ नगरपालिका अधिनियम के अधीन राज्य सरकार की शक्तियां

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
1	तमिलनाडु जिला नगरपालिका अधिनियम, 1920	नियंत्रण के प्रयोजनार्थ राज्य सरकार और समाहर्ता की शक्तियां	(1) जिला समाहर्ता अपने जिले में किसी भी नगरपालिका प्राधिकरण के नियंत्रण में कोई अचल संपत्ति में प्रवेश अथवा चल रहे किसी भी कार्य का निरीक्षण कर सकता है (2) राज्य सरकार अथवा जिला समाहर्ता- (क) किसी भी परिषद अथवा कार्यकारी प्राधिकरण के कब्जे अथवा नियंत्रण में किसी भी कागजात की मांग कर सकता है। (ख) किसी भी परिषद अथवा कार्यकारी प्राधिकरण को कोई विवरणी, योजना, आकलन, विवरण, लेखा अथवा आंकड़े प्रस्तुत करने के लिए कह सकता है। (ग) किसी भी परिषद अथवा कार्यकारी प्राधिकरण को किसी नगरपालिका मामले पर सूचना प्रस्तुत करने के लिए कह सकता है। (घ) कार्यकारी प्राधिकरण के लिए परिषद के विचारार्थ लिखित में रिकार्ड कोई अवलोकन जिसको वे अथवा वह इसकी कार्यवाही अथवा कर्त्तव्यों के लिए उचित समझते हों (धारा 34)।

अनुबंध-V(2) जारी

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
2	तमिलनाडु जिला नगरपालिका अधिनियम, 1920	संकल्प का निष्पादन लागू करने के लिए समाहर्ता की शक्तियां	यदि जिला समाहर्ता को यह प्रतीत होता है कि नगरपालिका कार्यकारी प्राधिकरण परिषद के किसी संकल्प को पूरा करने में कोई चूक करती है तो उक्त जिला समाहर्ता, कार्यकारी प्राधिकरण को स्पष्टीकरण का पर्याप्त अवसर देने के बाद, कार्यकारी प्राधिकरण के स्पष्टीकरण, यदि कोई है, के साथ उसपर अपनी रिपोर्ट राज्य सरकार को भेजेगा तथा साथ ही उसकी एक प्रति परिषद को भेजेगा (धारा 35)।
3	तमिलनाडु जिला नगरपालिका अधिनियम, 1920	अधिनियम के अधीन संकल्पों आदि को निलंबित अथवा रद्द करने की शक्तियां	राज्य सरकार लिखित आदेश द्वारा - (i) पारित संकल्प, पारित आदेश अथवा लाइसेंस अथवा दी गई अनुमति को निलंबित अथवा रद्द कर सकती है, अथवा (ii) इस अधिनियम के अधीन अथवा अनुपालन में किए जाने वाले अथवा किए जा रहे किसी कार्य को करने से निषिद्ध कर सकती है, यदि उनकी राय में, (क) इस प्रकार का संकल्प, आदेश, लाइसेंस, अनुमति अथवा कार्य कानूनी रूप से पारित, जारी अनुमत अथवा प्राधिकृत नहीं किया गया है, अथवा (ख) इस प्रकार का संकल्प, आदेश, लाइसेंस, अनुमति अथवा कार्य इस अधिनियम अथवा किसी अन्य कानून द्वारा प्रदत्त शक्तियों के अधिक्य में है, अथवा

अनुबंध-V(2) जारी

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
			(ग) ऐसे संकल्प अथवा आदेश का कार्यान्वयन, ऐसे लाइसेंस अथवा अनुमति की निरंतरता अथवा ऐसा कार्य करने से मानव जीवन, स्वास्थ्य अथवा सुरक्षा को खतरा होने की संभावना है अथवा दंगा फसाद होने की संभावना है, बशर्ते कि राज्य सरकार खण्ड (क) और (ख) में उल्लिखित कारणों में से किसी एक धारा के अधीन कार्रवाई करने से पहले संबंधित प्राधिकरण अथवा व्यक्ति का स्पष्टीकरण देने का अवसर दिया जाएगा (धारा 36)।
4	तमिलनाडु जिला नगरपालिका अधिनियम, 1920	समाहर्ता की आपात्कालीन शक्तियां	समाहर्ता, आपात्काल के मामले में, अथवा किसी कार्य को करने के लिए उपलब्ध, अथवा किसी कार्य को पूरा करने जिसको परिषद अथवा कार्यकारी प्राधिकरण निष्पादित अथवा करने के लिए प्राधिकृत है तथा उसके विचार में इसका तुरंत निष्पादन अथवा पूरा करना जनता की सुरक्षा के लिए आवश्यक है निर्देश दे सकता है तथा यह निर्देश दे सकता है कि इस कार्य को निष्पादित करने अथवा इस कार्य को पूरा करने के लिए किए गए व्यय का भुगतान जैसाकि आपात्काल में आवश्यक हो, नगरपालिका निधि में से किया जाएगा (धारा 37)।

अनुबंध-V (2) जारी

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
5	तमिलनाडु जिला नगरपालिका अधिनियम, 1920	नगरपालिकाओं के पर्यवेक्षण हेतु अधिकारियों को नियुक्त करने की राज्य सरकार की शक्ति	राज्य सरकार ऐसे अधिकारियों की नियुक्ति कर सकती है जैसा इस अधिनियम के अधीन स्थापित सभी अथवा किसी एक नगरपालिका परिषदों के कार्यों के निरीक्षण अथवा अधीक्षण के प्रयोजनार्थ आवश्यक है (धारा 38)।
6	तमिलनाडु जिला नगरपालिका अधिनियम, 1920	कार्य शुरू करने के लिए अथवा नगरपालिकाओं की चूक में कार्रवाई करने की राज्य सरकार की शक्तियां	यदि किसी समय राज्य सरकार को यह प्रतीत होता है कि नगरपालिका परिषद, अध्यक्ष अथवा कार्यकारी प्राधिकरण इस अथवा अन्य किसी अधिनियम के अधीन सौंपे गए किसी कर्त्तव्य के पालन में चूक की है तो लिखित आदेश द्वारा ऐसे कर्त्तव्य को निष्पादित करने के लिए अवधि नियत करती है (धारा 39)।
7	तमिलनाडु जिला नगरपालिका अधिनियम, 1920	उपाध्यक्ष को हटाने की राज्य सरकार की शक्ति	राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा किसी उपाध्यक्ष को हटा सकती है, जो उनके विचार में इस अधिनियम अथवा किसी नियम, नियमावली, विनियम अथवा उसके अधीन जारी विधिसम्मत आदेश के प्रावधानों की जानबूझकर उपेक्षा करता है अथवा करने के लिए मना करता है अथवा अवज्ञा करता है अथवा उसमें निहित शक्तियों का दुरूपयोग करता है (धारा 40)।
8	तमिलनाडु जिला नगरपालिका अधिनियम, 1920	परिषद को भंग करने अथवा अतिक्रमण के लिए राज्य सरकार की शक्तियां	यदि राज्य सरकार के विचार में नगरपालिका कानून द्वारा सौंपे गए कर्त्तव्यों को निभाने में सक्षम नहीं है अथवा लगातार चूक कर रही है अथवा अपनी शक्तियों का अतिक्रमण अथवा दुरूपयोग करती है तो राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा

अनुबंध-V (2) जारी

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
			(क) नगरपालिका को एक विशिष्ट तारीख से भंग कर सकती है, अथवा (ख) निर्देश दे सकती है कि नगरपालिका को तत्काल प्रभाव से पुनर्गठित कर दिया जाए तथा यह तारीख भंग करने की तारीख से 6 माह से अधिक नहीं होगी (धारा 41)
9	पंजाब नगर निगम अधिनियम, 1976	दस्तावेज प्रस्तुत करने की अपेक्षा के लिए सरकार की शक्तियां	सरकार किसी भी समय आयुक्त से -(क) कोई रिकार्ड, पत्राचार, योजना अथवा उसके नियंत्रणाधीन अथवा कब्जे में अन्य दस्तावेज प्रस्तुत करने के लिए कह सकती है; (ख) कोई विवरणी, योजना, आकलन, विवरण, लेखा अथवा कार्यवाही से संबंधित आंकड़े, निगम अथवा नगरपालिका प्राधिकरण के कर्त्तव्य अथवा कार्य प्रस्तुत करने के लिए कह सकती है। (ग) कोई रिपोर्ट प्राप्त करना एवं प्रस्तुत करना (धारा 403)।
10	पंजाब नगर निगम अधिनियम, 1976	निरीक्षण	सरकार अपने किसी अधिकारी को किसी नगरनिगम विभाग अथवा कार्यालय का निरीक्षण अथवा जांच करने अथवा निगम अथवा किसी नगरपालिका प्राधिकरण द्वारा की जा रही कोई सेवा अथवा कार्य अथवा निगम से संबंधित कोई संपत्ति तथा उसके संबंध में रिपोर्ट करने के लिए मांग सकती है तथा निगम एवं प्रत्येक नगरपालिका प्राधिकरण तथा सभी निगम अधिकारी तथा निगम के अन्य कर्मचारी इस बात के लिए बाध्य होंगे कि वे इस प्रकार प्रतिनियुक्ति

अनुबंध-V (2) जारी

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
			किए गए अधिकारी को पर्याप्त समय दे तथा अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करने के लिए उसको निगम के परिसर तथा संपत्तियों तथा सभी रिकार्ड, लेखे तथा अन्य दस्तावेजों का निरीक्षण कराए (धारा 404)।
11	पंजाब नगर निगम अधिनियम, 1976	सरकार के निर्देश	यदि, किसी सूचना के प्राप्त होने पर अथवा धारा 403 अथवा 404 के अधीन प्राप्त रिपोर्ट अथवा अन्यथा सरकार का यह मत है -- (क) कि इस अधिनियम के अधीन निगम अथवा किसी नगरनिगम प्राधिकरण पर अधिरोपित कर्त्तव्यों का निष्पादन नहीं हो रहा है अथवा किसी अपूर्ण, अपर्याप्त अथवा अनुपयुक्त ढंग से निष्पादित किया जा रहा है; अथवा (ख) कि इस प्रकार के कर्त्तव्य के निष्पादन के लिए पर्याप्त वित्तीय प्रावधान नहीं किए गए हैं। यह निगम अथवा आयुक्त को निर्देश दे सकती है, जो भी समय-सीमा यह उचित समझे, कि कर्त्तव्यों अथवा जैसा कि उचित निर्वहन के लिए जो भी मामला हो अपनी संतुष्टि हेतु प्रबंध करे, कर्त्तव्यों के निष्पादन के लिए अपनी संतुष्टि हेतु वित्तीय प्रावधान करे तथा संबंधित निगम अथवा आयुक्त इस प्रकार के दिशानिर्देश का अनुपालन करेगा, बशर्ते कि जब तक कि सरकार के विचार में ऐसे आदेश को तुरंत लागू

अनुबंध-V (2) जारी

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
			करने के लिए आवश्यक न हो तो इस धारा के अधीन कोई निर्देश जारी करने से पहले निगम अथवा आयुक्त को कारण बताने का अवसर दिया जाएगा कि क्यों न इस प्रकार के निर्देश जारी कर दिए जाए।
12	पंजाब नगर अधिनियम, 1976	धारा 405 के अधीन निर्देश लागू करने हेतु शक्ति प्रदान करना	यदि, धारा 405 की उप-धारा के अधीन निर्देश द्वारा नियत अवधि के अंदर कोई कार्य जिसको करने के लिए उस उप-धारा के अधीन निर्देश दिए गए हैं, जिसको यथोचित रूप से पूरा नहीं किया गया है, सरकार ऐसे कार्य को करने के लिए प्रबंध कर सकती है तथा निर्देश दे सकती है कि उससे संबंधित सभी व्यय का निगम निधि से भुगतान किया जाएगा (धारा 406)।
13	पंजाब नगर अधिनियम, 1976	निगम का विघटन	(1) यदि सरकार के विचार में कोई निगम अपने कर्त्तव्यों को निभाने में सक्षम नहीं है अथवा इस अधिनियम के अधीन अथवा द्वारा अथवा कुछ समय के लिए लागू किसी अन्य कानून द्वारा सौंपे गए कार्यों के निष्पादन में लगातार चूक होती है अथवा अपनी किसी शक्ति का अतिक्रमण अथवा दुरूपयोग करता है तो सरकार सरकारी राजपत्र में उसके कारणों सहित एक आदेश का प्रकाशन कर उसको विघटित कर सकती हैं, बशर्ते कि निगम को उसके विघटन से पहले सुनने का उचित अवसर अवश्य दिया जाएगा।

अनुबंध-V(2) जारी

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
			(2) जब उपधारा (1) के अधीन कोई नगरनिगम विघटित हो जाता है तो (i) निगम के सभी पार्षद तुरंत अपना पदभार छोड़ देंगे (ii) इसके विघटन के दौरान निगम की सभी शक्तियां एवं कर्त्तव्य ऐसे व्यक्ति अथवा प्राधिकरण द्वारा प्रयोग तथा निष्पादित किए जाएंगे; जिसको सरकार अधिसूचना द्वारा इस कार्य के लिए नियुक्त करेगी तथा (iii) निगम के अधिकार वाली सभी संपत्ति सरकार द्वारा धारित की जाएगी (धारा 407)।
14	पंजाब नगरनिगम अधिनियम, 1976	निगम के किसी संकल्प अथवा आदेश निलंबित करने की सरकार की शक्तियां	यदि सरकार का यह विचार है कि किसी संकल्प का निष्पादन अथवा निगम का आदेश अथवा कोई अन्य नगर प्राधिकरण अथवा उसके अधीनस्थ कर्मचारी अथवा किसी कार्य को करना जो कि किया जाना है अथवा किया जा रहा है अथवा निगम की तरफ से उल्लंघन हो रहा है अथवा इस अधिनियम के तहत प्रदत्त अधिकारों का अतिक्रमण अथवा कुछ समय के लिए प्रभावी अन्य कोई कानून अथवा शांति भंग होने की आशंका है अथवा जनता अथवा किसी वर्ग अथवा व्यक्तियों के समूह को चोट अथवा हानि पहुंच

अनुबंध-V(2) जारी

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
			सकती है तो सरकार लिखित आदेश द्वारा ऐसे संकल्प अथवा आदेश को निलंबित कर सकती है अथवा ऐसे किसी कार्य को करने से निषिद्ध कर सकती है (धारा 422)।
15	कोलकाता नगरनिगम अधिनियम, 1980	रिकार्ड आदि मांगने के लिए राज्य सरकार की शक्तियां	राज्य सरकार किसी भी नगरपालिका प्राधिकरण को किसी भी समय - (क) कोई रिकार्ड, पत्राचार, योजना अथवा अन्य दस्तावेज प्रस्तुत करने के लिए कह सकती है। (ख) कोई विवरणी, योजना, आकलन, विवरण, लेखा अथवा आंकड़े प्रस्तुत करने के लिए कह सकती है, और (ग) कोई रिपोर्ट प्रस्तुत अथवा प्राप्त करने की मांग कर सकती है और उसपर ऐसा प्राधिकरण ऐसी अपेक्षा का पालन करेगा (धारा 113)।
16	कोलकाता नगरनिगम अधिनियम, 1980	निरीक्षण अथवा जांच और रिपोर्ट करने के लिए अधिकारियों को प्रतिनियुक्त करने की राज्य सरकार की शक्तियां	राज्य सरकार निगम के किसी विभाग, कार्यालय, सेवा, कार्य अथवा संपत्ति के निरीक्षण अथवा जांच तथा उसकी रिपोर्ट करने के लिए अपने किसी अधिकारी को भेज सकती है तथा ऐसा अधिकारी इस प्रकार के निरीक्षण अथवा जांच के लिए धारा 113 के अधीन राज्य सरकार की सभी शक्तियों का प्रयोग करेगा (धारा 114)।

अनुबंध-V (2) जारी

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
17	कोलकाता नगरनिगम अधिनियम, 1980	नगर प्राधिकरणों को कार्रवाई करने हेतु अपेक्षा करने की राज्य सरकार की शक्तियां	यदि, रिकार्ड पर विचार करने के बाद, धारा 113 के अधीन आवश्यक अथवा धारा 114 के अधीन रिपोर्ट अथवा राज्य सरकार को अन्यथा प्राप्त कोई सूचना के आधार पर राज्य सरकार का विचार है - (क) कि नगरपालिका प्राधिकरण द्वारा किया गया कोई कार्य अवैध अथवा अनियमित है अथवा इस अधिनियम के अधीन अथवा द्वारा ऐसे प्राधिकरण को सौंपे गए किसी कर्त्तव्य का निष्पादन नहीं किया जा रहा है अथवा अपूर्ण, अपर्याप्त अर्थात गलत ढंग से किया गया है, अथवा (ख) कि इस अधिनियम के अधीन किसी कर्त्तव्य को निष्पादित करने के लिए पर्याप्त वित्तीय प्रावधान नहीं किया गया है। राज्य सरकार आदेश द्वारा ऐसे प्राधिकरण को इस प्रकार के अवैध अथवा अनियमित कार्य को नियमित करने अथवा ऐसे कर्त्तव्य का पालन करने अथवा ऐसे प्राधिकरण को इस प्रकार का अवैध अथवा अनियमित कार्य करने से रोकने अथवा ऐसे प्राधिकरण को राज्य सरकार की संतुष्टि के लिए एक विनिर्दिष्ट अवधि के अंदर ऐसे कर्त्तव्य के उचित निष्पादन के लिए व्यवस्था अथवा वित्तीय प्रावधान करने का आदेश दे सकती है, बशर्ते कि, जब तक कि राज्य सरकार

अनुबंध-V (2) जारी

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
			के विचार में ऐसे आदेश को तुरंत लागू करने के लिए आवश्यक न हो तो इस धारा के अधीन कोई दिशानिर्देश जारी करने से पहले ऐसे प्राधिकरण को राज्य सरकार द्वारा निर्दिष्ट अवधि के अंदर कारण बताने का अवसर दिया जाएगा कि क्यों न इस प्रकार के आदेश जारी कर दिए जाएं (धारा 115)।
18	कोलकाता नगरनिगम अधिनियम, 1980	धारा 115 के अधीन आदेश लागू करने की व्यवस्था के लिए राज्य सरकार की शक्तियां	यदि धारा 115 के अधीन आदेश के अनुसार उसमें उल्लिखित अवधि के भीतर कोई कार्रवाई नहीं की गई है अथवा यदि राज्य सरकार की संतुष्टि के लिए परंतुक के अधीन कोई भी कारण नहीं दर्शाया गया है, राज्य सरकार इस प्रकार की कार्रवाई करने के लिए व्यवस्था कर सकती है तथा निर्देश दे सकती है कि उससे संबंधित सभी व्यय नगरनिगम निधि से किए जाएंगे (धारा 116)।
19	कोलकाता नगरनिगम अधिनियम, 1980	निगम को विघटित करने की राज्य सरकार की शक्ति	यदि राज्य सरकार की राय में निगम ने अपनी अक्षमता दर्शायी है अथवा इस अधिनियम के अधीन अथवा द्वारा अथवा कुछ समय के लिए प्रभावी किसी अन्य कानून द्वारा सौंपे गए कार्यों को करने अथवा कर्त्तव्यों के निष्पादन में लगातार चूक हुई है अथवा अपने अधिकारों का अतिक्रमण अथवा दुरूपयोग किया है। राज्य सरकार सरकारी राजपत्र में प्रकाशित एक आदेश द्वारा तथा उसका कारण बताते हुए, निगम को अक्षम अथवा व्यतिक्रमी अथवा अतिक्रमण करने अथवा अपनी

अनुबंध-V (2) जारी

क्रम सं0 अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
		शक्तियों का दुरूपयोग जैसा मामला हो, करने का दोषी घोषित कर सकती है तथा इसे ऐसी अवधि के लिए विघटित कर सकती है, जो कि आदेश में उल्लिखित अवधि से अधिक न हो (धारा 117)।
20 कोलकाता नगर निगम अधिनियम, 1980	विघटन के परिणाम	(1) इस अधिनियम अथवा कुछ समय के लिए प्रभावी अन्य किसी कानून में कुछ भी अंतर्निहित होने के बावजूद, धारा 117 की उप-धारा (1) अथवा उपधारा (4) के अधीन किए गए विघटन के आदेश की तारीख से प्रभावी - (क) निगम के सभी सदस्य, महापौर परिषद तथा इस अधिनियम के अधीन गठित निगम की कोई समिति और महापौर तथा अध्यक्ष अपना पद छोड़ देंगे, और (ख) सभी शक्तियां एवं कर्त्तव्य जो इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन अथवा उनके अधीन निर्मित कोई कानून अथवा विनियम अथवा कुछ समय के लिए प्रभावी किसी कानून के तहत निगम के सदस्यों अथवा महापौर अथवा अध्यक्ष द्वारा प्रयोग अथवा निर्वहन की जा सकती है, उनका प्रयोग अथवा निर्वहन, सरकार द्वारा समय-समय पर दिए गए ऐसे दिशानिर्देशों की शर्तों पर, ऐसे

अनुबंध-V (2) जारी

क्रम सं0	अधिनियम का नाम	शक्तियां	उपबंध
			व्यक्ति अथवा व्यक्तियों द्वारा किया जाएगा जिन्हें इस कार्य के लिए राज्य सरकार द्वारा नियुक्त किया गया हो, परंतु जब राज्य सरकार द्वारा एक से अधिक व्यक्तियों को किसी शक्ति और किसी कर्त्तव्य के निर्वहन के लिए नियुक्त किया गया हो तथा इस प्रकार नियुक्त किए गए व्यक्तियों के बीच आदेश द्वारा ऐसे ढंग से शक्तियों एवं कर्त्तव्यों का बंटवारा किया गया हो जैसाकि उचित समझा जाए, बशर्ते कि राज्य सरकार ऐसे व्यक्ति अथवा व्यक्तियों का पारिश्रमिक तय करेगी तथा निर्देश दे सकती है कि इस प्रकार के पारिश्रमिक का भुगतान प्रत्येक मामले में, नगरनिगम निधि से किया जाएगा (धारा118)।

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग
भारत सरकार
द्वितीय तल, विज्ञान भवन एनेक्स, मौलाना आजाद रोड, नई दिल्ली 110011
ई-मेलः arcommission@nic.in वेबसाईटः http://arc.gov.in